

Barcode : 99999990840929  
Title - chaturvarga chintamani of himadri vol.4  
Author - hemadri  
Language - sanskrit  
Pages - 1096  
Publication Year - 1911  
Barcode EAN.UCC-13





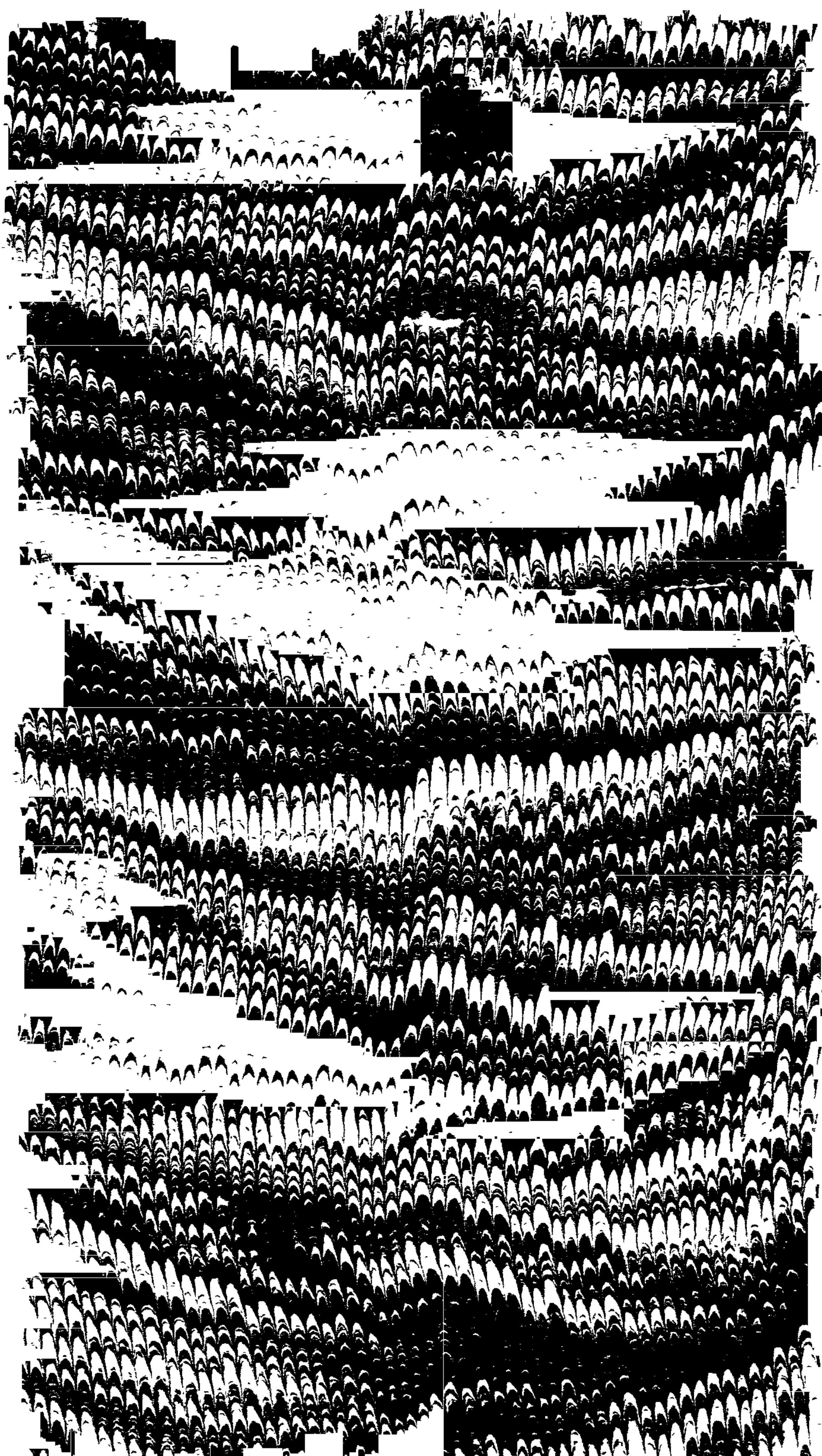
GOVERNMENT OF INDIA  
DEPARTMENT OF ARCHAEOLOGY  
CENTRAL ARCHAEOLOGICAL  
LIBRARY

CAL. No. *Sa 3 S / Hem.*  
Acc. No. *37251*

D.G.A. 79.

GIPN—S4—2D. G Arch. N D 57.—25-9 58—1,00,000.







—

1227



12

13

14

15

16

17

18

19

20

21

22

23

24

25

26

27

28

29

30

31

32

33

34

35

36

37

38

39

40

41

42

43

44

45

46

47

48

49

50

51

52

53

54

55

56

57

58

59

60

61

62

63

64

65

66

67

68

69

70

71

72

73

74

75

76

77

78

79

80

81

82

83

84

85

86

87

88

89

90

91

92

93

94

95

96

97

98

99

100







BIBLIOTHECA INDICA

A

COLLECTION OF ORIENTAL WORKS

PUBLISHED BY THE

ASIATIC SOCIETY OF BENGAL.

SERIES No. 1085, 1093, 1102, 1109, 1135, 1142, 1146, 1203, 1229, 1264

CATURVARGACINTĀMANI.

PRĀYASCITTAKHAṆḌAM.

37251 BY

HEMADRI.

EDITED BY

ANANDIT PRAMATHA NĀTHA TARKABHŪṢANA

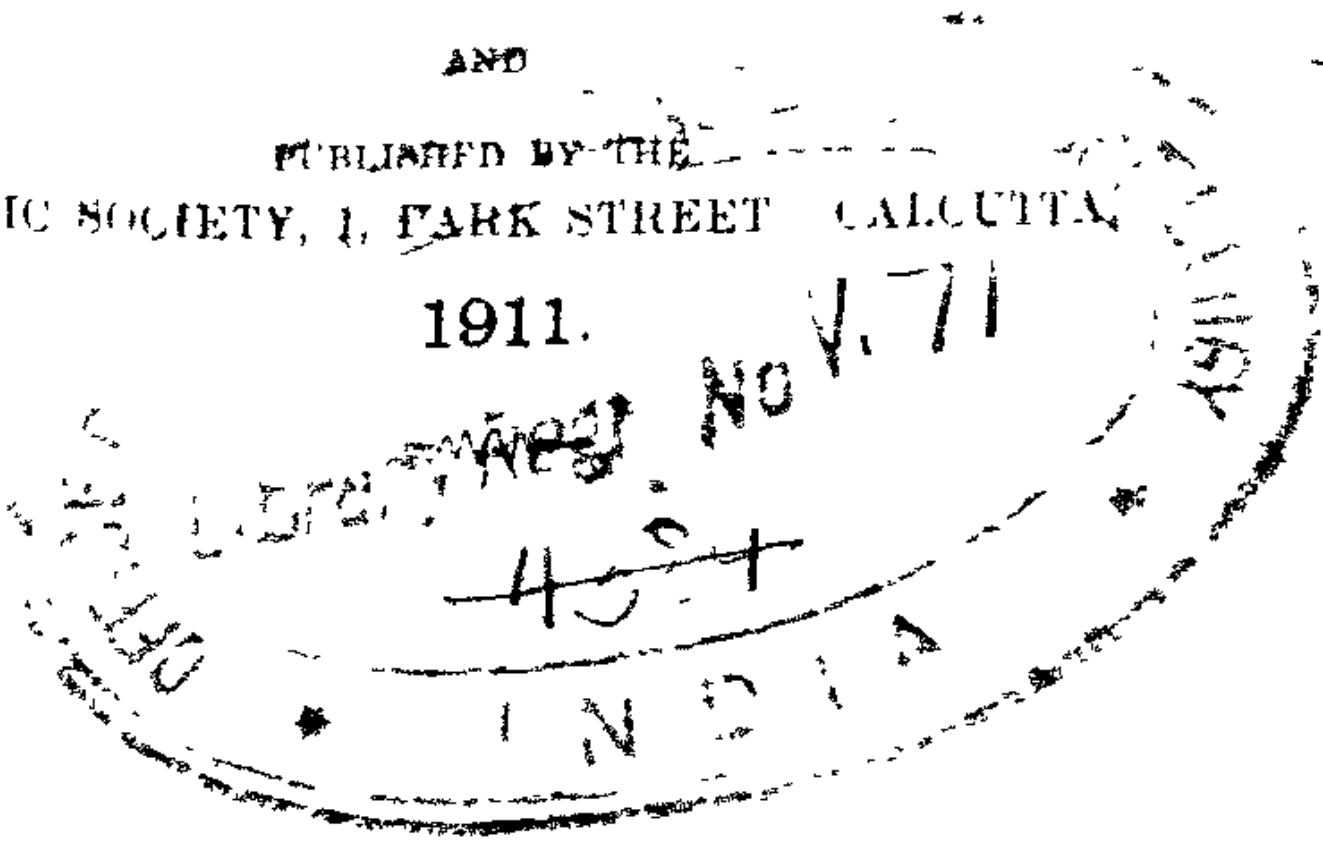
*Professor of Sanskrit College, Calcutta.*

VOLUME IV. FASCICULUS X.

PRINTED BY UPENDRA NATHA CHAKRAVARTI, AT THE SANSKRIT PRESS,  
No. 5. Nandakumar Chaudhury's 2nd Lane,

AND

PUBLISHED BY THE  
ASIATIC SOCIETY, 1, PARK STREET CALCUTTA  
1911.



V. 71



3725.1

277.43

6.63

---

112.12



चतुर्वर्गचिन्तामणिः ।

प्रायश्चित्तखण्डात्मकः ।

हेमाद्रिविरचितः ।

श्रील-श्री-

वङ्गदेशीयासियाटिक्सोसाइटीत्याख्यसमाजानामनुमत्या व्ययेन च

कलिकातास्थ-राजकीय-संस्कृत-विद्यालय-धर्ममीमांसा-

शास्त्राध्यापक-

श्रीप्रमथनाथतर्कभूषणेन

संशोधितः ।

कलिकाताराजधान्याम्

संस्कृतयन्त्रे

श्रीउपेन्द्रनाथचक्रवर्तिना मुद्रितः ।

ख्रीष्टाब्दः १८११ ।



2  
 4  
 4941-2-200  
 1900-1901-1902-1903-1904-1905-1906-1907-1908-1909-1910-1911-1912-1913-1914-1915-1916-1917-1918-1919-1920-1921-1922-1923-1924-1925-1926-1927-1928-1929-1930-1931-1932-1933-1934-1935-1936-1937-1938-1939-1940-1941-1942-1943-1944-1945-1946-1947-1948-1949-1950-1951-1952-1953-1954-1955-1956-1957-1958-1959-1960-1961-1962-1963-1964-1965-1966-1967-1968-1969-1970-1971-1972-1973-1974-1975-1976-1977-1978-1979-1980-1981-1982-1983-1984-1985-1986-1987-1988-1989-1990-1991-1992-1993-1994-1995-1996-1997-1998-1999-2000-2001-2002-2003-2004-2005-2006-2007-2008-2009-2010-2011-2012-2013-2014-2015-2016-2017-2018-2019-2020-2021-2022-2023-2024-2025-2026-2027-2028-2029-2030-2031-2032-2033-2034-2035-2036-2037-2038-2039-2040-2041-2042-2043-2044-2045-2046-2047-2048-2049-2050-2051-2052-2053-2054-2055-2056-2057-2058-2059-2060-2061-2062-2063-2064-2065-2066-2067-2068-2069-2070-2071-2072-2073-2074-2075-2076-2077-2078-2079-2080-2081-2082-2083-2084-2085-2086-2087-2088-2089-2090-2091-2092-2093-2094-2095-2096-2097-2098-2099-2100-2101-2102-2103-2104-2105-2106-2107-2108-2109-2110-2111-2112-2113-2114-2115-2116-2117-2118-2119-2120-2121-2122-2123-2124-2125-2126-2127-2128-2129-2130-2131-2132-2133-2134-2135-2136-2137-2138-2139-2140-2141-2142-2143-2144-2145-2146-2147-2148-2149-2150-2151-2152-2153-2154-2155-2156-2157-2158-2159-2160-2161-2162-2163-2164-2165-2166-2167-2168-2169-2170-2171-2172-2173-2174-2175-2176-2177-2178-2179-2180-2181-2182-2183-2184-2185-2186-2187-2188-2189-2190-2191-2192-2193-2194-2195-2196-2197-2198-2199-2200-2201-2202-2203-2204-2205-2206-2207-2208-2209-2210-2211-2212-2213-2214-2215-2216-2217-2218-2219-2220-2221-2222-2223-2224-2225-2226-2227-2228-2229-2230-2231-2232-2233-2234-2235-2236-2237-2238-2239-2240-2241-2242-2243-2244-2245-2246-2247-2248-2249-2250-2251-2252-2253-2254-2255-2256-2257-2258-2259-2260-2261-2262-2263-2264-2265-2266-2267-2268-2269-2270-2271-2272-2273-2274-2275-2276-2277-2278-2279-2280-2281-2282-2283-2284-2285-2286-2287-2288-2289-2290-2291-2292-2293-2294-2295-2296-2297-2298-2299-2300-2301-2302-2303-2304-2305-2306-2307-2308-2309-2310-2311-2312-2313-2314-2315-2316-2317-2318-2319-2320-2321-2322-2323-2324-2325-2326-2327-2328-2329-2330-2331-2332-2333-2334-2335-2336-2337-2338-2339-2340-2341-2342-2343-2344-2345-2346-2347-2348-2349-2350-2351-2352-2353-2354-2355-2356-2357-2358-2359-2360-2361-2362-2363-2364-2365-2366-2367-2368-2369-2370-2371-2372-2373-2374-2375-2376-2377-2378-2379-2380-2381-2382-2383-2384-2385-2386-2387-2388-2389-2390-2391-2392-2393-2394-2395-2396-2397-2398-2399-2400-2401-2402-2403-2404-2405-2406-2407-2408-2409-2410-2411-2412-2413-2414-2415-2416-2417-2418-2419-2420-2421-2422-2423-2424-2425-2426-2427-2428-2429-2430-2431-2432-2433-2434-2435-2436-2437-2438-2439-2440-2441-2442-2443-2444-2445-2446-2447-2448-2449-2450-2451-2452-2453-2454-2455-2456-2457-2458-2459-2460-2461-2462-2463-2464-2465-2466-2467-2468-2469-2470-2471-2472-2473-2474-2475-2476-2477-2478-2479-2480-2481-2482-2483-2484-2485-2486-2487-2488-2489-2490-2491-2492-2493-2494-2495-2496-2497-2498-2499-2500-2501-2502-2503-2504-2505-2506-2507-2508-2509-2510-2511-2512-2513-2514-2515-2516-2517-2518-2519-2520-2521-2522-2523-2524-2525-2526-2527-2528-2529-2530-2531-2532-2533-2534-2535-2536-2537-2538-2539-2540-2541-2542-2543-2544-2545-2546-2547-2548-2549-2550-2551-2552-2553-2554-2555-2556-2557-2558-2559-2560-2561-2562-2563-2564-2565-2566-2567-2568-2569-2570-2571-2572-2573-2574-2575-2576-2577-2578-2579-2580-2581-2582-2583-2584-2585-2586-2587-2588-2589-2590-2591-2592-2593-2594-2595-2596-2597-2598-2599-2600-2601-2602-2603-2604-2605-2606-2607-2608-2609-2610-2611-2612-2613-2614-2615-2616-2617-2618-2619-2620-2621-2622-2623-2624-2625-2626-2627-2628-2629-2630-2631-2632-2633-2634-2635-2636-2637-2638-2639-2640-2641-2642-2643-2644-2645-2646-2647-2648-2649-2650-2651-2652-2653-2654-2655-2656-2657-2658-2659-2660-2661-2662-2663-2664-2665-2666-2667-2668-2669-2670-2671-2672-2673-2674-2675-2676-2677-2678-2679-2680-2681-2682-2683-2684-2685-2686-2687-2688-2689-2690-2691-2692-2693-2694-2695-2696-2697-2698-2699-2700-2701-2702-2703-2704-2705-2706-2707-2708-2709-2710-2711-2712

1

4

[illegible]

1

1000

100



## मुखबन्धः ।

स्मृतिनिबन्धकारेषु किल हेमाद्रिः प्रायेण सर्वोपरि वर्वर्त्ति ।  
स खलु चैत्रपालदेवतनयस्य देवगिरिप्रदेशाधिपतेः महाराज-  
चक्रवर्त्तिनो महादेवस्य प्रधानामात्यपदमलञ्चकार, अयञ्च महा-  
देवः द्वाशीत्यधिकैकादशशततमे शकाब्दे देवगिरिराजसिंहासन-  
मधिरुरोह इति प्रत्नतत्त्वविदां आहारः ।

तेन खलु हेमाद्रिणा विरचितस्य सुवृहत्तश्चतुर्व्वर्गचिन्तामणि-  
नाम्नः स्मृतिनिबन्धस्य प्रामाण्यं सर्व्वैरेवाऽव्वर्गभवै रघुनन्दनभट्टा-  
चार्य्यप्रभृतिभिः स्मृतिनिबन्धकारैरविसंवादमङ्गीकृतम् । ग्रन्थ-  
गौरवेण व्यवस्थापनीयावश्यकविषयातिबाहुल्येन असन्दिग्धप्रामा-  
ण्यानां श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासादिभ्यः समुद्धृतानां वचनानां  
प्राचुर्य्येण च अयं चतुर्व्वर्गचिन्तामणिः सर्व्वथैवाऽन्वर्थ्यनामा इति-  
सर्व्वेषां स्मृतिनिबन्धरसिकानां सूपपन्नं निर्व्वचनम् ।

विविधप्राच्य-प्रतीच्यावश्यकविद्यासमुदयप्रचारोन्नतिसम्पादन-  
समुदितदिङ्मण्डलीमण्डनायमानयशोजालस्य परमसम्मानभाजः  
सुप्रतिष्ठितस्य 'आसियाटिक् सोसाइटी' इति विश्वविश्रुतनाम्ना  
प्रसिद्धस्य विद्वत्समाजस्य आदेशं समधिगम्य तस्यैव चतुर्व्वर्ग-  
चिन्तामणिः प्रायश्चित्तखण्डाख्यं भागमेकमिमं ग्रन्थं मुद्रयितुमङ्गी-



कृतो मया महताऽऽदरेण महान् खलु प्रयासः । दश वर्षाणि  
यावत् सम्पाद्यतेऽस्य ग्रन्थस्य मया मुद्रणव्यापारः । स चाऽयं  
साम्प्रतं समाप्तिमुपगतः ।

अस्य ग्रन्थस्य मुद्रणसम्पादनाय त्रीणि तावत् हस्तलिखि-  
तानि पुस्तकानि मया अधिगतानि यथामति पर्यालोचि-  
तानि च । तत्रैकं आसियाटिक्मोसाइटीकर्तृपक्षैः काशीतः  
क्रीतं, द्वितीयं काशीत एव बालमुकुन्दमालविमहोदयस्य करुणया  
मया अधिगतं, तृतीयं वाराणसीतएव लब्धमेकमादर्शपुस्तक-  
मुपजीव्य आसियाटिक्मोसाइटीकर्तृपक्षैः लेखितम् । तेषु  
एतेषु त्रिषु पुस्तकेषु मालविमहोदयकृपया समधिगतं पुस्तकं  
विहाय पुस्तकद्वयम् अशुद्धिवहुलम् अन्तराऽन्तरा च नितराम-  
मंलग्नपाठञ्च ।

आसियाटिक्मोसाइटीनाम्ना प्रसिद्धविद्वत्समाजप्रकाशितभ्यः  
चतुर्वर्गचिन्तामणेर्भागान्तरग्रन्थेभ्यः सर्वथा विलक्षणत्वेन तावत्  
प्रतिभाति अयं प्रायश्चित्तखण्डात्मकोऽग्रन्थभागः ।

तदेतद्वैलक्षण्यमीदृक् सुस्पष्टम् यदेतत्पर्यालोचनेन चतुर्वर्ग-  
चिन्तामणिकर्तृतया सुप्रसिद्धस्य निखिलधर्मशास्त्रार्थपारावार-  
पारीणस्य श्रीमतो हेमाद्रेः कृतिरेवाऽयं प्रायश्चित्तखण्डात्मको  
भागो न वेति महान् खलु संशयो मे मनसि उत्तरोत्तरमुपचय-  
मभ्युपगच्छन्नेव वरीवर्तते ।

तथाहि सर्व्वेष्वेव प्रामाणिकस्मृतिनिबन्धेषु देशेषु पापविशेषेषु  
यानि प्रायश्चित्तानि वैवर्चनेर्व्यवस्थापितानि साम्प्रतं समुप-



लभ्यन्ते, अस्मिन् खलु प्रायश्चित्तखण्डे तेष्वेव पापेषु प्रायेण तद्विरुद्धानि प्रायश्चित्तानि तद्विलक्षणैरेव वचनैर्व्यवस्थापितानि दृश्यन्ते ।

अन्यच्च ब्रह्महत्यासुरापानगुर्व्वङ्गनागमनतत्सर्गाख्येषु महापातकेषु प्रायश्चित्तप्रतिपादकत्वेन यानि संहितापुराणवचनानि सर्व्वैरेव इतरनिबन्धकारैरेकमत्येन उद्धृतानि, प्रायेण तानि सर्व्वान्येव वचनानि अस्मिन् ग्रन्थे नितरामुपेक्षितानि इति च महद्वैलक्षण्यम् ।

चतुर्व्वर्गचिन्तामणेः एतद्ग्रन्थव्यतिरिक्ताचारसंस्कारदानादिप्रतिपादकग्रन्थभागेषु तु नैतादृक् तत्तदर्थप्रतिपादकेतरस्मृतिनिबन्धेभ्यो वैलक्षण्यं प्रायेण दृश्यते ; तथाहि चतुर्व्वर्गचिन्तामणेरारादिप्रतिपादकतत्तत्खण्डात्मकभागविशेषेषु यैर्वचनैर्यं तावदाचारादयः यथा च प्रतिपादिता, इतरनिबन्धेषु अपि सत्यपि क्वचित् क्वचिदोषवैलक्ष्ये प्रायेण तैर्वचनैस्ते एवाऽऽचारादयः तथैव च प्रतिपादिता इति निपुणतरमुपलक्षितम् ।

अपरञ्च एतस्मिन् प्रायश्चित्तखण्डे मन्वादिमहर्षिप्रणीतासु धर्मसंहितासु स्थितानि इति कृत्वा यानि वचनानि समुद्धृतानि, महदाश्चर्यमेतद् यत्-साम्प्रतं मुद्रितेषु हस्तलिखितेषु वा मन्वादिमहर्षिप्रणीतसंहिताग्रन्थेषु तानि वचनानि प्रायेण नोपलभ्यन्ते, सहृदयानां प्रत्ययोत्पादनाय कानिचित् तथाविधानि वचनानि उदाक्रियन्ते यथा —



अस्य ग्रन्थस्य १३ पृष्ठे ब्रह्महत्याप्रकरणे—

“द्विशतेनापगुर्दद्यात् सहस्रेण हतद्विजः ।

द्विशतेन तदा दण्ड्या वृद्धा ब्रजं नृपः” ॥ इति

नितरामस्यष्टार्थकं वचनमिदं मानवीयमिति कृत्वा समुद्धृतं, साम्प्रतं मुद्रितेषु हस्तलिखितेषु वा मनुसंहितापुस्तकेषु यथाविधि अनुसन्दधता मया नाऽयं श्लोकः समुपलब्ध इति महदेतदस्य ग्रन्थस्य प्रामाण्यसंशयकारणम् ।

तथा अस्य ग्रन्थस्य ५८६ पृष्ठे—

शृणु धर्मज वक्ष्यामि स्वर्णकामदुघां सकृत् ।

योद्विजः प्रतिगृह्णाति स सद्यः पतितोभवेत् ॥

तस्यैव निष्कृतिर्भूप पुनर्ब्रह्मोपदेशतः ।

अष्टलक्षजपाद्राजन् व्ययं वाऽष्टमभागतः ॥

अभिषेकेण वा शम्भोर्यज्ञैर्वा सर्व्वदक्षिणैः ।

एतैः शुद्धिमवाप्नोति उभयोर्लोकयोर्हितम् ॥ इति

एते त्रयः श्लोका बहवश्चान्य एवं जातीयका महाभारतीया इति कृत्वा अत्र समुद्धृताः—समुपलभ्यन्ते, परन्तु साम्प्रतिकेषु मुद्रितमहाभारतपुस्तकेषु महता प्रयासेन अनुसन्दधता मया नैषामेकोऽपि श्लोकः समुपलब्धः ।

एवमेव कूर्मपुराणमत्स्यपुराणलिङ्गपुराणपद्मपुराणादिनाम्ना यानि वचनानि ग्रन्थेऽस्मिन् समुद्धृतानि, तानि च प्रायेण तेषु पुराणपुस्तकेषु मुद्रितेषु हस्तलिखितेषु वा नोपलभ्यन्ते । एवमादीनि अस्य ग्रन्थस्य अप्रामाण्यसन्देहप्रयोजकानि रूपाणि



इतरस्मृतिनिबन्धेभ्यः चतुर्वर्गचिन्तामणिर्भागान्तरेभ्यश्च महान्ति  
वैलक्षण्यानि च बहुशः समधिगम्य अयं ग्रन्थः चतुर्वर्ग-  
चिन्तामणिकारेण प्रथितयशसा हेमाद्रिणा रचित एव वा  
नवा इति महान् खलु मे मनसि संशयः, स खल्वयं  
समीचीनो वा नवा इति तीक्ष्णधियः प्रमाणपारावारपारीणाः  
सहृदयाः शिष्टा पव विचारयन्तु इति सविनयं सबहुमानञ्च तेषु  
विनिवेदयति ।

तर्कभूषणोपाधिक-

श्रीप्रमथनाथशर्मा

कलिकाताराजकीयसंस्कृतविद्यालयधर्ममीमांसाशास्त्राध्यापकः ।

---







# हेमाद्रिः ।

## प्रायश्चित्ताध्यायः ।

कमलादयितं कृष्णं कमलासनवन्दितम् ।

कमलाक्षमहं वन्दे कमलाकरशायिनम् ॥

अथेदानीं हेमाद्रिकारेण लोकोपकारार्थं सर्वपुराणस्मृतिसंहिता-  
वेदज्योतिषवैद्यागमश्रौतस्मार्त्तसूत्रेषु ग्रन्थान् आलोच्य, ब्रह्मचत्रिय-  
विशां शूद्रादीनां ब्रह्महत्यादीनि तत्समानि<sup>१</sup> पापानि, यानि  
चान्यानि<sup>२</sup> वाङ्मनःकायसम्भवाणि हिंसादीनि सम्भवन्ति, तेषां  
पापानामपनोदन<sup>३</sup> प्रायश्चित्ताध्यायो लिख्यते ।

“वागीशाद्याः सुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे ।

यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम् ॥

वन्देऽहं वन्दनीयानां वन्द्यां वाचाप्रधीश्वरीम् ।

कामिताशेषकल्याणकलनाकल्पवृत्तिकाम् ॥”

मदवलोकितेषु त्रिष्वपि पुस्तकेषु “कमलादयितं”मित्यादिश्लोकात् प्राक्परिदृष्ट-  
मिदं श्लोकद्वयं “वर्णल” दृष्टे डाःराजेन्द्रलालदृष्टे च पुस्तके नोपलब्धम् ।

(१) ब्रह्महत्यासमानि इत्येव क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) यानि चान्यानीत्यसंशः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।

(३) अपनोदप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तके ।



तत्रापि विप्रादीनां चतुर्णां<sup>१</sup> पापभीरूणां प्रतिग्रहदोषैर्हिंसादि-  
निमित्तैः क्रयविक्रयादिभिर्ब्राह्मणशुश्रूषाऽकरणादिभिरनेकदोषाः  
सन्ति<sup>२</sup> तन्निरासार्यं प्रायश्चित्तपराङ्मुखानां दोषबाहुल्यात्  
तत्तद्दोषापनोदनं प्रायश्चित्तं<sup>३</sup> मुनिभिर्दृष्टम् । तदेव प्रायश्चित्तं  
मया निरूप्यते ।

वर्णाश्रमभेदेन<sup>४</sup> तदकरणे पापगूहने दोषान् विकल्प्य<sup>५</sup> प्राय-  
श्चित्तं प्रदर्शितम् ।

तदेवाह—

ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात् सुरापी श्यावदन्तकः ।

सुवर्णचोरः कुनखी दुश्शर्मा गुरुतल्पगः ॥

इत्यादिनिमित्तैस्तत्तद्दोषोपशान्त्यर्थं<sup>६</sup> कुत्रचिन्नराणां प्रायश्चित्तम्,  
कुत्रचित्पुनःसंस्काररूपं, कुत्रचिन्महानदीस्नानरूपं कुत्रचिज्जपरूपं,  
कुत्रचित् स्वप्रतिग्रहद्रव्यचतुर्थांशव्ययरूपं, कुत्रचित् होमरूपं,  
कुत्रचिच्चान्द्रायणादिकच्छाचरणरूपम् ।

कानिचिन्महापातकजन्यानि कानिचिदुपपातकजन्यानि

(१) चतुर्वर्णानामिति क्रीतपुस्तके ।

(२) सम्भवन्ति इति क्रीतपुस्तके ।

(३) पूर्वोक्तेषु ग्रन्थेषु इत्यधिकं काशीपुस्तके ।

(४) वर्णादिक्रमभेदेन इति लेखितकाशीपुस्तकयोः पाठः ।

(५) दोषाधिकतया प्रायश्चित्तं इति काशीपुस्तकेऽधिकः पाठः ।

(६) तद्दोषशान्त्यर्थं इति क्रीतपुस्तके ।



कानिचित्तुलाप्रतिग्रहजन्यानि पापानि, एतेषां प्रायश्चित्ताकरणे वर्णचतुष्टयस्य नरकप्राप्तिः । तस्मादेतव्यायश्चित्तम् ।

यद्युत्पापस्य यद्यव्यायश्चित्तं<sup>१</sup> प्रतिपदोक्तं तदेव कर्त्तव्यं न तु स्नानादि । यस्य यन्नामधेयं पित्रादिभिः कृतं तेनाहतिरेव प्रायश्चित्तं प्रकटयति ।

एतस्मिन् प्रायश्चित्ते सुवर्णधान्यकृच्छादिकं सर्व्वं<sup>२</sup> तत्तत्प्रकरणे<sup>३</sup> द्रष्टव्यम् सर्व्वमत्राध्याये निरूपितम् ।

ब्रह्महत्यासुरापानसुवर्ण<sup>४</sup>स्तेयगुरुतल्पगमनानि<sup>५</sup> तत्संयोगश्चेति पञ्च महापातकानि ।

सङ्कलीकरणमलिनीकरणाऽपात्रीकरणजातिभ्रंशकराणि, उपपातकप्रकीर्णकानि दुरन्नभोजनदुःसङ्गदुरालापस्नानभोजनादीनि एतानि नवविधानि प्रायश्चित्तवन्ति<sup>६</sup> तुलापुरुषमहादानप्रतिग्रहेषु इतरदानप्रतिग्रहेषु च पापानि बहूनि सन्ति, तेषां ब्रह्महत्यादिपापानां इतरेषां च, सर्व्वपुराणस्मृतिभ्यः ज्योतिष-

(१) प्रतिग्रहदोषोक्तं इति क्रीतपुस्तके ।

(२) सर्व्वमिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(३) तत्प्रकरणे इति क्रीतपुस्तके ।

(४) स्वर्ण इति क्रीतपुस्तके ।

(५) गमनादि इति क्रीतपुस्तके काशीपुस्तके च ।

(६) प्रायश्चित्तानि भवन्ति इति क्रीतकाशीपुस्तकयोः ।



वैद्यग्रन्थागमेभ्यः श्रुतिभ्यः<sup>१</sup> संगृह्य तत्तत्प्रा<sup>२</sup>यश्चित्तं ब्रुवन् आदौ  
ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

“प्रायश्चित्तविधिं वक्ष्ये शृणुध्वं सुसमाहिताः ।  
प्रायश्चित्तविशुद्धात्मा सर्वकर्मफलं लभेत् ॥  
प्रायश्चित्तविहीनस्तु यत्किञ्चित् कुरुते नरः ।  
तत्सर्वं निष्फलं याति न लभेत्<sup>३</sup> क्रियाफलम् ॥  
कामक्रोधविहीनैश्च धर्मशास्त्रविशारदैः ।  
विद्वत्सु धर्मः प्रष्टव्यः स्वकर्मफललिप्सुभिः ॥  
प्रायश्चित्तानि चीर्णादि क्षारायणपराङ्मुखैः ।  
न निष्पुनन्ति विप्रेन्द्राः सुशभाण्डमिवापगाः ॥  
ब्रह्महा च सुरायो च स्तेयी च गुरुतल्पगः ।  
महापातकिनस्त्वेतैः तत्संयोगी च पञ्चमः ॥  
यस्तु संवत्सरन्वेतैः शयनासनभोजनैः ।  
वसेच्च सहितं विद्यात् पतितः सर्वकर्मसु ॥  
अज्ञानाद्ब्राह्मणं हत्वा चीरवासा जटी भवेत् ।  
स्वेनैव हतविप्रस्य कपालमपि<sup>४</sup>धारयेत् ॥

(१) श्रुतिभ्य इति क्रीतकाशीपुस्तकयोः न दृश्यते ।

(२) तत्र प्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तके ।

(३) न लभेत् तत्क्रियाफलं इति लेखितपुस्तके ।

(४) अभिधावयेत् इति काशीपुस्तके ।



तदभावे मुनिश्रेष्ठाः कपालं चान्यमेव वा ।  
तद्रव्यं ध्वजदण्डे तु धृत्वा वनचरो भवेत् ॥  
वन्याहारो भवेन्नित्यमेकाहारो मिताशनः ।  
सम्यक् सन्ध्यामुपासीत त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥  
अध्यापनाध्ययनादीन् वर्जयेत्<sup>(१)</sup> संस्मरन् हरिम् ।  
ब्रह्मचारी भवेन्नित्यं गन्धमाल्यादि वर्जयेत् ॥  
तीर्थान्युपवसेच्चैव पुण्यक्षेत्राश्रमाणि च ।  
यदि वन्यैर्न जीवेत् ग्रामे भिक्षां समाचरेत् ॥  
शरावपात्रधारी<sup>(२)</sup> स्यात् द्वारिस्थो विष्णुतत्परः ।  
वदेच्च ब्रह्महास्मीति सर्वांगाराणि पर्यटेत् ॥  
चातुर्वर्णेषु वा भैक्ष्यं त्रिवर्णेष्वथवा भवेत् ।  
मृष्टामृष्टाऽविवेकेन एककालन्तु भोजयेत् ॥  
द्वादशाब्दं व्रतं कुर्यादेवं हरिपरायणः ।  
ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति कर्मार्हश्च स जायते ॥  
व्रतमध्ये मृगैर्वापि रोगैर्वापि निषूदितः ।  
गोनिमित्तं द्विजार्थं वा प्राणांश्चापि<sup>(३)</sup> परित्यजेत् ॥  
ततः शुद्धिमवाप्नोति ब्रह्महा रघुनन्दन ॥”

(१) वर्जयन् इति लेखितपुस्तके ।

(२) शरीरमात्रधारी स्यादिति क्रीतपुस्तके ।

(३) प्रायश्चापि इति काशीपुस्तके ।



स्कन्दपुराणे—

“महायुद्धे महाक्षोभे<sup>१</sup> महादेवालययादिषु ।  
 ग्रामदाहे चोरसङ्गे पाषाणलगुडादिभिः ॥  
 अज्ञात्वा ब्राह्मणं हत्वा जटाचीरधरो भवेत्<sup>२</sup> ।  
 (—<sup>३</sup>स्वेनैव हतविप्रस्य कपालं धारयेत् सदा ॥  
 तदभावे मुनिश्रेष्ठाः कपालञ्चान्यमादरात् ।  
 तद्व्यं ध्वजदण्डे तु धृत्वा वनचरो भवेत् ॥  
 वन्याहारो भवेन्नित्यं एकाहारो मितशनः ।  
 सन्ध्यादिनित्यकर्माणि त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥  
 अध्यापनञ्चाध्ययनं वर्ज्यन् संस्मरेद्वरिम् ।  
 ब्रह्मचर्यं व्रतं नित्यं चरेद्बन्धादिवर्जितः ॥  
 तीर्थान्युपवसेन्नित्यं पुण्यक्षेत्राश्रमाणि च ।  
 यदि वन्यैर्न जीवेत ग्रामे भिक्षाटनं चरेत् ॥  
 लोहितेन शरावेण ह्यखण्डेन गृहाङ्गणे ।  
 वदेच्च ब्रह्महास्मीति सर्वागाराणि पर्यटेत् ॥  
 चातुर्वर्ण्येषु वा भैक्ष्यं त्रिवर्णेष्वयवा चरेत् ।  
 मृष्टामृष्टाऽविवेकेन तदन्नं मा च कुत्सयन् ॥

(१) जनक्षोभे इति काशीपुस्तके ।

(२) अस्मात् श्लोकात्परं<sup>३</sup> पूर्वोक्ताः श्लोकाः स्कान्देऽपि उक्ताः इति पाठोऽधिकः  
 काशीपुस्तके दृश्यते ।

(३) (—)अनयो रेखयोरन्तर्गताः श्लोकाः काशीपुस्तके नोपलभ्यन्ते ।



द्वादशाब्दं व्रतं कुर्यात् एवं हरिपरायणः ।  
 व्रतमध्ये मृगैर्वापि रोगैर्वापि हतो यदि ॥  
 गोनिमित्तं द्विजार्थं वा नार्थ्यं यदि वा म्रियेत् ।  
 ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति द्वादशाब्दव्रतेन वै ॥ )

ब्रह्माण्डपुराणे—

पाषाणैर्लगुडैरस्त्रैर्विषैर्वाहन्ति पूर्वजम् ।  
 अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि परप्रेषणया नृप ॥  
 स्वयं समीप आतिष्ठेद् हन्याद्यैः शस्त्रपाणिभिः ।  
 तस्यैव हतविप्रस्य वस्त्रं दण्डाग्र उद्धृण्व ॥  
 पानार्थं तत्कपालञ्च तदभावेऽन्यमेव वा ।  
 धृत्वा वस्त्रं तथा शाणं लज्जासंरक्षणाय वै ॥  
 जान्वोरुर्द्ध्वमधीनाभेर्वहन्नित्यमतन्द्रितः ।  
 आजिमार्गे कुटीं कृत्वा गाश्चापि परिरक्षयेत् ॥  
 ग्रामप्रवेशो द्विर्वारं वाससां रक्षणाय वै ।  
 ततः कुतपकालेषु भिक्षार्थं ग्राममाश्रयेत् ॥  
 अखण्डेन शरावेण रक्तवर्णेन सर्व्वतः ।  
 सम्यक् सन्ध्यामुपासीत त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥  
 भिक्षार्थं च विशेद् ग्रामं अपथेऽन्नमकुत्सयन् ।  
 अन्यं दृष्ट्वा तदा गच्छेद् व्रती दोषमुदीरयन् ॥

(१) पाषाणलगुडास्त्रैर्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) रक्तवस्त्रेण सर्व्वतः इति काशीक्रीतपुस्तकयोः ।

(३) अपथान्नमकुत्सयन् इति क्रीतकाशीपुस्तकयोः ।



चातुर्वर्ण्येषु वा भैक्ष्यं त्रिवर्ण्यथवा चरेत् ।  
 मृष्टाऽमृष्टाऽविवेकेन एककालं तु भोजयेत् ॥  
 भोजयित्वा कुटीरे तु स्वपित्तत्रैव संस्मरन् ।  
 नारायणं महापापहारिणं लोकधारिणम् ॥  
 वनमध्ये<sup>१</sup> मृगैर्वापि शृगैर्वापि निपातितः ।  
 गोनिमित्तं द्विजार्थं वा नार्थ्यं यदि वा म्रियेत्<sup>२</sup> ॥  
 ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति द्वादशाब्दव्रतेन वै<sup>३</sup> ॥

अपिच ।

महायुद्धमुपागम्य विसृज्य च शिरोरुहान् ।  
 उभयोर्व्यूहयो<sup>४</sup> मध्ये ब्रुवन् कर्म स्वकं मुदा ॥  
 प्रविशेच्च तदा<sup>५</sup> हन्युरजं दारुणैर्नृपात्मज ।  
 हतः शुद्धिमाप्नोति ब्रह्महा पापधीस्तदा ॥  
 अपि स्वेन हतं विप्रं समालोक्य निमित्तजैः ।  
 भृत्यादिभिः स पापात्मा पश्चात्तापपरायणः ॥  
 महतीमटवीं गत्वा स्नात्वा तत्र जदीजले ।  
 गोशक्नुच्छुष्कमानीय राशिं कुर्यात्तदुत्तमम् ॥  
 वज्रिं प्रज्वालय सहसा घृताक्तस्तत्र संविशेत् ॥

(१) व्रतमध्ये इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) प्राणान् वापि परित्यजेत् इति काशीपुस्तके पाठः ।

(३) द्वादशाब्द व्रतं कुर्यादेवं हरिपरायणः ।

ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति कर्मार्हश्चोपजायते ॥ इत्यधिकं काशीपुस्तके ।

(४) उभयोः शूरयोरिति लेखितपुस्तके ।

(५) प्रविशेच्च तदा इति लेखितपुस्तके ।



करीषमध्ये उपविशेत्<sup>१</sup> इत्यर्थः—

न चैवं मृतिमापन्नः किञ्चित् किञ्चित्तदाग्निना ।  
ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति द्वादशाब्दादितो नृप ॥

अपिच ।

ब्रह्महा पूर्ववद्गत्वा गहनं जनवर्जितम् ।  
तत्रैव पूर्ववत् स्नात्वा वृक्षमूलमुपाविशन् ॥  
नापितस्य क्षुरं धृत्वा समुज्ज्वालय हुताशनम् ।  
शरीरं कणशश्चित्वा तस्मिन् वक्त्रौ समर्पयेत् ॥  
यदामृतिमवाप्नोति ततः पूतोऽतिविप्रहा ।

अपिच—

महाक्रतुमुपागम्य याजकेभ्योऽञ्जलिं<sup>२</sup> वहन् ।  
ब्रह्महा सिक्तदेहः सन् शुद्धिमाप्नोति तत्क्षणात् ॥  
यद्वा दद्याद्विजेन्द्राणां गवामयुतमुत्तमम् ।  
एतेष्वन्यतमं कृत्वा ब्रह्महा शुद्धिमाप्नुयात् ॥

एतदज्ञानविषयम् ।

“अयं तु ब्राह्मणो न हन्तव्यः” इति ज्ञात्वा स्वयं भृत्यादिभिर्वा  
वैरनिमित्ततया ब्राह्मणं हन्यात् तन्निरासार्थं चतुर्विंशतिवर्षाणि  
पूर्ववद् व्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ।

(१) उपवेशयेदिति क्रीतकाशीपुस्तकयोः पाठः ।

(२) जलं वहन् इति लेखितपुस्तके पाठः ।



तदाह गौतमः—

यो विप्रो ब्राह्मणं हत्वा ज्ञात्वा भृत्यादिभिर्यदा ।

चतुर्विंशतिवर्षाणि व्रतकृच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥”

अन्यानि पूर्वोक्तानि कृत्वा आचरणीयानि । गवां द्वायुतं दत्त्वा  
शुद्धिमाप्नोति इत्यर्थः ।

तदाहापस्तम्बः—

“तस्य निर्वेषः । अरण्ये कुटिं कृत्वा वाग्यतः शवशिरध्वजोऽ-  
र्धशार्णीपक्षमधोनाभ्युपरि जान्वाच्छाद्य । तस्य पन्था अन्तरा-  
वर्त्मनी । दृष्ट्वा चान्यमुत्क्रामेत् । खण्डेन लोहितकेन शरावेण  
ग्रामे प्रतितिष्ठेत् । कोऽभिगस्ताय भिक्षां इति सप्तागाराणि चरेत् ।  
सावृत्तिः । अलब्धोऽपवासः । गाश्च रक्षेत् । तासां निष्क्रमणप्रवेशने  
द्वितीयो ग्रामेऽर्थः<sup>१</sup> । द्वादशवर्षाणि चरित्वा सिद्धः, सद्भिः सम्प्र-  
योगः । आजिपथे वा कुटिं कृत्वा ब्राह्मणगव्योपजिगीषमाणो  
वसेत् त्रिः प्रतिराज्योपजित्य वा मुक्तः । आश्वमेधिकं वावभृथम-  
वेत्य मुच्यते इति । ( आः सूः प्र १ खं २५ सू १०—२२ )

मार्कण्डेयः—

अज्ञानाद्ब्राह्मणं हत्वा पश्चाद्विज इति स्मरन् ।

पश्चात्तापममायुक्तो राजानमनुमंविशेत् ॥

(१) उपवासी इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) अर्द्ध द्वादश इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



पापं तस्मै निवेद्याऽथ तूष्णीं तिष्ठेत्तदग्रतः ।  
 राजाऽपि नयमापन्नः प्राङ्निवाकमर्ते स्थितः ॥  
 अयोरूपं नरं कृत्वा तापयित्वाथ वह्निना ।  
 पुनः प्रज्वाल्य तैलेन तमाह्वय तदब्रवीत् ॥  
 स्थितेषु सर्व्ववर्णेषु पश्यत्स्वपि नरेश्वर<sup>१</sup> ! ।  
 'उपगूहयेत्तं विप्रं ज्वलन्तं तैलवह्निभिः ॥  
 मरिष्यसि यथानेन ततः शुद्धिमवाप्स्यसि ।  
 इति राज्ञो वचः श्रुत्वा सूर्म्मिं तामुपगूहयेत् ॥  
 मृतः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ।

राजकृत्यमाह लिङ्गपुराणे—

पत्तने<sup>२</sup> वा खराद्रे वा यो विप्रो ब्रह्महा भवेत् ।  
 निमित्तैरथवा स्वेन ग्रीवोत्कर्षणबन्धतः ॥  
 आह्वय तं द्विजं गत्वा श्रुत्वा 'विप्रोऽशुभां गिरम् ।  
 ब्रह्महत्यां विनिश्चित्य वापपित्वा<sup>३</sup> शिरोरुहान् ॥  
 ब्रह्मसूत्रं त्रिधा च्छित्वा पिशिताशनवाहनम् ।  
 आवाहयित्वा तद्गाले 'शूलं तप्तमयं लिखेत् ॥

(१) नरेश्वरः इति काशीपुस्तके पाठः ।

(२) उपगूहेत इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) पत्तणे इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(४) विप्रोऽशुभां गिरमिति काशीपुस्तकपाठः ।

(५) वृष्टित्वा तच्छिरोरुहान् इति क्रीत लेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(६) शूलं तप्तमयं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



गुरुतल्पे भगः कार्यः सुरापाने सुराध्वजः ।  
 स्तेये तु श्वपदं कार्यं ब्रह्महण्य<sup>(१)</sup> शिरःपुमान् ॥  
 एवं कृत्वा तु शास्त्रेण निर्व्वास्यो विषयाद्वहिः ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति राजा यदि निराकृतः ॥  
 तत्पुत्रास्तस्य हनने सहायास्ते यथाऽभवन् ।  
 तानप्येतत् पुनः कृत्वा<sup>(२)</sup> वामयेद्विषयाद्वहिः ॥  
 तत्क्षेत्रं बहुलं धान्यं क्षेत्रारामादिकञ्च यत् ।  
 तत्सर्वं देवताप्रीत्यै राजा कुर्याद् यथार्हतः ॥  
 विचार्य बहुधा राजा पत्नीपुत्रादिकान् बहु ।  
 दोषवन्तस्तथा तेषां कर्त्तव्या राजवल्लभैः ॥  
 नोदेद्द्रव्यञ्च धान्यञ्च राजा नो वधमाचरेत् ।  
 कृते ग्रामः परित्याज्यस्त्रेतायां कुलमेव च ॥  
 वापरे तद्गृहं सर्वं कलौ कर्त्ता तु लिप्यते ॥”

कलौ द्वादशाब्दाकरणे अन्येषु केषुचित् प्रायश्चित्ताकरणे राजद्वारे  
 सभां मेलयित्वा तैरनुज्ञातो धर्मशास्त्रोक्तविधिना द्वयुतसङ्ख्याया  
 गाः विप्रेभ्यो दद्यात् ततः शुद्धिमवाप्नोति ।

एतदज्ञानविषयं ज्ञानविषयं<sup>(३)</sup> त्रैगुण्यम् । केचिदेवं मास्त्विति  
 वदन्ति मरणान्तमेव प्रायश्चित्तं नेतरत् ।

(१) ब्रह्महण्यसुरः पुमान् इति लेखितपुस्तकेपाठः ।

(२) निर्व्वास्य विषयाद्वहिति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) ज्ञानविषये तु त्रैगुण्यमिति लेखितपुस्तके पाठः ।



तदाह गौतमः—

“ज्ञानाज्ञानाद्विजो यस्तु वधेद्विप्रं हि दैवतः ।

तस्यैव मरणान्तं हि प्रायश्चित्तं नचान्यथा ॥” इति ।

तदभावे द्वादशाब्दव्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोतीति ।

“यो ब्राह्मणाय अपगुरेत् तं शतेन यातयात् यो निहनेत् तं सहस्रेण यातयाद् यो लोहितं कारयेद् यावतः प्रस्कन्द्य पांशून् संगृह्णात् तावतः संवत्सरान् पितृलोकं न प्रजानीयात् । तस्मात् ब्राह्मणाय नापगुरेत् न हन्यात् न लोहितं कुर्यात् । एतावता हैनः सम्भवति इति राजा दण्डयेत्” । अतएव “ब्राह्मणो न हन्तव्यः” । इति ।

तदाह मनुः—

“ब्राह्मणहनने उपायतः सम्यग्विचार्य राजा दण्डयेत् ।

द्विशतेनापगूर्दयात् सहस्रेण हतद्विजः ।

द्विशतेन तदा दण्ड्या दृष्ट्वाव्रजं नृप ? इति

( हतब्रह्महन्तारं प्रति निष्कप्रमाणं स्तेयप्रकरणेऽभिहितम् ) ?



अथ ब्रह्महन्तारं प्रति विप्रकृत्यमाह ।

ब्रह्माण्डे—

निश्चित्य ब्रह्महन्तारं भाषामन्दर्शनादिभिः ।  
मेलयित्वा द्विजान् सर्व्वे राजा यद्यक्तं पुरा ॥  
तत्सर्व्वं सहसा कुर्य्युर्निर्व्वास्यो विषयादहिः ।  
तत्पत्नीं तनयाञ्चैव न दोष इति वर्त्तयेत्<sup>१</sup> ॥  
तेषामपीह शङ्का स्यात् तेन साकं तदा वदन् ।  
नो चेत् तद्वृत्तिधान्यार्थी तेभ्यो दत्त्वाथ शिञ्चयेत् ॥

युष्माभिः<sup>२</sup> ते<sup>३</sup> सह न गन्तव्याः न सम्भाष्याः न स्मरणीयाः इति  
शिञ्चणीयाः । इत्युक्त्वा गृहं संशोध्यम् तत्रान्यथा विप्रा अपि  
राजदण्डेन दण्ड्याः ।

दण्डप्रकारमाह कूर्म—

अयोरूपं द्विजं कृत्वा मूर्द्धहीनं प्रतापयेत् ।  
सन्तप्तं पुरुषं दृष्ट्वा तैलमिक्तं प्रजज्वलुः ॥  
तेन ब्राह्मणमाहूय उपगूहय माचिरम् ।  
मृत्वा दोषविमुक्तोऽमि नान्यथा व्रतमाचरेत् ॥

(१) वर्ज्जयेत् इति काशी क्रीतपुस्तकयोः पाठः ।

(२) युयं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) तेन सह इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



द्वादशाब्दविधानेन शुद्धो भवितुर्महमि ।

अशक्तो व्रतमाचर्त्तुं एवं कुर्याद्विशुध्यमि ॥ इति

राजाभावे तदनुमत्या प्राज्ञैः प्रकाशयामिति ।

इति ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् ।

अथ गुरुहत्याप्रायश्चित्तम् ।

आह लिङ्गपुराणम्—

जनिताचोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति ।

श्वशुरश्चाग्रजो भ्राता पञ्चैते गुरवः<sup>१</sup> स्मृताः ॥

गुरुर्नाम जनकः, शेषाः पूज्याः मनसापि न हन्तव्याः । हन्याच्चेत्

तद्वनने विशेषमाह—

स्कन्दपुराणे—

अज्ञानाज्जनकं हन्याद्विशिष्टैर्बहुभिर्द्विजः ।

तस्योक्तं मरणान्तं हि प्रायश्चित्तं मनीषिभिः ॥

चतुर्विंशतिवर्षाणि व्रतं कृत्वा विशुध्यति ।

द्वायुतं वा गवां दानं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

अथवा पूर्ववत्कृत्वा गुरुहा शुद्धिमाप्नुयात् ॥



ज्येष्ठभ्रात्रादिहनने एवं वेदितव्यम् । शास्त्रोपदेशकृत्<sup>१</sup> गुरवः  
वहवः ।

नारदीये—

मन्त्रोपदेष्टा वेदानां तथा धर्मविवोधकः ।  
मन्मार्गदायी बुद्धीनां आचार्यो व्रतबन्धने ।  
पुराणसंहितावक्ता नित्यं शास्त्रोपदेशकृत् ।  
निषेकादिश्मशानान्तं कृत्वा चार्यं नियोजितः ।  
वेदान्तोपनिषदाक्य<sup>२</sup>स्योपदेष्टा सुमर्मज्ञः ॥  
त एते गुरवः प्रोक्तास्तेषु द्रोहं न कारयेत् ।  
तेषामन्यतमं हत्वा चरद्ब्रह्महणो व्रतम् ॥  
दीक्षितं क्षत्रियं हत्वा चरद्ब्रह्महणो व्रतम् ।  
अग्निप्रवेशनञ्चापि भृगुप्रपतनं तथा ॥  
दीक्षितं ब्राह्मणं हत्वा द्विगुणं व्रतमाचरेत् ।  
स्नातकं ऋत्विजं हत्वा मातामहमथा<sup>३</sup>पिवा ॥  
( मातुलं भावुकं श्यालं जामातरमथापि वा )  
आचार्यादिवधे चैव व्रतमुक्तं चतुर्गुणम् ॥

(—) अयं पाठः काशीलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

(१) वाक्यसुपदेष्टा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) मरुत्प्रपतनं इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(३) मातामहं तथापि वा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



अथ चतुश्चत्वारिंशत्संस्काराणां लक्षणम् ।

अग्न्याधेयम्, अग्निहोत्रं, दर्शपूर्णमासौ, चातुर्मास्यानि, निरुद-  
पशुवन्धः सौत्रामणिः । इति सप्त हविर्यज्ञाः ।

अष्टकापार्वणश्चाद्व्यावणाग्रायण्यः इति सप्त पाकयज्ञाः ।  
अग्निष्टोमो, ऽत्यग्निष्टोम, उक्थ्यः, षोडशी वाजपेयः, अतिरात्रः  
आप्तोर्यामः । इति सप्त सोमसंस्थाः ।

सप्तहविर्यज्ञाः, सप्तपाकयज्ञाः, सप्तसोमसंस्थाश्च, निषेकादि  
षोडशकर्माणि, पञ्चमहायज्ञा, प्राणाग्निहोत्रम्, व्यावणहोम इति  
चतुश्चत्वारिंशत्संस्काराः । तैः पूतः स्नातकः ऋत्विक् । सोऽध्वरे  
दीक्षागुरुः स एव ऋत्विक् ।

ज्ञात्वा तु विप्रमात्रं चेच्चरेत् संवत्सरव्रतम् ॥  
अथवा गोमहस्रं वा कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
अस्योपनयनं भूयः पुनः संस्कारमादरात् ॥  
एष विप्रस्य कथितः प्रायश्चित्तविधिर्द्विजैः ।  
द्विगुणं क्षत्रियस्योक्तं त्रिगुणं तद्विशः समम् ॥  
ब्राह्मणं हन्ति यः शूद्रः तं सशल्यं विदुर्वुधाः ।  
राज्ञैव शिक्षा कर्त्तव्या इति शास्त्रेषु निश्चयः ॥  
ब्राह्मणीनां वधे त्वर्द्धं पादः स्यात्क्षत्र्यकावधे ।  
हन्ता त्वनुपनीतानां तथा पादं व्रतं चरेत् ॥  
प्रायश्चित्तविधानञ्च सर्वत्र मुनिसत्तमाः ।  
वृद्धातुरस्त्रीबालानामर्द्धमुक्तं मनीषिभिः ॥



## क्षत्रियाणां विप्रहनने प्रायश्चित्तमाह ।

कर्मपुराणे—

अज्ञानाद्वाहुजो विप्रं निमित्तैः पूर्वमन्धवैः ।  
प्रश्नात्तापसमायुक्ती द्विगुणं व्रतमाचरेत् ॥  
दौक्षितं ब्राह्मणं हत्वा स्नातकं ऋत्विजं तथा ।  
आचार्यादिवधे चैव चातुर्गुण्यं व्रतं चरेत् ॥  
हन्ता तु विप्रमात्रं चेत् चरेत् संवत्सरद्वयम् ।  
ब्राह्मणानां सुनारीणां<sup>१</sup> द्वादशाब्द व्रतं चरेत् ॥  
हन्ता त्वनुपनीतानां तदर्द्धं व्रतमाचरेत् ।  
दौक्षितस्य स्त्रियं हत्वा ब्राह्मणीं चाष्टवत्सराम् ॥  
ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति निश्चितम् ।  
आत्रेयीं च स्त्रियं वापि स्वयं हत्वा विषाग्निभिः ॥  
आत्मतुल्यसुवर्णं वा दत्त्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

आत्रेयीलक्षणम्—

विवाहादि दिनादूर्द्ध्वं या नारी गतपुष्पिणी ।  
आत्रेयी सैव विख्याता महापापप्रणाशिनी ॥  
उत निश्चलया बुद्ध्या या नारी पतिमेवना ।  
कर्मणा मनसा वाचा तामात्रेयीं विदुर्वुधाः ॥

(१) तु नारीणां इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) 'ऋत्विजः कन्यकां हत्वा षडब्दं व्रतमाचरेत्' इत्यधिक पाठः क्रीतपुस्तके ।



अथवा द्वायुतं दद्याद् द्रव्यं <sup>१</sup>हत्वा विमुक्तये ।  
पूर्णगर्भवधे राजा दद्याद् दानं गवां शतम् ॥

विप्रस्येति शेषः ।

षण्मासे पञ्चमासे वा तद्वै दानं माचरेत् ।

वैश्यस्य विप्रहत्याप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

अज्ञानादूरुजो हत्वा ब्राह्मणं दीक्षितञ्च वा !  
गुरुमाचारकर्मस्थं श्रोत्रियं वर्णिनं तथा ॥  
आचार्यादिवधे चैव क्षत्रवद् व्रतं माचरेत् ।  
हन्ता तु विप्रमात्रं चेच्चरेत्संवत्सरद्वयम् ।  
ब्राह्मणानान्तु नारीणां द्वादशाब्दव्रतञ्चरेत् ॥  
हन्ता त्वनुपनीतानां तद्वै व्रतमाचरेत् ।  
वैश्वश्च<sup>२</sup>कन्यकाहन्ता षडब्दं क्षत्रियव्रतम् ॥

(१) वा तद्विमुक्तये इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) वैश्यश्चेत् इति लिखितपुस्तके पाठः ।



क्षत्रियस्य<sup>१</sup> स्त्रियं हत्वा ब्राह्मणीं वाष्टवत्सराम् ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा वैश्यः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
 आत्रेयीञ्च स्त्रियंवापि स्वयंहत्वा विषाग्निभिः ।  
 गवाञ्चदद्याद्द्वययुतम् विप्रेभ्यो भक्तिः क्रमात् ॥  
 गर्भस्थां रोहिणीं नारीं विधवां वा तपस्विनीम् ।  
 हत्वो<sup>२</sup> रुजस्ततः शुद्ध्यै ब्रह्महत्याव्रतादिह ॥

द्वययुतगोदानं वैश्यस्य व्रताचरणाभावात् ।

षण्मासे पञ्चमासे वा तद्वर्षे दानमाचरेत् ॥

इति वैश्यस्य विप्रहत्याप्रायश्चित्तम् ।

अथ शूद्रस्य विप्रहत्याप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

पादजो मुखजं हत्वा आत्रियं यमिनं तथा ।  
 स्नातकं ऋत्विजं वापि कर्मिष्ठं वेदपारगम्<sup>३</sup> ॥

(१) दीक्षितस्य इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) हत्वानुजः इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) विश्रुतत्परमिति लेखितपुस्तके पाठः ।



अज्ञानादायुधाद्यैश्च परप्रेषणया युधि ।  
 पश्चाद्विप्र इति ज्ञात्वा पश्चात्तापसमन्वितः ॥  
 हस्ते मुसलमादाय राजानं गतकल्मषम् ।  
 हन्ताच दीक्षितस्यैव तेन दण्डो यथार्हतः ॥  
 तेन हन्याद् यथा जीवेत् तदाशुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति राजा भवति किल्बिषी ॥

स्कन्दपुराणे—

शूद्रो विप्रं यदा हन्यात् साधनैर्वहुभिः स्वयम् ।  
 तन्मौसल्यं वधं प्राहुर्विप्रा धर्मपरायणाः ॥  
 केचिदिच्छन्ति कारीषं वधं तस्यैव पापिनः ।  
 मृत्वा<sup>१</sup> शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

देवीपुराणे—

ब्राह्मणं दीक्षितं सोमयाजिनं ओत्रियं तथा ।  
 गुरुमाचार्यव्रतिनौ पादजो ज्ञानतो हनेत् ॥  
 अस्य मौसल्यजं दण्डं वधं कारीषमेव वा ।  
 इयादन्यतमं पुत्र कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

ब्रह्माण्डपुराणे—

अज्ञानात् पादजो विप्रं ओत्रियं सोमयाजिनम् ।  
 व्रतिनं दीक्षितं दीर्घदर्शिनं कर्मकौशलम् ॥



हत्वा राजान मासाय कर्माचक्षीत बुद्धिमान् ।  
 राजा मुसलमादाय ब्रह्मस्थाने<sup>१</sup> शिरःस्थले ॥  
 मृतो यथा<sup>२</sup> प्रहारेण तथा<sup>३</sup> हन्यान्नदोषभाक् ।  
 उत कारीषमानीय राशीकृत्य<sup>४</sup> जनस्थले ।  
 तद्भु<sup>५</sup>तं तत्र निःक्षिप्य दाहयेत् स्वभवैर्मुदा ॥  
 द्वाभ्यां यदा मृतः शूद्रस्तदा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 ब्राह्मणीं स्थविरां हत्वा विधवां वा सुवासिनीम् ॥  
 युवतीं पादजो हन्यादात्रेयीं प्रवृद्धामपि ।  
 पूर्व्ववद् दण्डयेद्राजा द्वयोरिकेन नान्यथा ॥  
 बालं कन्यां यदा हन्यात् तदा तेनैव कारयेत् ।  
 शिशुं ( हन्याद् यदा शूद्रो गर्भमात्रं यदा हनेत् ॥  
 हस्तद्वयं तदा च्छित्वा<sup>६</sup> निर्व्वास्या विषयाद्वहिः ।  
 शूद्रो विप्रं तथा नारीं शिशुं कन्या ; मथापिवा ॥  
 वृद्धां सुवासिनीं वापि आत्रेयीं युवतीमपि ।  
 गुरुं वा दीक्षितं सोमयाजिनं व्रतिनं तथा ॥  
 एतेषां हननं श्रुत्वा राजा दोषपराङ्मुखः ।

(१) ब्रह्मस्थानं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) यदा प्रहारेण इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) तेन हन्यादिति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(४) जनस्थले इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(५) तद्भुतं इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(६) छित्वा इति काशीपुस्तके पाठः ।

अनयोरेखयोरन्तर्गत पाठः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



विप्राणां क्षत्रियहत्याप्रायश्चित्तम् ।

२३

मूत्रेण शिरसि स्नाप्य वापयित्वा शिरोरुहान् ॥

कर्णौ नामां तथा च्छित्वा निर्वास्यो विषयादुवहिः ॥

कन्याबालवधे गर्भपातने विप्रयोषिताम् ।

पूर्ववद्दण्डयेद्राजा त्वन्यथा<sup>१</sup> नरकं व्रजेत् ॥

इति हेमादिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

शूद्राणां विप्रहत्यादिप्रायश्चित्तम् ॥

अथ विप्राणां क्षत्रियहत्याप्रायश्चित्तम् ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

ब्राह्मणः क्षत्रियं हत्वा युद्धे वान्यत्र भूतले ।

स्वयं निमित्तैर्वहुभिः क्षत्रहन्ता भवेत्तथा ॥

वीरहत्यापनुत्यर्थं धेनुदानसहस्रकम् ।

दत्त्वा शुद्धिमवाप्नोति न दानैर्जपहोमजैः ॥

१) तदाच्छित्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

२) नान्यथा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



लिङ्गपुराणे—

पूर्वजो बाहुजं देवादिष्वह्नादिपातनैः ।  
हत्वा ज्ञानात्तदा ज्ञात्वाचरेद्धेनुमहस्रकम् ॥

गारुडपुराणे—

संग्रामे ग्रामदाहे वा राजक्षोभे महाभये ।  
पट्टभद्रं च राजानमितरं शब्दमात्रजम् ॥  
पश्चात्तापसमायुक्तो द्विमहस्रं गवां चरेत् ।  
राजमात्रे सहस्रं स्यात् योऽसौ नारायणः स्वयम् ॥

“नराणाञ्चनराधिप” इति गीतास्मरणात् नारायणांशतया  
तथाहनने दोषबाहुल्याद्विगुणमुक्तम् । क्षत्रियमात्रे तु सहस्र-  
धेनुदानम् ।

स्कन्दपुराणे—

पट्टभद्रं द्विजोहत्वा राजमात्रमकामतः ।  
ततो राजा इति ज्ञात्वा पश्चात्तापपरायणः ।  
द्विमहस्रं गवां दद्यात् विप्रेभ्यो दक्षिणादिभिः ॥  
इतरे तु सहस्रं स्यादित्याह भगवान् यमः ।

पद्मपुराणे उत्तरखण्डे—

महायुद्धे जनक्षोभे ग्रामदाहे जलाप्लुते ।  
दण्डपापान्तरज्ज्वार्यं निमित्तैः क्षत्रियं हनेत् ।  
पट्टभद्रं प्रमादाद्वा द्विमहस्रं प्रदापयेत् ॥



विप्राणां वैश्यहत्याप्रायश्चित्तम् ।

२३

महस्रमितरे दद्यात्तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ।  
तत्पत्नीं तत्सुतं पुत्रीं हत्वा 'ज्ञानान्निमित्तजैः ॥  
तद्वद्वं तस्य दारेषु तत्पादमुभयोः क्रमात् ।  
गर्भमात्रे शिशौ तस्य दद्याद्दश गवां द्विजः ॥  
पुनः संस्कारमात्रेण शुद्धो भवति पूर्वजः ।

विप्रस्य वीरहत्येति गर्हात् प्रायश्चित्तबाहुल्यं पुनः संस्कारश्च ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे विप्राणां  
चतुर्विधहत्याप्रायश्चित्तम् ।

अथ विप्राणां वैश्यहत्याप्रायश्चित्तमाह ।

निङ्गपुराणे--

ब्राह्मणः सांपराये वा ग्रामदार्हे जनाकुले ।  
नद्युत्तरणकाले तु अज्ञानादूर्जं हनेत् ॥  
दण्डपाशविधैरन्यैर्निमित्तैर्बहुभिर्नृप ।  
पश्चात्तापसमायुक्ती धेनूनां शतमादरात् ॥

१. ज्ञात्वा निमित्तजैरिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

२. अज्ञानादूर्जं इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



ब्रह्माण्डे—

जनोत्तारं<sup>१</sup> जनक्षोभे संग्रामे देशविप्लवे ।  
 ग्रामदाहे च मुखजो निमित्तैः पूर्वसम्भवैः ॥  
 अज्ञानाद्वन्ति तस्यैवं प्रायश्चित्तं मनीषिभिः ।  
 कथितं दोषशान्त्यर्थं धेनुदानसहस्रकम् ॥  
 तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥ इति ॥

कूर्मपुराणे—

मुखजोऽज्ञानतो दैवान्निमित्तैर्बहुभिः पृथक् ।  
 वैश्यं हन्ति तदा लोके यथा धेनुशतं नृप ॥  
 दत्त्वा पश्चात् पुनः कर्म पञ्चगव्यमनन्तरम् ।

एतदज्ञानविषयम् । ज्ञात्वा द्विगुणम् ।

ब्रह्मवैवर्ते—

वैश्यं समर्थमितरं तत्पत्नीं वा सुतं सुताम् ।  
 निमित्तैर्हननीपायैर्ब्राह्मणो यदि हन्ति वा<sup>२</sup> ।  
 न ह्यापतन्ति पुण्यानि काम्यानि च नरेश्वर ।  
 तद्दोषपरिहारार्थं शतधेनुं समाचरेत् ॥  
 तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्यमतः परम् ।  
 तत्पत्नीहनने त्वर्द्धं तदर्द्धमुभयोः पृथक् ॥  
 शिशौ तद्गर्भपतने तयोरर्द्धं मुनीश्वर । इति ।  
 इति हेमाद्रौ विप्रस्य वैश्यहत्याप्रायश्चित्तम् ।

(१) जनोत्तरे इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) हन्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शूद्रवधप्रायश्चित्तमाह ।

पञ्चपुराणे—

ब्राह्मणो ज्ञानतो राजन् विषरज्जुभिरादरात् ।  
पादजं हन्ति लोभेन<sup>१</sup> संपराये जनक्षये ॥  
तत्पापपरिहारार्थमुभयोर्लोकयोः पृथक् ॥  
दश विप्राय धेनूनां दद्यात्पापविशुद्धये ।  
तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्यमनन्तरम् ॥

राजविजये—

मुखजो ज्ञानतो भूयो विषपाषाणरज्जुभिः ।  
पादजं हन्ति पापात्मा जनमङ्गे नदीतटे ॥  
मद्यः क्षरन्ति पुण्यानि पुण्यनाशादधीगतिः ।  
तद्दोषपरिहारार्थं दश दद्याद्गवां मुदा ॥  
सताञ्च<sup>२</sup> साधुवृत्तानां विशुद्ध्यनपरायणः ।  
हत्यादोषात् प्रमुच्येत पुनः कर्म समाचरेत् ॥  
ब्रह्मकूर्चविधानेन पञ्चगव्यं पिवेत्ततः<sup>३</sup> । इति

---

(१) लोभेन इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) भवत्सां साधुवृत्ताञ्च इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(३) पिवेद्ब्रती इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



ब्रह्माण्डपुराणे—

ज्ञानतोऽज्ञानतो राजन् विषरज्जुभिः सर्वदा ।  
 अन्यथा ज्ञानतो राजन् जनमङ्गे प्रजाक्षये ॥  
 परप्रेरणया वान्यैर्निमित्तैर्हन्ति पादजम् ।  
 मद्यः पतति पापेन यमलोके महत्तरे ॥  
 दद्याद्दश गवां विप्रः पुनः संस्कारमर्हति ।

ब्रह्मयामले—

शूद्रं हन्ति द्विजोयस्तु निमित्तैः परभाषया ।  
 जनीत्तरे जनक्षोभे संग्रामे चारमङ्गुले ॥  
 पुण्यं मद्यः क्षरत्याशु यमलोकोऽसुखप्रदः ।  
 तत्पापशीधनार्थाय दश दद्याद्गवांमुदा ॥  
 उपनयनं पुनः कार्यं गायत्रीदानमेव च ।  
 पञ्चगव्यं पितृत्पश्चात् शुद्धो भवति निश्चितः ॥

तद्धारहर्ननेऽपि च ।

शिरोश्च गर्भपतने तदङ्गं च यथाक्रमम् ।  
 प्रायश्चित्तमिदं ब्रह्मन् कथितं मुनिमत्तमैः ॥  
 प्रायश्चित्तविहीनो यो महद्दोषेऽपि सत्यपि ।  
 तस्यैव नित्यकर्माणि न फलन्ति न संग्रयः ॥

—) अनयो रेखयोरन्तर्गतः पाठो लेखितपुस्तके नास्ति ।

(१) ज्ञानतः इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) तत्तदङ्गं इति लेखितपुस्तके पाठः ।



प्रायश्चित्तेन पूतात्मा लोकयोरुभयोः सुखी ।  
अन्यथा दुःखमाप्नोति पापी स्याज्जन्मजन्मनि ॥

इति हेमाद्रौ विप्रस्य शूद्रवधप्रायश्चित्तम् ।

अथ क्षत्रियस्य वैश्यवधप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

बाहुजस्तूर्जं हत्वा अज्ञानाज् ज्ञानतोऽपिवा ।  
रोषाद्वा मत्सराद्वापि यद्वा पिशुनवार्त्तया ॥  
भृत्यैर्वा स्वयमेवास्त्रैस्तस्य दोषो महान् भवेत् ।  
नरकस्तस्य स त्याज्यो भवेज्जन्मनि जन्मनि<sup>१</sup> ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं दद्याद्देनूर्द्धिजातये ।  
ततः शुद्धिमवाप्नोति महत्या हत्यया नृप ॥

कूर्मपुराणे—

राजा यो मदलोभेन यद्वापिशुनवार्त्तया ।  
अस्त्रैर्भृत्यैरुपायैर्वा राजैनं ? सहकामतः ॥

(१) क्षत्रियस्येति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

२ 'नरकस्तस्य घोरः स्यादुस्तरोजन्मजन्मनि' ।

इति क्रीतकाशीपुस्तकयोः पाठः ।



नरके नियतं वामस्तस्य जन्मद्वयेनृप ! ।  
 तत्पापोपशमायालं गवां दश समाचरेत् ॥  
 शुद्धो भवति पापात्मा उभयोर्लोकयोर्हितम् ।

मत्स्यपुराणे—

बाहुजो बणिजं हत्वा धनार्थी लोकवार्त्तया ।  
 शस्त्रजालकपादादिबन्धनादिभिरादरात् ॥  
 यमलोकमुपागम्य कालसूत्रमवाप्यते ।  
 ततो देहविशुद्ध्यर्थं दशधेनूः समाचरेत् ॥  
 राजा राजमदेनाशु कुरुते पापमादरात् ।  
 पापान्नरकमाप्नोति नरकान्ननिवृत्तिता ॥  
 राज्ञां बह्वनि पापानि सम्भवन्ति दिने दिने ।  
 अतो राजा न सम्भाष्यः कराद्व्यावृतः सदा ॥  
 तस्माद्धनन्ति राजानो धनार्थं कामकारतः ।  
 राजा स्वधर्मनिरतो देवब्राह्मणपूजकः ॥  
 सदा विद्वज्जनासेवी अरिषड्वर्गजित्सदा ।  
 सर्वधर्मरतोराज्ञा इतरे शब्दपूरणे ॥

इति हेमाद्रौ क्षत्रियस्य वैश्यवधप्रायश्चित्तम् ।



अथ वैश्यस्य क्षत्रियवधप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

जरुजो विषदानाद्यैरुपायैर्भूपतिं हनेत् ।  
अज्ञानादुत वा ज्ञानात् परवाक्यानुसारतः ॥  
देशक्षोभे जनक्षोभे रोषात्प्रेरणया अपि ।  
महादोषमवाप्नोति वीरहत्या दुरत्यया ॥  
मृत्वा नरकमप्नोति राजा तं दण्डयेत्तदा ।  
वर्णाधिकतया राजन् धेनुदानं शतं विदुः ॥

स्कन्दपुराणे—

जरुजो बाहुजं हन्या दधनो<sup>१</sup> ह्यन्नदोऽपिवा ।  
परिधानै रूपायैर्वा मृत्यैर्वा स्वयमेव वा ॥  
विचार्य राजा बहुधा दण्डयेत्तं वणिक्पतिम् ।  
ब्रह्मसूत्रं त्रुटित्वाथ वापयित्वा शिखामपि ॥  
मर्ज्जमर्थमुपाहृत्य निर्वास्यो विषयाद्वहिः ।  
सोऽपि भूमिं परित्यज्य पश्चात्तापविशुद्धिमान् ।  
शतं गवां द्विजे दद्यात् शुद्धिमाप्नोति निश्चयः ॥

शिवपुराणे—

वैश्यो ज्ञानाद्राजसुतं पट्टभद्रमथापिवा ।  
हत्वा पापमवाप्नोति नरकं वापि गच्छति ॥



ततो देहविशुद्धयर्थं भूपरिक्रमणं चरेत् ।  
 ततः शुद्धेन मनसा वापयित्वा शिरोरुहान् ॥  
 ब्राह्मणेभ्यस्ततोदद्याद् गोशतं दोषमुक्तये ।

पद्मपुराणे—

पट्टभद्रञ्च राजानं तत्पत्नीं तत्सुतञ्च वा ।  
 बालं तद्गर्भमात्रं वा हत्वा वैश्यः सकृदपि ॥  
 पश्चाद्राजा इति ज्ञात्वा भूपरिक्रमणं चरेत् ।  
 पश्चाद्देहविशुद्धयर्थं विप्रेभ्यो गोशतं चरेत् ॥  
 द्विगुणं पट्टभद्रे च तद्द्वारेषु तदर्द्धतः ।  
 प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं वैश्ये<sup>१</sup> क्षत्रियहत्याया ॥  
 एवं शुद्धिमवाप्नोति वीरहत्याविमुक्तये ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे वैश्यस्य<sup>२</sup>  
 क्षत्रियहननप्रायश्चित्तम् ।

(१) भवेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) वैश्यः क्षत्रियहत्याया इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) वैश्यस्येति क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



अथ शूद्रस्य वैश्यहत्याप्रायश्चित्तमाह ।

कृष्णपुराणे—

वणिजं पादजोहत्यात् अज्ञानाज् ज्ञानतोऽपि वा ।

धनार्थमुत्तरोषार्थं परप्रेषणया नृप ॥

चौरैः सह मिलित्वा वा उत मार्गनिरोधतः ।

राजा तं दण्डयेत् पश्चात् कौशल्यान ययार्हतः ॥

स्ववर्णाधिकवर्णत्वान्मौमलं दण्डमेव वा ।

लिङ्गपुराणे—

शूद्रो धनार्थमन्यार्थं वणिजं हृत्यधर्मेतः ॥

राजा सम्यग्विचार्य्यार्थं तं मौमल्येन शिक्षयेत् ।

उत हृत्वा तु सर्वस्वं निर्वास्यो विषयादहिः ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति स राजापि न दोषभाक् ।

मौमलदण्डाभावे सर्वस्वं हृत्वा देशान्निर्वास्यः । एतेन  
शुद्धीभवति ।

महानारदीये—

शूद्रो न्यायपरीतात्मा विषमोऽपि महापटि ।

ग्रामे वा पट्टने वापि यदि हन्याद्वणिक्पतिम् ॥

राजा सम्यग्विचार्य्यार्थं तं मौमल्येन दण्डयेत् ।

स्ववर्णाधिकवर्णत्वा न्मौमल्यमिति निश्चितम् ॥

१. स्ववर्णाधिक इति लेखितपुस्तकेपाठः ।

२. हृत्वा इति लेखितपुस्तकेपाठः ।



अथवाऽऽहत्य सर्वस्वं निर्व्वस्यो राष्ट्रतः क्षणात् ।

पश्चात्पापविशुद्धार्थं शूद्रोदयाद् गवां दश ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति शूद्रोमुक्तोऽथ हृत्यया ।

तत्पत्न्यां तत्सुते गर्भे पादमर्द्धं तदर्द्धतः ॥

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं ऋषिभिर्ब्रह्मवादिभिः ।

तत्पत्न्यां पञ्च गवोदेयाः । तत्सुते तदर्द्धम् । तद्गर्भपातने  
पादप्रायश्चित्तमिति सर्वत्र योजनीयम् । यत्र गवोऽनिर्दिष्टा  
स्तत्र तेन<sup>१</sup> वृषभा देयाः ।

इति हेमाद्रौ शूद्रस्य वैश्यहत्याप्रायश्चित्तम् ।

अथ वैश्यस्य शूद्रहत्याप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

वैश्यः शूद्रं यदा हत्वा तत्पत्नीं पुत्रमेववा ।

अज्ञानाद् यदि वा ज्ञानात् सङ्गरं वा नराधिप ॥

राजा तं शतनिष्केण दण्डयेदविचारतः ।

वैश्यो देहविशुद्धार्थं दश धेनूः समाचरेत् ॥

मत्स्यपुराणे—

मत्सराद्द्रव्यलोभाद्वा ऊरुजः पादजं हनेत् ।

राजा तं दण्डयेद्द्वीमान् शतनिष्कमशङ्कितः ॥



पश्चाद्देनुशतं दद्यात् परलोकदिदृक्षया<sup>१</sup> ।  
 एतेन शुद्धिमाप्नोति नीचवर्णविहिंसनात् ॥  
 अज्ञानाज् ज्ञानतस्तात परप्रेरणहिंसया ।  
 निमित्तैर्वा स्वयं वापि वैश्यः शूद्रं हनेद् यदि ‡  
 राजा तं सम्यगालोच्य निश्चित्य बहुधा तथा ।  
 तस्यैव धनसम्पत्तिं विचार्य पुरवासिनः ॥  
 अस्ति चेद्यदि सामर्थ्यं शतनिष्केण दण्डयेत् ।  
 दरिद्रश्चेत्तदा राजन् निर्व्यास्यो विषयाद्वहिः ‡  
 पुनः स्वदेह<sup>२</sup>शुद्ध्यर्थं धेनुदानशतं विदुः ।  
 तत्पत्नीहनने त्वर्द्धं तत्पुत्रे पादमाचरेत् ॥  
 मङ्गरं तस्य तत्पुत्रान् ऊरुजो निहनेद् यदि ।  
 दश गावस्तदर्द्धञ्च तत्पादञ्च यथाक्रमम् ॥  
 गर्भमात्रे तु गामिकां कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

एतदज्ञानविषयम् । ज्ञात्वा प्रायश्चित्तं द्विगुणम् । राजदण्डस्तु  
 यमोक्तः<sup>३</sup> ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

वैश्यस्य शूद्रहत्याप्रायश्चित्तम् ।

(१) दिदृक्षया इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) पुनश्च देहशुद्ध्यर्थं मिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

३ यमोक्ते इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



अथ चाण्डालादिवधप्रायश्चित्तमाह ।

पूर्वजो यदि चाण्डालं नीर्थे जनसमाकुले ।  
रज्जुपाषाणलगुडैः कोपेन सहता वृतः ।  
निहनेत् परबुद्ध्या वा परार्थं वा जनेश्वर ॥  
नित्यकर्माणि सर्वाणि तस्य विप्रस्य पापिनः ।  
नश्यन्ति<sup>१</sup> पितृकार्याणि उपकारो यथा खले ।  
प्राङ्निवाकमते स्थित्वा राजा<sup>२</sup> तं प्रसमीक्ष्य च ।  
दण्डयेच्छतरूप्येण वाग्भिः पश्चाच्च दण्डयेत् ।  
विप्रो देहविशुद्ध्यर्थं षड्वदं व्रतमाचरेत् ।  
तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेव च ।  
ब्रह्मोपदेशः कर्त्तव्यः पञ्चगव्यस्य भक्षणम् ।  
एवं शुद्धिमवाप्नोति चाण्डालहनना<sup>३</sup>द् द्विजः ॥ इति ।

स्कन्दपुराणे—

ब्राह्मणो जनमन्त्रोभे अनावृष्टि<sup>४</sup>भयादिषु ।  
अज्ञानाद् यदि वा ज्ञानात् चाण्डालं यदि हन्ति वै ॥  
रज्जुपाषाणदण्डैर्वा पाशैर्लोहमयै स्तथा ।  
तस्य पुण्यानि नश्यन्ति पितृकार्याणि यानि च ॥

(१) न शान्तिपितृकार्याणि इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) राजानं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) हनने द्विजः इति क्रातपुस्तके पाठः ।

(४) अनावृष्ट्या भयादिषु इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



राजा सम्यग् विचार्याथ प्राङ्निवाक मते स्थितः ।  
 दण्डयेत् शतरूप्येण तस्य सम्भाषणं त्यजेत् ॥  
 ततो विप्रः प्रशमनं<sup>१</sup> षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेव च ।  
 एवं शुद्धिमवाप्नोति चाण्डालहननादिह ।

निङ्गपुराणे --

चाण्डालं हन्ति यो विप्रो रज्जुपाषाणमुष्टिभिः ।  
 अज्ञान<sup>२</sup>हननाद्वातु रोषाद्वा कामकारतः ॥  
 परिपटाक्षामवाप्याशु षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 तत्पत्नीहननेत्वर्द्धं जरुजस्य तदर्द्धतः ।  
 पादजस्य तदा शुद्धिर्यदा राजा प्रशिक्षयेत् ॥

ब्रह्मचाण्डालग्रामचाण्डालतुरुस्कवधे प्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे---

परार्थं काशिकायातो<sup>३</sup> ज्वेताग्निः कीकमागतः ।  
 तर्ह्येत ब्रह्मचाण्डाला वाङ्मात्रेणापि नालयेत् ॥

१। प्रशमना. इति क्रीतलेखितपुस्तके पाठः ।

२। अज्ञानजननभ्रान्त्या इति लेखितपुस्तके पाठः ।

३। काशिकायां यो दत्ताग्नि इति लेखितपुस्तके पाठः ।



एतेषां हनने तत्रायश्चित्ताकरणे चाण्डालहननप्रायश्चित्तवत्  
सर्वं कुर्यात् । अलं मीमांसया । तुरुष्कस्य हनने तत्पत्नीनां पुत्राणां  
च<sup>१</sup> गर्भमोचने च<sup>२</sup> चाण्डालहननप्रायश्चित्तवत् सर्वं कुर्यात् ।

मार्कण्डेयः—

पित्रोरब्दं परित्यागी साक्षाच्चाण्डालजन्मवान् ।

निष्पुत्रस्य पितृव्यस्य अविभक्तस्य यो द्विजः ॥

स तुरुष्को भवेद्भूमौ दीनसन्त्यागवानिह ।

निष्पुत्रस्याविभक्तस्य भ्रातुःश्राद्धं परित्यजेत् ॥

स भूमौ रजको भूयात् सर्ववर्णवह्निष्कृतः ॥

एते ग्रामचाण्डालाः षोडशविधाः तानेतानाह ।

गरुडपुराणे—

रजकश्चर्मकारश्च नटो वुरुड एव च ।

कैवर्त्तमेदभिल्लाश्च स्वर्णकारश्च सौविकः ॥

कारुको लोहकारश्च शिलाभेदी तु नापितः ।

तक्षकस्तिलयन्त्री च सूनश्चक्री तथा ध्वजी ॥

एते षोडशधा प्रोक्ताश्चाण्डाला ग्रामवासिनः ।

एतेषां दर्शनं स्पर्शः सम्भाषणमतः परम् ॥

स्नानभोजनवेलायां जपहोमार्चने तथा ।

एतेषां दर्शनं भाषां श्रोतुं नेच्छन्ति सूरयः ॥

(१) क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(२) क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।



दर्शने सूर्येऽग्नौ लोको भोजने भोजनं त्यजेत् ।

सम्भाषणे च पाणिभ्यां श्रोत्रे सम्यगुपसृशेत् ॥

उत ब्राह्मणसम्भाषां कृत्वा दोषात्प्रमुच्यते ।

एतेषां हनने विप्रादीनां पृथक् पृथक् प्रायश्चित्तमाह ।

अज्ञानाद्ब्राह्मणो हत्वा रजकं लगुडादिभिः ॥

रूपकाणि शतं दद्याद् राजा तं पापकारिणम् ।

पश्चाद्देहविशुद्ध्यर्थं पराकं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

चर्मकारे नटे चैव राजा दण्डेन दण्डयेत् ।

ततो देहविशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रद्वयं चरेत् ।

राज्ञाऽसौ पूर्ववद्दण्डो नटएवं रहोद्विजः ॥

तदैव देहशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रद्वयं चरेत् ।

वुरुडं मुखजोहत्यात् प्रमादाद्देवचोदितः ।

राजा तं पूर्ववद्दण्डात् ततो देहविशुद्ध्ये ॥

कुर्यात्पराकं सहसा नान्यथा शुद्धिरीरिता ।

कैवर्त्तहनने राजा पूर्ववद्दण्डयेद्विजम् ॥

पराकं पूर्ववत् कुर्यादात्मनः शुद्धिहेतवे ।

मेढं हत्वा द्विजः कुर्यात् शुद्ध्यर्थं चान्द्रभक्षणम् ॥

पूर्ववद् दण्डयेद्राजा विप्रं तं न विचारयेत् ।

द्विजो युडेऽन्यमंस्कारे भिक्षमज्ञानतो हनेत् ॥



तत्रैव पूर्ववद् राजा दण्डयेद्दम्भविप्लवम् ।  
 ततः पापविशुद्ध्यर्थं द्विजः कुर्यात्पराक्रमम् ॥  
 हत्वा द्विजः स्वर्णकारं प्रमादादुतवा बलात् ।  
 तत्रापि पूर्ववद् दण्ड्याद्राजा निश्मलमानसः ॥  
 द्विजो देहविशुद्ध्यर्थं महासान्त्वयनं चरेत् ।  
 सौमिकं ब्राह्मणोहत्वा बलादज्ञानतोऽपि वा ।  
 कुर्याद्देहविशुद्ध्यर्थं यतिचान्द्रायणं ततः<sup>१</sup> ॥

अत्रापि पूर्ववद् दण्डयेद् राजा ।

तक्षकं तिलहन्तारं द्विजोहत्वा प्रमादतः ।  
 शिशुचान्द्रायणं कुर्याद् राजदण्डपुरःसरम् ॥  
 सूनं वा चक्रिणं वापि विप्रोयदि निपातयेत्<sup>२</sup> ।  
 दण्डयेत् पूर्ववद् राजा प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥  
 तत्पादं शुद्धये कुर्यात् तत्पुत्रस्य क्षये कृते ।  
 तदङ्गं तच्छिशौ प्रोक्तं तदङ्गं गर्भपातने ॥  
 एतदङ्गं द्वयोः प्रोक्तं एतेषां हनने नृप ।  
 प्रायश्चित्तं तथा विप्रैर्मुनिभिः क्षत्रवैश्ययोः ॥  
 तत्पत्नीनां तदङ्गं स्यात्तदङ्गं शिशुगर्भयोः ।  
 शूद्रोहन्यादिमान् यत्र राजा धर्मेण दण्डयेत् ॥

(१) चरेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) निपातवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



ब्रह्मचाण्डालग्रामचाण्डालतुरुस्कवधे प्रायश्चित्तम् । ४१

हनने हननं कुर्यात् स्तेये स्वर्णाधिकेषु च ।  
मुषित्वा हस्तयोर्भूषां हस्तं क्षिन्द्यात् प्रयत्नतः ॥  
नामिकाभरणे नासां कर्णौ कर्णविभूषणे— ।  
कुर्यादुक्तविधानेन सर्वपापोपशान्तये ॥

उक्तं तत्कृत्यम् ।

पापं हिंसां न कुर्वीत कर्मणा मनसा गिरा ।  
वर्त्तयेद् यदि मूढात्मा महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
प्रायश्चित्तविशुद्धात्मा पापमुक्तीर्भवेत्सदा ।  
पापं विगूह्य मनसा पुण्यमानन्त्यमिच्छति ॥  
तत्पुण्यान्न विगुध्येत मलमुष्टिर्यथा जलैः ।  
ततो हिंसां न कुर्वीत कर्मणा मनसा गिरा ॥  
यदि हिंस्याज्जनं वा यः पुमान् मामं तु पापभाक् ३ ।

इति हेमाद्रौ चाण्डालसमवध प्रायश्चित्तम् ।



अथ निमित्तब्रह्मवधप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

नारी वा पुरुषो वापि विधवा वा तपस्विनी ।  
धनार्थमथ 'पारार्थं' पश्वर्थं चैत्रमेव वा ॥  
येन वापि निमित्तेन येन केनापि हेतुना ।  
यमुद्दिश्य त्यजेत् प्राणान् तमाहु ब्रह्मघातकम् ॥  
निन्दया विधवा साध्वी तदर्थं चेत् त्यजेदसून् ।  
बन्धूनां पुरतः पापी तमाहु ब्रह्मघातकम् ॥  
अयं मुषित्वा हि धनं सर्वेषां हि समृद्धिमान् ।  
इति यो वदते पापं पुरतः पापवान् पुमान् ॥  
सत्यं तदथ मिथ्या वा तदर्थं यस्त्यजेदसून् ।  
तमुद्दिश्य वधे विप्रै स्ते दण्ड्या राजवल्लभैः ॥  
इत्येवमादिभिर्दोषैर्ब्रह्महत्यानिमित्तजैः ।  
यदि यो हन्यते विप्रः प्रायश्चित्ती स पूर्वजः ॥  
राजातं दण्डयेत्पश्चात्पापिनं पापिनां वरम् ।  
तत्सामर्थ्यं परामृश्य सहस्रं शतमेव वा ॥  
एतत्पापविशुद्ध्यर्थं षड्विंशं कृच्छ्रमाचरेत् ।



शिवपुराणे —

धनार्थं चन्द्रद्वारार्थं पश्वर्थं वा जनेश्वर ॥  
यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणान् तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ।  
तद्दोष परिहारार्थं षड्वन्दं कृच्छ्रमाचरेत् ॥  
ब्राह्मणभु परित्याज्यः प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ।  
राजापि तं तथा कुर्यात् अन्नपानादिभाषणैः ॥

इति हेमाद्रौ निमित्तब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् ।

अथ सुरापानप्रायश्चित्तमाह ।

महानारदीये—

गौडी पैष्टी च माध्वी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।  
चतुर्वर्णैरपेया स्यात् तथा स्त्रीभिश्च पण्डिता' ॥

(१) चातुर्वर्णैरपेया स्यात् स्त्रीभिः सार्द्धं पिवेद्यदि ।

ब्रह्महत्याव्रतं मस्यक् तच्चित्तपरिवर्जितम् ।

पश्चाज् ज्ञात्वा सुरापीति पश्चात्तापममन्वितः ।

राजद्वारमुपागम्य राज्ञेमस्यङ् निवेदयेत् ।

मभाममीपे राजानं जनसङ्घममाकुलम् ।

इत्यधिक. पाठः क्रीतपुस्तके अत परमुपलभ्यते ।



क्षीरं घृतं वा गोमूत्रं एतेष्वन्यतमं द्विजाः ।  
 [ पक्वाग्निसन्निभां कृत्वा स्वयमेव नचापरैः ॥ ]  
 स्नात्वाद्रुवासा नियतो नारायणमनुस्मरन् ।  
 पक्वाग्निसन्निभां कृत्वा पिवेच्च कुडुपं तथा ॥  
 तत्तु<sup>१</sup> लोहेन पात्रेण आयसेनापिवा पिवेत् ।  
 ताम्रेण वाथ पात्रेण तत्पीत्वा मरणं व्रजेत् ॥  
 सुरापी शुद्धिमाप्नोति नान्यथा<sup>२</sup> शुद्धिरिष्यते ।  
 [ अज्ञानाज्जलबुद्ध्या तु सुरापानं द्विजश्चरेत् ॥  
 ब्रह्महत्याव्रतं सम्यक् तच्चिह्नपरिवर्जितम् ।

सुरा द्वादशाविधास्ताएवाह ।

तालं हिन्तालजं चैव द्राक्षाखर्जूरसम्भवम् ॥  
 मधुरं शैलमारिष्टं मैत्र्यं नारिकेलजम् ।  
 गौडी मार्ध्वीच पैष्टीच मद्यं द्वादशधा स्मृतम् ॥  
 एतेष्वन्यतमं वापि न पिवेच्च कदाचन ।  
 एतेष्वन्यतमं यस्तु पिवेदज्ञानतो द्विजः ॥

[१] सुरां वा राजसन्निधौ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[२] अनयोरेखयोरन्तर्गतः पाठः लेखितपुस्तके नोपलभ्यते ।

[३] अस्मात्पूर्वं 'स्वगृह्याग्नौपचेत् सम्यक् समिदाधानं पूर्वकं' मित्येवं अधिकं सुपलभ्यते क्रीतपुस्तके ।

[४] एतां लोहेन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[५] पश्चात्तेनैव दापयेदिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[६] अनयो रेखयोरन्तर्गतः पाठः क्रीतकागापुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।



तस्योपनयनं भूयस्तत्र कच्छत्रयं चरेत् ।  
 यदि रोगनिवृत्त्यर्थमपेयार्थं सुरां पिवेत् ॥  
 तस्योपनयनं भूयस्तथाचान्द्रद्वयं चरेत् ।  
 सुरापस्पृष्टमन्नञ्च सुराभाण्डोदकं तथा ।  
 सुरापानसमं प्राहुस्तथा चान्द्रस्य भक्षणम् ॥

लिङ्गपुराणे—

गौडी माध्वीच पैष्टीच विज्ञेयात्रिविधासुरा ।  
 चतुर्वर्णैरपेयास्यात् स्त्रीभिः सार्द्धं पिवेद्यदि ॥  
 ब्रह्महत्याव्रतं सम्यक् तच्चिह्नपरिवर्जितम् ।  
 पञ्चाज् ज्ञात्वा सुरापीति पश्चात्तापसमन्वितः ॥  
 राजद्वारमुपागम्य राज्ञे सम्यङ् निवेदयेत् ।  
 सभासमीपे राजानं जनसङ्घसमाकुले ॥  
 क्षीरं घृतं वा गोमूत्रं सुरां वा राजसन्निधौ ।  
 पक्वाग्निसंनिभां कृत्वा स्वयमेव न चापरैः ॥  
 स्नात्वाद्रवामा नियतो नारायणमनुस्मरन् ।  
 तान्तु लोहेन पात्रेण आयसेनापि वा पिवेत् ॥  
 ताम्रेण वाय पात्रेण तत्पीत्वा मरणं व्रजेत् ।  
 सुरापि शुद्धिमाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥ ]

एतामां तिसृणामेव प्राशनं मरणान्तप्रायश्चित्तमेव, नान्यत् ।

तथाच ब्रह्माण्डे—

गौडी माध्वीच पैष्टीच विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।  
 एतां वर्णाश्च चत्वारो न पिवेयुः कदाचन ॥



एकां वा यो द्विजः पीत्वा अज्ञानाद् 'गतिमाप्नुयात् ।  
 पश्चात्सुरेति <sup>१</sup>बुद्ध्वा चेत् प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
 राजद्वारमुपागम्य राज्ञे सत्त्वं निवेदयेत् ।  
 राजापि सम्यगालोच्य मेलयित्वा सभां ततः ॥  
 सभापि धर्मशास्त्रेषु दृष्ट्वा निष्कृतिं <sup>२</sup>माचरेत् ।  
 क्षीरं घृतं वा गोमूत्रं सुरां वा राज सन्निधौ ॥  
 स्वगृह्याग्नौ पचेत् सम्यक् समिदाधानपूर्वकम् ।  
 स्नात्वाद्रिवासा नियतो नारायणमनुस्मरन् ॥  
 एतां लोहेन पात्रेण आयसेनापि वा पिवेत् ।  
 ताम्रेण वाथ पात्रेण तत् पीत्वा मरणं व्रजेत् ॥  
 सुरापी शुद्धिमाप्नोति पश्चात्तेनैव दापयेत् ।  
 परलोकक्रियां सम्यग् धर्मशास्त्रेण मार्गतः ॥  
 तत्रो<sup>३</sup>पेक्षा न कर्तव्या पतितोऽयं न संशयः ।  
 यथा पीत्वा<sup>४</sup> सुरां पीत्वा मृत्वा शुद्धो न संशयः ॥  
 सभा वा भूपतिर्वापि तत्र पापेन दोषभाक् ।  
 सुरापं दण्डयेद्राजा मरणं यदि नेच्छति ॥

(१) ज्ञानाद्गतिमाप्नुयात् इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) बुद्ध्वा चेत् इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(३) आदरादिति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(४) तत्रापेक्षा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

४ यथा पीत्वा सुरां त्यक्तमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



ब्रह्मसूत्रं शिखां सम्यक् चुटित्वा वापयेच्छिरः ।  
 सुराभाण्डं ललाटे तु स्थापयित्वा नयेत् सुधीः ॥  
 आनीय मृन्मयं भाण्डं सुरापूरितमादरात् ।  
 बद्धा कण्ठे खरं यानमारोप्य नगरात्ततः ॥  
 निःक्रान्त्वा ध्वनयन् भृत्यै रटित्वा नगराद्वहिः ।  
 प्रोत्सार्थं महसा राजा न दुष्टस्तेन कर्मणा ॥  
 पापी वा द्वादशाब्दं तु कपालध्वजवर्जितम् ।  
 ब्रह्महत्या व्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नान्यथा ॥

एतत् प्रायश्चित्तं त्रिविधसुरापानविषयम् । अन्यसुरापाने  
 प्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

माधुरं शैलमारिष्टमैर्यं नारिकेलजम् ।  
 तालं हिन्तालजं चैव द्राक्षाखर्जूरसम्भवम् ॥  
 वृक्षोद्भवमिदं मद्यं नवधा परिकीर्तितम् ।  
 एतैश्चन्यतमं वापि पिवेहै न कदाचन ॥  
 एतैश्चन्यतमं यस्तु पिवेदज्ञानतो द्विजः ।

(१) निःस्नानं इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) कथित्वा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) न दोष स्तेन कर्मणा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) न पापी द्वादशाब्दं इति लेखितपुस्तके पाठः ।



तस्योपनयनं भूयस्तप्तकच्छत्रयं<sup>१</sup> चरेत् ।  
 सुरापस्पृष्टमन्नं च सुराभाण्डोदकं तथा ॥  
 सुरापानसमं प्राहुः स्वत्र<sup>२</sup> चान्द्रस्य भक्षणम् ।  
 तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्यस्य सेवनम् ॥  
 यदिरोगनिवृत्त्यर्थमौषधार्थं सुरां पिबेत् ।  
 तस्योपनयनं भूयस्तथा चान्द्रत्रयं विदुः ॥  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।

तदाह आपस्तम्बः—

“सुरापोऽग्निस्पर्शां सुरां पिबेत् । मृतः शुद्धो भवति ।”

तथाच श्रुतिः—

“न सुरां पिबेत् । न कलञ्जं भक्षयेत् । न तस्यैव प्रायश्चित्तम् ।  
 मरणान्तमेवेति” ।

यदि द्विजोरहसि सुरां पीत्वा पत्नीपुत्रादिषु मञ्चरन् वर्त्तयेत्  
 वमनादिना च पश्चात्<sup>३</sup> प्रकटितः । तदा तत्पत्नीपुत्रादीनां  
 दिनादि<sup>४</sup>पक्षमाससमसंख्यया पृथक् प्रायश्चित्तमाह—

स्कन्दपुराणे—

द्विजो यदि सुरां पीत्वा रहः पुत्रादिषु स्थितः ।

पश्चाद्देवात् सुरापीति ज्ञात्वा पुत्रादयः कथम् ॥

(१) तप्तकच्छं समाचरेत् इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) तथा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) वमनात्पापविख्यातः पश्चात्तप्तकटीकृतः इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(४) दिनादीत्यङ्गः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



दिनत्रये यदा मङ्गस्तदीपोऽथ दिनं सुधीः ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात् शुद्धोभवति मङ्गलः ॥  
 दशरात्रं भवेत्सङ्गः पापिनाऽनेन सङ्गकृत् ।  
 ज्ञात्वा पश्चात्तदा स्नात्वा श्रयुतं जपमाचरेत् ॥  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।  
 पक्षमात्रे भवेत्सङ्गः पापिनाऽनेन यस्य हि ॥  
 प्राजापत्यं ततः कृत्वा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।  
 माममात्रं भवेत्सङ्गो दैवादयदि विगर्हितः ॥  
 तदा चान्द्रायणं कुर्यात् पञ्चगव्यं ततः परम् ।  
 ऋतुमात्रं भवेद्यस्य मङ्गस्तेनैव पापिना ।  
 पूर्ववदपनं कृत्वा स्नात्वा 'शुचिरलङ्कृतः' ।  
 गोमहस्रं द्विजानां<sup>१</sup> च दत्त्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् शुद्धीभूयात् ततः परम् ।  
 संवत्सरं भवेत्सङ्गः पत्नीपुत्रेषु वामिनः<sup>२</sup> ॥  
 तत्पत्नीसुतजाः सर्वे तत्समाः स्युर्न संशयः ।  
 परित्याज्याः सदा विप्रैर्वेदधर्मपरायणैः ॥

तेषां पत्नीपुत्रादीनां माक्षात्सुरापानप्रायश्चित्तवन्मरणान्तं माभूत्,  
 किन्तु संवत्सरादूर्ध्वं अयं सुरार्पाति<sup>३</sup> ज्ञाते देहशुद्धिं कामयमानाः

१) शुद्धिरलङ्कृत इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

२) द्विजादीनामिति लेखितपुस्तके पाठः ।

३) स वामिन इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

४) अयं सुरार्पाति ज्ञात्वा इति लेखितपुस्तके पाठः ।



परिषदं मेलयित्वा तदनुज्ञया परिषदुपस्थानपूर्वकं गोशतं विप्रेभ्यो  
दत्त्वा पञ्चगव्यप्राशनं कुर्युः<sup>१</sup> पुनः शास्त्रविधिना ब्रह्मोपदेशे गायत्री-  
प्रदानम् । श्रोत्रियादभ्यसेयुः ।

तदाह कात्यायनः ।

तत्पत्नी तनयोवापि ज्ञानीचेद्वत्सरा<sup>२</sup>त्परम् ।  
सुरापीति सभां तत्र मेलयित्वा प्रणम्य च ॥  
गोशतं विप्रमुख्येभ्यो दत्त्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
पुनः कर्म ततः पश्चाद् गायत्रीदानमेव च ॥  
पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् शुद्धोभवति सङ्गृह्यत् ।  
एतेन शुद्धिमाप्नोति तत्पत्नी पुत्रएव च ॥  
अनादरेण शाठ्येन आलस्याद्वा द्विजोयदि ।  
यावत्कालं पुनः कर्म न कुर्यादात्मशुद्धये ॥  
यागादिकं वा दानं वा जपोवा पैतृकादिकम् ।  
तत्सर्वं निष्फलं भूयात् पुष्पं बन्धतरोरिव ॥  
अकृत्वा चेत् पुनः कर्म व्रतं कुर्यात्<sup>३</sup> सुतादिषु ।  
मृतो नरकमाप्नोति न संस्कार्यस्तदा<sup>४</sup> द्विजैः ॥

(१) क्रीतलेखितपुस्तकयोः कुर्युरित्यंशो नोपलभ्यते ।

(२) वत्सरद्वयमिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) व्रतो गृह्यातुनादिषु इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(४) तदात्मजै रिति क्रीतपुस्तकेपाठः ।



अतः शीघ्रं प्रकुर्वीत यदा दोषसमुद्भवः ।

तदैव परिहर्त्तव्यइत्याह भगवान् यमः ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये सुगोपात्रि-

पत्नीपुत्रादीनां संसर्गप्रायश्चित्तम् ।

3735

---



## अथ म्रियप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

समक्षं वा परोक्षं वा बलाच्चौर्येण वा पुनः ।  
ग्रोन्यस्य हरते वित्तं तमाहुस्तेयिनं बुधाः ॥  
पारक्यं यत्सुवर्णं तन्महापापसमुद्भवम् ।  
तद्भृत्वा ब्राह्मणीयस्तु महापातकिनां वरः ॥  
सुवर्णं रजतं ताम्रं पारक्यं योहरदुद्विजः ।  
स याति नरकं घोरं पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥

सुवर्णप्रमाणमाह रजतताम्रकांस्यवस्त्रादीनाञ्च ।

स्कन्दपुराणे—

सुवर्णस्य प्रमाणञ्च सन्वाद्यैः परिकल्पितम् ॥  
वक्ष्ये शृणुष्वं विप्रेन्द्राः प्रायश्चित्तैश्च साधनम् ।  
गवाक्षगतमार्त्तण्डरश्मिमध्ये प्रदृश्यते ॥  
वसरणुप्रमाणन्तु रजद्व्युच्यते दुर्धः ।  
वसरणुवृष्टकं लिप्तं तत्त्रयं राजसर्पपम् ॥  
सर्पपाणामष्टकञ्च तत्त्रयं ? यवमुच्यते ।  
यवत्रयं कृष्णलं स्यान् माषः स्यात् तस्य पञ्चकम् ॥

लेखितपुस्तकेतु अतः परं—

तद्वयं रूपकं प्रोक्तं तत्पञ्चकं तदुच्यते ।  
तद्वयं रूपकं इत्यक्तं मुनिमित्रेन्द्रादिभिः ।



तद्वयं रूपकं प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ।  
 माषषोडशमानन्तु सुवर्णमिति कथ्यते ॥  
 पलं सुवर्णाश्चत्वारस्तच्चत्वारि ध्रुवोभवेत् ।  
 चत्वारिंशद्भ्रुवाणान्तु भारद्वत्युच्यते दुधैः ॥  
 सुवर्णेन यथाक्रीतं रजतं धर्ममार्गतः ।  
 यावान् रजतराशिश्च तद्राजतमुदाहृतम् ॥  
 हत्वा ब्रह्मस्वमज्ञात्वा द्वादशाब्दन्तु पूर्ववत् ।  
 कपालध्वजहीनन्तु ब्रह्महत्याव्रतचरेत् ॥  
 गुरुणां चैव कर्तृणां धर्मिष्ठानां तथैवच ।  
 श्रोत्रियाणां द्विजानान्तु हत्वा हिम कथं भवेत् ॥  
 दग्धात्मदेहो देहे च सम्पूर्णं तर्पयेद्दृष्टम् ।  
 कारीषा'च्छादितो दग्धः स्तेयदोषात् प्रमुच्यते ॥

ब्रह्माण्डपुराणि ।

अज्ञानाद्ब्राह्मणं हत्वा ब्रह्मस्वप्रणयादिह ।  
 कपालध्वजहीनन्तु ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ॥  
 दग्धा'त्मदेहं देहे च सम्पूर्णं लेपयेद् दृष्टम् ।  
 कारीषभारतोदग्धः स्तेयपापात् प्रमुच्यते ॥

(—) अनयोरेखयोरन्तर्गतः पाठः लेखितपुस्तके नोपलभ्यते ।

(१) कारीषभारतो दग्ध इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ॥

(२) गत्वात्मदेह इति लेखितपुस्तकपाठः ।



यद्वांसे मुसलं धृत्वा विकीर्यात्मशिरोरुहान् ।  
 गत्वा राजानमाचक्षेत् तं हन्यान्मस्तके मकृत् ॥  
 मृतः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ।

तदाह आपस्तम्बः

“स्तेनः प्रकीर्णकेशः अंसे मुसलमाधाय राजानं गत्वा कर्मा-  
 चक्षीत । तेन एनं हन्यात् वधे मोक्षः ।” (आ सू १-६-२५-४)

अल्पसुवर्णापहारप्रायश्चित्तमाह—

गुरुणां यज्ञकर्तृणां धर्मिष्ठानां तथैव च ।  
 ओत्रियाणां द्विजानान्तु हत्वा हेम कथं भवेत् ॥  
 ब्रह्मस्रं यस्तु हत्वा च पश्चात्तापमवाप्य च ।  
 पुनर्धृत्वा<sup>१</sup> तु विप्रेभ्यः प्रायश्चित्तविधिः कथम् ॥  
 तत्र सान्तपनं कृत्वा द्वादशाहोपवासतः ।  
 शुद्धिमाप्नोति विप्रेन्द्राश्चन्यथा पतितो भवेत् ॥  
 तसरेणुसमं हेम हत्वा कुर्यात् समाहितम् ।  
 प्राणायामद्वयं सम्यक् तेन शुध्यति वत्सरात् ॥  
 प्राणायामद्वयं कृत्वा हत्वा सर्षप<sup>२</sup>मात्रकम् ।  
 प्राणायामाश्च चत्वारो राजसर्षपमानतः ॥  
 गौरसर्षप<sup>३</sup>मानन्तु हत्वा स्वर्णं विचक्षणैः ।  
 स्नात्वा च विधिवत् कार्यं गायत्र्यष्टसहस्रकम् ॥

(१) पुनर्धृत्वा तु विप्रेभ्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ॥

(२) सर्षपमानकमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) गौरसर्षपमानन्तु इति लेखितपुस्तकपाठः ॥



यवमात्रसुवर्णस्य स्तेयशुद्धौ जपेद्विजः ।  
 आसायं प्रातरारभ्य गायत्रीं वेदमातरम् ॥  
 हेम्नः कृष्णलमात्रस्य हृत्वा सान्तपनं चरेत् ।  
 माषत्रयेण हेम्नस्तु प्रायश्चित्तन्तु कथ्यते ॥  
 गोमूत्रपक्वयवभुग् देवार्चनपरायणः ।  
 मासत्रयेण शुद्धः स्यान्नारायणपरायणः ॥  
 माषमात्रसुवर्णस्य स्तेयं कृत्वा प्रमादतः ।  
 जपेद्द्वै लक्षगायत्रीमन्यथा दोषमश्रुते ॥  
 निष्कमात्रसुवर्णस्य हरणे विप्रसत्तमाः ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा षडब्दं शुद्धिमाप्नुयात् ॥  
 किञ्चिन्नूनं सुवर्णस्य स्तेयं मुनिवरोत्तमाः ॥  
 गोमूत्रपक्वयवभुग् अर्द्धे<sup>(१)</sup>नैकेन शुध्यति ।  
 सम्पूर्णस्य सुवर्णस्य स्तेयं कृत्वा मुनीश्वराः ॥  
 ब्रह्महत्याव्रतं कुर्याद्द्वादशाब्दं समाहितः ।  
 रत्नासनमनुष्यस्त्रीभूमिधेन्वादिकेषु च ॥  
 सुवर्णसदृशेष्वेषु प्रायश्चित्ता<sup>(२)</sup>र्द्धमुच्यते ।

मार्कण्डेय पुराणे—

विप्रस्वहरणे क्षत्रियादीनां प्रायश्चित्तं विशिनष्टि ॥

(१) कुर्यादिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) शब्देकेनैव शुध्यति इति लेखितपुस्तके शब्देकेनैव शुध्यति इति क्रीतपुस्तके पाठः समुपलभ्यते ।

(३) प्रायश्चित्तार्थमुच्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



( स्तेयंकृत्वा सुरां पीत्वा राजा योधर्मवत्सलः )  
 विप्रस्वहरणि राजा स्वर्णमात्रमयाधिकम् ।  
 मृत्वा नरकमाप्नोति ब्रह्महति वदन् द्विजाः ॥  
 पश्चात्तापसमायुक्तो ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ।  
 तेभ्यश्च दत्त्वा तद्वैम पश्चाच्चान्द्रायणद्वयम् ॥  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा जनवत्सभ ।

कूर्मपुराणे—

अज्ञानाद्वाहुजो हत्वा विप्राणां स्वर्णमुत्तमम् ॥  
 गुरुणां यज्ञकर्तृणां धर्मिष्ठानां तथैव च ।  
 श्रोत्रियाणां द्विजानान्तु विधवानां विशेषतः<sup>१</sup> ॥  
 पूर्व्ववद् घृतलिप्ताङ्गः कुर्वन् सूर्यावलोकनम् ।  
 कारीषाच्छादितो दग्धः स्तेयपापात्प्रमुच्यते ॥

लिङ्गपुराणे—

ब्रह्मस्वं क्षत्रियो हत्वा अश्वमेधेन शुध्यति ।  
 आत्मतुल्यं सुवस्वं वा दद्याद्वा गोममं तथा<sup>२</sup> ॥  
 ब्रह्मस्वं क्षत्रियो हत्वा पश्चात्तापमवाप्य च ।  
 पुनर्दत्त्वा तु विप्रेभ्यः प्रायश्चित्तविधिः कथम् ॥

(—) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

(१) वैष्णवानां विशेषतः इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) पूर्वाहृतवसुत्यागं इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) चरेत् इति लेखितपुस्तके पाठः ।



तत्र मान्तपनं कृत्वा द्वादशाहोपवासतः ।

शुद्धिमाप्नोति विप्रेन्द्रा अन्यथा पतितो भवेत् ।

पुनरपि राज्ञां स्तेयप्रकारमाह—

शिवरहस्ये—

अन्यायादिप्रग्रामेषु अनाथेभ्यो धनं च यत् ।

अदण्डेभ्यो यथा वित्तं तत् स्तेयं भूभुजामिह ॥

तदपि स्तेयमित्युक्तं पूर्ववच्छुद्धिमाप्नुयात् ।

सुरामपि तथा राजा पीत्वा ज्ञानात् क्वचिद्द्विजाः ॥

अग्निदग्धां सुरां पीत्वा राजा मृत्वा ततः शुचिः ।

तथापि विप्रमुख्यानां द्वायुतं धेनुमाचरेत् ॥

स्तेयं कृत्वा सुरां पीत्वा मृत्वा राजा विशुध्यति ।

द्विजेभ्यो द्वायुतं धेनुमिति यत्तदसाम्प्रतम् ॥

वर्णचतुष्टयानां नारीणां मद्यपानसम्भवे, न मरणान्तम् । त्यागएव

परम् । न पोषणोपायः । क्षत्रियशूद्रस्त्रीणां केचिद्वधमिच्छन्ति ।

सुवर्णस्तेयेऽपि एवमेव वेदितव्यम् ।

तदाह कात्यायनः—

विप्रादीनां तु नारीणां स्तेयं वा पापमेव वा ।

सम्भवेद् यदि दैवेन नेच्छन्ति मरणं बुधाः ॥

(१) न पोषणेऽपाय इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) क्षत्रियशूद्राणामिति क्रीतपुस्तके पाठः ॥



न त्याज्यास्तु स्त्रियः काश्चिन्नोपोष्या वेष्मभिः किलः  
क्षत्रियादेर्वधः प्रोक्तो विप्राणां गर्हितं स्मृतम् ॥

लिङ्गपुराणे—

सुरापानं वणिक् कृत्वा सुवर्णं वा द्विजन्मनाम् ।  
क्षत्रवच्छुद्धिमाप्नोति शूद्रोमौसल्यमर्हति ॥

स्कन्दपुराणे—

सुरां पीत्वा सुवर्णं वा हृत्वा यदि वस्त्रिक्पतिः ।  
राजवच्छुद्धिमाप्नोति द्वायुतं वा गवां चरेत् ॥

नागरखण्डे—

जरुजस्तु सुरां पीत्वा हृत्वा स्वर्णं द्विजन्मनाम् ।  
क्षत्रवद्देहशुद्धिः स्याद् अन्यथा द्वायुतं गवाम् ॥  
तच्छूद्रस्तु सुरां पीत्वा हृत्वा हेम द्विजन्मनाम् ।  
राजदण्डः स्वधर्मेण मुमलेन हतः शुचिः ॥

स्कन्दपुराणे—

पादजस्तु यदा हृत्वा सुवर्णं पूर्वजन्मनाम् ।  
सुरां पीत्वा मरुज्ज्ञात्वा 'मौसल्यं' वधमर्हति ॥

(१) क्षत्रियवच्छुद्धिमाप्नोति इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) मौसल्यवध इष्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



विष्णुधर्मोत्तरे—

अद्धिजो 'हेमहारी यः सुरापायी' द्विजन्मनाम् ।  
तत्स्त्रीणां त्यागएव स्यात् सोऽपि मौसल्यं मर्हति ॥

राजविजये—

पादजो यदि मोहाद्वा सुरां पीत्वा द्विजन्मनाम् ।  
हृत्वा हेम कथं तस्य राज्ञा<sup>१</sup> मौसल्यमिष्यते ॥  
तत्स्त्रीणां त्यागएव स्यात् ध्वजो वा मुनिचोदितः ।

इति हेमाद्रौ क्षत्रियादीनां विप्रस्वहरणे  
प्रायश्चित्तम् ।

\* विष्णुपुराणे इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(१) हेमहृत्वा य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुरां पीत्वा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) राजा मौसल्यमिष्यते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ रजतादिस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

निङ्गपुराणे—

सुवर्णेन प्रमाणेन ज्ञात्वा यद्राजतं भवेत् ।  
तावद्वृत्वा द्विजो यस्तु स्तेयी इत्युच्यते बुधैः ॥

स्कन्दपुराणे—

राजतं येन तद्वित्तं पूर्वमानेन धर्मतः ।  
तद्वृत्वा मुखजः सम्यग् अज्ञानाद्राजनन्दन ॥  
स्तेयी इत्युच्यते सद्भिः प्रायश्चित्ती भवेद् द्विजः ।

चतुर्विंशतिमते

हरेद्रजतमज्ञानात्<sup>१</sup> पूर्वजो यदि दैवतः ।  
स मृत्वा पूर्ववद्राजन् शुद्धिमाप्नोति निश्चितम् ।

महानारदीये

सुवर्णमानानन्यस्मिन् रजतस्तेयकर्मणि ।  
कुर्यात् मान्तपनं सम्यग् अन्यथा पतितो भवेत् ॥  
दशनिष्कान्तपर्यन्तमूर्द्धं निष्कचतुष्टयात् ।  
हरेच्चेद्रजतं<sup>२</sup> विद्वान् कुर्याच्चान्द्रायणं द्विजाः ॥  
दशादिशतनिष्कान्तरजतस्तेयकर्मणि ।  
चान्द्रायणद्वयं प्रोक्तं तत्पापपरिशीधकम् ॥

(१) येन यत् क्रीतमिति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) राजतं हरेदिति क्रीतपुस्तके पाठः ॥

(३) अज्ञानाद्राजतं हृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(४) हृत्वा चेद्रजतं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



शताद्रूढं सहस्रान्तं प्रोक्तं चान्द्रायणत्रयम् ।  
महस्त्रादधिके स्तेये ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ॥

स्कन्दपुराणे —

सुवर्णादधिकस्तेये रजतस्य विशांपते ।  
कुर्यात् मान्तपनं सम्यक् अन्यथा दोषभाग् भवेत् ॥  
दशनिष्कान्तपर्यन्तमूर्द्धं निष्कचदुष्टयात् ।

स्कन्दपुराणे—

सुवर्णादधिकस्तेये रजतस्य विशांपते ।  
कुर्यात् मान्तपनं सम्यक् अन्यथा दोषभाग् भवेत् ॥  
दशनिष्कान्तपर्यन्तमूर्द्धं निष्कचतुष्टयात् ।  
हत्वा चेद्रजतं विद्वान् कुर्याच्चान्द्रायणं द्विजः<sup>१</sup> ॥  
शताद्रूढं सहस्रान्तं प्रोक्तं चान्द्रायणत्रयम् ।  
महस्त्रादधिकस्तेये ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ॥

क्षत्रियविशां रजतस्तेये विप्रप्रायश्चित्ताद्विगुणं वेदितव्यम् ।  
शूद्रस्य मौसल्यमेव । तत्तत्स्त्रीणां रजतादिस्तेयसम्भवे<sup>२</sup> त्यागः  
पूर्ववन्न मरणादि ।

इति हेमाद्रौ रजतस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

(१) शुभमिति लेखितपुस्तके पाठः ।

(२) त्याज्या इति क्रीत लेखितपुस्तकयोः पाठः ।



अथ ताम्रस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

( हत्वा विप्रः पलशतं ताम्रं पारक्यमादरात् ।

स्तेयी इत्युच्यते सद्भिर्न सम्भाष्यः कदाचन ॥

पलप्रमाणं पूर्वमुक्तं )

मुखजो लोभत स्ताम्रं पारक्यं वै शतं पलम् ।

स्तेयी महद्भिर्गदितस्तस्य नास्तीह निष्कृतिः ॥

गरुडपुराणे—

अनाथानाञ्च नारीणां विधवानां द्विजन्मनाम् ।

गुरुणां कर्मनिष्ठानां साधूनां ताम्रमादरात्

स्तेयेन वा वलाकारात् विप्रो हत्वा शतं पलम् ।

न तस्य निष्कृतिर्नास्तिर्मरणान्तवधादिह ॥

पलद्वये पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

प्राजापत्यं पञ्चपले तप्तं दशपले स्मृतम्<sup>१</sup> ॥

त्रिंशत्पले तु चान्द्रं स्यात् पञ्चाशत्तत्रयं स्मृतम् ।

ताम्रे षष्टिपले प्रोक्तं मामं कृत्वा घर्मर्पणम् ॥

कण्ठदघ्नजले स्थित्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ।

ताम्रे शतपले राजन् स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः ॥

(१) लिङ्गपुराणे इति लेखितपुस्तके पाठः ।

१ अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।

(२) पञ्चशतमिति लेखितपुस्तके पाठः ।

(३) प्राजापत्यं पञ्चगव्यं तप्तं दशपले स्मृतम् । इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



त्रिः परिक्रमणं<sup>१</sup> कुर्याद् भुवश्चान्द्रं ततः परम् ।

हत्वा शतपलं ताम्रं<sup>२</sup> स्वर्णस्तेयसमं विदुः ॥

शतपलताम्रस्तेयात् द्विजः सुवर्णस्तेयवत् प्रायश्चित्तं कुर्यात् ।  
नात्र मरणान्तं प्रायश्चित्तम् । सुवर्णस्तेयसममित्युक्तम् अतो न  
मरणान्तप्रायश्चित्तम् । अयुतधेनुदानादिकमेव<sup>३</sup> क्षत्रियादिस्तेय  
प्रायश्चित्तम् । एवं न सुवर्णस्तेयादिवत् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
ताम्रस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) कृत्वा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) भुक्त्वा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) क्षत्रियादेस्तेयप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तके पाठः ।



अथ कांस्यस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

( कूर्मपुराणे—

कांस्यं यत्पापसम्भृतं पारक्यं यदि लोभतः ।  
स्तेयं कृत्वा द्विजोयस्तु स पापफलमश्नुते ॥

लिङ्गपुराणे—

कांस्यस्तेयी महापापी रौरवं नरकं व्रजेत् ।  
पश्चाद्भवति पापात्मा कारुको जायते भुवि ॥

महाभारते—

कांस्यं हृत्वा द्विजो लोभात् पारक्यं द्विजहेतुकम् ।  
महान्तं नरकं गत्वा हीनवर्णः प्रजायते ॥

चतुर्विंशतिमते—

कांस्यपित्तलमुख्येषु आयमान्तेषु पञ्चसु ।  
सहस्रनिष्कमाने तु पारक्यं परिकीर्तितम् ॥  
प्रायश्चित्तन्तु लोहानां स्तेये रजतवत्स्मृतम् ॥

कांस्यपित्तलस्तेये वर्णत्रयस्य रजतस्तेयवत् प्रायश्चित्तम् पलसंख्यया

(—) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

(१) काशीपुस्तक क्रीतपुस्तकयोः स्कन्दपुराणे ।

मुखजो लोभमन्त्रः पारक्यं वै पलं ततः ।

स्तेयं कृत्वा द्विजोयस्तु स पापफलमश्नुते

इत्यधिकपाठः समुपलभ्यते .



वेदितव्यम् । न निष्कादिप्रमाणम् । शूद्रस्य 'राजत'लघुगुरुक्रमेण  
अङ्गुलिच्छेदादिकं कारयितव्यं न मौसल्यम् । द्रव्यस्याल्पत्वात् ।  
तत्स्त्रीणामेवमेव सम्भवे प्रायश्चित्तं करणीयम् ।

इति हेमाद्रौ प्रायश्चित्ताध्याये कांस्यस्तेयादि-  
प्रायश्चित्तम् ।

- 
- (१) शूद्रस्येति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।  
(२) लघुक्रमेण इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।
-



अथ धान्यस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

मरीचिः—

ब्राह्मणो द्रव्यलोभेन पारक्यं धान्यमाहरेत् ।

द्रोणं वा प्रस्थमात्रं वा हत्वा नरकमश्नुते ॥

लिङ्गपुराणे—

मुषित्वा यो द्विजो मोहाद्धान्यं द्रोणप्रमाणकम् ।

पारक्यं धन्यमतुलं मृत्वा तु नरकं व्रजेत् ॥

तदन्ते भुवमासाद्य सदने मूषको भवेत् ।

धान्यप्रमाणमाह—

कूर्मपुराणे—

पुराणं षष्टिभिर्वीजैस्तद्वयं कोशउच्यते ॥

कोशद्वयन्तु लिङ्गं स्यात् तसत्तद्वयमुच्यते ।

अञ्जलिस्तद्वयं राजन् तद्वयं<sup>१</sup> कुडुपं स्मृतम् ॥

कुडुपद्वयं तु प्रस्थं स्यात् द्रोणस्तेषां चतुष्टयम् ।

द्रोणानां विंशतिः खारो धान्यमानमितीरितम् ॥

द्रोणद्वयं तु भारः स्यात् ज्ञेयस्तत्पलसङ्ख्याया ।

कोशस्तेये<sup>२</sup> दश प्रोक्तं सावित्रीपठनं मुदा ॥

(१) तद्वयं पुरुषं स्मृतम् इति क्रौतपुस्तके पाठः ।

(२) मानद्वयं तु सम्भूतं तद्वयं कुडुपं स्मृतमित्यधिकमर्द्धमितः पूर्वं क्रीतं लेखितपुस्तकयोः ससुपलब्धम् ।

(३) आपस्तम्बे दश प्रोक्तमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



अञ्जलीं शतगायत्रीजपः पापप्रणाशनः ।

महस्रं पुरुषे प्रोक्तं मानि द्वायुतमुच्यते ॥

लक्षं तु कुडूपे प्रोक्तं प्रस्थे लक्षद्वयं चरेत् ।

द्रोणे तु दशलक्षं स्यात् खारीधान्ये यथा शृणु ।

सुवर्णस्नेयिनः पापे प्रायश्चित्तं द्विजैर्मुदा<sup>१</sup> ॥

तत्तदाचरणीयं स्याद् अन्यथा पतितो भवेत् ।

गोधूमतिलमाषाणां स्तेयेन<sup>२</sup> द्विगुणं स्मृतम् ॥

श्यामाकमुद्गब्रीह्याणां प्रमाणानां तथैवच ॥

<sup>३</sup>पात्रतालकुलित्यानां <sup>४</sup>यावपूर्व<sup>४</sup> समारेचत् ।

ब्राह्मणो यदि लोभेन शोषयेत् खारिकाद्वयम् ॥

घृताक्तदेहः सहसा कारीषेण सहाग्निना ।

दग्धः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा गतिरिष्यते ॥

राजवैश्ययोरेवं प्रायश्चित्तं अन्यस्तेये विवेचनीयम् । शूद्राणां

स्मैमलप्रायश्चित्तम् । राजवैश्ययोर्विवाहादिषु संस्कारबलवत्तया

विप्रप्रायश्चित्तवदुक्तम् ।

इति हैमाद्रौ धर्मशास्त्रे धान्यस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

(१) द्विजेमुदा इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) स्तेयिनोद्विगुणं कृतमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) याचनालकुलित्यानामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) यावपूर्वमप्यचरेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ वस्त्रस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

वस्त्रं मुष्णाति यो विप्रः पारक्यं शास्त्रगर्हितम् ।

अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि तस्य दोषो महान् भवेत् ॥

कूर्मपुराणे—

विप्रो यदि ह पारक्यं वस्त्रमज्ञानतः खलः ।

तदा दोषमवाप्नोति तं त्यजेदन्यजं यथा ॥

शिवपुराणे—

यो विप्रो दुर्जनासक्तो परवस्त्रं मुषेद्यदि ।

तस्यैवं पुण्यनाशः स्याद् इति शास्त्रेषु निश्चितम् ॥

तदन्ते नरकं याति जायते वस्त्रहीनवान् ।

कूर्मपुराणे—

विप्रो मुष्णाति यद्वस्त्रं पारक्यं धर्मगर्हितम् ।

यमलोकमुपागम्य तत्र स्थित्वाऽन्यजन्मनि ॥

पुनर्भुवमुपागम्य बहुपुत्रो विवस्त्रवान् ।

प्रायश्चित्तमाह देवस्वामी—

स्थूलतन्तुकृतं वस्त्रं सूक्ष्मतन्तुविनिर्मितम् ॥

चित्रवस्त्रं तथा नीलं रक्तं कौसुमैरञ्जितम् ।

पट्टवस्त्रं तु कौशेयं ऊर्णमथमतः परम् ॥

(१) महानभूत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) रञ्जनमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



श्वेतवस्त्रमिति प्रोक्तं तत्तद्वस्त्रानुसारिणि ।  
 स्थूलतन्तुकृते वस्त्रे स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः ॥\*  
 पश्चात्तापसमायुक्तः प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
 [सूक्ष्मतन्तुकृते वस्त्रे तु मुषित्वा तप्तकच्छद्वयं चरेत् ॥]  
 नीलीमये सूक्ष्मवस्त्रे चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ।  
 बहुमूल्ये रक्तवस्त्रे कौशेये च मुनीश्वराः ॥  
 सद्यः पतति पापात्मा घृताक्तोऽग्निं विशेत्ततः ।  
 सुवर्णस्ते यिनं प्राहुः तं मौसल्यं विदुर्वुधाः ॥  
 नान्यथा गतिरस्तीह तस्य भूयिष्ठपापिनः ।  
 पुनर्दत्त्वा तु तद्वस्त्रं पश्चात्तापसमन्वितः ॥  
 प्राजापत्यत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ।  
 उक्तं यथा क्षत्रियाणां तथा सर्वं समाचरेत् ॥  
 तथा विप्रादिदाराणां वस्त्रतोये यथाक्रमम् ।  
 विप्राणां यत् प्रायश्चित्तं उक्तं तदर्द्धं तद्द्वारक्षत्रियादीनाम् ।  
 तद्द्वाराणामेवं प्रायश्चित्तार्द्धक्रमेण योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

वस्त्रस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

\* अतः परम् "शुद्धेन मनसा राजन् तप्तकच्छद्वयं चरेत्" इत्यधिकः पाठः  
 क्रीतपुस्तके समुपलभ्यते ।

(१) पश्चात्ताप इत्याद्यर्द्धं क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।

— अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।



## अथ गुरुतल्पगमनप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

गुरुतल्पगतानां तु प्रायश्चित्तमिहोच्यते ।  
जननी च सपत्नी च राज्ञः<sup>१</sup> पत्नी गुरोस्तथा ॥  
मातुलानी स्वभगिनी स्वसा ज्येष्ठस्य नायिका ।  
स्वश्रुः कनिष्ठभार्या च आत्रेयी च पतिव्रता ॥  
एकादश समास्त्रेताः स्वमात्रा राजबहूभा ।  
पूज्याश्च वन्दनीयाश्च पोष्या वस्त्रादिभूषणैः ॥  
द्विजोऽपि न द्रोहकृत् स्यात्कर्मणा मनसा गिरा ।  
जननी सर्वभूतानां पूज्या वन्द्याश्च तास्तथा ॥  
अज्ञानान्मातरं गत्वा तत्सपत्नीमथापि वा ।  
स्वयमेव स्वमुष्कं तु च्छिन्यात् पापमुदीरयन्<sup>२</sup> ॥  
हस्ते गृहीत्वा तन्मुष्कं निर्गच्छेन्निकर्तति दिशम् ।  
गच्छन्नेवाग्रतः स्वस्य कदाचिन्न विचारयेत्<sup>३</sup> ॥  
अपश्यन् पृष्ठतो गच्छेत् प्राणान्तं प्राप्य<sup>४</sup> शुध्यति ।  
मेरुप्रपतनं<sup>५</sup> वापि कुर्यात् पापमुदीरयन् ।

१ राजपत्नी इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) पापमुदारयेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

३ विचारयन् इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

४ यस्य शुध्यति इति लेखितपुस्तके पाठः ।

५ मेरुप्रपतनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरं—

राज्यं<sup>१</sup> क्षोभे महातीर्थे संग्रामे देशविप्लवे ॥  
 पत्नीष्वन्यासु नारीषु स्थितासु मोह<sup>२</sup>पीडितः ।  
 मातरं वा सपत्नीं वा स्वदारभ्रान्तिमाविशन् ॥  
 पश्चाज्ज्ञात्वा तु मातेति पश्चात्तापमुपाविशन् ।  
 स्वयमेवासिना मुष्कं कृत्वा पापमुदाहरन् ॥  
 अपश्यन् पृष्ठतो गच्छेत् प्राणान्तं प्राप्य शुध्यति ।  
 रेतःसेकात् पूर्वमेव निवृत्तो यदि मातरि<sup>३</sup> ॥  
 ब्रह्महत्याव्रतं कुर्याद् रेतः<sup>४</sup>सेक्ताऽग्निदाहनम् ।  
 ज्वलितां सूर्मिमालिङ्ग्य मृतः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

ब्रह्माण्डपुराणे—

महातीर्थेषु संग्रामे जनक्षोभे महाभये ।  
 [ तव राजन् सतीसङ्गे महानसि समुद्भवे ॥ ]  
 कामातुरः स्वपत्नीति मातरं वापि पक्षजाम् ।  
 गत्वा सकृत्स्वदारिषु पूर्वचिह्नविवर्जिताम् ॥  
 मातरं सहसा बुद्ध्वा पश्चात्तापपरायणः ।  
 असिना तीक्ष्णधारेण शिश्रं स वृषणं सकृत् ॥

(१) पुरक्षोभ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) स्थिरपीडित इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मातरं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) रेतःसिक्तोऽग्निदाहनम् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

[ अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



छित्वाञ्जलीं समाधाय न पश्चादवलोकयन् ।  
 स्मरन् नारायणं सम्यक् पुरःस्थमविचारयन् ।  
 निर्ऋतिं दिशमागच्छेत् मृत्वा शुद्धिमवाप्नुयान् ॥  
 रेतःसेकात् पूर्वमेव स्वमार्तेति प्रबोधयत् ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् कपालध्वजवर्जितम् ॥  
 कारीषवह्निना दग्धः शुद्धिमाप्नोति मातृगः ।

मरणादित्यर्थः ।

---



## अथ राजदण्डमाह ।

लिङ्गपुराणे —

विचार्य मातृगं विप्रं स्वयमेव न चारतः ।

न चारिभ्य इत्यर्थः ।

भगाकारमयः कृत्वा तापयित्वा हुताग्ने ।

लेखयेद्दल'वद्भृत्यैलेलाटे मातृगामिनः ॥

आरोहेद्रासभं यानं निःक्वाणं ध्वनयन् जनैः ।

तद्वत्तं पूर्ववद्भृत्वा धर्मव्रतमिहाचरेत् ॥

[ तत्पत्नीष्वथवा दद्यात् तासु दोषो न संस्पृशेत् ] ।

अटित्वा नगरीं सर्वां जनोऽयं गुरुतल्पगः ॥

इत्युच्चैर्भाषयन् भृत्यैः पुरद्वारमुपागमन् ।

तत्रैव नापितेनाशु असिना तीक्ष्णधारया ॥

क्वेदयित्वाथ तन्मुष्कं निधायाथ तदञ्जली ।

कृत्वा स पापो मुष्कं तत् गृहीत्वा निःकृतिं दिशम् ॥

गच्छन् प्राणान् परित्यज्य ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ।

अथवा सून्निमातप्य वक्त्रौ राजा प्रयत्नतः ।

तैलेन सून्निमातप्य भृत्यैरालिङ्गयेन्मुदा ॥

मृत्वा शुद्धिमवाप्नोति स राजा दोषवान्नहि ।

मेरुप्रपतनं वापि नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

(१) लेखयेद् भृत्यवलयन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

[—] अयं पाठः काशीपुस्तके नोपलभ्यते ।

(२) परित्यक्त्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



रतः सेकात्पूर्वं मार्तति ज्ञात्वा ब्रह्महत्याव्रतं कपालध्वजवर्जितं  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति । नान्यैः सेतुदर्शनादिभिः । क्षत्रिया-  
 दीनां मातृगमनेऽप्येवमेव प्रायश्चित्तं योजनीयम् । शूद्रस्य मौसल्य-  
 मेव प्रायश्चित्तं पापनाशकं स्यात् । तस्याः स्त्रियास्तदर्शादि ।  
 सारमाहृत्याल्पकुटीरं कृत्वा मातरमवस्थाप्य मयूराण्डप्रमाणैः  
 कवलैः प्रत्यहं पोषयेत् । न मातृभ्रान्तिः । नृता चेत् पतित-  
 प्रायश्चित्तादेन शरीरशुद्धिं कृत्वा परलोकक्रियां कुर्यात् ।

तदाहापस्तम्बः—

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ।

उत्पथप्रतिपन्नस्य परित्यागो विधीयते ॥

इतिवत् मातृत्यागो न विगर्हितः । तस्याः शुश्रूषा तु नित्या पति-  
 ताया अपि । सपत्नीप्रभृतिस्त्रीगमनेष्वेवं प्रायश्चित्तं वेदितव्यम् ।

कूर्मपुराणे—

मवर्णीत्तमवर्णस्त्रीगमनेन विचारतः ।

ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् द्वादशाब्दं समाहितः ॥

अमत्याभामतो पृच्छेत् स्ववर्णाच्चोत्तमाञ्च वा ।

कार्गोपवर्जिना दग्धः शुद्धिं याति द्विजोत्तमः ॥

रतः सेकात् पूर्वमेव निवृत्तो यदि मातरि ।

ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् पंचदेकाग्निदाहकम् ॥

स्ववर्णीत्तमवर्णस्य निवृत्तो वीर्यसेचनात् ।

ब्रह्महत्याव्रतं तत्र षड्बन्धं विधिपूर्वकम् ॥



क्षत्रियां पितृभार्यान्तु गत्वा विप्रः सकृन्मुने ।  
ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् नवाब्दं विशुद्धतत्परः ॥  
वैश्यायां पितृभार्यायां षडब्दं व्रतमाचरेत् ।

मातृष्वसारञ्च पितृष्वसारम्  
आचार्यपत्नीं श्वशुरस्य पत्नीम् ।  
आचार्यपुत्रीमथ मातुलानीम्  
पुत्रीं स गच्छेद्यदि कामतो यः ॥

दिनद्वये ब्रह्महत्याव्रतं कुर्याद्यथाविधि ॥  
एकस्मिन्नेव दिवसे बहुवारं त्रिवाषिकम् ।  
एकवारं कृते त्वद्दं व्रतं कृत्वा विशुध्यति ॥  
दिनत्रये गच्छति चेत् वज्रो शुध्यति नान्यथा ।  
चाण्डालीं पुक्कसीं चैव स्नुषां च भगिनीं तथा ।  
मित्रप्रियां शिष्यपत्नीं यस्तु वै कामतो व्रजेत् ।  
ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् षडब्दं ध्वजवर्जितम् ॥

एतामां मातृव्यतिरिक्तानां पापशङ्कावतीनां त्यागएव परम् ।  
अन्यथा संसर्गतो दोषगुणा भवन्तीति ।  
तदाह कात्यायनः—

पतितां पुत्रगमनां मातरं पोषयेत् सुतः ।  
कुटीरं वलयाकारं सूक्ष्मं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥  
तत्र तां मन्निदृश्याय चतुर्भिः कवलैर्नृपः ।



मयूराण्डप्रमाणैस्तैः प्रत्यहं बन्धुमार्गतः ।  
 यावता म्रियते माता तावद्धृत्वा प्रयत्नतः ॥  
 पतितस्य यदुक्तं तत् प्रायश्चित्ताईमाचरेत् ।  
 परलोकक्रियाः सम्यक् कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
 अकृत्वा दोषमाप्नोति पुत्रस्तत्पापशुद्धये ।  
 एतासामार्यनारीणां त्यागएव विधीयते ॥

राजवैश्ययोरिदमेव प्रायश्चित्तं विधीयते ।

वर्णत्रयस्य विप्राणां भार्या माता विधीयते ।  
 तद्दारेषु यदा गच्छेद् वर्णत्रयमकामतः ।  
 तत्रापि पितृवद् बुद्ध्या प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
 शूद्रस्य मौमलं प्राहुरिति शास्त्रेषु निश्चितम् ।  
 कामः सर्व्वधनाहारी कामः पुण्यविनाशकृत् ॥  
 कामः पापकरो नित्यं कामोऽनर्थप्रदायकः ।  
 कामः शत्रुर्मनुष्याणां तस्मात् कामं परित्यजेत् ॥  
 संसारोऽस्मिन् महाघोरि मोहनिद्रासमाकुले ।  
 ये हरिं शरणं यान्ति कृतार्थास्ते न संशयः ॥  
 पुत्र-दार-गृह-क्षेत्र-धन-धान्य-विमोहिनीम् ।  
 लब्ध्वा मां मानुषीं वृत्तिं रे रे गर्व्वं तु माकृथाः ॥  
 मन्त्यज्य कामं क्रोधं च लोभं मोहं मदं तथा ।  
 परापवादं निन्दां च यजध्वं भक्तितो हरिम् ॥  
 माता हरिः पिता देवम् ज्येष्ठभ्राता जनार्दनः ।  
 गुरुर्विष्णुः प्रमन्नात्मा राजा प्रत्यक्षदेवतम् ॥



तद्वारास्तु तथाज्ञेयास्तस्माद्रोहं न कारयेत् ।

आपस्तम्बः—

“गुरुतल्पगामी सवृषणं शिश्रं परिवास्याञ्जलीं आधाय  
दक्षिणां दिशमनावृत्तिं व्रजेत् । ज्वलितां वा सूर्भिं परिष्यज्य  
समाप्नुयात्”\* इति दोषस्मरणात् तद्वारेषु द्रोहवृद्धिर्न कार्या ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

गुरुतल्पगमनप्रायश्चित्तम् ।

---

आपस्तम्बधर्मसूत्रे १-६-२५ १-२ ।

---



## अथ तत्संयोगिप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

महापातकसंसर्गे महामान्तपनं स्मृतम् ।  
सङ्गं कृत्वा<sup>(१)</sup> मासे तु उपवामान् दशाचरेत् ॥  
पराकं<sup>(२)</sup> मामसंसर्गे चान्द्रं मासत्रये व्रतम् ।  
कृत्वा षण्मामसंसर्गे कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम् ॥  
किञ्चिन्नूनाब्दसङ्गे तु षण्मामं व्रतमाचरेत् ।  
अब्दस्य त्रिगुणं प्रोक्तं ज्ञानात्सङ्गे यथाक्रमम् ॥  
यस्तु संवत्सरं त्वेतैः शयनासनभोजनैः ।  
वसेच्च<sup>(३)</sup> सहितं विन्द्यात् पतितं सर्वकर्मसु ॥  
महापातकिनस्त्याज्याः सर्वदा विप्रसत्तमैः ।  
महापातकिनो लोके दर्शनात् पापटायिनः ॥  
स्पर्शान्नरकटानित्यं स्मरणास्त्रोकहारिणः ।  
सत्सङ्गतिः<sup>(४)</sup> सदा नृणां कामधेनूपमास्मृता ॥  
अतः सत्सङ्गतिः कार्या नृभिः पुण्याभिन्नापिभिः ।  
पुण्यमेव सदा कार्यं पुण्यमेव सदा स्मरेत् ॥

(१) कृत्वा तु मासे तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पराकान् इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(३) वसेच्चेत् इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(४) सल्लोगति इति क्रीतपुस्तके पाठः ।



पुण्यमेव 'सदा पश्येत् तस्मात् पुण्याधिकं न च ।  
अतोमहद्भिः संसर्गः कर्त्तव्यो धर्म<sup>१</sup>वित्सुधीः ॥  
दुःसङ्गं वर्जयेन्नित्यं सुराभाण्डादिकं यथा ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
महापातकिसंसर्गप्रायश्चित्तम् ।

---

१ पुण्यमेवच संपश्येदिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

२ धर्म्मवित्सुभिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



[अथेदानीं उपपातकप्रायश्चित्तं ब्रुवन् गोवध-  
प्रायश्चित्तमाह ।]

मार्कण्डेय पुराणे—

सर्वेषामेव वर्णानां ब्राह्मणः परमोगुरुः ।

तथा च पशुजन्तूनां गोमर्तितेति प्रगीयते ॥

विप्रहत्या च गोहत्या सममेतद्वयं नृणाम् ।

पुरा चतुर्मुखो ब्रह्मा सृष्टादौ सृष्टवांश्च गाः ॥

यज्ञान् वेदांश्च विप्रांश्च अरणिं सुक्स्नुवादिकान् ।

सृष्टवान् यज्ञरक्षार्थं महीपालानतः परम् ॥

गावो विप्राश्च यज्ञाश्च पुनन्तीह<sup>१</sup> महीमिमाम् ।

गोहिंसां यो नरः कुर्यान्निष्कारणतया न्विह<sup>२</sup> ।

न तस्य निष्कृति<sup>३</sup>श्चास्ति प्रायश्चित्तशतैरपि ॥

गोमवएव कारणं हनने<sup>४</sup> मधुपर्कश्च । तयोरभावाद् गो-  
हिंसनं गर्हितमेव कलियुगे ।

अग्न्याधेयं गवालम्भं सन्नग्रासं पलपैतृकम् ।

देवरणं सुतोत्पत्तिं कलौ पञ्च विवर्जयेत् ॥

यज्ञार्थमेव गोहिंसनं नान्यदा<sup>५</sup> ।

---

[ अयं पाठः क्रीतकाशापुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।

(१) पुनन्ति हि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) चयः इति क्रीतपुस्तके यमः इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(३) निष्कृतिर्नास्ति इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(४) मधुपर्कश्च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) नान्यत्र इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



गोहिंसां मुखजः कृत्वा महापापमवाप्नुयात् ।  
तथैव विप्रहिंसाञ्च महतां गर्हितं द्वयम् ॥

हिंसा दशविधा ।

तदाह गौतमः—

क्रूररज्ज्वा कण्टबन्धो दारुबन्धस्तथा गले ।  
निराधारे स्थले बन्धस्तथा ग्रास<sup>(१)</sup>निपीडनम् ॥  
ताडनं रज्जुदण्डाद्यैस्तथा सञ्चाररोधनम् ।  
शृङ्गच्छेदस्तथा बाहोद्विवारं दोहनं तथा ॥  
वत्से मृते च क्षीराणामादानं चर्मवत्सतः ।  
इतीह दशधा हिंसा गवां प्रोक्ता मनीषिभिः ॥  
एताभिर्गा यदा हिंस्यात्तदा गोवध इष्यते ।  
गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिरितीरितम् ॥  
महापातकिनां चैव तथैव क्षुद्रपापिनाम् ।  
पापं चतुर्विधं प्रोक्तं शुष्कं चार्द्रं महत्तरम् ॥  
उपपातकमित्येतत् चतुर्धा परिकीर्तितम् ।  
उक्तस्यैतस्य पापस्य पञ्चगव्यं विशोधनम् ॥  
गौर्यस्य च गृहे नास्ति होमार्थं पापनाशिनी ।  
तद्गृहं रुद्रभूमिः स्याद्गृहस्थः स च पापकृत् ॥  
अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।  
सर्वभूतदयालुत्वं षड्विधं गृहमेधिनाम् ॥

(१) तथा ग्रामनिपीडने इति कोऽपुस्तकपाठः ।



गौर्यत्रैव सदा तिष्ठेत् तत् क्षेत्रं काशिकासमम् ,  
 न सन्ति तत्र पापानि तथा बालग्रहाग्रहाः ॥  
 नमस्कारैः सेवितव्या सत्यापि मनसापि गौः ।  
 तथा सम्पाद्य बहुभिर्धनैर्वा पापमुक्तये ॥  
 एतां धेनुं यदा विप्रो हिंस्याच्चेन्नगुडादिभिः ।  
 महापापमवाप्नोति योवा कोवा भुवस्तले ॥  
 तदन्ते भुवमासाद्य चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥

चण्डिकाखण्डे—

गोहन्ता यस्तु वै लोके रज्जुपाषाणवेष्टनैः ।  
 अरण्ये वा गृहे वापि रोषाद्वा कामकारतः ॥  
 यमालयमुपागम्य नरकञ्चानुभूय च ।  
 तदन्ते भुवमासाद्य जायते त्वर्शरोगवान् ॥

लिङ्गपुराणे —

यो द्विजोऽमदलोभेन मत्सरादोर्षया नृप ।  
 गां हत्वा यस्य कस्यापि विपिने वा जलाशये ॥  
 रज्जुकण्ठाशमभिघ्नोरैः कण्ठभेदनपौडया ।  
 भवेत्तस्य महान् दोषः प्रायश्चित्तीभवेद्भ्रुवम् ॥  
 हत्वा तु मुखजो ज्ञानान्मदेन महता हतः ।  
 नरकान्न निवर्त्तत प्रायश्चित्तं विना प्रभो ॥  
 पश्चात्तापसमायुक्तः पराकं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 अज्ञानतः पराकः स्यात् ज्ञात्वा चान्द्रायणं स्मृतम् ॥  
 कामतो गोवधे चैव शुद्धिर्दृष्टा मनीषिभिः ।



नागरखण्डे—

अकामतः कामतो वा विप्रो हन्याच्च गां शुभाम् ।  
तस्यैव शुद्धिरुदिता पराकश्चान्द्रभक्षणम् ॥  
उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्धिमान् ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति अशोरीरोगी भवेद्भुवि ॥

विष्णुधर्मोत्तरे—

सांपराकं ? च धेनुं यो मुखजो मत्सरोद्धतः ।  
हन्ति दण्डादिभिः पापी तस्य देहविशुद्धये ॥  
अज्ञानात्तु पराकः स्यात् ज्ञानाच्चान्द्रस्य भक्षणम् ।  
हत्वा<sup>१</sup> तु रोगिणीं वृद्धां पराकं कृच्छ्रमाचरेत् ॥  
युवतीं गां द्विजो हत्वा<sup>२</sup> कुर्याच्चान्द्रायणं सकृत् ।  
उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
गोवधप्रायश्चित्तम् ।

१ यो हत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२ हन्यादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ निमित्तगोवधप्रायश्चित्तमाह ।

कर्मपुराणम्—

अनाधारे स्थले बन्धो निराहारो गवामिह ।  
एभिर्निमित्तैरन्यैश्च पतनाद्भित्तिवृक्षयोः ॥  
यदा<sup>१</sup> म्रियेत वा धेनुर्हत्या तत्स्वामिनो भवेत् ।  
अतः स्वामी परामृश्य कुर्यात्तद्रक्षणं सदा<sup>२</sup> ॥  
तत्पोषणे महत्पुण्यमनन्तं परिकीर्तितम् ।  
तदुपक्षा महत्पापं पतनं जन्मजन्मसु ॥  
अग्निहोत्रस्य या धेनु र्या<sup>३</sup> धेनुः शम्भुभाषणे ।

अभिषेकार्थमित्यर्थः ।

या धेनुर्गुर्व्विणी राजन् या धेनुः कपिलात्मिका ।  
एतै<sup>४</sup>र्निमित्तैः सा धेनुर्हता यदियमाज्ञया ॥  
तत्स्वामी मुनिभिः प्रोक्तो गोहन्तेति न संशयः ।  
अग्निहोत्रादिधेनूनामेकां वापि निमित्तजैः ॥  
हन्ता तत्पापमोक्षार्थं पराको मुनिचोदितः ।  
इतरासां गवां राजन् निमित्तैरभिरग्रतः ॥  
हननं प्राप्यते दैवात् स्वामिना चान्द्रभक्षणम् ।  
अशक्तो रोगवृद्धाभ्यां हन्तिह्येतैः प्रमादतः ॥

१। यथा इति लेखितपुस्तके पाठः ।

२। सदा इति लेखितपुस्तके पाठः ।

३। तथा शम्भुं प्रपूजयेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४। तैर्निमित्तैः सा हि धेनु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तत्स्वामिने तप्तकृच्छ्रं मुनिभिः परिकीर्तितम् ।  
 अग्निदाहे प्रधानस्यच्छेदे रोगनिवृत्तये ॥  
 यदि दैवामृतिः प्राप्ता प्राजापत्यं विशुद्धिदम् ।  
 दारुणा गुरुणा कण्ठे लग्ने पतति<sup>१</sup> याच गौः ॥  
 मृता<sup>२</sup> तद्दोषशान्त्यर्थं पराकः कृच्छ्रमीरितम् ।  
 तत्सुतामध्यदेशे तु बन्धने ताडनेऽपि वा ॥  
 क्रियादेशे वनैकान्ते मृता या धेनुरग्रतः ।  
 प्राजापत्यद्वयं प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥  
 औषधं रोगमोक्षाय कर्त्ता कुर्याद्गवामिह ।  
 तेनौषधेन या धेनुर्मृतिमाप सुदुस्तराम् ॥  
 तत्र चान्द्रायणं प्रोक्तं प्रायश्चित्तं विशुद्धये ।  
 तत्र क्षीरधृतं धेनुरक्षणाय गवामिह ॥  
 कुर्यात् तद्विपरीतं चेन्मृता चेद्धेनुरग्रतः ।  
 तत्रैव हत्या महती तप्तकृच्छ्रद्वयं चरेत् ॥  
 पतने भित्तिवृक्षाणां शङ्कितानां नृपोत्तम ।  
 तत्र बद्धा च या धेनुर्मृता तत्पतने तथा ॥  
 तदा तद्देहशुद्ध्यर्थं प्रोक्तं चान्द्रायणं द्विजैः ।  
 काठिन्यरज्जुबन्धेन यदा गौर्निधनं गता ॥  
 पराकः पापशुद्ध्यर्थं वक्लिदाहेऽप्यमोचने ।  
 पराकस्तत्र योक्तव्यो निम्नोन्नतभुवःस्थले ॥

१ नयति या च गौः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ मृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तत्रापि पराकट्यर्थः ।

एतासां गवामेतैर्निमित्तैः हननप्राप्ती तद्दोषोपशान्त्यर्थं तत्त-  
त्प्रतिपदोक्तं प्रायश्चित्तम् । लोकसादृश्यात् तत्तत्कर्मभानुरोधेन  
नेच्छन्ति चेत् तदा दोषमाह—

गौतमधर्म—

एभिर्निमित्तैः स्वकृतैर्यदा यत्रैव धेनवः ।  
पञ्चत्वं यदि गच्छन्ति स्वामिनः पश्यतः सतः ॥  
हत्या प्राप्ता<sup>१</sup> सुमहती लोकद्वयविगर्हिता ।  
यस्य<sup>२</sup> दोषस्य यत्प्रोक्तं तत्तत्कुर्याद्विशुद्धये ॥  
अन्यथा लोकसादृश्यात् प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ।  
यदि<sup>३</sup> वर्त्तते लोकेऽत्र पुत्रदारप्रजाक्षयः ॥  
अन्ते नरकमासाद्य मातङ्गत्वमवाप्यते ।  
तदन्ते भुवमासाद्य भिल्लो भवति गर्हितः ॥  
तस्माद्देहविशुद्ध्यर्थं कुर्यान्निष्कृतिमुत्तमाम् ।  
विप्रहत्या च महती तथा धेनुविहिंसनम् ॥  
उभयोर्यदि हत्या तु कर्तुर्नोविहिता गतिः ।  
अप्रमत्ततया राजन् धेनवो<sup>४</sup> मातृवत्सदा ॥  
पोषणीयाः पालनीया वर्णैस्त्रिभिरिहादरात् ।

(१) हत्या च प्राप्ता महती इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) यदा दोषस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ वर्त्तयेद्यदि लोकेऽत्र इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ मृतवत्सदा इति क्रीतकर्मपुस्तकयोः पाठः ।



क्षत्रियवैश्ययोरप्येवं प्रायश्चित्तं निमित्तगोहनने वेदितव्यम् ।  
 शूद्राणामेतत्साक्षादनने शतरूपकेण दण्डः । विप्रस्त्रीणामेतासां  
 हनने विप्रस्याङ्गं प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियवैश्यस्त्रीणामपि स्वजाति-  
 पुरुषाणां प्रायश्चित्ताङ्गं कल्पनीयम् । शूद्रस्त्रीणां शूद्रवदाज्ञा राज्ञा  
 कर्त्तव्या न स्त्रीतिविचारणीयम् ।

तदाह लिङ्गपुराणे—

बाहुजोरुजपादाञ्जजातानां हनने गवाम् ।  
 निमित्तैर्वाथ साक्षाद्वा प्रोक्ता विप्रस्य निष्कृतिः ॥  
 निमित्तहनने वाथ विप्राणां यदुदीरितम् ।  
 तत्कर्त्तव्यं नृपैर्वैश्यैस्तत्स्त्रीणामिदमीरितम् ॥  
 विप्रस्त्रीणां तथाप्रोक्तं शूद्राणां प्राण<sup>१</sup>पीडनम् ।  
 तत्स्त्रीणाञ्च तथा कार्यं निमित्तेन शतं विदुः ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

निमित्तगोवधप्रायश्चित्तम् ।



## अथ गोवत्सहननप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणम्—

वत्सश्च त्रिविधः प्रोक्तो बालः पौगण्डको युवा ।

एतेषां हनने विप्रो निमित्तै रूत वा स्वयम् ॥

चाण्डालत्वमवाप्नोति त्रिषु जन्मसु पञ्चसु ।

अतो वत्साः पोषितव्या विप्रैर्लोकैस्सुभिः मदा ॥

यावत्<sup>(१)</sup> तृणभक्षणेन स्त्रोदरपूरणं न जानाति स बालः । मातरं  
त्यक्त्वा स्वेच्छया सञ्चरति स पौगण्डकोवत्सः । गर्भधारणसुखं  
ज्ञात्वा अनडुद्भिः सह सञ्चरति स युवा । वत्सजननातन्तरं गौः ।

एतेषां हनने पृथक् पृथक्<sup>(२)</sup> दोषं प्रायश्चित्तञ्चाह ।

कौर्म्यं—

स बालोदरपूर्त्त्यर्थं यावत्कालं तृणादनः ।

ऊधस्यां मातरं त्यक्त्वा सञ्चरन् स्वेच्छया नृप ॥

पौगण्डकः स विज्ञेयः सञ्चरन् मत्तमत्तवत् ।

गोवृषैः सह यः क्रोडन् स युवा त्रिविधः स्मृतः ॥

सा गौ र्या वत्समूर्त्त्या महापातकनाशिनी ।

एतेषां त्रिविधानाञ्च मध्येको यो निहन्यते ॥

येन हन्यते इत्यर्थः । कृन्दोवत् पुराणानीति कृत्वा अर्थसौष्ठवं न  
विचारणीयम् ।

(१) यवतृणभक्षणं इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(२) दोषप्रायश्चित्तमाह इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(३) अर्थसौष्ठवाद्विचारणीयमिति क्रीतपुस्तके पाठः ।



तदाह नारदीये--

“राजा योहन्यते तमाहुरात्मयूपो यज्ञोऽनन्तदक्षिण” इति

लिङ्गपुराणे--

वत्सानां त्रिविधानाञ्च एकं हन्याद्विजो यदि ।  
तत्तत्पापफलं भुक्त्वा चाण्डालत्वमवाप्यते ॥  
बालं हन्याद्विजोयसु क्षीरादानान्निमित्तजैः<sup>१</sup> ।  
प्राजापत्यद्वयं साक्षात् निमित्तैरेकमुच्यते ॥  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति अन्यथा पशुघातकः ।

स्कन्दपुराणे--

यो बालवत्सं कामेन निमित्तैर्वा स्वयं हनेत् ।  
तत्र देहविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥  
निमित्तैर्वा यदा हन्यात् क्षीरादानादिभिः क्रमात् ।  
निमित्तपापमित्युक्तं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥  
विप्रस्त्रीणां तद्वैद्यं स्यात् बालवत्सविहिंसने ।  
क्षत्रियाणां द्विगुणितं वैश्यानां त्रिगुणं भवेत् ॥  
तत्तत्स्त्रीणां तद्वैद्यं स्यात् पादजं दण्डयेच्छतम् ।  
पौगण्डकं तु योवत्सं निमित्तैर्वा स्वयं हनेत् ॥  
तत्रैवेदं विशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रं चरेत् पुरा ।

<sup>१</sup> क्षीरादाननिमित्तजैः इति कीर्तिपुस्तके पाठः ।



विशुद्धधर्मीत्तरे

येन विप्रेण पौगण्डोवत्सोयदि निहन्यते ।  
तस्य देहविशुद्ध्यर्थं तप्तकच्छत्रयं चरेत् ॥

शिवधर्मीत्तरे—

पौगण्डकं सदोन्मत्तो गोकुले स्वगृहेऽथवा ।  
निमित्तैः पूर्वजो विप्रो हन्यादेवं<sup>१</sup> प्रचोदितम् ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं चरेत्तप्तं यथाविधि ।  
पञ्चगव्यं ततः पश्चात् पिवेदज्ञाननाशनम् ॥  
क्षत्रियाणां द्विगुणितं वैश्यानां त्रिगुणं स्मृतम् ।  
विप्राङ्गनानां क्षत्रियादिस्त्रीणां तत्तत्प्रायश्चित्ताङ्गं कल्पनीयम् ।  
पादजं शर्तेन दण्डयेत् ।

गारुडपुराणे—

युवानं गोवृषं हन्यात् पूर्वजः स्वयमादरात् ।  
निमित्तैर्वाथ राजेन्द्र परप्रेरणया<sup>२</sup> तथा ॥  
महान्तं नरकं गत्वा जायते वृषसूनवान् ।  
वृषस्य शृङ्गद्वयसूचको तद्वत्सूनावस्य वत्सस्य हन्तुः, तत्स्थानं  
अङ्गुरद्वयवान् भवेदित्यर्थः ।

(—) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

(१) हन्याद्देवप्रचोदितः इति क्रीतपुस्तके पठ ।

(२) प्रेरणयाऽनया इति लेखितपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरे—

युवानं गोवृषं हत्वा पूर्वजो बाहुजो वणिक् ।  
महान्तं नरकं भुक्त्वा जायते शोकवान् भुवि ॥

स्कन्दपुराणे—

अरण्ये जलमध्ये वा स्वगृहे वा द्विजोत्तमः ।  
युवानं गोवृषं हन्यान्निमित्तैरुत वा स्वयम् ॥  
तत्तत्पापफलं भुक्त्वा जायते भुवि रोगवान् ।  
तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कुर्याच्चान्द्रस्थं<sup>१</sup> भक्षणम् ॥  
गोदानञ्च ततः कुर्यात्पञ्चगव्यमनन्तरम् ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नीरोगो जायते भुवि ॥  
विप्रस्त्रीणां तदर्द्धं स्यात्प्रायश्चित्तमुदीरितम् \* ।

क्षत्रियवैश्यानां तदङ्गनानाञ्च द्वैगुण्यं त्रैगुण्यं तदर्द्धं च क्रमेण  
योजनीयम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

गोवत्सहननप्रायश्चित्तम् ।

(१) चान्द्रायणव्रतमिति क्रीतपुस्तके पाठः ।

\* तत ऊर्द्धं गहनं गोवधप्रायश्चित्तवत् सुवर्णविक्रीतविकेकतया योजनीयं  
इत्यधिक पाठ मनुपन्यते क्रीतपुस्तके ।



## अथोत्सृष्टवृषहननप्रायश्चित्तम् ।

कूर्मपुराणे—

एकादशेऽङ्गि सम्प्राप्ते पित्रोर्मरणसम्भवे ।  
पिचाचत्वविमुक्त्यर्थं उत्सृष्टो यो वृषः परैः ॥  
हन्यते यदि राजेन्द्र अङ्कितः शिवमुद्रया ।  
शिवद्रोहीति विख्यातः सर्वधर्मवहिष्कृतः ॥  
मृत्वा नरकमासाद्य चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति कारीषहननादृते ॥

स्कन्दपुराणे—

पित्रोरर्थं तु काम्यार्थं जनैरुत्सृष्टमुत्तमम् ।  
शिवलिङ्गाङ्कितं सम्यक् शिवरूपं जनाधिप ॥  
वृषं हन्याद् यदा विप्रः केदारक्षेत्र<sup>१</sup>भक्षणात् ।  
परप्रेरणया वापि अरण्ये ग्रामएव वा ॥  
रज्जुबन्धादिभिः सम्यक् सहायैरुपदिष्टवान् ।  
तदुपायप्रदो मर्त्यः सदोपेक्षापरायणः ॥  
हन्ता तस्य महापार्पी चत्वारः पापभागिनः ।  
राजा तं दण्डयेत् सम्यग् विचार्य बहुवार्त्तया ॥  
तेषां भालेषु<sup>२</sup> कर्त्तव्यं तस्य लिङ्गं नृपोत्तमैः ।  
निःशाणं<sup>३</sup> वादयन् भृत्यैर्वृषहन्तेति सर्वतः ॥

(१) क्षेत्रभाषणादिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तेषां कालेषु कर्त्तव्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) निःशायं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अटित्वा नगरीं सर्वां निर्व्यास्या विषयाद्वहिः ।  
 तदा प्रभृति ते सर्वे तीर्थे तीर्थे समाचरन् ॥  
 आर्षेयेषु च देवेषु चरन्तः प्रत्यहं मुदा ।  
 पश्चिमद्वारकामेत्य हंसद्वारे तथोत्तरे ॥  
 तथैव पूर्वदिग्भागे गङ्गासागरसङ्गमे ।  
 तथैव दक्षिणे भागे चापाग्रे गन्धमादने ॥  
 एवं क्रमेण कुर्वन्तः<sup>१</sup> भूपरिक्रमणं त्रिभिः ।  
 चापकोटिमुपागम्य तत्र स्नात्वा दिनत्रयम् ॥  
 पश्चास्तापसमायुक्ताः सभामागम्य वाग्यताः ।  
 तदनुज्ञामवाप्याथ चरेयुश्चान्द्रभक्षणम् ॥  
 पञ्चगव्यं ततः पीत्वा गांदद्याद्विप्रपुङ्गवे ।  
 एतेन शुद्धिमाप्नोति वृषहा रघुनन्दन । इति ॥

ब्रह्मवैवर्ते—

यो विप्रोवृषभं हन्यात् शिवलिङ्गाङ्कितं तनौ ।  
 भाले<sup>२</sup> तप्तशिखं<sup>३</sup> कृत्वा निःशाणं<sup>४</sup> ध्वनयेत् स्वयम् ॥  
 त्रिवारं क्ष्मां परिक्रम्य ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः ।  
 पश्चात्तापं समागम्य गन्धमादनपर्वते ॥

(१) कर्त्तव्यं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) भाले इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तप्तशिखं इति लेखितपुस्तके पाठः ।

(४) निःसार्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तत्र स्नात्वा<sup>१</sup> त्रिवारं च रामलिङ्गं निरौक्षयेत् ।  
 पश्चात्तापमुपागम्य सभां नत्वा तदाज्ञया ॥  
 चान्द्रायणं ततः कुर्याद् दद्याद् विप्राय गां शिवाम् ॥  
 पञ्चगव्यं ततः पीत्वा शुद्धो भवति नान्यथा ।  
 राजा हन्यात् पूर्वमुक्तं वृषभं शिवलाञ्छितम् ॥  
 दद्यादात्मसमं हेम सहस्रं वा गवां चरेत् ।  
 विप्राङ्गना परित्याज्या पोषणीया न दानतः ॥  
 राजस्त्रीणां शतं प्रोक्तं गवां विप्रेभ्यश्चादरात् ।  
 वैश्यस्य राजवत्<sup>२</sup> प्रोक्तं तत्तत्स्त्रीणां तथैव च ॥  
 शूद्रं हन्याददोहन्ता तत्र तं निहनेद् भुवि ।  
 सहस्रेणाऽथवा दण्ड्याद् अन्यथा दोषमाप्नुयात् ॥  
 इति हेमाद्रौ उत्सृष्टवृषहननप्रायश्चित्तम् ।

(१) स्नानं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) राजपुत्रोक्तं इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।



अथ वलोवर्द्धहननप्रायश्चित्तम् ।

शिवधर्मीत्तरे—

अनङ्गान् हन्यते विप्रैरज्जुदण्डशिलादिभिः ।  
गृहे वा विपिने तोये भारोद्धाहनकर्मणि ।  
ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि रोषाद्वा मत्सरादपि ॥  
न तेषां निष्कृतिश्चास्ति तप्तकच्छत्रिभिर्विना ।

बराहपुराणे—

जलमध्ये भारवाहे कृषिकाले च वाहने ।  
गृहे जले वने वापि अनङ्गान् यदि हन्यते ॥  
पादादिताडने चैव शृङ्गच्छेदे च दाहने ।  
लाङ्गूलखण्डने वापि निमित्तैः पूर्वचोदितैः ॥  
एतैरन्यतमैर्वापि विप्रो हन्याद् धुरन्धरम् ।  
तस्यैव निष्कृतिमिमां प्रादिशन् मुनिपुङ्गवाः ॥  
तप्तकच्छत्रयं कृत्वा पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।  
एतस्माच्छुद्धिमाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥  
अनङ्गान् येन<sup>१</sup> यत्रैव निमित्तैरुत वा नृप ।  
हन्यते सोऽपि दुष्टात्मा प्रायश्चित्तीभवेत्तदा ॥  
राजा तं सम्यगालोच्य दण्डयेच्छतरूपतः ।  
पश्चात्तापममायुक्तस्तप्तकच्छत्रयं चरेत् ॥



पञ्चगव्येन पूतात्मा शुद्धिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

राजा हन्यादनङ्गाहं आयुधैर्वहुभिर्यदा ॥

तदा नरकमाप्नोति प्रायश्चित्ताङ्गमर्हति ।

विप्रस्य प्रायश्चित्ताङ्गं कुर्यादित्यर्थः

वणिक्पुत्रस्तु वाणिज्ये अनङ्गाहं यदा हनेत् ।

शूद्रो हन्याद्वलीवर्हं निमित्तैरुत कामतः ॥

शतरूपेण तं दण्ड्यादथवा हस्तमोचनम् ।

हस्तच्छेदनमित्यर्थः । तत्तत्स्त्रीणां तत्तत्प्रायश्चित्ताङ्गं योजनीयम् ।

बालतारुण्यादिकं पूर्वमुक्तम् । बालपौगण्डकुमारावस्थासु यत्र

यत्र हननं तत्तत्प्रायश्चित्तं पूर्ववत्कल्पनीयम् । भारवाहोऽनङ्गो-

हनने उक्तप्रायश्चित्तं विशोधनम् ।

इति हेमाद्रौ वलीवर्हहननप्रायश्चित्तम् ।



## अथ गजवधप्रायश्चित्तमाह ।

निङ्गपुराणे—

महायैः साधनोपायैः वाग्भिर्वापि समन्ततः ।  
अरण्ये वा स्ववासे वा योहन्यादविचारयन् ॥  
पश्चान्नरकमाप्नोति जायते गजचर्मवान् ।  
तद्दोषपरिहारार्थं तप्तकृच्छ्रं चरेद्बुधः ॥

कूर्मपुराणे—

उपक्षाहनने तस्य महायैरुत साधनैः ।  
अन्यैरङ्गीकृते वापि योविप्रोहस्तिनं हनेत् ॥  
राजा तं दण्डयेत्पश्चात् शतरूप्येण दण्डितः ।  
स पश्चान्नरकं प्राप्य कुष्ठव्याधियुतोभवेत् ॥  
पश्चात्तापममायुक्तस्तप्तकृच्छ्रं विशुद्धये ।  
उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥  
तदङ्गं करिष्यते च तदङ्गं गर्भमोचने ।  
तत्स्त्रीणान्तु तदङ्गं स्यात् प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥  
लक्ष्मीकामो राजा युद्धादन्यत्र न हस्तिबधं कुर्यात् ।

१. विप्रमत्तम इति लिखितपुस्तकपाठः ।

२. न इति क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



तदाह देवीपुराणे—

सांपराये गजं हन्याद् यदि स्वहनने स चेत् ।  
तदा तस्य न दोषः स्यादित्याह भगवान् यमः ॥  
गजयुद्धे गजं हन्यादन्यथा दोषभाग्भवेत् ।  
लक्ष्मीः क्षीयेत तस्यास्य<sup>१</sup> परत्र नरकं व्रजेत् ॥

स्कन्दपुराणे—

संपत्कामो युद्धकालादन्यत्र करिहिंसनम् ।  
न कुर्याद् यदि दुष्टात्मा तस्य सम्पद्भिनश्यति ॥  
मृत्वा नरकमाप्नोति सांपराये न दोषभाक् ।  
आत्माभिमुखमायान्तं हन्तुं स यदि गच्छति ॥  
तदाहन्याद्गजं राजा न दोषस्तत्र तस्य<sup>२</sup> हि ।  
राजा पश्चात्प्रकुर्वीत तप्तकृच्छ्रद्वयं मुदा ॥

इदं युद्धादन्यत्र गजहनने वेदितव्यम् । युद्धे हत्वा तात्कालिक-  
गोदानात् शुद्धिः ।

मार्कण्डेयपुराणे—

युद्धादन्यत्र योराजा प्रमादाद्वस्तिनं हनेत् ।  
तत्पापशोधनं तत्र प्राजापत्यत्रयं चरेत् ॥  
युद्धे गोदानमात्रेण शुद्धो भवति निश्चयः ।  
तद्वै करिपोते स्यात् तद्वै गर्भमोचने ॥

(१) तस्यास्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तत्र तत्र हि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



वैश्यानान्तु तदर्द्धं स्यात् तत्तत्स्त्रीणां तदर्द्धकम् ।

शूद्रां वै दण्डयेद्राजा शतनिष्कं हरेत्तुवा ।

[ पोतं स्यादङ्गुलिच्छेदो गजे स्याद्वस्तमारणम् ] ।

इति हेमाद्रौ गजवधप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) हरेत्तु वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

— इदमर्द्धं क्रीतकाशीपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

---



## अथ अश्वबधप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

अश्वहन्ता भवेद्विप्रो लोके वेदवह्निष्कृतः ।  
पूर्वोक्तैर्वा निमित्तैर्वा सहायैरुत वा शरैः ।  
स विप्रोनरकं याति कालसूत्रं मुढारुणम् ।

मार्कण्डेयपुराणे—

मारयित्वा हयं विप्रो निमित्तैर्बहुभिर्यदा ॥  
हन्यात् स्वयं वा राजेन्द्र गृहे वा कानने जले ।  
मपश्चान्नरकं याति यावदाभूतसंभवम् ॥  
तस्यैव निष्कृतिरियं व्यासेन परिभाषिता ।  
स्वयं हन्यात् षड्विंशं स्यात् निमित्तैर्बर्ध्मीरितम् ॥  
गृहदाहादिभिः पापी कृत्वा तद्विगुणं चरेत् ।  
तद्विंशं वडवायाञ्च तद्विंशं गर्भमोचने ॥  
शिशी पौगण्डके चैव वडवाञ्च समाचरेत् ।

महानारदीये—

जनमङ्गलं महारण्ये स्वगृहे यदि पृच्छेजः ॥  
दिवाजननभीत्यातु हयं हन्यान्निमित्तजैः ।  
महान्तं नरकं गत्वा यमपाशनिबन्धनम् ॥  
पुनर्भुवमुपागम्य जायते ग्रन्थिमान् मदा ।  
बालं पौगण्डकं वापि युवानं यदि कामतः ॥

१ वधमीरितम् इति कीर्तपुस्तकपाठः ।

२ स्वयं इति कीर्तपुस्तकपाठः ।



अश्वं हन्याद् द्विजोयस्तु प्रायश्चित्तीभवेत्तदा ।

कुर्यात्तत्कर्मशुद्धयर्थं षड्व्यं कृच्छ्रमादरात् ॥

वडवायामर्द्धमुक्तं तदर्द्धं बालमारणे ।

गृहे दाहादिभिश्चार्द्धं तदर्द्धं गर्भमोचने ॥

राजा योयदिसं हन्याद् युद्धादन्यत्र वाजिनम् ।

स राजा नरकं गत्वा व्याधियुक्तो भवेद्भुवि ॥

तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा विप्रस्यार्द्धं मनीषिभिः ।

विशस्तु राजवत्प्रोक्तं शूद्रोदण्डोयथाविधि ॥

तत्तत्स्त्रीणां तत्तदर्द्धक्रमेण योजनीयम् । शूद्रान् पूर्ववद् दण्डयेत्

शतरूप्यकं वा हस्तच्छेदो वा इति सर्वत्राध्याहारः । राज्ञा

स्वोपरिपातने बधः कर्त्तव्योनान्यथा ।

मार्कण्डेयपुराणे—

अश्वयुद्धे तु<sup>१</sup> संप्राप्ते स्वयमारुह्य वाजिनम् ।

यदा हन्याद्वयं तत्र नान्यथादोषसम्भवः ॥

प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ।

इति हेमाद्रौ अश्ववधप्रायश्चित्तम् ।



अथ उष्ट्रबधप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

पट्टने च वने राजन् प्रमादाद्वा क्रमेलकम् ।

उपायैर्हननैर्योग्यैर्मेलयित्वा महात्मभिः ॥

हत्वा पश्चात्तदा ज्ञानाद्रौरवं नरकं व्रजेत् ।

तदन्ते भुवमासाद्य वक्राङ्गो जायतेऽधुना ॥

तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यव्रतं चरेत् ।

एतत्सहायमात्रेऽप्युक्तम् । स्वयं हनने विशेषमाह ॥

ब्रह्माण्डपुराणे—

उष्ट्रं ज्ञात्वा द्विजोहन्याद् दण्डाद्यैर्गलपीडया ।

यमलोकमुपागम्य भुक्त्वा तत्रैव यातनाः ॥

ततोऽपि भुवमासाद्य जायते पक्षघातवान् ।

तद्दोषपरिहारार्थमब्दं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥

पौगण्डे तच्छिशावद्धं तदङ्गं गर्भमोचने ।

क्षत्रियोयदिमं हन्यात् क्रमेलकमधर्मतः ॥

अधर्म्मीनाम तद्राज्ञां युद्धादन्यत्र उच्यते ।

नारदीये—

युद्धादन्यत्र योराजा दण्डाद्यैर्बहुभिर्यदा ।

क्रमेलकं हनेद्यत्र अरण्ये निर्जने तथा ॥

ग्रामे वा कारणं त्यक्त्वा शस्त्राद्यैर्भृत्यचोदितैः ।

स गत्वा नरकं पापी पशुहन्ता भवेद्भुवि ॥



कारणं युद्धमेव पूर्वोक्तम् ।

तद्दोषपरिहारार्थं कायकृच्छ्रं विशोधनम् ।

विशस्तु तत्तथा प्रोक्तं पूर्वमतविचक्षणैः ॥

हन्याच्चेद्दृषलो राजा दण्डयेत् तं न मारयेत्<sup>१</sup> ।

तत्तत्स्त्रीणां तदङ्गं स्यात् तावदङ्गं प्रचोदितम् ॥

[ शिशौ पौगण्डके यूनि तदङ्गं गर्भविप्लवे ] ।

इति हेमाद्रौ प्रायश्चित्तखण्डे<sup>२</sup> उद्धवधप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) शूद्रोहन्याच्च तं राजा दण्डयेन्नतु मारयेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

[—] अयमधिकः पाठः काशीपुस्तके दृश्यते ।

(२) प्रायश्चित्तखण्डे इति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।



## अथ खरहननप्रायश्चित्तम् ।

माकण्डेयपुराणे—

पशुबुद्ध्या खरं हत्वा विप्रोनिशि महापथे ।  
पश्चाज्ज्ञात्वा खरइति निमित्तैर्वा दुरात्मभिः ॥  
स एव नरकस्थायी यावदाभूतसंप्लवम् ।  
पश्चाद्भवति चाण्डालोभुवमामाद्य भूमिप ॥

राजविजये—

अज्ञात्वा पापबुद्ध्या योविप्रोहन्यात् खरं मुदा ।  
निमित्तैः सङ्गदोषाद्वा सहायैर्जनचोदितैः ॥  
अन्धकारे महाघोरे पश्चाज्ज्ञात्वा महान् खरः ।  
इति मत्वा स पापीयान् लब्ध्वा दोषं महत्तरम् ॥  
चाण्डालत्वमवाप्नोति त्रिषु जन्मसु भूमिप ।  
न हिंस्यान्मृगचाण्डालं कर्मणा मनसा गिरा ॥

कूर्मपुराणे—

विप्रस्तु मृगचाण्डालं न हिंस्यात् कामकारतः ।  
निमित्तैरथवा चान्यैः सहायैर्हननोद्यतैः ॥  
सोऽनुभूय महत्पापं मातङ्गत्वमवाप्नुयात् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्वेत्तवादिभिः ॥  
स्वयं हत्वा तु चान्द्रं स्यात् पराकः महामङ्गतः ।  
निमित्तैर्यावकं प्रोक्तमङ्गीकारं सुवर्चसम् ॥

१० जनतोचितं इति कान्तपुस्तकपाठः ।

११ अवाप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



“सुवर्चमं” पञ्चगव्यम् ।

राजा हन्यात् खरं मोहात् भृत्यैर्वास्त्रैः प्रमादतः<sup>१</sup> ।

तस्य देहविशुद्धयर्थं पराकः परिकीर्तितः ॥

विशस्तदेव योक्तव्यं प्रयत्नेन नृपोत्तम ।

शिशौ पौगण्डके चैव राजाऽङ्गं परिकल्पयेत् ॥

राजा तदेव<sup>२</sup> कुर्वीत राजवत्सवणिकपतिः ।

तत्स्त्रीणान्तु तदर्द्धाङ्गं योजनीयं विचक्षणैः ॥

शूद्रोदद्याच्छतं रूप्यं न बधो मुनिभिः स्मृतः ।

रासभभेदेन प्रायश्चित्तमेवं योजनीयम् । तस्य पौगण्डकौमारा-  
द्यपि पूर्वमुक्तम् तत्तत्तारतम्यहननप्रायश्चित्तं यथायथं योज-  
नीयम् । रासभभेदा बहवः सन्ति तेषां मध्ये बहुसञ्चारतया प्रवर्त्त-  
मानएव ग्राह्यः ।

इति हेमाद्रौ खरहननप्रायश्चित्तम् ।

(१) अयं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति ।

(२) प्रमादजैरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सदैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथेदानीं महिषी<sup>१</sup>हननप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

महिषीं यो द्विजो राजा वणिग्वा शूद्र एव वा ।

हत्यादृण्डादिभिः क्रूरैर्निमित्तैरुत वा स्वयम् ॥

स महानरकं याति कालसूत्रं सुदारुणम् ।

तदन्ते भुवमामाद्य लालालपनवान् भवेत् ॥

\*महिषीमास्यजो यस्तु बाहुजोरुजपादजाः ।

गृहदाहादिभिर्वान्यै<sup>२</sup> निमित्तैर्वहुभिर्यदा ॥

घ्नन्ति भृत्यैः स्वयं पत्न्या तत्रैव निरयं गताः ।

महान्तं नरकं गत्वा ते लालावदनाऽभवन् ॥

शिवधर्मोत्तरे—

राजपुत्रीवणिग्वापि मुखजः पादसम्भवः ।

वनमध्ये जले गेहे महिषीं यदि यत्र वै ॥

विहिंसन्ति तदा क्रूराः प्रविशन्ति च<sup>३</sup> काननम् ।

पुनर्भुवमुपागम्य आर्द्रास्थाः सम्भवन्ति ते ॥

तद्दोषशमनायातं महामान्तपनं विदुः ।

पञ्चगव्यविधानेन पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।

---

(१) महिषहनन इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) महिषं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

\* कूर्मपुराणे—इत्यधिकः पाठः लेखितपुस्तके दृश्यते ।

(३) राजा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) च नानताम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



शुद्धिमन्तस्तथाभूवन् नान्यथा शुद्धचेतसः ॥

साचेद्भवेद्<sup>१</sup> बालवत्सा तद्विंसायां नराधिप ।

विप्रः कुर्यात् तदा ज्ञात्वा महासाधनद्वयम् ॥

राजा सान्तपनं कुर्याद्गुरुजः क्षत्रियार्द्धतः ।

पादजः पादमात्रञ्च प्रायश्चित्तं यथाक्रमम् ।

तत्तत्स्त्रीणां तत्तद्वर्गं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥

बालपौगण्डकौमारादीनि पूर्ववद् विचारणीयानि । स्वयं हनने  
पूर्णं प्रायश्चित्तम् । पित्रादीनां ? गृहदाहादिभिर्मृता यदि तदा  
अर्धं प्रायश्चित्तम् । अस्मन्महिषीत्युपेक्षया प्रायश्चित्तमकुर्वाणः  
पूर्वमुक्तं नरकं भुक्त्वा नीचतमोभवति दोषबाहुल्यात् प्रायश्चित्त-  
मपि<sup>२</sup> बलीयः । वर्णत्रये पञ्चगव्यमपि ।

इति हेमाद्रौ महिषोवधप्रायश्चित्तम् ।

१) साचेत् तन्वी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) प्रायश्चित्तमाचरणीयम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ महिषवधप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

महिषं कामकारेण रज्जुदण्डाश्मपातनैः ।  
योविप्रोवनमध्ये वा गृहदाहे जलाप्लवे ॥  
निहन्याद्दुष्टसङ्गाद्वाऽप्यन्धकारे निरन्तरे ।  
स विप्रोनिधनं गत्वा महत्पापमवाप्नुयात्<sup>१</sup> ॥  
भुवं पुनरुपगम्य जायते भिल्लजन्मवान् ।

कूर्मपुराणे—

महिषं पूर्वजोयेन दोषेण महतावृतः ॥  
हत्वा निमित्तैर्बहुभिर्भृत्यवर्गैरथापि वा ।  
अरण्ये गृहदाहे वा कृषिकाले जलोद्भवे ॥  
महान्तं नरकं गत्वा भुक्त्वा<sup>२</sup> तत्रैव यातनाः ।  
पुनर्गत्वा स जगतीं भिल्लजन्म समश्नुते ॥

लिङ्गपुराणे—

महिषं कृषिकाले तु ताडनैरश्मपातनैः ।  
गृहे वा गृहदाहे वा योहन्यात् पूर्वजोरूपा ।

---

२) अवाप्यच इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) भुक्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मृत्वाऽनुभूय नरकं स्नेच्छोभवति भूतले ।  
 तस्यैव निष्कृतिरियं सृष्टा मुनिपरायणैः ॥  
 अज्ञानात्तप्तकृच्छ्रं स्यात् प्राजापत्यं निमित्ततः ।  
 परप्रेरणया वापि ज्ञात्वा वा द्विगुणं चरेत् ॥  
 बाले पादश्च पौगण्डे अर्द्धं यूनि प्रपूर्णता ।  
 राजा वणिक् पादजो वा कारणैर्वा<sup>१</sup> निपातनैः ॥  
 भारवाह<sup>२</sup> निमित्ताद्वा निम्नोन्नतमहापथैः ।  
 महिषं दण्डपातैर्वा हन्याद्यदिह पातकी ॥  
 नरकं चानुभूयाथ स्नेच्छजातिरभूत्तदा ।  
 अकामतस्तप्त<sup>३</sup> कृच्छ्रं प्राजापत्यं निमित्ततः ॥  
 ज्ञात्वा तद्विगुणं प्रोक्तं बाले पादं विशोधनम् ।  
 पौगण्डेऽर्द्धं तदाज्ञेयं यूनि पूर्णमतःपरम् ॥  
 बाहुजोरुजयोरिव प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।  
 पादजे पादकृच्छ्रं स्यात् तत्तत्स्त्रीणां तथा पृथक् ॥  
 अर्द्धार्द्धधनमानेन योजनीयं यथाक्रमम् ।  
 विप्रस्तु महिषं हत्वा भिक्षोवा जायते तथा ॥  
 राजा च पौकसो भूयात् वणिग्वैणवजातिमान् ।  
 शूद्रः सङ्गरतामेति महिषोजायते वने ॥

१। वापि पातनैरिति काशीलेखितपुस्तयो पाठ ।

२। भारवाहनिमित्ताद्वा इति क्रीतपुस्तकपाठ ।

३। तदा कृच्छ्रं इति लेखितपुस्तकपाठ ।

४। अर्द्धार्द्धेन च मानेन इति क्रीतपुस्तके पाठ ।



तत्तन्नारी तथा भूयात् तद्दोषात्तत्परिग्रहः ॥

अतोऽन हिंस्यान्महिषं विप्रोवा राजवल्लभः ॥

इति हेमाद्रौ प्रायश्चित्तखण्डे महिषवधप्रायश्चित्तम् ।

---



## अजवधप्रायश्चित्तमाह ।

महाराजविजये—

अजं वस्तं द्विजो हन्यात् कारणेन विना नृप ।  
नरकं चानुभूयाशु ततः शुनो<sup>१</sup> भवेत् कलौ ॥

लिङ्गपुराणे—

ब्राह्मणो निर्निमित्तेन वस्ताजौ निहनेत्तथा ।  
नरकं कालचक्रन्तु ह्यनुभूय महत्तरम् ॥  
पुनः क्षामुपगम्याशु सूनुर्भवति पूर्वजः ।  
यज्ञार्थं<sup>२</sup> हन्ति यो विप्रो<sup>३</sup> ह्यनन्तं फलमश्नुते ॥

गौरीकाण्डे—

यज्ञार्थं हन्ति योविप्रो अजं मेषं सुपुण्यधीः ।  
स याति ब्रह्मणः स्थानं पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥  
कारणेन विना राजन् अजं वस्तं न हिंसयेत् ।  
योविप्रो धर्ममुल्लङ्घ्य पापमेतत् समाचरेत् ॥  
स याति नरकं घोरं शुन<sup>४</sup> जन्माभवेदिह ॥

कूर्मपुराणे—

यागार्थं हन्ति योविप्रः अजं लोकपरायणः ।  
स याति ब्रह्मसदनं ब्रह्मणा महमुच्यते ॥

---

(१) वस्तवधप्रायश्चित्तमिति लेखितपुस्तके पाठ ।

(२) सूनुर्भवेदिति क्रीतपुस्तके पाठ ।

(३) यद्वि यो विप्रः इति लेखितपुस्तके पाठ ।

(४) अनन्तफलमश्नुते इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

(५) शुनोजन्मभवेदिह इति क्रीतपुस्तकपाठ ।



वस्तं वापि हनेद्यस्तु स यातोन्द्रपदं शुभम् ।  
 यागार्थं हिंसनं प्रोक्तं द्वयोर्ब्रह्मविस्तृतयोः ॥  
 निष्कारणेन तं हन्यात् यमलोकं सुदारुणम् ।  
 गत्वा भुवमुपागम्य सूनुर्भवतिचाक्षयः ॥  
 तद्दोषपरिहाराय प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।  
 सङ्गादा यदिगत्वा तु निमित्तर्यदि हिंसयेत् ॥  
 प्राजापत्यं तथाकुर्यात् तथैवाजवधे नृप ।  
 प्राजापत्यं भुवोभर्तावणिक्कुर्यात्तथैव च ॥  
 शूद्रैश्चिन्ताप्रकर्त्तव्या तत्तत्स्त्रीणां तद्विकम् ।  
 बालपौगण्डयूनां यथाक्रमेण<sup>४</sup> प्रयोजनीयम् ॥

इति हेमाद्रौ प्रायश्चित्तखण्डे अजवधप्रायश्चित्तम् ।

(१) स याति परमं पदं इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(२) सङ्गाद्या यदि इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(३) शूद्रैर्भिन्ना प्रकर्त्तव्या इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) यथाक्रमं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ द्रुमच्छेदप्रायश्चित्तमाह ।

गौरीकाण्डे —

इन्धनार्थं द्रुमच्छेदी ग्रामे वाऽरण्यमध्यतः ।

कृत्वा वा नरश्रेष्ठ स याति नरकं ध्रुवम् ॥

एतत्साधारणवृक्षविषयम् । यन्नियवृक्षच्छेदने विशेषमाह

कूर्मपुराणे —

वैकङ्कतश्च खटिरः किंशुकस्तम्ब<sup>१</sup> एव च ।

उदुम्बरश्च न्यग्रोधः शमी विल्वस्तथैव च ॥

<sup>२</sup>श्लेष्मातकश्च सरलएते <sup>३</sup>यज्ञीयवृक्षकाः ।

चूतश्च तिन्त्रिणीवृक्षः कपित्थामलकौ तथा ॥

कोविदार<sup>४</sup>तरुश्चैव निम्बवृक्षोमधुद्रुमः ।

जम्बूतरुर्नदीवृक्षः अशोकतरुर्ग्रेव च ॥

एते<sup>५</sup> वन्याः ।

चम्पकः पनसश्चैव <sup>६</sup>मातुलङ्गोऽर्जुनस्तथा ।

जम्बीरैरण्डवृक्षश्च <sup>७</sup>नारिकेलश्च खर्जूरः ॥

(१) स्तम्भ एव च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) श्लेष्मान्तकश्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यज्ञीयवृक्षका इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कोविदारचरुश्चैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) ते वन्या इति लेखितपुस्तकपाठः क्रीतपुस्तके तु अयमंशो नोपलभ्यते ।

(६) मातुलिङ्ग इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) नारीकेल इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



दाडिमीवदरीवृक्षः कुरण्टकचिरण्टकौ ।

गुञ्जावृक्षश्च<sup>१</sup> वकुलो नीपवृक्षस्तथैव च ॥

एते ह्यारामजाः—

भल्लातकी वृहत्पर्णीये ये वृक्षा महोन्नताः ।

तथैव नीचवृक्षाये फलवन्तश्च पुष्पिताः ॥

वन्य<sup>२</sup>वृक्षा अमी राजन् एतेषु यदि हिंसनम् ।

तस्यैव तारतम्येन प्रायश्चित्तमिहोच्यते ॥

क्षय्यर्थं यज्ञपात्रार्थं यश्छिन्यात्कुलजं सकृत् ।

तस्यैव निष्कृतिरियं कथिता मुनिसत्तमैः ॥

इत्थनार्थं द्रुमच्छेदी तस्य दोषोपशान्तये ।

प्राजापत्यं सकृत् कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

क्षय्यर्थं वृक्षहा पापी प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।

क्षय्यर्थमिन्वनार्थं वा यज्ञवृक्षविभेदने ॥

पराकं तत्र कुर्वीत शुद्धोभवति वृक्षहा ।

वैकङ्कतस्य<sup>३</sup> विच्छेदी प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

खटिरे किंशुके चैव पराकः शुद्धिरीरितः<sup>४</sup> ।

उदुम्बरे च न्यग्रोधे पराकात् पूर्ववच्छुचिः<sup>५</sup> ॥

(१) गुञ्जावृक्षो च वकुलो नीपवृक्ष इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अन्यवृक्षा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) वैकङ्कतं च विच्छेदी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) शुद्धिरीरिता इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) शुद्धिरिति लेखितपुस्तकपाठः ।



विल्वाश्वत्थौ यदा भिन्यात् तदा चान्द्रायणं चरेत् ।

श्लेष्मान्तके<sup>१</sup> शमोवृत्ते देवदारौ वके<sup>२</sup> तथा ॥

मयूरपादवृत्ते च भेदने तप्तमुच्यते ।

भस्मातके वृहत्पर्णे<sup>३</sup> ये ये च फलपुष्पिताः ॥

तथैव नीचवृत्ता ये तेषां भङ्गे वनेऽपि च ।

प्राजापत्यं वनच्छेदी नीरवृत्त<sup>४</sup>समा नु ते ॥

[ भस्मातके वृहत्पर्णे कायकच्छं समाचरेत् । ]

तिन्त्रिणीचूतवृत्ते च बहुजन्तूपकारिणि ॥

कपित्थामलकच्छेदे<sup>५</sup> सम्यक् चान्द्रायणं चरेत् ।

[ कोविदारतरौ निम्बे प्राजापत्यं विशोधनम् ॥ ]

मधुद्रुमे जम्बुतके<sup>६</sup> प्राजापत्यञ्च पूर्ववत् ।

नदीवृत्ते त्वशोके च पूर्ववत् शुद्धिरीरिता ॥

खर्जूरं नारिकेलं च तालहिन्तालयोस्तथा ।

तप्तकच्छं चरेद्विद्वान् छेददोषोपशान्तये ॥

(१) श्लेष्मान्तकी शमोवृत्ते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) देवदारुवकास्तथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कायकच्छं समाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) नीचवृत्तसमा न ते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(६) कपित्थामलकच्छेदी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(८) जम्बुतके इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



वनच्छेदी महापापी कुर्याच्चान्द्रस्य भक्षणम् ।  
 जम्बीरमातुलङ्गान् वा च्छित्वा पापविशुद्धये ॥  
 सम्यक् स्नात्वा शुचिर्भूत्वा गीताशास्त्रं पठेत् क्रमात् ।  
 पुष्पारामस्य विच्छेदी देवद्रोहीति गद्यते ॥  
 तद्दोषपरिहारार्थं गायत्रीलक्ष्माचरेत् ।  
 तटाककूपकासारच्छेदने विप्रसत्तम ॥  
 पूर्ववत्तद्वदं कृत्वा कायकृच्छ्रं समाचरेत् ।

एतदल्पतटाकच्छेदविषयम् । महातटाकच्छेदने विशेषमाह—  
 देवलः—

ब्रह्मदस्योद्भवे<sup>१</sup> राजन् तटाकस्य विभेदने ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा कपालध्वजवर्जितम् ॥  
 पुनः संस्कारकृत्यश्चात् शुद्धिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।  
 अन्यथा पतितं<sup>२</sup> विद्यात् नालपेत्तं कटाचन ॥

अल्पतटाकच्छेदने । \*

“द्विजः पापी पुनर्बुद्धा चरेच्चान्द्रायणं सकृत् ॥

चान्द्रायणं पराकञ्च तद्वयं पूर्णशून्ययोः ।

देवाधिष्ठितालयच्छेदने<sup>३</sup> चान्द्रायणं शून्यालयच्छेदने पराकमित्यर्थः  
 एवं रेणुकालयादिषु वेदितव्यम् । काशीचापाग्रादिषु क्षेत्रेषु

(१) निषेधमाह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) ब्रह्मदास्योभवद्राजन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ विन्यात् इति पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोः ।

\* अल्पानल्प इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ देवाधिष्ठितालयच्छेदने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



देवाधिष्ठितेषु शून्येषु वा च्छेदने बृहत्तटाकच्छेदप्रायश्चित्तवत्सर्वं  
कुर्यात् ।

राजा वणिग्वा एतेषां पूर्वोक्तानां विभेदने तत्प्रायश्चित्त-  
द्विगुणं चरेत् । पादजस्य तत्तद्गुरुलाघवतया सहस्रं शतं दश  
वा क्रमेण दण्डयेत् राजा सम्यग्विचार्य ।

तत्तत्स्त्रीणां तत्तद्विभेदने तत्तद्वैप्रायश्चित्तं कल्पनीयम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते प्रायश्चित्ताध्याये

द्रुमच्छेदप्रायश्चित्तम् ।

---



अथाऽनाश्रमिणः प्रायश्चित्तमाह ।

कुमारविजये—

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः ।  
चत्वारश्चाश्रमास्त्वेते पञ्चमो<sup>१</sup> नोपपद्यते ॥  
वानप्रस्थाश्चमस्तेषां कलौ नास्तीह दुस्तरः<sup>२</sup> ।  
आश्रमास्त्रिविधा राजन् परलोकप्रदायिनः ॥  
ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्यं कृत्वा भार्यां समुद्वहेत्<sup>३</sup> ।  
कुर्याद्यागादिकान् धर्मान् यत्रायं<sup>४</sup> पापशङ्कया ॥  
न त्यजेदिह कर्माणि त्यक्त्वा पापं समश्नुते ।  
स्नानं सन्ध्यां जपं होमं ब्रह्मचर्यञ्च तर्पणम् ॥  
उपासनं देवपूजां वैश्वदेवं तथातिथिम् ।  
सायंसन्ध्यां तथा होमं धर्मशास्त्रविचारणम् ॥  
एवं गृही यदा कुर्यात् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।  
शिवलोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥  
अतःपरन्तु संन्यासः कार्योविद्वद्भिर्गदरात् ।  
न काञ्चनं प्रगृह्णीयात् नैकभिक्षां समाचरेत् ॥

१ पञ्चमं नोपपद्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ दुस्तरादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३ समुद्वरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ यत्रायं पापशङ्कया इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ न जानेदिह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

६ उदासनमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

७ अवाप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



न कुर्याल्लोकवार्त्तां वा प्रणवं नित्यमाचरेत् ।

एवं यः कुरुते नित्यं परं निर्व्विण्णमश्रुते ॥

गृहस्थस्य यदा राजन् पत्नीनाशो भवेदिह ।

तदा प्रभृत्ययं विप्रो <sup>१</sup>ह्यनाश्रम इतीरितः ॥

दानव्रतेषु आद्वेषु नित्यकर्मसु केषु च ।

नाधिकारो भवेत्तस्य <sup>२</sup>तस्मादुद्वाहयेत् पुनः ॥

<sup>३</sup>पञ्चाशद्वर्षादूर्ध्वं विवाहो न समीचीनो महादोषसम्भवात् ।

तदाह गोतमः—

पञ्चाशद्वत्सरादूर्ध्वं न ग्राह्यं पाणिपीडनम् ।

<sup>४</sup>कलैर्युगस्य दुष्टत्वात् त्याज्यमाहुर्मनीषिणः ॥

युवानं प्रीणयेन्नारी स्वयं जीर्णाऽपि सर्व्वदा ।

व्यभिचारात् कुलं नश्येत् कुलनाशात् <sup>५</sup>कुलाङ्गनाः ॥

<sup>६</sup>भ्रश्यन्ति <sup>७</sup>सङ्गरस्तेन सङ्गरो नरकाय वै ।

नरकान्नानुवर्त्तन्ते तस्माद्गर्हन्ति पण्डिताः ॥

कलत्रं यस्य यत्रैव म्रियते तत्परित्यजेत् ।

तदा प्रभृत्यसौ विप्रः अनाश्रम इतीरितः ॥

(१) सर्व्वकर्मसु निन्दित इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तस्या उद्वाहयेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ पञ्चाशद्वत्सरादूर्ध्वमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) कलौ युगस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) कुलाङ्गना इत्येकवचनान्तमेव क्रीतलेखितपुस्तकयोर्दृश्यते ।

(६) भ्रश्यति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(७) सङ्गराभवन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अग्निपूर्वो<sup>१</sup> गृहस्थः स्यात् सोमयाजी विशेषतः ।  
 तयोर्यदि मृता भार्या तज्जन्म विफलं भवेत् ॥  
 तस्मादनाश्रमे वासोन स्यातव्योद्विजन्मभिः ।  
 अग्निहीनीयदा विप्रः पतिहीना यदाङ्गना ॥  
 न तयोर्भाषणं कुर्यात् न पश्येत् शुभकर्मसु ।  
 अनाश्रमी द्विजो विप्रो<sup>२</sup> यावज्जीवति भूतले ॥  
 मासि मासि नरश्रेष्ठ प्राजापत्यं विशुद्धये ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति<sup>३</sup> मृतोनरकममृतं ॥  
 यद्यशक्तस्तथा कर्तुं कुर्याद्वा मृत्यनन्तरम् ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति परलोकांश्च विन्दति ॥

लिङ्गपुराणे—

अनाश्रमस्य यावन्ति दिनानि मुनिसत्तम ।  
 मासि<sup>४</sup> मासि ह तावन्ति गणयित्वा तदात्मजः ॥  
 तावत् कृच्छ्राणि कुर्वीत म्रियमाणे ह्यनाश्रमे ।

[इत्यनाश्रमिणः प्रायश्चित्तम् ॥]

१. अग्निपूर्व इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. यस्तु इति काशीपुस्तकपाठः ।

३. मृत्वा इति काशीपुस्तकपाठः ।

४. मासीह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ ] अयं पाठः लेखितपुस्तके नोपलभ्यते ।



अथ भृतकाऽध्यापनप्रायश्चित्तम् ।

कृत्वा तदवरं<sup>१</sup> कर्म परलोकविगर्हितम् ।  
स्वं गृहीत्वा द्विजोयसु जीवयन् पठते श्रुतिम् ।  
स विप्रो भृतकाध्यायी तन्मुखं नावलोकयेत्<sup>२</sup> ॥

कर्मपुराणे—

यो विप्रो भृतकं<sup>३</sup> धृत्वा मामि सासि प्रचोदितम् ।  
शिष्यानध्यापयेद्देदं साक्षान्नारायणात्मकम् ॥  
स वै नारायणद्रोहो स च वै सूतकी भवेत् ।  
न योग्यो हव्यकव्येषु न दानेषु मुनीश्वराः ॥  
वेदाक्षराणि यावन्ति पठितानि द्विजातिभिः ।  
तावन्ति हरिनामानि कीर्तितानि न संशयः ॥  
मासं गृहीत्वा भृतकं यः पठेद्देदं<sup>४</sup> मादरात् ।  
स वै नारायणद्रोही सर्वदा तं परित्यजेत् ॥

विष्णुधर्मोत्तरे ---

येभ्यो गृहीत्वा भृतकं शिष्येभ्योऽयं प्रकीर्तयेत् ।  
दिने दिने ब्रह्महत्यापापञ्च समवाप्यते ॥

(१) तदर्पणं इति काशीक्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) नावलोकनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) यो धृत्वा भृतकं विप्रः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) पठेद्देदमातरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मरीचिः—

द्विजेभ्यो वाऽन्यजातिभ्योभूत्वा<sup>१</sup> भृतकं पठेत् ।  
 स एव नरकस्थायी यावदाभूतसंप्लवम् ॥  
 शाखा<sup>२</sup>पूर्णं वदेद्यस्तु भृतकं पापरूपिणम् ।  
 धृत्वा संवत्सरं वापि आरण्यकमथापि वा  
 ब्रह्महत्यामवाप्नोति निष्कृतिर्न हि विद्यते \*  
 ब्रह्मजन्तुममः सोऽपि भृतकं यस्तु संवदेत् ॥

जावाल्लिः—

अब्दं यो भृतकं धृत्वा<sup>३</sup> वेदपाठी द्विजोयदि ।  
 तस्य चान्द्रव्यं प्रोक्तं भृतकं योवदेद्विजः ॥  
 अब्दद्वयं वदेद् यस्तु तस्य पापस्य शोधनम् ।  
 पश्चात्तापसमायुक्तः कुर्याच्चान्द्रचतुष्टयम् ॥  
 अब्दत्रये तु शुद्धः स्यात् षड्भिश्चान्द्रैर्यथाक्रमम् ।  
 तत ऊर्ध्वं ब्रह्महन्ता ललाटे द्विजवर्जितः ॥

नारदीये—

पंक्तिभेदो पृथक्पाकी ब्राह्मणानाञ्च निन्दकः ।  
 आदेशो वेदविक्रेता पञ्चैते ब्रह्मघातकाः ॥

(१) धृत्वा इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(२) शाखां पूर्णं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

\* दृश्यते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) धृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तत्र चान्द्राव्यं प्रोक्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



योभूत्वा भृतकं विप्रोवत्सरत्रयमादरात् ।  
 वेदपाठं<sup>१</sup> द्विजातिभ्यो वदेद्धर्मसमन्वितः ॥  
 ब्रह्महत्याव्रतं पाप मनवाप्य<sup>२</sup> बुधोपमः ।  
 अतः परं ब्रह्महन्ता ललाटे चिह्नवर्जितः ॥  
 [ ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् कपालध्वजवर्जितम् ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति कपालध्वजवर्जितम् ] ॥

ब्रह्माण्डपुराणे—

ब्रह्महा वेदविक्रीता अशक्तोव्रतचारणे ।  
 ततोदेहविशुद्धयर्थं तप्तकच्छं समाचरेत् ॥  
 पश्चाद्द्वयोः पृथक् कर्म कर्त्तव्यं विधिचोदनात् ॥

मरीचिसंहितायां—

आचार्यऋत्विजो ब्रह्मा तुलायां गोषु लाङ्गले ।  
 तथैव भृतकाध्यापी कल्पपादपसंग्रहे ॥  
 हिरण्यधेनुहर्त्ता च हेमहस्तिरथग्रहे ।  
 धरां गृह्णन् कल्पलतां जघन्यो<sup>३</sup> विप्रसत्तम ॥  
 उक्तेष्वन्येषु दानेषु आचार्योऽयिदि वा भवेत् ।  
 तुलादिसप्तदानेषु आचार्यो ब्रह्मऋत्विजः ॥

(१) वेदपाठः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) बुधोत्तमः इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

[ अयं श्लोकः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

३ न हन्य इति क्रीनलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्ताधिकं कृत्वा पुनः कर्म समाचरेत् ।  
 यावत् कुर्युः पुनः कर्म आचार्यऋत्विजोयदि ॥  
 नष्टद्रव्या न सम्भाष्याः शुभकर्मविवर्जिताः ।  
 पुनः कर्मविहीनाय<sup>१</sup> कुर्यात् यागादिकं सकृत् ॥  
 न तस्य फलमाप्नोति कृत्वा दानशतैरपि ।  
 अकृत्वेदं पुनः कर्म<sup>२</sup> म्रियते यदि दैवतः ॥  
 तत्रापि कर्म कर्त्तव्यं नान्यथा लोकमाप्नुयात् ।  
 एतेषां ऋत्विजां<sup>३</sup> विन्याद् आचार्याणां विशुद्ध्ये ॥  
 न च कर्म प्रवक्तव्यं कर्त्तव्यं<sup>४</sup> शुभलिप्सुभिः ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
 भूतकाध्यापनप्रायश्चित्तम् ।

१) प्रायश्चित्तादिकं इति क्रीतकाशीपुस्तकायोः पाठः ।

२) विहीनो यः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) म्रियन्ते इति लेखित पुस्तकपाठः ।

४) विद्यात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) प्रवक्तव्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ भृतकाध्ययनप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्मवैवर्ते—

शिष्यो यस्तु धनं धृत्वा भृतकं पूर्ववदहेत् ।

शाखासमाप्तिपर्यन्तं स चाण्डालसमो भवेत् ॥

लिङ्गपुराणे—

भृतकाध्यापिनो \*वेदान् शिष्यो दत्त्वा धनं बहु ।

पतितः स पुमान् सद्यः पातकी स्यान्नसंशयः ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति भृतकाध्यायी<sup>१</sup> वै द्विजः ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

भृतकाध्ययनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) पूर्ववद वदन् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

\* वेद इति काशीपुस्तकपाठः ।

० धृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भृतकाध्यापकोद्विज इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽधीतविस्मृतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलधर्मः—

वेदान्तं मन्त्रशास्त्रं वा वेदं वा तत्त्वमेव वा ।

ब्रह्मबन्धुश्चयोविप्रोविस्मृत्य यद्वि वर्त्तते ॥

सर्व्वेण चाभिमानेन ऐश्वर्य्यमदवत्तया ।

सद्योवै नरकस्थायी पतितः सर्व्वकर्मसु ॥

पद्मपुराणे—

वेदं वा तस्य तत्त्वं वा तथा [ वेदाङ्गं मेववा ] ।

गुरोरधीत्य सकलं विस्मृत्य मदवत्तया ॥

[महाभारते—

भृतकाध्ययनं कुर्व्वन् द्विजो यस्तु धनेप्सया ।

शाखामात्रं तदङ्गं वा स चाण्डालत्वमाप्नुयात् ॥

पद्मपुराणे—

अन्तेवामी धनं धृत्वा भृतकाध्ययनं चरेत् ।

स विप्रो नरकान् याति अन्तेवामी महान् वेहन् ॥

१ देवलः इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

अर्थ पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

अनयोरेखयोरन्तर्गतः पाठः भृतकाध्ययनप्रायश्चित्तप्रकरणोक्तः निपिक्कर

पमाटादेव अत्र आयात इति सम्भाव्यते ।

२ दन्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ महाकुरुन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



नरकान्भीकरान् भुक्त्वा तदन्ते भिक्षजातिषु ।  
 मासं पठित्वा भृतकं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥  
 मासद्वये पराकः स्यात् चान्द्रं मासत्रये<sup>१</sup> स्मृतम् ।  
 षण्मासे तु षड्व्यं स्यात् वत्सरे तत्त्रयं चरेत् ॥  
 अष्टत्रये तु पूर्णं स्यात् ततः पापीति विप्रहा ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् द्वादशाब्दं समाहितः ॥  
 अथवा त्रिः परिक्रम्य पञ्चाशत्कोटिविस्तरम्<sup>२</sup> ।  
 स सर्वशस्त्रहन्ता स्यात् सर्वकर्मसु गर्हितः ।  
 पतितस्यैव<sup>३</sup> यत्पापं तत्पापफलमश्रुते ॥

गारुडपुराणे—\*

पादं वापि तदन्तं वा तत्त्वं मन्त्रमथापि वा ।  
 विस्मृत्य योद्विजो गर्वात् वर्त्तते यद्यहर्निशम् ॥  
 प्रत्यहं गोवधे पापं स प्राप्नोति न संशयः ।  
 मासमात्रे<sup>४</sup> पराकः स्यात् तप्तं मासत्रये स्मृतम् ॥  
 ऋतुत्रयेऽपि चान्द्रं स्यात् अष्टैतृहालकं चरेत् ।  
 वर्षद्वये महापार्षा पतितस्तत्परं विदुः ॥

(१) मासद्वये इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) विस्मृतम् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(३) पतितस्यैव तत्पापमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

\* अयं पाठः काशीपुस्तकेनोपलब्धः ।

४ मासमात्रं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्तविशुद्धात्मा दक्षिणां गुरवे ददन् ।  
 मथ्यं पादं पुनर्धृत्वा अभ्यसेत् पूर्ववत् क्रमात् ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति नरकञ्चाधिगच्छति ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशान्ते प्रायश्चित्ताध्याये  
 अर्धातिविस्मृतिप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ गुरुधिकारप्रायश्चित्तमाह ।

पद्मपुराणे—

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति ।  
श्वशुरश्चाग्रजो भ्राता पञ्चैते गुरवः स्मृताः ॥  
अन्नदाता भयनाता क्रता<sup>१</sup>वाधानदायकः ।  
मातुलश्च पितृव्यश्च धर्मशास्त्रोपदेशकः ॥  
[पुराणसंहितावक्ता गीताशास्त्रोपदेशकः] ।  
बुद्धिप्रदः कुबुद्धीनामाचार्यः सर्वकर्मसु ॥  
एते वै गुरवो लोके पूज्या वन्द्याश्च सादरम् ।  
एतेभ्यो<sup>४</sup> नापकुर्वीत एतद्वाक्यं न लङ्घयेत् ॥

स्कन्दपुराणे—

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति ।  
तयस्ते गुरवः प्रोक्ताः उपाध्यायास्तथापरे ॥  
त्रिषु द्रोहं न कुर्वीत कर्मणा मनसा गिरा ।  
पितुरभावे ज्येष्ठभ्राता पितृव्यादिभिरुपनीतो गायत्रीप्रदान-

(१) पादो इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) चोपनीता च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) क्रता वा धनदायकः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ ] इदं श्लोकाच्च क्रीतपुस्तके नोपलब्धम् ।

४ एतेभ्यो नहि धिकारः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ स्कान्दे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



कृद्गुरुः । अतएव पितृ<sup>१</sup>भ्राता गुरुः [ तेषां हितोपदेशकत्  
परमगुरुः ] त्रयोगुरवः, इतरे वन्द्याः । अतएव त्रयाणां मध्ये  
एकं वा नोपेक्षेत न द्रुष्ट्वा<sup>२</sup>नौदासीन्यं वा कुर्यात् ।

तथैव नारदः—

गुरुत्वं कृत्य हुङ्कृत्य यो वदेन्नन्दधीर्नरः ।

सोऽरण्ये <sup>३</sup>निर्जने देशे भवति ब्रह्मराक्षसः ॥

स्कन्दपुराणे गौरीकाण्डे—

पितरं वा गुरुं वापि ज्येष्ठं भ्रातरमेव वा ।

त्वङ्कारं वाथ हुङ्कारं कृत्वा पुत्रः स पाप<sup>४</sup>भाक् ॥

<sup>५</sup>तदन्ते नरकं भुक्त्वा पुनर्जन्म प्रपद्यते ।

पापाद् योनिषु रक्षःसु तथैव च कुयोनिषु<sup>६</sup> ॥

[ तदन्ते भुवमासाद्य राक्षसत्वं भजेदिह । ]

तद्दोषपरिहारार्थं नाचिकेतं व्रतं चरेत् ॥

(१) पिता भ्राता वा गुरुः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

[—] अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

२ नोपेक्षयेत इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) नोदासीनं वा इत्येव पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोः ।

४ निर्जले इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ स पापभुक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) इदमर्थं लेखितपुस्तके नास्ति ।

(७) नरकं चेष्टं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

[ अयं पाठः क्रीतपुस्तके नास्ति ।



ब्रह्माण्डपुराणे —

यः पुत्रः पितरं ज्येष्ठं गुरुं वापि निपीडयेत् ।  
 एकशब्देन नामोक्ता त्वङ्गारं हुङ्कतिञ्च वा ॥  
 वदेद्यदिह पापात्मा नरकं याति दारुणम् ।  
 पुनर्भुवमुपागम्य राक्षसोभवति द्रुमे ॥  
 तद्दोषपरिहारार्थं नाचिकेतव्रतं चरेत् ।

देवीपुराणे—

नचिकेताः पुरा राजन् गुरुं चोद्दालकं प्रति ।  
 प्रतिभाष्य तदा गत्वा दृष्ट्वा यमपुरं महत् ॥  
 पुनर्गत्वा भुवः पृष्ठं पितरं प्रणिपत्य च ।  
 तद्वाक्येन ततः पश्चात् देहशुद्ध्यर्थमादरात् ॥  
 चकार मण्डलं तत्र गवां क्षीरं दिने दिने ।  
 पीत्वा शुद्धिमवापाय चाण्डाल्याद्विप्रसत्तमः ॥  
 ततः परं विशुद्धात्मा पितरं प्रतिपादयेत् ।  
 अथवा देहशुद्ध्यर्थं षड्वदं कृच्छ्रमाचरेत् ।

कल्पो युगे नाचिकेतव्रतस्य दुष्करत्वात् षड्वदं प्राजापत्यं कुर्यात्  
 इति ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

गुरुधिकारप्रायश्चित्तम् ।



## १ अथाज्ञानप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेय पुराणे—

विप्रस्तु सत्कुले भूत्वा वेदशान्नाधिकारवान् ।  
अयं गुरुरियं माता ज्येष्ठोऽयं मातुलोऽपि वा ॥  
अयं विद्वानिदं शास्त्रमाचारो मुनिचोदितः ।  
वेदोऽयं देवतं चेदं इदं तीर्थमियं नदी ॥  
इति सर्वं स सहसा शीघ्रं विस्मृतवान् यदि<sup>१</sup> ।  
उन्मत्त इव वर्त्तत स चाज्ञः परिकीर्तितः ॥

लिङ्गपुराणे—

मातरं पितरं श्वश्रूं गुरुं देवं तथाऽनलम् ।  
विप्रं गां व्रतिनं नारीं<sup>२</sup> समुपेक्ष्य मदा नरः ॥  
यो वर्त्तत मदा तात स विप्रोऽज्ञ इतीरितः ।  
तस्य<sup>३</sup> वै निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्धर्मवित्तमैः ॥  
प्रत्यहं दोषशान्त्यर्थं महापातकनाशनम् ।  
तण्डुलप्रस्थमात्रेण पाचयित्वा चरुं मुदा ॥

१ अथ इत्यंशो न दृष्टः क्रीतपुस्तके ।

२ विस्मृतवानथ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ सर्वेष्टो न मदा नरः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ मस्यैव इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।



भक्तयेद्देवतोद्देशे मण्डलेन विशुध्यति ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति यथा शूद्रस्तथैव सः ॥

इति हेमाद्रिविरचिते प्रायश्चित्ताध्याये  
अज्ञत्वप्रायश्चित्तम् ।

---



अथाऽपण्यविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

शिवपुराणे—

तण्डुलाश्च तिलामाषाः फलं पुष्पं तथा गुडम् ।

नागवल्लीदलं पूगं चूर्णं कर्पूरमेव च ॥

कस्तूरी कुङ्कुमं मूलं दुग्धं दधि घृतं तथा ।

क्षणाजिनञ्च रुद्राक्षं ब्रह्मसूत्रं कमण्डलुः ॥

ताम्रं कांस्यं तथा वस्त्रं कम्बलं रोचनं तथा ।

लवणं तिल्विणीशाकं पक्कमन्नं मुनीश्वराः ॥

इमान्यपण्यानि विप्राणां । एकैकविक्रये ब्रह्महाऽसौ भवति ।

कार्पासताम्रकांस्यत्रपुसीसायःपिण्डविक्रये पञ्चालजातिमान् भवेत् ।

महानारदीये—

कार्पासताम्रकांस्यत्रपुसीसायःपिण्डविक्रये ।

पञ्चालजातिमान् विप्रो नरकं प्रतिप्रद्यते ॥

[ तण्डुलाश्च तिलान् माषान् फलपुष्पगुडान्यपि ।

नागवल्लीदलं पूगं चूर्णं कर्पूरमेव च ॥

कस्तूरीकुङ्कुमं मूलं दुग्धं दधि घृतं तथा ।

क्षणाजिनञ्च रुद्राक्षं ब्रह्मसूत्रं कमण्डलुम् ॥

ताम्रं कांस्यं तथा वस्त्रं कम्बलं रोचनं तथा ।

तिल्विणीं लवणं मूलं शाकमन्नं हिजोयदि ॥ ]



विक्रयित्वा तथा जीवेत् स तु शूद्रो न मंशयः ।  
 एतानि विक्रयित्वा तु हव्यकव्यानि चादरात् ॥  
 पितरोनोपतिष्ठन्ति आइकर्त्ता महानपि ।  
 स्वारामसम्भवान् क्रीत्वा उचितव्ययमाचरेत् ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
 धनस्य संग्रहार्थन्तु द्विगुणं कृच्छ्रमाचरेत् ॥  
 उचितव्ययसिद्धयर्थं गव्यं विप्रो न विक्रयेत् ।  
 षणमासान् लोभतः कृत्वा शूद्रो भवति जिज्ञयः ॥  
 तत्र क्रीत्वा द्विजगृहे पैलकादीनि<sup>१</sup> सञ्चरेत् ।  
 भोक्तारो दोषवन्तस्ते कर्त्ता स्यात् पातकी भुवि ॥  
 विप्रस्तु पक्षमात्रञ्च गोरसं विक्रयेद्यदि ।  
 तस्य देहविशुद्धयर्थं तप्तकृच्छ्रमुदीरितम् ॥  
 मामं वा विक्रयित्वा तु चान्द्रायणमुदाहृतम् ।  
 ऋतुद्वयं विक्रयित्वा मण्डलं यावकं चरेत् ॥  
 ऋतुत्रये<sup>२</sup> तु विक्रीय ब्रह्मोक्तं तस्य वै ध्रुवं ।  
 षन्निशं गोरसं पक्त्वा पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

१ इतः पूर्वं तण्डुनादीनि पूर्वोक्तानि अन्नान्तानि इत्यधिक पाठ क्रीत-  
 काशीपुस्तकयोः समुपलब्धः ।

२ पैलकाणीच सञ्चरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ यदि क्रीत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ अवाप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मासमात्रं पयः पक्त्वा पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 तद्गृहे यो द्विजः क्रीत्वा पूर्ववन्माससंख्यया ।  
 कुर्याद्देहविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं यथाक्रमम् ॥  
 षण्मासं तत्र यः क्रीत्वा<sup>१</sup> तावुभौ समपापिनौ<sup>२</sup> ।  
 तयोरुक्तविधानेन प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।  
 कृष्णाजिनञ्च रुद्राक्षं ब्रह्मसूत्रं कमण्डलुम् ॥  
 ताम्रं कांस्यं तथा वस्त्रं कम्बलं रोचनं तथा ।  
 विक्रयित्वा द्विजो यस्तु मासं मासद्वयञ्च वा ॥  
 मासे पूर्णे पराकः स्यात् द्वितीये चान्द्रभक्षणम् ॥  
 मासत्रये च पूर्णे तु मण्डलं यावकं चरेत् ।  
 षण्मासं विक्रयित्वा तु पतितः स्यान्न संशयः ॥  
 केशानां वपनं कृत्वा पुनर्मौञ्जीं विधानतः ।  
 कृत्वा षण्मासपर्यन्तं अप्रमुष्टि<sup>३</sup>गवाङ्गिकम् ॥  
 पश्चात् शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा तस्य निष्कृतिः ।  
 लवणं पक्वमन्नञ्च द्विजो मासन्तु विक्रयेत् ॥  
 स शूद्रयोनिमासाद्य शूद्रवत् वर्द्धते तथा ।  
 तस्यैव निष्कृतिरियं वत्सरं यावकं चरेत् ॥

१. पीत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. समपापिनौ इति पाठान्तरम् ।

३. अप्रमुष्टिं गवेपिकं इति लेखितपुस्तकपाठः अप्रमुष्टिगवेपिकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तस्योपनयनं भूयः कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात्<sup>१</sup> ।

रौरवं नरकं याति विप्रोयद्यन्नविक्रयी ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

अपण्यविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१' अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



[ अथ निन्दितार्थोपजीवनप्रायश्चित्तमाह ।

कुम्भीपुराणे—

अशोधेनुर्मनुष्यश्च रासभः कुञ्जरस्तथा ।  
कन्या नारी त्वजा-मेषौ पुत्रकं ब्रह्मसूत्रकम् ॥  
जवणं ललनं चर्म लशुनं गृञ्जनं तथा ।  
शुण्ठी-पिप्पल-सारीच-लवङ्गैला-हरिद्रकाः ।  
उपधानोह यावन्ति मत्स्यकुक्कुटसूकराः ।  
हिङ्गुजीरकवस्तुनि ताम्रं कांस्यादिकं तथा ॥  
एतान्मूल्यद्विजः क्रीत्वा सुलभैर्मूल्यसंख्यया ।  
तेभ्यश्च द्विगुणैर्मूल्यैरल्पमूल्यैरथापि वा ॥  
विक्रयित्वाऽऽत्मभरणं कुर्याद्यदिह पापभाक् ।  
मृत्वा नरकमासाद्य क्षमिकूपे पतत्यधः ॥  
तस्मादेतद्विशुद्धयर्थं प्रायश्चित्तमिहोच्यते ।  
सकृद्वारं द्विवारं वा बहुवारमनेकशः ॥  
तप्तं पराकं चान्द्रश्च यावकं वर्षमाचरेत् ।  
तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्येन शुध्यति ॥

इति हेमाद्रिप्रवृत्ते प्रायश्चित्ताध्याये निन्दितार्थोप-  
जीवनप्रायश्चित्तम् ।



## अथ कृषौवलप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

वरं तस्याऽग्निहोत्रार्थं कुटुम्बभरणं तथा ।  
यावता धान्यजातेन तावता कृषिमाचरेत् ॥  
धान्ये गृहगतं<sup>१</sup> पश्चाद् भङ्गविंशतिमव्ययम्<sup>२</sup> ।  
कृत्वाऽतिथिभ्यः सत्कारी वैश्वदेवपरायणः ॥  
दर्शश्च पूर्णमासश्च अग्निहोत्रं दिने दिने ।  
संवत्सरपशुं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥  
कृषिदोषेण महता कदाचिन्न विलिप्यते ।

अन्यथा दोषमाह मार्कण्डेय पुराणे—

वृथा कृषिं द्विजः कृत्वा धान्यं विक्रीय वा नद्याः ।  
भोगार्थं सञ्चयार्थं वा महापापं समन्यते ॥  
वत्सरं धान्यविक्रेता कृषिं<sup>३</sup> कुर्याद् यदा द्विजः ।  
तस्य देह विशुद्धयर्थं वत्सरे<sup>४</sup> चान्द्रजीरितम् ॥  
द्वितीये द्विगुणं प्रोक्तं तृतीये पतितो भवेत् ।

वत्सरत्रयं कृष्युद्धवं धान्यं द्विजोधनार्थं<sup>५</sup> विक्रीय पतितप्राय-  
श्चित्तं कृत्वा शुद्धिं प्राप्नोतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

वृथाकृषौवलप्रायश्चित्तम्

१ गृहपात इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३ वत्सरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ धनार्थमिदं लेखितपुस्तके ।



अथ निन्दितधनाऽऽदानप्रायश्चित्तमाह ।

कर्मपुराणे—

ब्रह्महन्ता सुरापी च स्तेयी गुर्वङ्गनागमः ।  
महापातकिनश्चैते तत्संयोगी च पञ्चमः ॥  
कुण्डश्च गोलकश्चैव तथा सोमलताक्रयी ।  
परिवित्तिः परिवेत्ता परिविन्नश्च वै तथा ॥  
तथा परिविधा<sup>१</sup>दानः दत्ताग्निः कीकसानुगः ।  
स्मृतिविक्रयिकश्चैव परार्थं काशिकागमः ॥  
धर्मविक्रयकश्चैव तथा शूद्रापति<sup>२</sup>र्हिजः ।  
नामविक्रयकश्चैव कामिनीवृषलीपतिः ॥  
तथैव भृतकाध्यायी तुलासु कृतबुद्धिमान् ।

तुलास्विति बहुवचनं षोडशमहादानोपलक्षणम् ॥

दुश्चर्मा क्षयरोगी च कुनखी श्यावदन्तकः ।  
ग्रामणीश्चा<sup>३</sup>रुवाकश्च गायकीनर्त्तकस्तथा ॥  
परदाराभिगामी च भिषग्देवलकस्तथा ।  
एते वै निन्दिता राजन् हव्यकव्येषु सर्वदा ॥  
न सम्भाष्याः सदा विप्रैः परलोकपरायणैः ।  
एतेभ्योयाचनाद्राजन्<sup>४</sup> उत पुण्यपरिग्रहात् ॥

१ परिविधानानः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ तथा शूद्रोयतिर्हिजः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ चारुवाक इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ सक्तप्रगथ परिग्रहज्ञान इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



यागार्थं नित्यलोपार्थं न प्रतिग्रहणं चरेत् ।  
दृष्ट्वा मार्त्तण्डआलोक्यः सम्भाष्य द्विजभाषणम् ॥  
दृष्ट्वा सचैलं स्नायीत चान्द्रं धान्यपरिग्रहे ।  
सहैव भोजनं कृत्वा चान्द्रद्वयमुदीरितम् ॥  
स्वर्णमात्रं द्विजोयसु प्रतिगृह्याशु कर्मसु ।  
योजयेद्यदि मूढात्मा षडब्दं कच्छमाचरेत् ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
निन्दितेभ्यो धनाऽऽदानप्रायश्चित्तम् ।

---



[ अथ वार्हुष्यजीवकस्य प्रायश्चित्तम् ।

नृसिंहपुराणे—

वृद्धेरपि च या वृद्धिश्चक्रवृद्धिरुदाहृता ।  
मासि मासि च या वृद्धिः सा शिखावृद्धिरुच्यते ॥  
ताभ्यां जीवेद्यदा विप्रोनिष्फलं याति सर्वदा ।  
धर्मशाम्भविरोधेन जीवेद्यदिह पृथ्वजः ॥  
अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्मप्रमथ्याचरेन्न तु ।  
धर्मोविप्रस्य पाथेयं स्वर्गारोहणकर्मणि ॥  
तस्मादिदं परित्याज्यं वार्हुष्यं विप्रसत्तमैः ।  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा पाराशर्येण चक्षुषा ॥  
मासं जीवेद्यदा वृद्ध्या तदा यावकमुच्यते ।  
मामद्वये तु तप्तं स्यात् चान्द्रं मामत्रये स्मृतम् ॥  
पण्मासे तु महाचान्द्रं वत्सरे द्विगुणं चरेत् ।  
प्रतितः स्यात्परं विप्रः सर्वकर्मवह्निष्कृतः ॥

वत्सरादृद्धं वार्हुष्यजीवने पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

वार्हुष्यजीवनप्रायश्चित्तम् । १



अथ हिंसायन्त्रविधानप्रायश्चित्तमाह ।

गौरीकाण्डे—

मनुष्यपशुपक्ष्यादिहिंसने<sup>१</sup> यन्त्रवर्त्तनम्<sup>२</sup> ।

मार्गेऽरण्ये जले वापि पर्वते चैत्यवृक्षके ॥

देवालये मभायाञ्च हिंसायं<sup>३</sup> यन्त्रधारणम् ।

यन्त्रस्वरूपमाह—

गजवन्धने भुवःखननं, अश्वपशुमनुष्यवन्धने मार्गेषु<sup>४</sup> श्वभ्र-  
निर्माणं, अरण्ये पशुपक्षिहिंसार्थं जालवागुरास्तरणं, पर्वतेषु  
व्याघ्र<sup>५</sup>भल्लुकवराहादिहिंसनार्थं दाहः, जले पशुमनुष्यमारणार्थं  
शङ्खादिस्थापनं, गृहेषु मृषिकहननार्थं फलकादिभिर्यन्त्रविधानं,  
वृक्षेषु शुकमारिकाचटकादिहननार्थं ग्रीवारज्ज्वादिकरणम् ।  
एतानि यन्त्रविधानानि शास्त्रगर्हितानि । एतानि द्विजः मङ्ग-  
दोषात् स्वयं वा कृत्वा नरकमाप्नोति ।

तदाह गौतमः—

पर्वते वा जले वापि गृहे वाऽरण्यदेशतः ।

द्विजः कुर्यात् मङ्गदोषात् हिंसायन्त्रविधारणम् ॥

स वै नरकमामाद्य मृगयुर्जायते भुवि ।

तस्य दोषविशुद्ध्यर्थं पराकृत्यमौरितम् ॥

१. हिंसनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. यन्त्रकविमम् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३. शुभ्रनिर्माणं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. भल्लुक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. मृषक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



संवत्सरात् परं राजन् चान्द्रद्वयमुदाहृतम् ।

अतः परं न शुद्धोऽभूत् यथा व्याधस्तथैव सः ॥

संवत्सरात्परं विप्रस्तु यन्त्रनिर्माणे पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धि-  
माप्नोति ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

हिंसायन्त्रविधानप्रायश्चित्तम् ।

इत्युपपातकप्रायश्चित्तप्रकरणम् ।

---



अथ मङ्गलीकरणप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

अथ मनुष्यविक्रये—

अज्ञातकुलनामानमन्यदेशादुपागतम् ।  
ब्राह्मणं क्षत्रियं वाऽपि वैश्यं पादजमेव वा ॥  
भ्रामयित्वा परं<sup>१</sup> विप्रस्त्वौषधादिभिरादरात् ।  
विक्रयित्वा नरं पापी जीवयेद्यदि<sup>२</sup> मोहतः ॥  
महापातकिमञ्जः स्यान्मृत्वा नरकमश्नुते ।

लिङ्गपुराणे—

मोहयित्वौषधैर्मन्त्रैरन्यदेशादुपागतम् ।  
अज्ञातकुलनामानं विक्रयेद्यदि पूर्वजः ॥  
न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा<sup>३</sup> ब्रह्महत्याञ्च विन्दति ।

नृसिंहपुराणे —

पूर्वजः पूर्वजं पापी बाहुजोरुजपादजान् ।  
वशीकृत्यौषधैर्मन्त्रैर्विक्रयेद्यदि पापधीः ॥  
न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

(१) नरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मोहयेत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



स्कन्दपुराणे—

मुखजः पापधोर्मर्त्योराजानं वा वणिक्पतिम् ।  
 शूद्रं वा भ्रामयित्वा तु ओषधाद्यैर्विगहितैः ॥  
 विक्रयित्वा परस्मै तं यमलोकं स गच्छति ।  
 पुनर्भुवमुपागम्य सूनुरेव भवेत्पुनः ॥  
 विप्रोविप्रञ्च विक्रीय<sup>१</sup> कुर्यादात्मविपोषणम् ।  
 तस्यैवं निष्कृतिर्दृष्टा मनु-नारद-गालवैः ॥  
 क्षत्रिये तु षड्वदं स्याद् वैश्यः<sup>२</sup> पादोनमाचरेत् ।  
 शूद्रे<sup>३</sup> त्वर्द्धं सङ्करे तु पादं कृत्वा विशुध्यति ॥  
 विशं यः क्षत्रियोहृत्वा विक्रयित्वा यदाऽऽ<sup>४</sup>धिमान् ।  
 ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पातकी ॥  
 अथवा गोसहस्रान्तु कृत्वा शुद्धिमवाप्नु<sup>५</sup>यात् ।  
 तदर्द्धेनैव<sup>६</sup> शुद्धः स्यात् ऊरुजोविप्रविक्रयी ।  
 शूद्रोविक्रीय विप्रं तु स मौमल्यञ्च नान्यथा ॥

सङ्करजातिर्विप्रविक्रये शूद्रोवा मौमल्यमर्हति । विशेषमाह

गारुडपुराणे—

(१) विक्रीय इति क्रीतलेखितपुस्तकयो पाठः ।

(२) वैश्येः पादोनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) शूद्रः त्वर्द्धं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) यदा धिया इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) शुद्धिमवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(६) शुद्धिः स्यात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



बालेचान्द्रं द्विजे प्रोक्तं पौगण्डे तद्वयं चरेत् ।

तरुणे तु महाचान्द्रं यूनि प्रोक्तन्तु तत्त्रयम् ॥

जीर्णे तु विक्रयं कृत्वा सहस्रं कच्छमाचरेत् ।

विप्रजात्यादिस्त्रीणां मनुष्यविक्रये तत्तत्प्रायश्चित्ताङ्गं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

मनुष्यविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) बालचान्द्रं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



## अथाऽऽत्मविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे पातालखण्डे—

पानमज्जःस्त्रियश्चैव मृगया चोग्रदण्डनम् ।

अतीवपरुषं वाक्यं सर्व्वस्वं दानमेव च ॥

एतानि सप्तव्यसनानि ।

अनृतं गन्धपुष्पाणां सेवनं दोषचारणम् ।

सदा ताम्बूलवस्त्राणां भोगोऽयं दोषमाधनम् ॥

ऋणं कृत्वा घृतं पीत्वा प्रत्यहं भोजनसृष्ट्वा ॥

स्वकं किञ्चन न ज्ञात्वा ऋणं कृत्वा व्ययं चरेत् ॥

भोगामक्तः स्वमात्मानं विक्रयित्वाऽथ वर्त्तयेत् ।

वर्षे वर्षाद्विमर्द्धं वा भवदाधीन्यमाचरम् ॥

इति स्वमंत्रिदं कृत्वा वर्त्तयेत् यदि पापधीः ।

नित्यकस्माणि काम्यानि इष्टापूर्त्तादिकानि च ॥

सर्व्वं तस्यैव भवति यद्वैनिष्फलतो भवेत् ।

अग्नौ दग्धं जले मग्नं भूमौ निपतितञ्चयत् ॥

तत्सर्व्वं परलोकाय द्युते नष्टं विनश्यति ।

प्रतितांभवति स पापी भ्रंशाद्यैर्नित्यकस्मिणाम् ॥

१. सर्व्वं स्वकीयं ज्ञात्वा च इति क्रीतकाणिपुस्तकपाठः ।

२. एतः भोगामक्तः स्वात्मानं विक्रयित्वा वर्त्तयेत् । इति त्रैलोक्यक्रीतपुस्तक



नरकं नियतं वासः पापकारी भवेत्ततः ।

तस्यैवं निष्कृतिं दृष्ट्वा मुनिभिर्धर्मकोविदैः ॥

एवं—हिरण्यगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तवत्सर्वं कुर्यात् : इति शेषः ।

इति हेमाद्रिविरचितं धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

आत्मविक्रयिणः प्रायश्चित्तम् ।

---

१ एव मिलंशः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

---



## अथ सुतविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

योविप्रो धनलोभेन स्वसुतं विक्रयेद्यदि ।

स वै पिशाचतां याति यावदाभूतसंप्लवम् ॥

लिङ्गपुराणे—

गृहदाहोदारनाशो देहे पीडा सुतात्मनोः ।

राजा हरति सर्वस्वं पशवश्चार<sup>१</sup>नाशिताः ॥

वान्धवैश्च परित्यागआत्मवस्त्रविहीनता ।

अष्टौ कष्टादमे राजन् सन्भवेष्वेषु मानवः ॥

सुतं न विक्रयेत् पापी स वै पिशाचजन्मवान् ।

अहो कष्टमहो कष्टमहो कष्टं दरिद्रता ॥

तत्रापि पुत्रदाराणां बाहुल्यमतिकष्टता ।

औरसे वाऽन्यपत्नीजे न द्विजोविक्रयं चरत् ॥

स एव नरकं भुक्त्वा पिशाचत्वमवाप्नुयात् ।

शारङ्गपुराणे—

आपत्सु धनलोभाद्वा महाक्षोभेषु भूमिप ।

औरसं वाऽन्यजं वापि द्विजोयद्विह विक्रयेत् ॥

स एव नरकान् भुक्त्वा पिशाचत्वमवाप्नुयात्<sup>२</sup> ।

तद्दोषपरिहारार्थं महामान्तपनं चरत् ।

१ अपिनाशिता इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ पिशाचजन्मवान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ याप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



बाले सान्तपनं प्रोक्तं पौर्णमासे तद्वयं स्मृतम् ।  
कौमारे प्रौढकाले तु महासान्तपनत्रयम् ॥  
स्त्रीणामर्द्धं विक्रयित्वा विप्रे क्षत्रियदैश्ययोः ।  
तत्स्त्रीणाञ्च तदर्द्धं स्यात् शूद्रे तदनमाहरेत् ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
सुतविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ पत्नीविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

देवस्वामी—

पूर्वोक्तेष्विह कष्टेषु महदापत्सु भूमिषु ।

न पत्नीं विक्रयेद्विप्रो दुष्टामपि सतीमपि ॥

गर्भे त्यागो विधीयत इति सर्व्ववानुषङ्गः । कलौयुगे व्यभिचारं  
‘स्वदृष्टे’ गर्भधारणमेव दुष्टत्वम् । व्यभिचारमात्रे पोषण  
मेव न त्यागः ।

‘स्कन्दपुराणे’—

आपत्स्त्रपि हि कष्टेषु महाक्षोभे जनक्षये ।

धर्मपत्नीं सपत्नीं वा संदृष्टां ‘दुष्टचारिणीम्’ ।

‘क्रमाद्विजोविक्रयीत परस्मै सत्सरातुरः ॥

यदि विक्रीय वर्त्तत महान्तं नरकं व्रजेत् । इति

भविष्योत्तरं—

सतीं स्वपत्नीमापत्सु भर्त्ता विप्रो न विक्रयेत् ।

धर्मां यदि परित्यज्य वर्त्तयेद्विह कर्मणि ।

यमलोकमुपागम्य ‘रौरवे’ नरके वसेत् ॥

‘पुनर्भुवमुपागम्य’ टारहीनो भवेद्भुवि ।

१) व्यभिचारे च दृष्टे इति क्रीतकागोपुस्तकपाठः ।

२) स्कान्दे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) स्वदृष्टा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) विक्रयेद्विजः क्रमात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) रौरवं नरकं वसेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६) पुनर्भवमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



एतद्दीपविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।

‘सतीविक्रयके चान्द्रं पराकं दुष्टचारिणीम् ॥

बालिकायां षड्व्यं स्यात् प्रौढायां नास्ति निष्कृति’ इति ॥

एतदज्ञानविषयम् । ‘ज्ञात्वा चेद्विगुणं चरेत् । क्षत्रियवैश्ययो-  
र्विप्रवत् प्रायश्चित्तं । शूद्रे तद्वनं राजा सर्व्वं गृह्णीयात् ।

[इति हेमाद्रौ पत्नीविक्रयप्रायश्चित्तम् ।]

---

(१) सती च विक्रये चान्द्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) ज्ञात्वा च द्विगुणं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ अथमंगः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः । ]



## अथ मातृविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

शिवपुराणे—

मातरं तत्सपत्नीं वा भगिनीं भ्रातृवान्ववौम् ।  
पितृव्यपत्नीं विधवां स्नुषां कामातुराग्रणीम् ।  
\*ब्राह्मणीमत्सरासक्तोऽभ्यभिचारादिशङ्कया ।  
न विक्रयेत् सुतोभ्राता यदि कुर्यात् स दोषभाक् ॥

निङ्गपुराणे—

मातरं भगिनीं भ्रातृवान्ववीं स्वस्नुषामपि ।  
सपत्नीं विधवां पत्न्याः सपत्नीं मातुलायनीम् ॥  
पितृव्यपत्नीं भ्रातृजायां गुरुपत्नीमथापि वा ।  
\*अभ्यचारादिवाक्ताभिर्मत्सराडा नराधिप ॥  
एतासु विप्रो न द्रुह्येत् सति दोषे महत्यपि ।  
न विक्रयेद्भिजोलोभान्मृत्वानरकमश्नुते ॥

साकण्डेयपुराणे—

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि दोषदुडिमिमामिह ।  
विप्रस्तु मातरं धात्रीं तत्सपत्नीं महोदराम् ॥

(१) आह इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२) वा मातुरग्रणीम् इति मेखिनटुलकपाठः ।

दो विपः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३) जेत्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४) मातुः अग्रणीम् इति मेखिनटुलकपाठः ।

५) अभ्यचाराभिवाक्ताभि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) साकण्डेये इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

७) भ्रात्री इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स्वसारं विधवां साध्वीं पितृव्यां<sup>१</sup> स्वसुषामपि ।  
 मातुलानीं गुरोर्दारां व्यभिचारे महत्यपि ॥  
 जनवादाद्बोहवुद्ध्या न द्रुह्याद्वै कदाचन ।  
 मातरं तत्सपत्नीं वा विक्रीय<sup>२</sup> पतितोभवेत् ॥  
 भागिन्यां स्वसारं तु विक्रयेद्यदि पापधीः ।  
 निष्कारणतया राजन् कारीषवधमर्हति ॥  
 विधवां मातुलानीं वा सुषां पितृव्यसम्भवाम् ।  
 विक्रयित्वा द्विजोमोहादन्यदेशगतायदि ॥  
 महासान्त्वनं चान्द्रं षड्वदं तु परिक्रमः<sup>३</sup> ।  
 यथाक्रमं योजनीयं गर्भे त्यागोविधीयते ॥  
 मातरं न त्यजेद्विद्वान् पूर्ववत् शुद्धिमाचरेत् ॥

गुरुदारविक्रये कारीषवधएव । वयस्तारतम्यं पूर्ववद् वेदितव्यम् ।  
 तत्र विक्रये तत्तत्प्रायश्चित्तं योजनीयम् । क्षत्रियवैश्ययोर्विप्रप्राय-  
 श्चित्तम् । शूद्रे तद्वनस्वीकारः सर्वत्र गर्भे स्वदेशादन्यदेशे  
 त्यागएव । मात्रोः पूर्ववद् वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ मातादिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१. पितृव्यां इति क्रीतकाशापुस्तकपाठः ।

२. विक्रये इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३. भागिनीं वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४. परिक्रमस्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पुत्रीविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

विवाहोद्धं विवाहात्प्राक् कन्यां गौरीमयाऽपि वा ।  
रोहिणीं पुष्पिणीं वाऽपि योरत्नं कन्यकाधनम् ॥  
विवाहार्थमिति व्याजं कृत्वा स्वीकरणं चरेत् ।  
पितरो नरकं यान्ति स्वयं पत्नीसमन्वितः ॥  
रौरवे नरके घोरे वसत्याचन्द्रतारकम् ।  
जामातृरतिमात्रं स्यात् सा वै किङ्करिणी भवेत् ॥

गौतमधर्म—

अष्टवर्षा भवेत्कन्या नववर्षा तु रोहिणी ।  
दशवर्षा भवेद्गौरी अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥  
क्रयक्रीता तु या नारी 'मा न पत्न्यभिधीयते ।  
न योग्या हव्यकव्येषु दाम्नी तां मुनयो विदुः ॥

कन्यादाने विशेषमाह—

भाकौण्डेयपुराणे—

मन्वन्विनं माणवकं त्र्यम्बकं व्याधिर्वर्जितम् ।  
'कन्यां दद्याच्च तस्मै तां व्रतस्नातकशुद्धये ॥  
मातृतः पितृतश्चैव सप्त सप्त च सप्त च ।  
पितृनुदरते पूर्वं पश्चाद्ब्रह्मणि लायते ॥

१। मा सपत्न्यभिधीयते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२। याज्ञिके दाने तस्मै ता इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कर्मपुराणे—

वस्त्रादिना शुभां राजन् शक्त्याऽलङ्कृत्य स्वां सुताम् ।

कुलजाय सुशीलाय स्नातकव्रतचारिणे ॥

अरोगाय श्रुतवते यो दद्यात्तां शृणुष्व मे ।

पितरोमुक्तिमायान्ति स्वयञ्च ब्रह्मणःपदम् ॥

एतस्य वैपरीत्ये तु पितरोनिरयं गताः ।

कुम्भीपाकं स्वयं याति कन्याविक्रयणे फलम् ॥

विवाहार्थं यं कं वा व्याजमाश्रित्य धनस्वीकारएव मौल्यं, कन्या-  
शुल्कं तदेवाह ।

देवलधर्मे—

विवाहार्थं धनं गृह्णन् यं कं वा व्याजमाश्रितः ।

तदेव विक्रये<sup>१</sup> मौल्यं<sup>२</sup> विप्रस्तस्मात्तु<sup>३</sup> संत्यजेत् ॥

न तस्य निष्कृति<sup>४</sup>र्वास्ति त्रिभिश्चान्द्रायणै<sup>५</sup>र्विना ।

रोहिणीविक्रये राजन् महाचान्द्रायणं स्मृतम् ॥

मौरीविक्रयणे तात महामान्तपनत्रयम् ।

रजस्वलाविक्रयणे कारीषत्रधण्व हि ॥

१) ब्रह्मादि मन्त्राणां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) एतस्यै परित्यज्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) विक्रयोमौल्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) तस्मात् संत्यजेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

६) चान्द्रायणं विना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



एतामां च चतसृणां मूल्यं धत्वा विवाहयेत् ।

न तत्र विप्रो भुञ्जन्ति तत्तत्पापाद्दिमाप्नुयुः ॥

तदाहाऽपस्तम्बः—

“दोषेण वा मीमांसमानस्य मीमांसितस्य वा आत्मानं  
हिंसितस्य भक्षयतीति विजयते” ।

अत्र कन्याशुल्कस्वीकारएव दोषः । अतएव कन्यामूल्यस्वीकार-  
एव विक्रयः नान्यत्<sup>३</sup> ।

इति हेमाद्रौ कन्याविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) विप्रो भुञ्जीत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) आन्त्यादिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कन्यात् इत्येव लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ गजविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे —

गजं क्रीत्वा तु धृत्वा वा व्यवहारतया द्विजः ।

[ विक्रयेद्यदि मूढात्मा धनलोभधृतादरः ]

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

लिङ्गपुराणे —

सम्पाद्य नागं धृत्वा वा विप्रो लोभपरायणः ।

विक्रयेद्यदि दोषात्मा न तस्य पुनरुद्भवः ॥

स्कन्दपुराणे —

हस्तिनं प्रतिगृह्याशु क्रीत्वा द्रव्याल्पमानसः ।

विक्रयित्वा पुनर्लोभाद् यमलोकमवाप्नुयात् ॥

बालविक्रयणे चान्द्रं पौगण्डे तद्वयं स्मृतम् ।

युवानं विक्रयित्वा तु दशतप्तं समाचरेत् ।

स्त्रीणामर्द्धं मुनिश्रेष्ठाः प्रायश्चित्तं मनोपिभिः ॥

धेनु-गजविक्रये स्त्रीणामर्द्धं प्रायश्चित्तमुक्तम् । क्षत्रियवैश्ययोर्वै

प्रायश्चित्तम् । शूद्रे तु सम्पूर्णमेव इति केचित् । अर्द्धं शूद्रवैश्ययो

र्वैदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ गजविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(1) इदं श्लोकार्द्धं क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलब्धम् ।

(2) स्कान्दे पुराणे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(3) अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## चथ धेनुविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

शिवपुराणे—

[ सम्पाद्य बहुधा यत्नैर्धेनुं विप्रः प्रतियहात् ।  
विक्रयेद्यदि मूढात्मा रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

लिङ्गपुराणे—]

धेनुं सम्पाद्य विप्राय अग्निहोत्रार्थमादरात् ।  
दुग्धाभावे रुपा युक्तो विक्रयेद्यदि पापधीः ॥  
स वै नरकमामाय चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ।  
बालपौगण्डके वापि धेनू वा द्रव्यलोभवान् ॥  
विक्रयेद्यदि मूढात्मा दहत्यामृतं कुलम् ।  
बाले चान्द्रन्तु पौगण्डे महाचान्द्रमुदीरितम् ॥  
युवतीं विक्रयित्वा तु तप्तकच्छत्रयं विदुः ।  
धेनुं द्विजोविक्रयित्वा गोमूतं मण्डलं जपेत् ॥  
आमायं प्रातरारभ्य स्नात्वाऽभुञ्जन् फलं मृदाः ।  
मण्डलेन विशुद्धिः स्यात् पञ्चगव्यं ततः परम् ।

भूमूक्तमित्यर्थः

इति हेमाद्रौ धेनुविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

अथ अग क्रोतपुस्तके नोपलभ्य ।

१ धेनुमित्येव क्रोतपुस्तकेनास्ति

२ स्नात्वाभुजिफलं इति क्रोतपुस्तकपाठः

३ विशुद्धिः स्यात् इति क्रोतपुस्तकपाठः



अथ बलीवर्हविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

मार्कण्डेयपुराणे—

अनडाहं यदा विप्रोविक्रयेद्यदि मोहतः ।

स पापी नरकं याति असिपत्रं सुदारुणम् ॥

लिङ्गपुराणे—

अनडान् पूर्वजेनाऽथ द्रव्यलोभपरेण वा ।

विक्रीयते महान्घोरो नरकः सम्भवेदतः ॥

कूर्मपुराणे—

अनडाहं द्विजोष्ट्वा गृहीत्वा वा नरोत्तमात् ।

द्रव्यलोभेन सहता विक्रयेद्यदि कामतः ॥

महान्तं नरकं गत्वा भुवि भूयात् स हिंसकः ।

तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं तप्तकच्छं समाचरेत् ॥

पोषयित्वा गृहे वत्सं स्वधेनूदरसम्भवम् ।

तं विक्रयित्वा मोहेन कुर्याच्चान्द्रायणं बुधः ॥

बाले पौगण्डके चैव प्राजापत्यं विशोधनम् ।

विप्रस्त्रीणामेवमेव प्रायश्चित्ताईमाचरेत् ॥

(१) अथानडाह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

[ १ ] अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

२ नरोत्तमान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) न स भूयात् स हिंसक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ दोषोपशान्त्यर्थं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) तोषयित्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

६) तत्तत्स्त्रीणामेव तदृद्धं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



क्षत्रियवैश्ययोरेवं वेदितव्यम् । तत्तत्स्वीणामेतदर्द्धम् । पादजे  
 धनस्वीकारः ।

इति हेमाद्रौ बलीवर्धविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१६ धन इत्यंशः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

१७ अनडाह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ महिषीविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

महिषीं पोषयित्वा तु स्वगृहे पुत्रवत्तथा ।

तां पश्चाद्विक्रयित्वा तु विज्ञेयः पापधीर्नरः ॥

नरशब्दो जातिमात्रसाधारणः ।

स याति नरकं घोरं <sup>१</sup>आकीलं नाम नामतः ।

लिङ्गपुराणे—

<sup>२</sup>महिषीं स्वगृहे तात पोषयित्वा स्वयं द्विजः ।

<sup>३</sup>पुत्रवत्पालयित्वा तु विक्रयेदन्यचोदितः ॥

स एव नरकस्थायी तद्वै पापमनुत्तरन् ।

महिषं स्वगृहे जातं क्रीत्वा वा राजनन्दन ॥

प्रतिगृह्य द्विजो यस्तु विक्रयेद्वनलीभतः ।

यमलोकमनुप्राप्य नरकं याति दारुणम् ॥

गृहजां विक्रयेद्भ्राजन् तस्य चान्द्रायणं स्मृतम् ।

वणिक् पापेन संक्रीत्वा <sup>४</sup>विक्रयेत् तद्वयं चरेत् ॥

प्रतिगृह्य द्विजस्त्वेनां प्रदुष्टं विक्रये स्मृतम् ।

---

(१) अकालं नाम नामतः इति काशीपुस्तकपाठः ।

(२) महिषं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पुत्रवत्पालितायेन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) विक्रयीत् इति काशीपुस्तकपाठः ।



तत्स्त्रीणान्तु तद्वं स्यात् क्षत्रियाणां द्विजोक्तवत् ॥  
 वैश्यानान्तु क्षत्रियवत् [शूद्राणाम्] तदनं हरेत् ।

इति हेमाद्रौ महिषीविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१३ द्विजोत्तम इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ क्षत्रियत्वात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथाऽज-वस्तु<sup>१</sup>विक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

नागरखण्डे —

अजं वस्तं द्विजोयस्तु सम्पाद्य बहुयत्नतः ।

पश्चात्तौ विक्रयेत् पापी नरकं<sup>२</sup> याति दारुणम् ॥

स्कन्दपुराणे—

विप्रः प्रयत्नतो राजन् सम्पाद्येमौ प्रगृह्य वा ।

पश्चात्तौ<sup>३</sup> विक्रयेत्पापी नरकं याति गौरवात् ॥

लिङ्गपुराणे—

अजं वस्तं द्विजोयस्तु सम्पाद्य बहुयत्नतः ।

पश्चात्तौ विक्रयित्वा चेत् नरकं याति दारुणम् ॥ ]

तत्पापपरिशुद्धयर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ।

नारीं<sup>४</sup> वा विक्रयेद्यस्तु तदङ्गं<sup>५</sup> तस्य कीर्तितम् ॥

इति हेमाद्रौ अज-वस्तुविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१ विक्रये प्रायश्चित्तमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ अजवस्तं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ चानुभूयते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४ विक्रयित्वाचेत् नरकं याति दारुणम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

६ नारीं यो विक्रयेद्यस्तु । इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

७ परिकीर्तितं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ खरविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

स्कन्दपुराणे—

रासभं विक्रयेद्विप्रः पशुचाण्डालमादरात् ।

स वै चाण्डालतां याति नरकं चानुभूय च ॥

स्कन्दपुराणे—

रासभं पूर्वजो लोभात् क्रीत्वाऽल्पद्रव्ययोगतः ।

पश्चाद्वहुधनाकाङ्क्षी विक्रयेद्यदि दैवतः ॥

[स चाण्डालत्वमासाद्य यावद्ब्रह्मा लयं<sup>२</sup> गतः ।

तावत्कालं तथा नीत्वा भवेत्कण्डूतिमान् भुवि ॥

लिङ्गपुराणे—

रासभं विक्रयेन्मोहात् क्रीत्वा वा धनलोभवान् ।

स चाण्डालत्वमासाद्य पश्चात्कण्डूतिमान् भवेत् ] ॥

प्राजापत्यं भवेत् बालेन कौमारं तप्तमाचरत् ।

यृनि क्रीत्वा<sup>३</sup> षड्वदं स्यात् ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

स्त्रीणामेतद्वै । क्षत्रियवैश्ययोर्विप्रवत् । पादजे सर्वस्वहरणम् ।

इति हेमाद्रौ रासभविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) आह इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(३) अयं पाठः क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(४) अयं पाठः काशीपुस्तकेनोपलब्धः ।

४ कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथोष्ट्रविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

लिङ्गपुराणे—

उष्ट्रं द्विजोऽथ क्रीत्वा वा सम्पाद्य लघुमूल्यतः ।

विक्रयेत्तं धनाधिकात् कालं<sup>२</sup> सूत्रं प्रपद्यते ॥

स्कन्दपुराणे—

स्तेयं कृत्वाऽथवा क्रीत्वा द्विजः कुर्यात् क्रमेलकम् ।

विक्रयेद्<sup>३</sup> यदि पापात्मा नरकं याति दारुणम् ॥

भविष्योत्तरे—

“क्रमेलकं द्विजोयस्तु सम्पाद्य बहुयत्नतः ।

न तस्य निष्कृतिर्नास्ति<sup>४</sup> कालसूत्राद्भयङ्करात् ॥

बाले पराकं सम्प्रोक्तं पौगण्डे तप्तमीरितम् ।

यूनि चान्द्रं षड्वदं वा कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

विप्रस्त्रीणां तदङ्गं स्यात् पूर्णं क्षत्रविशामिह ।

पादजे तु धनाऽऽदानमेवमेव प्रचोदित” मिति ॥

इति<sup>५</sup> हेमाद्रौ उष्ट्रविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) आह इत्यंशः क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(२) कालसूत्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) विक्रये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) हेमाद्रौ इत्यंशो लेखितपुस्तके नोपलब्धः ।



अथ हरिणीविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

लिङ्गपुराणे—

अरण्यजां वा गृहजां विप्रोयदिह विक्रयेत् ।

एणीं तद्व्यलोभेन स याति<sup>२</sup> ब्रह्महन्तताम् ॥

मत्स्यपुराणे—

देवालये<sup>३</sup> गृहेवाऽपि पोषयित्वा मृगाङ्गनाम् ।

द्विजस्तां<sup>४</sup> विक्रयेद्यस्तु स महापातकी भवेत् ॥

विक्रयेद्यदि हिंसार्थं स चाण्डालत्वमाप्नुयात् ।

चतुर्विंशतिमते—

अरण्यजां वा गृहजां विप्रोहिंसार्थमादरात् ।

विक्रयेद्यदिपापात्मा भुवि चाण्डालजन्मवान् ॥

न तस्य निष्कृतिर्वास्ति<sup>५</sup> यमलोकात्कदाचन ।

राजविजये—

ब्राह्मणः समुपादाय हरिणीं<sup>६</sup> वनमश्वाम् ।

क्रीत्वा वा राजराजेन्द्र हिंसार्थं विक्रयेद्यदि ॥

स वै नरकमासाद्य तत्र भुक्त्वा महद्भयम् ।

भुवि गत्वा च पापीयान् चाण्डालत्व<sup>७</sup>मवाप्नुयात् ॥

(१) आहेत्यंशः क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(२) ब्रह्महन्ततामिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) देवालयगृहे इति पाठः क्रीतपुस्तके दृष्टः ।

(४) द्विजस्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) नवमश्वाम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) अवाप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तत्पापशीधनार्थाय निष्कृतिं प्राह पद्मभूः ।  
 प्रातःस्नात्वा<sup>१</sup> यथाऽऽचारं नित्यकर्म समाप्य च ॥  
 रहःस्थानं<sup>२</sup> उपाविश्य स्वगृह्याग्नी विधानतः ।  
 अग्नीन्धनादि<sup>३</sup> पात्रान्ते पिष्टाज्यसहितैस्तिलैः ॥  
 विरजाहोमविधिना कृत्वा होमसहस्रकम् ।  
 जयादींश्च ततोहुत्वा होमशेषं समापयेत् ॥  
 फलाहारः प्रकर्त्तव्योहोमकर्मफलाप्तये ।  
 मायं मन्थ्यामुपास्थाय<sup>४</sup> तत्रौपासनमाचरेत् ॥  
 अग्निञ्च रक्षयेद्दोमान् यावद्दीक्षा समाप्यते ।  
 एवं पञ्चदिनं कृत्वा तस्मात् पापात् प्रमुच्यते ॥

सहस्रमित्यत्र तिलान् जुहोमीति चतुर्विंशतिभिर्वाक्यैः पृथक्  
 संख्या कर्त्तव्या । एतैर्वाक्यैस्तिलैः सह संख्या भवति १ । एतया  
 संख्यया पञ्चरात्रं पञ्चसहस्रं जुहुयादिति वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

हरिणीविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१ स्नात्वाऽऽयवाचारं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ रहः स्थानमुपाविश्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ अग्नीन्धनादौ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ उपासित्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५ याद्व्येति कर्मापुस्तकपाठः ।



अथ कुरुविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

यन्नार्थं कल्पितं पूर्वं ब्रह्मणा पद्मयोनिना ।  
यस्मिन्देशे मृगः कृष्णः स देशः पुण्यवानिह ॥  
तं क्रीत्वा वा गृहीत्वा वा पूर्वजोद्रव्यव्यापया ।  
विक्रयित्वा सकर्मभ्यः स वै चाण्डालवानिव ॥  
तस्मान्नविक्रयेद्भीमान् कुरु<sup>२</sup> स्वप्नेऽपिनारद ।  
विक्रयेद्यदि मूढात्मा प्रायश्चित्तीभवेत्तदा ॥

लिङ्गपुराणे—

ब्रह्मणा कल्पितं रङ्गं सम्पाद्य बहुयत्नतः ।  
पूर्वजः सङ्गदोषेण विक्रयेद्यदि पापभाक् ॥  
महान्तं नरकं गत्वा चाण्डालत्वं भजेदिह<sup>३</sup> ।  
न तस्य निष्कृतिर्वास्ति त्रिषु जन्मसु भूमिज ॥  
स्वगृह्याग्नौ विधानेन दशरात्रमतन्द्रितः ।  
कुष्माण्डगणहोमैश्च सहस्रं जुहुयात् क्रमात् ॥  
एतैः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा तस्य पापिनः ।

१) आह इति क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

२) भजेदिह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) नास्ति इति ऐतरेयपुस्तकपाठः ।



सहस्रं कुमाण्डहोमः [ तदर्थं गणहोमः ] तमग्निं दशरात्र-  
मजस्रं<sup>१</sup> कृत्वा दशरात्रं फलाहारःस्थण्डिले शयनं कृत्वा शुध्यति ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

रुक्विक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१ अयं पाठः क्रीतपुस्तकेनास्ति ;

२ अनुप्रां इति क्रीतपुस्तकपाठः ;

---



अथ अश्वविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्मवैवर्ते —

उत्तमाश्वं गृहे जातं क्रीत्वा मूलैरनेकशः ।  
पोषयित्वा चिरं कालं विप्रस्तं विक्रयेद्यदि ॥  
कालकूटमुपागम्य यमलोके भयङ्करे ।  
पुनर्भवमुपागम्य व्याधीभवति कानने ॥

पद्मपुराणे—

मेरुमन्दरतुल्यानि पापानि विविधानि च ।  
रुद्रजापी हरेत्सर्वं<sup>१</sup> न कन्याहयविक्रयी ॥  
हयविक्रयिणः पापं यत्र गत्वा न हीयते ।  
तस्मादेतत् परित्याज्यं पूर्वजैः पापभीरुभिः ॥

शिवपुराणे—

कन्यां दामीं हयं विप्रः पोषयित्वा प्रयत्नतः ।  
तानेतान् विक्रयेत् पापी व्याधीभवति कानने ॥

विष्णुधर्मोत्तरे—

कन्यां हयञ्च दामीञ्च स्वगृहे सम्भवान् शुभान् ।  
पोषयित्वा द्विजलोभात् पश्चादेतांश्च विक्रयेत् ॥  
स भुक्त्वा यातनाः सर्वाः पश्चाद्वाधीर्भवन्ति हि ।  
तस्य देहविशुद्धयं प्रायश्चित्तमिदं शुभम् ॥

१. पुनर्भव इति कीतपुस्तकपाठः

२. पापं कीतलेखितपुस्तकपाठः



उत्तमाश्वं द्विजः कस्मै <sup>१</sup>क्रीत्वा दद्याद्द्विजन्मने ।  
 साधारणहये राजन् तप्तकृच्छ्रं विशोधनम् ॥  
 वड्वाविक्रये तात प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
 बाल्ये पराकं पौगण्डे तप्तं यूनीह यावकम् ॥  
 तदङ्गं विप्रनारीणां विप्रोक्तं राजवैश्ययोः ।  
 तत्स्त्रीणाञ्च तदङ्गं स्यात् पादजे मूल्यमाहरेत् ॥  
 एवं विप्रोभवेत्पूतः पापादस्माद्विशाम्पते ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
 अश्वविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१. विक्रयित्वा चरेद्विधुं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दुष्टमृगविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

शम्भुरहस्ये—

सिंहोव्याघ्रश्च 'भल्लूकः किटिः शल्लएवच ।  
शरभाः खड्गिनो ये च ते मृगादुष्टसंज्ञिताः ॥  
एतान् गृहीत्वा दुष्टात्मा जालैः श्वभ्रैश्च शङ्खुभिः ।  
'व्याधसंसर्गितामेत्य विप्रोलोकविगर्हितः ॥  
'तानादाय यदाराजन् विक्रीयेद् यदि लीलया ।  
तस्य देहविशुद्धयर्थं पराकं मुनिचोदितम् ॥  
तेन शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ।

इति श्रीहर्माद्रौ प्रायश्चित्ताध्याये दुष्टमृग-  
विक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) भल्लूक इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) व्याधसंसर्गितामेत्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तानादाय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथाऽऽरण्यकमृगपक्षिविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

‘खड्गटिट्टिभिचक्रं’ वा ‘हंसकारण्डवं’ तथा ।  
मयूरं सारसञ्चैव ‘मरीचमृगमेव च ।  
‘वर्षञ्च मृगनाभिञ्च कपोतं’ जालपादकम् ॥  
शुकं चाषं बलाकाञ्च शिशुमारं च ‘कण्ठपम् ।  
शारिकाञ्च भरद्वाजं ये चान्ये पक्षिणस्तथा ॥  
एतान्योद्रव्यलोभेन द्विजोयदिह विक्रयेत् ।  
तस्येह शुद्धिरुदिता द्वादशाहमभोजनम् ॥  
मकरं नकुलं काकं<sup>१</sup> कुक्कुटं मूषिकं तथा ।  
मार्जारं नकुलं सर्पं भारद्वाजं कपिं तथा ॥  
करिकं<sup>२</sup> चटकं खानं विक्रयेद् यदि पूर्वजः ।

(१) खड्गं टिट्टिभिं चक्रं वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) हंसं कारण्डवं तथा इति काशीपुस्तकपाठः ।

(३) मरीचं मृगमेव च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) वर्षञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) कपोलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) जालपादकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) कठपं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(८) कालं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(९) करकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



‘सुपर्णमृगशेनांश्च शिवाकङ्कं’ मृगालकम् ॥

कुच्छार्द्धमाचरेद्विद्वान् ज्ञात्वा तद्विगुणं चरेत् ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

मृगपक्षिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(८) सुपर्णमृगशीमांश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(९) शिवाकञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ गोधूम-तिल-माषविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

गोधूमाश्च तिला माषाः हव्यकव्यशुभप्रदाः ।  
स्वकृषिप्रापिता राजन् पितृप्रीतिकराः शुभाः ॥  
द्विजोयदिह लोभेन सञ्चयार्थं हि विक्रयेत् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति यमलोकात्कदाचन ॥

[ लिङ्गपुराणे—

तिल-गोधूम-माषान् यः स्वकृषेरुद्भवानिमान् ।  
धर्माशास्त्रं परित्यज्य विप्रोयदिह विक्रयेत् ॥  
न तस्य निष्कृतिर्नास्ति यमलोकात्सुदुःखदात् । ]

महाराजविजये—

तिलान् गोधूम-माषांश्च स्वकृषेरुद्भवान् द्विजः ।  
विक्रयेन्नलोभेन महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
गोधूमविक्रये राजन् प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
माषाणां तप्तमात्रञ्च तिलानां चान्द्रभक्षणम् ॥

— अथं पाठः क्रीत पुस्तके नोपलब्धः ।

(१) परित्यज्या इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुदुःखवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



एतत्प्रायश्चित्तं खारीप्रमाणे योजनीयम् । अल्पविक्रये तद्वैम् ।  
तत्पत्नीनां तद्वैम् । राज्ञां विप्रवत्प्रायश्चित्तम् । वैश्यस्य सहजमेव ।  
शूद्रादीनां न दोषः ।

इति हेमाद्रौ गोधूम-तिल-माषविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ मुद्ग-तण्डुलविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मार्कण्डेयपुराणे—

मुद्गाश्च तण्डुला राजन् सर्वजन्तूपकारकाः ।  
ब्रह्मा<sup>२</sup> लोकस्य रक्षार्थं सृष्ट्यादौ सृष्टवानिमान् ॥  
हव्यकव्येषु शस्ताःस्युर्विप्राणाञ्च विशेषतः ।  
द्रव्यस्य सञ्चयार्थं वा उत लोभपरायणः ॥  
नरकं प्रतिपद्याशु कष्टजो जातिहा भवेत् ।  
[ विक्रयेद् यदि मूढात्मा नरकं संप्रपद्यते ॥

मरीचिः—

मुद्गाश्च तण्डुला राजन् ब्रह्मणा निर्मिताः पुरा ।  
तान् विक्रयित्वा यो विप्रो द्रव्यलोभपरायणः ॥  
नरकं प्रतिपद्याशु कष्टजो जातिहा भवेत् ॥ ]

गौतमधर्म—

तण्डुलांश्चैव मुद्गांश्च विप्रो लोभपरायणः ।  
विक्रयेद्यदि मोहात्मा प्रायश्चित्तो भवेदिह ॥

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) ब्रह्मणा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) इदं श्लोकाच्च लेखितपुस्तके नास्ति ।

(४) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्न दृश्यते ।



प्राजापत्यं तण्डुलेषु तप्तं मुह्ये पु शस्यते ।

खारिकायामेवमेव तद्वर्द्धञ्च 'तद्वर्द्धके' ॥

एकवारविक्रये प्रायश्चित्तमिदं, द्विवारे द्विगुणं, अभ्यासे चतुर्गुणम् ।

अतःपरं द्विजः शूद्रतुल्यइत्यर्थः । तत्स्त्रीणां तद्वर्द्धम् । क्षत्रियाणां  
विप्रवत्प्रायश्चित्तम् ॥

इति हेमाद्रौ मुह्ये-तण्डुलविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

११ तद्वर्द्धकं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ व्रीह्यादिधान्यविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

लिङ्गपुराणे—

व्रीहयश्चणका राजन् श्यामाकाः कीदृवास्तथा ।

प्रियङ्गवः कुलित्याश्च<sup>२</sup> यावनाला महीनताः ॥

एतानि कृषिजानानि स्वीद्वानि नृपोत्तम ।

एतेषां विक्रयं कृत्वा नित्यलोपी समाचरेत् ॥

नित्यलोपइति दर्शपूर्णमासाऽऽययणपशुपित्रा<sup>३</sup>द्विकलोपः<sup>४</sup> तदर्थं

विक्रये न दोषः । द्रव्यमञ्चयार्थं विक्रये तु दोषमाह—

कर्मपुराणे—

विक्रयित्वा द्विजोधान्यं नित्यलोपी न दोषभाक् ।

आत्मनश्चोपभोगार्थं महान्तं नरकं व्रजेत् ॥

वराहपुराणे—

द्विजस्य विक्रये धान्ये लोपश्चेन्नित्यकर्मणाम् ।

महान्तं दोषमासाद्य मृत्वा नरकमश्नुते ॥

‘मर्वासां धान्यजातीनां वृथा विक्रीय योद्विजः ।

आत्मपुत्रस्वदाराणां भोगार्थं पापमाचरेत् ॥

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) कुलित्या स्युः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पितृगार्द्धिक इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तदर्थमिति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(५) मर्वे प्राधान्यजानानां इति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वज' ।  
 'अर्द्धे' पराकोविप्राणामनर्द्धे चान्द्र'मीरितम् ॥  
 एकस्मिन् वत्सरे तात प्रायश्चित्तमितीरितम् ।  
 द्वितीये द्विगुणं प्रोक्तं तृतीये शूद्रएव सः ॥  
 तत्पत्नीनां तथा प्रोक्तं क्षत्रियो'विप्रवच्चरेत् ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति यथा शूद्रस्तथैव सः इति ॥

इति हेमाद्रौ 'नानाधान्यविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) अर्द्धं पराक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अर्द्धे चान्द्रमितीरितं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) क्षत्रिये विप्रवद्भवेत् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(४) नाना इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।



## अथ गुड़विक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

‘देवीपुराणे—

गुडं सम्पाद्य यत्नं न देवकार्येषु शुद्धिदम् ।  
पलमात्रं द्विजोदत्त्वा देवलोकमुपाविशेत् ॥

लिङ्गपुराणे—

पूर्वजो बहुभिर्यत्नैः केदारारामसम्भवैः<sup>१</sup> ।  
गुडं सम्पाद्य बहुधा न कुर्यात्तस्य विक्रयम् ॥  
महान्तं नरकं भुक्त्वा यमलोके सुदारुणे ।  
पुनर्भुवमुपागम्य<sup>२</sup> खरजोजायते ध्रुवम्<sup>३</sup> ॥

पद्मपुराणे—

स्वारामसम्भवं विप्रोगुडं सम्पाद्य भूरिशः ।  
पञ्चालोभपरीतात्मा विक्रयित्वा यमं व्रजेत् ॥  
‘भूलोकमुपसंगम्य जायते मधुमक्षिका ।  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना पलानां शतविक्रये ॥  
प्राजापत्यं शतादूर्ध्वं महस्त्रे चान्द्रमुच्यते ।  
ततोऽधिकं विक्रयित्वा महापापमवाप्यते ॥

१ देवीपुराणे इति पाठः क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२ सम्भवम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ भवमुपागम्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) खरहा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ भूलोकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



चान्द्रायणद्वयं कृत्वा सहस्रादधिकं द्विजः ।

शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र नान्यथा गतिरस्ति हि ॥

विप्राङ्गनानां विप्रस्याईम् । क्षत्रियाणां विप्रवत्प्रायश्चित्तम् ।

वैश्यानां स्वजातिविहितमेव ।

इति हेमाद्रौ गुडविक्रयप्रायश्चित्तम् ॥

---

१. अधिकोद्विजः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ लवणविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

वराहपुराणे—

कुड़पं कल्पं<sup>१</sup>मात्रं वा प्रस्थं वा<sup>२</sup>ततोऽधिकम् ।  
द्विजः क्रीत्वा<sup>३</sup> विक्रयेत्तद् यदि पण्यविवृद्धये ॥  
सएव नामधारः स्यात् चाण्डालोविप्र<sup>४</sup>उच्यते ।  
यमलोकमुपागम्य स्वेदरोगी भवेद्भुवि ॥

स्कन्दपुराणे—

लवणं बहुधा क्रीत्वा पूर्वजोह्यर्थलोभतः ।  
पश्चात्तद्विक्रयं क्रीत्वा महान्तं<sup>५</sup> नरकं व्रजेत् ॥  
पुनर्भुवमुपागम्य स्वेदरोगी महान्<sup>६</sup> भवेत् ।  
असम्भाथोह्यपाङ्क्तयोवैडालोविप्रउच्यते ॥

दशविधव्राह्मणाः—

वैडालस्तन्तुवायश्च [ कारुकीमदकुत्तथा ] ।  
तक्षकः स्वर्णकोपश्च कार्पासः स्वेच्छया वणिक् ॥  
शूद्रापतिः कर्महीनोदशधा विप्रसंज्ञिताः ।  
तनु<sup>७</sup>मात्रपरास्वेते न<sup>८</sup> संभाथाः कथञ्चन ॥

१) वानमात्रं वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) वापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) विक्रयेत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) विप्रमुच्यते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) महान् अभूत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

६) तन्तुमात्रपरा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

७) संभाथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



चतुर्विंशतिमते —

मुखजोलवणं क्रीत्वा वणिग्भिः सह लाभतः ।  
 पश्चात्तद्विक्रयित्वा<sup>१</sup> तु स याति यममन्दिरम् ॥  
 स्थित्वा बहुदिनं तत्र स्वेदाङ्गोजायते भुवि ।  
 स तु वैडालविप्रः स्याद् असम्भाष्यः कदाचन ॥  
 तस्य देहविशुद्धयर्थं प्राजापत्यं मनूदितम् ।  
 लवणं विक्रयेत्पक्षं तप्तकृच्छ्रद्वयं स्मृतम् ।  
 मासं तद्विक्रयं कृत्वा तप्तकृच्छ्रचतुष्टयम् ॥  
 ऋतुमात्रन्तुयस्तात तस्य चान्द्रमुदाहृतम् ।  
 ऋतुद्वये द्वयं प्रोक्तं वत्सरे पतितोभवेत् ॥  
 पश्चात्तापसमायुक्तः<sup>२</sup> पतितस्तु यदस्ति हि ।  
 तस्योपनयनं भूयो नान्यथा शुद्धिरीरिता ॥  
 तत्पत्नीनां तदङ्गं स्यात् क्षत्रियाणां<sup>३</sup> द्विजोक्तवत् ।  
 विट्शूद्रयोः स्वभावः स्यादसौ लवणविक्रयः ॥

इति हेमाद्रौ लवणविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) विक्रयित्वाऽथ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) ऋतुमासत्रये तात इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पतितस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) द्विजे भवेत् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।



अथ कार्पासविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

कृषेः प्राप्तन्तु क्रीत्वा वा 'वणिक्तुल्यतया द्विजः ।  
तद्विक्रयित्वा दुष्टात्मा नरकं प्रतिपद्यते ॥  
ततोभुवमुपागम्य हस्तयोः स्वेदवान् भवेत् ।

मार्कण्डेयपुराणे—

कार्पासं कृषिसम्भृतं क्रीत्वा वाणिज्यतोद्विजः ।  
विक्रयित्वा ततः पश्चान्नरकं प्रतिपद्यते ॥  
[ तत्राऽनुभूय सुचिरं भुवं गत्वा स पापवान् ।  
जायते हस्तरोगी स्यान् नसम्भाष्यः कदाचन ॥

लिङ्गपुराणे—

यः क्रीत्वा बहुकार्पासं यदा स्वकृषिसम्भवम् ।  
द्विजो लुब्धतया पश्चात् विक्रयेद्यदि पापधीः ॥

१। वणिक् स्वल्पतया इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२। अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

३। क्रयित्वा बहु कार्पासं इति पुस्तकपाठः ।

४। लोभतया इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स गत्वा नरकं घोरं जायते स्वेदपाणिकः ।

पूर्ववन्निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

लवणविक्रये विप्रस्य यत्प्रायश्चित्तमुक्तं तदेवात्र योजनीयम् ।

स्त्रीणां क्षत्रियाणांमेवम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते “धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये”

कार्पासविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१) स्वेदपाणिना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तदेवात्रापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) क्षत्रियाणामिव इति पाठः काशीपुस्तके ।

४) क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथ नीलीविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

नीलीं यः पृथ्वजः क्रीत्वा वणिग्भिः पापकर्मधीः ।  
पलं वा विंशतिपलं शतं वाऽथ ततः परम् ॥  
विक्रयेद्यदि पापात्मा स मद्यः पतितो भवेत् ।  
स गत्वा नरकं घोरं तन्तुवायद्विजो भवेत् ॥

महानारदीये—

मुखजो विप्रतां<sup>१</sup> त्यक्त्वा वणिग्भिः सह पापकृत् ।  
क्रीत्वा नीलीं धनैर्वापि विक्रयेद्यदि लोभतः ॥  
न तस्य निष्कृति<sup>२</sup> र्वास्ति यमलोकात् कदाचन ।  
भुवं ततः पुनर्गत्वा द्विजोऽभूत्तन्तुवायकः ।

स्कन्दपुराणे—

नीलीं सम्प्राप्य विप्रोऽयं धनैर्विनिमयेन वा ।  
क्रीत्वा तद्विक्रयेत् पश्चान्महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
अनभूय महद्घोरं तन्तुवायद्विजम्भवान् ।  
पश्चात्तापममायुक्तं प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥



तप्तचान्द्रायणं कृत्वा पुनः संस्कारपूर्वकम् ।

शुद्धिमाप्नोति महतीं नाऽन्यथा शिखिवाहन ॥

विप्रस्त्रीणां नीलीविक्रये तदर्द्धम् । क्षत्रियवैश्ययोर्विप्रवद्वैश्य-  
स्यापि गर्हितत्वात् ।

इति हेमाद्रौ नीलीविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ पलाण्डु-लशुन-विक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

भविष्योत्तर—

पलाण्डुं लशुनं <sup>१</sup>गृञ्जं कलञ्जं पूर्वजोत्तमः<sup>२</sup> ।

क्रीत्वा स्वारामजं वापि <sup>३</sup>विक्रयेद्यदि मोहतः ॥

धनलाभोबहु भवेदिति <sup>४</sup>मोहः अज्ञानमिति यावत् ।

तदेवाह गौतमः—

<sup>५</sup>कलञ्जं गृञ्जनं विप्रः पलाण्डुं लशुनं तथा ।

सम्पाद्य बहुधा मूल्यैर्बणिग्भावमुपाश्रितः ॥

विक्रयेद्यदि तानीह अविचार्य महद्भयम् ।

कृतान्तवशगोभूत्वा चिरकालं स पापधीः ॥

भवेत् कार्पासकोविप्रो <sup>६</sup>दशजन्म च पञ्च च ।

<sup>७</sup>मार्कण्डेयः—

विप्रः करञ्जं लशुनं पलाण्डुं गृञ्जनं तथा ।

सम्पद्यमानोबहुधा विक्रयेत्तानि सर्व्वदा ॥

नरकं याति दुष्टात्मा <sup>८</sup>कार्पासाख्योभवेद्भुवि ।

न तस्य निष्कृतिर्नास्ति चान्द्रायणचतुष्टयात् ॥

(१) विक्रयेत्यंशः क्रीतकाशीपुस्तके नास्ति ।

(२) गृञ्जनं कलिङ्गं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पूर्वजोत्तमान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मोहतः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) कालिङ्गं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) दशजन्मसुपञ्च च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(७) मार्कण्डेयप्रराणे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(८) कार्पासारोभवेद् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



श्रौषधार्थं<sup>१</sup> पिबेत् पञ्चगव्यं चैकोपवासतः ॥

एतस्मात् शुद्धिमाप्नोति नान्यथा गतिरस्ति हि ।

गृञ्जनं वीर्यजनकं पर्णचूर्णं विशेषतः ॥

[ पुनस्तं विक्रयेल्लोभात् स पापी रौरवं व्रजेत् । ]

“कलञ्जं” सुरालेपनं<sup>२</sup> कृत्वा उन्मादजनकोवटविशेषः<sup>३</sup> । तद्विक्रये  
विप्रश्चान्द्रायणचतुष्टयं कृत्वा शुध्यति । श्रौषधार्थमन्भवे एकाह  
मुपोष्य पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमाप्नोति ॥

इति हेमाद्रौ पलाण्डु लशुन-गृञ्जन-करञ्जविक्रय

प्रायश्चित्तम् ।

(१) श्रौषधार्थं इति लेखित क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ कथं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति । ]

(२) लेपं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) उन्मादजनका वटविशेषः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ हिङ्गादिविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

रामठं स्वर्णवन्धञ्च एलां<sup>१</sup> वा जीरकद्वयम् ।  
अजामोदं<sup>२</sup> पिप्पलीञ्च जायिपत्रं<sup>३</sup> तदुद्भवम् ॥  
अन्यानि सूक्ष्मद्रव्याणि सर्षपादीनि यानि च ।  
द्विजः क्रीत्वाऽथ सम्पाद्य विक्रयेद्यदि लोभतः ॥  
यदि ज्ञानमुपागम्य मासे तप्तं समाचरेत् ।  
द्विमासे तु पराकं स्यात् कार्यं पश्चादृक्तुवये<sup>४</sup> ॥  
चान्द्रन्तु वत्सरे प्रोक्तमभ्यासे तद्वयं चरेत् ॥

एतद्विङ्गुस्वर्णवन्धव्यतिरिक्तविषयम् ।

तयोर्वयोर्विशेषमाह ।

मत्स्यपुराणे—

रामठं स्वर्णवन्धञ्च साभ्राणीञ्च द्विजोत्तमः ।  
सम्पाद्य सृजतोदिग्भ्योविक्रयेद्यदि लोभतः ।  
पलद्वये पराकं स्यात्प्राजापत्यं चतुष्टये ॥  
दशमे तप्तकृच्छ्रं स्यात् ततश्चान्द्रायणं स्मृतम् ।

---

१) एलां जम्बीरकद्वयं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) अजमोदं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) जायपत्नीं तदुद्भवां इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

४) ऋतुवयं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



माससंख्या पूर्ववत् । वत्सरादूर्ध्वमभ्यासे चान्द्रायणचतुष्टयम् । पुनः  
संस्कारश्च । स्वर्णवन्धनं नाम स्वर्णादि 'पाके यत्स्पर्शनमात्रेण सर्वं  
जलप्रायं भवति तत् स्वर्णवन्धनम् ॥

इति हेमाद्रौ हिङ्गुादिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) स्वर्णादि पावकस्पर्शनमात्रेण इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



## अथ रसविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

रसं क्रीत्वा द्विजोलोभाद्देशान्तरमुपागतः ।

पुनस्तं विक्रयेल्लोभात्स पापी रौरवं व्रजेत् ॥

लिङ्गपुराणे—

शम्भोर्वीर्यं यदा विप्रः क्रीत्वा लोभमुपाश्रितः ।

तं पञ्चाद्विक्रयित्वा तु स वै पातकिनां वरः ।

तं कदा नालपेद्विद्वान् यदि निर्मानुषो<sup>१</sup> मही ॥

न रसोद्भवेषु<sup>२</sup> औषधेषु क्रीत्वा विक्रीय वा तत्पापमवा-  
प्नुयादिति ।

पराशरसंहितायां—

पूर्णचन्द्रोदयञ्चैव वसन्तकुसुमाकरः<sup>३</sup> ।

आनन्दभैरवञ्चैव<sup>४</sup> मृगाङ्गं राजपूर्वकम् ॥

भूपतिश्चाग्निपुत्रश्च स्वर्णभस्म तथैवच ।

ज्वराङ्कुशं विदाहञ्च तथा<sup>५</sup> ग्रहणीकवाटकम् ॥

अन्यान्यौषधजालानि शम्भुबीजोद्भवानि वै ।

गन्धकं पार्वतीबीजं सिन्दूरं हरितालकम् ॥

---

<sup>१</sup> निर्मानुषं इति क्रीतलेखितपुस्तकयो पाठः ।

<sup>२</sup> औषधीषु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

<sup>३</sup> वसन्तकुसुमाकरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

<sup>४</sup> वापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

<sup>५</sup> तथा ग्रहणीकवाटकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अभ्रकं तालकञ्चैव कुसुमं वाऽत्मसम्भवम् ।  
 लाक्षातैलं मस्तिगन्धं कुशाण्डाख्यं घृतं तथा ॥  
 विप्रस्वेतानि सर्वाणि क्रीत्वा तानि स विक्रीयेत् ।  
 यदि क्रीत्वा विक्रीयेद्वा स सद्यः पतितोभवेत् ॥  
 असम्भाष्यो ह्यपांतेयः सर्वकर्मवहिष्कृतः ।  
 पश्चात्तापसमायुक्तो विप्रो यदि कृतान्तर्भीः ॥  
 मण्डले नियमं कृत्वा प्रातः स्नात्वा यथाविधि ।  
 सूर्योदयादस्तमयादुपविश्य सुखासने ॥  
 न्यासं ध्यानं पुरःकृत्वा जपेन्मन्त्रं द्वियस्वकम् ।  
 मध्याह्ने पूर्ववत् स्नात्वा माध्याह्निकमथाऽऽचरेत् ॥  
 पुनरागत्य तत्स्थानं जपकर्म समाचरेत् ।  
 सायंकाले फलाहारः स्वपेङ्गुमौ निरिन्द्रियः<sup>१</sup> ॥  
 ततः प्रातः समुत्थाय पूर्ववज्जपमाचरेत् ।  
 लक्षत्रयं यथा भूयान्मण्डले राजवल्लभ ॥  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति रमविक्रयजादिह ।  
 नान्यथा शुद्धिरुदिता पूर्वजैर्बहुवित्तमैः ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
 रमविक्रयप्रायश्चित्तम् ।



अथ हरिद्रादिमूलविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे —

हरिद्रां 'शृङ्गिवेरञ्च सूरणं मूलकं तथा ।

मुस्तादीनि द्विजोहत्वा क्रीत्वा वा मूल्यतः स्वयम् ॥

विक्रयेद्यदि लोभात्मा स शूद्रसमतां व्रजेत् ।

स्कन्दपुराणे—

मूलकं सूरणं शुण्ठिं हरिद्रादीनि यानि च ।

'वाणिज्यभावमाश्रित्य विक्रयेद्यदि पूर्वजः ॥

ऋतुत्रये पराकं स्याद्वर्षे चान्द्रमुदीरितम् ॥

इति हेमाद्रौ 'प्रायश्चित्ताध्याये हरिद्राविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१. 'शृङ्गिवेरं' इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. 'वाणिकस्वभावं' इति काशीपुस्तकपाठः ।

३. प्रायश्चित्ताध्याय इत्येव क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ क्रमुकादिफलविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

क्रमुकं कदली मातुलङ्गं<sup>१</sup> दाडिममेव च ।  
नारिकेलञ्च खर्जूरं कपिलं तिल्विणीफलम् ॥  
जम्बूनि चृतं<sup>२</sup> जम्बीरं तालं हिन्तालजं तथा ।  
पनसं वदरी-प्लक्ष<sup>३</sup> फलमुर्वारुकं तथा ॥  
एतान्यन्यानि यः<sup>४</sup> क्रीत्वा विक्रयेन्मुखजोयदि ।  
तस्य देहविशुद्धयं पराकं कच्छमीरितम् ॥  
गणयित्वा फलानीह पूर्वोक्तानि नराधिप ।  
शतादूडं महस्त्रान्तं विक्रयित्वेदमाचरेत् ॥  
तत्स्वीणान्तु तदडं स्याद् एवं सर्वत्र निश्चितम् ।

इति हेमाद्रौ क्रमुकादिफलविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) मातुलिङ्ग इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) निचूलं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) प्लक्षं इति काशीक्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) एतानि तानि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ चर्मविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

व्याघ्रचर्मं कुरीश्चर्मं त्रैण्यं<sup>१</sup> वल्कलादिकम् ।  
द्विजः क्रीत्वा स्वयं पश्चाद्विक्रयेऽनलोभतः ॥  
स चाण्डालममोक्षेयोमृत्वा यमपुरं व्रजेत् ।  
तत्र भुक्त्वा महादुःखं चर्मकारो भवेद्भुवि ॥

महाराजविजये—

अजिनं रौरवं व्याघ्रचर्मं वल्कलं<sup>२</sup> विक्रये ।  
द्विजोऽयमपुरं गत्वा स भूमौ<sup>३</sup> चर्मकारकः ॥  
तस्यैव निष्कृतिरियं प्राजापत्यं विशोधनम् ।  
एकवारि पञ्चगव्यं द्विवारि यावकं भवेत् ॥  
त्रिवारि बहुवारि वा प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
अभ्यासे द्विगुणं प्रोक्तं वर्षाद्रूढं पतत्यमौ ॥ इति ।

इति हेमाद्रौ चर्मविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१. त्रैण्यं इति लेखितपुस्तकपाठः. त्रैण्यं वटं कल्मलादिकं इति क्रीत  
पुस्तकपाठः ।

२. मच्छदुःखं इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

३. चर्मवत्फलविक्रये इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. भवेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ दामौविक्रयप्रायश्चिमाह ।

देवलधर्म —

दासीं क्रीत्वा द्विजोयस्तु महात्तमादि<sup>१</sup> सम्भवे ।

पुनस्तां विक्रयेन्मोहाद्<sup>२</sup> रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

सम्पाद्य दासीं विप्रोज्यं रूपलावण्यविभ्रमां ।

युवतीं विक्रयेद्यस्तु स<sup>३</sup> चण्डालसमीभवेत् ॥

द्विजः सम्पाद्य योदासीं गृहधर्मसुखाप्तये ।

पश्चात्तां विक्रयेद्यत्नात् स चण्डालो<sup>४</sup> भवेद्भुवि ॥

तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना स्कान्दे षम्मुखलापिते ।

वालिकाविक्रये चान्द्रं पीगण्डे तद्वयं चरेत् ॥

<sup>५</sup>युवतीविक्रये तात षड्व्यं कच्छमाचरेत् ।

पञ्चगव्यं<sup>६</sup> पिवेत् पश्चात् शुद्धिमाप्नोति पृथ्वजः ॥

तत् स्त्रीणां तद्वद्वं क्षत्रियवैश्ययोर्विप्रवत् प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ दामौविक्रय प्रायश्चित्तम् ।

---

१) महात्तमादिमम्भवं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) विक्रयेद्यस्तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) चण्डालः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) चण्डालसम इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) युवतीं विक्रयेत् तात इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६) पिवेद्यस्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ दन्त-नख-विक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मार्कण्डेयपुराणे—

दन्तं<sup>२</sup> करिममुद्धृतमश्वजं कीटजं तथा ।  
नखं व्याघ्रममुद्धृतं मन्पाद्य द्विजनायकः ॥  
पश्चात्तान् विक्रयेन्मोहादुव्यवहारतया नृप ।  
यमलोकमुपागम्य मृत्वा<sup>३</sup> तत्र चिरं वसेत् ॥  
भूयाद्भूमौ स पापीयान् दन्तकारतनुर्महान् ।

लिङ्गपुराणे —

दन्तमश्वसमुद्धृतं करिदन्तञ्च<sup>४</sup> पोत्रिजम् ।  
नखं व्याघ्रममुद्धृतं क्रीत्वा पश्चात् स्वयं पुनः ॥  
विक्रयित्वा द्विजोयसु दन्तकारो भवेत् पुनः ।  
प्रायश्चित्तमिदं तस्य माधकं मुनिचोदितम् ॥  
हस्तिदन्ते च तप्तं स्यादश्वदन्ते तु यावकम् ।  
प्राजापत्यं कीटदन्ते विरात्रं नखविक्रये ॥

तत्तत्स्त्रीणां तद्वर्द्धमानं ।

इति हेमाद्रौ<sup>५</sup> दन्तनखविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१) अ-हेति क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नास्ति ।

२) हरिसमुद्धृतं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) स्थित्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) पोत्रिजं इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

५) पञ्चनख इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथोपकेशविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

गारुडपुराणे—

उपकेशान् वह्नन् क्रीत्वा विप्रोवाणिज्यकर्मणि ।

पुनस्तान् विक्रयेक्षोभादुभल्लूकोजायते भुवि ॥

क्षिप्रपुराणे—

वणिग्भावमुपाश्रित्य पृथ्वजोधनलोभवान् ।

क्रीत्वापकेशान् सुगुणान् पञ्चात्तान् विक्रयेद्यदि ॥

स पापमनुभूयाऽऽशु भल्लूकोभुवि जायते ।

तस्य दोषविनाशाय मासे तप्तमुदीरितम् ॥

मासत्रयेऽपि चान्द्रं स्यान्महाचान्द्रन्तु वत्सरे ।

वर्णादूर्ध्वं पुनः कृत्वा शूद्रतुल्योभवेदिह ॥

तत्तत्स्त्रीणां पृथ्ववत् ।

इति हेमाद्रौ उपकेशविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१. आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नास्ति ।



## अथाऽन्नविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

विष्णुधर्मोत्तरे—

देवालये महारण्ये स्वगृहे राजवेश्मनि ।  
अन्नं पक्त्वा द्विजोयसु विक्रयेद्यदि मूढधीः ॥  
शाक-को<sup>१</sup>शादिकांश्चैव उपदंशमथापि वा ॥  
भक्ष्यान्नानाविधान् राजन् द्रव्यलोभपरायणः ।  
महान्तं नरकं गत्वा तेन हीनोभवेद्भुवि ॥

लिङ्गपुराणे—

भक्ष्यान् नानाविधान् काम्यान् शाक-कोशादिकांस्तथा ।  
उपदंशं तथाप्यन्नं पक्त्वा मार्गे शिवालये ॥  
पूर्वजः स्वगृहे स्वेभ्योविक्रयेद्द्रव्यलोभतः ।  
यमलोकमुपागम्य पुनर्भूयाद्दरिद्रवान् ॥  
उपदंशे तथा प्रोक्तं मांसि मांसि द्वयञ्च वा ।  
को<sup>२</sup>रेषु पञ्चरात्रं स्यात् शाके यावकमुच्यते ॥  
अन्ने मामद्वयं राजन् षड्वदं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
षण्मासे तद्वयं प्रोक्तं वर्षान्ते पतितोभवेत् ॥

वर्षान्ते पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति तत्स्त्रीणां पूर्ववद्  
वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
अन्नविक्रयप्रायश्चित्तम् ।



## अथ गोरसविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

<sup>१</sup>सूतप्रोक्ते—

पयोदधि घृतं वस्तु<sup>२</sup>कौलालं गोमयं तथा ।  
विक्रयेत् पूर्वजोयस्तु नागे वा विप्रनन्दिनी ॥  
सद्यः पतति विप्रोऽसौ शूद्रतुल्योभवेदिह ।

महानारदीये—

कौलालं गोमयं राजन् पयोदधि घृतञ्च यत् ।  
नवनीतं तथा यस्तु तैलं क्रीत्वा<sup>३</sup> तथा मधु ॥  
विक्रीयेद्यदि मोहाद्वा पूर्वजोधनसंग्रही ।  
एरण्डतैलमथवा सद्यः पततिपातकौ ॥

स्कन्दपुराणे—

मधु दुग्धं घृतं यस्तु कौलालं गोमयं दधि ।  
तैलमैरण्डकञ्चैव क्रीत्वा<sup>४</sup> वा गृहसम्भवम् ॥  
विक्रीय मांसं वैडालः द्विमांसं वा तथौदरः ।  
मांसत्रये सूचकः स्यात् पणमासे शूद्रतां व्रजेत् ॥  
मासे तप्तं पणकञ्च द्वितीये चान्द्रमुच्यते ।  
तृतीये शृणु राजेन्द्र पणमासे तु षट्पदकम् ॥

१ सूतप्रोक्ते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ यस्तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ यथा इति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) स्वगृहसम्भवं इति लेखितपुस्तकपाठः स्वगृहसम्भवा इति क्रीतपुस्तक-  
पाठः



ततः परं पतत्यत्र द्विजोयोगव्यविक्रयो<sup>१</sup> ।

संवत्सरादूर्ध्वं गव्य-तैल-सधुविक्रये पतितप्रायश्चित्तवत् कृत्वा शुद्धी-  
भवतीति । तत्स्त्रीणामर्द्धम् ।

इति हेमाद्रौ गोरसविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) गव्यविक्रये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ मधुमांसविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

सौपर्णिक—

मधु मांसं विहङ्गानां महाद्रव्यममागमे ।  
क्रीत्वा स्वयं द्विजोमोहात्पश्चात्तद्विक्रयेद्यदि ॥  
राज्ञा<sup>२</sup> दण्ड्यः स पापीयान्<sup>३</sup> स तु सम्यग्विचारयेत् ।  
मृत्वा नरकमामाद्य भुवि<sup>४</sup> चाण्डालतां व्रजेत् ।

लिङ्गपुराणे—

मांसं मधु विहङ्गानां हिंसावृत्तिमुपाश्रितः ।  
महाद्रव्यं भवेदस्य विक्रये भाग्यवानहम् ॥  
इति मत्वा द्विजोयमु क्रीत्वा तद्विक्रयेत् पुनः ।  
महापापमवाप्नोति राजा तं दण्डयेच्छतम् ॥  
एकाहं विक्रयेद्यमु मधुमांसद्वयं मुदा ।  
तप्तकृच्छ्रं चरेत्तत्र पञ्चगव्यमतः परम् ॥  
पञ्चरात्रं द्विजोयमु विक्रयेत्तद्वयं मरुत् ।  
चान्द्रं तस्य विशुद्धयं पञ्चगव्यञ्च पूर्ववत् ॥  
माममेकं द्विजोयमु विक्रयेत्<sup>५</sup> पिशितं मुदा ।  
राज्ञा<sup>६</sup> महस्रं दण्ड्यः स्यात् षड्विंशं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

१. आह्वेति इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. राजदण्ड्यः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. गतं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४. चाण्डालता इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५. विक्रयेत गतं मुदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६. राजा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मधुमांसविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

२०७

तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेवच ।

द्विजस्यजेदिदं कर्म लोकद्वयं विगर्हितम् ।

तत्स्त्रीणामेवमुक्तम् । चतुर्विधैश्वर्ययोगमेव<sup>४</sup> ।

इति हेमाद्रौ मधुमांसविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

३ विगर्हित इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ एवं इत्येव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ मालग्राम-शिवलिङ्ग-प्रतिमादिविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

शिवपुराणे—

प्रतिमां लक्ष्णीपेतां मालग्रामं शिवं तथा ।  
चक्रपाणिञ्च राजेन्द्र द्विजः सम्पाद्य यत्नतः ॥  
तदर्चनं पराकृत्य भुक्ति-मुक्ति-फलप्रदम् ।  
विक्रयेदात्मभोगार्थं तस्य पापफलं शृणु ॥  
आद्वादशाब्दपर्यन्तं यमलोकः सुदारुणः ।

मार्कण्डेयपुराणे—

शिवलिङ्गञ्च प्रतिमां चक्रपाणिं द्विजोत्तमः ।  
सम्पाद्य बहुभिर्यत्नैरकृत्वा तत्र चार्चनम् ॥  
विक्रयेद्यदि पापात्मा गौरवं नरकं व्रजेत् ।  
आद्वादशाब्दपर्यन्तं तिष्ठत्यत्र न संशयः ।

देवलः—

मालग्रामं शिवलिङ्गं प्रतिमां चक्रपाणिनम् ।  
द्विजः सम्पाद्य सहसा तत्तत्पूजापरायणः ॥  
पश्चान्नास्तिक्यभावेन लोकमादृश्यगौरवात् ।  
विक्रयेद्यदि मौढ्येन स पापी नरकं व्रजेत् ।  
पश्चाद्भवति लोकेऽस्मिन् नास्तिकोभवति ध्रुवम् ॥

१ आहृति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२ मौढ्येन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मार्कण्डेयः—

लक्ष्मीनृसिंहं रामञ्च गोपालं श्रीधरं तथा ।  
 लक्ष्मीनारायणञ्चैव दधिवामनमेव च ॥  
 हिरण्यगर्भ-मत्स्यादिमूर्त्तीस्ताः पापहारिणीः ।  
 'मालग्रामशिलारूपास्तत्तच्चक्राङ्किता द्विजाः ॥  
 शिवलिङ्गं चक्रपाणिं प्रतिमां यदि विक्रयेत् ।  
 रामाऽऽदिविक्रये राजन् चरेच्चान्द्रायणं व्रतम् ॥  
 लक्ष्मीनारायणञ्चैव दधिवामनमेव च ।  
 महाचान्द्रं प्रकुर्वीत लक्ष्मीनृसिंहविक्रये ॥  
 पराकं देहशुद्धये चरेद्विप्रोविचारयन् ।  
 शिवे च स्थापिते चैव 'नरकं विक्रये द्विज ॥  
 मासं दीक्षामुपाक्रम्य प्रातः स्नात्वा यथाविधि ।  
 सूर्योदये समारभ्य यावदस्त्रं गतोरविः ॥  
 तावज्जपं प्रकुर्वीत संख्या यावत्समाप्यते ।  
 प्रत्यहं दशमाहस्त्रं शैवं<sup>२</sup> मन्त्रं षडक्षरम् ॥  
 फलाहारं प्रकुर्वीत यदा मन्दायते रविः ।  
 मत्स्यादिकं समाप्यैव<sup>३</sup> स्थण्डिले केवले स्वपेत् ॥

- १) मालग्रामशिला भूपतव चक्राङ्कितं द्विजा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 २) नरसिंहविक्रये इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 ३) मरकते इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 ४) शैवमन्त्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 ५) समाप्यैवं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पर्युः प्रातरुत्थाय यथापूर्वं समाचरेत् ।

मासान्ते 'शुद्धिमाप्नोति शिवद्रोही न चान्यथा ॥

प्रतिमां चक्रपाणिञ्च विक्रयित्वा चरेद्दिधम् ।

स्त्रीणामेवमर्थः । क्षत्रिय-विट्-पादजानां महापापप्राप्तिर्भवति ।

इति हेमाद्रौ 'शालग्रामाऽऽदिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) शिवमाप्नोति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ शालग्रामेति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पुष्पविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

कौर्म्य—

सुगन्धीनि सुपुष्पाणि जाती-कुन्दमुखान्यपि ।

चम्पकाऽशोक-पुन्नागा वकुलं केतकी तथा ॥

स्वारामसम्भवानीह क्रीत्वा वा लाभ<sup>२</sup>लोभितः ।

विक्रयेद्यदि पापात्मा कालसूत्रमवाप्नुयात् ॥

एकवारं<sup>३</sup> पराकः स्यादभ्यासे चान्द्रमुच्यते ।

स्वारामसम्भवपुष्पं विक्रीय एवं प्रायश्चित्तं<sup>४</sup> कुर्यात् ।

<sup>५</sup>क्रीत्वा तद्विक्रये द्विगुणम् । तुलसी<sup>६</sup>मनुवकविल्वपत्रादि-  
विक्रये प्रत्यहं पराकः । संवत्सरादूर्ध्वं पतितएव ।

इति हेमाद्रौ पुष्पविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१ आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) लाभलोभतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पराकं स्यादिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) क्रीत्वा तद्विक्रयेः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(६) तु मनुवक इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ रत्नविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

\*गौतमः—

मौक्तिकं पुष्परागञ्च पद्मरागं प्रवालजम् ।  
गोमेदिकं महारत्नं रत्नं गारुत्मतं तथा ॥  
इन्द्रनीलञ्च वज्रञ्च नवधा रत्नमौरितम् ।  
[ द्विजः सम्पाद्य वसुभिर्मुषित्वा वा नराधिप ॥ ]  
एतानि बहुधा मूल्यैः सम्पाद्याऽऽस्य समुद्भवः ।  
विक्रयेदात्मलोभेन रत्नद्रोही निगद्यते ॥

पराशरः—

मौक्तिकं पद्मरागञ्च पुष्परागं प्रवालकम् ।  
गोमेदकं महारत्नं वज्रं गारुत्मतं तथा ॥  
इन्द्रनीलमिति प्रोक्तं नवधा रत्नमौरितम् ।  
द्विजः सम्पाद्य वसुभिर्मुषित्वा वा नराधिप ॥  
एतानि बहुधा मूल्यैः सम्पाद्याऽऽस्य समुद्भवः ।  
विक्रयेद्यदि पापात्मा स गच्छेद्यमयातनाः ॥  
स्तेयं कृत्वा द्विजोयसु विक्रयेदेकवारतः ।  
तस्य देहविशुद्धये षड्विंशं कृच्छ्रमौरितम् ॥  
तस्योपनयनं भूयःस्तेयदोषोपशान्तये ।

गौतम इति पाठः कौतिल्यपुस्तके नास्ति ।

अथ पाठः लोचनपुस्तके नास्ति ।

गौतमसदमत इति लोचनपुस्तके नास्ति ।



‘अमूल्यरत्नविक्रये एतद्विगुणम् । साधारणरत्नानि क्रीत्वा विक्रये प्रायश्चित्तमाह—

गौतमः—

अमूल्यरत्नजातीनां षड्व्यं विक्रये स्मृतम् ।

रत्नसाधारणे राजन् तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ॥

स्तेयप्रायश्चित्तमुक्तरात्वा कृत्वा पुनरुपनयनाऽनन्तरं षड्व्यं कृच्छ्रं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति । रत्नसाधारणे तप्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ।

इति हेमाद्रौ रत्नविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) अमूल्यविरत्नत्वे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ रुद्राक्षविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

[ अमूल्यरत्नजातीनां षड्विंशं विक्रये स्मृतम् ।

रत्नसाधारणे राजन् शतरुद्राक्षमेव वा ॥ ]

दश वा पूर्वजोराजन् शतं रुद्राक्षमेव वा ।

सहस्रं दशसाहस्रं सम्पाद्य बहुयत्नतः ॥

ततो लोभातुरः पश्चात् विक्रयेद्यदि धर्मेतः ।

न तस्य निष्कृतिर्नास्ति त्रिः परिक्रमणाद्भुवः<sup>१</sup> ॥

अथवा<sup>२</sup> कार्मुकाग्रे तु प्रत्यहं स्नानमाचरेत् ।

मासेनैव विशुद्धिः स्याद् अन्यथा पतितो भवेत् ॥

एतत्सहस्ररुद्राक्षविषयम् । अत ऊर्ध्वं<sup>३</sup> ऋतुमात्रेण शुध्यतीत्यर्थः ।

एवं पद्माक्षविक्रयप्रायश्चित्तं विवेचनीयम् । पुत्रजीवविक्रये प्राजा-  
पत्यम्<sup>४</sup> ।

इति हेमाद्रौ रुद्राक्षविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१. अयं श्लोकः लेखितपुस्तके नास्ति ।

२. दशवन्त्यादि श्लोकाश्च क्रीतपुस्तके नास्ति ।

३. त्रिः परिक्रमाद्भुतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. कार्मुकाग्रेतु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. प्रत्यहं स्नानमाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६. प्राजापत्यमात्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ सुवर्णविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

विष्णुधर्मोत्तरे—

अष्टापदं सुवर्णञ्च उत साधारणञ्च वा ।

वणिग्भावं द्विजोष्टत्वा विक्रयेत् प्रत्यहं मुदा ॥

न तस्य निष्कृतिर्नास्ति स्तेयिनः पापसङ्कटात् ।

अष्टसु लोहेषु शोधितं यत् सुवर्णं तदष्टापदम् । खदिराङ्गारवति  
यदष्टापदसुवर्णं तन्मध्यमम् । साधारणं रूपकादिकम् । एतेषां  
विक्रये<sup>१</sup> विप्रः स्तेयी भवति । सुवर्णादिप्रमाणं सुवर्णस्तेयप्रकरणे-  
ऽभिहितम् । <sup>२</sup>कात्यायनः—

द्विजोमासं सुवर्णेन वर्त्तयेत् क्रयविक्रयैः ।

सुवर्णघ्राती विज्ञेयः मर्जधर्मवह्निष्कृतः ॥

ऋतुक्रये <sup>३</sup>प्रवर्त्तत अर्द्धकालद्वितीरितः ।

मंवत्सरं यथा वर्त्तत् तत् <sup>४</sup>सुरापेयउच्यते ॥

जाबालिः—

<sup>५</sup>द्विजस्याऽष्टापदे शुद्धिर्मासं चान्द्रायणव्रतात्

साधारणसुवर्णं तु प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

१. आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) विष्णुपुराणे इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

३. एतेषां विक्रये स्तेयं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) अयं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति ।

(५) प्रकुर्वीत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) तत्सुवर्णं यउच्यते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

७. द्विजस्वष्टापदे इति लेखितपुस्तकपाठः ।



रूपकव्यवहारे तु तप्तकच्छमुदीरितम् ।

एतन्नामे द्विजातीनां प्रायश्चित्तं निरूपितम् ॥

संवत्सरं चरेद्यस्तु सुवर्णस्तेयिनः समः ।

संवत्सरादूर्ध्वं स्तेयप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति न मौसल्यम् ।

इति हेमाद्रौ सुवर्णविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ रजतविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

जावानिः—

दशनिष्कं<sup>२</sup> समारभ्य शतनिष्कान्तमादरात् ।

वणिग्भावमुपागम्य विक्रयेद्यदि पूर्वजः ॥

स्वर्णस्तेयिसमं पापमवाप्नोति नराधिप<sup>३</sup> ॥

गालवः—

दशनिष्कं सहस्रं वा द्विजः क्रीत्वा प्रवर्त्तयेत् ।

तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति स्वर्णस्तेयसमोहि सः ॥

मासं वा ऋतुमात्रं वा वर्त्तयेद्रूप्यकर्मणा ।

प्राजापत्यञ्च तप्तञ्च चान्द्रायणमनुक्रमात् ॥

मासं<sup>४</sup> रजतव्यवहारे प्राजापत्यं प्रायश्चित्तम् । मासद्वये तप्तम् ।

संवरादधश्चान्द्रं संवत्सरादूर्ध्वं सुवर्णस्तेयप्रायश्चित्तवत् कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ रजतविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(२) नराधिपः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) रजतकर्मणा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ ताम्र-कांस्यविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

पराशरः—

ताम्रं कांस्यं द्विजः क्रीत्वा त्रपु-पित्तलिकास्तथा ।

तानि पश्चाद्विक्रयित्वा मांसं वा ऋतुमेव वा ॥

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात्कदाचन ।

देवस्वामी—

ताम्रं कांस्यं पित्तलकं त्रपुं क्रीत्वा<sup>२</sup> द्विजोत्तमः ।

पलादिशतपर्यन्तं क्रीत्वा विक्रीय पापघ्नीः ॥

न तस्य पुनरावृत्तिस्ताम्रघातो भवेद्भुवि ।

प्राजापत्यं शतपत्ने चान्द्रं चैव ततः परम् ॥

कांस्ये तथैव विज्ञेयं<sup>३</sup> प्रायश्चित्तं विशारदैः ।

त्रपु-पित्तलयोश्चैव प्राजापत्यन्तु वत्सरे ॥

इदं संवत्सरात् प्राग्वेदितव्यम् । अत ऊर्ध्वं रजतस्तेयप्रायश्चित्तं

<sup>४</sup>त्रपु-पित्तलविक्रये प्रायश्चित्तं पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ ताम्रकांस्यादिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

१. आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. अष्टं पाठः क्रीतपुस्तके नास्ति ।

३. द्विजाः उत्तम इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. प्रायश्चित्तविशारदैः इति लेखितकाशीपुस्तकयोः पाठः ।

५. त्रपु-पित्तलयोश्चैव विक्रये प्रायश्चित्तं इत्येव लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शस्त्राऽऽदिविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

खड्गं कुन्तं धनुर्वाणं खेटं क्रीत्वा द्विजश्चरेत् ।  
विक्रयेद्यदि तान् पश्चात् रौरवं नरकं व्रजेत् ॥  
न तस्य निष्कृतिर्नास्ति जन्मनः कारणं भवेत् ।  
पश्चात्तापमवाप्याऽथ यद्विच्छेत् शुद्धिमात्मनः ॥  
प्राजापत्यद्वयञ्चैव षण्मासे वत्सरे स्मृतम् ।  
ततः संवत्सरादूर्ध्वं कारुकस्य समीभवेत् ॥

मरीचिः—

धनुः कुन्तश्च खड्गश्च खेटं वापि द्विजाधमः ।  
क्रीत्वा विक्रीय वर्त्तेत यमलोकान्न हीयते ॥  
'यदीच्छेच्चुद्धिरुदिता मनुना धर्मशामिना ।  
प्राजापत्यन्तु षण्मासे तद्वयं वत्सरे स्मृतम् ॥  
ततः परं कारुकः स्यात् प्रायश्चित्तं निरर्थकम् ।

इति श्रीहेमाद्रौ 'शस्त्रविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(०) आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(१) यदिच्छेदिति क्र तपुस्तकपाठः ।

(२) शस्त्रादिविक्रय इति क्रीतपुस्तकपाठः



अथ गृहोपकरणविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

[व्यासः—

उलूखलन्तु मुसलं दृषदं चोपलं तथा ।  
पीठं कुण्डलिनीञ्चैव तथा सम्मार्ज्जनीमपि ॥  
तुषं काष्ठं च कारीषं गोमयं शूर्पमेववा ।  
विक्रयित्वा द्विजोमोहात् यमलोकवाप्नुयात् ॥

गौतमः—

तुषं काष्ठञ्च कारीषं शूर्पं गोमयमेववा ।  
सम्मार्ज्जनीं तथा पीठं वेणुपातं बृहद्विलम् ।  
<sup>२</sup>उलूखलन्तु मुसलं दृषदञ्चोपलं तथा ॥  
पूर्वजोविक्रयेद्राजन् प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
अग्ने चान्द्रं तथा शुद्धिर्नान्यथा शुद्धिरीरिता ।

इति हेमाद्रौ गृहोपकरणविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

[ ] अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(२) इतः पूर्वं व्यास इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः



अथ कस्तूर्याऽऽदिविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

माकेण्डेयः—

कस्तूरीं कुङ्कुमं गन्धं कर्पूरं नागकेसरम् ।

गोरोचनं गन्धदारुं मसूरं मुस्तकं तथा ॥

सम्पाद्य पूर्वजोयस्तु विक्रयित्वा स पापभाक् ।

महान्तं नरकं गत्वा जायते गन्धमूषकः ॥

जातूकर्ण्यः—

गोरोचनं गन्धदारुमुशीरं मुस्तकं तथा ।

कस्तूरीं कुङ्कुमं गन्धं कर्पूरं नागकेसरम् ।

विक्रयेत् पूर्वजः पापी स्वधर्ममनुवर्त्तयन् ॥

अनुभूय महादुखं जायते गन्धमूषकः ।

तस्य देहविशुद्ध्यर्थं पराकं वत्सरे स्मृतम् ।

तप्तं ततः परं ज्ञेयमेतत्कृत्वा विशुध्यति ।

इति हेमाद्रौ कस्तूर्याऽऽदिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

१) मुस्तकं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) तपःपरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ वस्त्रविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मनुः—

कम्बलं पट्टवस्त्रञ्च कौषेयं चित्रवस्त्रकम् ।

सूक्ष्मतन्तुकृतं वासः<sup>२</sup> विक्रयेन्नैव पूर्वजः ॥

हारीतः—

कम्बलं पट्टवस्त्रञ्च सूक्ष्मतन्तुकृतं तथा ।

चित्रवस्त्रन्तु कौषेयं विक्रयेद्यदि लोभतः ।

द्रव्याधिक्ये तु चान्द्रं स्यात् वत्सरे तद्वयं भवेत् ॥

द्रव्यहीने पराकं स्यात् सूक्ष्ममूल्ये तु यावकम् ।

सर्वत्र संवत्सरात् प्रागेव तत्प्रायश्चित्तं वेदितव्यम् । अत ऊर्ध्वं<sup>३</sup>  
द्विरावृत्तिः ।

इति हेमाद्रौ वस्त्रविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीपुस्तकेनास्ति ।

(२) विक्रयेत् पूर्वजः क्रमात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) द्विधावृत्तिः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ धर्मविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

यमः--

स्नानादिनित्यकर्माणि द्रष्टापूत्ताऽऽदिकानि च ।  
तटाकाऽऽराम-कासारनिर्माणादीनि यान्यपि ॥  
काशीक्षेत्रादिकानीह तेषां नो विक्रयं चरेत् ।

गालवः--

काशीक्षेत्र-तटाकाऽऽदि-वननिर्माणमेव च ।  
स्नानादिनित्यकर्माणि द्रष्टापूत्तादिकानि च ।  
उपोषणव्रतादीनि श्रौतस्मार्त्तादिकानि च ॥  
एतेषां विक्रयं कृत्वा माघस्नानपुरःसरम् ।  
स विप्रोनरकं याति पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥  
यदीच्छेदात्मनः शुद्धिं पश्चात्तापसमन्वितः ।  
चान्द्रायणत्रयं कृत्वा पुनः संस्कारकृतदा ॥  
पञ्चगव्यं ततः कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

इति हेमाद्रौ धर्मविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

(१) योविक्रयं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) काशीयात्रा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यदिच्छेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ श्रुति-स्मृतिविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

वसिष्ठः—

श्रुति-<sup>१</sup>स्मृती धर्मशास्त्रं पुराणं ज्योतिषं तथा ।

वैद्यं काव्यं नाटकञ्च प्रबन्धं स्वकृतं द्विजः ॥

विक्रयेद्यदि पापात्मा पुस्तकं फलकञ्च वा ।

महान्तं नरकं भुक्त्वा जायते स निरक्षरः ॥

गौतमः—

वैद्यं काव्यं नाटकञ्च प्रबन्धं स्वकृतं द्विजः ।

[श्रुति-स्मृती धर्मशास्त्रं पुराणं ज्योतिषं तथा ॥

पुस्तकं फलकं वापि तत्साधनमथापि वा ।]

विक्रयेद्यदि लोभार्त्तो महान्तं नरकं व्रजेत् ॥

पुनर्भुवमुपागम्य वेदशास्त्रविहीनवान् ।

<sup>२</sup>यदीच्छेदात्मनः शुद्धिं पद्मात्तापपरायणः ॥

चान्द्रायणं पराकञ्च कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

एतत् सलदाचरणविषयम् । अभ्यासे द्विगुणम् ॥

इति हेमाद्रौ श्रुति-स्मृतिविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

[१] श्रुति-स्मृति-धर्मशास्त्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[२] अयं पाठः क्रीतपुस्तके 'महान्तं नरकं व्रजेत्' इत्यतः परं दृश्यते ।

[३] यदीच्छेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ नामविन्यासप्रशिक्षणम्

जादालि—

आत्मनः स्वसुतस्यापि दाराणां भ्रातृणां च

मातुः पितुः स्वसुतं नामवयं महत्तमम्

विक्रयित्वा दिव्यैर्द्रव्यैश्च धनं धनदोऽपि

धनमप्येव तैव धान्य-पक्षाणां च सुखदम् । तस्मिन् स मये उवाच

तदा गृहीत्वा पूर्वोक्तानि सुतद्वैतः कालवेद्यं विना विना विना

यदि, स महाप्राप्तिरुच्यते ।

तदेवम् ।

कर्मपुराणे—

मातुः पितुः स्वसुतं च आत्मनश्च सुदृष्टं च

दाराणां नामवयश्च विक्रयित्वा धनं बहु

आदाय जीवेद्दुर्गोविप्रः स सद्यः पतिर्नृपः ।

तेन यानीह कर्माणि कृतानि मनुजानि ।

तानि सर्वानि कर्माणि दत्तं प्रविशन्ति ।

न तस्य निवृत्तिर्ह्यस्ति नाप्युच्छ्रयः ।

तुम्हः संस्कारकृत्वा ह्यहिनामिन् पूर्वम् ।

कायकृच्छ्रगतं कृत्वा तुम्हः संस्कारकृत्वा शुद्धीभवति

इति चेमाहो नामविन्यासप्रशिक्षणम् ।

१. १००० १००० १०००

२. १००० १००० १०००



अथ नानावस्तुविक्रयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

कटकं भूषणं काचा<sup>२</sup>मुला<sup>३</sup>स्थाणु<sup>४</sup>श्च वैणवम् ।  
भाण्डानि कटकादीनि सिन्दूरं कज्जलं तथा ॥  
कञ्चुकं गन्धपत्राणि सुधा भूतिश्च चन्दनम् ।  
एवमादीनि द्रव्याणि क्रीत्वा वा स्वकृतानि वै ॥  
विक्रयेद्यदि लोभेन न विप्रो नरकं व्रजेत् ।

मालवः—

भूषणं कटकं काचं सिन्दूरं कज्जलं तथा ।  
कन्दुकं गन्धपत्राणि सुधां भूतिश्च चन्दनम् ।  
भाण्डानि रज्जुदारुणि स्वगृहो<sup>५</sup>त्थानि वै द्विजः ॥  
विक्रयित्वा ततोदोषमवाप्य च पुनर्भुवम् ।  
पराकं यावकं कृच्छ्रं कृत्वा शुद्धिमाप्नुयात् ॥  
संवत्सरादूर्ध्वं द्विगुणमुक्तं स्त्रीणां तदर्धम् ।

इति हेमाद्रौ नानावस्तुविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

इति मङ्गलीकरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) कण्टकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तुलास्थानं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कटुकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) सुधाभूतिश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) स्वगृह्यानि पठेद्विजः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ 'मलीकरणप्रायश्चित्तमाह ।

सुवर्णस्तेय-रजत-ताम्र-कांस्य-तपु-पित्तलहरणप्रायश्चित्तं स्वर्णस्तेय-  
प्रकरणेऽभिहितं तत्तन्मानञ्च ।

अथ निक्षेपहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गार्ग्यः—

निक्षेपं स्वगृहे क्षिप्तं परकीयं वनान्तरे ।  
देवालये वह्निर्देशे स्थापितं यत्र कुत्र वा ।  
ब्राह्मणोद्रव्यलोभेन <sup>१</sup>दर्शनादिभिरौषधैः ॥  
हत्वा नरकमाप्नोति पापिनां पापकर्मवान् ।  
तेन विप्रोयदा जीवेद् देवर्षिपितृकार्यकृत् ।  
<sup>२</sup>सर्व्वं निक्षेपदातुश्च भवत्येव न संशयः ॥

निक्षेपप्रमाणमाह—

१ मलीनीकरणे प्रायश्चित्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अञ्जनादिभिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तत्सर्व्वं निक्षेपदातुश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।







त्र्यम्बक-पित्तलयोः पादं चरेत् कृच्छ्रं यथाक्रमम् ।

राजा निक्षेपहारी स्याद् ब्राह्मणाद्विगुणं चरेत् ॥

वैश्यस्तु राजवल्लुर्यात् शूद्रोमौसल्यमर्हति ॥

स्त्रीणां तद्विप्रमाणेन प्रायश्चित्तं वेदितव्यं ।

रजत-ताम्र-कांस्यहरणे निक्षेपहरणप्रायश्चित्ताद्विम् ॥

इति हेमाद्रौ निक्षेपहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ धेनुहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

धेनुं द्विजोवा राजा वा परकीयां यदा हरेत् ।  
गोहन्ता स तु विज्ञेयो राजा गोसवमाचरेत् ।

मालवः—

मुखजोवाहुजोवाऽपि ऊरुजः पादजस्तथा ।  
नारी वा यदि मोहात् पारकीं धेनुमाहरेत् ॥

गारुडपुराणे—

पारकीं ब्राह्मणो धेनुं हरेद्वाहुजएव वा ।  
गोहन्ता स हि विज्ञेयः सर्वकर्मवहिष्कृतः ॥

नारदीये—

कपिलां सूयमानां गां होमधेनुमथाऽपि वा ।  
विप्रोवा राजतनयो बणिग्वा पादभूर्यदा ॥  
हत्वा नरकमाप्नोति रोगी स्यात् पूर्ववत्तदा ।  
चान्द्रायणद्वयं प्रोक्तं कपिलाहरणे द्विज । ॥  
चान्द्रन्तु सूयमानायां होमधेनौ षड्विंशकम् ॥



प्राजापत्यं कच्छं षड्वदमित्यर्थः ।

राज्ञस्तु द्विगुणं प्रोक्तमूरुजे तत्तयं स्मृतम् ।

पादजे हस्तविच्छेदो नारीणामर्द्धमुच्यते ॥

विप्राङ्गनाया विप्रस्यार्द्धं प्रायश्चित्तम् । इतरेषामङ्गनानां तदर्द्धं  
प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ धेनुहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ वत्सहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

पूर्वजोहरते वत्सं पारक्यं गोतनूद्भवम् ।

मृत्वा नरकमामाद्य चाण्डालत्वमवाप्नुयात्<sup>२</sup> ।

मरीचिः—

पारक्यं धेनुजं विप्रः पौगण्डकमथाऽपि वा ।

महान्तं नरकं गत्वा जायते स जनङ्गमः ॥

तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यं विशोधनम् ।

पौगण्डे मृतिपर्यन्तं कुर्यात्तच्चान्द्रभक्षणम् ॥

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा वत्सहारिणि ।

वत्सहरणे पूर्व्ववद् राज-वैश्य-स्त्री-शूद्राणां प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ वत्सहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१. आहति इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽनडुङ्गरणप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

योहरेत् पारकं विप्रोवलीवहं कृषीवलम् ।

स गत्वा नरकं घोरं जायते पूर्ववत्तथा ॥

हारीतः—

योहरेत् पारकं विप्रोवलीवहं कृषीवलम् ।

युवानं बालकं वापि कृत्वा नरकमश्नुते ॥

चिरं तत्र च संविश्य दिवाकृत्योभवेद्भुवि ।

न तस्य निष्कृतिर्नास्ति तप्तकृच्छ्रवयादितः ॥

मरीचिः—

विप्रोयः पारकं राजन् वलीवहं तृपातुरः ।

युवानं वनमध्ये वा राज्यक्षोभे महापथे ॥

हृत्वा च नरकं भुक्त्वा भुवि भूयाज्जनङ्गमः ।

तस्य पापविशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रद्वयं स्मृतम् ॥

पौगण्डं कुच्छ्रमात्रं स्यात् बालेऽङ्गं मुनिभिः स्मृतम् ।

तन्मार्गीणां तदङ्गं स्यात् बाहुजोऽसौ द्विजातिवत् ॥

ऊरुजस्य क्षत्रियवत् मर्ज्वरः । पादजस्य अनडुङ्गरणे राज्ञा शिञ्जा

कारयितव्या । राज्ञा तद्विचार्य अनडुङ्गरणजः करक्रेदः कर्तव्यः ।

१. अहरेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. वलीवहं कृषीवल इति क्रीतकार्गपुस्तकयोः पाठः ।

३. दिवाकृत्योभवेद् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. राजक्षोभे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पौगण्डे अङ्गुलिद्वयं बालवत्सहरणे अङ्गुलिमात्रं च्छेदयम् । तद्वस्तु  
दापयित्वा दशरूपकेण दण्डः । तदाह मनुः—

बन्धोवद्दं करच्छेदं पौगण्डे चाङ्गुलिद्वयम् ।

अङ्गुलिं बालहरणे दापयित्वा पुनश्च तम् ॥

दशरूपकदण्डेन विप्रोदण्डश्च तेन वै ।

राजानमूर्जं वाऽपि तद्वै न विचारयन् ॥ इति ॥

इति हेमाद्रौ अनङ्गुडरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ महिषीहरणप्रायश्चित्तमाह ।

कण्वः—

महिषीमास्यजो हृत्वा पातकी पापवत्सलः ।  
स गत्वा नरकं घोरं पुनश्चाण्डालवानिह ॥

देवस्वामी—

योविप्रोमहिषीं हृत्वा परकीयां धनातुरः ।  
स गत्वा नरकं घोरं भुवि चाण्डालवान्भवेत् ।  
नतस्य निष्कृतिर्नास्ति गुरुचान्द्रायणादिह ।

चतुर्विंशतिमते—

योविप्रोमहिषीं हृत्वा सवत्सां क्षीरवर्द्धिनीम् ।  
अरण्ये वा गृहे वापि नरकं याति दारुणम् ॥  
चाण्डालजन्म संप्राप्य तिष्ठत्याचन्द्रतारकम् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति गुरुचान्द्रायणं स्मृतम् ॥  
पुनर्भूत्वा स पापीयान् वपनं चान्द्रभक्षणम् ।  
राजसम्बन्धिनीं हृत्वा बणिक्पादजयोरपि ॥  
पुनर्हृत्वा पिवेच्चान्द्रमन्यथा तप्तमाचरेत् ।  
ऊरुजस्य पराक्रः स्यात् पादजोयावकं चरेत् ॥

सर्व्वत्र पुनर्दत्त्वा एकाहमुपोष्य पञ्चपत्रं पीत्वा श्रद्धिमाप्नोति ।  
तत्तत्स्त्रीणामङ्गं योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ महिषीहरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ महिषहरणप्रायश्चित्तमाह ।

कृष्णपुराणे—

महिषं यो हरेत् लोभात् पारक्यं कृषिकर्मवान् ।

स गत्वा नरकं घोरं पूर्ववज्जायते भुवि ॥

नागरखण्डे—

पारक्यं महिषं हत्वा विप्रः कृष्यर्थमादरात् ।

तस्यैव नरके वामस्तथा चाण्डालजन्मवान् ॥

काश्यपः—

कृष्यर्थं भारवाहायं यो विप्रो महिषं हरेत् ।

यमलोकमुपागम्य पश्चाच्चाण्डालजन्मवान् ॥ ]

वत्स-पौगण्ड-तरुणमहिषहरणे वलीवर्द्धहरणप्रायश्चित्तवत् सर्वं

कुर्यात् । राजदण्डश्च मर्त्यवर्णाऽविवेकेन योजनीयः ।

इति हेमाद्रौ महिषहरण प्रायश्चित्तम् ।

१) महिषो वत्सहरणप्रायश्चित्तमाह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) पारक्यं यत् कृषिकर्मवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रीतकाण्डपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथ गजहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

विप्रोगजं हरेत् सङ्गदोषात् पारक्यमादरात् ।  
नववर्षं भवेद्रक्षः पिशाचो निर्जने वने ॥  
यो विप्रोगजहारी स्यात् परबोधाम्बलिस्तु चैः ।  
नववर्षं महारणे पिशाचो भवति ध्रुवम् ॥  
राज्ञो वणिक्पतेर्वाऽपि सङ्गदोषान्बलिस्तु चाम् ।  
विप्रो यदि गजं हर्त्ता स पिशाचत्वमाप्नुयात् ॥  
बाले चान्द्रं महाचान्द्रं पौगण्डे मदशङ्किते ।  
चान्द्रायणत्रयं कुर्यान्मौञ्जीवन्धविधानतः ॥

पुनः संस्कारमित्यर्थः ।

तं गजं स्वामिने दत्त्वा ततश्चान्द्रायणञ्चरेत् ।  
राज्ञा शिक्ता प्रकर्त्तव्या चीरेभ्यः पापभीरुणा ॥  
बाल्यं पौगण्डके चैव यवनिक्येण दण्डयेत् ।  
अशक्ते रूपकशतम् सहस्रं मदहस्तिने ॥  
जीवनं तस्य गृह्णीयादत्यशक्तो द्विजो यदि ।



विप्रप्रायश्चित्तवत् राज्ञामूरुजानां द्विगुणं दण्डञ्च 'कुर्यात्' । शूद्रस्य  
हस्तविच्छेदः पूर्ववत्कर्त्तव्यः ।  
गजहरणं स्त्रीणामसम्भवमिति तत्र<sup>१</sup> प्रायश्चित्तमपि नोक्तम् ।

इति हेमाद्रौ गजस्त्यप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) कुर्यात् इति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(२) असम्भवात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) तत्रेति काशीपुस्तकएव दृश्यते ।

---



## अथाऽश्वस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

उत्तमाश्वं द्विजो हत्वा पारक्यं तरुणं मुदा ।  
यमलोकमुपागम्य पङ्गुर्भूयाद्भुवस्तले ॥

हारीतः—

उत्तमाश्वं जातिमात्रं बड़वां बालिकामपि ।  
विप्रो<sup>१</sup> वै सङ्गदोषेण हत्वा नरकमश्नुते ॥  
पुनर्भूयान्महापापी पङ्गुः सर्वाङ्गसन्धिषु ।  
न तस्य निष्कृतिर्नास्ति द्विवारं चान्द्रभक्षणम् ॥

मार्कण्डेयः—

बड़वां जातिमात्रं वा राज<sup>२</sup> योग्यं हयं द्विजः ।  
अरण्ये राजशालायां चौर्यबुद्ध्या जनैः सह ।  
हत्वा नरकमासाद्य भवेत्पङ्गुर्भुवःस्थले ॥  
तस्य देहविशुद्धयर्थं द्विवारं चान्द्रभक्षणम् ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
अश्वस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

१. देवल इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. योविप्रः सङ्गदोषेण इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३. राजा योग्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ उष्ट्रस्तयप्रायश्चित्तमाह ।

वामनः —

क्रमेलकं हरेद्यस्तु विप्रो राज्ञां धनातुरः ।

स तु नारकमागम्य जायते वक्रजानुकः ॥

जावालिः—

राज्ञां परिषा<sup>१</sup>मुष्ट्रं वा<sup>२</sup> विजोहत्वा धनातुरः ।

स एव नरकं गत्वा वक्रजङ्घो<sup>३</sup> भवेद्भुवि ॥

अरण्ये राजसदने विप्रो हत्वा क्रमेलकम् ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्नरकाद् दौघ्रजङ्घवान् ॥

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं महापातकनाशनम् ।

बाल्ये पौगण्डके तप्तं कौमार्ये चान्द्रमुच्यते ॥

राज्ञा शिक्ता प्रकर्त्तव्या पूर्ववद्वर्गभेदतः ।

प्रायश्चित्तमपि पूर्ववद्वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ उष्ट्रहरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) आह्वेति क्रीतकाशोपुस्तकयोर्नास्ति ।

(२) अश्वं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) वक्रजानुरिति काशीपुस्तकपाठः ।



अथ खरस्तेयप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

योविप्रस्तु खरं हृत्वा पारक्यं धनकाम्यया ।  
सङ्गदोषादयं पापी मृगचाण्डालमाप्नुयात् ॥  
यमलोकमुपागम्य हीनजातिर्भवेद्भुवि ।

मार्कण्डेयः—

खरं हृत्वा द्विजोमीहात् पारक्यं गृहमध्यतः ।  
वने वा सङ्गदोषेण नरकं याति दारुणम् ॥  
हीनजातिर्भवेत् पञ्चान्निष्कृतिः कथितोत्तमैः ।  
बाल्ये पीगण्डके राजन् कायकृच्छ्रं समाचरेत् ॥  
तरुणे तप्तकृच्छ्रं स्यात् तस्य पापविशुद्धये ।  
राज्ञा दण्डाः स पापौयान् दापयित्वा पुनः खरम् ॥  
विप्रे तु 'दशरूप्यं स्यात् राज्ञि' विंशतिरेव वा ।  
ऊरुजे च तथा प्रीक्षां पादजे हस्तच्छेदनम् ॥

तत्स्त्रीणामिवमर्द्धक्रमेण योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ खरहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) दशरूप्यं स्यात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) राज्ञा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथाऽज-वस्तहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मार्कण्डेयः

अजं वस्तं द्विजोहृत्वा पारक्यं मदगर्वितः ।  
महतीं यातनां गत्वा भवेत् सूनुर्भुवस्तले ॥

जातूकर्णः

ब्राह्मणो मदगर्वेण पारक्यमजवस्तकम् ।  
तौत्राञ्च यातनां भुक्त्वा हिंसको जायते भुवि ॥

जाबालिः—

अजं वस्तं गृहेऽरण्ये पारक्यं गर्वितो द्विजः ।  
मुषित्वा नरकं गत्वा हिंसको जायते भुवि ॥  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
स्त्राणामर्द्धं ततो राज्ञां विप्रवत्सर्व्वमीरितम् ॥

इति हेमाद्रौ अज-वस्तहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहृति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) जातूकर्णरिति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽऽरण्यमृगहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

व्याघ्रं वराहं भल्लुकमेणीं कृष्णमृगं तथा ।  
राज्ञां<sup>२</sup> क्रीडार्थमानीतं हत्वा विप्रः कथं भवेत् ॥  
प्राजापत्यं दुष्टमृगे हरिण्यां तप्तमुच्यते ।  
चान्द्रं कृष्णमृगे प्रोक्तं प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥

बौधायनः—

राज्ञां<sup>३</sup> क्रीडार्थमानीतान् आरण्यान् दुष्टचारिणः ।  
व्याघ्रं वराहं भल्लुकमेणीं कृष्णमृगं तथा ॥  
हत्वा नरकमाप्नोति<sup>४</sup> प्रायश्चित्तेन शुध्यति ।  
व्याघ्रे वराहे भल्लुके प्राजापत्यं विशोधनम् ॥  
हरिण्यां तप्तकृच्छ्रं स्याच्चान्द्रं कृष्णमृगे द्विजः ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरीरिता ॥  
गवये शरभे चैव प्राजापत्यं हि पूर्ववत् ।  
राज्ञां स्तेये प्रकर्त्तव्यमेवमेव विशुद्ध्यते ॥

इति हेमाद्रौ आरण्यमृगहरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) रामाक्रीडार्थमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) राज्ञ इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) प्राजापत्येन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ ग्राम्यमृगपद्यादिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

नारदीये—

मयूरं सारमं चैव कपोतं जालपादकम् ।

शुकं चाषं बलाकञ्च शिशुमारञ्च<sup>२</sup> कच्छपम् ॥

एतैश्चन्यतमं हत्वा द्वादशाहमभोजनम् ।

पराशरः—

टिट्ठिभं चक्रवाकञ्च शिशुमारञ्च कच्छपम् ।

मयूरं सारमञ्चैव कपोतं जालपादकम् ॥

एतैश्चन्यतमं हत्वा द्वादशाहमभोजनम् ।

\* मार्कण्डेयः—

<sup>३</sup>मकरं नकुलं काकं वराहं मूषकं तथा ।

माज्जीरं नकुलं मयं भारद्वाजं कपिं तथा ॥

सारिकां क्लमरं हत्वा हत्वा वा कुक्कुटं तथा ।

मौपणं<sup>४</sup> गृध्रश्येनाञ्च शिवां कङ्कं सृगालकम् ॥

कच्छार्द्धमाचरन्निहान् ज्ञात्वा तद्विगुणं चरेत् ।

वल्लीं च नरपिं रक्तपुच्छकं बहुपादकम् ॥

---

(१) आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) कृष्णं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(४) मयूरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) गृध्रमेनाञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



हृत्वा हत्वा<sup>१</sup> द्विजः कुर्याद् द्वादशाह<sup>२</sup>मभोजनम् ।

अज्ञानाद्विसयन् हत्वा षड्भोजं स्यादभोजनम् ॥

इति हेमाद्रौ ग्राम्यमृग<sup>३</sup> पक्ष्यादिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) हृत्वा इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

२। विशोधनं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ग्राम्यमृगहरणप्रायश्चित्तमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ भूमिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

स्वदत्तां परदत्ताञ्च योहरेच्च वसुन्धराम् ।  
षष्टिवर्षमहस्त्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥  
एकैकभागिनो लोके सर्वेषामेव भूभुजाम् ।  
न भोज्या न करग्राह्या विप्रदत्ता वसुन्धरा ॥

“करग्राह्ये”ति तस्यां भूम्यामुत्पन्नधनग्रहणम् ।

देवस्यामी—

ग्रामं वा क्षेत्रमात्रं वा केदारं भूमिमेव वा ।  
विप्राधीनं हरन्<sup>२</sup> राजा यमलोकमवाप्नुयात् ॥  
पञ्चाद्भुवमुपागम्य कृमिराशिर्भवेन्मले ।

नारदीये—

क्षेत्रं ग्रामं तटाकं वा धनं केदारमेव वा ।  
भूमिं वा विप्रदत्तां राजा वा<sup>३</sup> प्रभुरेव वा ॥  
हत्वा नरकमाप्नोति कीटोऽभून्मलमध्यतः ।  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा महापातकशीधनी ॥  
क्षेत्रं हत्वा षड्विं स्याद्ग्रामे चान्द्रायणं स्मृतम् ।  
तटाके तद्वयं प्रोक्तं वर्णं चैव तदाचरेत् ॥

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) नच वै ग्राह्या इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) हरेद्राजा इति क्रीतलोखितपुस्तकपाठः ।

४ प्रभुमात्रवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



केदारि तप्तकच्छं स्याद्भूम्यां चान्द्रवयं स्मृतम् ।

तदेतदेकवारहरणविषयम् । बहुवारि तद्विगुणम् । प्रत्यब्दं फल-  
स्वीकारे च ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तमर्हति ।

इति हेमाद्रौ भूमिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ 'दत्ताऽपहरणप्रायश्चित्तमाह' ।

देवलः—

भूमिं क्षेप्तं धनं धान्यं वस्त्रं<sup>१</sup> कन्यां विभूषणम् ।  
सालग्रामञ्च लिङ्गञ्च गृहं शय्यां महोन्नतिम् ॥  
पूर्वं दत्त्वा द्विजेभ्यश्च पश्चात्क्षोभपरायणः ।  
स्वयं हृत्वा महाघोरं रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

मार्कण्डेयः—

सालग्रामञ्च लिङ्गञ्च धेनुं वस्त्रं विभूषणम् ।  
भूमिं क्षेप्तं धनं धान्यं वस्त्रं कन्याविभूषणम् ॥  
महिषीं वा गृहं शय्यामनङ्गाहं द्विजातये ।  
पुण्यकाले स्वयं दत्त्वा पश्चाद्यदि समाहरेत् ॥  
रौरवं नरकं घोरं प्रयाति स महाभयम् ।  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना महापातकनाशिनी ॥  
पुनर्दत्त्वाऽथ तद्वस्तु पश्चात्तापपरायणः ।  
प्राजापत्यद्वयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति मानवः ॥  
अदत्त्वा तानि वस्तूनि भुङ्क्ते यदि स पापधीः ।  
चान्द्रायणद्वयं प्रोक्तमथवा भूपरिक्रमः ॥  
भूपतिर्विप्रवत्कुर्याद्द्विगुणं शुद्धिहेतवे ।  
इति हेमाद्रौ 'दत्ताऽपहरणप्रायश्चित्तम्' ॥

(१) स्वदत्तेति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) आहतेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(३) कन्यां विभूषणं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) स्वदत्तेति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ रत्नहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

मुक्ताः प्रवालं वैदूर्यं वज्रं नीलं तथैव च ।  
पद्मरागं मरतकं पुष्परागमतः परम् ॥  
एतानि रत्नजातानि विप्रोहरति भूविलात् ।  
प्रत्यक्षं वा<sup>२</sup> चौर्य्यादा स पापी नरकं व्रजेत् ॥  
पश्चाद्भूमिं समागम्य कुरूपो<sup>३</sup> जायते भुवि ।

मार्कण्डेयः

मौक्तिकं पुष्परागञ्च वज्रं वैदूर्यमेव वा ।  
प्रवालं पद्मरागञ्च गारुत्मतमतः परम् ॥  
इन्द्रनीलं महावज्रं द्विजोयः पापमोहितः ।  
पारक्यं यदि चौर्य्येण मुष्णाति<sup>४</sup> नरकं व्रजेत् ॥  
पश्चाद् भूमिं समागम्य कुरूपोजायते भुवि ।

[ भवेत् कुत्सितजन्मवान् इत्यर्थः ]

(१) आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२ यदि हि इति क्रीतपुस्तकपाठः यदिह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कुरूपी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) मुषित्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।



ऋतुद्वये पराकं स्यात् षण्मासे चान्द्रमुच्यते ।

प्रत्यक्षहरणे विप्रस्त्वद्धे<sup>१</sup> पातित्यमर्हति ॥

संवत्सरं प्रत्यहं रत्नस्तेये, पतितप्रायश्चित्तं संवत्सरान्ते वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ रत्नस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) वयद्धे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ बालहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

नारदः—

बालं<sup>२</sup> हरेद् द्विजोदेवात् पारक्यं द्रव्यलोभवान् ।  
स चाण्डालममोक्षेयः सर्वकर्मसु गर्हितः ॥

गौतमः—

ब्राह्मणं क्षत्रियं बालं वैश्यं शूद्रमथाऽपि वा ।  
अलङ्कारयुतं विप्रस्तं हत्वा विक्रयेत्ततः ॥  
स चाण्डालत्वमाभाद्य सर्ववर्णवहिष्कृतः ।  
न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिः सत्यवादिभिः ॥  
कथञ्चिन्निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्बाल<sup>३</sup> मोषतः ।

गालवः—

पूर्वजः क्षत्रियं बालं वैश्यं शूद्रमथाऽपि वा ।  
अलङ्कारयुतं विप्रः क्षत्रं पादजमेव वा ॥  
सर्वबालङ्कारमयुक्तं हत्वा तत्र कथं भवेत् ।  
स विप्रोभ्रूणहन्ता स्यान्मृतश्चाण्डालजन्मवान् ॥  
तस्यैव निष्कृतिरियं सर्वार्घाघनिकृन्तनी ।  
बालकं स्वामिने दत्त्वा पश्चात्तापममन्वितः ॥  
ब्राह्मणे तप्तकृच्छ्रे स्यात् पराकं क्षत्रिये स्मृतम् ।  
वैश्ये तु यावकं प्रोक्तं पादजे वपनं स्मृतम् ॥

१. आर्जित क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. हत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३. बालमुष्णत इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



एतत् 'पुनर्दानविषयम् । अदत्त्वा चेद् विशेषमाह ।

जावालिः—

अदत्त्वा स्वामिने बालं चान्द्रं विप्रे प्रचोदितम् ।

क्षत्रिये तप्तकच्छं स्याद् वैश्ये 'यावकमीरितम् ॥

पादजे पञ्चगव्यं च वपनं तु शिरोरुहाम् ।

क्षत्रिय-वैश्ययोः पारक्यबालहरणे विप्रोक्तप्रायश्चित्ताद्विगुणम् ।

शूद्रस्य हस्तच्छेदः भूषणापहरणे पादच्छेदश्च । स्त्रीणामे-  
तेषामर्द्धमुक्तम् ।

इति हेमाद्रौ बालहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) पुनर्दानविषयं इति लेखितपुस्तकपाठः पुनर्दानत्वविषयं इति क्रीतपुस्तक-  
पाठः ।

(२) पारक्यमीरितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ 'कन्यकाहरणप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

कन्यां सुरुपिणीं विप्रोभूषणैर्भूषितां सतीम् ।  
जारबुद्ध्या हरेद्वापि नरकं याति दारुणम् ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य 'भिक्षयोनी स जायते ।

गालवः—

विप्रौयः कन्यकारत्नं सर्वभूषणभूषणम् ॥  
विप्रजं बाहुजा<sup>३</sup>जातं पादजं वा विशेषतः ।  
मुषित्वा दुष्टसङ्गेन <sup>४</sup>परवाक्यानुसारतः ॥  
न तस्य नरकाद्भूप पुनरावृत्ति <sup>५</sup>रस्ति हि ।  
तदन्ते भुवमासाद्य जायते भिक्षजन्मवान् ॥

पराशरः—

पूर्वजः कुलजां कन्यां पितृगृहविवर्द्धिनीम् ।  
हत्वा कामातुरोनित्यं न तस्य पुनरुद्भवः ॥

(१) कन्याहरणे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) भिक्षयोनी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) बाहुजाजातं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) परं वाक्यानुसारतः इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(५) पुनरावृत्तिवर्जितः इति क्रीतपुस्तकपाठः पुनरावृत्तिवर्जित इति लेखित



चाण्डालजन्म संप्राप्य ब्रह्महेव 'श्वमनृप ।

\*दत्त्वा तां स्वामिने पश्चात् शुद्धिश्चान्द्रायणव्रतात् ॥

अदत्त्वा पुनरप्येनां न पश्चात्तापवान् द्विजः ।

महाचान्द्रायणं कृत्वा पञ्चगव्यमनन्तरम् ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा गतिरस्ति हि ।

राजकन्यां हरत् 'कायं तप्तं विट्शूद्रकन्ययोः ॥

\*राज्ञो विप्रसुताऽऽदाने द्विगुणं विप्रचोदितात् ।

वैश्यो विप्रसुतां हृत्वा राजवन्मुनिचोदिनम् ॥

शूद्रो 'हरन् विप्रकन्यां कारोषवधमर्हति ।

न तत्तत् स्त्रीणामर्द्धमर्द्धं प्रायश्चित्तम् ॥

इति हेमाद्रौ कन्याहरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) श्वमनृप इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) हृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कायं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) राजविप्रसुतादाने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) हरन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ नारीहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

विप्रः सतीं स्वकुलजां विप्रपत्नीं हरेद् यदि ।  
‘तोषयित्वा सुवार्त्ताभिरुत वाऽपधिया खलः ॥  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति कारीषदहनादृतै<sup>३</sup> ।

मार्कण्डेयः—

अनङ्गीकरणे साध्वीं विप्रपत्नीं द्विजः<sup>४</sup> खलः ॥  
बोधयित्वा सुवार्त्ताभिः शौरवुद्ध्या हरेद्यदि ।  
राजा तं दण्डयेत् पश्चात् कारीषदहनादितः ।

गालवः—

अनङ्गीकारिणीं विप्रपत्नीं साध्वीं द्विजोहरेत् ॥  
मंसर्गे<sup>५</sup> कर्षणच्छेदः स्वभावे तस्य वाऽर्पणे ।  
क्रैश<sup>६</sup> संवपनं कृत्वा तप्तकच्छत्रयं चरेत् ॥  
रहस्येनामुपागृह्य चान्द्रायनमथाऽऽचरेत् ।

एतत्सकृद्विषयं, अभ्यासे द्विगुणं, अत्यन्ताभ्यासे कारीषवध-  
एव । नान्यत् ।

१. आह्वेति क्रीतपुस्तके पाठः ।

२. ‘बोधयित्वा सुवार्त्ताभिश्चौरवुद्ध्या हरेद् यदि’ इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

३. दहनादितः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४. खलत्वतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. उक्तवार्त्ताद्विषया खलः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६. कर्षणच्छेदः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

७. क्रैशस्य वपनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मनुः—

क्षत्रियोवैश्य 'जातिं वा बलाद्वाह्मणसुन्दरीम् ।

मुषित्वा रौरवं याति बधः कारीषवह्निना ॥

एवं शुद्धिमवाप्नोति मौसल्यं पादजे स्मृतम् ।

'विप्रस्य क्षत्रिय-वैश्यकन्याहरणे चान्द्रदयं चान्द्रं च । शूद्राङ्गना-  
हरणे प्राजापत्यं विशोधनम् ।

इति हेमाद्रौ नारीहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) वैश्यजातीं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) विप्रक्षत्रियेत्यादि क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पुरुषहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

पराशरः —

विप्रो हरेत् प्रियं मर्त्यमन्मत्तं मन्त्रभेषजैः ।  
देशाद् देशान्तरं गत्वा स विप्रोनरकं व्रजेत् ॥

जाबालिः—

विप्रः परं नरं हत्वा भ्रामयित्वौषधादिभिः ।  
देशाद्देशगतः पश्चाद् दत्त्वा तं पुनरादरात् ॥  
कुर्याद्देहविशुद्ध्यर्थं तप्तकुच्छं मनूदितम् ।  
अनर्पयित्वा तं नूदश्चान्द्रायणमथाऽऽचरेत् ॥  
विप्रस्य क्षत्रियं वैश्यं हत्वा मन्त्रविधानतः ।  
पुनर्दत्त्वा पराकं स्याद् अन्यथा चान्द्रमौरितम् ॥

क्षत्रियवैश्ययोर्ब्राह्मणं हत्वा विप्राद्भिर्गुणं व्रतम् । शूद्रे मौसल्यम् ।  
तत्तत्स्त्रीणामङ्गं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ पुरुषहरणप्रायश्चित्तम् ।

१) आहोति क्रीपुस्तके नास्ति ।

२) तत्स्त्रीणामङ्गं क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ वेश्याहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

भोगासक्तस्तु योवेश्यां<sup>२</sup> विप्रः पापपरायणः ।  
रमेत्तां यदि दुष्टात्मा महान्तं नरकं व्रजेत् ॥

गालवः—

वेश्यां विप्रः सतीं त्यक्त्वा स्वभार्यां मन्मथातुरः ।  
औषधैर्वहुभिर्मौल्यैर्वञ्चयित्वा हरेद्यदि ॥  
स महापापमासाद्य षण्ढोभूयाद्भुवः स्थले ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति ज्ञात्वा यदि हरेदिमां ॥

जाबालिः—

वेश्यां हरेद्यदा विप्रोवञ्चयित्वौषधैर्वलात् ।  
राज्ञा दण्ड्यः शतं रूप्यं सहस्रं वा नराधमः ॥  
तस्य देहविशुद्ध्यर्थं महासान्तपनं स्मृतम् ।  
एतत् प्रायश्चित्तं हरणमात्रे विवेचनीयम् । तत्र तस्यां रतिर्यदि  
<sup>३</sup>तदा तस्य विशेषमाह ।

अङ्गिराः—

वेश्याया हरणे राजन् महासान्तपनं<sup>४</sup> विदुः ।  
तत्रैव रममाणस्य चान्द्रं शुद्धिप्रदं सदा ॥

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) वेश्यां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तदेति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(४) महासान्तपने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



‘क्षत्रिये द्विगुणं प्रोक्तं वणिक् क्षत्रियवच्चरेत् ।

शूद्रे दण्डः शतं रूप्यं [विप्रोऽभ्यासे पतिष्यति] ॥

विप्रोवेश्यां हृत्वा तत्र क्रीडासक्तश्चेत् संवत्सरादूर्ध्वं पतितोभवति ।

इति हेमाद्रौ वेश्याहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) क्षत्रियाद् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

[ ] अयं पाठः लेखितपुस्तके न दृश्यते ।

---



## अथ दासीहरणप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

दासीं कामातुरोगच्छेत् पूर्वजो धर्ममुत्सृजन् ।

स एव नरकस्थायो यावदाभूतसंप्लवम् ॥

जातुकर्णः—

पूर्वजो यदि यो<sup>१</sup> दासीं स्वधर्मं<sup>२</sup> संपरित्यजन् ।

वञ्चयित्वौषधैर्वेश्यां हरेत्<sup>३</sup> स खलु पापधीः ॥

मृत्वा नरकमासाद्य भुवि भूयान्निरिन्द्रियः ।

चतुर्विंशतिमते<sup>४</sup>

यदि विप्रो हरेद्दासीं वञ्चयित्वौषधैर्वलात् ।

स<sup>५</sup> गच्छेन्नरकं घोरं कालसूत्रं महद्भयम् ॥

दासीहर्तुः वेश्याहर्तुर्विप्रस्य यत् प्रायश्चित्तमुदीरितं तत्सर्वं स्वहरणे

भागं विचार्य कुर्यात् । राजवैश्ययोः पूर्ववदुक्तम् । शूद्रस्य तदेव ।

तत्तत्स्त्रीणां दासीहरणे तत्तद्वर्द्धमानेन वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ दासीहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१. यस्तु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२. संपरित्यजेत इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. यदि स पापधीः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४. चतुर्विंशतिमतेऽपि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. गत्यः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शय्याहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

गौतमः—

विप्रस्तु क्षत्रियोवैश्यः पारक्यं तल्पमाहरेत् ।

सोपस्कारं महामूल्यं<sup>२</sup> 'सखट्ट'<sup>३</sup> भोगलोलुपः ॥

यमलोकमुपागम्य अङ्गारशयनं व्रजेत् ।

ततोभुवमुपागम्य पृष्ठदेशे व्रणीभवेत् ॥

देवलः—

ब्राह्मणः क्षत्रियोवैश्यस्तल्पं सोपस्कारं हरेत् ॥

महाधनं सखट्टञ्च क्षीरबुद्ध्या बलादिह ।

सोऽन्ते कृतान्तशरणे व्रजेदङ्गारतल्पताम् ॥

न तस्य पुनरावृत्तिः पृष्ठे<sup>४</sup> 'व्रणभयादिभिः' ।

मार्कण्डेयः—

<sup>५</sup>त्रयोवर्णाः स्वधर्मादीन् त्यक्त्वा तल्पं महाधनम् ।

सोपस्कारं हरेयुस्ते यमलोके सुदारुणम् ॥

अङ्गारशयनं<sup>६</sup> यान्ति पश्चात् 'पृष्ठे व्रणीभवेत् ।

तेषां दोषविनाशाय प्रायश्चित्तं प्रजापतिः ॥

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) स खट्टा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) व्रणभयादिभिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) त्रयोवर्णान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) गत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(६) पृष्ठव्रणी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्राह चान्द्रं पराकञ्च तप्तञ्चैव यथाक्रमम् ।  
तत्तत्स्त्रीणां तदङ्गं स्यात् शूद्रं दण्ड्याच्च पूर्ववत् ॥

इति हेमाद्रौ शय्याहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



[ अथ यानहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

आन्दोलिकां यदाविप्रश्चतुरन्तां विशेषतः ।  
मनुष्यवाह्यं यानं स्याद् दारुचित्तैर्विभूषितम् ॥  
धृत्वा पापधिया पापी नरकं याति दारुणम् ।  
स वै भुवमुपागम्य ब्रह्मवान् पृष्ठदेशतः ॥

पराशरः—

यानमान्दोलिकादीन्यः पारक्यं भोगवृणया ।  
विप्रोहरेन्महादुःखमनुभूय भुवः स्थले ॥  
पृष्ठदेशे यदा वक्त्री जायते वर्णगर्हितः ।  
तस्य दोषविनाशाय प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

एतत् पुनर्दानविषयम् । अदत्त्वा प्राजापत्यद्वयं वेदितव्यम् ।  
क्षत्रियवैश्ययोरेवं वेदितव्यम् । शूद्रे तद्द्रव्यं स्वामिने पुनर्दाप-  
यित्वा शतरूप्येण दण्डः । तत्तत्स्त्रीणां तद्वर्गं यथाक्रमं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ यानहरणप्रायश्चित्तम् । ]

---

[ ] अथ यानहरणप्रायश्चित्तमाहेत्यादिः इति हेमाद्रौ यानहरणप्रायश्चित्त-  
मित्यन्तोऽग्रन्थः कृतकाशीपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।

---



[ अथ उपानहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

उपानत्पादुके राजन् पारक्यं योद्विजोहरेत् ।  
स चाण्डालसमीभूयात् कण्टकास्तरणं व्रजेत् ॥

यमः —

उपानत्पादुके यस्तु पारक्यं वै द्विजोहरेत् ।  
कण्टकास्तरणं गत्वा पादशृङ्गीभवेद्भुवि ॥

मरीचिः —

योविप्रः पापमज्ञात्वा उपानत्पादुके हरेत् ।  
यमलोकमुपागम्य शयनं कण्टकोपरि ॥  
तस्य देहविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ।

एतत् पुनरदानविषयम् । दत्त्वा पञ्चगव्यभक्षणम् । क्षत्रिया-  
दीनामेवम् । तत्तत् स्त्रीणां पूर्व्ववत् तदर्थं यथाक्रमं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ उपानहरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ छत्रहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

छत्रं हरेत् द्विजोनैव<sup>१</sup> महातपनिवारणम् ।  
यमप्रोतिकरं पुण्यं सर्वसौख्यप्रदायकम् ॥

मार्कण्डेयः—

पारक्यं पुण्यदं सर्वसौख्यदायि महाधनम् ।  
तद्विप्रो यदि मुष्णाति अनाधारो भवेद्भुवि ॥

शिवरहस्ये—

महामूल्यं महासौख्यप्रदं नृणां द्विजो हरेत् ।  
छत्रमुष्णहरं पुण्यं नरकं याति दारुणम् ॥  
अनाधारो भवेद्भूमौ सर्वदा<sup>२</sup> भुवि गर्हितः ।  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना भारते लोकपावनी ॥  
वस्त्रावृते पराकं स्यात् केतकी<sup>३</sup> पर्णसंवृते ।  
यावकं तालपत्रैश्च<sup>४</sup> निर्मितं राजवल्लभ ॥

१. आर्हति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. यस्तु इति लेखितपुस्तके ७३ ।

३. सर्वदं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. केतकीवर्ण इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

५. निर्मित इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पञ्चगव्यं पिवेत्पश्चात् पुनर्दत्त्वा तु तदनम् ।  
 अभ्यासे<sup>१</sup> द्विगुणं प्रोक्तं क्षत्रियाणामिदं व्रतम् ॥  
 तत्तत्स्त्रीणामिदं ज्ञेयं प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।

इति हेमाद्रौच्छत्रहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१) अभ्यासे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ चामरहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

चामरं सर्वभूतानां देवानामपि प्रीतिदम् ।  
राजयोग्यं हरन्विप्रः सद्योगच्छेद्यमालयम् ॥

देवस्तः—

चामरं सर्वदेवानां भूतानां भूपतेरपि ।  
राजचिह्नं हरेद्यस्तु सद्योभवति पातकी ॥

मार्कण्डेयः—

भूपतीनाञ्च देवानां नृणां तापाऽपहागियत् ।  
चामरं हरते विप्रः सद्योयमपुरं व्रजेत् ॥  
देवानां हरणे चान्द्रं प्राजापत्यञ्च भूपतेः ।  
भूतानां हरणे बालव्यजने<sup>३</sup> यावकं चरेत् ॥

एतत्पुनरर्पणविषयम् । अन्यथा द्विगुणम् । सर्वेषां वर्णानां  
स्त्रीणामपि चित्रसंगतव्यजनहरणेऽपि प्रायश्चित्तमेवं करणीयम् ।

इति हेमाद्रौ चामरहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आर्हेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) हरेद्विप्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) बालव्यजनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पुष्पहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

वमिष्ठः—

आरामे पुष्पहर्ता यो देवपूजार्थकल्पितः ।  
‘यावत् तत्रैव पुष्पाणि सुगन्धानि महान्त्यपि ॥  
तावद् वर्षसहस्राणि यमलोकं समश्रुते ।  
पुनर्भूमिगतः पापी जायते वक्रनामिकः ॥

हारौतः—

पारक्याणि प्रसूनानि यो हर्गद्विप्रवत्सभः ।  
महान्तं नरकं गत्वा जायते रन्ध्रनामिकः ॥

महाराजविजये—

‘पुष्पजालं हि पारक्यं देवपूजार्थमादरात् ।  
सुगन्धिकरवीरादि हत्वा विप्रः स पापभाक् ॥  
प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं<sup>२</sup> सुविचार्य मनीषिभिः ।  
देवद्रव्यापहरणे चान्द्रं वत्सरसेवनात् ॥

१ आर्जित इति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२ यावन्त्यत्रैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

४ पुष्पजालं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५ सुविचार्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पराकं ब्रह्मनिर्माणे कायः क्षत्रियवैश्ययोः ।

[क्षत्रियवैश्यनिर्माणे आरामे इति योजनीयम्] ॥

स्त्रीणामपि पूर्ववद् योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ पुष्पहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

[ ] अयं पाठोलेखितपुस्तके नास्ति ।

---



## अथ फलहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

कदलीं मातुलिङ्गञ्च नारिकेलञ्च<sup>२</sup> पानसम् ।  
द्राक्षा-कर्पूर-जम्बीर-चूत-जम्बूफलानि च ॥  
हृत्वा विप्रसु पारक्यं भुक्त्वा नरकमश्नुते ।  
पुनर्भुवमुपागम्य फलहीनोऽपि जायते ॥

जावालिनः—

फलानि विविधानीह देवप्रीतिकराणि वै ।  
मुषित्वा वै<sup>३</sup> द्विजलोभान् नरके वाममश्नुते ।  
भुवः स्थलमुपागम्य फलहीनोऽप्यत्र भवेत् ॥

महाराजविजये—

नानाविधं फलं विप्रः परकीयं मनोहरम् ।  
हृत्वा लोभान् महापार्था नरके वाममश्नुते ॥  
फलहीनो भवेन्नोके तस्मात् स्तेयं न कारयेत् ।  
ऋतुत्रये पराक्रः स्याद् वत्सरे चान्द्रमुच्यते ॥  
पञ्चगव्यं पुनर्दत्त्वा नान्यथा ऋषिचोदितम् ।

क्षत्रियवैश्ययोरेतद्विगुणम् । तत्तत् स्त्रीणां पृथक्पृथक् विज्ञेयम् ।

इति हेमाद्रौ फलहरणप्रायश्चित्तम् ।

१. आर्जितं क्रीतपुस्तकं नास्ति ।

२. नारिकेलञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. य. इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४. विप्रो हृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ कन्दाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

सूरणं शृङ्गिवेरञ्च हरिद्रा मूलकं तथा ।  
अन्यानि मूलवस्तूनि देवयोग्यानि यानि च ॥  
विप्रोमुषित्वा लोभेन तेन यद्यत्समाचरेत् ।  
तत्सर्वं स्वामिनः प्रोक्तं<sup>२</sup> दीपवानिह जायते ॥

हारीतः—

सूरणं शृङ्गिवेरञ्च हरिद्रा मूलकं तथा ।  
अन्यानि मूलवस्तूनि पारक्याणि द्विजोयदि ॥  
हरिन्नरकमाप्नोति पापयोनिषु जायते ।

मार्कण्डेयः—

सूरणं शृङ्गिवेरञ्च हरिद्रा मूलकं तथा ।  
वस्तून्यन्यानि मूलानि विप्रोमुष्णाति कामतः ॥  
अल्पद्रव्ये द्विजः स्तेयी दोषबाहुल्यमाप्नुयात् ।  
पलद्वयं यदि हरेत् पारक्यं मूलवस्तु यत् ॥  
तत्पुनः स्वामिने दत्त्वा जपेदष्टोत्तरं शतम् ।  
दशादिशतपर्यन्तं मूलद्रव्याऽपहारवान् ॥

१. आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।  
२. दीपवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
३. हृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।  
४. शृङ्गिवेरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
५. दशादिशतपर्यन्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अदत्त्वा स्वामिने स्तेयी अयुतं जपमाचरेत् ।

ततः शुद्धोद्विजोलोके अन्यथा दोषभागभवेत् ॥

तदाहाऽऽपस्तम्बः—

“एधोदके मूले पुष्पफले गन्धग्रामे शाक इति वचनमेकवार-  
मल्पस्तेयविषयं ततोऽधिके उक्तप्रायश्चित्तमेव ।”

क्षत्रियवैश्ययोः पूर्व्ववद् वेदितव्यम् । तत्तत्स्त्रीणामर्द्धांशं  
न्यायेन योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ मूलहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ कोषहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

<sup>२</sup>अलावु घृतकोषञ्च वृन्ताकं शिशुजं तथा ।

तथैव तिल्विणीकोषं<sup>३</sup> कपित्थं कदलीं तथा ॥

एवमादीनि<sup>४</sup> कोषाणि हत्वा पापमवाप्नुयात् ।

उपोष्य रजनीमैकां स्वगृह्योक्तविधानतः ॥

महाव्याहृतिभिर्हीमः पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।

<sup>५</sup>एतेन शुद्धिमाप्नोति अभ्यासे द्विगुणं चरेत् ॥

एतदल्पकोषहरणविषयम् । बहुकोषहरणे द्विगुणं प्रायश्चित्तम् । स्त्रीणामर्द्धम् ।

इति हेमाद्रौ<sup>६</sup> कोषहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) कोषहरणे प्रायश्चित्तमित्येव क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अथानुघृतकोषञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कोशं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कोशानि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) एकेन इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) कोश इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ शाकहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

शाकान्यरण्यजातानि तथैव ग्रामजान्यपि ।  
नानानामानि शाकानि नानावर्णानि पूर्वजः ॥  
अपहृत्य यदा <sup>१</sup>लोभान्महाशोकमवाप्नुयात् ।  
भारमात्रे महापापं <sup>२</sup>इतरेष्वल्पपापभाक् ॥

गौतमः—

शाकानि बहुरूपाणि नानानामानि वर्णशः ।  
नानाविधानि यो हत्वा <sup>३</sup>महाशोकमवाप्नुयात् ॥  
भारमात्रे महापापमितरे शोकभाग्भवेत् ।  
प्राजापत्यं भारमात्रे पञ्चगव्यमथाऽल्पके ॥  
बहुवारितु चान्द्रं स्याद् वत्सरेण <sup>४</sup>विहगभवेत् ।

स्त्रीणां राजवैश्ययोश्च सर्वत्र पूर्वोक्तं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ शाकहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१. लोकात् इति क्रीतपुस्तके पाठः ।

२. इतरे स्वल्पपापभाक् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. महच्छोकमवाप्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. विहगभवेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पर्णहरणप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

कदलीमधुवर्णानि ताम्बूलीनामथापिवा<sup>१</sup> ।

<sup>२</sup>परकीयाणि पर्णानि पालाशानि विशेषतः ॥

ग्राम्याण्यरण्यजानीह विप्रोहत्वा<sup>३</sup> स पातकीः ।

महाराजविजये—

परकीयाणि पर्णानि ग्राम्याण्यरण्यजान्यपि ।

कदलीमधुपर्णानि ताम्बूलीनां विशेषतः ॥

अन्यानि पर्णजातानि विप्रोहत्वा महावल्गः ।

भारमात्रे पराकं स्याद् वल्गरं स्तेयसम्भवे ॥

इतरे पञ्चगव्यं स्यात् प्राजापत्यं तु वल्गरे ।

<sup>४</sup>स्त्रादीनां पूर्ववत् प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ पर्णहरणप्रायश्चित्तम्

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) वधेऽपिवा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पारकीयाणि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) दत्त्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) स्तेयादीनां इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथेन्धनहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवस्त.—

इन्धनं दारुकाष्ठं वा समिधोदर्भसञ्चयान् ।  
मुक्स्मुवादीनि पात्राणि यज्ञमाधनहेतवे ॥  
अरणीं यूपस्तम्भं वा परकीयं द्विजोहरत् ।  
स गत्वा नरकं घोरं क्लमिः समिधपूरितः ॥

जावालिः—

मुक्स्मुवादीनि पात्राणि समिधोदर्भसञ्चयान् ।  
[ अरणीं यूपस्तम्भं वा परकीयं द्विजोहरत् ॥  
स गत्वा नरकं घोरं क्लमिः समिधपूरितः । ]  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना महापापप्रणाशिनी ॥  
इक्ष्मसंग्रहणे राजन् शतमष्टोत्तरं जपेत् ।  
मुक्स्मुवादिषु पराक<sup>१</sup> मरण्यां तप्तसीरितम् ॥  
यूपस्तम्भे च चान्द्रं स्याद् इन्धने गव्यभक्षणम् ।  
दर्भेषु भारमात्रेषु प्राजापत्यं विधीयते ॥

स्त्रीणां पूर्व्ववत् ।

इति हेमाद्रौ इन्धनाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) दर्भसञ्चये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

अयं श्लोकः क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नापलभ्यः ।

(३) आरग्या इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ जलहरणप्रायश्चित्तमाह ।

मनुः —

परकीयं जलं हत्वा केदारार्थं द्विजोयदि ।  
आरामपीषणार्थाय अथवा शाकवृद्धये ।  
स एव नरकं गत्वा मण्डूकोजायते भुवि ।

गालवः —

आरामपीषणार्थं वा केदारार्थं जलं हरत् ।  
परकीयं द्विजोयस्तु तस्यैव नरके स्थितिः ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य मण्डूकोजायते महान्<sup>६</sup> ।  
तस्य दोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥  
एकेऽङ्गि शतगायत्री मासे तद्दशधा स्मृतम् ।  
वत्सरे त्वयुतं प्रोक्तमतजडं न निष्कृतिः ॥  
तृषात्तीयदि योविप्रस्तावन्मात्रं हरिद्यदि ।  
पीत्वा पञ्चाद्विचार्याऽथ शतं नामत्रयं जपेत् ॥

स्त्रादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ जलहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) अहेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) पारकीयं इति लिखितपुस्तकपाठः ।

३ पारकीयं इति लिखितपुस्तकपाठः ।

४ भवि इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।



अथ भक्ष्य-भोज्यहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अपूपं माषसम्भृतं तथा मुद्गसमुद्भवम् ।  
गोधूमानां विकाराणि भक्ष्याणि विविधानि वै ॥  
संयावं परमान्नं च चित्रान्नानि रुचीनिच ।  
चोष्यं लेह्यञ्च पेयञ्च <sup>३</sup>चित्रशाकानि यानिच ।  
<sup>४</sup>परकीयं द्विजोमोहाज्जिह्वाचापल्यतोहरेत् ॥  
तस्यैव जिह्वा पतति यमलोके सुदारुणे ।  
स पञ्चाद्भुवमासाद्य वायसोऽभून्न संशयः ॥

जावालिः—

गोधूमसम्भवं चैव तथा माषोद्भवं रुचि ।  
मुद्गसम्भवमन्यच्च तथा क्षीरसमुद्भवम् ॥  
संयावं परमान्नञ्च चित्रान्नानि <sup>५</sup>रुचीनिच ।  
पिष्टरूपाणि यावन्ति तथाफलसमुद्भवम् ॥  
तैलपक्वं क्षीरपक्वं <sup>६</sup>गुडपक्वं तथैवच ।  
चोष्यं लेह्यञ्च पेयञ्च <sup>७</sup>चित्रशाकानि यानि च ॥

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(२) विविधानि च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) चित्राशाकानि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) परकीया इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) रुचीनिच इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) गुडपाकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) चित्राशाकानि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



‘परकीयाणि योविप्रोजिह्वाचापल्यवान् हरेत् ।  
 तस्यैव जिह्वा<sup>१</sup>च्छिदेत यमदूतैर्भयङ्करैः ॥  
 तदन्ते भुवमासाद्य वायसत्वं हि विन्दति<sup>२</sup> ।  
<sup>३</sup>‘तस्यैवं निष्कृतिः’स्तेये कथिता मुनिपुङ्गवैः ॥  
 भक्ष्याऽपहरणे पश्चात् सम्पूर्णे वेदमातरम् ।  
 अल्पे शतं सहस्रञ्च <sup>४</sup>‘जपेन्नियमपूर्वकम् ॥  
 अन्नस्तेयी च चित्रान्ने सम्पूर्णे तप्तमाचरेत् ।  
 एतैः शुद्धिमवाप्नोति पुनर्देत्वा मृतिं हरेत् ॥

स्त्रयादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ भक्ष्य-भोज्यहरणप्रायश्चित्तम् ।

- 
- (१) पारकीयाणि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 (२) त्रिविधा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 (३) जायते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (४) तस्यैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (५) निष्कृतिरियं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 (६) जपं इति लेखितपुस्तकपाठः ।
-



अथ क्रमुक-रुद्राक्षहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

रुद्राक्षान् क्रमुकान् पूगान् परकीयान् द्विजोहरत् ।  
मद्यएव द्विजन्माऽसौ शिवद्रोही प्रजायते ॥  
महान्तं नरकं गत्वा जायते भुवि कौटकः ।

मार्कण्डेयः—

क्रमुञ्जान् यन्तु रुद्राक्षान् परकीयान् द्विजाऽधमः ।  
क्रयविक्रयलोभेन हरेद्यदि भुवःस्थले ॥  
मद्यएव महापापी यमलोकं समश्नुते ।  
भुवि पश्चात् स पापीयान् जायते पिटकाकृतिः ॥  
प्रायश्चित्तमिदं ब्रह्मन् पागशय्येण भाषितम् ।  
शताद्रूढं तु रुद्राक्षं हत्वा चान्द्रद्वयं स्मृतम् ॥  
शते पराकमले तु गायत्रीजपमाचरेत् ।  
शताद्रूढं महस्रं तु क्रमुकं वा हरेद्विजः ॥

---

१) अथ क्रमुकहरणप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) परकीयान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) कौटकाकृतिमिति क्रीत-काशीपुस्तकपाठः ।

४) चान्द्रायणं स्मृतं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) यः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्राजापत्यञ्च चान्द्रञ्च योजयित्वा यथाक्रमम् ।

अत ऊर्ध्वं महापापी निष्कृतिर्नैव विद्यते ॥

स्त्रादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ क्रमुक-रुद्राक्षहरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ गुडहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मार्कण्डेयः—

गुडमल्पञ्च<sup>२</sup> भारं वा पारक्यं योद्विजोहरेत् ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

तदन्ते भुवमामाद्य जायते मधुवृक्षकः ।

पराशरः—

योविप्रो लोभमोहेन परकीयं गुडं हरेत् ॥

अल्पं वा भारमात्रं वा स द्विजो<sup>३</sup> नरकं व्रजेत् ।

भुवि स्थावरतामेत्य तिष्ठत्याचन्द्रतारकम् ॥

भारप्रमाणं पूर्वोक्तम् ।

अल्पगुडे पराकः स्याद् भारे चान्द्रमुटाहतम् ।

<sup>४</sup>एवं संवत्सराद्गुडं पतितोऽभून्न संशयः ॥

स्वगादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ गुडहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) अहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) अल्पन्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) विप्र. इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) एवं चैववारात् इति क्रीत-काशीपुस्तकपाठः ।



अथ क्षीरहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

पारक्यमग्निहोत्रार्थमानीतं क्षीरमुत्तमम् ।  
द्विजोगोद्रव्यलोभेन मुषित्वा पापमाप्नुयात् ॥

गौतमः—

पारक्यमग्निहोत्रार्थमानीतं यो द्विजो हरित् ।  
मुषित्वा पापबाहुल्यमनुभूय भुवः स्थले ॥  
पशुहीनो भवेत् पापी कृतं कर्म स्मरन् विभी ।  
प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा शुद्धो<sup>२</sup> भवति निश्चयः ॥  
उपोष्य रजनीमेकां परेद्युर्गोजलं पिबेत् ।

एतदेकदैव हरणे प्रायश्चित्तम् । अभ्यासे द्विगुणम् । वत्सरान्ते  
चान्द्रायणम् । स्वप्नादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ क्षीरहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) अनुस्मरन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ शुभो भवति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ दध्याऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

गौतमः—

दधि तक्रं मधु द्रव्यं<sup>२</sup> पारक्यं<sup>३</sup> घृतमेव च ।  
नवनीतं द्विजोहत्वा नरकं याति दारुणम् ॥  
पुनर्भुवमुपागम्य पाषाणत्वमवा<sup>४</sup>प्नुयात् ।

जाबालिः—

पारक्यं दधि तक्रं वा नवनीतं घृतं मधु ।  
देवतार्थं द्विजार्थं वा विप्रार्थं वा गृहस्थितम् ॥  
द्विजोलीभातुरीयस्तु हरेत् तद्भारमानतः ।  
महान्तं नरकं गत्वा भुवि पाषाणतां व्रजेत्<sup>५</sup> ॥  
एकवारं दश जपेत् तक्त्रे दध्नि द्विजोत्तमः ।  
नवनीतं मधुद्रव्ये ह्यष्टोत्तरशतं जपेत् ॥  
द्विवारं तु सहस्रं स्यात् बहुवारंऽयुतं स्मृतम् ।

<sup>१</sup>नवनीतमधुनोद्विगुणम् । बहुवारं संवत्सरे चान्द्रायणम् । <sup>२</sup>नवनीतं  
मधुनि च महाचान्द्रायणम् । एतद्वर्षाद्द्विगुणम् । घृते विगेषमाह—

१. आहति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. क्रव्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. अवाप्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. पाषाणवद्धत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. नवनीतं मधुनोद्विगुणं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

६. नवनीतमधुना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



दध्याऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

२८५

पलहये सहस्रं स्याद् अयुतं दशसंख्यया ।

शतादूर्द्ध्वं महादेव्याः 'लक्ष्मणान्त' विशुध्यति ॥

संवत्सरादूर्द्ध्वं पतितप्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ दध्याऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(२) लक्ष्मणात् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

---



अथ त्रिकटुकहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

मरीचं पिप्पलीं शुण्ठिं सर्वरोगहरं वरम् ।

सर्वपापहरं दिव्यं पारक्यं यो हरेद्विजः ॥

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ।

जावालिः—

मरीचीं पिप्पलीं शुण्ठिं सर्वपापहरं महत् ।

सर्वरोगहरं पुण्यमपवर्गफलप्रदम् ॥

<sup>२</sup>लोभेन यो हरेत् पापी महान्तं नरकं व्रजेत् ।

पलद्वये पराकः स्यात् प्राजापत्यं दशात्मके ॥

<sup>३</sup>शते पलेषु चान्द्रं स्यात् सहस्रे स्तेयभाग्भवेत् ।

त्रिकटुकस्य पलसहस्रस्तेये <sup>४</sup>स्तेयप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ।

स्त्रादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ त्रिकटुकहरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) सुघित्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) शतं फलं सुचान्द्रं स्यात् इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) प्राजापत्यं कृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ रसौषधिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

मार्कण्डेयः—

पूर्णचन्द्रोदयं चैव वसन्तकुसुमाकरम् ।  
आनन्दभैरवञ्चैव मृगाङ्गं राजपूर्वकम् ।  
भूपतिं चाग्निपुत्रञ्च स्वर्णभञ्ज तथैवच ॥  
ज्वराङ्कुशं विदाहञ्च तथा ग्रहकवाटकम् ।  
अन्यान्यौषधजालानि शम्भुबीजोद्भवानि च ॥  
गन्धकं पार्वतीबीजं सिन्दूरं हरितालकम् ।  
अभ्रकं तालकञ्चैव कुसुमं वाऽऽत्मसम्भवम् ॥  
लाक्षातैलं हस्तिगन्धं कुष्माण्डं सञ्चृतं तथा ।  
एतेष्वन्यतमं हत्वा द्विजश्चाण्डालतां भजेत् ॥

तेषु च औषधेषु मध्ये एकं वा विप्रोचरेत् तस्य प्रायश्चित्तमाह

गौतमः—

रसौषधानि ओहत्वा द्विजः पापं विदन्नपि ।  
स्तेयदोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं स<sup>२</sup> आचरेत् ॥  
प्राजापत्यं निष्कमात्रे स्वर्णमात्रे विधुं चरेत् ।  
पलमात्रे भुवः क्रान्तिं द्विपले पतितोभवेत् ॥

(१) आहृति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) वसन्तं कुसुमाकरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) व्रजेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ प्रायश्चित्तमटीरितं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



भुवः क्रान्तिं भूपदक्षिणम् । 'एवमादिषु स्त्रयादीनामेवं  
वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ रसौषधिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१' एवं मृतादिषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ गृहोपकरणाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

‘मुसलं दृषदञ्चैव उलूखलमनन्तरम् ।  
वरटं वेणुपात्रञ्च शूर्पं दाम तथैवच ॥  
‘वृहद्विलञ्च निश्रेणीं <sup>४</sup>मृन्मयं भाण्डमेवच ।  
दारुपात्रं कुण्डलिनीं योहरेद्विजनायकः ॥  
न तस्य निष्कृतिर्नास्ति पुनः संस्कारमर्हति ।

पुनः संस्कारइति पटगर्भसंस्कारः<sup>५</sup> ॥

यज्ञोपवीतद्वितयं गायत्रीदानमेव च ।  
ब्रह्मोपदेशोविहितः पञ्चगव्यमनन्तरम् ॥  
उपासनं प्रकर्त्तव्यं पुनः कर्मनिवृत्तये ।

यत्र यत्र पुनः कर्मपातः तदाह—

देवलः—

यत्र यत्र पुनः कर्म मुनिभिः परिकीर्तितम् ।  
तत्रैव पटगर्भेण विरजाहोमएव च ॥  
ब्रह्मोपदेशोगायत्री पञ्चगव्यमतः परम् ।  
पाहित्रयोदशञ्चैव पुनः संस्कारउच्यते ॥

तदाह

- 
- (१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।  
(२) मुसलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
(३) वृहद्विलञ्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
(४) मृणालं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
(५) पटगर्भप्रकार इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मनुः—

मुनिभिर्यत्र 'वोक्तं' स्यात् पुनः संस्कारमादरात् ।

पटगर्भविधानेन तत्र तत्रैव कारयेत् ॥

षोडशमहादानेषु तत्तद्दानप्रतिग्रहे पटगर्भविधानेन सर्व्वं  
कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ गृहोपकरणाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) यत्र वोक्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तत्तद्दाना प्रतिग्रहे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ शस्त्राऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

कुन्तं खड्गञ्च परशुं भिन्दिपालं<sup>२</sup> धनुस्तथा ।  
शस्त्रं खनित्रं मुसलं चक्रं खेटकसंज्ञितम् ॥  
तूणीरं भिन्दिपालञ्च<sup>३</sup> गदादण्डं तथैवच ।  
एतानि शस्त्रजालानि हरेद्विप्रः सकृद्यदा ॥  
महापातकमासाद्य नरके वासमश्नुते ।

भारद्वाजः—

शस्त्रं खनित्रं मुसलं खेटकं लाङ्गलं तथा ।  
[ तूणीरं भिन्दिपालञ्च गदादण्डं तथैवच ॥ ]  
कुन्तं खड्गञ्च परशुं शङ्खं शल्यं धनुस्तथा ।  
एतानि शस्त्रजालानि हिंसाहेतूनि योद्विजः ॥  
हरेन्नरकमाप्नोति कारुकोभुविजायते ।  
एतद्दोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
प्राजापत्यं विदित्वा तु अज्ञानात् यावकं चरेत् ।  
पश्चाद्वि पञ्चगव्यस्य प्राशनं विधिपूर्वकम् ॥

---

(१) आहृति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) भिण्डपालं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) गदां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) भरद्वाज इति क्रीत-काशीपुस्तकपाठः ।

[ ] इदं श्लोकार्धं क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नोपलभ्यते ।



तत्तत् कृत्वा द्विजः शुद्धः क्षत्रियोऽपि यदा हरेत् ।

'विप्राश्च द्विगुणं कुर्यात् सर्वतः पापशान्तये ॥

स्त्रीणामर्द्धं वेदितव्यम्--

इति हेमाद्रौ शस्त्राऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(५) विप्रश्चेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ मार्गनिरोधप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

योविप्रः पतितैः सार्द्धमरण्ये<sup>२</sup> मार्गमध्यतः ।  
वस्त्रं धान्यं धनं ताम्रं पात्राऽऽदिकमुपाहरेत् ॥  
स विप्रोनरकं गत्वा कालसूत्रमवा<sup>३</sup>प्नुयात् ।  
तदन्ते भुवमासाद्य<sup>४</sup> भिक्षजातित्वमाप्नुयात् ॥

मार्कण्डेयः—

विप्रोमलिस्तुचैः सार्द्धमरण्ये मार्गरोधकृत् ।  
वस्त्रं धान्यं धनं ताम्रं पात्राऽऽदिकमुपाहरेत् ॥  
स विप्रोयमलोकेऽथ महद्भयमवाप्य च ।  
भुवमासाद्य पापात्मा भिक्षवान् जायते भुवि ॥  
तस्य दोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ।  
[ एकत्र दिवसे राजन् प्राजापत्यमुपाश्रितम् ॥ ]  
मासे चान्द्रमृती प्रोक्तं महाचान्द्रमुदीरितम् ।  
वत्सरान्ते मुनिश्रेष्ठ सुवर्णस्तेयमाप्नुयात् ॥

१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२) शरण्ये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४) जायते भुवि रोगवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) द श्लोकाद् लेखितपुस्तके नास्ति ।



वत्सरान्ते सुवर्णस्तेयप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति । क्षत्रियादीनां  
पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ मार्गनिरोधप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ तटाकाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

तटाकं कूपकासारौ वनं क्षेत्रं द्विजोहरेत् ।  
बलाद्वा चौर्यरूपेण हीनमूल्येन वा नृप ॥  
तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति यमलोकात्कदाचन ।  
तदन्ते भुवमासाद्य जायते<sup>२</sup> कुक्षिरोगवान् ॥

मात्स्ये—

वनं तटाकं कूपं वा कासारं क्षेत्रमेव वा ।  
पारक्यं यो द्विजोमोहात् मुञ्चाति द्रव्यलोभतः ॥  
हीनमूल्येन चौर्येण बलाद्वा<sup>३</sup> ग्रामणीयतः ।  
न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकाद् भयङ्करात् ॥  
ततोभुवमुपागम्य कुक्षिरोगीह जायते ।  
तस्यैव निष्कृतिरियं मुनिभिः परिकीर्तिता ॥  
तप्तं सक्तत् द्विजोहत्वा पराकं वल्मरे स्मृतम् ।  
अतर्ज्जं शृणुष्वेदं स्वर्णस्तेयीति कथ्यते ॥

(१) तडागाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तडागं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) भुवि रोगवान् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) ग्रामणो यत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



संवत्सरादूर्ध्वं 'स्वर्णस्तेयप्रायश्चित्तं' कृत्वा शुध्यतीति तात्पर्यम् ।  
क्षत्रियादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ<sup>१</sup> तटाकादिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) स्तेयप्रायश्चित्तमित्येव लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तडागादीति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ परिधानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

ग्रामणीः प्राड्विवाकश्च राजद्वारे पुरोहितः ।  
मन्त्री राजगृहे राजन् स वा यजनमार्गतः<sup>१</sup> ॥  
प्रजाभ्यः कार्यमिद्वयं मूल्यं भागार्हतः क्रमात् ।  
योहरेत् सततं पापी स वै नरकमश्नुते ॥

मार्कण्डेयः—

<sup>२</sup>मन्त्री राजगृहे तात राजद्वारे पुरोहितः ।  
ग्रामणीः प्राड्विवाकश्च गृहक्षेत्रादिषु क्रमात् ॥  
प्रजाभ्योमूलहारी<sup>३</sup> यस्तामां काय्योऽभिवृत्तये ।  
सएव नरकस्थायी यावदाभूतसंज्ञवम् ॥  
तदन्ते भुवमामाद्य मारजारत्वमवाप्नुयात् ।

गौतमः—

<sup>४</sup>राजा भारमनुवाह<sup>५</sup> ? प्राड्विवाकः पुरोहितः ।  
ग्रामणीर्ग्राममध्ये यः चत्वारः पापभागिनः ॥  
प्रजाभ्योधनमादाय दद्याद् दानादिकं द्विजः ।  
नरकस्थानमामाद्य मारजारोजायते भुवि ॥

---

१ आहिति क्रीतपुस्तकं नास्ति ।

(२) मन्त्रीजननमार्गतः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ मन्त्रिराजगृहे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मूल्यहारिये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५ राजा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



पापं प्रतिग्रहीतव्यस्तद्वै तत्पुरोहितः ।  
 ग्रामणीः सकलं पापं मन्त्री कार्यानुमाधने ॥  
 तत्पापं सकलं प्राप्य यमकूपे निमज्जति ।  
 गृह्णन्नेवादिषु स्थित्वा दर्शनार्थं धनं हरेत् ॥  
 दातुः सर्वानि पापानि तत्क्षणादाप्नुयात्स वै ।  
 एकवारि तु चान्द्रं स्यात् राजद्वारे पुरोहिते ॥  
 महाचान्द्रं द्विवारे तु त्रिवारे 'स्वर्णहार्यसौ ।  
 प्राड्विवाकस्य कथिता निष्कृतिः 'पापहारिणी ॥  
 रूपके पञ्चगव्यं स्यात् प्राजापत्यं तु निष्कके ।  
 स्वर्णमात्रे तु चान्द्रं स्यात् 'ततो नास्त्येति निष्कृतिः ॥

पूर्वोक्ताश्चत्वारः [ त्वेतव्यायश्चित्तं परिशोध्य ] तत्तव्यायश्चित्तं  
 कृत्वा शुद्धिमाप्नुयुः । वर्षाद्रूढं पतिताएव, प्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धि  
 माप्नुयुः । नाचेन्न शुद्धाः । धान्यवस्त्रादिहरणेऽप्येवमेव अर्द्धपाद-  
 क्रमेण योजनीयम् । क्षत्रियादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ परिधानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

३. अथ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. पापहारिणि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. ततो नास्ति ह निष्कृतिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

अथ पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।



## अथ कूटसाक्षिप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः—

व्यवहारे च कलहे प्रायश्चित्तादिकर्मसु ।  
कूटसाक्ष्यं द्रव्यलोभाद् यो विप्रो वदतेऽनृतम् ॥  
तस्य पुत्राश्च पौत्राश्च तदा नष्टत्वमाप्नुयुः ।  
यमलोकमुपागम्य अनुभूय महद्भयम् ।  
पुनर्भुवमुपागम्य पुत्रहीनो हि जायते ॥

मार्कण्डेयः—

व्यवहारेषु कलहे प्रायश्चित्तादिकर्मसु ।  
धनं गृहीत्वा यो विप्रः कूटसाक्ष्यं दहेत् वैश्व ॥  
तस्यैव पुत्रपौत्राश्च तदा नष्टत्वमाप्नुयुः ।  
यमलोकादुपागम्य निष्पुत्रत्वमवाप्नुयात् ।  
तस्य देहविण्मुडाद्यं महाचान्द्रमुदीरितम् ।

धर्मशास्त्रेष्वनृतमुक्ता द्विजवादे महाचान्द्र प्रायश्चित्तम् । धर्म-  
शास्त्रेष्वनृते प्राजापत्यम् । इतरत्र कायकच्छम् । तदा न

मनुः—

द्विजवादे महाचान्द्र धर्मशास्त्रे नष्टदेहः ।  
इतरत्र विद्वद्विदुः कायकच्छम् ।

१. कूटसाक्ष्यं कृतपुस्तके नास्ति ।

२. कूटसाक्ष्यं इति लिखितपुस्तकपाठः ।

३. पुत्राः पौत्राश्च इति कृतपुस्तकपाठः ।

४. द्विजम दे इति कृतपुस्तकपाठः ।



अनृते तप्तकच्छं स्यात् मौल्यं धृत्वा द्विजाधमे :  
 अनृते रूपकं शतं राजा तं दण्डयेत् सुधीः ॥

इति हेमाद्रौ कूटमान्वित्तुः प्रायश्चित्तम् ।

---

(१) द्विजातय इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ पुस्तकाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः—

पुस्तकं फलकं सूत्रं लेख्यं बन्धनमेव च ।

अपहृत्ता द्विजोयस्तु स महापापमाप्नुयात् ॥

भूलोकं समुपागम्य महामूकोभवेदिह ।

महानारदीये—

लेख्यं सूत्रं बन्धनं वा पुस्तकं फलकं तथा ।

हृत्वा वै ब्राह्मणो लोभान् नरकं याति दारुणम् ॥

भूलोकं समुपागम्य महामूकोभवेदिह ।

तत्तद् द्रव्यं पुनर्दत्त्वा पश्चात्तापसमन्वितः ॥

प्राजापत्यं चरेत् कृच्छ्रं नदा देहविशुद्धये ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

इति हिमाद्रौ पुस्तकाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

१। अर्चति कीर्तयितुं नास्ति

२। अन्वयः नमस्ति लेखितपुस्तकपाठः ।

३। भूलोभातिभवेति इति तर्जितपुस्तकपाठः ।

४। यस्तु तद्विजोभाति इति तर्जितकीर्तयितुं नास्ति ।



अथ शालग्रामाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

शालग्रामं शिवलिङ्गं प्रतिमां चक्रपाणिनः<sup>१</sup> ।  
घण्टामुपस्कारं विप्रोयी हरेत् पातकोत्तमः ॥  
देवद्रोही स विज्ञेयः सर्वधर्मवह्निष्कृतः ।  
मृत्वा नरकमाप्नोति जायते भुवि चौरवान्<sup>२</sup> ॥

मार्कण्डेयः—

शालग्रामं शिवलिङ्गं प्रतिमां चक्रपाणिनः<sup>३</sup> ।  
घण्टामुपस्कारं विप्रोयीहरेत् पापबुद्धिमान् ॥  
नरकं दारुणं गत्वा जायते भुवि जारवान् ।  
तस्यैव निष्कृतिरियं कथिता मुनिपुङ्गवैः ॥  
शालग्रामे तु चान्द्रं स्यात् शिवलिङ्गे तथैवच ।  
[ रत्नलिङ्गे महाचान्द्रं प्रतिमायां तथैवच ॥ ]

(१) शालग्राम इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) शाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) शालग्रामशिला इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) चक्रपाणिनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) चौरवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) शाल इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) शालग्रामशिलां लिङ्गं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(८) चक्रपाणिनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(९) शाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

अथ पाठः क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नास्ति ।



प्राजापत्यं चक्रपाणी इतरेषु तथैवच ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति नान्यथा गतिरस्तिहि ॥

स्त्रोणामर्द्धं क्षत्रियादीनां पूर्व्ववत् ।

इति हेमाद्रौ शालग्रामाऽऽदिहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

इति मलिनीकरणप्रायश्चित्तम् ।

---



अथाऽप्राप्तीकरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ चाण्डालीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

चाण्डालीं ब्राह्मणोगत्वा पञ्चवाणातुरः सज्जत्  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति 'कार्शीपाग्निवधादृते'<sup>२</sup> ॥

एतज्ज्ञानात् सकृद्व्रजनविषयम् ।

मार्कण्डेयः—

ब्राह्मणोयस्तु चाण्डालीमज्ञानाद् रन्तुमुन्मनाः ।

गत्वा तत्र महत् पापं कृत्वा तत्र वधोऽग्नितः<sup>३</sup> ॥

अग्निवधइति कार्शीपवधः । चाण्डालीगमने हेतुमाह 'कामा  
तुराणाम् ।

कुचीं मुखविनामध्व दृष्टि<sup>४</sup> 'भ्रायाः शिरोरुद्धाः ।

एतान् विनामान् चाण्डाल्या दृष्ट्वा तत्र प्रवर्त्तते ॥

मातृतः पितृतश्चैव कुलमेकोत्तरं गतम् ।

नरके निवसत्येव यावदाभूतसंप्रवम् ॥

(१) आर्च्यते क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) कार्शीपाग्निवधादिति तैत्तिरीयतपुस्तकपाठः ।

(३) इति इह क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कायिके तुराणा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) भावा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अतस्तद्दर्शनं भाषां वर्जयन्ति महीजसः ।

मत्स्यपुराणे—

द्विजोयः प्रत्यहं पापौ चाण्डालीं मनसा स्मरन् ।

रमिष्यामीति <sup>१</sup>मोहेन स्मृत्वा पूर्वं तदुद्भवान् ॥

विलासानित्यर्थः ।

सकृत् स्मरणमात्रेण महान्तं नरकं व्रजेत् ।

गमने विषेषमाह ।

भारद्वाजः—

चाण्डाल्या<sup>२</sup> गमनं कुर्यां गमिष्यामि तदालयम् ।

इति योमनसि स्थाप्य गमनाय<sup>३</sup> उपक्रमेत् ॥

पदे पदे ब्रह्महत्यापापमेव समश्नुते ।

यमलोके महत्कष्टं <sup>४</sup>प्राप्नोति महदद्भुतम् ॥

यमदण्डप्रकारमाह ।

महाराजविजये—

क्लिनन्ति पादौ गमने जिह्वाच्छेदं वचस्यपि ।

आलिङ्गने हृदि च्छेदः कुचयोः पीडने करौ ॥

चुम्बने <sup>५</sup>दन्तघातः स्यात् तत्सङ्गे शिश्रुमोक्षणम् ।

एवं परोक्षे कुरुते यमीनास्त्यत्र संशयः ॥

(१) यो बुद्ध्या इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) चाण्डालीगमनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) गमनायोपक्रमे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) अवाप्य इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) दण्डघातः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

दिनमेकन्तु चाण्डालीं गत्वा विप्रः स्वमालयम् ।  
 सर्वेषां स्पर्शनं कृत्वा पापं मनसि 'गूहयन् ॥  
 ते सर्वे समतां यान्ति दिनमेकमिदं ततः<sup>१</sup> ।  
 तेनैव सहसंसर्गमवाप्य गृहवामिनः ॥  
 कृत्वा <sup>२</sup>तत्साम्यमापुस्ते विचार्यैव प्रवर्त्तयेत् ।  
 मासमेकं महापापी गृहे सङ्गरुहत् सदा ॥  
<sup>३</sup>एतैर्जनैर्वहिष्कार्यीयथा ज्ञातोमहाजनैः ।  
 तद्गृहस्था यदा ग्रामे ज्ञात्वा संसर्गमाप्नुयुः॥  
 ग्रामस्थास्ते जनाः सर्वे यथा<sup>४</sup> ज्ञाता जनैस्तथा ।  
 ग्रामं दग्ध्वा तु निःशेषं कृत्वा प्रायोपवेशनम् ॥  
 गतिर्वामरणं तेषां <sup>५</sup>तद्गृहस्थैर्विना सदा ।

देवीपुराणे—

तीर्थे <sup>६</sup>महाजनासङ्गे ह्यग्निदाहे महाभये ।  
 द्विजो ज्ञात्वा तु चाण्डालीं सकृन्नृत्वा तु शङ्किनीम् ॥  
 चाण्डालीं तु <sup>७</sup>पुनर्मत्वा देहशुद्धिं यदीच्छति ।

(१) गूहवान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मतः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ तत्साम्यमापुस्ते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ एते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५ यथा यातो जनैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) तद्गृहस्थे विनाशुना इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(७) महाजनासङ्गेऽग्निदाहे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

८ पुनर्मत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तदा मनः समाधाय चापाग्रे प्रत्यहं मुदा ।

स्नानेन वासमात्रेण शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

नारदः—

<sup>१</sup>चाण्डालीति द्विजः पूर्वमज्ञात्वा कामपीडितः ।

पश्चाज् ज्ञात्वा तु चाण्डालीं शुद्धिमिच्छन् मनस्यतः ॥

रामसेतुमुपागम्य चापाग्रे प्रत्यहं शुचिः ।

प्रातः स्नात्वा मासमात्रं पूर्वजः शुद्धिमाप्नुयात् ॥

गौतमः—

द्विजः कामातुरोगच्छेदविचार्य जनङ्गमाम् ।

पश्चाच् <sup>२</sup>चाण्डालजायेति ज्ञात्वा शुद्धिपरायणः ॥

रामेश्वर-धनुष्कोट्यां प्रातः स्नानादिशुध्यति ।

मासमात्रेण राजेन्द्र नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

जाबालिः—

<sup>३</sup>चाण्डालीं रूपसम्पन्नां दृष्ट्वा विप्रः सकृद्भ्रजन् ।

स <sup>४</sup>चाण्डालममोज्ञेयः कारीषवधमर्हति ॥

एकस्मिन् दिवसे राजन् द्विवारं रमते द्विजः ।

१ चाण्डालीति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) चाण्डालजाया इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) चाण्डालीं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) चाण्डालममः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मातृगामी स विज्ञेयः राजा तं दण्डयेन्मुदा ।

शिश्रं मवृषणं च्छित्त्वा 'निर्वास्थोविषयादहिः ॥

जातूकरणः—

द्विजश्चाण्डालसंसर्गं ज्ञात्वा<sup>१</sup> कृत्वा विचारयन् ।

मासं वा बहुमासं वा पक्षं वापि दिनत्रयम् ॥

प्रत्यहं<sup>२</sup> 'स्वाऽऽस्थिते ग्रामे गृहे वा मेलनं चरेत् ।

ज्ञात्वा तथैव ग्रामस्थास्ते सर्वे गृहवासिनः ॥

ग्रामं गृहं तदा दग्ध्वा अर्पयेयुर्नृपाय तम्<sup>३</sup> ।

राजा सम्यग्विचार्य्वाऽऽथ दण्डयेत् पूर्व्ववत् क्रमात् ॥

निर्वास्थोविषयाद्राज्ञा यावत् प्राणावधारणम्<sup>४</sup> ।

तेन शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा गतिरस्ति हि ॥

दिनत्रये तु संसर्गं ग्रामे वा स्वगृहेऽपि वा ।

क्षालयित्वा 'ततोऽम्भोभिर्मृन्मयानि परित्यजेत् ॥

सर्व्वं सचेलं स्नात्वा तु चक्रधातारं<sup>५</sup> मुत्तमम्<sup>६</sup> ? ।

दशरात्रेण संसर्गं शोधयित्वा गृहादिकान् ॥

(१) निर्वाणः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) स्वस्थितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) राज्ञे तं विनिवेदयेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः विनिवेदयेदित्यत्र प्रत्यवेदयेत्  
इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) प्राणावधारणः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) ततोविप्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(७) चक्रधारं तमुत्तमं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



ते सर्वे पूर्ववत् स्नात्वा षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 मासमात्रेण संसर्गे निवासान् शोधयेत्तदा ॥  
 स्नात्वा तु विधिवद्भक्त्या तप्त <sup>१</sup>कृच्छ्रशतं चरेत् ।  
 वर्षमात्रेण संसर्गे सहशय्याऽऽसनादिभिः ॥  
 दग्धा गृहांश्च निःशेषान् ते सर्वे पतितास्तदा ।  
 यदा शुद्धिमभीप्सन्तस्तदा ते विप्रपुङ्गवाः ॥  
 पतितस्य यथाप्रोक्तं मुनिभिः सत्यवादिभिः ।  
 तद्वै कुर्युस्तदा सर्वे नान्यथा शुद्धिमाप्नुयुः ॥

नागरखण्डे—

यदा यदा द्विजोराजन् पञ्चवाणातुरः सदा <sup>२</sup> ।  
 चाण्डालीं यदि पापात्मा रन्तुकामोगृहं व्रजेत् ॥  
 तथा सह यदा कुर्यात् संसर्गं <sup>३</sup>लोकगर्हितम् ।  
 दिनत्रये स पापीयान् कारोषवधमर्हति ॥  
 दशरात्रं रन्तुकामः चाण्डालीं पापरूपिणीम् ।  
<sup>४</sup>स्वमुष्कं सहसाच्छित्त्वा दक्षिणां दिग्मन्वियात् ॥  
 मृतः शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा कुरुनन्दन ।  
 तद्गर्भधारणे विप्रोवर्षादूर्ध्वं स पापभाक् ॥  
 चाण्डालमदृशः साक्षात् पितृभिः सह मज्जति ।

(१) व्रतं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तत्कर्त्तव्यं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तदा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) लोकविद्विर् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

स्वमुष्कं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मनुः —

अज्ञानान् मुखजः पूर्व्वं चाण्डालीति न संस्मरन् ।  
 रमयामास कामार्त्तः पश्चाज् ज्ञाते तु तत्कथम् ॥  
 रेतःसेकात् द्विजः पूर्व्वं ज्ञात्वा 'चाण्डालचेष्टया ।  
 सचैलं स्नानमासाद्य विप्रेभ्यो 'ज्ञापयेन्मुदा ॥  
 तदनुज्ञामवाप्याऽथ चापाग्रं वेगतोव्रजेत् ।  
 प्रातः स्नात्वा मासमात्रं शुद्धिमाप्नोति पूर्व्वजः ॥  
 तस्योपनयनं प्रोक्तं पटगर्भविधानतः ।  
 ज्ञात्वा द्विजसु चाण्डालीं मल्लक्ष्णेद्दिनं मुदा ॥  
 'घृतेनाऽऽलिप्तदेहः सन् कारीषवधमाचरेत् ।  
 दिनत्रयं यदा गच्छेत् व्रीहीणां रज्जुभिस्तथा ॥  
 सर्व्वाङ्गं वेष्टयित्वा च राजा तं दाहयेत्तदा ।  
 मासमात्रं द्विजोगच्छेद् ग्रामे संसृष्टिमाचरन् ॥  
 राजा तन्मुष्कमाच्छिद्य निधायाऽय तदञ्जली ।  
 'प्रेषयेद्दक्षिणामागां 'तदा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
 ग्रामस्थाः पूर्व्ववद् गृहान् दग्ध्वा सर्व्वं हि पूर्व्ववत् ।  
 तद्गर्भधारणाद्विप्रो रन्तुकामोजनङ्गमाम् ॥

१) चाण्डालचेष्टया इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) ज्ञायते मुदा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) घृतेन लिप्तदेहः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) प्रेषयेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) सृत शुद्धिमवाप्नुयात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



राजा भृत्यैः समानीय विचार्य बहुवार्त्तया ।  
 शकटं तं समारोप्य <sup>१</sup>चाण्डालैरसिपाणिभिः ॥  
 तन्मांसं तैश्च शङ्खित्वा मुदा तं भक्षयेत्पुरे ।  
 अटित्वा घोषयन् वाद्यं पुरद्वारे विमर्जयेत् ॥  
 मृत्वा शुद्धिमवाप्नोति न दाहो नोदकक्रिया ।

गौतमः—

विप्राङ्गना यदा देवाद् रन्तुकामा जनङ्गमम् ।  
 तस्या अपि प्रकर्त्तव्यं प्रायश्चित्तमिदं द्विजैः ।  
 क्षत्रियश्चोरुजोगच्छेत् विप्रस्याङ्गं प्रकल्पयेत् ॥

द्विजाङ्गनायाः शङ्गायां तदा समस्तं गर्भधारणाऽऽदिकं विचार्य  
 राजा कर्णेनासिके च्छेदयित्वा प्रवासयेत् । तस्या <sup>२</sup>न बधः  
 स्वीत्वात् । तदेवाह ।

जावालिः—

<sup>३</sup>विप्रा गत्वा यदा राजन् <sup>४</sup>चाण्डालं जनशङ्किता ।  
 तदा विचार्याऽऽ गर्भान्तं राजा तां दण्डयेन्मुदा ॥

१ चाण्डालैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ सामान्तः जणतः स्थित्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) सम्बन्ध इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

४) विप्रः इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

५) जनैश्चाण्डालशङ्किनी इति लेखितपुस्तकपाठः ।



नासाकर्णौ वापयित्वा निर्व्यास्या <sup>१</sup>पट्टनादहिः ।

त्यागएव वरीराज्ञा न वधः स्त्रीषु धर्मतः ॥

क्षत्रियवैश्याङ्गनानां चण्डालसंसर्गश्चेत् तदा सम्यक् विचार्य [दण्डः  
कर्त्तव्यः] विप्रस्त्रीषु न कारोषवधएव ।

मनुः—

हयोर्नारी यदा पापै <sup>२</sup>चाण्डालैर्यदि शङ्किनी ।

तदा सम्यग्विचार्याऽथ कारोषवधमाचरेत् ॥

गर्भं गर्भं तदाच्छित्वा शिशुं तं भुवि निक्षिपेत् ।

पूर्ववद्वाहयेत् <sup>३</sup>पापां न त्याज्या जनवल्लभैः ॥ इति

तस्मिन् ग्रामे राजाऽभावे तं पापिष्ठं निगलैर्वद्वा राजान्तिकं  
प्रेषयेयुः । विप्रैर्विप्राज्ञा कर्त्तव्या । न हिंसादिः । यज्ञोपवीता-  
दिकं चूटित्वा वहिष्कार्यः ।

इति हेमाद्रौ चाण्डालीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१. पत्तनात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ ] क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

२. चाण्डालैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. पापी इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ तुरुष्कीगमनप्रायश्चित्तमाह' ।

देवलः -

चाण्डालश्च तुरुष्कश्च द्वावेतौ तुल्यपापिनौ ।

तदङ्गना तथा ज्ञेया विप्रैः पापभयातुरैः ॥

चाण्डालस्पर्शने राजन् सवस्त्रं स्नानमाचरेत् ।

सम्भाषणे <sup>१</sup>द्विजैर्भाषा दर्शने भानुदर्शनम् ॥

तच्छायास्पर्शनेनैव पूर्व्ववत् स्नानमाचरेत् ।

तदुच्छिष्टेन संस्पृष्टः प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ।

शिखाणिकायां लालायां श्लेष्मसङ्गे विशेषतः ॥

मृद्भिः <sup>२</sup>प्रक्षालयेद्यत्नात् तं देशं द्वित्रिसंख्यया ।

शिखाणिकास्पर्शने मृदा एकवारं क्षालयेत् । लालास्पर्शे द्विवारम् ।

श्लेष्मस्पर्शे त्रिवारम् । वदनस्पर्शने मृदैकविंशत्या क्षालयित्वा द्वादश-

गण्डूपैः पूतात्मा तद्दिनं समुपोष्य परेदुः पञ्चगव्यं पीत्वा

शुद्धिमाप्नोति । अतो दूरतएव त्याज्यः<sup>३</sup> । तदेवाऽऽह ।

मनुः—

युगं युगद्वयञ्चैव त्रियुगञ्च चतुर्युगम् ।

चाण्डालपतितोदक्यासूतिकानामधः<sup>४</sup> क्रमात् ॥ इति

तदेवाह—

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति । (२) चाण्डालश्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) द्विजं भाषा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) प्रक्षालयित्वा तु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) न्याग इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) अथ क्रमान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



देवलः—

‘शिखाणिकायामिकामृत्तलायां तु इयं स्मृतम् ।  
 श्लेषमङ्गं त्रयः प्रोक्तास्तदेष चालनाक्रमः’ ॥  
 आस्यस्पर्शं महत्पापं <sup>१</sup>मृन्मयैस्त्वेकविंशतिम् ।  
 तद्देवं चालयित्वा तु <sup>२</sup>गण्डूषान् द्वादशाऽऽचरेत् ॥  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।

मार्कण्डेयः—

तुरुष्कीं यो द्विजो गच्छेत् पञ्चवाणातुरः सकृत् ।  
 अज्ञानाज् ज्ञानतो वापि पूर्ववत् शुद्धिरीरिता ॥

मनुरपि—

ज्ञात्वाऽज्ञात्वा तुरुष्कीं यो द्विजः कामातुरः सकृत् ।  
 गच्छेत् स शुद्धिमाप्नोति <sup>३</sup>चाण्डाल्यागमने यथा ॥ इति  
 विप्रस्य तुरुष्कीगमने प्राप्ते ग्रामे खण्डहाटिसंमेलने सकृद्विन-  
<sup>४</sup>पन्न-माम-संवत्सरगतादीन् विचार्य <sup>५</sup>चाण्डालीगमनोक्तप्रायश्चित्तं  
 कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नान्यथा ।

१) शिखाणिका मृदेका स्यात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) चालने क्रमः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) मृन्मयैस्त्वेक विंशतिः इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

४) गण्डूषान् द्वादशधाऽऽचरेत् इति लेखित-क्रीतपुस्तकपाठः ।

५) चाण्डाल्याः इति लेखितपुस्तके पाठः ।

६) मय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

७) चण्डाला इति लेखितपुस्तकपाठः ।



नारदः—

पापं प्रकाशयेद्दोमान् पुण्यं सम्यग्विगूहयेत् ।

पापं यातीह नष्टत्वं तस्मात् पापं न गोपयेत् ॥

चाण्डालतुरुष्कयोरीषदुभेदीनास्ति । तस्मात् पूर्वोक्तं प्रायश्चित्तं  
कृत्वा शुद्धोभवति ।

इति हेमाद्रौ तुरुष्कीगमनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ षोडशविधचाण्डालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह ।

पराशरः

रजकश्चर्मकारश्च नटी<sup>१</sup>बुरुड़एवच ।

कैवर्त्तमेदभिक्षाश्च स्वर्णकारस्तु सौचिकः<sup>२</sup> ॥

तक्षकस्तैलयन्त्री च सूनुश्चक्री तथा ध्वजी ।

नापितः कारुकश्चैव षोडशैते जनङ्गमाः ॥

ग्रामचाण्डाला इत्यर्थः । तत्पत्न्याश्च तद्वै ताज्याः । विप्रैः षोडश-  
विधानां पत्नीगमने पृथक् पृथक् प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

रजकीं युवतीं ग्राम<sup>३</sup>चाण्डालीं योद्विजोरमेत् ।

सक्तदञ्जानतो राजन् ज्ञात्वा शुद्धिमथाऽचरेत् ॥

जाबालिः—

रजकीं ग्रामचाण्डालीं अज्ञानाद्वाह्यणोरमेत् ।

पञ्चवाणातुरः पश्चात् प्रायश्चित्तो भवेद्द्विजः ।

लिङ्गपुराणे —

द्विजः कामातुरो ग्राम<sup>४</sup>चाण्डालो वज्रशाऽऽह्वयाम् ।

अज्ञानाद्रमयित्वाऽपि प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

(१) षोडशविधचाण्डालगमने प्रायश्चित्तमित्येव प्रातःपुस्तकपाठः ।

(२) बुरुड़ इति प्रातःपुस्तकपाठः ।

(३) सौचिक इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) ग्रामे चाण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) चाण्डाली इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) चाण्डाली इति लेखितपुस्तकपाठः ।



उभयोरिकमत्या चेत् तत्र चान्द्रं विदुर्वृधाः ।  
बलात्कारेण द्वैगुण्यं सकृदाचरणे स्मृतम् ॥  
रेतः सेकात् पूर्वमेव प्राजापत्यं विशोधनम् ।

महाराजविजये—

एकस्मिन् दिवसे विप्रः सकृद्रजकनायकीं ।  
'चेटीं' सेवेत यदि वा तद्वै मुनिभिः स्मृतम् ॥  
पतिव्रता यदा सा तु तप्तकच्छशतं स्मृतम् ।

नारदः—

चेटी चेद्रजकी भूप पञ्चाशत्तप्तमीरितम् ।  
पतिव्रता यदि भवेत् तप्तकच्छशतं विदुः ॥  
त्रिदिनं मासमात्रञ्च द्विजोगत्वा पतिव्रताम् ।  
चान्द्रायणत्रयं प्रोक्तं दिनत्रयगमे द्विजे ॥

षण्मासे चान्द्रषट्कं स्याद् वर्षादूर्ध्वं पतत्यसौ ।

वर्षादूर्ध्वं पतितप्रायश्चित्तं रजकीगमने वेदितव्यम् ॥ नाऽन्यथा  
'शुद्धो'भवति । एवं सर्वत्र षोडशचाण्डालस्त्रीगमनेषु 'योजनीय-  
मुक्तमनुक्तं' वा । सर्वत्र गर्भधारणे कारीषवधएव । विप्राङ्गनानां  
रजकादिषोडशचाण्डालमंससर्गं प्रायश्चित्तं गर्भे त्यागएव इति

(१) सेवेचेटीं यदितिचेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) मासे षट्कं तु चान्द्रायणमिति लेखितपुस्तकपाठः । मासषट्केतु  
चान्द्रायणमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) शुद्धोऽभूत् इति लेखितपुस्तकपाठः

(४) योजनीयानि इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः



सर्वत्र सम्बन्धः । एवं क्षत्रियवैश्ययोर्दिनादिक्रमेण प्रायश्चित्तं  
वेदितव्यम् । ब्राह्मणो वर्षमात्रं मासमात्रं वा रजकीं गत्वा  
यदि गृहं मेलनं कुर्यात् तदा तत्र गृहं दाहादिकं कृत्वा कुड्यस्य  
क्षालनं मृन्मयानां त्यागएव । घृतीपदेशादीनां प्रकारः आचा-  
राध्याये द्रव्यशुद्धिप्रकरणेऽभिहितः<sup>१</sup> । तदाह—

मनुः—

ब्राह्मणो मासमात्रं वा वर्षमात्रमथापि वा ।

‘कामादुरहसि गत्वा तां कुर्याद्वा गृहमेलनम् ॥

कुड्येषु क्षालनं कृत्वा मृन्मयानि विमर्जयेत् ।

वर्षादूर्ध्वं तु तं त्यक्त्वा<sup>२</sup> कर्त्तव्यं यद्यदीरितम् ॥

‘गृहस्थानां तदादिवं प्राजापत्यं विशोधनम् ।

वर्षादूर्ध्वं ततो ज्ञात्वा पृथक् चान्द्रायणं स्मृतम् ॥

पञ्चगव्येन शुद्धाः स्युर्ग्रामस्था यदि सङ्गताः ।

गृहे यानीह द्रव्याणि अल्पानीह विमर्जयेत् ॥

अधिकेषु तदा शुद्धिर्विनिमज्ज<sup>३</sup> स्थलान्तरम् ।

(१) गृहादिकं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रकार इति क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नोस्ति ।

(३) अभिहित इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) द्विजः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) पूर्वोक्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) गृहस्था देहशुद्धये इति लेखितपुस्तकपाठः । गृहस्थे देहशुद्धये इति  
क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) विनिमज्ज इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



स्थलान्तरमिति पात्रान्तरमित्यर्थः । सर्वत्र षोडशविधचाण्डाल-  
स्त्रौगमने रहः प्रायश्चित्तमेव गृहभाण्डादीनां <sup>१</sup>त्यागश्च । तत्तत्  
स्त्रौगमने प्रायश्चित्तं पृथक् पृथक् विशिनष्टि ।

इति हेमाद्रौ रजकौगमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) त्यागश्चेति क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नास्ति ।

---



अथ चर्मकारस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

पूर्व्वेण वयसा राजन् विद्याधनविवर्जितः ।  
द्विजोयश्चर्मकारस्य पत्नीं यदि<sup>२</sup> व्रजेदिह ॥  
स<sup>३</sup> चाण्डालममोक्षेयोनालपेत्तं कदाचन ।  
महदज्ञानतो गत्वा मृत्वा नरकमश्नुते ॥

भारद्वाजः—

चर्मकारमतीं रम्यां विद्याधनमटान्वितः ।  
ब्राह्मणश्च यदा गच्छेत् स<sup>४</sup> चाण्डालो भवेदिह ॥  
मृत्वा नरकमाप्नोति कालसूत्रं महाभयम् ।  
विप्रैः सह न सन्तिष्ठेत् सज्जनैर्वानरेश्वर ॥  
स्वगृहे ग्राममध्ये वा विप्रैः सह न संवदेत्<sup>५</sup> ।

देवस्वामी—

चर्मकारस्त्रियं गत्वा स्वाचारञ्च ममुत्सृजन् ।  
विप्रः पापरतो भूत्वा नरकानि क्विंशतिम् ॥  
गत्वा भुवमुपागम्य चर्मकारो भवेत् पुनः ।  
तस्यैवं निष्कृतिरियं कथिता जनवल्लभ ॥

१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२) गमेदिह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) चण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) चण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) भवमेत इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एकस्मिन् दिवसे राजन्नेकवारं रमेत यः ।  
 तप्तकृच्छ्रं विशुद्ध्यर्थं पराकं दिनमावतः ॥  
 दिनत्रये तु चाद्धं स्यात् षण्मासे त्रिंशदाचरेत् ।  
 वत्सरे पतितं विद्यात् कुर्यात् पतितवत्तदा ॥  
 गर्भे वा निष्कृतिर्नास्ति कारीषमरणादृते ।  
 स्त्रीणां बाहुजादीनां च पूर्व्ववद् योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ चर्मकारस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१) द्वैकवारं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) बाहुजानां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ नटिनीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः —

नटिनीं ब्राह्मणो गच्छेत् पञ्चवाणातुरः सकृत् ।

तस्यैव पितरोयान्ति रेतःकुण्डं महद्भयम् ॥

गारुडपुराणे—

देवालये राजगृहे गृहीत्वा भृतिमादरात् ।

मासि मासि च वर्षे वा जीवन्नृत्यति सर्वदा ॥

सोऽयं नटइति ख्यातः सर्वधर्मवह्निष्कृतः ।

तस्य सम्बन्धिनी नारी नटिनीति स्मृता जनैः ॥

देवलः —

कारागृहे दिनमात्रं सकृद् गत्वा दिनत्रयम् ।

[ अष्टौ वा वैश्वानरं कृत्वा नाट्यं कृत्वा दिनत्रयम् ]

भृतिमादाय विप्रोऽसौ मद्यः पातित्यमर्हति ॥

तस्माद् भृतिं परित्यज्य द्विजो वृत्तयतेऽन्तः ।

चान्द्रायणद्वयं कुर्यात् पुनः संस्कारपूर्वकम् ॥

विप्रोगत्वा प्रमादाद्वा ज्ञात्वा वा बहुवार्षिकम् ।

मार्कण्डेयः—

नटिनीं यो द्विजो गच्छेत् सकृद्वा बहुवारतः ।

केशसंवपनं कृत्वा कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ॥

<sup>१</sup> अहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

<sup>२</sup> गत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्योपनयनं भूयः पटगर्भविधानतः ।

वर्षादूर्ध्वं तथा राजन् पतितोऽभूज् जनेश्वर ॥

पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति गर्भं त्याज्य<sup>१</sup> एव । विप्राङ्ग-  
नानां नटसंसर्गादिसम्भवे एवमेव योजनीयम् । राजादीनां  
पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ नटिनीगमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) त्याग एव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



## अथ वुरुडीगमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवल —

वुरुडीं यो द्विजो गच्छेत्सकृत्कामातुरः क्षितौ ।

मएव नरकं गत्वा हीनजातिमवाप्नुयात् ॥

नागरखण्ड—

ये वै कटकुटीरस्था भाषावर्णाऽऽदिभेदतः ।

मद्यं मांसञ्च सेवन्ते वुरुडास्ते समीरिताः ॥

तदङ्गमेयं वुरुडी सर्वपापालया मदा ।

तां गत्वा विप्रवर्योऽसौ नरकं याति दारुणम् ॥

एकवारं द्विवारं वा दिनत्रयमथापि वा ।

मांसं ऋतुत्रयं वापि वत्सरञ्च विगेषतः ॥

यावत्तं तप्तकच्छञ्च प्राजापत्यं तथैन्द्वम् ।

वत्सरं पतितो भूयात् गर्भं तद्वर्णता भवेत् ॥

विप्रवर्ण्याणां पूर्ववत् । प्रायश्चित्तं कृत्वा पुनरुपनयनं सर्व्वत्र । यदुक्तं  
भद्रुक्तं वा तत् षोडशचाण्डालस्त्रीगमने यदुक्तं तद्वद् वेदितव्यम् ।

इति ईमाद्रौ वुरुडीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१. आहति प्रीतपुस्तके नास्ति

२. गत्वा इति प्रीतपुस्तके नास्ति

३. त्रिककुटीरस्था इति प्रीतपुस्तके नास्ति

४. मद्य-मांसनिर्गन्धश्च इति प्रीतपुस्तके नास्ति

५. तद्वर्णता भवेत् इति प्रीतपुस्तके नास्ति

अथ प्रायश्चित्तं लेखितपुस्तके नास्ति ।



अथ कैवर्त्तगमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

कैवर्त्तस्य मतीं विप्रः सकृद्गत्वा विचारयन् ।

महान्तं नरकं गत्वा तज्जातिषु भवेद्भुवि ॥

मार्कण्डेयः —

‘कैवर्त्तीनाम लोकेऽस्मिन् हीनजातिसमुद्भवः ।

तदङ्गनां द्विजोगच्छेत्पञ्चवाणातुरः सकृत् ॥

तस्योपनयनं भूयः पटगर्भविधानतः ।

प्रायश्चित्तं तदाप्युक्तं बुरुङ्गीगमनोदितम् ॥

एकवारं वा दिनत्रयादिकं वा विचार्य प्रतिपदीकं प्रायश्चित्तं  
कृत्वा शुद्धिमाप्नोति । विप्रस्त्रीणां तत्सङ्गमादौ पूर्ववत् । एवं  
क्षत्रियादीनामपि ।

इति हिमाद्रौ कैवर्त्तस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१) अत्रेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२) कैवर्त्तनामा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) गत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४) वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

५) वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

६) लेखनवन्धनमिति लेखितपुस्तके पाठः ।



अथ मेदस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

गौतमः—

- मेदस्त्रियं द्विजोयसु बलात्काराद्<sup>२</sup> रमेद् यदि ।  
<sup>३</sup>कालकूटविषं नाम नरकं याति दारुणम् ॥

देवलः—

वैणुकारमतीं गत्वा द्विजः कामातुरः सक्तः ।  
नरकं कालकूटाख्यं याति पापी सदा श्वसन् ॥

महाभारत—

वैणवीं ब्राह्मणोदृष्ट्वा मनस्तत्र निवेश्य च ।  
रन्तुकामो यदि भवेत् तस्यैव नरके स्थितिः ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं पूर्ववन्मुनिचोदितम् ।  
एकवारद्विवाराऽऽदिकं अत्रापि विचार्य पूर्ववत् पुनः संस्कारादिकं  
मर्त्यं कुर्यात् । विप्रस्त्रयादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ मेदस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) बलात्कारादिभेदं यदि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कालकूटं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ सौचिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

‘सौचिकोवस्त्रसन्धाने जनेभ्योभृतिमुदहन् ।

जीवन्<sup>२</sup> तथा वस्त्रहारी सौचिकोऽयमुदीरितः ॥

तदङ्गना महापापकारिणी लोकनाशिनी ।

तां रमेद् ब्राह्मणो यस्तु पञ्चवाणातुरः सकृत् ॥

[ तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति सूचिकारस्य जन्मनः ।

नारदः—

सूचिकारस्य यः पत्नीं द्विजः कामातुरः सकृत् । ]

महान्तं नरकं गत्वा हीनयोनिषु जायते ॥

दिनं दिनत्रयं मासं वर्षं वा गर्भधारणात् ।

यावकञ्च पराकञ्च तप्तमैन्दवमेव च ॥

यथाक्रमं प्रकुर्वीत पतितो गर्भधारणे ।

पतितप्रायश्चित्तं उपनयनादिकं पूर्ववत् । विप्रस्त्रीणां क्षत्रिया-

दीनां च पूर्ववत् ।

इति हिमाद्रौ धम्मगास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

सौचिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१) अः हेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२) सौचिके इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) तथा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथ तक्षक-तिलयन्त्रिस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह ।

कुमारः—

तक्षकोदारुकर्त्ता च तिलयन्त्री महान् खलः ।

तिलघातक इत्यर्थः ।

तिलयन्त्री तिलद्रोही दारुकोदारुघातकः ।

न कम्पोही भवेतां तौ न सम्भाष्यौ कटाक्षन ॥

तावेतौ ग्रामचाण्डालौ दूरस्थौ तु परित्यजेत् ।

तयोर्नितस्विनी पापा तां रमेन्मुखजः सकृत् ॥

महापापमवाप्याशु भुवि हीनेषु जायते ।

तयोरप्यङ्गनागामी<sup>१</sup> कारीषवधमर्हति ॥

जावानिः—

तयोयदा रमेन्नागीं ब्राह्मणं कामपाडितः ।

अज्ञानाचापकोट्यान् स्नात्वा<sup>२</sup> सामेन शुध्यति ॥

ज्ञानात् सकृद् द्विजोगन्ता कारीषेण त्वमं<sup>३</sup> दहेत् ।

अथवा देहशुद्धयर्थं हययुतं जपमाचरेत् ॥

शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र न शुद्धिर्मुनिभिः पुरा ।

१. अर्हति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. अङ्गनागामी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. सामेन शुध्यति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अन्यथा<sup>१</sup>चेदित्यर्थः । विप्राङ्गनानां प्रमादाद् गमने गर्भधारणे  
त्याग एव । क्षत्रियविशां तत्स्त्रीगमने पूर्ववत् वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ तत्त्वक-तिलघातकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) चरेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रमादाद्गमने इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ 'मांसविक्रयिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

सूनोः परिग्रहं गत्वा विप्रः पापपरायणः ।

कुम्भोपाके महाघोरं वसत्याचन्द्रतारकम् ॥

मनुः —

मांसविक्रयिणः पत्नीं पुत्रीं वा भगिनीमपि ।

सुषां वा मुखजः पापी रक्षित्कामातुरः सकृत् ॥

न तस्य पुनरावृत्तिः कुम्भोपाकाद् भयङ्करात् ।

पुनर्भवेमुपागस्य जायते हीनजातिमान् ॥

मार्कण्डेयः—

सूनोर्नारीं द्विजो गत्वा पापीयान् पापरूपिणीम् ।

कुम्भोपाकमुपागस्य जायते भुवि हीनवान् ॥

प्राजापत्यं मासमात्रे चान्द्रं प्रोक्तमृतुत्रये ।

अतः पतितवज्ज्ञेयः सर्वधर्मवहिकृतः ॥

अभ्यासे दाहयेत् तस्यक् कारीपिण पुनः पुनः ।

अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति यावद् 'गर्भविधारणम् ॥

विप्रस्त्रीणां पूर्ववत् क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रौ 'मांसविक्रयिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१. मांसविक्रयस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमित्येव क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

३. भवति धारणं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. मांसविक्रयस्त्रीगमन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ कुलालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः —

कुलालकस्य योनारीं विप्रः कामातुरः सकृत् ।  
अङ्गीकारिण वा राजन् बलात्कारिण वा पुनः ।  
रमेद्दिनं तद्वहं वा मामं कृतुमथाऽपि वा ॥  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति पुनः संस्कारकर्म्मणः ।

मरीचिः—

इष्ट<sup>२</sup>कामु विभाग्डानि कृत्वा योदाहयेन्मुदा ।  
स चाण्डालममोक्षेयः सर्व्ववर्णवहिष्कृतः ॥  
तदङ्गना तत्समाना दशेनात् पापकारिणी ।  
एनां द्विजोरहोगच्छेत् स महापातकी स्मृतः ॥  
तस्यैवं निष्कृतिर्दृष्टा पूर्व्वजन्मुनिभिः सकृत् ।

मास-षण्मास-वत्सरतारतम्येन प्रायश्चित्तं योजनीयम् । गर्भे वा  
वत्सरान्ते वा<sup>३</sup> पतितप्रायश्चित्तमर्हति । विप्रस्त्रीणां पूर्व्वैवत् ।  
क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये

कुलालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

<sup>१</sup> अर्हति कृतपुस्तके नास्ति ।

<sup>२</sup> इष्टका तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

<sup>३</sup> वा इति कृतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथ मद्यविक्रयिणः स्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवोपुराणे—

मद्यविक्रयिणोगत्वा नारीं ग्रामे वनान्तरे ।

द्विजः पापमवाप्नोति गृह्णीयात् काममीहितः ॥

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ।

नारदः —

प्रत्यहं मद्यविक्रेता मांसस्यापि महामुने ।

उभयोर्निष्कृतिर्नास्ति भुवि चाण्डालजन्मनः ॥

तस्योपनयनं भूयः प्राजापत्यं दिनद्वये ।

मासि चान्द्रमृतौ तद्वद् द्विगुणं व्रतमुच्यते ॥

ततः परं न शुद्धिः स्यात् कारीषदहनादृते ।

अशक्तो<sup>२</sup> गोसहस्रन्तु वर्षमात्रं चरेद्बुधः ॥

विप्रस्त्रीणां पूर्ववत् क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेहार्द्रा<sup>३</sup> मद्यविक्रयिणः स्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

(१) आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) भूय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अशक्तौ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) मद्यविक्रयस्त्रीगमन इत्यादि क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ कारुक-नापितयोः स्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

नापितस्य स्त्रियं गत्वा कारुकस्य द्विजाधमः ।

कामातुरोमहापापी न पुनर्भुवि जायते ॥

नापितः क्षौरकः कारुकस्त्वयःपिण्डकारी ।

जावान्निः—

तयोर्विप्रः सतीं दृष्ट्वा ग्रामे वा स्वगृहेऽपि वा ।

गच्छेत् कामातुरः पश्चाद् देहशुद्धिं समाचरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

क्षौरकस्य द्विजोगत्वा कारुकस्य स्त्रियं मुदा ।

तदा पतति दुष्टात्मा न तस्य पुनरुद्भवः ।

तस्य देहविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥

पराकं यावकं चैव तप्तं चान्द्रमनन्तरम् ।

एकदिन-त्रिदिन-मास-संवत्सरक्रमेण योजनीयम् । अत ऊर्ध्वं

पतितप्रायश्चित्तम् । कारुकस्त्रीगमने प्रायश्चित्तमेवं वेदितव्यम् ।

विप्रस्त्रीणामपि एवम् । पूर्ववत् क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रौ नापित-कारुकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।



अथ ब्रह्मचाण्डालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

परार्थं काशिकायायौ दत्ताग्निः कौकसानुगः ।

तएव ब्रह्मचाण्डाला वाङ्मात्रेणाऽपि नालभेत् ॥

तत्र “काशिकायां स्वकृतपुण्यगणिं दास्यामी” ति भूतकं गृहीत्वा  
यः काशीं गतः स “परार्थं काशिकायायौ । “अहमेतस्य कुणपस्या-  
ऽग्निदाहादिकं करिष्यामी” ति मौल्यं “गृहीत्वा यस्तत् कृतवान्  
स दत्ताग्निः । कौकसानि परकीयाण्यस्थानि, “अहं धृत्वा  
गङ्गाभूमिं स्थापयामी” ति पूर्ववदनादिकं गृहीत्वा यः करोति स  
कौकसाऽनुगः । तदाह

बुद्धमनुः—

कौकसानि विजोयत्वा परकीयाणि लोभतः ।

एकप्रस्थानमात्रेण स चाण्डालमसौभवेत् ॥

प्रेतकृत्यमहं कुर्याम् मृतस्यास्य विजेषतः ।

इति यः कुरुते बुद्धिं स चाण्डालदर्तारितः ॥

१. ब्रह्मचाण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. ब्रह्मचाण्डाला इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. नास्ति चेत् इति कृतपुस्तकपाठः ।

४. परार्थं वा इति कृतपुस्तकपाठः ।

५. गृहीत्वा कृतवान् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

६. मनुविलोके कृत लेखितपुस्तकपाठः ।

७. परार्थं वा इति कृत लेखितपुस्तकपाठः ।

८. चाण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।

९. चाण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।



परायं मौल्यमादाय काशीं यास्यास्यहं वन ।

इति यो मनसि व्याप्य स चाण्डालत्वमर्हति ॥

एतेप्राप्तिकतः पत्नीं द्विजो यः मंगृहीत्वान् ।

एकपात्रं त्रिपात्रं वा मामं वा वत्सरं तु वा ॥

जमेत् कामातुरो यन्तु तस्य निष्कृतिरौरिता ।

चाण्डालगमने राजन् निष्कृतिः कथितोत्तमैः ॥

मा चैवात्र प्रयोक्तव्या कार्षीषवधवर्जिता ।

पुनः संस्कारविधानं कर्त्तव्यं विधिचोदनात् ॥

विप्रस्त्रीणां ब्रह्मचाण्डालसंमर्गप्राप्तौ विप्रस्याऽऽर्द्धम् । गर्भं त्यागः ।

क्षत्रियार्द्धनां पूर्ववत्

इति हेमाद्रौ ब्रह्मचाण्डालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

(१) चाण्डालत्वमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) एकपात्रं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यन्मेत् इति लेखितपुस्तकपाठः यमेत् इति कृतपुस्तकपाठः ।

(४) वर्जितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ रजस्वलागमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

राजन् पुष्पवतीं भार्यां द्विजः कामातुरो<sup>२</sup> व्रजेत् ।

महान्तं नरकं गत्वा रक्तस्त्राविगुदोभवेत् ॥

मार्कण्डेयः—

विप्रोरजस्वलां पत्नीं गच्छेत् कामातुरः सकृत् ।

मेहवान् भविता राजन् रक्तस्त्रावी भवेद्भुवि ॥

गालवः—

यो विप्रः पञ्चवाणा<sup>३</sup>र्त्ती जभेत्<sup>४</sup> पत्नीं रजस्वलाम् ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकाद् भयङ्करात् ।

प्रथमेऽहनि यो गच्छेत्<sup>५</sup> चण्डालीगमने च यत् ॥

तत् कृत्वा शुद्धिमाप्नोति अन्यथा दोषभाग्भवेत् ।

द्वितीयेऽहनि ब्रह्मघ्नीगमने<sup>६</sup> यदुदाहृतम् ॥

[ तदत्राऽपिप्रयोक्तव्यं नाऽन्यथाशुद्धिमाप्नुयात् ] ।

तृतीये रजकीमङ्गे प्रायश्चित्तं तदत्र हि ।

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति ब्रह्मलोके परत्र च ॥

(१) अहंति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) भवेत् इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) जभेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) चण्डालगमने इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) गमनं तदुदाहृतम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।



भविष्योत्तरे—

प्रथमेऽहनि चाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी ।

तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुध्यति ॥

दिनत्रयेषु गमने यद्यत् पापमुदीरितं तत्तत् प्रायश्चित्तं कृत्वा  
विशुध्यति पुनः संस्कारश्च । विप्रस्त्रीणां रजस्वलानां परपुरुषसंसर्गे  
विप्रस्याऽङ्गे प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ रजस्वलागमनप्रायश्चित्तम् ।

---

१३ ब्रह्मघातकी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ विधवागमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

ब्राह्मणोऽमदलोभेन विधवां विप्रनन्दिनीम् ।  
गच्छेत् कामातुरः पश्चाज्ज्ञात्वाऽसौ पतिवर्जिताम् ।  
इति मत्वा व्रजेद् गन्धमादनं पर्वतोत्तमम् ॥  
तत्र चापाग्रमाभाद्य प्रातः स्नायाद् दिने दिने ।  
मासमात्रेण शुद्धिः स्याद् अशुद्धीऽभूत्तदन्यथा<sup>२</sup> ॥

मार्कण्डेयः—

पूर्वजाविधवां विप्रनन्दिनीं विषयातुरः ।  
अज्ञानात् सकृदागत्य पश्चात्तापपरायणः ॥  
यदीच्छेदात्मनः शुद्धिं चापाग्रे<sup>३</sup> स्नानमाचरेत् ।  
मासमात्रेण शुद्धिः स्यात् पुनः संस्कारमार्गतः ॥

एतदज्ञानविषयम् ।

पराशरः—

ज्ञात्वा विप्रः सकृद्गच्छेद् विधवां कामपीडितः ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति ऋते कारौघवह्निना ॥

१ आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२ न चान्यथा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३ यदिच्छेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ चापाग्रस्नानं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



जावालिः—

उभयोर्यदि सन्मत्या द्विजः पापमनुस्मरन् ।  
 १ गच्छेत् पश्चात् शुद्धिकामी मृतः कारीषवह्निना ॥  
 शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र अथवा भूपरिक्रमः ।  
 त्रिवारं क्षमां परिक्रम्य पुनः संस्कारपूर्वकम् ॥  
 पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात् शुद्धिमाप्नोति त्रैर्विकीम् ।

एतद् गर्भधारणविषयम् ।

शिवरहस्ये—

योविप्रोविधवां साध्वीमागच्छेद् गर्भधारणात् ।  
 स ३ चाण्डालममोक्षेयस्तस्यागोविधीयते ॥

गर्भधारणे विप्रः पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति । गर्भधारणं  
 ४ पुनर्विशेषमाह ।

नागरखण्डे—

वर्णत्रयाद् वा विधवा सवर्णा यदि गर्भिणी ।  
 विप्रैस्तस्याः परित्यागः कार्यो धर्मपरायणैः ॥  
 तदग्ने महापापमवाप्नोति हि पूर्वजः ।

विष्णुधर्म—वर्णत्रयात् सवर्णाद्वा विधवा गर्भिणी यदि ।  
 तस्या दग्धेनमात्रेण ब्रह्महत्यामवाप्नुयात् ॥

१ अच्छेत् इति क्रीत-लेखितरक्तमण्ड

२ अन्धया इति लेखितपञ्चकपाश

३ चाण्डाल इति लेखितम

४ पुनरिति क्रीत-साशोपुस्तकयोर्नास्ति ।



अतस्यागोमुनिश्रेष्ठा अनया किं प्रयोजनम् ।

“गर्भे न्यागोविधीयते” इति मनुवचनं सर्वत्राऽनुसन्धेयम् ।  
विधवाया विप्रस्याऽई प्रायश्चित्तम् । क्षत्रिय-वैश्यपुरुषगमने द्विगुणं  
प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियादीनां प्रायश्चित्तं द्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ विधवागमनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ वेश्यागमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

द्विजः कामातुरोवेश्यां<sup>२</sup> यमेदेकदिनं मुदा ।  
न तस्य सन्ति पुण्यानि तिष्ठन्त्यत्र न संशयः ॥  
द्विजः कामातुरोनित्यं वेश्यां यदि<sup>३</sup> यमेद्भुवि ।  
तस्य नित्यविधिर्नष्टः सद्यएव न संशयः ॥  
नित्यकर्मपरित्यागात् पतितः स्यान्नसंशयः ।  
यदीच्छेत् शुद्धिमतुलां षड्विंशं कृच्छमाचरेत् ॥  
पुनस्तत्रैव संस्कारं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ वेश्यागमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) जमेदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) जमेदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ दासीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

दासीं द्विजोयदा<sup>२</sup> गन्ता स्वधर्मं नाऽवलीकयन् ।

महापापमवाप्नोति मानहानिश्च जायते ॥

मार्कण्डेयः—दासी मानधनं हन्ति वेश्या हन्ति तपोयशः ।

विधवाऽऽयुः श्रियं हन्ति सर्वं हन्ति पराङ्मना ॥

ततोदासी न गन्तव्या कर्मणा मनसा गिरा ।

एकस्मिन्नङ्गि यो दासीं<sup>३</sup> जमेत् कामातुरः सकृत् ॥

यावकं तत्र कर्त्तव्यं पराकं तु दिनत्रये ।

प्राजापत्यं तथा मासे वर्षे चान्द्रं पृथक् पृथक् ॥

[ मर्जितः ] अतः परमवाप्नोति<sup>४</sup> चाण्डालत्वं विगर्हितः ।

शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कं मासमेकं निरन्तरम् ।

इह जन्मनि शूद्रत्वं<sup>५</sup> चाण्डालः कोटिजन्मसु ॥

वर्षात्परं पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा दासीगमनात् पूतोभवति पुनः

संस्कारश्च ।

इति हेमाद्रौ दासीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१. अहिति क्रातपुस्तके नास्ति ।

२. गत्वा इति क्रातलेखितपुस्तकपाठः ।

३. यमेत् इति क्रातलेखितपुस्तकपाठः ।

४. चाण्डालत्वमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

अयं पाठः क्रात काशीपुस्तकयोर्नास्ति ।

(५) चाण्डाल इति लेखितपुस्तकपाठः ।



[अथ पतित-पाषण्ड-वौड-शूद्रस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह ।]

देवलः—

वौड-पाषण्ड-पतित-शूद्रस्त्रीणां मल्लद्विजः ।

रतिं कृत्वा दिनाऽभ्यासे चान्द्रायणमथाऽऽचरेत् ॥

दिनत्रये यावकन्तु तप्तं मासे प्रकल्पितम् ।

अत ऊर्ध्वं न संभाष्यः पतितः सर्वकर्मसु ॥

मार्कण्डेयः—

पाषण्ड-वौड-पतित-शूद्रस्त्रीर्जयते द्विजः ।

दिनत्रये यावकं स्यात् तप्तं मासे प्रकीर्तितम् ॥

षण्मासे चान्द्रमित्येतद्वर्षे पतति स द्विजः ।

पतितप्रायश्चित्तं वर्षादूर्ध्वं कृत्वा शुध्यति । गर्भे न प्रायश्चित्तम् ।

मृते तु न संस्कारः । पुत्रजनने तस्य त्यागएव ।

तदेवाऽऽह मनुः—

एतेषां स्त्रीषु योविप्रोरमते प्रत्यहं खलः ।

गर्भे वा पुत्रजनने वहिष्कारो विधीयते ॥

यादिवेत् पुत्रवान् न स्यात् पिता नरकमश्नुते ।

संमर्गात् तस्य राजेन्द्र पातित्यं भवति ध्रुवम् ॥

१ अयमपि पाठः क्रीतपुस्तके न दृष्टः ।

२ ययते इति लिखितपुस्तकपाठः रमते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ पुत्रवाक्यल्यात् इति क्रीत-लिखितपुस्तकपाठः ।

४ हि भवेद्भुजं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पापकारी भवेत् पुत्रः सदा तं नहि कीर्त्तयेत् ।

तस्मात् पुत्रः परित्याज्यः पित्रा मुखपरेण ह ॥

तथाच श्रुतिः—

“स शूद्रयोनिमंछिन्नोऽपि तमा सिञ्चते<sup>१</sup> पितॄन् पितृद्रोहीति” ।

“शूद्रादिस्त्रीषु पुत्रमुत्पादयन् पुनस्त्याज्यएव “औरसं दोष-  
कारिणं त्यजेत्” इति वचनात् ।

इति हेमाद्रौ पतित-पापण्ड-वैद-शूद्रस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

१) सिञ्चयेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) शूद्रादि इति पाठः क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।



अथ मद्यपस्त्रीगमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

मद्यपानरतां नारीं द्विजः कामातुरःसक्तत् ।

<sup>२</sup>गच्छेद्यदिह पापात्मा चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥

गोतमः—

द्विजः कामातुरोगच्छेत् स्त्रियं मद्यपरायणाम् ।

महान्तं नरकं गत्वा चाण्डालत्वं भजेदिह ॥

मार्कण्डेयः—

मद्यपानरतां नारीं द्विजः कामातुरो<sup>३</sup>ब्रजेत् ।

नरकं चानुभूयाऽथ चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥

<sup>४</sup>यावकं मासमात्रे तु षण्मासे चान्द्रभक्षणम् ।

वत्सरे पतितोभूयाज्ज्ञाते निष्कृतिमाचरेत् ॥

पतितनिष्कृतिमाचरेद् इत्यर्थः—

तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्यमतःपरम् ।

विप्रस्त्रीणां मद्यपपुरुषसंसर्गं विप्रप्रायश्चित्ताऽङ्गे क्षत्रियादीनां  
पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ मद्यपस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ।

(१) आहर्ति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) यमेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यमेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) षडब्दं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ ऋतुकालपरित्यागप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

‘ऋतुस्नातां तु योभार्यां स्वस्थः सन्नोपगच्छति ।

भ्रूणहृत्यामवाप्नोति नरक<sup>२</sup>श्चाधिगच्छति ॥

ऋतुकालाऽतिक्रमे हेतुमाह

व्रतादिश्राद्धकालेषु पञ्चपर्वसु योद्विजः ।

भार्यामृतुमतीं स्नातां यो<sup>३</sup> गच्छेत् स तु पापभाक् ॥

मरीचिः—

ऋतुकाले समायाते श्राद्धकाल<sup>४</sup> उपस्थितः ।

‘व्रतकालस्तथा राजन् उभयं तु परित्यजेत् ॥

तयोर्द्वयोर्वलीयान्स श्राद्धकालो महत्तरः ।

ऋतोर्दिनानि सन्त्येव श्राद्धादिषु न सन्ति हि ॥

अतः श्राद्धादिकालश्च न त्याज्यो विप्रपुङ्गवैः ।

श्राद्ध-व्रतपरित्यागे दीपवाहुल्यात् कालस्याऽसम्भवाच्च श्राद्धादि-  
कालो बलवान् ! ऋतुकालस्तु<sup>५</sup> षोडशदिनानि सन्ति । रोगादि-

१। आह्वेति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२। ऋतुस्नाना इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३। नरकं वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४। गत्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

५। उपस्थिते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

६। व्रतकाले तथा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

७। ऋतुकालस्य तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

८। रोगादि संहितः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



रहितोभर्ता पुत्रकामी समदिनेषु श्राद्धव्रतदिनरहितेषु संसर्गं  
कुर्यात् । तदेवाह कात्यायनः—

ऋतुस्नातां 'नरोभार्यां व्रतश्राद्धविवर्जिते :

स्वयं वै रोगरहितोयमेत् सन्तानकाम्यया ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति प्रायश्चित्तमिहार्हति ।

महाराजविजये--

अनिमित्ततया विप्रः पत्नीमृतुमतीं त्यजेत् ।

भ्रूणहत्यामवाप्नोति प्राजापत्यं समाचरेत् ।

पूर्वोक्तनिमित्तैर्विना ऋतुमतीं 'संत्यजन् प्राजापत्यं कृत्वा दोषो-  
न्मुक्तो भूयात् ।

इति हेमाद्रौ ऋतुकालपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

(१) तु योभार्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) संतज्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ कन्यकागमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

अप्रौढां कन्यकां विप्रोयमेत् कामातुरोऽन्वहम् ।

तस्यैव नरके वासः कानीनः स्यात्तदुद्भवः ॥

मार्कण्डेयः—

असंस्कृतां पुष्पहीनां कन्यकां<sup>१</sup> यो द्विजाधमः ।

गन्तुमिच्छति पापात्मा नरकं याति दारुणम् ॥

पराशरः—

मुखजोमुखजाज्जातां कन्यां यः संपरिग्रहेत् ।

स एव नरकस्थायी यावदाभूतसंभवम् ॥

प्राजापत्यं तदा मासे वर्षे चान्द्रं प्रकीर्तितम् ।

अतः परमशुद्धोऽभूत् सुरापूरितभाण्डवान् ॥

वर्षादूर्ध्वं पतितप्रायश्चित्तं पूर्वोक्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति । विप्रस्तु

क्षत्रियवैश्यकन्यासु संसर्गं कृत्वा पादहीनं प्रायश्चित्तं कृत्वा शुध्यति

शूद्रकन्यागमने पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ कन्यागमनप्रायश्चित्तम् ।

१) कन्यायां यो द्विजाधमः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) स परिग्रहे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ कन्यकादूषणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

द्विजो योदक्षिणां<sup>१</sup> कन्यां सभामध्ये विनिन्दयेत् ।

स एव पापकर्मणा स्यान् मृत्वा नरकमश्नुते ॥

गौतमः—

योविप्रोदक्षिणां कन्यां विनिन्दयति सर्वदा ।

स गत्वा नरकं घोरं भुवि भूयान् मृतप्रजः ॥

कन्यादूषणमिति मध्यमानामिकाभ्यां योनिप्रवेशं कृत्वा यत् शोध-  
यति तदेव कन्यादूषणम् ।

जावालिनः—

मध्यमानामिकाभ्याञ्च कन्यामूत्रप्रवेशने ।

<sup>२</sup>कुर्यात् प्रवेशं यद् विप्रास्तत्कन्यादूषणं विदुः ॥

न विवाह्या द्विजैः सा तु योनिदेशविशोधनात् ।

प्रायश्चित्तमिदं कुर्यात् कन्यादूषणपापभाक् ॥

चान्द्रायणत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ।

क्षत्रियादिदूषणेऽप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ कन्यकादूषणप्रायश्चित्तम् ।

१. रक्षिता इति क्रीत काशीपुस्तकपाठः ।

२. कृत्वा प्रवेशं योविप्र इति क्रीत-लोकखतपुस्तकपाठः ।



अथ पुंसि मैथुनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

योविप्रः पुरुषं गच्छेत् पञ्चवाणातुरः खलः ।  
स्वदारिषु मुखे वापि यभेत् पापपरायणः ॥  
तस्य वीर्यं क्षयं याति मृतो नरकमश्नुते ।

मार्कण्डेयः—

यो विप्रः पुंसि संसर्गं<sup>२</sup> स्वदारिषु रतिं मुखे ।  
कुर्याद् यदिह पापात्मा तद्रेतः क्लीवतामगात् ॥  
यमलोकमुपागम्य तत्र वासः सदा भवेत् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति पुनः संस्कारणं विना ॥

नारदः— स्वदारिषु मुखे राजन् योविप्रः पुरुषं यभेत् ।  
तस्य वीर्यं क्षयं याति स वै नरकमश्नुते ॥

जाबालिः— पश्चात्तापमवाप्स्याथ यदीच्छेत् शुद्धिमात्मनः ।  
एकस्मिन् दिवसे तप्तं मासे चान्द्रं ततः परम् ॥  
अव्दात् परं मुनिश्रेष्ठ षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
तस्योपनयनं भूयः पटगर्भविधानतः ॥  
पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् प्रतोभवति सर्वदा ।

इति हेमाद्रौ पुंसि मैथुनप्रायश्चित्तम् ।

<sup>१</sup> आहंति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

<sup>२</sup> संसर्ग इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ उष्ट्र-खर-वडवामैथुनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः—

खरीमुष्ट्री<sup>२</sup> च वडवां विप्रो<sup>३</sup> मोहमदान्ववान् ।

यमेद्मदि स पापात्मा रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

वशिष्ठः—<sup>४</sup>खरीमुष्ट्री च वडवां विप्रः कामातुरः सक्तः ।

यमेल्लज्जां विहयाऽऽशु स वै नरकमश्नुते ॥

जावालिः—

खरीमुष्ट्री च वडवां यमेद्विप्रोमदातुरः ।

रौरवं नरकं याति यावदाभूतसंप्लवम् ॥

तस्य दोषविनाशार्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ।

खरे चान्द्रं तथोष्ट्रे च पराकं वडवागमे ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति पुनः संस्कारपूर्वकम् ।

पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् शुद्धीभवति निश्चयः ॥ इति

क्षत्रिय-वैश्ययोर्विप्रोक्ताद् द्विगुणं प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।

इति हेमाद्रौ खरीष्ट्रवडवामैथुनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) खरमुष्ट्रं च वडवां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यदि इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) वडवा खरमुष्ट्रं च इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ महिषीवस्ताजागमनप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः —

वस्तं वा महिषीं वस्तां अजमेणादिकं तथा ।

<sup>२</sup>गच्छेद् द्विजोमहापापी सद्यः पतितुमर्हति ॥

पराशरः —

वस्तं मेषं तथा वस्तां महिषीं मदनातुरः ।

विप्रोयदि रमेत् पापी यमलोकमवाप्नुयात् ॥

नागरखण्डे —

वस्तं वस्तां तथामेषां महिषीं मुखसम्भवः ।

यमेत् कामातुरः पापी मृत्वा नरकमश्नुते ॥

<sup>३</sup>वस्तायां वस्तके मेषे तप्तकृच्छ्रं विशोधनम् ॥

महिष्याञ्च हरिण्याञ्च प्राजापत्यं समाचरेत् ।

पुनः संस्कारमन्त्रैश्च कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

पञ्चगव्यं पिबेद् पश्चाद् अभ्यासे चान्द्रमुच्यते ।

क्षत्रियवैश्ययोरेवं द्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ महिषीवस्ताजागमनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आहिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) यमेदिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) वस्ते वस्ते तथामेष इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ 'करादौ' शुक्रोत्सर्गप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

अयोनी च वियोनी च पशुयोनी च भारत ।

समुत्सृजन्ते ये शुक्रं ते वै निरयगामिनः॥

अयोनिर्हस्तादिः पशुयोनिर्गोवत्सादिः ।

नारदः—

'कटे' वा पशुपक्ष्यादौ जले वा वह्निमध्यतः ।

विप्रः कामातुरः पापी 'शुक्रोत्सर्गं' यदाऽऽचरेत् ॥

तदा यमपुरं गत्वा तिष्ठत्याचन्द्रतारकम् ।

मनुः—

पशुपक्षिजले मार्गे कटायां बीजमुत्सृजन् ।

स गच्छेन्नरकं घोरं पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥

परित्युक्त्वा तदानीं वा सचैलं स्नानमाचरेत् ।

जपेत् सहस्रं गायत्रीं ततः शुद्धिरवाप्यते ॥

नान्यथा शुद्धिरेतस्य 'हुत्वा' पापापनुत्तये ।

क्षत्रियवैश्ययोर्विप्रप्रायश्चित्ताद् द्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ करादौ शुक्रोत्सर्गप्रायश्चित्तम् ।

१) कटादौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) रेतात्सर्ग इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) करायांमिति कृतपुस्तकपाठः ।

४) रेतात्सर्ग इति कृत लेखितपुस्तकपाठः ।

५) हुत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथाऽवकीर्णिप्रायश्चित्तमाह<sup>१</sup> ।

देवलः — आश्रमाणां पुरोवर्त्ती ब्रह्मचारीह देवतः ।  
रतीक्ष्णं यदा कुर्यात् स्वप्ने वा मुष्टिमैयुने ॥  
अवकीर्णी स विज्ञेयः सर्वधर्मवहिष्कृतः ।  
महापापमवाप्नोति<sup>२</sup> जपः क्षरति तत्क्षणात् ॥

मार्कण्डेयः—

<sup>३</sup>उपनायदिनाद् वर्णी ब्रह्मचर्यपरायणः ।  
प्रमादादिह लोभाद्वा यमेन्नारामकल्मषः ॥  
अवकीर्णी स विज्ञेयः सर्वधर्मवहिष्कृतः ।

गालवः— मौञ्जीव्रतदिनाद् राजन् ब्रह्मचर्यमकल्मषम् ।  
चरन्<sup>४</sup> व्रतीह दुःसङ्गात् योनौ रितः समुत्सृजन्  
अवकीर्णी सविज्ञेयः सर्वदा तं परित्यजेत् ।  
तस्य देहविशुद्ध्यर्थं पराकं कृच्छ्रमौरितम् ॥  
तथा गर्हभ<sup>५</sup> मालभ्य शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ।  
पुनः संस्कारपूतात्मा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥  
एतेन शुद्धिमाप्नोति ब्रह्मचारी नचाऽन्यथा ।

इति हेमाद्रौ अवकीर्णिप्रायश्चित्तम् ।

१) अवकीर्णप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) तपः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) उपनयनदिनात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४) वर्णाहिदुःसङ्गात् इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

५) आलम्ब्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ <sup>१</sup>मिथ्यावादिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

योविप्रः साधुवृत्तेषु पुण्यवत्सु द्विजेषु च ।

<sup>२</sup>मिथ्यारोपी महादोषः अस्तिः <sup>३</sup>विप्रवदन्मृषा ॥

महाभारत—

साधुवृत्तेषु विप्रेषु योविप्रस्तु मृषा वदन् ।

स्तेयं वा व्यभिचारो वा हत्या वाऽप्यस्ति सञ्ज्ञेदा ॥

इति यो वदते साधुं स मिथ्यावादवान् द्विजः ।

देवकार्येषु पितृषु <sup>४</sup>अनर्हस्तु मृषा वदन् ।

मार्कण्डेयः—

प्रापिनां पापगणनां <sup>५</sup>न वदेद् वै कदाचन ।

अस्ति चेत् तुल्यपापी स्यान् मिथ्या चेद्विगुणं भवेत् ॥

मरोचिः—

<sup>६</sup>मिथ्या यः साधुवृत्तेषु दोषारोपी <sup>७</sup>गुणेष्वपि ।

विप्रेषु कलुषं वाचा वदन् ग्रामे सभास्थले ॥

---

(१) मिथ्यावादप्रायश्चित्तमित्येव क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) मिथ्यादोषो महारोषः अस्ति विप्रवदन्मृषा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) विप्रो मिथ्यावादन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) अनर्हो मिथ्यावादन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) गणनादिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) मिथ्यायां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(७) दोषारोपे इति लेखितपुस्तकपाठः ।



स एव नरकं गत्वा 'शुनोयोनिषु जायते ।  
 तस्य पापविनाशाय प्रायश्चित्तं महत्तरम्<sup>१</sup> ॥  
 विप्रेषु तप्तकृच्छ्रं स्याद् अङ्गनास्त्रिह यावकम्<sup>२</sup> ।  
 बालवृद्धातुरेष्वेषु वदन् पराक<sup>३</sup> माचरेत् ॥  
 क्षत्रियादिषु सर्वेषु प्राजापत्यमुदीरितम् ।  
 न मिथ्याभाषणं कुर्याद् दोषारोपं परित्यजेत् ॥

इति हेमाद्रौ 'मिथ्यावादिप्रायश्चित्तम् ।

- 
- (१) श्रानयोनिषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।
  - (२) महत्तरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।
  - (३) कारकं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।
  - (४) प्रायकमाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।
  - (५) मिथ्यावादप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथाऽभिशस्तप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पूर्ववन्निन्दयाऽऽवेशे अभिशस्तः स उच्यते ।  
अयोग्यो ह्यव्यकथ्येऽपु निन्दितः सर्वदा जनैः ॥  
नास्त्यकीर्त्तिममो मृत्युरिह लोके परत्र च ।  
अस्ति वा नास्ति वा दोषः अयं शः परिवर्त्तते ॥  
तस्मादेतद्विशुद्धार्थं प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।  
अभिशस्तो महादोषान्मुच्यते नाऽत्र संशयः ॥

गालवः—

मिथ्यावादिकया बद्धः अभिशस्त इतीरितः ।  
पापमस्ति सदा लोके वार्त्ता सर्वत्र गण्यते ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।  
ततः शुद्धो भवत्येव मिथ्यात्वे विप्रपुङ्गवः ॥  
मदोषो विद्यते यत्र तत्र शान्तिं समाचरेत् ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति पापस्यैतस्य गूहनात् ॥

(१) वंशे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्राजापत्य समाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) मिथ्याया वादया इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) पापान्ते तस्य गूहनात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मिथ्यात्वे प्राजापत्यद्वयं विशोधनम् । अस्तित्वे प्रतिपदीकृतं प्राय-  
श्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोतीत्यर्थः विप्रस्त्रीणां प्रायश्चित्ताऽर्द्धं क्षत्रिया-  
दीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ अभिशस्तप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ कुग्रामवासिनां प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

कुग्रामवासिनां पुंसां द्वावनथौ<sup>१</sup> प्रकीर्त्तितौ ।  
अपूर्वस्याऽऽगमोनास्ति पूर्वविद्या विनश्यति ॥

<sup>२</sup>कुग्रामलक्षणमाह—

मरीचिः—

<sup>३</sup>ओत्रियश्च तटाकादिस्तृणपर्णं तथेन्धनम् ।  
वान्धवाश्च कुलीनाश्च विद्वान् वेद्योमहाधनो ॥  
न सन्ति यत्र ग्रामे च स कुग्रामइतीरितः ।

अपिच—

यत्र विद्यागमोनास्ति न तत्र दिवसं वसेत् ।  
तत्र ग्रामे द्विजोयसु हव्यकव्यपराङ्मुखः ॥  
<sup>४</sup>एकं वै दिवसं तिष्ठन् महापापमवाप्नुयात् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा वर्षे <sup>५</sup>चान्द्रायणव्रतात् ॥  
मासि पराकं षण्मासे प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
<sup>६</sup>तस्मादमुं परित्यज्य बन्धुमध्ये वसेत्सदा ॥

इति हेमाद्रौ कुग्रामवासिनः प्रायश्चित्तम् ।

(१) कुग्राम वासिनां लक्षणमाह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) ओत्रियाश्च तटागादि तृणपर्णं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) ये तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः । यस्तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) चान्द्रायणाद्व्रतात् इति क्रीत-काशीपुस्तकपाठः ।

(५) तस्मादेनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ कुत्मितसेवाप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मूर्खश्च पिशुनश्चैव मद्यपोदुर्जनस्तथा ।  
स्तेयी च कितवश्चैव तएते दुर्जनाः स्मृताः ॥  
एतेषां योद्विजः सेवां प्रत्यहं समुपाचरेत् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति तप्तकृच्छ्रयादिना<sup>१</sup> ॥

सेवाप्रकारमाह—

गौतमः—

शौचार्यं सृत्तिकां तोयं प्रत्यहं पचनक्रियाम् ।  
तद्वाक्यमनुसृत्यैव हस्तपादविमर्दनम् ॥  
उच्छिष्टमाज्जेनं तेषां पात्रचैलादिधारणम् ।  
एवं द्विजः प्रतिदिनं सेवां कुर्वन् प्रवर्त्तते ॥  
सएव नरकस्थायी ब्रह्मकल्पक्षयादिह ।  
तद्दोषपरिहारार्थं पक्ष-मास-दिनक्रमात् ॥  
दिनैकस्मिन् पराकः स्यात् पक्षे तप्तमुद्वीकितम् ।  
प्राजापत्यं तथा मासे वर्षे चान्द्रस्य भक्षणम् ॥  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति वर्षादूढं पतत्यधः ।

वर्षादूढं पतितप्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नान्यथा ।

इति हेमाद्रौ कुत्मितसेवाप्रायश्चित्तम् ।



अथ खरोष्ट्रवलीवर्द्धमहिषवस्ताजारोहणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

खरमुद्रञ्च महिषं अनङ्गाहमजं तथा ।  
वस्तमारुह्य मुखजः क्रोशमात्रं प्रवर्त्तयेत् ॥  
महान्तं दोषमासाद्य भुवि भूयात् स वानरः ।  
खरमुद्रमनङ्गाहं वस्तं महिषमेवच ॥  
अजमारुह्य महमा विप्रः क्रोशं गतोयदि ।  
महान्तं नरकं गत्वा वानरोभुवि जायते ॥

क्रोशप्रमाणमाह—

लौगाक्षिः —

तिर्य्यग्यवोदराख्यष्टौ जडं वा ब्रीहयश्चये ।  
प्रमाणमङ्गुलस्योक्तं वितस्तिर्द्वादशाङ्गुला ॥  
वितस्तिर्द्विगुणाऽरति स्ते हे किष्कुस्ततोधनुः ।  
धनुःसहस्रं क्रोशश्च चतुष्क्रोशश्च योजनम् ॥  
माडेक्रोशप्रदेशश्च योजनं परिचक्षते ।

विप्रस्यैतेषामारोहणं पृथक् पृथक् प्रायश्चित्तमाह मार्कण्डेयः—

खरमारुह्य विप्रोऽसौ याजनं यदि गच्छति ।  
तप्तकृच्छ्रवयं प्राक्तं शुद्धिमाप्नोति वै द्विजः ॥

१ अयोद्रानङ्गमहिषेत्यादिः कृतं लेखितपुस्तकपाठः ।

२ तदङ्गा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ सधनुः सहस्रं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४ द्विजस्त्वैतद्व्याप्तं न लेखितपुस्तकपाठः ।



उद्धृत्तं महिषञ्चैव अनङ्गाहं द्विजः सकृत् ।

आरुह्य पूर्ववद् गच्छेत् प्राजापत्यमुदीरितम् ॥

अजं वस्तं तथाऽऽरुह्य पूर्ववद् यदि गच्छति ।

तत्र मान्तपनं प्रोक्तं शरीरस्य विशोधनम् ॥

पुनः कर्म प्रकुर्वीत पटगर्भविधानतः ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति द्विजोनान्यत्र शुध्यति ॥

एकस्मिन् दिवसे एकयोजने उक्तप्रायश्चित्तं, द्वितीये तृतीये वा,  
अभ्यासाद् द्विगुणं त्रिगुणं चतुर्गुणं वा वेदितव्यम् । सर्वत्र  
पुनरुपनयनम् ।

इति हेमाद्रौ खरोद्भवलीवर्द्धमहिषवस्ताजारीहणप्रायश्चित्तम् ।



## अथोद्वाहितायाः पुनरुद्वाहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

समुद्रयात्रास्वीडारः कमण्डलुविधारणम् ।  
दत्ताञ्जनायाः कन्यायाः पुनर्दानं वरस्य च ॥  
दौर्घकालं ब्रह्मचर्यं 'वर्जनीयं' कलौयुगे ।  
एतान् धर्मान् परित्यज्य योविप्रोदोषभाग्भवेत् ॥  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति तप्तकृच्छ्रशतादिह ।

गौतमः— पूर्वमुद्वाहितां कन्यामन्यस्मै धनकाङ्क्षया ।  
ममरादापि राजेन्द्र दद्याद्विप्रोदधनातुरः ॥  
भ्रूणहत्याममं पापमवाप्नोतीह तत्क्षणात् ।  
दातुः शुद्धिः करीषाग्नेः परिणेतुस्तथैन्दवैः ॥  
सा कन्या हरिणी प्रीक्ता तत्पुत्राः कुण्डसंज्ञिताः ।  
अनेकदोषवाहुल्यात् तस्य मार्गं परित्यजेत् ॥

जाबालिः—

पूर्वमुद्वाहितां कन्यां पिता भ्राता धनेच्छया ।  
'तथा यदिह रोषाद्वा अन्याधीनां करोति चेत् ॥  
'महादोषमवाप्नोति पितरोयान्यधीगतिम् ।  
दातुः शुद्धिः करीषाग्नेर्वाद्वान्द्रायणत्रयैः ॥

१. वर्जयित्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. यदि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. तयोरेति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. महादोषमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



माकन्या पांसुला ज्ञेया तत्पुत्रः कुण्डमञ्जितः ।

एतद्दोषविशुद्धार्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

कन्यादाता तु चापाग्रे प्रत्यहं स्नानमाचरेत् ।

वप्रेमात्रेण संशुद्धोनान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

तद्वत्तां तां परित्यज्य कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम् ।

तस्योपनयनं भूयः शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

मा कन्या पृथ्वजं चान्यं त्यक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ।

शिशुचान्द्रायणमित्यर्थः । अन्यथा नरकं व्रजेदिति । उभयोस्त्यागे

पुत्राभावे कन्यकायाश्चान्द्रायणात् शुद्धिः । पुत्रोत्पत्तौ तु तस्या

स्तत्पुत्राणां च गतिर्नास्ति । अतस्तूभयोस्त्यागएव वरः ।

इति हेमाद्रौ उद्वाहितायाः कन्यायाः पुनरुद्वाहप्रायश्चित्तम् ।



अथ मातृसम्बन्धपरिणयनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मातुः स्वसृकुले कन्या परिणीय स्ववन्धुतः ।

पश्चाज्ज्ञात्वा परित्याज्या स्वसा माता तु धर्मतः ॥

गौतमः—सम्बन्धं शोधयित्वा तु मातृतः पितृतस्तथा ।

सगोत्रप्रवरां कन्यां मातुश्च भगिनीं त्यजेत् ॥

यदि कामाद्विवाह्येत महादोषमवाप्नुयात् ।

तयोः संसर्गतो विप्रो मातृगामौति गद्यते ॥

सगोत्रजां प्रवरजां त्यक्त्वा सुखमवाप्यते ।

मार्कण्डेयः—

सगोत्रप्रवरामेनां मातुश्च भगिनीं तथा ।

अज्ञात्वा पूर्वमुद्वाह्यं ज्ञात्वा पश्चात् परित्यजेत् ॥

यदि पुष्पवतीं गच्छेत् लोभात् कामातुरः सकृत् ।

मातृगामौति विज्ञेयः सर्वकर्म<sup>१</sup> बहिष्कृतः ॥

पुत्रोत्पत्तौ तयोः पुत्रा अन्यजत्वमवाप्नुयुः ।

तदोषपरिहाराय देहशुद्धिं समाचरेत् ॥

१. परिभाषण इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. स्वसारं मातरं यस्तु अविचार्य स्ववन्धुतः । इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३. मातरं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. चरेत् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५. मातर इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

६. पुत्रमुद्वाह्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

७. सर्वकर्म इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

८. अन्यजत्वमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अगत्या यत्र चोद्वाहस्तत्रचान्द्रमुदीरितम् ।

‘यदा पुष्पवतीं गच्छेत् ‘तदा दोषमवाप्नुयात्’ ।

गुरुतल्पसमं प्रोक्तं मुष्कच्छेदविवर्जितम् ।

पुत्तोत्पत्तौ करीषाग्नौ दाहएव विधीयते ॥

सगोत्रजायाः प्रवरजायाः परिणयादौ प्रायश्चित्तं पुनः संस्कार-  
एव । कन्यकायाः पुरुषस्याङ्गं प्रायश्चित्तं क्षत्रियवैश्ययोरितद्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ मातृष्वसृमन्ध्वपरिणयनप्रायश्चित्तम् ।

१) तथा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) तथा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३) अवाच्येन इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ स्वदारपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

निष्कारणतया पत्नीं यस्यजत् पूर्वजोरुषा ।

नतस्येह परत्रापि, निन्दितस्यज्यते जनैः ॥

गौतमः— अप्रजां दशमे वर्षे स्त्रीप्रजां द्वादशे तथा ।

मृतप्रजां पञ्चदशे मद्यस्वप्रियवादिनीम् ॥

अप्रियवादीनाम कलौयुगे साक्षाद्व्यभिचारः । यद्यपि अप्रियाणि  
भर्तृविषये कलौ युगे बह्वनि सन्ति, तथापि साक्षाद् व्यभिचार  
एवाप्रियवादः तदा न्याज्या । अन्यथा दोषमाह—

गौतमः—

व्यभिचारादृते पत्नीं योविप्रः संपरित्यजेत् ।

भ्रूणहत्यामवाप्नोति ऋतुकालव्यतिक्रमात् ॥

स्वराजिनं बहिर्लोम परिधाय ३ स यत्नतः ।

शरावपात्रमादाय भिक्षार्थं ग्राममाविशेत् ॥

स्वदारव्यतिक्रमिणे भिक्षां देहीति याचयेत् ।

सप्तागाराण्यटित्वाथ भोजयेत् सायमादरात् ॥

षण्मासमेवं कृत्वा तु शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ।

१. सतस्येति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. पुज्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. बह्वनि इत्यत्र साक्षापितानि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(५) समन्ततः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

६. दार व्यतिक्रमणेन इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तदाह आपस्तम्बः —

“दारव्यतिक्रमो खराजिनं वहिलोम परिधाय दारव्यतिक्रमिणि  
भिन्नां देहौति सप्तागाराणि चरेत् । सा वृत्तिः । षण्मासात् ।”  
स्त्रीणां भर्तृत्यागे निष्कारणतयाप्येवंमर्द्धं प्रायश्चित्तं ‘महापातकि-  
शङ्कास्ति चेत् त्यागएव विहितः । कारणं स एव । नाचेत्  
स्वभर्तृप्रायश्चित्तवत् सर्वं कुर्यात् खरचर्मविना भिक्षार्थं पर्यटेत्  
पूर्व्वेवटाषण्मासात् ।

इति हेमाद्रौ स्वदारपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

१) महापातक शङ्का इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) पूर्व्वेवत् सदा षण्मासात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) पत्नीत्याग इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पितृगृहे असंस्कृतकन्यारजो<sup>१</sup> दर्शनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पितृगृहे तु या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता ।

सा कन्या वृषलो ज्ञेया तद्गर्ता वृषली पतिः ॥

वृषलः शूद्रः ।

मार्कण्डेयः—

<sup>२</sup>कन्यका पितृवेश्मस्था यदि पुष्पवती भवेत् ।

असंस्कृता परित्याज्या न पश्येत्तां कदाचन ॥

विवाहे नच योग्या सा लोकद्वयविगर्हिता ।

एतां परिणयन् विप्रो न योग्यो हव्य-कव्ययोः ॥

न तस्यां जनयेत् पुत्रं कानीन इति कथ्यते ।

माता पिता च पुत्रश्च त्रयस्ते वृषलाः स्मृताः ॥

यथा पुष्पवती कन्या तथैव त्यक्तुमर्हति ।

न तत्र दोषस्तस्याऽस्ति गृहे स्थित्वा स दोषभाक् ॥

<sup>३</sup>[यदिच्छेदात्मनः शुद्धिं तदा चान्द्रायणं चरेत्] ।

गौतमः—

यदा<sup>४</sup> कन्या पुष्पवती द्विजस्तामुद्वहेत् यदि ।

कालान्तरे यदा श्रुत्वा तदा तां परिवर्जयेत् ॥

[१] रजस्वला प्रायश्चित्तमिति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

[२] या कन्या इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

[३] अयं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति ।

[४] यदारजः पुष्पवती इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



यदिच्छेद् आत्मनः शुद्धिं तदा चान्द्रायणं चरेत् ।  
 कामातुरस्तदा गच्छेत् स चाण्डालसमीभवेत् ॥  
 पुत्रीत्पत्तिर्यदा भूयात् तदा पतितएव सः ।

इति हेमाद्रौ पितृगृहस्थितकन्या<sup>१</sup>रजोदर्शनप्रायश्चित्तम् ।

---

१ रजस्वनाप्रायश्चित्त मिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ कारागृहवासप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

कारागृहे बलात्कारात् स्थित्वा मासमतन्द्रितः ।

न स्नानञ्च न सन्ध्यादि न देवपितृतर्पणम् ॥

न स्वाध्यायोन वा होमः शूद्रएव न संशयः ।

मरीचिः ।

मासं कारागृहे वाऽपि नौभिर्यातोदिनत्रयम् ।

[स्नेच्छावासस्तथापन्नं योवर्त्तेत् स तु पातक्री ॥]

गौतमः ।

बलाद्दासीकृता ये तु स्नेच्छचाण्डालदस्युभिः ।

अशुभं कारिताः कर्म गवादिप्राणिहिंसनम् ।

उच्छिष्टमार्जनं तेषां तथा तस्यैव भक्षणम् ॥

तत्स्त्रीणाञ्च तथा सङ्गस्ताभिश्च सह भोजनम् ।

मासेऽपि तद्विजाती तु प्राजापत्यं विशोधनम् ॥

प्राजापत्यञ्च चान्द्रश्च चरेत् संवत्सरोपितः ।

आहिताग्निस्तयं कुर्यात् यदि कारागृहे वसेत् ॥

स्त्रीणामेतस्मिन् सम्भवे विप्रस्य प्रायश्चित्तार्द्धं मनूदितम् ।

१. अयं पाठः क्रीत-काशीपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

२. मरीचिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. तथालम्ब इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. वसन इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



यमः—

कारागृहाद् विनिर्गत्य प्रायश्चित्तं यथोदितम्<sup>१</sup> ।  
 कृत्वा विप्रः पुनः कर्म कुर्यात् शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति यथा भुवि<sup>२</sup> सुराघटः ।

इति हेमाद्रौ कारागृहनिवासप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) यथोचितं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) विषसुराघटा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ वन्दौगृहीतानां नारीणां प्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

वन्दौकृता यदानार्योनिवसेयुस्तदालये<sup>१</sup> ।

पक्षं मासं ऋतुं वापि संवत्सरमथाऽपि वा ॥

<sup>२</sup>एतासां निष्कृतिर्नास्ति व्यभिचारोयदा भवेत् ।

तत्रापि गर्भसम्पत्तौ परित्यागोविधीयते ॥

“गर्भे त्यागो विधीयते” इति मनुस्मरणाच्च । तदाह—

गौतमः—बलात् वन्दौकृतानारी तत्रैव निवसेद् यदि ।

पक्षं मासं ऋतुं चाब्दं न तस्या निष्कृतिर्भवेत् ॥

तथैव व्यभिचारः स्याद् यदि गर्भमधात् तदा ।

दैवात् तैः पुनरुत्सृष्टा तत्र शुद्धिः कथञ्चन ॥

तां पतिः पुनरादातुं विभ्येद्<sup>३</sup> वै जारवार्त्तया ।

इच्छन् सभामुपानीय वदेत् पापं हृदि स्थितम् ॥

इति भर्तुरनुज्ञाता सा वदेत्तत्समादरात् ।

उक्ते मत्ने तया<sup>४</sup> तां तु सभा सम्यग्विचार्य च ॥

षष्टिभिर्मृत्तिकाभिश्च<sup>५</sup> घृतशौचमनन्तरम् ।

कारयित्वा विधानेन स्नापयित्वा नदीजलैः ॥

१) तथालये इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) न तामां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) भवेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४) मातु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५) घृतागौवामनान्तर इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



कारयेत् पूर्ववद् विप्रा. प्रायश्चित्तमनुक्रमात् ।  
 अर्द्धमुक्तं ततस्त्रीणां प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ।  
 तस्या दोषनिवृत्तिः स्याज्जनवादाच्च हीयते ॥  
 ततस्तु पोषणं तस्याः संसर्गादि न कारयेत् ।

इति हेमाद्रौ वन्द्यैकतस्त्रीप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ रोगनिवृत्त्यर्थं मद्यपान-स्तन्यपानप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

‘यदि रोगनिवृत्त्यर्थं द्विजोवाऽपि तदङ्गना ।

सन्निपाते महाघोरे तन्निवृत्त्यर्थमञ्जसा ॥

औषधार्थं पिवेत्स्तन्यं<sup>१</sup> मद्यं वा वैद्यचोदितम् ।

तदारोगं<sup>२</sup> निवृत्तिश्चेत् मरणं वा भवेदुत ॥

तस्य देहविशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ।

‘शवाभावे पुनः कर्म कर्त्तव्यं देहशुद्धये ॥

तप्तकृच्छ्रं द्विजैः कार्यं दत्त्वा वा बहुदक्षिणाम् ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति मृतोजीवन्नुभौ तथा ॥

‘रोगोत्क्षणे सन्निपाते स्तन्यं वा मद्यमेव वा ।

पीत्वा चरेत् तप्तकृच्छ्रं [ पुनः संस्कारमादरात् ] ॥

प्रायश्चित्तं कृत्वा पुनः संस्कारं कृत्वा शुध्यति । मृतश्चेत् तप्तकृच्छ्र-

प्रत्याम्नायं ब्राह्मणैः कारयित्वा तत्पुत्रादिः परलोकसाधनार्थं

शवमनारभ्य ? पटुगर्भं विधिना विधाय मृत्वा-मन्वावृत्तिं कुर्यात्

(१) अथ इति क्रीतपुस्तकपाठः

(२) सत्यमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) निवृत्त इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) शवभावे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

अथ पाठः क्रीत-लेखितपुस्तकयोनोस्ति ।



एवमेतस्मिन् कृते सति मद्यपानस्तन्यपानदोषान्मुक्तः स परलोके  
सुखमवाप्नोति । नान्यथा पापकर्मैव ।

इति हेमाद्रौ रोगनिवृत्त्यर्थं मद्यपानस्तन्यपानप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ जातिभंगकरप्रायश्चित्तम् ।

देवलः—

व्यतीपाते च यानि च महापुरुषभोजने ।

भूत-प्रेत-पिशाचानां यदन्नं बलिकल्पितम् ॥

कुटुम्बभोजनं चैव ब्रह्मराक्षसभोजनम् ।

एतानि दुरन्नानि ।

एतेष्वन्नेषु योविप्रोधनलोभपरायणः ।

भुङ्क्ते तस्य गतिर्नास्ति तस्मादेतत्परित्यजेत् ॥

मार्कण्डेयः—

दुरन्नं मुखजोभुक्त्वा वस्त्रद्रव्यपरायणः ।

तदानीं मृत्युमाप्नोति जीवेद्वा पापकार्यमौ ॥

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ।

गौतमः— दुष्टान्नं योद्विजोभुङ्क्ते<sup>१</sup> पूर्वोक्तं पापरूपि यत् ।

मद्य एव परं मृत्युमुपविश्य ज्वरादिभिः ।

मृत्वा नरकमासाद्य कालेयः स भवेत्तदा ॥

तस्य दोयोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ।

प्राजापत्यद्वयं कृत्वा पुनः संस्कारपूर्वकम् ॥

पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात् शुद्धोभवति भूतले ।

इति हेमाद्रौ दुरन्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१) भोजनं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) जग्धा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथायुतमहस्रब्राह्मणभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अयुते वा सहस्रे वा नानावर्णसमागमे ।  
पतिन-क्लोव-वैडाल-ब्रात्य-तस्करपूरिते ॥  
कुण्ड-गोलक-सम्पात<sup>१</sup> नट-नर्तक<sup>२</sup> मङ्गुले ।  
पाषण्डजनसंसर्गे सर्वपातकमङ्गुले ॥  
भागडोच्छिष्टस्वयंप्राके स्वीजनैरुपशोभिते ।  
योविप्रोऽलोकमन्विच्छेन् न<sup>३</sup> भुञ्जीत कदाचन ॥  
यमोजिह्वां दहत्याशु सन्दंशैर्भृशदारुणैः ।  
तदन्ते भुवमामाद्य विड्वराहत्वमाप्नुयात् ॥

मार्कण्डेयः—

अयुते वा सहस्रे वा द्विजोब्राह्मणभोजने ।  
जिह्वाचापल्यतः क्षिप्रं भुङ्क्ते यदि कथञ्चन<sup>४</sup> ॥  
तस्य जिह्वां यमश्छित्त्वा नरके स्थापयत्यधः ।  
तत्रैव नरकं मुक्त्वा सूकरत्वमवाप्स्यते ॥  
एकस्मिन् दिवसे भुक्त्वा पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।  
पक्षं वा मासमात्रं वा भुक्त्वा विप्रोऽनिरन्तरम् ॥

१. सम्पाते इति क्रीत काशीपुस्तकपाठः ।

२. गायकसंकुले इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. भुञ्जीयान्न कदाचन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४. द्विजाधम इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



तप्तं पराकं चान्द्रञ्च कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
वर्षोपरीह शूद्रत्वं प्राप्नोति बहुवत्सरान् ॥

इति हिमाद्रौ अयुतसहस्रब्राह्मणभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

१) अवाप्य इति लेखितपुस्तकपाठः

---



अथ दीर्घमत्रभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

वर्षद्वयं वा<sup>(१)</sup> वर्षं वा तद्द्वं वा जनाधिप ।  
संकल्प्य भोजयेद् विप्रान् तद्दीर्घं मत्रमुच्यते ॥  
विप्रस्तत्र न भुञ्जीयात् पूर्ववत् दुष्टसङ्गमात् ।  
महादोषमवाप्नोति नरकं चाधिगच्छति ॥

गालवः—

दीर्घमत्रे तु भुञ्जीयाद् एकस्मिन् दिवसे नृप ।  
महादोषमवाप्नोति तत्र नानाजनागमे ॥  
कर्त्तारं स्वकृतं पुण्यं संवत्सरमुपार्जितम् ।  
सद्यो गच्छति तत्सर्वं अन्नमात्रपरिग्रहात् ॥  
प्रायश्चित्ती भवेद् तस्मात् अन्यथा दोषकार्यमा ।  
मामसंवत्सरादिकमालोच्य पूर्वप्रायश्चित्तवत्सर्वं कुर्यात् शुद्धो भवति ।  
नान्यथा ।

इति हेमाद्रौ दीर्घमत्रभोजनप्रायश्चित्तम् ।

(१) यो वा को वा इति क्रीत लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) प्रायश्चित्त इति क्रीत पुस्तकपाठः ।



अथ शूद्रसन्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः — शूद्रसन्ने न भुञ्जीयात् प्राणैः कण्ठगतैरपि ।

इत्थं विप्रो महालोके दुःसङ्गाद् वा महाभयात् ।

महान्तं नरकं गत्वा भुवि भूयात्स वायसः ॥

चाण्डालो वा ।

मार्कण्डेयः —

शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कं मासमेकं निरन्तरम् ।

कृत्वा शूद्रत्वमासाद्य चाण्डालः कोटिजन्मसु ॥

मनुः — तदन्नं तद्गृहे भुङ्क्ते तदनुज्ञानिरीक्षणम् ।

तदनुज्ञासवाप्याय स्वयं वापि निरीक्षणम् ॥

भुक्त्वा विप्रः सुपापीयान् षड्विधं शूद्रभोजनम् ।

एतेषामेवमन्नं वा विप्रो भुक्त्वा तु चापलात् ॥

महान्तं नरकं गत्वा वायसत्वमवाप्नुयात् ।

पक्षे मासे ऋतौ वाऽप्ये भोजनं तु यथाक्रमम् ॥

यावत् तत्तच्छुद्धं राजापत्यमथैन्दवम् ।

क्रमशः शुद्धिमाप्नोति कृत्वा पापान्य<sup>१</sup> नुक्रमात् ॥

विप्रस्त्रीणां भोजने प्राप्ते पक्ष-मास-क्रमेण तत्प्रतिपदीकं विप्रस्याङ्गं

वेदितव्यम् ।

इति ह्येमादौ शूद्रान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१. भुङ्क्तिरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. कृत्वा पापान्यथानुगान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ शूद्रवैश्यगृहे स्वयं पाकादि कृत्वा भोजनं-  
प्रायश्चित्तमाह ।

जातूकर्ण्यः—

शूद्र-वैश्यगृहे विप्रस्तदामान्नं पचन् मुदा ।  
तत्रैव भोजनं कृत्वा सद्यश्चाण्डालतां व्रजेत् ॥

देवलः—

शूद्रवैश्याऽऽलये राजन् तद्द्रव्यं पाचयेद्विजः ।  
तत्रैव भोजनं कृत्वा तदनुज्ञापुरःसरः ॥  
न तस्य निष्कृतिर्वास्ति <sup>१</sup>प्रायश्चित्तायुतैरपि ।

जावालिः—

वैश्य<sup>२</sup> शूद्रगृहे राजन् गृहीत्वाऽऽमं सकृद् द्विजः ।  
तत्रैव भुक्त्वा तद्द्रव्यं भोजयेदविचारयन् ।  
स महान्तं गिरिं गत्वा तत्रैव पतनं चरेत् ॥  
तेन शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा गतिरस्ति हि ।

पराशरः—

वैश्यालये वा शूद्रस्य आमं धृत्वा तदर्पितम् ।  
भुक्त्वा विप्रः स पापीयान् महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
पुनर्भूतलमागम्य चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ।  
तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥

(१) प्रायश्चित्तशतैरपि इति कार्शीपुस्तकपाठः ।

(२) वैश्यागृहे इति लेखितपुस्तकपाठः ।



शूद्रवैश्यगृहे स्वयं पाकादि कृत्वा भोजने प्रायश्चित्तम् । ३८३

परित्युक्त्वा तदानीं वा वापयित्वा शिरोरुहान् ।

स्नानं कृत्वा ततः पश्चात् शुद्धोभवति निश्चितम् ॥

इति हेमाद्रौ शूद्रवैश्यगृहभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ प्रेतैकोद्दिष्टभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मृताहैकादशे विप्रोभुक्त्वा कवलसंख्यया ।  
तावद्युगमहस्त्राणि रौरवं नरकं व्रजेत् ॥  
तदन्ते भुवमामाद्य रक्तपास्तुभवेज्जले ।  
यावन्त्यन्नपुलाकानि कवले कवले नृप ॥  
तावन्तः क्षमयः सर्वे भक्षित्वास्तेन पार्थिव ।

महानारदीये—

एकाहदिवसे राजन् द्वात्रिंशत्कवलसंख्यया ।  
गृहीत्वा मूल्यमश्नाति तावन्तः क्षमिराशयः ॥  
भक्षित्वास्तेन राजेन्द्र ! ततस्त्वतत्परित्यजेत् ।  
कवले कवले चान्द्रं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
पुनः कर्मविधानेन पटगर्भेण शुध्यति ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति प्रेतभूतश्चरन् भुवि ॥  
महापातकयुक्तो वा युक्तोवा सर्वपातकैः ।  
पटगर्भविधानेन पुनः संस्कारकृत्नरः ॥  
शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र पटगर्भमहत्तरः ।

इति हेमाद्रौ एकादशाहश्राद्धभोजनप्रायश्चित्तम् ।



अथ नग्नश्राद्धे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— नग्नश्राद्धे नवश्राद्धे गृहोत्थाऽऽमं द्विजोत्तमः ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

जायते भुवि दुष्टात्मा स्थावरत्वमवाप्नुयात् ।

मरीचिः—नग्नश्राद्धं नवश्राद्धं दशाहाभ्यन्तरे द्वयम् ।

[ प्रतिग्रहवतां नृणां महतां गृहितं द्वयम् ॥ ]

तद्वयं प्रतिगृह्याऽऽशु महारौरवमश्नुते ।

पराशरः—नवश्राद्धं च नग्नञ्च सूतकाभ्यन्तरे द्वयम् ।

तद्वयं प्रतिगृह्याऽऽशु महारौरवमश्नुते ॥

मरीचिः—नग्नश्राद्धे तु चान्द्रं स्यात् प्राजापत्यं नवाब्दिके ।

आद्यस्थाने तदर्द्धं स्यात् तदर्द्धं स्यात् सपिण्डने ॥

प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा शुद्धो भवति पूर्वजः ।

विप्रप्रतिग्रहे यथाशास्त्रम् । तत्रियवैश्यप्रतिग्रहे तु द्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ नग्नश्राद्धप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) नग्नं प्राच्यादन इति पुनरधिकः पाठः, क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्दृष्टं प्रतिग्रह

प्रदाप्राक्

(२) तथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

१ इदमर्द्धं क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नदृष्टम् ।

३ मरीचिचरितं क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ सूतकद्वयभाजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— सूतकद्वितये राजन् जाते तस्य द्विजोयदि ।

अज्ञानाद् भोजनं कुर्यात् सद्यः संस्कारमर्हति ॥

ज्ञात्वा तदन्नं<sup>१</sup> संच्छेद्य पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।

ऊर्ध्वभावे तदा स्नात्वा पुनः कर्माऽपरेऽहनि ॥

उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।

अन्यथा नरकं घोरं यात्यत्रैव न मंशयः ॥

मार्कण्डेयः—

सूतकद्वितये ज्ञानात् विप्रोभोजनमादरात् ।

कृत्वा सद्यः पतत्येव पुनः संस्कारमाचरेत् ॥

ऊर्ध्वयित्वा तदन्नं वा पञ्चगव्येन शुध्यति ।

ऊर्ध्वभावे तदा स्नात्वा पुनः कर्म<sup>२</sup> विधानतः ॥

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरीरिता ।

इति हेमाद्रौ सूतकद्वितयभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१) मन्थज्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) परेर्हनि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ श्राद्धान्नशिष्टभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अमायां पितृके श्राद्धे सर्वश्राद्धे महालये ।

श्राद्धे वै षष्ठवत्याख्ये सपिण्डीकरणे तथा ॥

मासिकेषु तथा विप्रो न कुर्यात् शेषभोजनम् ।

महाभारते—

श्राद्धकर्मणि भोक्तारो भोक्तारो यज्ञकर्मणि ।

श्राद्धशिष्टान्नभोक्तारस्ते वै निरयगामिनः ॥

सगोत्राणां सकुल्यानां ज्ञातीनाञ्च न दोषभाक् ।

पुत्रीणामन्यगोत्राणां विधवानां न दूष्यते ॥

यतोनां कर्मनिष्ठानां महतां ब्रह्मचारिणाम् ।

न भोक्तव्यं पितृकादौ पितृशेषं महात्मनाम् ॥

जावालिः—

श्वशुरस्य गुरोर्वापि मातुलस्य महात्मनः ।

ज्येष्ठभ्रातुश्च पुत्रस्य ब्रह्मनिष्ठस्य ज्ञानिनः ।

एतेषां श्राद्धशिष्टान्नं भुक्त्वा दोषो न विद्यते ॥

इति केचित् प्रशंसन्ति इह यत्तदसाम्प्रतम् ।

लिङ्गपुराणे—

मातुलस्य गुरोर्वापि श्वशुरस्य महात्मनः ।

पित्रोश्च ब्रह्मनिष्ठस्य ज्येष्ठभ्रातुश्च ज्ञानिनः ॥

(१) ज्ञानिनः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) ज्ञानिनः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पैतृकेषु न भोक्तव्यं विधवानां महामुने ।

विधवानामन्यगोत्राणां श्राद्धेष्वेतेषु न भोक्तव्यं श्राद्धशिष्टान्नं अन्य-  
गोत्रिणां ब्रह्मचारिणामपि ।

मार्कण्डेयः—पित्रादीनामथाऽन्येषां श्राद्धशिष्टान्नभोजनम् ।

व्रतिनां विधवानाञ्च यतीनाञ्च विगर्हितम् ॥

विधवानामन्यगोत्राणामित्यर्थः

जाबालिः—

विप्रस्त्वन्यगृहे श्राद्धे शिष्टान्नभोजनं चरेत् ।

प्राजापत्यं विशुद्धिः स्यात् ज्ञातिगोत्री न दोषभाक् ॥

अन्यगोत्री श्राद्धशिष्टान्नभुग्यदि—

केशानां वपनं कृत्वा तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ।

उपविश्य सुखी भूत्वा प्रणवं लक्ष्माचरेत् ॥

मर्त्येन पञ्चगव्यप्राशनं मन्त्राभिभिर्विना ब्रह्मचारिणां स्वपित्रा  
देरन्नशिष्टभोजने न दोषः व्रतिनामपि । विधवानां अन्यगोत्राणां  
तत्रापि न भोक्तव्यं मन्त्राभिभिर्न कुत्रापि ।

इति हेमाद्रौ श्राद्धान्नशिष्टभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१. शिष्टान्नं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. ज्ञाती गोत्री इति कीर्त-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ क्रीतान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

देवालयेषु मार्गेषु ग्रामेषु नगरेषु च ।

विप्रः क्रीतान्नभोक्ता चेत् तदा नरकमाप्नुयात् ॥

महाभारतः—

क्रीतान्नं देवतागारे ग्रामे वा पत्तने पथि ।

यो भुङ्क्ते पूर्वजो ज्ञानात् नरकं<sup>१</sup> स समाप्नुयात् ॥

देवीपुराणे—

विप्रः कण्ठागतप्राणः क्रीतान्नं यदि चाश्रुते ।

ग्रामे वा नगरे तीर्थे महादेवालयेऽपि वा ॥

स गत्वा नरकं घोरं नानायोनिषु जायते ।

तस्मात्तस्य विशुद्धयर्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥

त्रिरात्रं भोजने कार्यं पक्षे तप्तं निरन्तरम् ।

महातप्तं तु मासे च वत्सरे चान्द्रमुच्यते ॥

अतः परं शूद्रतुल्यो विद्वानपि च दोषभाक् ।

विप्रस्त्रीणामेतदर्थं यति-ब्रह्मचारि-विधवानां तद्विगुणम् । महा-

चेत्वमिति जनमादृश्यात् क्रीत्वा भोजने विशेषमाह—



जाबालिः—

विप्रस्वेतन्महाक्षेत्रं महातीर्थं जनावृतम् ।

क्रीत्वाऽन्नं जनसादृश्यात् इति भुक्ते सकृद् यदि ॥

केशानां वपनं प्रीक्तं तप्तकच्छं समाचरेत् ।

इति हेमाद्री क्रीतान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) जग्ध्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ संघातान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

संघीभूता यदा विप्राः स्त्रियोवा राजवल्लभ ।

स्वैः स्वैर्द्रव्यैरेकभाण्डे पाचयेयुः पृथक् पृथक् ॥

पृथक् पृथगिति भिन्नपात्रे वा ।

भुक्त्वा दोषमाप्नुवन्ति शूद्रतुल्या भवन्त्यतः ।

जावालिः—

विप्राश्चेदेकग्रामस्थास्तीर्थयात्रादिकर्मसु ।

संघीभूय स्वकैर्द्रव्यैः पाचयित्वाऽपि भुञ्जते ॥

शूद्रतुल्या भवन्त्येते नरकं यान्ति ते जनाः ।

“एकग्रामस्था” इति पदं यत्र यत्र सम्भावितं तत्र तत्र योज-  
नीयम् ।

गौतमः—

सङ्घोभूय द्विजाः सर्वे मार्गे तीर्थागमेऽपि वा ।

स्वद्रव्य<sup>१</sup> मेलनं कृत्वा पक्त्वा भुक्तेकदेशतः ॥

ते सर्वे नरकं यान्ति शूद्रतुल्या न संशयः ।

तेषामिदं मुनिप्रोक्तं प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥

(१) द्विजा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तीर्थे गवे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) स्वद्रव्यं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एकगाने पञ्चमव्यं द्विराने यावकं चरेत् ।  
 प्राजापत्यं त्रिराने च पक्षे चान्द्रायणं स्मृतम् ॥  
 मासे तु शूद्रतुल्याः स्युः स्त्रीणामर्धं मुनीरितम् ।

इति हेमाद्रौ संघातान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) मनीषिभिः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) संघात इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



## अथ यागान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

यज्ञेषु पशुबन्धे वा यागार्थं पचनं<sup>१</sup> यदि ।

तदा विप्रैर्नभोक्तव्यं लोकेषुभिरकल्मषैः ॥

“पचनं यदि इति” यज्ञशालायां दीक्षितगृहे वा सम्पादित-  
मन्नमित्यर्थः ।

महाभारत—

पशुबन्धेषु यज्ञेषु अन्नमत्ति यदा द्विज<sup>२</sup> ।

स वै नरकमाप्नोति स विलङ्घ्यमानो<sup>३</sup> द्विजः ॥

कण्वः— योविप्रोयागशालासु वपायागादधोयदि ।

भुङ्क्तेऽन्नं तत्र संघाते<sup>४</sup> महापातकमश्नुते ॥

पुनस्तस्योपनयनं प्राजापत्येन शुध्यति ।

एतत्प्रायश्चित्तं वपायागात् पूर्वं भोजने वेदितव्यम् ।

ततः परं भोजने विशेषमाह—

गौतमः—

‘वपायागात्परं विप्रोभोजने दीक्षितालये ।

प्राजापत्यं चरच्छुद्धैः मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥

ऋत्विजां विप्रस्त्रोणाञ्चैवं वेदितव्यम् ।

१. हविः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. वार्पाति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३. मघातं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. तस्या इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५. विशुद्धार्थमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तदेवाह कात्यायनः—

ऋत्विजाञ्च 'वरस्त्रीणां भोक्तृणां यागसद्गनि ।

उपोथ्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन 'शोधनम् ।

सुवामिनीनां तद्भर्तुः पादोदकम् । विधवानां केशवापनं ब्रह्मकूर्च-  
विधानञ्च । यति-ब्रह्मचारिणां वपायागात्पूर्वं अन्नभक्षणे चान्द्रम् ।  
ततः परं प्राजापत्यम् ।

इति हेमाद्रौ यागान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

१) वरस्त्रीणामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) शुध्यति इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ चौलसीमन्तान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

चौलकर्मणि सीमन्ते मुहूर्त्ताद् भोजने<sup>१</sup> परम् ।

सुरापानसमं प्रोक्तं अतो नेच्छन्ति सूरयः ॥

सीमन्ते पुंसवे चैव चौलकर्मणि योद्विज<sup>२</sup> ।

असगोत्रस्तदन्नादः सुरापीत्युच्यते बुधैः ॥

मार्कण्डेयः—

चौलकर्मणि सीमन्ते पुंसवे योऽन्यगोत्रजः ।

मुहूर्त्तादूर्ध्वभुक् पापी सुरापानमवाप्नुयात् ॥

प्रायश्चित्तं द्विजैः प्रोक्तं दुष्टान्नादिविभोजने ।

सुमुहूर्त्तात् परं तप्तं तत्पूर्वं वेदमातरम् ॥

जप्ता शुद्धिमवाप्नोति सहस्रं विधिपूर्वकम् ।

स्त्रीणामर्द्धं यतीनां च व्रतिनां चान्द्रमुच्यते ॥

पूर्वत्र परत्र च समम् ।

इति हेमाद्रौ चौलसीमन्तान्नभोक्तृणां<sup>३</sup> प्रायश्चित्तम् ।

---

(१) चोले इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) भोजनं इति क्रीत-काशीपुस्तकपाठः ।

(३) सीमन्तभोक्तृणानिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ गणकान्नदेवलकान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

देवलान्नन्तु यो भुङ्क्ते गणकान्नं तथा <sup>१</sup>द्विजः ।

<sup>२</sup>मद्यपी तौ विजानीयात् सर्वकर्मवह्निष्कृतौ ॥

विश्वरुहस्ये—

देवलकान्नं यो भुङ्क्ते <sup>३</sup>तथा ऽन्नं गणकस्य च ।

तावुभौ प्रापककर्माणि न सम्भाष्यौ कदाचन ॥

गारुडपुराणे—

देवार्चकस्य यो भुङ्क्ते <sup>१</sup>तथा गणकवेश्मनि ।

उभौ तौ पापिनौ प्रोक्तौ प्रायश्चित्तमथाऽर्हते ॥

एकरात्रे पञ्चगव्यं त्रिरात्रे यावकं स्मृतम् ।

मासमात्रे पराकः स्याद् अर्धे चान्द्रमुदीरितम् ॥

ततः परं तत्समः स्यात् स्त्रीणामर्धमुदीरितम् ।

यति-ब्रह्मचारि-विधवानां एतद्वैगुण्यम् ।

इति हेमाद्रौ गणकदेवलकान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१) देवलकान्नं भुङ्क्तापि तथा गणकान्नभोजनं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) मद्यपीतौ इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३) तथा गणक भोजनम् । इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथास्नानभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— अस्नात्वाशौ मलं भुंक्ते अजपी पूयशोणितम् ।

अहुत्वान्नं कृमिं भुंक्ते अदाता विषमश्रुते ॥

महाभारते—

अरोगी स्नानहीनः स्यात् 'कुर्व्याद्भोजनमादरात् ।

यावन्त्यन्नपुलाकानि तावन्मलमुदीरितम् ॥

गौतमः— अस्नात्वा भोजनं विप्रो निरोगी कुरुते यदि ।

स मलाशौ सदा ज्ञेयः सर्वकर्मसु गर्हितः ॥

विष्णुधर्मोत्तरे—

स्वस्थो विप्रो यदाऽस्नात्वा 'भुङ्क्ते भोगपरायणः ।

विष्ठां तदन्नमिच्छन्ति मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ॥

'आद्धकालेषु चान्द्रं स्याद् ग्रहणे तद्द्वयं स्मृतम् ।

पञ्चपर्वसु तप्तं स्यात् इतरत्र तु यावकम् ॥

विधवानां ब्रह्मचारिणां यतीनां च प्रायश्चित्त<sup>१</sup> द्वैगुण्यम् ।

इति हेमाद्रौ अस्नानभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१. अदानोविषमश्रुते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. कृत्वा भोजनमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३. भुङ्क्ता इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. आद्धकाले तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. प्रायश्चित्ताद् द्वैगुण्यामिति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पर्युषितान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

जले निधाय पूर्व्यदुग्धदन्नं जलसेचनम् ।  
तत्तु<sup>१</sup> पर्युषितं भुक्त्वा महत् पापमवाप्नुयात् ॥

गौतमः—

दुग्धं जलसिक्तञ्च रूपहीनं यदस्ति हि ।  
पर्युषितं तु तत्त्याज्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

गालवः—

दिग्धं घृतेन तैलेन यदन्नं संस्कृतं च यत् ।  
दुग्धरहितं भोज्यमन्यथा चान्द्रमुच्यते ॥

गौतमः—

हिङ्गु-जौरकसंमिश्रं तिलिणीरसवेष्टितम् ।  
दुग्धरहितं चान्नं भोक्तव्यं द्विजपुङ्गवैः ।  
एतद्देव्यैः परिष्कृत्य दुग्धरहितं यदि ॥  
कृत्वा तत् पूर्वदिवसे भोक्तव्यं स्याद् द्विजन्मभिः ।  
दुग्धजलसंमिश्रं पूर्व्यदुग्धदन्ते धृतम्<sup>२</sup> ॥  
तत्पर्युषितसंज्ञं स्यात् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ।  
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं चेद्<sup>३</sup> भुङ्क्ते पर्युषितं द्विजः ॥

(१) तत् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दुग्धरहितमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) ध्रुवं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) भुक्त्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



पर्युषितान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

३६८

तस्योपनयनं भूयश्चान्द्रायणमथाचरेत् ।

ब्रह्मचारि-विधवा-यतीनां द्विगुणं प्रायश्चित्तम् । ब्रह्मचारिणां  
संवत्सरभोजने पुनरुपनयनं चान्द्रायणद्वयञ्च ।

इति हेमाद्रौ पर्युषितान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ दुर्भक्ष्यभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

दुर्गन्धसहितं<sup>१</sup> भक्ष्यं तथा पर्युषितञ्च यत् ।

शष्कुलीमाषनिर्म्माणं<sup>२</sup> विपणिस्थञ्च यद्वेत् ॥

तैलपक्कविहीनञ्च न भोज्यं स्याद् द्विजातिभिः ।

पराशरः—

भक्ष्यं वै माषसम्भृतं<sup>३</sup> विपणिस्थमतैलजम् ।

दुर्गन्धं पूतिगन्धञ्च पितृदेवविवर्जितम् ॥

\*[शष्कुलीफाणिकाराजन् वटका माषसम्भवाः ;

निष्कारणतया विप्रो न भुञ्जीयात्काटाचन ॥

गालवः —

अन्ननिर्मितवस्तूनि शुष्कोभूतानि शङ्कुलीः ।

माषका माषसम्भृता हिङ्गुजीरपरिष्कृताः ॥

दुर्गन्धिपूतिगन्धीनि विपणिस्थानि यानि च ।

अनर्पितानि देवानां शुभपैतृकवर्जितम् ॥

(१) दुर्गन्धरहितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) शष्कुली इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) विषाणस्थं च इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) विषाणस्थमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

\* [अस्मात् चिक्रादारभ्य उत्तरत्वं प्रदर्शितैतत्सदृशचिक्रपथ्यं न मद्रिनपाठः ।  
क्रीतपुस्तके न दृष्टः ।



न भुञ्जीयादिमानोह विप्रोदुष्टान्नभुक् तदा ।

तस्येह<sup>१</sup> निष्कृतिर्नोक्ता<sup>२</sup> विप्रैर्धर्मपरायणैः ॥

पित्र्यं देवकार्यार्थं पक्ता भुक्ता न दोषभाक् ।

जिह्वाचापत्यमागम्य भक्षयेद्यदि पूर्वजः ॥

इथा तानि<sup>३</sup> भक्षयित्वा, यावकं कृच्छ्रमाचरेत् ।

शोभते पितृकार्येषु देवकार्येषु येषु च ॥

अद्यात्तेषु यदा विप्रस्तदा दोषेन लिप्यते ।

स्तौणामेतद्वेम् । विधवा-ब्रह्मचारि-यतीनां<sup>४</sup> विप्राद् द्विगुणम्

इति हेमाद्रौ दुर्भिक्षभक्षणप्रायश्चित्तम् ।

१. तस्येव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२. निष्कृतिर्नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. न भक्षित्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४. विप्रे इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दुष्टशाकभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

कर्णिकारस्य यच्छाकं यच्छाकं दुष्टरीकृतम्<sup>१</sup>  
विश्वोपवेशे शाकञ्च शाकं<sup>२</sup> मुखस्त्रवं तथा ॥  
गुर्गरी-चञ्चरीशाकं शाकं वर्षीद्वयञ्च यत्<sup>३</sup>  
करञ्चशाकं दुर्भक्ष्यं देवता-पितृवर्जितम् ॥  
अत्यस्त्रयुक्तं दुर्गन्धि तच्छाकं परिवर्जयेत् ।  
उल्लङ्घितञ्च यच्छाकं यच्छाकं पादनाडितम्<sup>४</sup> ॥  
पलाण्डु-लशुनाक्रान्तं भावदुष्टं परित्यजेत् ।  
एतानि विप्रौ नाश्रीयात् तथैतानि न भक्षयेत्<sup>५</sup> ॥  
ज्ञात्वा भक्षेत् तदा पापौ उपोष्य रजनौमिमाम्  
परिदुर्भक्षयेत् पञ्च-गव्यं होमपुरःसरम् ॥  
एतेन शुद्धिमाप्नोति दुष्टशाकान्नभुङ्क्ष्व  
स्त्राणां विधवानां ब्रह्मचारि-यतीनां च प्रव्रवत ।

इति हेमाद्रौ दुष्टशाकभक्षणप्रायश्चित्तम्

१. दुष्टरीकृतमिति काशीपुस्तकपाठः ।

२. विश्वोपवेश इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. मुखस्त्रवं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४. गगरी इति काशीपुस्तकपाठः ।

५. उल्लङ्घितञ्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ कारणं विना परमान्न-कुसरान्नभोजने प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

परमान्नञ्च कुसरं वृथा पक्ता दिर्जोत्तमः ।

भुञ्जीयात् केवलं तेन नरके वासमश्नुते ॥

माकण्डेयः—

रवौ धनुःसमायाते गृहे कन्या रजस्वला ।

पितृर्थं देवकार्यार्थं परमान्नं प्रशस्यते ॥

धनुर्मामे तु कुसरं प्रशस्तं यदि दुहित्वा स्वसा स्नुषा वा प्रथमरज-  
स्वला स्यात्तत्र कुसरान्नभोजने, तीर्थयात्रासु च, न दोषः । नदाह ।

गौतमः—

धनुर्मामे गृहे कन्या यदि स्यात् प्रथमार्त्तवा ।

देवयात्रासु सर्व्वेभ्यः कुसरान्नं न दोषः कृतम् ॥

पैतृकादिषु देवकार्ये बन्धुसमागमे च परमान्नभुक् न दोषभाक्  
नदाह

मनु,

पितृकार्येषु सर्व्वेषु देवे बन्धुसमागमे

परमान्नं प्रयज्यतां प्रभुपदारसम्भवे ॥

१ तच्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ ज्ञापयतुभावे नास्ति

३ न दोषभाक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४ दोषकारी इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५ पक्ता भक्ति नदध्याये इति लेखितपुस्तकपाठः ।



द्विजो विना निमित्तैस्तद् भुक्त्वा पापं समश्रुते ।

ऋयित्वा तदन्नञ्च उपोष्य रजनीमिमाम् ॥

पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् शुद्धीभवति नान्यथा ।

म्यादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ ब्रूयात् परमान्न-कृमिगान्धभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ एकादश्यामन्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—एकादश्यां न भुञ्जीयात् पक्षयोरुभयोरपि ।

यदि भुंक्ते स पापी स्याद्रौरवं याति दारुणम् ॥

मार्कण्डेयः—

हरिवासरभुग्वापि यजत्यन्नविमर्दनः ।

शुक्ले कृष्णे तथा राजन् महान्तं नरकं व्रजेत् ॥

मानवः—

यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यायुतानि च ।

अन्नमाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मादन्नं परित्यजेत् ॥

‘शुक्लमेव सदागृही’तिवचनं पात्रिकं कास्यविषयम् । ‘वस्तुतो

न नित्यत्वेन भोक्तव्यम् । केचिदत्र भुञ्जते तदसमीचीनम् ।

मार्कण्डेयः—

‘ब्रह्मनिष्ठश्च यो विप्रः सर्वद्रव्यममस्तु यः ।

कृष्णपक्षेऽन्नभुक् चेत् स्यात् न पापफलभाक् तदा ॥

गौतमः—

कृष्णपक्षे हरिदिने दिज्ञो ब्रह्मपरायणः ।

भुक्त्वा सर्वममः सोऽपि उपवासफलं लभेत् ॥

अन्यथा विपःमात्रेण भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ।

१) वस्तुतो नितिभागे लेखितपुस्तके नास्ति ।

२) ब्रह्मनिष्ठस्य विप्रस्य सर्वद्रव्यममस्य च । इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) तत्र स इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) विपमात्रेण इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गालवः—

एकादश्यन्नभुक् पापी शुद्धयं चान्द्रमाचरेत् ।

विप्रः सर्वसमस्तत्र भुक्त्वा दोषैर्न लिप्यते ॥

विधवानां व्रतिनां मथ्यामिनां च द्विगुणं प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ एकादश्यामन्नभोक्तृणां प्रायश्चित्तम् ।



अथ ब्राह्मन्-कुष्ठान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

ब्राह्मन् यदि कुष्ठान्नं भुंक्ते विप्रः क्षुधातुरः ।

कवले कवले चान्द्रं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

मरीचिः—

नग्नो वेदपरित्यागी ब्राह्म्यो गायत्रिनाशकः ।

कुष्ठो तत्र च विज्ञेयो दुश्कर्मा मातृघातकः ॥

तयोरन्नं द्विजोभुक्त्वा 'शुद्धे' चान्द्रायणञ्चरेत् ।

पराशरः—

दुश्कर्माणश्च ब्राह्मस्य अन्नं भुङ्क्ते द्विजः सकृत् ।

तस्य देहविशुद्धयं चान्द्रमुक्तं मुनीश्वरैः ॥

विधवा-ब्रह्मचारि-यतीनां पूर्व्ववत् ।

इति हंसाद्री ब्राह्मन्-कुष्ठान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।



## अथ कुण्डगोलकयोः परिवित्तिपरिवेत्तोश्चान्न- भोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

परिवित्तिः परिवेत्ता कुण्डश्च गोलकस्तथा<sup>१</sup> ।  
तेषामन्नं न भोक्तव्यं विप्रैः पापपराङ्मुखैः ॥  
कुण्ड-गोलक-परिवित्ति-परिवेत्तूणां लक्षणमाह ।

मरीचिः—

स्वस्थे भर्त्तरि या नारी जारासक्ता भवेद् यदा ।  
तदुत्पन्नस्तु कुण्डः स्यात् सर्वकर्मवह्निष्कृतः ॥  
मृते भर्त्तरि या नारी जरात् सुतमुपानयेत् ।  
तत्सुतोगोलसंज्ञः स्यात् सर्वकर्मवह्निष्कृतः ॥  
स्वस्थे ज्येष्ठे तमुल्लङ्घ्य कनीयानुद्वहेत् स्त्रियम् ।  
स ज्येष्ठः परिवित्तिः स्यात् परिवेत्ता स हानुजः ॥  
तत्पुत्रः परिविन्नः स्यात् परिविन्दोद्वितीयजः ।

यमलयोः व्युत्क्रमसंस्कारे राज्यपालने आन्दोलिकागौहणे चैव  
वेदितव्यम् ।

गालवः—

कुण्डगोलकयोश्चान्न परिवित्तस्तर्धैव च  
परिवेत्तुर्यदन्नञ्च तत्पुत्राणाञ्च यद्वेन ॥

१. कुण्डश्च गोलकश्चैव परिवित्तिः परिवेत्ता इत्येव पाठः लेखितपुस्तके ३५

२. सर्वे गोलकमज्ञ इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तयोर्व्युत्क्रमसंस्कारे यदन्नं मृष्टसंज्ञितम् ।  
तदन्नं संपरित्याज्यं पूर्वजैर्धर्मवत्सलैः ॥

पराशरः—

परिवित्तिः परिवेत्ता च तथा तौ कुण्डगोलकौ ।  
तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च यमजौ व्युत्क्रमौ यदि ॥  
तेषामन्नं न भोक्तव्यं मुखजैर्धर्मलिप्सुभिः ।  
तत्र भुक्त्वा द्विजोऽज्ञानात् 'दशवारं विधुं चरेत् ॥

चान्द्रायणमित्यर्थः ।

मासि चान्द्रं पराकञ्च चरेत् संवत्सरे शृणु ॥\*  
चान्द्रायणं पराकञ्च प्राजापत्यं समाचरेत् ॥  
अतःपरं तत्समः स्यात् अपांक्तियः सदाऽशुचिः ।

यति विधवादीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ कुण्डगोलकाद्यन्नभोक्तृणां प्रायश्चित्तम् ।

\* चान्द्रं दशगुणं चरेत् इति काशीपुस्तकपाठः ।



अथ यत्यन्न-दम्पतिभुक्तशिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

यत्यन्नं यतिपात्रस्थं यतिना प्रेरितं तथा ।

दम्पत्योर्भुक्तशेषं यत् तद्भुक्ता चान्द्रमाचरेत् ॥

‘यतिर्द्रव्याण्यर्जयित्वा यत्समाराधनादिकं करोति तद्यत्यन्नम् ।  
यतिभिर्क्षामटित्वा स्वभोजनोपरि यच्छिष्टं<sup>१</sup> त्यजति तद्यति-  
पात्रस्थम् । स्त्रीपुरुषयोर्भुक्त्यनन्तरं यदन्नं परिवेषितं तत् दम्पति-  
शिष्टम् । तदाह

‘बृहमनुः—

धर्मार्थकामान् संत्यज्य प्रथमं समतां त्यजेत् ।

इमं धर्मं परित्यज्य यतिः पापकरो भवेत् ॥

बालाश्च कुलवृद्धाश्च गर्भिण्यातुर-कन्यकाः

संभोज्याऽतिथि-भृत्यांश्च दम्पत्योः शेषभोजनम् ॥

इमं<sup>२</sup> धर्मं परित्यज्य विपरीतं तर्थायेदि ।

तत्र भोक्ता द्विजो यस्तु स शुद्धैश्चान्द्रमाचरेत् ॥

(१) यदि इति क्रातपुस्तकपाठः ।

(२) यत् इति पठं क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति

(३) त्यजतीति पठं लेखितपुस्तके नास्ति ।

(४) पुरुषभुक्त्यनन्तरं इति क्रातपुस्तकपाठः ।

(५) मनुर्विद्येव पाठः क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति

(६) इति धर्मं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(७) भक्ता इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः



गौतमः—

यतराराधने भुक्त्वा 'यत्यन्नं भोजनोपरि ।

दम्पत्योर्भुक्तशेषं यद् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरित् ॥

विधवादीनां पूर्व्ववत् परिकल्पनीयम् ।

इति हेमाद्रौ यत्यन्न-दम्पतिशिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

१ यद्धनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ उच्छिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

उल्लङ्घितं<sup>१</sup> पादघातं विडालाखुविमर्दितम् ।  
पूर्वोक्तशाकसंयुक्तं पलाण्डु-लशुनावृतम् ॥  
देवपूजाविहीनं यद् वैश्वदेवविवर्जितम् ।  
[एकपङ्क्त्युपविष्टेन ब्राह्मणेन विधातितम् ॥  
पुनः क्षालनभाण्डेषु तथा मौनविवर्जितम् ।  
पुच्छैः पौच्छैर्गुजैर्वा पुच्छीपुच्छैरथापि वा ॥  
भार्याविलोकने चैव यद्यदन्नमसाक्षिकम् ।  
देवालये च यद्भुक्तं यदन्नं मूल्यसम्भवम् ॥  
‘हिम्वातैलेन शूर्पेण वदनेनानिलेन च ।  
शान्तं पिण्डीकृतं चान्नं यदन्नं जीवतण्डुलम् ॥  
तुष-पाषाणसंयुक्तं खलीकरणमिश्रितम् ।  
एतद्दुष्टं विजानीयात् पूर्वोक्तं गालवादिभिः ॥  
एतद्भुक्ता<sup>३</sup> द्विजः सद्योमहापापं समश्नुते ।

भोक्तुरागमनात् पूर्वं यद् भोजनपात्रपरिवेष्टितं तदसाक्षिकम् ।  
शेषं स्पष्टम् ।

१ उल्लङ्घनम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ एष श्लोकः क्रीतपुस्तके नास्ति ।

३ दिग्धातैलेनेति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ द्विजो यस्तु इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः,—

दुष्टान्नं यो द्विजोभुङ्क्ते<sup>१</sup> पूर्वमुक्तं मनीषिभिः ।

पश्चात्स देहशुद्ध्यर्थं पराकं कृच्छमाचरेत् ॥

एतत्सगोत्रबालभोजनविषयमपि, भगिनीपुत्रादिसहभोजने पुत्री-  
पुत्रादिसह<sup>२</sup>भोजनाद् द्विगुणं, विधवा-ब्रह्मचारि-यतीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ उच्छिष्टान्नभोजन प्रायश्चित्तम् ।

---

(१) भुक्त्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः

(२) पश्चाद्देहविशुद्ध्यर्थं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सह इति लेखितपुस्तके नास्ति ।



अथ पत्नीसहभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—द्विजः कामातुरीयस्तु पत्न्या सहयदानभुक् ।

‘म विधाय तदा चान्द्रं शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ॥

पत्न्या सह भोजनकालमाह—

बृहस्पतिः—

महारण्ये च यात्रायां पथि चौराकुले मति ।

असहायो भवेद्विप्रस्तदा कार्यं द्विजन्मभिः ॥

एकत्र यानमारोहेत् एकपात्रे तु भोजनम् ।

‘पत्न्यासह सदा भुक्त्वा विप्रस्तत्र न दोषभाक् ॥

अन्यत्र भोजने स्थाने सद्धान्तं नरकं व्रजेत् ।

तदोषपरिहारार्थं पश्चाच्चान्द्रायणं चरेत् ॥

पराशरः—

एकत्र यानं स्यारोहमेकपात्रे तु भोजनम् ।

विवाहे पथि यात्रायां कृत्वा विप्रो न दोषभाक् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति पश्चाच्चान्द्रायणं चरेत् ।

अभ्यासे द्विगुणञ्चैव कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

इति हेमाद्रौ पत्नीसहभोजनप्रायश्चित्तम्

१. पश्चात् चान्द्रायणं कृत्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

२. पात्रमारोहेदिति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

३. भाष्यासह इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

४. यानमारोहेदिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शूद्रभाण्डे भोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अतीव तृपितो विप्रो न शूद्रस्योदकं पिवेत् ।  
तद्भाण्डभोजनं चैव अज्ञानाद्यदि मार्गतः ॥  
तस्योपनयनं भूयस्तप्तकच्छेण शुध्यति ।

पराशरः—

शूद्रभाण्डोदकं पीत्वा प्रपायामुदकं<sup>१</sup> तथा ।  
शूद्रभाण्डस्थमन्नञ्च भुक्त्वाऽशुद्धः सदा द्विजः ॥  
तस्योपनयनं भूयस्तप्तकच्छं समाचरेत् ।

शङ्खः—

प्रपायां शूद्रभाण्डे वा स्थितं तीर्थं द्विजः<sup>२</sup> मृकृत् ॥  
अन्नं वा ज्ञानतो भुक्त्वा पुनः संस्कारमाचरेत् ॥  
विधवा-ब्रह्मचारि-यतीनां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ शूद्रभाण्डे भोजनप्रायश्चित्तम् ।

१. भोजने इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. उदकमेवनात् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३. द्विजो यदि इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पतित-दुर्मार्गदुष्टाक्रान्तपङ्क्तौ भोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पतितश्च खलश्चैव दुर्जनः पिशुनस्तथा ।

जारश्च गायकश्चैव नित्ययात्रा<sup>१</sup> परस्तथा ॥

भिषक् चोरस्तथा मन्त्री आततायी भयप्रदः ।

एते व दुर्जनेनाः प्रोक्ता अपांक्तेयाः सदैव हि<sup>२</sup> ॥

कुण्डश्च गोलकश्चैव अयाज्यानाञ्च याजकः ।

चक्राङ्किततनूराजन् तथा लिङ्गाङ्कितोऽपि वा ॥

चार्वीको दूष<sup>३</sup>कश्चैव उन्मत्तः कितवस्तथा ।

एतेरावेष्टिता पंक्तिः पापदा सर्वदा नृणाम् ॥

एतस्यामन्नभुग् विप्रः पापमेव समाश्रयेत् ।

एकत्र भोजने राजन् चान्द्रायणमयाचरेत् ॥

[ मासभोजी महापार्षी चान्द्रं पाराकमाचरेत् ] ।

वर्षभोजी महाचान्द्रं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

विधवा-ब्रह्मचारि-मन्यासिनां पूर्व्ववद्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ पतितादि दुष्टाक्रान्तपङ्क्तौ भोजनप्रायश्चित्तम् ।

१ यात्रापर इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

२ कदाचन इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३ दूषण इति कृतपुस्तकपाठः ।

इदमङ्गं कृत-काशीपुस्तकधोनेदृश्यम् ।



अथ करमथिततक्रपान-पलाण्डु-लशुन-गृञ्जनादि-  
भक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

लशुनं गृञ्जनं तक्र पाकं विलयनं तथा ।

नैव भोज्य ब्राह्मणेन जग्ध्वा पापं समश्नुते ॥

गृञ्जनं कामवृद्धयर्थं पर्णचूर्णं करमथितं तक्रम् । विलयनं घृत-  
मलम् । पाकं कारीषोपरिजातं कृत्रम् । एतानि विप्रैर्नभोक्त-  
व्यानि । तदेवाह

मार्कण्डेयः—

कृत्वाकं विट्पुत्राहञ्च पलाण्डु ग्रामकुक्कुटम् ।

लशुनं गृञ्जनञ्चैव मत्स्यान् जग्ध्वा पतेद्विजः ॥

ज्ञात्वा भुक्त्वा तु चान्द्रं स्याद् अज्ञानात्तप्तमीरितम् ।

मक्तदेव द्विजो ऽद्याचचेद् बहुवारि दिरावृतम् ।

अब्दादूढं महापापी पतितः स्यान्नसंशयः ।

त्रिधवा-ब्रह्मचारिणां पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ करमथिततक्रपानादिभक्षणप्रायश्चित्तम् ।

१) पानेतिषट् क्रीत-पुस्तके नास्ति ।

२) पलाण्डु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३) पाकाभ्यां जग्ध्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) अश्रायान् इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ श्वेतवृन्ताक-रक्तशिग्रु-वृन्तालालावु-कतक-कालिङ्ग  
विल्वौदुम्बरादिभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

वार्त्ताकु कतक-कालिङ्गविल्वौदुम्बरभिःमृष्टाः १  
यस्य कुक्षौ प्रवर्त्तन्ते तस्य दूरतरो हरिः ॥  
वृन्तालालावुरक्तशिग्रु-श्वेतवृन्ताकमेव च ।  
भक्षयेद् ब्राह्मणो यस्तु स तु चान्द्रायणं चरेत् ॥  
यति-ब्रह्मचार्यादीनां पूर्व्ववत् ।

इति हेमाद्रौ श्वेतवृन्ताक-रक्तशिग्रुवृन्तालालावु-कतककालिङ्ग-  
विल्वौदुम्बरादिभक्षणप्रायश्चित्तम् ।

---

१) भक्षयित्वा द्विजोयक्त इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ ताम्रपात्रस्थितगव्यभक्षणे प्रायश्चित्तमाह ।

देशलः—

ताम्रपात्रस्थितं दुग्धं गोमूत्रं तक्रमिव वा ।  
दधि वा ताम्रपात्रस्थं नारिकेलोदकं तथा ॥  
द्विजः पीत्वा सुरापानं कृतवान्नात्र संशयः ।  
अज्ञानाज्<sup>१</sup> ज्ञानतो वापि सुरापानसमं विदुः ॥

मार्कण्डेयः—

गव्यं मूत्रं तथा तक्रं नारिकेलोदकं तथा ।  
ताम्रपात्रस्थितं<sup>२</sup> पीत्वा पथोलवणसंयुतम् ॥  
द्विजः कामात्<sup>३</sup> सुरापी स्याद् अज्ञानाच् चान्द्रभक्षणम् ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति मद्याऽऽघ्राणे तथैन्द्रवम् ॥

पराशरः—

नालिकेरोदकं कांस्यपात्रस्थं गव्यमेव च ।  
नवणाक्तं पयश्चैव<sup>४</sup> पीत्वाऽऽघ्राय सुरां तथा ॥  
द्विजो<sup>५</sup> ज्ञानाच् चरेच्चान्द्रं पीत्वाऽज्ञानात्प्रजापतिम् ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति नरकञ्चाधिगच्छति ॥

---

(१) अज्ञानज्ञानतो या इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सुरापानं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मद्याघ्राणे तथैव च इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) पीत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) पियन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



यमः—

ताम्रपात्रस्थितं गन्धं नालिकेरोदकं तथा ।

नवणाक्तं पयसैव मद्यगन्धं तथैवच ॥

पोत्वा द्विजश्वरेच्चान्द्रं प्राजापत्यमकामतः ।

तथा घ्राणे विशेषमाह—

देवलः—

हिन्ताल-तानुखर्जूर-नारिकेलवने चरन् ।

देवाद् वायुवशात् प्राप्तं घ्रात्वा विप्रस्य दक्षिणम् ॥

हस्तमाघ्राय महमा शुद्धिमाप्नोति तत्क्षणात् ।

अभावे भास्करं पश्येत् सृष्ट्वा कर्णं जपेडरिम् ॥

देवात् 'मद्यगन्धं वायुवशात् प्राप्तं घ्रात्वा पश्चात् विप्रस्य दक्षिण-  
हस्तमाघ्राय शुध्यति ।

अभावे मार्त्तण्डं पश्यन् स्वस्य दक्षिणश्रवणं सृष्ट्वा हरिं मनसि  
स्मरन् शुध्यति । ततः परं नामिकां पिधाय गच्छेत् । विप्रस्या-  
दीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ ताम्रपात्रस्थगव्यादिभक्षणप्रायश्चित्तम् ।

(१) मद्यगन्धगाकपरिष्कृतगन्ध इति लेखितपुस्तकपाठः मद्यगन्ध गाक परि-  
ष्कृतवायुवशात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पीतोदकशेषपानप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

विप्रस्य पीतशेषं यत् तोयमन्यः पिवेद् यदि ।

मद्यपानसमं प्राहुस्तत्तोयं <sup>१</sup>मुनिपुङ्गवाः ॥

व्यासः—

पीतशेषं द्विजः पीत्वा सुरापानसमं जलम् ।

<sup>२</sup>तथा ज्ञानाद्विजः कुर्यात् प्राजापत्यं विशुद्धये ॥

गौतमः—

एकपङ्क्त्युपविष्टानां विप्राणां पात्रसंस्थितम् ।

पीतशेषजलं पीत्वा विप्रः कुर्यात् प्रजापतिम् ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति न शुध्यत्यन्यथा द्विजः ।<sup>३</sup>

पीतशेषमपि तोयं किञ्चिद्भूमौ निक्षिप्य पाने न दोषः तदाह—

मार्कण्डेयः—

पात्राभावे जलाभावे पीतशेषं द्विजः पिवेत् ।

भूमौ किञ्चिन्नि<sup>४</sup>पात्रादौ पीत्वाविप्रो न दोषभाक् ॥

गौतमः—

पीतशेषं विषं विप्रः पातुमिच्छंस्तृषातुरः ।

भुवि किञ्चिज्जलं क्षिप्वा पीत्वा तत्र विशुध्यति ॥

(१) मुनिपुङ्गवैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२ पीत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३ पीत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ निष्पात्रादौ इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



एतत् पृथक्पात्राभावविषयम् । पात्रे विद्यमाने सति स्वपात्र-  
स्थोदकमेव पिबेत् । नान्यत् ।

यमः—

आसनं शयनं वस्त्रं जायाऽपत्यं कमण्डलुः ।

आत्मनः शुचिरेतानि परिषामशुचिर्भवेत् ॥

अतः स्वपात्रस्थोदकमेव समीचीनम् । अभावे पूर्वोक्तं कृत्वा  
शुध्यतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ पीतशिष्टोदकपानप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) शुद्धिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ खरोष्ट्रहरिणीमृतवत्सगवीक्षीरपानादि  
प्रायश्चित्तमाह ।

उष्ट्रक्षीरं मृगक्षीरं सान्धिन्यं यामलं तथा ।  
मुखेनोदकपानञ्च मृतवत्सापयस्तथा ॥  
'पिवेद् द्विजः सकृन्मोहाद् 'यदि वा महिषीपयः ।  
तस्योपनयनं भूयस्तप्तकच्छं विशोधनम् ॥

मृतवत्सापयः (मृतवत्सायागोः पयः) मुखेनोदकपानं <sup>१</sup>हस्तेन  
विनेत्यर्थः ।

मार्कण्डेयः—

मृतवत्सापयः पीत्वा मुखे पीत्वा जलं द्विजः ।  
उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥

गौतमः—

मृतवत्सापयः पीत्वा मुखे पीत्वा जलं द्विजः ।  
उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥

गौतमः—

सान्धिन्यं यामलं दुग्धमुष्ट्रक्षीरञ्च मार्गजम् ।  
खरोष्ट्रयोः पयः पीत्वा पुनः संस्कारमर्हति ॥  
पञ्चाहेहविशुद्ध्यर्थं तप्तकच्छं समाचरेत् ।  
एतेन शुद्धिमाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

(१) पीत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कवलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) हस्तेन इति क्रीत-लेखितपुस्तके नास्ति ।



प्रजापतिः —

खरोद्गयोश्च सान्विन्यं यामलं मार्गजं तथा ।

'केवलं महिषीदुग्धं' द्विजः पीत्वा पतत्यधः ॥

तस्योपनयनं भूयस्तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति ।

विधवानां ब्रह्मचारिणां सत्यासिनाञ्च पूर्ववद्विगुणं प्रायश्चित्तं  
वेदितव्यम् । औषधार्थं खरोद्गयोः क्षीरपाने तप्तकृच्छ्रमात्रं न पुनः  
संस्कारः ।

तदाह ।

गौतमः—

औषधार्थं द्विजः पीत्वा दुग्धं खर-क्रमेलयोः ।

तप्तकृच्छ्रं चरेत् पश्चात् पुनः कर्म न गौरवात् ॥

इति हेमाद्रौ उद्गक्षीरादिपानप्रायश्चित्तम् ।

(१) केवली इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) ब्रह्मचारि सत्यासिना इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ मनुष्य-मृग-पक्ष्यादिमल-मूत्रभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मनुष्यस्य खरस्याऽपि सूकरस्य द्विजन्मनः ।

मलमूत्रं पिवेद्यस्तु रेतोवा रोगपीडितः ॥

<sup>१</sup>स तु पश्चात् पुनःकर्म कृत्वा कृच्छ्रेण शुध्यति ।

अज्ञानात् शुद्धिमाप्नोति ज्ञात्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

एतदनातुरविषयम् । आतुरविषये विशेषमाह ।

गौतमः—

आतुरोरोगमुक्त्यर्थं खरमानुषसूकराः ।

एतेषां मलमूत्रञ्च पीत्वा दोषमवाप्य<sup>२</sup> च ॥

रोगान्ते देहशुद्ध्यर्थं तप्तकृच्छ्रं चरेत् सुखी ।

अनातुरः पुनःकर्म कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

जावालिनः—

द्विजः पीत्वा मलं मूत्रं खरमानुषयोः किटेः<sup>४</sup> ।

<sup>१</sup>अगदोदेहशुद्ध्यर्थं पुनःकर्मपुरःसरम् ॥

तप्तकृच्छ्रं चरेत् सम्यक् रोगी तप्तं समाचरेत् ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति न चान्यैः कर्मभिर्द्विजः ।

---

(१) द्विज इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तप्तकृच्छ्रेण इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अवाप्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) किल इति काशी-पुस्तकपाठः ।

(५) अगदे इति लेखितपुस्तकपाठः ।



यमः—

द्विजोन्नानान्मलं मूत्रं खरमानुषयोः किटेः ।

मयूरहंसगृध्राणां सक्कदुभुक्ता तु पातकी ॥

पुनःकर्म प्रकुर्वीत तप्तकृच्छं विशोधनम् ।

रोगिणोऽपि पुनःकर्म कृच्छ्रमात्रमुदीरितम् ॥

सुखी भूत्वा पिवेद्गव्यं नारीणामर्द्धमीरितम् ।

यतीनां ब्रह्मचारिणां विधवानां दिरावृत्तम् ॥

इति हेमाद्रौ मानुषखरसूकरादिमलमूत्रभक्षणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) दिरावृत्ते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



[ अथ अस्थिचर्मपक्षिलोमकेशमलोपहतशकान्न-  
भोजनप्रायश्चित्तमाह । ]

देवलः— शाकमध्येऽन्नमध्ये वा दन्तकेशनखा मलम् ।

अस्थिचर्मं द्विजस्याङ्गरोमकीटनखायदा ॥

बह्वन्नं न परित्याज्यं स्वपात्रस्थं परित्यजेत् ।

अन्नप्रमाणमाचाराध्याये द्रव्यशुद्धिप्रकरणेऽभिहितम् ।

[ अतोऽल्पे विशेषमाह ]

गौतमः— अल्पेऽन्ने शाकमध्ये वा दधिक्षीरादिषु द्विजाः ।

दन्तकेशनखाविष्ठा मलीलोमास्थि चर्म च ॥

कीटाङ्गिकमयस्तत्र पचनं संपरित्यजेत् ।

स्वपात्रस्थं गृहेचाल्पमुभयं संपरित्यजेत् ।

भुक्त्यनन्तरं शाकोदकपात्रयोर्विद्यमाने तदन्नं कूर्हयित्वा उपोष्य  
शुध्यति । कूर्ह्यभावे घटिकासप्तप्रमाणादौ रात्रिभोजनादिरम्य<sup>१</sup>  
गायत्राष्टशतं जप्त्वा पञ्चगव्यं पीत्वा शुध्यति । तदेवाह

मनुः—

ज्ञात्वा तैर्द्रष्टृषितं भक्तं भुक्त्वा विप्रः प्रसङ्गतः ।

द्विमुहूर्त्तं मुहूर्त्तं वा तदन्नं जीर्णतामगात् ॥

तदन्ते वमनं कृत्वा शुद्धोभवितुमर्हति ।

नोचेत् परियुक्षसि स्नात्वा जप्त्वा विधानतः ॥

[ १ ] अयं पाठः क्रीतपुस्तकेनोपलब्धः ।

[ २ ] अयमपि पाठः क्रीत-काशीपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

[ ३ ] रात्रिभोजन विरम्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अष्टोत्तरशतं पश्चात् पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।

शुद्धिमाप्नोति <sup>१</sup>तत्पापान् न शुद्धस्त्वन्यथा द्विजः ॥

जावालिः—पक्व<sup>२</sup>मल्पं त्यजेच्छाकं अन्नमल्पं त्यजेत्तथा ।

एतैरुपहृतं भुक्त्वा तदानीं कर्हिमाचरेत् ॥

जीर्णं परेद्युरुषसि स्नात्वा देवीं जपेच्छतम् ।

ब्रह्मकूर्चविधानेन पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति मृन्मयं तत् परित्यजेत् ।

बहुकेशेषु शाकान्नयोर्मध्येस्थितेषु पूर्ववत् प्रायश्चित्तम् ।

एकस्मिन् स्थिते विशेषमाह गौतमः—

अन्ने वा <sup>३</sup>पक्वशाके वा केशमात्रे व्यवस्थिते ।

कवले वापि राजेन्द्र कवलं तत्परित्यजेत् ॥

गण्डूषमेकं कृत्वा तु शेषान्नं प्रोक्षयेज्जलैः ।

<sup>४</sup>मृदुभस्म वा क्षिपेत् तत्र पश्चाद् भुक्त्वा न दोषभाक् ॥

मृदं वा भस्म वा इत्यर्थः । अन्यैर्वा नारीभिर्वा स्वपात्रस्थमन्नं

प्रोक्षणादिभिः <sup>५</sup>शुद्धं कारयित्वा स गण्डूषमेकं कृत्वा भुक्त्वा न

दोषभाक् इत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ चर्मादि-नख-मलादिदूषितान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ॥

(१) राजेन्द्र इति लिखितपुस्तकपाठः ।

(२) पक्वं चाल्पं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) मृदन्मम इति क्रीत लिखितपुस्तकपाठः ।

(४) शुद्धिभिति क्रीत लिखितपुस्तकपाठः ।



अथ भोजनकाले दीपनिर्वाणप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः —

‘वात्यया दीपनिर्वाणे भोजने नाशमाप्नुयात् ।

धृत्वा पात्रं तदा दोर्भ्यां संस्तरन् भानुमव्ययम् ॥

पुनर्दीपागमे तात गायत्र्यान्नं जलैः क्षिपेत् ।

तदन्नमत्यजन् भुक्त्वा शुद्धिमाप्नोति दीपतः ॥

अन्यदन्नं पुनर्भुक्त्वा पञ्चगव्यं पिवेत्तदा ।

पूर्वं परिष्कृतमन्नमेव भोक्तव्यं न पुनर्दातव्यम् । भुक्त्वा च शुद्धि-  
मवाप्नुयात् । विधवा-ब्रह्मचारि-यतीनामेवं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ भोजनसमये दीपनाशप्रायश्चित्तम् ।

---

१) दीपं प्रज्वालयन् वात्या इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

---



अथ सूर्यसोमोपरागभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

सूर्यसोमोपरागे च उक्तकालं विना द्विजाः<sup>१</sup> ।

तदन्नं मांसमित्याहुः तद्भुक्ता मांसभुग्भवेत् ॥

मरीचिः,—

सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात् पूर्वं यामचतुष्टयम् ।

चन्द्रग्रहे तु यामांस्त्रीन् भुक्ता पापं समश्नुते ॥

<sup>२</sup>इमं धर्मं परित्यज्य योविप्रस्त्वन्यथाचरेत् ।

तस्योपनयनं भूयस्तप्तं सान्तपनं स्मृतम् ॥

सूर्यग्रहभोजने तप्तं चन्द्रग्रहणे सान्तपनम् ।

तदेवाह मनुः—

सूर्योपरागे यो भुङ्क्ते तस्य पापं महत्तरम् ।

तस्य पापविशुद्धयर्थं तप्तकृच्छ्रमुदीरितम् ॥

चन्द्रोपरागकाले तु भुक्ता कायं समाचरेत् ।

उभयोर्भोजने विप्रः पुनः संस्कारमर्हति ॥

विधवानां स्त्रीणां सन्न्यासिनाञ्च पुनः संस्कारवर्जं ब्रह्मचारिणामिवम् ।

इति हेमाद्रौ सूर्यसोमोपरागकाले भोजनप्रायश्चित्तम् ।

१) द्विज इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) इति धर्मं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ भिन्नपात्रभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

'देवलः— स्वर्णं वा राजतं कांस्ये प्रत्यहं भोजनं चरेत् ।

तद्भिन्नं यदि राजेन्द्र न कुर्यात्तत्र<sup>१</sup> भोजनम् ॥

जावालिः —

स्वर्ण-राजत-कांस्येषु पलाश कदलीषु च ।

विप्रो भुञ्जन् महापुण्यमवाप्नोति न संशयः ॥

यदि भिन्नं परित्याज्यं तत्र भुक्त्वा<sup>२</sup> नन्दवं चरेत् ।

एतानि स्वर्णराजतकांस्यानीषन्मात्रं विशकलितानि चेत् सर्वथै-  
तेषां<sup>३</sup> त्यागएव । तदेवाह—

गालवः— स्वर्णं कांस्यं तथा राजन् राजतं भिन्नमेव यत् ।

तत्र भुक्त्वा चरेत् कायमन्यथा दोषमाप्नुयात् ॥

पलाश-कदलीपर्णादिषु<sup>४</sup> यद् भोजनं चरेत् तान्येवाहरणीयानि  
न पात्रान्तराणि । अन्यथा पूर्ववत् प्रायश्चित्तं कृत्वा शुध्यति  
तदेवाह ।

पराशरः—

एषु पर्णेषु या भुक्तिस्तेषु तां मुखजश्चरेत् ।

अन्यपात्रं<sup>५</sup> यदा भिन्नं तत्र भुक्त्वा<sup>६</sup> नन्दवं चरेत् ॥

१ अयं पाठः क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

२ स्तत्रभोजनमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ त्याज्यमेव इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४ यः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

५ यदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



भिन्नभाण्डे एकपात्रभोजने विप्राणां धर्मोर्वर्द्धते अन्यथा  
क्षीणतामाप्नोति ।

गौतमः—

अभिन्नपात्रे यो 'भुङ्क्ते पर्णेष्वेतेषु जातितः' ।

भोजनं कुरुते यस्तु स पूर्णायुर्भवेदिह ॥

सर्वेषामेतदेव वेदितव्यं नान्यत्<sup>३</sup> ।

इति हेमाद्रौ भिन्नपात्रभोजनप्रायश्चित्तम् ।

(१) भुङ्क्ते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जायते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) नान्यतः इति लेखितपुस्तकपाठः अन्यत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ सन्ध्यादि<sup>१</sup>कालेषु चाण्डालध्वनिश्रवणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

स्नाने भोजनवेलायां जपहोमेषु पैतृके ।

सन्ध्यादिनित्यकाम्येषु देवपूजामु सर्वदा ॥

चाण्डालास्त्रिविधाः प्रोक्तास्तेषां सम्भाषणादिकम् ।

कृत्वा कर्म परित्यज्य <sup>२</sup>दृष्ट्वा तत्पुनराचरेत् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति कर्मभ्रष्टोऽभिजायते ।

चाण्डालस्येव यत्कर्म तत्तु दृष्ट्वा परित्यजेत् ॥

ग्रामचाण्डालानां तत्तत्साधनध्वनिश्रवणं <sup>३</sup>कृत्वा भोजनादिकं परित्यजेत् । तत्तत्साधनानि, यथा<sup>४</sup> 'रजकस्य वस्त्रं' <sup>५</sup>'संहननं चर्मकारस्य चर्मनाडनं, स्वर्णकारस्य सुवर्णादिनाडनं, तक्षकस्य दारुसौष्ठवायं तक्षणं, तिलघातस्य तिलयन्त्रध्वनिः' कुलालस्य आर्द्रभाण्डनाडनं एतेषां तत्तत्साधनभूतानां ध्वनिश्रवणे चतुर्दशने च त्याज्यं <sup>६</sup>'भोजनं पुनं करणीयं वा तदेवाह ।

मार्कण्डेयः—

एतेषां साधनानाञ्च ध्वनिं श्रुत्वा स्वकर्मसु ।

कर्म तत् मंपरित्यज्य शीघ्रं सृष्ट्वा च दक्षिणम् ॥

(१) सन्ध्यादिभोजनकालेषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दृष्ट्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टं यथेतिपदम् ।

(५) मंघात ध्वनिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) भोजनमिति पदं क्रीत लेखितपुस्तकयोर्न दृष्टम् ।



अक्षिणी पयसा मृष्टा दृष्टा सूर्यं विशुध्यति ।

दर्शनं संपरित्यज्य पुनः कर्म समारभेत् ॥

अन्यथा भोजयेद् विप्रः कर्म कुर्यात् तथा यदि ।

अष्टोत्तरशतं जप्त्वा गायत्रीं वेदमातरम् ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति तद्धिना नात्र कर्मणः ।

यति ब्रह्मचारिणामेव प्रायश्चित्तम् ॥

इति हेमाद्रौ चाण्डालादिध्वनियवणः प्रायश्चित्तम् ।

(१) पुनः कृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. वेदमाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३. सकृदादिदर्शनं पाठद्वित्वमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ रजस्वलाऽन्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

हेबल. —

रजस्वलान्नं यौ भुक्तं द्विजौ ज्ञानात् सकृद् यदि ।

रौरवं नरकं याति 'स भवेत् सद्विगर्हितः ॥

तुमुमल्यज्ञानात् पचनादिकं कृत्वा भुक्तवन्तरं वैषल्यं शुष्कं रजो  
दृष्ट्वा यही रजस्वला भवान्तेति ज्ञात्वा अतपसि ॥ तदपमरति  
मर्त्वं भुक्तवन्तौ रजस्वलान्नभोक्तारः । तेषां भोक्तृणां पुनरुपनयन  
चान्द्रायणाभ्यां विना शुद्धिर्नास्ति । तदेवाह

मार्कण्डेयः—

अज्ञात्वा पुथिणी नारौ कृत्वा वै पचनक्रियाम् ।

पश्चात् शुष्कं रजोदृष्ट्वा तस्माद्विगर्ह्यपक्रमेत् ॥

तां दृष्ट्वा भाषणं श्रुत्वा भोजनं द्विजनायका

कृत्वा शुद्धिमवाप्सुस्ते व्रतचान्द्रे विधाय च ।

पञ्चगव्येन शुद्धाः स्युस्तथा पापिनोऽभवन् ।

वति-व्रक्षत्राणि स्त्रीणामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ रजस्वलान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

(१) कृत्वा इति कीर्तित-लेखितपञ्चमः ३

(२) भोजनं पश्चात् इति कीर्तित-लेखितपञ्चमः ४०२ ।

(३) शुष्कं इति कीर्तित-लेखितपञ्चमः ४०३ ।

(४) तदपमरति इति लेखित-पञ्चमः ४०४ ।

(५) भोक्तार इति लेखित-पञ्चमः ४०५ ।

(६) चान्द्रायणं समाप्तं इति कीर्तित-लेखितपञ्चमः ४०६ ।



अथ दुष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

शूद्रैर्नानाविधैर्वर्णैश्चाण्डालादिभिर्राक्षितम् ।  
पुष्पवत्या सूतिकया दृष्टं वा पतितादिभिः ॥  
अन्नं भक्ष्यं तथा शाकं भुङ्क्ते विप्रः मलद्वयदि ।  
प्रायश्चित्ती भवेत् पापी न कर्माहो भवेदिह ॥

गालवः—

चाण्डाल-पतित-ब्राह्म्य चाटुकाराऽजितेन्द्रियैः ।  
अस्नानवर्त्तजैश्च 'खकाकैः' परिदूषितम् ॥  
मलमूत्रमसीपस्थं तुपाङ्गारकपालवत् ।  
तत् स्पृष्टोच्छिष्टमस्पृष्टं भक्ष्यमन्यच्चयद्वयेत् ॥  
द्विजैस्तत्र न भोक्तव्यं शाकं वा भोज्यमेव वा ।  
यदि मोहवशात् भुङ्क्ते प्रायश्चित्ती भवेदिह ॥

नौगात्रि—

पूर्वाङ्गैश्च निमित्तैर्वा स्पृष्टमुच्छिष्टमेव यत् ।  
तदन्नं यो द्विजो भुङ्क्ते पश्चात्तापमवाप्यसः<sup>१</sup> ॥

१. भुङ्क्ते इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः

२. चाण्डालाकाराजितेन्द्रियैः इति जीत पुस्तकपाठः ।

३. खकाकैः परिदूषित इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४. भुङ्क्ते इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

५. यवाप्यते इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



दुष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

४२

स्वशरीरविशुद्ध्यर्थं कायकृच्छ्रं समाचरेत् ।

पञ्चगव्येन शुद्धिः स्याद् व्रतिनां यतिनामिह ॥

विधवानाञ्च नारीणां नान्यथा शुद्धिरिष्यते ।

इति हेमाद्रौ दुष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

इदमङ्गं लेखितपुस्तकपाठद्वयम् ।

---



अथ निषिद्धदिवसेषु द्विर्भोजनप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः— पितृर्मृताहे पूर्व्वद्युर्भानुवारि च संक्रमे ।

तथा चतुर्दश्यष्टम्यो<sup>१</sup> व्रतेषु च महोत्सवे ॥

श्रोत्रिये मरणं प्राप्ते गुरुणां दुःखसम्भवे ।

पितरौ व्याधिना ग्रस्तौ महाराजनिपातने ॥

उक्तेष्वेतेषु सर्व्वेषु अन्येषु व्रतपर्व्वसु ।

न द्विवारं समश्रीयाद् विप्रोधर्मपरायणः ॥

मार्कण्डेयः— अर्कद्विपर्व्वरात्री च मृताहात् पूर्व्ववासरे ।

तथा चतुर्दश्यष्टम्यो<sup>२</sup> व्रतेषु च महोत्सवे ॥

[ श्रोत्रिये मरणं प्राप्ते गुरुणां दुःखसम्भवे ।

पितरौ व्याधिना ग्रस्तौ महाराजनिपातने ॥

उक्तेष्वन्येषु सर्व्वेषु अन्येषु व्रतपर्व्वसु ।

न द्विवारं समश्रीयाद् विप्रोधर्मसनुस्मरन् ॥

अस्य पापविशुद्धायं महत्मा निष्कृतिं चरेत् ।

यज्ञानात् कायकृच्छ्रं स्याज् ज्ञात्वा तप्तं समाचरेत् ॥

पञ्चगव्येन शुद्धोऽभूद् विप्रोद्विवारभोजने ।

इति हेमाद्रौ निषिद्धदिवसेषु द्विर्भोजनप्रायश्चित्तम् ।

१. मृताय इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. चतुर्दशाष्टम्यारिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३. एतद्विज्ञानमिति पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

४. द्विवार इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ देवपूजा-वैश्वदेवपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

देवताराधनं त्यक्त्वा वैश्वदेवं तथाऽतिथिम् ।

या विप्रो भोजनं कुर्यान् नित्यहोमं तथा त्यजन् ॥

सुरापी महि विज्ञेयः सर्वधम्ने वहिष्कृतः ।

माके गंड्यः

वैश्वदेवं नित्यहोमं तथैवातिथिभोजनम् ।

वैश्वदेवं देवतार्चां त्यक्त्वा विप्रो महासुनिः ॥

भुक्त्वाऽज्ञानात् महादोषं सुरापीत्युच्यते बुधैः ।

जाबालिः —

वैश्वदेवं देवतार्चां नित्यहोमं तथाऽतिथिम् ।

ब्रह्मयज्ञं पितॄणाञ्च तर्पणं पितृवत्प्रभम् ॥

त्यक्त्वा भुक्त्वा तथा विप्रः सुरापीत्युच्यते बुधैः ।

तप्तकच्छं चरितपापी तस्मादोषात् प्रमुच्यते ॥

पञ्चगव्येन पूतात्मा नान्यथा शुद्धिरस्ति हि ।

इति हेमाद्रौ देवपूजा वैश्वदेव-ब्रह्मयज्ञाऽतिथि

परित्यागप्रायश्चित्तम् ।

१) कृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) महादोषम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) पितृवत्प्रभम् इति प्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ उष्णोदकस्नानमृत्तिकाग्रहितशौचप्रायश्चित्तमाह ।

उष्णोदकेन सप्ताहं तथा कूपोदकेन च ।

मृत्तिकाभिर्ज्विनाशौचं<sup>१</sup> कृत्वासप्ताहमादरात् ॥

[चतुर्वेदविदोविप्राः<sup>२</sup> शूद्रा एव न संशयः ।

गौतमः—

मृत्तिकाभिर्ज्विनाशौचं स्नानमुष्णोदकेन वै ।]

कूपोदकेन सप्ताहं कृत्वा विप्रः सशूद्रवान् ॥

जाबालिः—

उष्णोदकेन सप्ताहं तथा कूपोदकेन च<sup>३</sup> ।

मृत्तिकाभिर्ज्विनाशौचं तथा कूपोदकेन च ।

कृत्वाशौचादिकं विप्रः शूद्र एव न संशयः ।

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं ऋषिभिर्लोकसम्मतम् ॥

प्राजापत्यं विशुद्धार्थं चरेत् पूतोभवेदिह ।

पञ्चगव्यं पिवेत् पश्चात् तेन शुद्धिर्नचान्यथा ॥

विधवा ब्रह्मचारि-यतीनां द्विगुणम् ।

इति हेमाद्रौ उष्णोदक-कूपोदकस्नान-मृत्तिका  
रहितशौचप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) स्नानमुष्णोदकेनार्थ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) विप्र इति काशीपुस्तकपाठः ।

[ । अयं पाठः क्रीतपुस्तके न दृश्यते ।

(३) तथाकूपोदकं सहत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ उपवीतं विना भोजनं प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः विना यज्ञोपवीतेन शिखया च द्विजोत्तमः ।

उच्छिष्टो यदि 'मोहात्मा पापकारी भवेद्विजः ॥

मार्कण्डेयः—

शिखया ब्रह्मसूत्रेण विना<sup>१</sup> श्रूयात् तु यो द्विजः ।

उपोथ रजनीमिकां 'पञ्चगव्ये' स मुह्यति ॥

गौतमः—

शिखा च ब्रह्मसूत्रञ्च नष्टं भ्रष्टं यदा भवेत् ।

धृत्वा नवं पुनर्मन्वाद् भ्रष्टं तत्तु जले क्षिपेत् ॥

शिखां विना द्विजश्रेष्ठः कर्णेनोवाललोमभिः<sup>२</sup> ।

दृष्ट्वा तद्दोषगत्यर्थं कायकृच्छ्रं<sup>३</sup> समाचरेत् ॥

यावत् शिखा पुनर्जाता तावत् कर्णेन धारयेत् ।

ब्रह्मविष्णुमहेशाख्या ब्रह्मसूत्रस्य तन्तवः ॥

एतस्मिन् चूटितं विप्रः पुनर्धृत्वा नवं मुदा ।

नित्यकर्म प्रकुर्वीत चूटितं निक्षिपेज्जले ॥

ब्रह्मसूत्रं दक्षिणांसे भ्रष्टं स्याच्चतुरङ्गुलम् ।

प्राणायामत्रयं कृत्वा पुनस्तत्स्थानमानयेत्<sup>४</sup> ॥

१) मोहात्मा इति कीत-पुस्तकपाठः

२) विनाद्याक्षुयोद्विज इति कीतपुस्तकपाठः ।

३) पञ्चगव्येन मुह्यति इति कीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४) यावच्छित्त्वा इति कीत पुस्तकपाठः ।

५) आचरेत् इति कीत लेखितपुस्तकपाठः ।



कूर्परं ब्रह्मसूत्रं चेद् भ्रष्टं यदिह दैवतं ।  
 प्राणायामशतं कृत्वा स्वस्थाने पूर्ववत्क्षिपेत् ।  
 मणिवन्धस्थितं सूत्रं भ्रष्टं यदिह पूर्ववत् ।  
 तद्दोषपरिहारार्थं प्राणायाममहस्रकम् ॥  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरिति ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति वामहस्तादधीयदि ।  
 तत्सूत्रं सहसा त्यक्त्वा दृष्ट्वा सूर्यं मुदा दिज्ज ।  
 जले भ्रष्टं परित्यज्य महस्रं वेदमातरम् ।  
 तस्मा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरित्यने ॥

इति हंसादी उपवातशिखां विना भोजने नित्यकर्मकरणं च  
 प्रायश्चित्तम् ।

अथ पाठः लेखितपुस्तके नास्ति



अथ भोजनकाले क्षुताऽपानवायूत्सर्गजृम्भणानां  
प्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः— विप्रोभोजनकाले तु क्षुतं वा जृम्भणं तथा ।  
अपानवायोरुत्सर्गं कृत्वा 'मद्यः स पापभाक् ॥  
अपानवायुमोक्षञ्चत् कृत्वा भुञ्जीत पापभाक् ॥

विष्णुः— द्विजोभोजनकाले तु जृम्भणं क्षुतमेव वा ।  
अपानवायुमोक्षं वा 'कुर्वन् पापी भवेत्तदा ॥  
अन्योदोर्भ्यां जलं धृत्वा तस्य मूर्धनि विन्यसेत् ।  
पृच्छेत्तं जन्ममदनं दिवा वा यदि वाऽदिवा ॥  
क्षुते तु तस्य मञ्जाते एवं कृत्वा विशुध्यति ।

जृम्भणेऽप्येवम् ।

अपानवायोरुत्सर्गे जाते तत्तु विवर्जयेत् ।  
भुक्त्वा पापमवाप्नोति पापं यत् शौचवर्जने ॥  
लोभेन भुक्त्वा तद्भुक्तं स्नात्वा कायं समाचरेत् ।  
एतेन शुद्धिमाप्नोति द्विजो नाऽन्यत्र कर्मणि ।

इति स्त्रीणां यति-ब्रह्मचारिणामप्येवम् ।

इति तैत्तिरी भोजनकाले क्षुत-जृम्भणाऽपानवायूत्सर्गप्रायश्चित्तम् ।

विप्रः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः

२. प्रायश्चित्तो इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः

३. नास्ति इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः



अथ सूतकद्वितयभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— अशौचद्वितये राजन् असगोत्रोऽथवा व्रती ।

विधवा वाऽन्यगोत्रा वा यतिर्वा नियमस्थितः ॥

सूतकद्वितये भुञ्जन् महान्तं नरकं व्रजेत् ।

गालवः— यतिर्वा ब्रह्मचारी वा विधवा वाऽन्यगोत्रजा ।

असगोत्रोऽथवा विप्रस्त्वशौचद्वयनिर्म्मितम् ॥

अन्नं भुक्त्वा महापापी नरकं याति दारुणम् ।

भुवमासाद्य तत्पश्चाज्जायते रोगवाधितः ॥

गौतमः— विप्रस्त्वाहारमन्विच्छन् यतिर्वा प्रथमाश्रमः ।

सूतकद्वितये भुक्त्वा नारी वा पतिवर्जिता ॥

पुनः संस्कारं भूतात्मा तत्तच्छ्रुत्वा समाचरेत् ।

पञ्चगव्यं पिचेत् पश्चात् शुद्धिमाप्नोति नान्यथा ॥

यति-विधवयोः पुनः संस्कारवर्जं प्रायश्चित्तं वेदितव्यम्

इति हेमाद्रौ सूतकद्वितयभोजनप्रायश्चित्तम् ।

१) यतिर्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) नान्यगोत्रजा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) यतिवर्जिता इति कोटपुस्तकपाठः ।

४) भूतात्मा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथाऽन्योन्यसंस्पृष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ।

देवलः—एकपक्त्युपविष्टौ यौ भुञ्जानौ तौ परस्परम् ।

स्पृष्टान्नमत्यजन्तौ चेज् 'ज्ञेयौ तौ मांसभोजिनौ ॥

एकपक्त्युपविष्टा ये भुञ्जते मुखजाः सकृत् ।

अन्योन्यस्पर्शनं कृत्वा मत्वा जग्ध्वा स्वपात्रजम् ॥

मांसतुल्यं तदन्नं स्याद् भोक्तारौ मांसभोजिनः ।

एकपक्त्युपविष्टश्च ब्राह्मणो ब्राह्मणं स्पृशेत् ॥

तदन्नमत्यजन् भुक्त्वा प्रायश्चित्ती भवेत्तथा ।

अन्यगोत्रं द्विजः स्पृष्ट्वा भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

सगोत्रस्पर्शने भुक्त्वा तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ।

पिता पुत्रं भ्रातरं वा स्पृष्ट्वा भुक्त्वा तु कायकम् ॥

पुत्रस्य वा कनिष्ठस्य पितुरुच्छिष्टभोजने ।

न दोषः पुत्रयोस्तत्र पिताकायकमाचरेत् ॥

उच्छिष्टमित्यत्र कवलमात्रप्राशनं न पात्रस्यान्नभोजनम् ।

गौतमः—

पिताऽनुजस्य पुत्रस्य तयोः प्रीतिमनूदहन् ।

निक्षिपेत् कवलं तत्र न दोषस्तत्र भोजने ॥

पिता नाभ्यां सह न भुञ्जीयात् कवलदाने न दोषः । तदाह



आपस्तम्बः—

“प्रीतिर्ह्युपलभ्यते पितुर्ज्येष्ठस्य च भ्रातुरुच्छिष्टं भोक्तव्यं, धर्म-  
विप्रतिपत्तावभोज्य”मिति । यति-ब्रह्मचारिणामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ परस्परौच्छिष्ट<sup>१</sup>भोजनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) परस्परौच्छिष्टभोजन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ शिवनिर्माल्यभोजनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः -

शम्भोर्निवेदितं भक्तं तत्तीयं शाकमेव वा ।

विप्रः कदा न भुञ्जीयाद् भुक्त्वा तप्तं समाचरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

शिवे निवेदितं भक्तं प्रत्येकं देवतां विना ।

द्विजो भुक्त्वा चरेत्तप्तं तथा तत्तीयमेवनात् ।

मालग्रामादि देवतासमूहे विशेषमाह ।

जाबालिः —

शिवविष्णादिभिर्देवैर्विष्टितं यदपि तप्तम् ।

तद्भुक्त्वा विप्रवर्ग्योऽसौ न भवेद् दोषभाक् ततः ।

हारीतः -

मालग्रामादिभिः शम्भोर्विष्टितं यदपि तप्तम्

तद् भोक्तव्यं द्विजैर्नित्यं तत्तीयं परिवर्जयेत् ॥

मालग्रामादिदेवतासमीपे शिवेऽर्पितं नैवेद्यं चान्द्रायणसमं तद्दिनं

शिवनिर्माल्यं तत्तीयञ्च मांसतुल्यम् ।

(१) तत्तीयं इति लेखितपुस्तकपाठः । तोयं वा शाकमेव वा इति क्रीतपुस्तक

पाठः ।

(२) विष्टितं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कृतं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



याज्ञवल्करः—

शिवे निवेदितं भक्तं सालग्रामादिवेष्टितम् ।

तद्भक्तभोजने चान्द्रायणकृत् नात्र संशयः ॥

अन्यथा मांसतुल्यं स्यात् तत्तोयमसृजा समम् ॥ इति ।

ब्रह्मचार्यादीनामेवं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ शिवनिर्म्माल्यभोजनप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ नीलवस्त्रं धृत्वा 'कर्मकरणे भोजने वा  
प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—नीलीवस्त्रञ्च तच्चिह्नं धृत्वा ज्ञानाद्द्विजश्चरेत् ।

स विप्रस्त्वशुचिर्नित्यं न कर्माही भवेद्विह ॥

तच्चिह्नमिति नीलतन्तुभिर्वस्त्रान्ते वस्त्रमध्ये वा निर्मितं वस्त्रं  
तद्वारणे विप्रस्त्वशुचिः । तदाह—

गीतमः—नीलीमयं पटं धृत्वा विप्रस्तच्चिह्नमूत्रकम् ।

कृत्वा कर्माणि भुक्त्वा वा न तत्कर्मफलं लभेत् ॥

भोजने मांसभुग्विप्रः सर्वथा तत्परित्यजेत् ।

शालवः—नीलीवस्त्रं तु तच्चिह्नं धृत्वा कर्म करोति यः ।

स विप्रस्तु न कर्माहस्तत्कर्म विफलं भवेत् ॥

एकत्र दिवसे भुक्त्वा धृत्वा नीलीमयं पटम् ।

कुर्याद्देहविशुद्ध्यर्थं यावकं मनुचोदितम् ॥

अभ्यासे तु पराकः स्याद् वत्सरे चान्द्रमुच्यते ।

यति-ब्रह्मचारि विधवानां प्रायश्चित्तमिदं प्रयोक्तव्यम् ।

इति हेमाद्रौ नीलीवस्त्रं धृत्वा कर्मकरणे भोजने वा प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ जातिभ्रंशकरप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) कर्मो कृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पराकं स्यादिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) धृत्वा भोजने प्रायश्चित्तमित्येव क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ प्रकीर्णकप्रायश्चित्तमाह ।

तत्र दुर्मृतिप्रायश्चित्तम् ।

देवलः—पापेभ्यः पूर्वमुक्तेभ्यो यदन्यत् खलु विद्यते

तत्प्रकीर्णकमित्याहुर्दुर्मृतेषु विगोघ्नम् ॥

विद्युदग्निपयःपाशचाण्डालैर्ब्राह्मणोद्धतः ।

एक-द्वि-त्रि-चतुः पञ्च षड्विंशं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

विद्युदग्निः । अग्निर्द्वावानलः स्वदन्तोवा । पयस्तटाक-नदीस्य ;

चाण्डालो जनङ्गमः । एतैर्निमित्तैर्विप्रः प्रमादात् ज्ञात्वा वा यदि

म्रियते । तदा तस्य सद्योदहनपत्रे तद्वचनोक्तानि कृच्छ्रानि

कृत्वा दहेत् । अगक्तविघ्नये कालमाह ।

मासत्रये तु षण्मासे वत्सरे वा विद्वच्छ्रणः ।

पुत्रादिर्दुर्मृतस्याऽस्य कुर्यात् संस्कारमादरात् ॥

द्वैशकालवैपरीत्यशङ्कायां दुर्मृतस्य लोकमाकाङ्क्षन् तत्तद्विमित्तोक्त

कृच्छ्रानुसरणं कृत्वा दहेत् ।

देवलः<sup>१</sup>—

विद्युता वज्रिना तोयैः पाशैर्वाऽथ जनङ्गमैः ।

विप्रः प्राणान्<sup>२</sup> त्यजेद्यन्तु तस्य शुद्धिरुदीरिता ॥

सद्योदहनपत्रे तु कुर्यात् पूर्वोक्तमादरात् ।

(१) नरेभ्यः खलु विद्यते इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) क्रीत लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

४) परित्यज्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्य एकं षड्व्यं तदानीं विशोधनं, अग्निदग्धस्य षड्व्यं द्वयं विशोधनम् । जले मृतस्य त्रिगुणितषड्व्यम् । चाण्डालेन मृतस्य तानि कृच्छ्राणि तत्तत्संख्यापरिमितानि कृत्वा दग्ध्वा मृतिदोषात् प्रुतो भवति ।

तदाह—

गौतमः—<sup>१</sup>दुर्मृतानां तदा पुत्रः कृत्वा कृच्छ्राणि धर्मतः ।

दहेत् पापविशुद्धोऽभूद् अन्यथा दोषभाग्भवेत् ॥

यस्यान्तरे—

दुर्मृतस्य तदानीं यः संस्कारं कर्तुमिच्छति :

एकं द्वि-त्रि-चतुः-पञ्च-षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

एतेन शुद्धिमाप्नोति न कालस्य प्रतीक्षणम् ।

पिशाचता न तस्याऽस्ति पुत्रोऽभूदवृणस्तथा ॥

सामन्वय-धर्माप यत्सरसतानां दुर्मृतिप्रायश्चित्तं तारतम्येन विधि-  
नष्टि

गोभिल

एकमात्रं दुर्मृतानां षड्व्यं विशोधनम् ।

मृतत्रयं तु डाव्यं स्यात् वाऽव्यं सवत्सरे स्मृतम् ॥

नारायणशिल कृत्वा कुर्यात् कर्मोद्देहिकम् ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति परलोकं न गच्छति ॥

<sup>१</sup> मृतमृतानां इति कोटि पुस्तकपाठः ।

<sup>२</sup> दुर्मृतानां इति कोटि पुस्तकपाठः ।

<sup>३</sup> एतेन शुद्धिमाप्नोति परलोकं न गच्छति ॥



व्याघ्रादिभिर्हृतस्य विशेषमाह—

व्याघ्र-भल्लुक वाराह-सर्प-वृश्चिक-कुञ्जरैः ।  
 शृङ्गिभिर्विषपानाद्यैर्वृक्ष-शैलनिपातनैः ॥  
 विप्रोयदा मृतिं प्राप्तः खड्गदन्तादिभिः खरैः ।  
 गृहभित्त्यश्मभिर्वाऽपि स्तम्भ-कण्टक-शङ्कुभिः ॥  
 तं तदा दाहयेत् पुच्छः सद्यः कृत्वा षड्व्यक्तम् ।  
 मासत्रयेऽव्यक्तमात्रं स्यात् त्र्यव्यक्तं ऋतुदर्शनात् ५  
 वत्सरे तु षड्व्यक्तं स्यात् सर्वेषां दुर्मृतौ स्मृतम् ।

विद्युदग्निभिर्हृतैर्विना ।

गालवः—देशान्तरे वा युद्धे वा हतं व्याघ्रेण वा यदि ।

मधुना सर्पिषा मिक्ता दाहयेद् विधिना च तम् ॥

विधिवदित्युक्तं<sup>१</sup> प्रायश्चित्तं<sup>२</sup> कर्त्तव्यमित्यर्थः ।

प्रायश्चित्तविहीनस्य दुर्मृतस्य पिशाचता ।

सद्यः शतगुणं प्रोक्तं प्रायश्चित्तं मर्त्तापिभिः ।

इति हेमाद्रौ दुर्मृतस्य विप्रस्य प्रायश्चित्तम् ।

(१) विषयानाद्यैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) इत्युक्तं प्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ कर्त्तव्यमितिपठः क्रीत लेखितपुस्तकयोर्नास्ति



अथ क्षत्रियवैश्ययोर्दुर्मृतयोः प्रायश्चित्तमाह ।

‘देवलः—

बाहुजस्तूरुजो वापि निमित्तैर्यदि <sup>१</sup>वा हतः ।

प्रायश्चित्तं मुनिप्रोक्तं विप्रस्याऽर्द्धं समाचरेत् ॥

<sup>२</sup>( तत्तत्स्त्रीणां तत्तत्प्रायश्चित्तम् )—

[ वैश्यस्य क्षत्रियस्यार्द्धं <sup>३</sup>पादजे पादमाचरेत् ।

तत्तत्स्त्रीणां तत्तदर्द्धं प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥ ]

राज्ञां <sup>४</sup>गजा श्व-शस्त्र-पाषाण-लगुडादिभिः युद्धकाले मृतानां  
<sup>५</sup>न प्रायश्चित्तं । अन्यत्र मरणे तु पूर्वोक्तं प्रायश्चित्तम् । विप्रस्त्रीणां  
पूर्वोक्तनिमित्तैर्मरणसम्भवे विप्रस्यार्द्धं वेदितव्यम् ।

कन्यकानां बालानां दुर्मरणे प्रायश्चित्तं प्राजापत्यकृच्छ्रमात्रं  
कृत्वा दहनं <sup>६</sup>प्रीयनं वा कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ क्षत्रियादीनां दुर्मृतिप्रायश्चित्तम् ।

---

१. क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२. वा हत इति क्रीत लेखित-पुस्तकपाठः ।

३. लेखितपुस्तके नास्ति ।

अथ श्लोकः क्रीतपुस्तके नास्ति ।

४. राजाश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

५. नेति प्रद क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

६. प्रीयन इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दुर्मृतानां रज्ज्वादिभेत्तूणां प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

कण्ठपाशं दुर्मृतस्य यो विप्रश्चेत्तुमिच्छति ।

तस्य तस्याऽपवात्ता च तप्तकच्छं चरेत्तदा ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति तत्र नार्यफलं लभेत् ।

इति हिमाद्री दुर्मृतानां रज्ज्वादिभेत्तूणां प्रायश्चित्तम् ।

---

(२) समाचरेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. पार्थ इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दुर्मृतिवाहकानां प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

दुर्मृतं यो वह्नेत् स्नाने दहेद्वापि तदेव वा ।

पराक्रमभयोः प्रोक्तं देहशुद्ध्यर्थमादरात् ॥

पराशरः—

यो विप्रो दुर्मृतं ज्ञात्वा दहेद्धृत्वा स दोषभाक् ।

प्रायश्चित्तं तदा कुर्यात् पराकं मुनिचोदितम् ॥

तदस्थौनि परित्यज्य दुर्मृतस्य खलस्य च ।

पतितस्य प्रजारस्य तस्मात्तत् सूतकं व्रजेत् ॥

यदि मोहात्तदस्थौनि धृत्वा विप्रः स दोषभाक् ।

कालान्तरे गतिर्मृग्या सद्यस्तदग्राह्यमादरात् ॥

दुर्मृतं पतितं दृष्ट्वा सचेलं स्नानमाचरेत् ।

दृष्ट्वा पश्येत्तदाभानुमन्यथा रौरवं व्रजेत् ॥

इति हेमाद्रौ दुर्मृतवाहनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आङ्गे धृत्वा दग्धा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सम्प्राप्तं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ भजेत् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ मूल्यं गृहीत्वा श्ववाहकप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

विप्रः सर्वत्र मूल्यं वै गृहीत्वा कुणपं वह्नेत् ।

दग्ध्वा वापि महद् घोरं नरकं याति सर्वदा ॥

गालवः—मूल्यं<sup>१</sup> धृत्वा द्विजोयस्तु विप्रः कुणपमुद्वहेत् ।

दग्ध्वा पापमवाप्नोति नरके नियतिः<sup>२</sup> सदा ॥

मरीचिः—

अनायं वा सनायं वा यो विप्रः कुणपं वह्नेत् ।

गृहीत्वा मूल्यं<sup>३</sup> मन्यत्र तत्र वा पापभाग्भवेत् ॥

तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना प्राजापत्यादिह प्रभो ।

अन्यथा दोषमाप्नोति भारवाहो भवेद्भुवि ॥

उदामीनतया विप्रः कुणपं यत् समुद्वहेत् ।

पदे पदेऽश्वमेधस्य सम्पूर्णं फलमश्नुते ॥

इति हेमाद्रौ मूल्यं गृहीत्वा वाहकानां मृताऽहरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) मूल्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) नियतः सदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) मन्यमद्यादा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ धनिष्ठापञ्चकमरणे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— धनिष्ठापञ्चके 'वापि विप्रोयदि विपद्यते ।

तदा कर्त्तृविनाशः स्याद् गृहे वाऽरिष्टमश्रुते ॥

जावालिः—मरणं यदि विप्राणामन्येषां वसुपञ्चके ।

तदा गृहपतेर्नाशो<sup>१</sup> गृहं वाऽरिष्टमश्रुते ॥

मार्कण्डेयः—यस्य कस्य मृतिस्तत्र धनिष्ठापञ्चके<sup>२</sup> यदि ।

<sup>३</sup>तदा कर्त्तरि शङ्का स्याद् गृहं वा पापमश्रुते ।

तद्दोषपरिहारार्थं अत्र दानं समाचरेत् ॥

एकाशीतिपलं कांस्यं तदर्धं वा तदर्धकम् ।

नवषष्टिपलं वापि दद्याद् विप्राय शक्तितः ॥

पक्षान्तरमाह—

गौतमः—“धनिष्ठापञ्चकमृते हिरण्यशकलं मुखे न्यस्याहुऽऽतित्वयं  
तत्र<sup>४</sup> अतोवहवपामिति हुत्वा दहेत् । तदा दोषोनाशमाप्नोति  
सर्वदा कर्त्ता 'गृहे सुखी भूयात् अन्यथा दोषमश्रुते ।’ सर्व-  
वर्णसममेतत् होमं विना ।

इति हेमाद्रौ धनिष्ठापञ्चकमरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) यस्तु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भित्तिरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) तथा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) अतो व हविषां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) गृहं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ नन्दाभद्रातिथौमरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— उभयोः पक्षयोः प्रतिपत् षष्ठी चैव हरर्दिनम् ।

एता नन्दा महाराज भद्रावच्छे तथा शृणु ॥

द्वितीया सप्तमी चैव द्वादशी पक्षयोर्द्वयोः ।

एता<sup>१</sup> भद्राश्च तिथयो मरणे पापदायिकाः<sup>२</sup> ॥

कात्यायनः—

नन्दासु भद्रतिथिषु यो विप्रो निधनं गतः ।

तद्गृहे सर्वदाऽ रिष्टं भवत्येव महात्मनाम् ॥

गौतमः—नन्दायान्तु तथा<sup>३</sup> भद्रे यदा स्यान्मरणं भुवि ।

न तत्र वृद्धिरुत्पन्ना दत्तैर्दानशतैरपि ॥

तत्परिहारमाह—

यमः— नन्दायां गौः प्रदातव्या भद्रे भूमिरनन्तरम् ।

विप्रेभ्यो दीयते येन न दोषस्तत्र विद्यते ॥

कर्त्ता सुखमवाप्नोति मृतः सन्नतिमाप्नुयात् ।

क्षत्रियादीनामेवं विवेचनीयम् ।

इति हेमाद्रौ नन्दाभद्रा<sup>४</sup> तिथि मरणप्रायश्चित्तमाह ।

---

(१) एते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पापदायिन इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) नन्दाभद्रायां इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दुष्टवारिषु मृतिप्रायश्चित्तमाह ।

हेबलः—

भानुः कुजो भृगुर्मन्दवारो दुष्टो नृणां मृतौ ।

आयुर्हानिर्यशोहानिः कुल<sup>१</sup>कीर्त्तिविनाशनम् ॥

मरणे तु क्रमाद्राजन् योजनीयं शनैः शनैः ।

<sup>२</sup>[भानौ कुजे शनौ वस्त्रं तत्तद्वर्णं प्रदापयेत् ॥

भृगौ हिरण्यमहितं वस्त्रदानं विशोधनम् ।]

<sup>३</sup>[ गालवः—

भानुवारः कुजोवारो भृगुर्मन्दो यथाक्रमम् ।]

<sup>४</sup>[ तत् प्रायश्चित्तमाह,

मार्कण्डेयः—

भानौ कुजे शनौ वस्त्रं तत्तद्वर्णं प्रदापयेत् ।

भृगौ हिरण्यमहितं वस्त्रदानं विशोधनम् ॥ ]

नदाह—

मरीचिः—भद्रे भूमिप्रदानं स्यात् विपदर्त्ते हिरण्यदः ।

वारि<sup>५</sup> वाराऽधिदैवत्यं वामोदानं विशोधनम्<sup>७</sup> ॥

(१) मृतप्रायश्चित्तमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कीर्त्तिकुलविनाशनमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) । ] अयं श्लोकोऽधिकोऽत्र क्रीतपुस्तकेऽष्टः ।

(४) । ] अयमंगः क्रीतपुस्तकेनास्ति ।

(५) । ] क्रीतपुस्तके अयं पाठस्तु अत्र नोपलब्धः ।

(६) आचार्यधैवत्यमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) विधीयते इतिक्रीतपुस्तकपाठः ।



रक्तवस्त्रं कुजे भानौ श्वेतं शुक्रे प्रदर्शितम् ।

शनैश्चरे तु नीलं स्यादेतद्दोषोपशान्तये ॥

दत्त्वा<sup>४</sup> शुद्धिमवाप्नोति अकृत्या दोषमाप्नुयात् ।

क्षत्रियाणामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ दुष्टवारमरणे प्रायश्चित्तम् ।

---

(४) दद्यात् इति क्रीत-लेखितपुस्तक पाठः ।

---



अथ षष्ठिमित्तमरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— ऊर्ध्वोच्छिष्टमधोच्छिष्टमन्तरामरणं तथा ।  
कर्णमन्त्रेण राहित्यमस्नानमरणं तथा ॥  
तथा पर्युषितञ्चैव षष्ठिमित्तमितोरितम् ।  
एतैर्निमित्तैर्मरणे नरकं सम्प्रपद्यते ॥

मरोचिः—षष्ठिमित्तैर्द्विजो मृत्वा त्रयेण द्वितयेन वा ।  
क्षिप्रं नरकमाप्नोति कर्तुरायुः क्षयो भवेत् ॥

कण्वः— द्विजो वै षष्ठिमित्तैश्च सह मृत्वा तु दैवतः ।  
त्रयेण द्वितयेनाऽपि सहितो यदि पूर्ववत् ॥  
क्षिप्रं नरकमाप्नोति तत्कर्तुरशुभं भवेत् ।  
तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यं पृथक् चरेत् ॥

एकैकस्य निमित्तस्य प्रत्येकं प्राजापत्यकृच्छ्रं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ।

तदेवाह

जाबालिः—एकैकस्य निमित्तस्य प्रत्येकं कृच्छ्रमीरितम् ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति कर्तुरायुर्विवर्द्धनम् ॥

इति हेमाद्रौ षष्ठिमित्तमरणप्रायश्चित्तम् ।

(१) यो मृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तदा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ तथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शवोपरि उच्छिष्टादिपतनप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः—श्लेष्म-शृङ्खाणिकाऽश्रूणि रुदतां सम्पतन्ति हि ।

कुणपोऽशुद्धिमाप्नोति उच्छिष्टः कर्मकार्यसौ ॥

महाराजविजये—

पिपोलिका कृमिश्चैव उच्छिष्टं रोदनोद्भवम् ।

श्लेष्मशृङ्खाणिकाऽश्रूणि पतन्ति कुणपोपरि ॥

तदा शुचित्वमाप्नोति कर्त्ता नरकमश्रुते ।

गौतमः—

पिपोलिकाभिः कृमिभिः श्लेष्म-शृङ्खाणिका-श्रुभिः ।

कुणपोऽसृश्यतां याति कर्त्ता च कश्मली भवेत् ॥

तद्दोषपरिहारार्थं स्पृष्टोच्छिष्टं स्वपाणिभिः ।

मार्ज्जयेन्नूतनैस्तोयैरापोहिष्ठादिमन्त्रितैः ॥

एतैः शुद्धिमवाप्नोति दाहयोग्यो भविष्यति ।

क्षत्रियादीनामेवं स्त्रीणामपि ।

इति हेमाद्रौ शवोच्छिष्टादिपतनप्रायश्चित्तम् ।

(१) उच्छिष्टपतन इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अशुद्धिमवाप्नोति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) भवेत्तदा इति काशीपुस्तकपाठः ।



अथ शवस्य शूद्रादिस्पर्शनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— शूद्र-मार्जार-काकाद्यैः स्पृष्टश्चेद्रजकादिभिः ।  
रजस्वलाभिः स्त्रीभिश्च श्वभिः पतितकुण्डजैः<sup>१</sup> ॥  
न शवस्य परोलोकस्तत्कर्त्ता पापभाग्भवेत् ।

मरौचिः—

रजस्वलाभिः स्त्रीभिर्वा श्वभिः पतित-कुण्डजैः ।  
शूद्र-मार्जार-काकाद्यैः स्पृष्टश्चेद्रजकादिभिः ॥  
न शवस्य गतिर्वाऽस्ति कर्त्तुरायुःक्षयोभवेत् ।  
तद्दोषपरिहारार्थं स्नापयित्वा शवं तदा ॥  
नूतनेनैव वस्त्रेण पिधाय कुण्ठं तथा ।  
<sup>२</sup>रजस्वलादिभिः स्पर्शं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥  
कायं शुना च शूद्रेण इति तेषां हिरण्यतः ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति पश्चाद् दाहादिकं चरेत् ॥

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ <sup>३</sup>शवस्य शूद्रादिस्पर्शनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) कुण्डजनैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) रजस्वलाभिः स्पर्शं च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) शवः शूद्रादि इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ त्रिपान्नक्षत्रमरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— वज्रिभे दितिभे चैव नक्षत्रे भगदैवते ।

इन्द्राऽग्निभे वैश्वभे च उत्तराषाढएवच ॥

पूर्वभाद्रे तथा राजन् नक्षत्राणि महान्ति च ।

त्रिपदेष्वेषु <sup>१</sup>यन्मृत्युर्ग्रामेऽरिष्टं भवेत्तदा ॥

वारे त्रिपादिनक्षत्रे मृतिश्चेद् वाटिकाभयम् ।

तिथौ वारे त्रिपदभे मृतौ <sup>२</sup>गृहपतेर्भयम् ॥

तदाह—

गौतमः—“तिथ्युदयोगे ग्रामे गृहपतेर्गृहनाशश्च त्रिपान्नक्षत्रे  
मृतौ <sup>३</sup>हिरण्यदान माचरेत्” ।

वारे त्रिपाद्वि <sup>४</sup>मृत्यौ च हिरण्यं वस्त्रमेवच ।

तिथौ वारे त्रिपदभे <sup>५</sup>मृतिश्चेद्वाटिकाभयम् ।

भृगौ विशेषतो <sup>६</sup>वक्ष्ये त्रिपुष्करममोभृगुः ॥

<sup>७</sup>तत्रैव दुष्टनक्षत्रे तिथौ दुष्टमृति र्यदा <sup>८</sup> ।

तदा गृहपतेर्दोषः <sup>९</sup>मृत्यौ भाति महत्तरः ॥

(१) योमृत्यु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मृत्यु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मृत्यु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मृत्यु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) मृत्युर्वाच्य इति लेखितपुस्तकपाठः—मृत्यु गृहपतेर्भयमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) वापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(७) स एव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(८) यथा इति लेखितपुस्तकपाठः । (९) मृत्योरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तद्दोषपरिहारार्थं गोत्रयं सम्यगाचरेत् ।

अन्यान्तरे—

नक्षत्रे मरणे<sup>१</sup> स्वर्णं द्वयोर्योगे द्वयं चरेत् ।

[ त्रयाणां योगमात्रे च गामिकां तत्र सञ्चरेत् ]

कृत्वैतद्दोषमुक्तः स्वाद् अन्यथा हानिमादिशेत् ॥

क्षत्रियरादीनामेवं कन्यकास्त्रीमरणेष्वेवम् ।

इति हेमाद्रौ त्रिपात्रक्षत्रमरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) नक्षत्रं इति लेखितपुस्तकपाठः नक्षत्रेण इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

[ इदं श्लोकाद् क्रीतपुस्तक एव दृष्टम् ।



अथाऽऽमन्दीभञ्जनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

ग्रामश्मशानयोर्मध्ये यदाऽऽमन्दीभवभञ्जनम् ।

ग्रामारिष्टं कर्तृहानि<sup>(१)</sup> भवत्येव हि सर्वदा ॥

याज्ञवल्करः—

गृहादारभ्य दहनपर्यन्तं यदि भज्यते<sup>(२)</sup> ।

कर्तृनाशो गृहपतेर्महदरिष्टमश्नुमा ॥

शालिहोत्रः—

ग्रामन्दीं यदि राजेन्द्र भञ्जयेत् खलु देवतः ।

आदाहदशपर्यन्तं कर्तुर्दुःखं विनाशनम्<sup>(३)</sup> ॥

तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तं विशेषनम् ।

प्राजापत्यं तदा कुर्यात् कर्त्ताऽऽत्मलमोचने ॥

तदाऽसौ सुखमाप्नोति तस्य दोषः प्रणश्यति ।

सर्ववर्णसममिदम्<sup>(४)</sup> ।

इति हेमाद्रौ ग्रामन्दीभञ्जनप्रायश्चित्तम् ।

(१) कर्त्तृहानिर्ग्रामारिष्टमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भज्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ग्रामन्दी इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) दुःखविनाशनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) कार्यमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) सर्वं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शवपतनप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः — ग्रामन्याः<sup>१</sup> शकटाद्यापि कुणपोभुवि यत् पतेत् ।

तदाऽरिष्टं गृहे भूयात् व्याधि तस्कर-राजभिः ॥

महाभारते —

ग्राम-श्मशानयोर्मध्ये कुणपोयदि दैवतः ।

ग्रामन्देरनसोवेगात् भूमौ पतनमृच्छति<sup>२</sup> ॥

तत्कर्त्तुरतिवेगेन मृत्युर्हानिर्यशःक्षयः ।

गौतमः —

शकटादनमोवापि कुणपोयत्<sup>३</sup> पतेद्भुवि ।

श्मशान-ग्राममध्ये वा तत्कर्त्तुरतिवेगतः ॥

हानिर्मृत्युर्यशःखेदः सम्भवत्येव सर्वदा ।

तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥

तत्कर्त्तुश्च भवेद् बुद्धिरन्यथाऽशुभमादिशेत् ।

कन्यका-बाल लवियादीनामेवं वेदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ शवस्य भूपतनप्रायश्चित्तम् ।

१. ग्रामन्यः कटाद्यापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. य पतेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. तन्व्यारिष्टमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. पतितुमिच्छति इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५. य पतेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथाऽग्निपतनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— श्मशान-गृहयोर्मध्ये यदि वह्निः पतेद्भुवि ।  
तप्तेतस्य गतिर्नास्ति कर्तुरायुर्विनश्यति ॥

शालवः—

ग्राम-श्मशानयोर्मध्ये पात्रं भित्त्वा पतत्यसौ ।  
कर्तुरायुर्विनाशः स्यात् प्रेतो नरकमश्नुते ॥

गार्ग्यः— श्मशान-गृहमध्ये च यदि वह्निः पतेद्भुवि ।  
तदाकर्तुरभद्रं<sup>१</sup> स्यात् निर्जीवो याति नारकम् ॥  
तद्दोषोपशमायाऽलं तस्मिन् वह्नी घृताहुतिः<sup>२</sup> ।  
अग्निमीलेति मन्त्रेण अग्निमूर्धेति मन्त्रतः ॥  
हुत्वाऽऽहुतिद्वयं तत्र तमग्निं न त्यजं<sup>३</sup> स्तदा ।  
पुनः पात्रान्तरे न्यस्य<sup>४</sup> शेषं कर्म समापयेत् ॥  
अन्यथा दोषमाप्नोति पूर्ववत्पापभागभवेत् ।

शाल कन्यका-क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ अग्निपतनप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) अभद्रः स्यात् इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) तस्मिन् वहुघृताहुतिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) न त्यजेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) स्याप्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दहनयोग्यस्य 'प्रोथने प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—वालिकां बालकं वापि दाहाऽहं प्रोथयेद्भुवि<sup>१</sup> ।

बालश्च याति नरकं तत्कर्त्ता बालघातकः ॥

मरीचिः—

दाहयोग्यं यदा बालं<sup>२</sup> प्रोथेदज्ञानतोद्विजः ।

बालः पिशाचतां याति तत्कर्त्ता भ्रूणहा भवेत् ॥

कात्यायनः—

बालं वा वालिकां वापि दाहाहं निखनेद्भुवि<sup>३</sup> ।

महान्तं नरकं गत्वा भवेद्बालग्रहस्तदा ॥

विलादुद्धृत्य तं बालं प्रोक्षयेत् पञ्चगव्यतः ।

तत्तन्मन्त्रैर्जलैः पश्चाद् भूमिर्भूम्नाऽनुवाकतः ॥

तं बालमभिमन्त्र्याऽऽशु कृत्वा कृच्छ्रं विधानतः ।

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ दहनयोग्यस्य 'प्रोथनेप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) खनने इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दाहयोग्यं खनेद्भुवि इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) स बाल इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) खनेर्दिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) दाहयोग्यं खनेद्भुवि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) खनन इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ खननयोग्यस्य दहनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः — [वालिकां बालकं वापि दाहयोग्यं खनेद्भुवि ।]

[यो विप्रः खननयोग्यं द्विवर्षात् किञ्चिद्वनकम् ।

कर्त्तामी नरकं याति बालोयाति पिशाचताम् ॥

शौतमः — अज्ञानान् मुखजोबालं खननाऽहे<sup>१</sup> यदा दहेत् ।

स बालो याति पैशाच्यं कर्त्ताऽमी नारकी भवेत् ॥

पराशरः — जनद्विवर्षं निखनेत् कन्यकां बालमेव वा ।

अज्ञानाद्यदिवा मोहाद् भवेद्वर्षपराङ्मुखः ॥

बालोयाति महदुःखं कर्त्ता नरकमश्नुते ।

तद्दोषपरिहारायै वक्त्रां हुत्वाऽऽहुतित्रयम् ॥

वक्त्रं प्रजापतिं मौसं व्याहृतीस्तदनन्तरम् ।

हुत्वा तं शवसाढाय खनेद् भूमौ प्रयत्नतः ॥

तद्दोषपरिहारस्तु जायते नान्यथा भवेत् ॥

अत्रियादौलासेवम् ।

इति हंसार्द्रौ खननयोग्यस्य दहनप्रायश्चित्तम् ।

१ इदमहं लेखितपुस्तके न दृश्यते ।

इदमेव काव्यपुस्तके न दृश्यते ।

२ खननयोग्यं इति इति लेखितपुस्तके पाठः ।

शवसाढाय इति काव्यपुस्तके पाठः ।

३ कर्त्ता इति काव्य लेखितपुस्तके पाठः ।



अथ दहनयोग्यस्य दहनाभावप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—यो विप्रो मातरं तानं स्नातुं भगिनीं तदा ।

सुपां दुहितरं माध्वीं पुत्रीं वा पुत्रस्य वा ॥

प्रजावतीमात्मनश्च दाह्योऽग्न्यान् स्नान्वायवान् ।

लोभाद्वा नास्तिकाद्वापि वाक्याद्वाऽधर्मचारिणः ॥

अदग्धैतान् कर्ष्यं कुप्यन् नृत्तं नरकमेति मः ।

तेऽपि वै प्रेतभूताःस्यु नेमुक्ताःस्युयेमालयात् ॥

मार्कण्डेयः—

यः पुमान् दाह्योऽग्न्यान् स्नान् वायवान् दाहवर्जितान् ।

कृत्वा तेषां क्रियाः कुप्यन् नरकं न प्रपद्यते ॥

पितरस्तेऽपि प्रेतास्तुर्यमनीके सहत्तरे ।

तद्दोषपरिहाराय अन्तर्द्विहं विशुद्धिदम् ॥

प्राजापत्यत्रयं कृत्वा कर्त्ता शुद्धिमवाप्नुयात् ।

मृतास्तेऽपि परं यान्ति अभिद्विष्य जायते ॥

अत्रियादीनामप्यवम् ।

इति हेमाद्रौ दहनयोग्यस्य दहनाभावप्रायश्चित्तम् ।

१. कर्षन् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. कर्षन् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

३. दह्यमानान् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

४. दह्यमानान् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५. कर्षन् इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथोत्तरीय-शिलापात्र-कर्तृ-द्रव्य-विपर्यय- प्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः— (उत्तरीय शिलापात्र-कर्तृ द्रव्यविपर्यये ।)

कृच्छ्रत्रयं तदा कृत्वा पुनः कर्म समाचरेत् ॥

उत्तरीयं <sup>१</sup>चैतस्य पूर्वधारितवस्त्रखण्डं, शिला, दहनानन्तरं या  
संस्कारार्थं <sup>२</sup>गृहीता माशिला, ताम्रं <sup>३</sup>पात्रं च प्रथमदिवसे  
चरुस्त्रपणार्थं सम्पाद्यते । न दशाहपर्यन्तं पचनं कर्तव्यम् ।  
कर्त्ता मरणदिने अग्निकर्त्ता ।

[असगोत्रः सगोत्रो वा यदि स्त्री यदि वा पुमान् ]

“प्रथमेऽहनि यः कर्त्ता स दशाहं समापयेत् ।”

इति वचनात्, स्थानं पिण्डनिक्षेपणस्थानम् । द्रव्यं पिण्डद्रव्यं  
नण्डुलमुद्गादिकं तेषामेकैकस्य नागे प्रत्येकं कृच्छ्रत्रयं कृत्वा  
तत्तत्कर्म पुनर्दहनदिनादारभ्य कुर्यात् । तदाह-

आर्कण्डेयः— उत्तरीय-शिलापात्र-कर्तृ-द्रव्यविपर्ययः ।

यदि देवाद भवेत्तेषां नागे वर्षादिविद्रवैः ।

कृच्छ्रत्रयं तदा कृत्वा तत्तत्कर्म यथा क्रमम् ।

१] क्रीतपुस्तके नास्ति ।

२] चैतस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३] गृहीत्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

४] ताम्रं इति लेखितपुस्तके नास्ति ।

५] क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

६] वर्षाति विद्रवैरिति क्रीत-कार्गपुस्तकपाठः ।



दहनदिनादारभ्य इत्यर्थः । कर्त्ता ज्वरादिना चेत् पौडितः तदा  
अन्यः पूर्ववत् कच्छत्रयं कृत्वा दहनदिनादारभ्य शिलास्नान-  
मृदास्नानादिकं कुर्यात् ।

गौतमः—

अमगोत्रः मगोत्रोवा यदि स्त्री यदि वा पुमान् ।

प्रथमेऽहनि यः कर्त्ता स दशाऽहं समापयेत् ॥

तदभावे पुनश्चान्यः स्नात्वा कच्छत्रयं चरेत् ।

तत्तत्कर्माणि सर्वाणि तानि कुर्याद्यथाक्रमम् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति प्रेतत्वान्न विमुच्यते ।

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ उत्तरीयशिलापात्रादिविपर्ययप्रायश्चित्तम् ।



अथ पिण्डोपहतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

श्व शृगाल-खरैः पिण्डः सृष्टोभिन्नः प्रमादतः ।

कर्तुरायुष्यनाशः स्यात् प्रेतत्वं <sup>१</sup>नाऽपसर्पति ।

गौतमः —

शृगाल रासभ श्वानैर्दत्तः पिण्डो भुवःस्थले ।

सृष्टोभिन्नस्तदा <sup>२</sup>राजन् कर्तुरायुष्यनाशनम् ॥

प्रेतस्तस्मिन्निराशः स्यात् काकस्पर्शादिना तथा <sup>३</sup> ।

दत्तपिण्डो भुवःस्थाने श्व-शृगाल-खरादिभिः ॥

सृष्टोभिन्नस्तदा कर्तुरायुष्यं लयमेष्यति ।

प्रेतस्तस्मिन्निराशः स्यात् काकस्पर्शादिभिः <sup>४</sup>स्तथा ॥

भिन्नो विदलितः सृष्टः श्वादिभिर्भक्षितस्तथा ॥

तयोरेकत्र सम्भवे कर्तुर्हान्यादिकं योजनीयम् ।

तस्मात् प्रायश्चित्तमाह ।

जातुकर्णः—

दलिते श्वादिभिः सृष्टे पिण्डोऽपि महान् भवेत् <sup>५</sup> ।

तदा कर्तुरनायुष्यं प्रेतत्वं नाऽपयाति वै <sup>६</sup> ॥

---

(१) नोपसर्पति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तथा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) विना इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) काकस्पर्शादि विना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) अभूदिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) नोपजिघ्रति इति लेखितपुस्तकपाठः नापसर्पति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यं प्रकल्पयेत् ।

पुनः स्नात्वा तदा कर्त्ता पिण्डं कुर्यात् यथाविधि ॥

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ पिण्डोपहतिप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ सञ्चयनात् प्राक् प्रेतदहनान्निनाशप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— प्रेताग्निश्च विवाहाग्निर्व्रताग्निर्जातकर्मणि ।

नष्टोहतश्चोपहतःशान्तश्चेत्तत्र दोषभाक् ॥

मार्कण्डेयः—

प्रेताग्निर्जातकर्मणाग्निर्व्रताग्निश्च विवाहजः<sup>१</sup> ।

शान्तो नष्टश्चोपहतो हतश्चेद्दोषभाजनम् ॥

नष्टः अपसरणेन<sup>२</sup> नानादिक्षु ततो ज्ञातिभिर्गृहीतः, <sup>३</sup>उपहतिर-  
न्याग्निमेलनं, शान्तो नष्टप्रायः । एतेषां चतुर्विधानां अग्नीनां  
मेलने<sup>४</sup> प्रायश्चित्तं ग्रन्थकारैः स्मृतिकर्तृभिश्च यद् दर्शितं वयं  
तदेव ब्रूमः ।

कूर्मपुराणे—तत्तद्गस्म समूह्याऽऽशु शन्नो देवीत्यृचा जलैः ।

प्रोक्ष्य तत्रैव समिधं निधाय मनसा हरिम् ॥

स्मरन्नेतैश्च मन्त्रैश्च अभिमन्त्र्य च तां पुनः ।

अयन्तइति मन्त्रेण आजुह्वानेति मन्त्रतः ॥

उद्बुध्यस्वेति तां त्यक्त्वा लौकिकाग्नौ निधापयेत् ।

अत्रैव गौः प्रदातव्या श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ॥

---

(१) विवाहत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अपसरणं नानादिक्षु इति लेखितपुस्तकपाठः । अपसरणेन दिक्षु इति  
क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) उपहतोन्याग्निमेलनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मेलनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अस्थिमञ्चयनात् पूर्वं प्रेतदहनाग्निनाशप्रायश्चित्तम् ! ४७७

चतुष्पात्रप्रयोगेण स्रुचाऽऽज्यं प्रतिगृह्य च ।

अयाश्च जुहुयात् पूर्वं पञ्चहोतारमादितः ॥

ब्राह्मण एकहोता दश म'नस्वतीश्च जुहुयात् ।

खण्डाश्च जुहुयात् पश्चात् महाव्याहृतयस्तथा ।

अनाज्ञातत्रयं हुत्वा व्याहृतीः प्रणवैः सह ॥

इमं मे वरुणस्तत्त्वा मितस्त्वं न इति च जुहुयात् ।

कृत्वा विप्रस्ततः पश्चात् तत्तत् कर्म समाचरेत् ।

प्रायश्चित्तविहीनं यत् तत्कर्म विफलं भवेत् ॥

स्थालीपाकानन्तरं शेषहोमपर्यन्तं विवाहाग्नौ शान्ते, एतदेव प्रायश्चित्तम् । उपनयनादूर्ध्वं चतुर्थहोमपर्यन्तं शान्तेऽप्येतदेव । शिशौ जाते तदा जातकर्म कृत्वा फलीकरणहोमाग्नौ दशरात्र-मध्ये शान्ते च एतदेव । शवाग्नौ तु स्पष्टम् । क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ अस्थिमञ्चयनात् पूर्वं प्रेतदहनाग्निनाश-  
प्रायश्चित्तम् ।



अथ अस्युपहतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अस्थिसञ्चयनात् पूर्वं अस्थीन्युपहतानि चेत् ।

खरैः शृगालैः शुनकैः कङ्क-गृध्रादिभिः कथम् ॥

प्रेतोऽत्र नरकं याति कर्तुरायुर्विशङ्कितम् ।

मार्कण्डेयः—अस्थीन्यसृश्यतां<sup>१</sup> यान्ति ख शृगाल-खरादिभिः ।

प्रेतस्य यमलोकः स्यात् कर्तुरायुर्विपर्ययः ॥

तद्दोषपरिहारार्थं पञ्चगव्यैर्विशोधयेत् ।

पुरुषसूक्तेन तान्यद्भिः स्नापयेदस्थिसञ्चये<sup>२</sup> ॥

प्राजापत्यद्वयं कुर्याद् उभयोः शुद्धिहेतवे ।

ततः कर्म प्रकुर्वीत न तेन<sup>३</sup> स हि दोषभाक् ॥

अन्यथा न शुभं ज्ञेयं कर्तुं गृहनिवामिनः ।

क्षत्रियादीनामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ अस्युपहतिप्रायश्चित्तम् ।

१. असृश्यता इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२. सञ्चय इति क्रीत उर्विखण्डपुस्तकपाठः ।

३. सहदोषभाक् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ अस्यां जलनिक्षेपाभावप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—विप्रस्य कीकसानीह कर्त्ताऽश्वमि न निक्षिपेत् ।

प्रेतो वैतरणीं याति तत्पुत्रोऽशुभमाप्नुयात् ॥

गौतमः—मृतस्य यानि शल्यानि कर्त्ताऽश्वमि न चेत् क्षिपेत् ।

तत्कर्त्ता नरकं याति प्रेतोयाति महानदीम् ॥

आहिताग्नेर्विना राजन् अन्येषां विधिगौरवात् ।

गालवः—दशाहमध्ये तत्कर्त्ता पक्षे वा शल्यसंग्रहे ।

जलनिक्षेपणात् पित्रोः पितरोलोकमाप्नुयुः ॥

कर्त्ता सुखमवाप्नोति अन्यथा दोषवद्भवेत् ।

तेषां नष्टभुवःस्थाने कुलनाशो भवेत्तदा ॥

तद्दोषपरिहाराय कायकृच्छ्रं समाचरेत् ।

पश्चादस्थि समादाय निक्षिपेत् जलमध्यतः ॥

यावदस्थि मनुष्याणां गङ्गातोयेषु तिष्ठति ।

तावद्युगसहस्राणि स्वर्गलोके मर्ह्यते ॥

भागीरथ्यभावे यत्र कुत्र समुद्रगनदीजले स्थापयेत् ।

अन्यथा दोषमाप्नुयात् । क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ अस्यां जलनिक्षेपाभावप्रायश्चित्तम् ।

(१) लेखितपुस्तके नास्ति ।

(२) तत्पुत्रो भवमाप्नुयात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) न निक्षिपेत् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) पुत्रिर्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ परिषद्विप्रप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः— पर्षत्स्थितस्य विप्रस्य दोषबाहुल्यमस्ति चेत् ।

तत्पापस्य विशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यत्रयञ्चरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

परिषदर्थं द्विजोयन्तु भागैकं पापमश्रुते ।

तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यत्रयं स्मृतम् ॥

उपोष्य रजनीमेकां ब्रह्मकूचं पिवेत्ततः ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा गतिरस्ति हि ॥

जाबालिः—

परिषद्वृत्तिर्णां भागं गृहीत्वा विप्रपुङ्गवः ।

पाददोषो भवत्याहुस्तस्मादेतत् परित्यजेत् ॥

प्राजापत्यत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति निश्चितम् ।

पञ्चगव्यं पिवेत् पश्चान्नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

एवं क्षत्रियादीनामपि ।

इति वैमाट्टो परिषद्विप्रप्रायश्चित्तम् ।



## अथ विधायकप्रायश्चित्तमाह ।

रुद्रः—

विधायकश्च पापानां तदर्थ<sup>१</sup>दोषभाग्भवेत् ।  
तप्तकच्छद्वयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

गौतमः—

विधायको विधाता च पापानां पापकर्मिणाम्<sup>२</sup> ।  
तदर्थ<sup>३</sup>दोषभाग्भूय तप्तकच्छद्वयं चरेत् ॥

जाबालिः—

विधायको महापापी पापराशिं समुदहन् ।  
तप्तकच्छद्वयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पार्थिव ॥  
पञ्चगव्यं ततः पश्चात् पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात्<sup>४</sup> ।  
त्रिविधादीनामेवम् ।

इति ह्येमाद्री विधायकप्रायश्चित्तम् ।

---

१) तदर्थं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) पापकर्मिणां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) तदर्थं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) अवाप्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथानुवादकपापप्रायश्चित्तमाह ।

दैवलः—

पापान्यनुवदेद् यस्तु सभामध्ये तु पापिनः ।  
तुल्यपापी भवेत् सोऽपि नाऽत्र कार्या विचारणा ॥

मालवः—

सभामध्ये द्विजोयस्तु पापान्यनुवदेन्नृणाम् ।  
स तुल्यपापी तेनाऽऽशु महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
पश्चान् महानदीं गत्वा स्नात्वा शुद्धजलैर्मृदा ।  
गोमयैर्मृत्तिकाभिश्च अष्टोत्तरशतं चरेत् ॥  
पश्चाद्देहविशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणपरायणः ।  
स्मरन्नारायणं देवं अनन्तमपराजितम् ॥  
व्रतान्ते पञ्चगव्येन शुद्धिं कृत्वा विचक्षणः ।  
दद्याद्विप्राय गा<sup>(१)</sup>मैकां तत्पापपरिशोधिनीम्<sup>(२)</sup> ॥  
तुलादिसंग्रहीतृणां महतां पापिनामपि ।  
<sup>(३)</sup>अनुवादको भवेद्यस्तु तत्पापार्द्धफलं लभेत् ॥

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ अनुवादकपापप्रायश्चित्तम् ।

(१) देया द्विजाय गौरेका इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यग्नशोधनं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) अनुवादोभवेद्यस्तु इति काशीपुस्तकपाठः ।



अथ देशान्तरमरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

जननी जन्मदेशश्च जम्बूद्वीपो जनार्दनः ।  
जाङ्गवीतीरमित्येते<sup>१</sup> जकाराः पञ्च दुर्लभाः ॥  
मरणं जाङ्गवीतीरे नृणां मुक्तिप्रदायकम् ।  
विकृता<sup>२</sup>वपि संध्यातो मुक्तिदः स्याज्जनार्दनः ॥  
जननी जन्मदेशश्च मरणे मुक्तिदाः सदा ।  
तस्मात् स्वजन्मदेशश्च पापनाशकरो नृणाम् ॥  
देशान्तरे मृतिर्यस्य तस्य जन्म निरर्थकम् ।  
मृती नरकमायाति जन्मभूम्यतिलङ्घनात् ॥  
तस्य दोषनिवृत्त्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
कृत्वा दहनकाले तु दग्धा पश्चाद् यथाक्रमम् ॥  
न तेन दोषमाप्नोति ह्यन्यथा नरकं व्रजेत् ।

विप्रस्त्रयादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ देशान्तरमरणप्रायश्चित्तम् ।

---

१) आश्रित्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) विकृतौ यस्य स्मरणं इति लेखितपुस्तकपाठः । विकृतौ यस्य स्मरणे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) तथा इति काशीपुस्तकपाठः ।

४) तत्तेन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ देशान्तरमृतादीनामस्थिशरीराभावे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

देशान्तरमृतौ<sup>१</sup> पुंसः<sup>२</sup> शरीरास्थो<sup>३</sup>रभावतः ।  
अग्नौ स्थिते गृहे तस्य पालाशविधिरुच्यते ॥  
त्रयाणामप्यभावेऽपि देशान्तरमृतेरपाम् ।  
क्रियां कृत्वा विशुद्धः स्याद् अन्यथा नारकी भवेत् ॥

गौतमः—

अनाहिताग्नेर्विप्रस्य देशान्तरमृतस्य च ।  
शरीरास्थो<sup>४</sup>रभावेऽपि गृह्याग्नौ संस्थिते गृहे ॥  
पालाशविधिरत्रैव तदभावे जलक्रिया ।

पराशरः—

स्वगृहे विद्यमानोऽग्निर्देशान्तरगतीमृतः ।  
शरीरास्थोरभावे च पालाशविधिरुच्यते ॥  
तस्मिन् गृहेऽपि नष्टेऽग्नौ जलमध्यक्रिया तदा ।

---

(१) देशान्तरमृतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पुनः इति काशीपुस्तकपाठः ।

(३) शरीरास्थामिति-क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) शरीरास्थः इति काशीपुस्तकपाठः ।



महाभारते—

स्वगृहे विद्यमानोऽग्निर्देवादेशान्तरे<sup>(१)</sup> मृतः ।

अभावेऽप्युभयोस्तस्य दहेत्पालाशकर्मणा ॥

अग्नौ नष्टे गृहे तस्य विषमध्यक्रिया तदा ।

प्रायश्चित्तं तदा कार्यं मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥

चतुरब्दं ततः कृत्वा दहेत् पालाशधर्मतः ।

जीवे त्वब्दं विशुद्धार्थं निज्जीवे<sup>(२)</sup> द्विगुणं स्मृतम् ॥

अस्थिनि त्रिगुणं प्रोक्तं पालाशे तु चतुर्गुणम् ।

षडब्दमुदकस्थाने कृत्वा कर्म समाचरेत् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति कर्त्ता नाऽऽप्नोति तत्फलम् ।

गृहेष्वग्निषु विद्यमानेषु आहिताग्निर्देशान्तरे यदि विपद्यते तदा

अरण्यद्वयेन अग्निना दग्ध्वा अस्थीन्यादाय वह्निःसमीपे परलोक-

क्रियां त्रिगुणिताब्दप्रायश्चित्तपुरःसरं सर्व्वा कुर्यात् । शरीरास्थीर-

भावे पालाशैर्देहं कल्पयित्वा चतुरब्दप्रायश्चित्तं कृत्वा कु<sup>(३)</sup>र्यात्

तदाऽऽह ।

(१) देशान्तरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) न जीवेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) दहेत् इति काशीपुस्तकपाठः ।



मनुः—

अग्निषु ध्रियमाणेषु स्वगृहे याजकोयदि ।  
 देशान्तरे मृत<sup>१</sup>स्तस्य दाहस्व<sup>२</sup>रणिवर्जिना ॥  
 शरीरास्थोरभावेऽपि पालाशविधिरुच्यते ।  
 चतुरब्दं तथा कृत्वा दहेत्तं पूर्ववत् क्रमात् ॥  
 तेषामभावे तस्याऽपि षडब्दं कृच्छमाचरेत् ।  
 कृत्वा कुर्याज्जले सम्यक् परलोकक्रियां मुदा ॥  
 विधवादीनां स्त्रीणामप्येवं । तथा क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रौ देशान्तरमृतानामस्थिशरीराभावे  
 प्रायश्चित्तम् ।

(१) मृतस्तस्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दहतोऽरणिवर्जिना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ व्रणे कृम्युत्पत्तिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

यस्य कस्य व्रणेऽसाधुकृमयः सम्भवन्ति हि ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

गालवः—

द्विजस्य यस्य देहे तु व्रणं कृमिसमाकुलम् ।

स तेन<sup>१</sup> मरणं गत्वा नरके वासमश्नुते ॥

महाभारते—

राजन्यस्य शरीरे तु कृमिराशिर्भवेदिह<sup>२</sup> ।

तेनैव मरणं गत्वा<sup>३</sup> स वै नरकमश्नुते ॥

तद्दोषपरिहारार्थं कृच्छ्रं सान्तपनञ्चरेत् ।

पश्चाद्देहं विधिना स तेन नहि<sup>४</sup> दोषभाक् ॥

स्त्रीणामप्येवं क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रौ व्रणे कृम्युत्पत्तिप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) तेनैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) भवेद् यदि इति काशीपुस्तकपाठः ।

(३) प्राप्य इति काशीपुस्तकपाठः ।

(४) सह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ मृतस्य पुनरागमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवनः—

मृत्वा पूर्वं<sup>१</sup> द्विजो देवात् कृतप्रेतक्रियस्तदा ।

ततः परं मृतिं त्यक्त्वा पुनरु<sup>२</sup>ज्जीवितो यदा ॥

तदाऽऽमृश्यो भवेत् सर्वैर्ब्रह्मधर्मपरायणैः<sup>३</sup> ।

( गौतमः—

मृत्वा द्विजोऽथ यः पूर्वं यदि पश्चात् स जीवति ।

तदाऽऽमृश्यो भवेन्नृणां ब्रह्मधर्मपरायणैः ॥ )

जावालिः—

पूर्वं सर्वानसूयक्त्वा अनाचारपरो द्विजः ।

पश्चाज्जीवमुपा<sup>४</sup>गत्य कृतप्रेतक्रियो यदि ॥

न तं सम्भाषयेत् कोऽपि द्विजो वाऽन्यः पुमानिह ।

तस्य दोषनिवृत्त्यर्थं पितृसूक्तं जपेत्तदा ॥

पञ्चगव्यैश्च सम्प्रोक्ष्य स्नाप्य शुद्धजलैर्मृदा ।

अन्येन वा<sup>५</sup> समाऽऽच्छाद्य उपविश्य सुखासने ॥

---

(१) पूर्वं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पुनरुज्जावयेद्यदा इति लेखितपुस्तकपाठः पुनरुज्जीवयेत्तदा इति तु क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) ब्रह्मधर्मपरायण इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।

(४) उपाकृत्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) अन्येन वा समाच्छाद्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्राजापत्यं षड्बद्धं कृत्वा स्वस्थयनं चरेत् ।

गर्भाधानं ततः कुर्यात् पटगर्भविधानतः ॥

श्रौपासनादिकं सर्वं कुर्यात् पूर्ववदत्र हि ।

एवं कृत्वा शुचिर्भूयान् मृतः पुनरिहागतः ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति मृतवत्तं परित्यजेत् ।

“कृतक्रिय” इति कर्णमन्त्र-षष्ठिमित्तोत्क्रान्ति तिलपात्र-सर्वप्राय-  
श्चित्त-प्रेताहुति वाहकवरणानि । “अनाचार” इति सन्ध्यादिनित्य  
कर्मलोपः ।

इति हेमाद्रौ मृतस्य पुनरागमन-  
प्रायश्चित्तम् ।



अथ देशान्तरवासिनो द्वादशवर्षादृद्धं परलोक-

क्रियानन्तरं पुनरागतस्य प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पूर्वं देशान्तरं गत्वा 'भ्रमेद् भूमण्डलं पुनः ।

द्वादशाब्दे गते तस्मिन् त्यक्त्वा स्वगृहमञ्जसा ॥

कृतक्रियश्चेत् पुत्रादिः कथं शास्त्रप्रवर्त्तनम् ।

शृणुध्वं मुनयः सर्वे तस्य निष्कृतिमुत्तमाम् ॥

गालवः—

पूर्वं विप्रोषितो विप्रो द्वादशाब्दमितस्ततः ।

भ्रमन् स्वगृहमागत्य स्वपुत्रैः कृतसत्क्रियः ॥

भ्रातृपुत्रकलत्रेषु शास्त्रदृष्टिः कथं भवेत् ।

मार्कण्डेयः—

चिरकालाऽऽगतं बन्धुं हठात्तं नाऽवलोकयेत् ।

भित्वा कांस्यादिकं पश्येन् महानद्यन्तरं भवेत् ॥

भित्वा कांस्यादिकं दृष्ट्वा तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते ।

अन्यथा हानिरुदिता तयोर्वा धनसंशयः ॥

पराशरः—

द्वादशाब्दात्परं प्राप्तं पुत्राद्यैः कृतमंस्कृतं ।

दृष्ट्वा कांस्यादिकं भित्वा पश्चात् स्वगृहमानयेत् ॥

(१) भ्रमन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) चिरकालं कथं बन्धुन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) भ्रातृभिरिति क्रीत-लेखित पुस्तकपाठः ।



देशान्तरवामिनः परलोकक्रियानन्तरमागतस्य प्रायश्चित्तम् । ४८१

स्नानमभ्यज्य कर्त्तव्यं कारयित्वा तु 'तत्पुनः ।  
पुण्याहवाचनं कुर्यात् नान्याह्वानं यथाक्रमम् ॥  
पटगर्भविधानेन पुनः संस्कारमाचरेत् ।  
ब्रह्मोपदेशादारभ्य पञ्चगव्यान्तमाचरेत् ॥  
उशन्तस्त्वेतिमन्त्रेण स्वगृह्याग्नी विधानतः ।  
अष्टोत्तरशतं हुत्वा गोघृतस्याऽऽहुतीः पृथक् ॥  
होमशेषं समाप्यैव तमग्निं त्रिः परिक्रमेत् ।  
पत्नीं विगुण्ठनवतीं दृष्ट्वा जप्त्वाऽधमर्षणम् ॥  
ततः सृष्ट्वा स्वयं गाश्च जपेत् सूक्तञ्च पौरुषम् ।  
उपवेश्य ततस्तान्तु मार्जयेदधमर्षणैः ॥  
पुनर्वस्त्रान्तरं धृत्वा धेनवेन सहिताऽमुना ।  
लाजहोमविधानेन हुत्वा<sup>१</sup> शेषं समापयेत् ॥  
षड्विंशमुभयं कृत्वा प्रत्येकं विधिपूर्वकं ।  
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥  
एवं कृत्वा न<sup>२</sup>रः सम्यक् तस्माद् दोषात् प्रमुच्यते ।  
अन्यथा निष्कृतिर्नाऽस्ति जायापत्योरिहाऽनयोः ॥  
इति देशान्तरगतस्य मरणनिश्चयेन कृतक्रियस्य

पुनरागमने प्रायश्चित्तं ।

(१) तं पुनरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) धेनवे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा इति क्रीत-लेखित पुस्तकपाठः ।

(४) नरोयस्तु इति क्रीत-लेखित पुस्तकपाठः ।



अथ सूतकदितये मृतस्य प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

सूतकदितये राजन् यो विप्रोमृतिमन्वगात् ।

तस्यैव निष्कृतिर्नाऽस्ति षडब्दात् कच्छसंग्रहात् ॥

मार्कण्डेयः—

द्वयोराशौचयोर्मध्ये विप्रोदैवान्मृतोयदा ।

तस्य शुद्धिः 'समुदिता मुनिभिः सत्यवादिभिः ॥

शुद्धिं 'कुर्यात् षडब्दाच्च परिषद्भिधिपूर्वकं ।

( जावालिनः-जातके तु षडब्दं स्यात् मृतकेतु द्वयं चरेत् ॥

द्वयोराशौचयोर्मध्ये यस्य स्यान्मृतिनिश्चयः ।

तस्य शुद्धिः षडब्दाच्च कच्छादिह विनिश्चिता ॥ )

जातके तु षडब्दं स्यान्मृतके तु द्वयं चरेत् ।

अस्थिसञ्चयनात् पूर्वं त्र्यब्दकच्छं समाचरेत् ॥

क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ सूतकदितये मृतस्य प्रायश्चित्तम् ।

---

(१) इहानीता इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) कच्छात् इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(३) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नोपलब्धः ।



अथ सहगमनभीतायाः स्त्रियाः प्रायश्चित्तमाह ।

देशलः—

पूर्वं गच्छामि निश्चित्य<sup>१</sup> पत्या सह हुताशनम् ।

दहनस्थानमागत्य पश्चाद् या विनिवर्त्तते ॥

तस्या लोकान्तरं नाऽस्ति पतिर्गच्छति नारकम् ।

गौतमः—

मृतं भर्तारमुद्दिश्य गमिष्यामि हुताशनम् ।

इति या भाषते<sup>२</sup> पूर्वं पश्चाद्भीता निवर्त्तते<sup>३</sup> ॥

सैव याति महादुःखं भर्ता नरकमश्नुते ॥

महाभारते—

तिस्रः कोट्यर्द्धकोट्यश्च रोम्णां या मानुषे स्मृताः ।

तावत्कालं वसेत् स्वर्गे भर्तारं याऽनुगच्छति ॥

यमः—

पूर्वं यामौति सङ्कल्पा पश्चाद् भीता निवर्त्तते ।

याति सा नारकं लोकं भर्ता भवति किल्बिषी ॥

तद्दोषपरिहारार्थं शवाग्नी जुहुयात् क्रमात् ।

---

(१) यावद्भ्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भाषिता इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) निवर्त्तिता इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) भर्तारं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



“शतायस्त्राहे”ति नवभि ( दशभि ) हुँत्वा ‘शेषेणाज्येन पद्मराः  
सर्व्वाङ्गं विलेपयेत् ततः शुद्धा भवति भर्त्ताऽपि शुध्यति । एवं  
क्षत्रियादीनाम् ।

इति हेमाद्रौ सहगमनभीतायाः स्त्रियाः प्रायश्चित्तम् ।

---

(२) शेषमाज्यत इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

---



अथ देशान्तरमृतस्याऽऽहिताग्नेररण्यग्निना विना  
लौकिकाग्निना दहने प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

देशान्तरं मृतं राजन् यज्वानं लौकिकाग्निना ।  
दहेत् 'तत्तु वृथा भूयाद् 'अग्निभिश्च त्रिभिर्विना ॥

पराशरः—

आहिताग्नेररण्यग्नेर्देशान्तरमृतिं विना ।  
लौकिकाग्नौ दहेत् 'पुच्छस्तयोः प्रोक्ता ह्यधोगतिः ॥

मार्कण्डेयः—

सोमपं स्वाग्निमुत्सृज्य अरण्यग्नेर्विना दहेत् ।  
उभयोर्नरकश्चात्र न तत्कर्मफलं लभेत् ॥

अङ्गिराः—

देशान्तरमृतं पुच्छः अरण्यग्निं विना दहेत् ।  
सोमपा नरकं गच्छेत् तत्पुच्छोयात्यधोगतिम् ॥  
आहिताग्निं द्विजं पुच्छः अरण्यग्निं विना दहेत् ।  
यज्वा स नरकं याति तत्कर्त्ता नरकं व्रजेत् ॥

---

(१) पुच्छा इति लेखितपुस्तकपाठः पुच्छ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) सोऽग्निभिः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पुच्छैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्तमाह,

गीतमः—

तदस्थीनि समादाय<sup>१</sup> पुत्तोद्देशात् स्वमालयम् ।

गत्वा तं<sup>२</sup> धर्ममार्गेण प्राजापत्यत्रयं चरेत् ॥

मथित्वा सम्यगरणिं तदुद्भवहुताशने<sup>३</sup> ।

प्रायश्चित्तं तु त्रिगुणं कृत्वाऽस्थीनि प्रदाहयेत् ॥

कृत्वौर्द्ध्वदेहिकं कर्म धर्मशास्त्रोक्तमार्गतः ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

तत्पत्न्या विधवाया अप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ आहिताग्नेर्मृतस्य लौकिकाग्निना-

दहने प्रायश्चित्तम् ।

(१) समादाय इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) तं धर्ममार्गेण इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) हुताशनं इति लेखितपुस्तकपाठः हुताशनात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ गर्भिणीमृतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

यदा मा गर्भिणी-नारी-दैवा<sup>(१)</sup>दिह विपद्यते ।  
जडं षण्मासतस्तस्याः गर्भं छिन्यात् शिशुं हरेत् ॥  
मातुः पादप्रदेशे वा शिरोभागे तदा खनेत् ।  
यदि जीवेत्तदाबालः गृह्णत्वा पोषयेच्छनैः ॥  
यदामृतस्तदाऽऽदाय पूर्ववन्नक्षिपेद् भुवि ।  
गर्भं सूच्याऽथ सन्धाय जुहुयादाहुतित्रयम् ॥  
प्राजापत्यद्वयं कृत्वा दहेत्तां शास्त्रमार्गतः ।  
भर्तुर्गर्भस्य शुद्धयर्थं तप्तकच्छमुदोरितम् ॥

गौतमः—

तृतीयै पञ्चमे षष्ठे मृता स्याद् गर्भिणी यदि ।  
तत्र दाहे न दोषः स्यात्पात इत्यभिधीयते ॥  
मासि षष्ठे शिशुः प्राणैर्युज्यते तत्र दोषभाक् ।  
अतः श्मशानदेशे तु नीत्वा तां गर्भिणीं मृताम् ॥  
नारी वा सधवा वापि भिन्यान्नाभिरधःस्थलम् ।  
शिशुं हृत्वा क्षिपेद्भूमौ शिरःस्थाने प्रपादयोः ॥  
पिता<sup>(२)</sup> सूच्याऽथ तं गर्भं जुहुयादाहुतित्रयम् ।  
प्राजापत्यद्वयं कृत्वा दहेत्तां शास्त्रमार्गतः ॥

---

(१) दैवाद्यदि इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पित्राय सूच्या तं गर्भं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गर्भस्य भेत्तुः<sup>१</sup> शुद्धायं तप्तकृच्छं मनूदितम् ।  
 शिशुर्यदि तदा जीवेत् पोषयेद्यत्नतः शनैः ॥  
 यदामृतस्तदाऽऽदाय पूर्ववन्निक्षिपेद्भुवि ॥

( क्षत्रियादिस्त्रीणामप्येवम् ) ।

इति हेमाद्रौ गर्भिणीमरणप्रायश्चित्तम् ।

११) केत्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

१२) अयं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति ।



अथ सूतिकामरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

सूत्वा पुत्रं यदा नारी दशाहाभ्यन्तरे मृता ।

न तस्याः पुनरावृत्ती रक्तकुण्डास्महाभयात् ॥

मरीचिः—

या नारी तनयं सूत्वा यदि देवात् प्रमीयते ।

सूतके पुनरावृत्तिर्न तस्या यममन्दिरात् ॥

गौतमः—

सूता नारी मृता पश्चाद् दशाहाभ्यन्तरे यदि ।

न तस्या यमलोकाद् निष्कृतिर्वहुवत्सरैः ॥

तद्दोषपरिहारार्थं चत्वारऋत्विजः पृथक् ।

एक एव द्विजोवाऽपि वारुणान् कलमान् क्षिपेत् ।

पूर्वादिदिक्षु सर्वत्र जलेनापूर्य्य यत्नतः ॥

वरुणं पूजयेत्तत्र ऋत्विगेकश्चतुर्वर्षपि ।

कलसान् पाणिभिः सृष्ट्वा मन्त्रानेतानुदीरयेत् ॥

नमकं चमकञ्चैव पुरुषसूक्तञ्च वैष्णवम् ।

पवमानानुवाकञ्च हिरण्यं शृङ्गमिति क्रमात् ॥

शान्तिभिर्दशभिश्चैव कलमानभिमन्त्रयेत् ।

अन्येन वाससाऽऽच्छाद्य सूतिकां कृतशौचिकाम् ॥



मार्जयेद् ऋत्विग्भ्योभिः कलमस्थैः पवित्रजैः ।

आपोहिष्ठादिभिर्मन्त्रैर्देवस्यत्वेति मार्जयेत् ॥

ततः शवं वह्निर्हंशे स्थापयित्वाऽथ देशिकः ।

शतकुम्भोदकैः प्रोक्ष्य नूतनैर्नैव वामसा ॥

आच्छाद्य कुण्ठं पश्चाद् दहेद्दीपासनाग्निना ।

गौतमः—

तुषाग्निना दहेत् कन्यां कापालेन वटुन्तथा ।

विधुरं विधवाञ्चैव उत्पन्नेनैव दाहयेत् ॥

गृहस्थञ्चैव तत्पत्नीं दहेद् गृह्याग्निना पृथक् ।

आहिताग्निञ्च तत्पत्नीं वह्निभिश्च त्रिभिर्दहेत् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति गतिस्तेषां न विद्यते ।

यदि कन्यका वाऽथवा बालो वा धनिष्ठादिषु मृतः तदा पूर्ववत्  
प्रायश्चित्तं कृत्वा दहेत् ।

इति हेमाद्रौ मृतिकामरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ रजस्वलामरणप्रायश्चित्तम् ।

( देवलः—

रजस्वला यदा नारी मृतिमप्रायायथा सती ।  
नरकं याति सा नारी रक्तकुण्डे निमज्जति ॥ )

गौतमः—

यदा पुष्पवती नारी देवाद्यदि विपद्यते ।  
तस्या वै निष्कृतिर्नास्ति रेतःकुण्डाद्भयङ्करात् ॥

जावालिः—

रजस्वला तु दैवेन दिनेषु त्रिषु यत्र हि ।  
मृता तस्या गतिर्नास्ति रक्तकुण्डाद्भयङ्करात् ॥  
सूतिकामरणप्रायश्चित्तवत् सर्व्वं कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ रजस्वलामरणप्रायश्चित्तम् ।

---

(—) अयं पाठः क्रीतपुस्तके न दृष्टः ।

(१) देवल इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) रजस्वला यदानारी-इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथाहिताग्नेर्दुमृतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

अत्र 'भारद्वाज सूत्रं' "यद्याहिताग्निराधानं गच्छेत् महा-  
ऽग्निहोत्रेणाऽनुव्रजेत् यावत्योग्राममर्थ्यादा नद्यञ्च, तावतीर्नाति-  
हरेयुः, यद्यतिहरेयुः लौकिकाः संपद्येरन् । यदि पत्नी सीमान्तरेऽभि-  
निम्नोचेदभ्युदियाद्वा पुनराधेयं न तस्य प्रायश्चित्तिः । यद्यात्मन्य-  
रण्योर्वा समारुद्धेष्वग्निषु यजमानोऽभियेत पूर्व्ववदग्न्यायतनानि  
कल्पयित्वा यजमानायतने प्रेतं निधाय गार्हपत्यायतने 'अरण्यौ-  
सन्निधाय मन्यति । प्रेतस्य दक्षिणपाणिमभिनिनिधाय तत्-  
पुत्रो भ्राताऽन्योवा प्रत्यासन्नबन्धु "रूपावरोहजातवेदइमं मर्त्तं  
स्वर्गलोकाय प्रजानन्नायुः प्रजां रयिमस्मासु धेहि प्रेताहुतिञ्चास्य  
जुषस्वस्वाहेत्य"रण्योर्वोपावरोह्य मन्येत् । यद्यरण्योः समारुद्धः  
स्यान्निवर्त्तमानं प्रेतमन्वारभयित्वा इमं मन्त्रं जपेत् ।"

इति हेमाद्रौ आहिताग्नेर्दुमृतिप्रायश्चित्तम् ।

---

(३) भारद्वाज इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) अरण्यौ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथापस्मारि श्व-शृगालदष्टमरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अपस्मारि-शुना दष्टो विप्रः स्यात् प्रलपन् सदा ।

जम्बुकेनाऽथवा दष्टः प्रलपन् पूर्ववन्मृतः ॥

मार्कण्डेयः—

जम्बुकेन शुना विप्रो बुद्धिभ्रंशेन दष्टवान् ।

प्रलपन् तद्वदग्राणान्मृतोदैवात्तदा कथम् ॥

पराशरः—

जम्बुकेन शुना विप्रो बुद्धिभ्रंशेन दंशितः ।

प्रलपन् प्रत्यहं तद्वन्मृतो यदिह दैवतः ॥

तस्य वै निष्कृतिर्दृष्टा षड्विधैः कृच्छ्रसंज्ञितैः ।

विधिना दाहयेत् पश्चात् न तेन स ह दोषभाक् ॥

न तस्य दुर्मतेर्दोषो न पिशाचोभवेत्तदा ।

विधवा-विप्रस्त्रोणां क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति हेमाद्रौ अपस्मारि श्व शृगालदष्टमरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ शुना दष्टस्य प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

दिवा वा यदि वा रात्रौ शुना विप्रोऽथदंशितः ।

दिवा सचैलःस्नायीत न रात्रौ स्नानमाचरेत् ॥

गौतमः—

शुना विप्रो दिवा रात्रौ दंशितस्तत्क्षणाज्जलैः ।

स्नात्वा दिवा तु शुद्धः स्यात् रात्रौ न स्नानमाचरेत् ॥

पराशरः—

दिवा वा यदि वा रात्रौ विप्रः कवलितः श्वभिः ।

धर्मनाशस्तदा भूयाद् दिवास्नानं समाचरेत् ॥

तद्देशं क्षालयेत्तोर्यैरग्निसंस्पर्शनं चरेत् ।

पुनः प्रक्षाल्य तं देशं पादौ प्रक्षाल्य वाग्यतः ॥

आचम्य शुद्धिमाप्नोति परेद्युः स्नानमाचरेत् ।

उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥

स्तौबालवृद्धातुराणामेवं क्षत्रियादीनामपि एवम् ।

इति हेमाद्रौ शुनादष्टस्य प्रायश्चित्तम् ।



## अथेदानीं गर्भाधानादिषोडशकर्मार्तिकम्- प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

गर्भाधानं पुंसवनं सौमन्तोजातकर्म च ।

नामान्नप्राशने चौलं मौञ्जी-व्रतचतुष्टयम् ॥

गोदानाख्यं स्नातकञ्च विवाहः पैतृमेधिकम् ।

आवण्हीमञ्च । एतत्कर्मार्यतिक्रमे पृथग्भ्रष्टाः<sup>१</sup> कर्मविभ्रष्टाः

शाखारण्डा<sup>२</sup> ब्रह्मभ्रष्टाश्चतुर्विधा अपांक्तेयाः असम्भाष्याश्च ।

अत्र ।

मनुः—

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।

येन मार्गेण वर्त्तन्ते तत्पुत्रस्तेन सञ्चरेत् ॥

गौतमः—

येनाऽस्य पितरोयाताः येन याताः पितामहाः ।

तेन यायात् सतां मार्गं तेन गच्छन्न दुष्यति ॥

अन्यथा यदि वर्त्तन्ते चक्रलिङ्गादिधारिणः ।

पृथग्भ्रष्टास्तु ते ज्ञेयाः सर्वधर्मवहिष्कृताः ॥

---

(१) क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(२) लेखितपुस्तके नास्ति ।



गर्भाधानादिसंस्कारान् शक्ताः कर्तुं भुवि द्विजाः ।

तैर्व्विना ये प्रवर्तन्ते कर्मभ्रष्टास्तएव हि ॥

यः स्वशाखां परित्यज्य अन्यशाखामनुस्मरन् ।

उपनयनादिकं तत्र कुर्व्वन् विप्रो यदा भवेत् ॥

शाखादण्डः स विज्ञेयः सर्व्ववर्णवहिष्कृतः ।

सभ्यादिनित्यकर्माणि गायत्रीजपमेव च ॥

यागादिकं परित्यज्य समर्थोऽपि द्विजोत्तमः ।

यदि वर्त्तेत लोकेऽस्मिन् ब्रह्मभ्रष्टः स गद्यते ॥

अत एतानि कर्माणि श्रुतिस्मृत्युदितानि च ।

परित्याज्यानि विप्रेन्द्रैर्न कदा पापभीरुभिः ॥



अथ गर्भाधानत्यागे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

स्नानवत्यां ऋतो पत्रां गर्भाधानं समाचरेत् ।

चतुर्थेऽहनि वा राजन् पञ्चमेऽहनि तद्ववः ॥

कृत्वाऽभ्युदयिकं प्रातस्तद्रात्रौ मन्त्रपूर्वकम् ।

गर्भाधानं ततः कुर्यात् सर्वं<sup>१</sup> गर्भविशुद्धिदम् ॥

न तत्र प्रतिगर्भेषु<sup>२</sup> निषेको<sup>३</sup> मन्त्रसंहितः ।

अन्यथा दोषमाप्नोति गर्भपालीह गद्यते ॥

तद्दोषपरिहारार्थं गर्भशुद्ध्यर्थमेव हि ।

प्राजापत्यत्रयं कुर्यात् द्वितीये पुनरार्त्तवे ॥

अन्यथा गर्भपाली स्यात् यथा जारस्तथैव स ।

इति । क्षत्रियादीनामेवम् ।

इति गर्भाधानातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) पूर्व इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिगर्भे तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) निषेकं मन्त्रवर्जितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ सीमन्तपुंसवनातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

सीमन्तः प्रथमे गर्भे चतुर्थे मासि शस्यते ।

अथवा दैवयोगेन कुर्यात् षष्ठेऽष्टमे द्विजः ॥

पुंसवं तत्र कुर्वीत सीमन्तेन सहैव वा ।

जावालिनः—

सीमन्तः प्रथमे गर्भेऽयुगे मासि ऋतौ च वा ।

ऋतौ मासि प्रकर्त्तव्या गर्भशुद्धार्थमादरात् ॥

रजःपापसमुद्भूतं शुक्रं पापानुवर्त्ति यत् ।

तयोः संसर्गतो गर्भः प्रथमो दोषसम्भवः ॥

तद्दोषपरिहारार्थं सीमन्तीन्त्रयनञ्चरेत् ।

शक्त्या दर्भपिञ्जल्या<sup>१</sup> मार्ज्जयित्वा न दोषभाक् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति न शुद्धिर्गर्भहारिणः ॥

तत्प्रायश्चित्तमाह—

मार्कण्डेयः—

पुंससोमन्तयोर्विप्रो यदि तद्दोषनाशनम् ।

न कुर्यात् पूर्वजः पापी प्राजापत्यत्रयञ्चरेत् ॥

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति गर्भवृद्धिश्च जायते ।

क्षत्रियादीनामेवं—

इति हेमाद्रौ सीमन्तपुंसवनाकरणप्रायश्चित्तम् ।



## अथ जातकर्मातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

जाते पुत्रे पिता स्नात्वा सचैलं जातकर्मणि ।  
हेम्ना वा धान्यजातेन जातश्राद्धं समाचरेत् ॥  
अच्छिन्ननाभिं तं पुत्रं पिता पश्येत् प्रयत्नतः ।  
ये पुत्रमुखमीक्षन्ते स्वर्गद्वारमपावृतम् ॥  
पुत्रं दृष्ट्वा तथा भूमौ जातकर्म समाचरेत् ।  
फलौकरणमिश्रैश्च सर्षपैर्वाऽऽहुतीर्यजेत् ॥  
अजस्रान्निस्तदा तिष्ठेद् यावदाशौचनिर्गमः ।  
दशरात्रं पिता कुर्यात् एवं पुत्राभिवृद्धये ॥  
नैमित्तिके च कर्त्तव्ये स्नानदाने च रात्रिषु ।  
पुत्रजन्मनिदानञ्च नैमित्तिकमितीरितम् ॥  
ग्रहणीदाह-संक्रान्ति-यात्रासु प्रसवेषु च :  
दानं नैमित्तिकं 'कुर्याद् रात्रावपि न दुष्यति ॥  
देवाश्च पितरश्चैव पुत्रे जाते द्विजन्मनाम् ।  
आयान्ति पुण्यं तदहः स्नानदानादिकर्मसु ।  
मृताशौचेऽपि कर्त्तव्यं जातूकर्ण्योऽब्रवीद्वचः ॥  
मृताशौचे समुत्पन्ने पुत्रजन्म यदा भवेत् ।  
अशौचे निर्गते कुर्यात् जातकर्म च नाम च ॥  
जननाशौच उत्पन्ने पुत्रजन्म यदा भवेत् ।  
जननानन्तरं कुर्यात् जातकर्म यथाविधि ॥



प्रतिग्रहो न दोषाय नाभिच्छेदनतः पुरा ।  
 नालस्य च्छेदनादूर्ध्वं अपि तस्मिन् प्रतिग्रहः ॥  
 दिने न दोषायेत्याह मनुर्वृद्धस्तु धर्मवित् ।  
 जाते कुमारि तदहः कामं कुर्यात्प्रतिग्रहम् ॥  
 हिरण्य-धान्य-गो-वासस्तिलानां मधु-सर्पिषोः ।  
 जातकर्माऽकरणे प्रायश्चित्तमाह—

देवलः—

जातकर्म न कुर्वीत पूर्वजोयदि नास्तिकात् ।  
 व्रतकाले च तत्कर्म कुर्याद् विधिपुरःसरम् ॥  
 प्राजापत्यद्वयं कुर्यात् चौले वा नामकर्मणि ।  
 मुख्यकालोदशरात्रं गौणस्तु नामकर्मचौलोपनयनानि । मुख्य-  
 कालातिक्रमे गौणकालेष्वेतत्प्राजापत्यद्वयं कृत्वा तत्कर्म कृत्वा  
 शेषं समापयेत् । एवं क्षत्रियादीनामपि ।

इति हेमाद्रौ जातकर्माकरणप्रायश्चित्तम् ।



अथ यमलयोर्व्युत्क्रमकर्मकरणे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

यमलौ युगपज्जातौ मातुर्योनिविभेदनात् ।

तयोर्ज्येष्ठः पूर्वजः स्याद् द्वितीयोऽनुज एव हि ॥

मार्कण्डेयः—

पितुर्वीर्यनिषेकेण मातुर्मदनसद्गनि ।

शुक्रशोणितसस्पर्काद् द्विधा गर्भौ भविष्यतः ॥

तौ वर्द्धमानौ पेशिन्यां दशमे मासि सम्भवे ।

गर्भद्वारात् विनिष्क्रान्तौ युगपत्पततीभुवि ॥

पूर्वजस्तु भवेज्ज्येष्ठो द्वितीयोऽनुज एव हि ।

जावलिः—

पेशिन्यां वीर्यबाहुल्यान् मातुर्धर्मपितुस्तथा ।

पिण्डवत् संपतत्यत्र द्विधा भवति पूरणात् ॥

पिण्डद्वयं तदा भूयाद् वर्द्धते बहुमैथुनात् ।

आगते प्रसवे काले जातौ युगपदुद्गतौ ॥

पूर्वजः पूर्वजो ज्ञेयो द्वितीयोऽवरजस्तथा ।

यथा जनिर्यस्य शिशोः स एवाऽत्रैव पूर्वजः ॥

---

(१) पेशिन्यां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गर्भपितुः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) जाते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) योनिमूलादि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) गर्भयोऽनल इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।



पराशरः—

योनिमूला<sup>१</sup> द्विनिष्क्रान्तौ युगपद् 'गर्भगोलतः ।

जातौ यमलजौ ज्ञेयौ—तयो ज्येष्ठस्तु पूर्वजः ॥

उपनयनादिकं कर्म तत्पुरःसरमाचरेत् ।

योनिविन्दुसमुत्पत्तिर्न दृष्टा वाह्यतो जनैः ॥

प्रत्यक्षादृष्टसामग्रीर्नैव कर्मफलप्रदा ।

मरीचिः—

एकयोनिसमुत्पन्नौ जायेतां यमलात्मकौ ।

तयोज्येष्ठः पूर्वजः स्यात्कनीयान् अपरः क्षिती ॥

( योनिविन्दोरदृष्टत्वात् जनिरत्रैव कारणम् ।

तस्माज् ज्येष्ठः पूर्वजः स्यात् कर्माहोभुवि गौरवात् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति परिवेत्तैव सर्वदा । )

<sup>१</sup>भरद्वाजः—

तयोर्व्युत्क्रमतः कुर्यात् पिता यमलयोः शुभम् ।

परिवित्तिः पूर्वजः स्यात् परिवेत्ता द्वितीयजः ॥

तयोर्यदिह सन्तानं परिविन्दा<sup>२</sup>दिकं भवेत् ।

पित्रा विमृश्य कर्त्तव्यं व्रतकर्मादिकं ततः<sup>३</sup> ॥

(—) अयं पाठः क्रीत-पुस्तके नोपलब्धः ।

(१) भरद्वाज इति चेषितपुस्तकपाठः ।

(२) परिविन्दादयो ऽभुवन् इति चेषितपुस्तकपाठः ।

(३) तस्माद् विमृश्य कर्त्तव्यं व्रत कर्मादिकं पिता इति चेषित क्रीतपुस्तकयोः पाठः ।



यमलयोर्व्युत्क्रमकर्मकरणे प्रायश्चित्तम् ।

५१३

व्युत्क्रमान्मौज्जीवन्धनादिकं अज्ञानात्कृत्वा परिवृत्ति परि-  
वेत्तुप्रायश्चित्तं कृत्वा विवाहादिकं कुर्यात् । अन्यथा दोष-  
माप्नोति । क्षत्रियवैश्ययोरप्येवम् ।

इति हैमाद्रौ यमलयोर्व्युत्क्रमविवाहादिप्रायश्चित्तम् ।

अथ नामकरणातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

एकादशेऽङ्गि सम्प्राप्ते पितरौ नामकर्म यत् ।

कुर्यातां तस्य सम्पत्तिरायुषां तत्र तत्क्षणात् ॥

मार्कण्डेयः—

पितरौ नामकरणं पुत्रस्य दशमेऽहनि ।

विचार्याऽपरतो वेधात् कुर्यातां शुभमादरात् ॥

पुत्रस्य वा कन्यकाया नामकर्म शुभाप्तये ।

पिता कुर्यात् प्रयत्नेन महद्भिर्द्विजपुङ्गवैः ॥



पुत्रस्य नाम कुर्वीति पिता चेकादशेऽहनि ।

आयुषस्तस्य वृद्धयं स्वस्य सम्पत्समृद्धये ॥

नाम त्रिविधं, मासनाम नक्षत्रनाम व्यवहारनाम च । तयाणां  
करणात् पुत्रस्याऽऽयुषः परिवृद्धिः । अतो नामकरणं एकादशेऽहनि  
विहितम् ।

“एतेषां करणात् पुत्रः शतवर्षमकण्टकम् ।

आयुराप्नोति सहसा तस्मादेतत् त्वयं चरेत् ॥

एकादशाहं सन्तज्य भोजने चैलकेऽपि वा ।

व्रतवन्धे तु राजेन्द्र प्राजापत्यद्वयं पिता ॥

कृत्वा कर्म प्रकुर्वीति मुख्यकालव्यतिक्रमात् ।

एतेन शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरस्ति हि ॥

इति हेमाद्री नामकरणातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

अथाऽन्नप्राशनकालातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

शिशूनां भोजने राजन् कालः षण्मासदैरितः ।

तदतिक्रमणे' नाऽस्ति मुख्यकालोद्भिजन्मनाम् ॥



हारीतः—

शिशूनां भोजनं शस्तं षण्मासे मुनिचोदितम् ।

तदतिक्रमणे दोषोव्रतबन्धे तु मध्यमम्<sup>(१)</sup> ॥

जावालिः—

षष्ठे मासि कृतश्राद्धो वाचयित्वा शिशोर्द्विजैः ।

ब्राह्मणांस्तत्र सम्पूज्य भोजयेत् तं शिशुं मुदा ॥

मुख्यकालपरित्यागाद् गोणे गुणविहीनता<sup>(२)</sup> ।

अतः षण्मासतः कुर्यादन्नप्राशनमादरात् ॥

तदतिक्रमणे प्रायश्चित्तमाह—

उशनाः—

मुख्यकालपरित्यागादन्नप्राशनकर्मणः ।

व्रतबन्धे तु गौणं स्यात् प्राजापत्यमुदीरितम् ॥

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति कर्मलोपो न जायते ।

क्षत्रियादीनामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ अन्नप्राशनकालातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

(१) मध्यम इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गुणविहीनवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ चौलकर्ममुख्यकालातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः ।  
प्रथमेऽन्दे तृतीये वा कर्त्तव्यं श्रुतिदर्शनात् ॥

पराशरः—

चूडा नाम शिशूनाञ्च वपनं तच्छिखां विना ।  
पञ्च वाऽत्र शिखामेकामवशेष्य वपेत्तदा ॥  
शिशुर्दीर्घायुरत्रैव जायते पृथिवीपते ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति आयुर्हीनोभवेत्तदा ॥

मरीचिः—

प्रथमेऽन्दे तृतीये वा शिशूनां मुण्डनं स्मृतम् ।  
शिखाः पञ्चैव संज्ञेया<sup>१</sup> आपस्तम्बानुवर्त्तिनाम् ॥  
यस्यैव ऋपयोये च यस्यैव कुलधर्मतः ।

गौतमः—

देशकालानुरोधेन यदि देवाद्विलम्बितम्<sup>२</sup> ।  
प्राजापत्यद्वयं कृत्वा तत्पापपरिशोधनम्<sup>३</sup> ॥

---

(१) संज्ञोभ्या इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विलम्बितं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) परिशोधनात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



चतुष्पात्रविधानेन परिस्तीर्य हुताशनम् ।

महाव्याहृतिहोमं च कृत्वा कर्म समाचरेत् ॥

शिशुः शुद्धिमवाप्नोति कर्त्ता चैवं न दोषभाक् ।

क्षत्रियादीनामप्येवम् ।

इति हेमाद्रौ चौलकर्ममुख्यकालातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

अथ शिशूनामक्षराभ्यासकालातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

‘उदगते भास्वति पञ्चमाब्दे  
प्राप्तेऽक्षरस्वीकरणं शिशूनाम् ।  
सरस्वतीं विष्णु-विनायकीं च  
गुडोदनाद्यैरभिपूज्य कुर्यात् ॥

गालवः—

पञ्चमाब्दे शिशूनाञ्च कुर्याद्विद्यापरिश्रमम् ।  
विनायकं शारदाञ्च पूजयित्वा जनार्दनम् ॥



मार्कण्डेयः—

आरोग्यं भास्करादिच्छेदं विद्यामिच्छेद्विनायकात् ।

श्रियं महेश्वरादिच्छेन्मोक्षमिच्छेज्जनार्हनात् ॥

अतः पञ्चमवर्षे च विद्याभ्यासः प्रशस्तः मेधावो च भवति ।

तदतिक्रमे प्रायश्चित्तमाह—

पराशरः—

पञ्चमाब्दं विलङ्घ्याऽऽशु शिशोरक्षरसंग्रहे ।

कायकं तत्र कर्त्तव्यं कृच्छ्रं कृत्वा विशुध्यति ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति 'विद्या तं न प्रबोधयेत् ।

विद्याग्रहणं नाम पञ्चाशद्वर्णमाहकास्वीकारः ।

गालवः—

पञ्चमेऽब्दे शिशुः सम्यग् गुरोर्मातरमभ्यसेत् ।

अभ्यर्च्य गणपं विष्णुं शारदां भक्तवत्सलाम् ॥

इति हेमाद्रौ शिशूनामक्षरग्रहण-

कालातिपातप्रायश्चित्तम् ।



## अथोपनयनकालातिपातप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

गर्भाष्टमेऽष्टमे वाऽष्टे ब्राह्मणस्योपनायनम् ।

गर्भैकादशमे राज्ञो वैश्यं द्वादशवार्षिकम् ॥

तदाह ।

गृह्यकारः—

“गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयीत । गर्भैकादशेषु राजन्यम् । गर्भ-  
द्वादशेषु वैश्यम्” । इति ।

द्वादशवर्षपर्यन्तं काम्योपनयनकालमाह

सएव—

“सप्तमे ब्रह्मवर्चसकामम् । अष्टमे आयुष्कामम् । दशमे  
अन्नाद्यकामम् । एकादशे इन्द्रियकामम् । द्वादशे पशुकामम्” ।  
इति ।

गर्भाष्टमेषु इति बहुवचनं पञ्चवर्षादारभ्य गर्भाष्टमकालपर्यन्तं  
मुख्यकालः । ( इति प्रतिपादनाय ) गर्भाष्टमजन्माष्टमयोरिव  
मेधावी आयुष्मान् भवति वटुः । गर्भाष्टमेष्विति वचनं मुख्यकाल-  
गौरवात् ।

---

(१) गर्भद्वादशमे राज्ञो वैश्यं द्वादशवार्षिकम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीत-लेखितपुस्तकयोर्न दृश्यः ।



तदेवाह ।

गौतमः—

गर्भाष्टमे कुमारानां व्रतबन्धोविधीयते ।

मेधावी दोर्घकालायुर्वटुर्भवति निश्चयम् ॥

यदि दैवाद् गर्भाष्टमेऽभावः—तदा जन्माष्टमेऽद्दे वा कुर्यात् ।

तदेवाह ।

मनुः—

शिशोर्गर्भाष्टमेऽभावे कुर्याज्जन्माष्टमेऽपि वा ।

दोर्घायुर्व्रह्मविद्दान्तः कृतकृत्योभवेत् तदा ॥

अतः गर्भाष्टमजन्माष्टमयोर्मुख्यं विहितम् । नवमो<sup>३</sup> दशमो वा  
मध्यमः । एकादशो<sup>४</sup> द्वादशो वा कर्त्तव्यान् ।

तदेवाह ।

गौतमः—

नवमे दशमेऽद्दे च व्रतबन्धोऽस्य मध्यमः ।

एकादशे द्वादशे च कर्त्तव्यान्<sup>५</sup>परिकीर्त्तितः ॥

(१) निश्चय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) ब्रह्मविद्वान् स इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) नवम-दशमयोरिति लेखितपुस्तकपाठः । नवमे दशमे वा इति क्रीत-  
पुस्तकपाठः ।

(४) एकादशद्वादशयोरिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) व्रतबन्धने इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



मुख्यकाले व्रतो भूयान्मध्यमे मध्यमोभवेत् ।

नौचाद्धे नौचतां याति अष्टमाद्धं न लङ्घयेत् ॥

अष्टमाद्धस्य बलवत्तामाह ।

पराशरः—

बाले<sup>१</sup> तु बलहीनेऽपि गर्भिण्यामपि मातरि ।

योयदीच्छेद् द्विजन्मत्वं अष्टमाद्धं न लङ्घयेत् ॥

आषोडशाद्धपर्यन्तं कालमाहुर्मनीषिणः । इति

कालनिरोक्षणापेक्षया । कलौ युगे अद्धवाहुल्यात् देशविप्लवाच्च

पञ्चमवर्षादारभ्य अष्टमाद्धपर्यन्तं समीचीनम् । उक्त<sup>२</sup>नवम-

दशमवर्षयोर्वा ।

तेषां मुख्यकालातिक्रमे दोषमाह—

कात्यायनः—

जन्ममर्भाष्टमे राजन् व्यतिक्रम्य विदन्नपि ।

गौणकालेषु पुत्राणां व्रतबन्धं यदा चरेत् ॥

तदा पिता महत्पापमवाप्य रघुनन्दन ।

<sup>३</sup>सपुत्रः पापकर्मा स्यादुभौ तौ पापसम्भवौ ॥

अष्टमाद्धं लङ्घयित्वा—चरेद्व्रतम् ।

(१) बालस्तु बलहीनोऽपि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) उक्तनवम-दशमवर्षौ वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पुत्र- इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



प्राजापत्यमित्यर्थः —

नवमे तप्तकृच्छ्रं स्याद् दशमे चोभयं स्मृतम् ।

एकादश-द्वादशयोरतिक्रम्यैन्दवं चरेत् ॥

त्रयोदशाब्दादारभ्य षोडशाब्दव्यतिक्रमे ।

न सम्भाष्यो न पांक्तेयः सर्वधर्मवहिष्कृतः ॥

ततः परं यदीच्छेत द्विजन्मत्वं पिताऽऽत्मजे ।

कृत्वा स्वयं पुनः कर्म चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ॥

पुत्रस्य देहशुद्ध्यर्थं कुर्याद् गोसुख<sup>१</sup>सम्भवम् ।

<sup>२</sup>गोसुखसम्भवं गोसुखजननमित्यर्थः ।

प्राजापत्यत्रयं कृत्वा मौञ्जीवन्धं समाचरेत् ।

अन्यथा पतितं विद्यान्न कर्माही भवेदिह ॥

क्षत्रियवैश्ययोरिवम् । तत्र क्षत्रियस्य द्वाविंशवत्सरातिक्रमे, वैश्यस्य चतुर्विंशवत्सरातिक्रमे च, एवं प्रायश्चित्तं द्विगुणं कृत्वा उपनयनं चरेत् । अन्यथा त्रयोवर्णा दोषमाप्नुयुः ।

इति हेमाद्रौ-उपनयनकालातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

(१) गोसुखसम्भवमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) गोसुखसम्भवं गोसुख जननीमित्यर्थ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ दण्डाजिनमौञ्जाभावे वटोः प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अजिनं मेखलां दण्डं 'व्रती' नित्यं भजेत्तदा ।  
यावत्पाणिग्रहस्तस्य तावद् वर्णी न सन्त्यजेत् ॥

पराशरः—

मेखलामजिनं दण्डं 'वर्णी' नित्यं परिग्रहेत् ।  
कर्म कुर्यात्तदा मौनो यदा कर्म समाप्यते ॥

गौतमः—

मेखलामजिनं दण्डं ब्रह्मचारी सदा वहन् ।  
सन्ध्यादिकं सदा कुर्यात् तदानन्त्याय कल्पते ॥

महाराजविजये—

अजिनं मेखलां दण्डमुदहन् प्रथमाश्रमी ।  
सन्ध्यादिनित्यकर्माणि कुर्याद् यदि तदा शृणु ॥  
सर्वाणि फलवन्त्यस्य ब्रह्मतेजोभिवृडये ।  
तथा वेदानधीयीत गुरुशुश्रूषणन्तथा ।  
ब्रह्मचारी यदि त्यजेद् आपादं मेखलाजिने ॥  
दिनत्रयं वा पक्षं वा प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
नष्टे भ्रष्टे नवं सन्वाद् धृत्वा भ्रष्टं जले क्षिपेत् ॥

---

(१) व्रते नित्यं भवेत्तदा इति कीर्तपुस्तकपाठः ।

(२) ब्रह्मचारी सदाचरेत् इति कीर्तपुस्तकपाठः ।



तथा मामपरित्यागं तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ।

अष्टमात्रपरित्यागं चरच्चान्द्रायणव्रतम् ॥

क्षत्रियादीनामिवम् ।

इति हेमाद्रौ दण्डाजिनसौञ्चाभावे वटीः प्रायश्चित्तम् ।

अथ ब्रह्मचारिणोव्रतलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवल. —

अशुचित्वं दिवास्त्रापं तथा ताम्बूलभक्षणम् ।

नृत्यं गीतं तथा वाद्यं द्यूतं स्त्रीव्यसनन्तथा ॥

गन्धं पुष्पं तथा क्षौद्रं कृत्रं वा पादुकाद्वयम् ।

पापण्डजनसंसर्गं तथा पापण्डभाषणम् ॥

तथा दैवपरित्यागं गुर्वशुश्रूषणन्तथा ।

ग्रामचाण्डालसम्भाषां ब्रह्मचाण्डालभाषणम् ॥

(१) तथा वेदपरित्याग इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) गरुशुश्रूषणं तथा इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।



अग्निकार्यब्रह्मयज्ञ-तर्पणलोपप्रायश्चित्तम् ।

५२५

दर्पणं दन्तकाष्ठं च परनिन्दाऽऽत्मकत्यनम् ।

एतानि संत्यजेन्नित्यं ब्रह्मचारो जितेन्द्रियः ॥

एतेषां स परित्यागाद्भूतो ब्रह्मपदं व्रजेत् ।

एतेषां च परिग्राही एकस्याऽपि यदा व्रतो ॥

प्रायश्चित्ती भवेत् सोऽपि ब्रह्मचारो न संशयः ।

एतांश्च नियमांस्त्यक्त्वा ब्रह्मचारो गुरौ वसन् ॥

चान्द्रायणं व्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति निश्चितम् ।

महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ।

ब्रह्मचर्यपरोयस्तु स गच्छेद् ब्रह्मणः पदम् ।

इति हेमाद्रौ ब्रह्मचारिणोव्रतलोपप्रायश्चित्तम् ।

अथाऽग्निकार्य-ब्रह्मयज्ञ-तर्पणलोपप्रायश्चित्तम् ।

देवलः—

अग्निकार्यं ब्रह्मयज्ञं देवर्षिपितृतर्पणम्

ब्रह्मचारो परित्यज्य भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

गौतमः—

अग्निकार्यं ब्रह्मयज्ञं देवर्षिपितृतर्पणम् ।

त्यक्त्वा व्रतो यदा भुङ्क्ते ज्ञानाच्च चान्द्रायणं चरेत् ॥

(१) एतेषांपूर्ववद्ग्राही एकमेव यथाव्रतो इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) यदित्यक्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मार्कण्डेयः—

अग्निकार्यं ब्रह्मयज्ञं देवर्षिपितृतर्पणम् ।  
 देवपूजां गुरोः सेवां त्यक्त्वा वर्त्तेद् व्रतो यदा ॥  
 भुक्त्वा चान्द्रायणं कुर्यान्मासमात्रं निरन्तरम् ।

जावालिः—

देवपूजां गुरोः सेवां तथा वृद्धाभिवादनम् ।  
 अग्निकार्यं ब्रह्मयज्ञं देवर्षिपितृतर्पणम् ।  
 एकत्र दिवसे त्यक्त्वा ब्रह्मचारी सदा जपेत् ।  
 लौकिकाग्निं 'समाधाय' 'होमं' व्याहृतिभिश्चरेत् ॥  
 मासे तु पञ्चगव्यं स्याद् ऋतौ 'कायं' विशोधनम् ।  
 संवत्सरे तु चान्द्रं स्यात् ततः पतित एव हि ॥

इति हेमाद्रौ ब्रह्मचारिणोऽग्निकार्य-ब्रह्मयज्ञ-तर्पण-  
 गुरुसेवातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

- 
- (१) समादाय इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (२) व्याहृतीर्होममाचरेत् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (३) कार्यं विशोधनमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ वेदाभ्यासलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः--

मौञ्जीव्रतमुपक्रम्य परं श्रावणकर्मणः ।

ब्रह्मचारी वृथा कुर्वन् वेदाभ्यासं विना दिनम् ॥

दिनानोत्थः ।

वेदघातो स विज्ञेयः सर्वकर्मस्वनर्हितः ।

गौतमः--

उपनायदिनादूर्ध्वं परं श्रावणकर्मणः ।

अबभ्यं दिवसं कुर्वन् ब्रह्मचारी स लोकभाक् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति वेदघातो स उच्यते ।

पराशरः--

ब्रह्मचारी सदा शुद्धो वेदाभ्यासेन बुद्धिमान् ।

वेदोनारायणः साक्षाद् वेदाभ्यासान्महान् भुवि ॥

जातूकर्णः--

उपनयनदिनादूर्ध्वं परं श्रावणकर्मणः ।

ब्रह्मचारी ब्रह्मविद्यां त्यक्त्वा वर्त्तत सर्वदा ॥

---

(१) अनर्हवान् इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) उपायनदिनादित इति लेखितपुस्तकपाठः उपनयनदिनादिति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(३) वेदाभ्यासे इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



वेदघाती स विज्ञेयः सर्वकर्मस्वनर्हवान् ।  
 तद्दोषपरिहारार्थं कायकृच्छ्रं ततः परम् ॥  
 कृत्वाऽभ्यासं च वेदानामधीत्य ब्रह्मविद्भवेत् ।  
 एकवर्षाद्द्वै एतत्प्रायश्चित्तम् । वर्षद्वये वर्षत्रये वा चान्द्रायणम् ।

इति हेमाद्रौ वेदाभ्यासलोपप्रायश्चित्तम् ।

अथानध्ययनंषु वेदपाठप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मासे मासे तु पर्व्यादि<sup>१</sup>स्तथा मन्वाद्यः त्रयम् ।  
 युगाद्यस्तथा शुक्ला अष्टमी च चतुर्दशी ॥  
 शयनोत्थानद्वादशी महाभरणी तथैव च ।  
 मन्थ्यायां गर्जिते मेघे तथा भूकम्पनेऽपि च ॥  
 ग्रामदाहे राजनाशे तथा स्वर्भानुदर्शने ।  
 मातापित्रोर्मृताहे च श्रोत्रिये मरणं गते ॥

१) पर्व्याभ्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) स्वर्यात इति लेखितपुस्तकपाठः ।



जाताशौचे च ज्ञातीनां गजच्छायाद्वये तथा ।  
महापातकिनो दृष्ट्वा चाण्डालान् वहिरासितान् ॥  
एतेषूक्तेषु राजेन्द्र वेदं वेदान्तमेव वा ।  
योऽधीते मूढधीः पापी मृत्वा नरकमश्नुते ॥

नारदः—

वेदान्तमथ वेदं वा 'अनध्यायेष्वधीतवान् ।  
द्विजः पापमवाप्नोति ब्रह्महत्यां च विन्दति ॥  
अनध्यायेष्वधीतानां प्रज्ञामायुः प्रजां श्रियम् ।  
मन्त्रवीर्यक्षयभयाद् इन्द्रो वज्रेण हन्ति च ॥  
पक्षे पराकः कथितो मासे तप्तमुदीरितम् ।  
ऋतौ चान्द्रं ततः पश्चाच्चरेद् ब्रह्महणोव्रतम् ॥

इति हेमाद्रौ अनध्ययनेषु वेदाध्ययनप्रायश्चित्तम् ।

(१) अनध्यायेऽपि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) ब्रह्महत्यां व्यपोहति इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ वेदव्रताकरणाप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यं तथा सौम्यमाग्नेयं वैश्वदेवकम् ।  
चत्वारि वेदसंज्ञानि व्रतानि सुमहान्ति च ॥  
प्राजापत्यं<sup>१</sup> ऋचां वेदः सौम्यं याजुषमेव च ।  
आग्नेयं सामवेदश्च वैश्वदेवं चतुर्थकम् ॥  
एतानि कुरुते यस्तु द्विजः पापात्सु<sup>२</sup> मुच्यते ।

मार्कण्डेयः—

वेदव्रतानि चत्वारि वेदसंज्ञानि योद्विजः ।  
तत्तत्काले प्रकुर्वीत वाजपेयफलं लभेत् ॥  
ऋग्वेदं समधीत्यैव प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
आग्नेयं सामवेदश्च अधीत्यैव तथाऽमलम् ॥  
आथर्वणं वैश्वदेवं कुर्याद्विप्रो यथाक्रमम् ।  
एतानि क्रमशः कृत्वा वाजपेयफलं लभेत् ॥  
न तत्र कर्मलोपः स्यादन्यथा पतितो भवेत् ।

---

(१) प्राजापत्यं ऋचां इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रसुज्यते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः । पु



अकरणे प्रत्यवायमाह

जातूकर्णः—

अकुर्वन् वै द्विजो मोहादेतद्व्रतचतुष्टयम् ।  
एकतन्त्रेण वा राजन् कर्महीनो भवेद्भुवि ॥  
अकृत्वैतानि यो मोहात्पाणिग्रहणमाचरेत् ।  
महान्तं मरकं गत्वा भुवि जायेत सोऽप्रजः ॥

एतद्व्रतलोपे प्रायश्चित्तमाह ।

हारीतः—

प्रमादाद् ब्राह्मणो लोभाद्देशकालविपर्ययात् ।  
अकृत्वैतानि कर्माणि प्राजापत्यं पृथक् चरेत् ॥  
ततः परं न दोषो स्याद् विवाहे स्नातकव्रते ।

इति हेमाद्रौ वेदव्रतातिक्रमप्रायश्चित्तम् ।

(१) अकृत्वा यो द्विजः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जायेत निष्प्रजः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ गोदानकालातिक्रमप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

षोडशे वर्षके राजन् विप्राणां पापनाशनम् ।  
गोदानिकं महत् कर्म कुर्याद् विप्रः समाहितः ॥  
यः कुर्यात् कर्मसम्पत्तिं भवेद्विप्रः स पुण्यभाक् ।

जाबालिः—

गोदानिकं महत्कर्म विप्राणां कर्मपूर्तये ।  
कुर्याद्विप्रः प्रयत्नेन न तेन स ह दोषभाक् ॥

गौतमः—

अवश्यं करणीयं यद् द्विजैर्गोदानिकं व्रतम् ।  
न तत्कर्म परित्याज्यं विप्रैर्धर्मानुवर्त्तिभिः ॥  
एतद् गोदानिकं त्यक्त्वा वर्त्तते ब्रह्मवित्तमः ।  
कुर्यात् पापविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं विशोधनम् ॥  
सर्वपापहरं पुण्यं प्राजापत्यं विदुर्बुधाः ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति द्विजः पापभयादिह ॥

इति हेमाद्रौ गोदानकाललोपप्रायश्चित्तम् ।



अथ स्नातकव्रतलोपप्रापश्चित्तमाह ।

देवलः—

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् ।

अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत् ॥

मार्कण्डेयः—

स्नातकं ब्रह्मचर्यस्य व्रतलोपेऽपि<sup>१</sup> पुण्यदम् ।

कुर्वन् हि स्नातकं कर्म सर्व्वव्रतफलं लभेत् ॥

गालवः—

स्नातकव्रतमे<sup>२</sup>तत्तु ब्रह्मचर्यव्रतात् परम् ।

यः<sup>३</sup>कुर्यात् स्वविवाहादौ स विप्रः पंक्तिपावनः ॥

तदाह—

आपस्तम्बः—

“विद्यया स्नातीत्येके । यावतीर्विद्याअधीते तावन्ति स्नातक-  
व्रतानि विप्रः कुर्यात् । न तत्त्याज्यम्” ।

गौतमः—

---

(१) व्रतलोपसुपुण्यदम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) यः कृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) व्रतलोपं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) यः कृत्वा इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः



अवश्यं स्नातकं कुर्याद् विप्रोलोकपरायणः ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति प्रायश्चित्ती भवेदिह<sup>१</sup> ॥  
 स्नातकव्रतसंत्यागे कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।  
 पश्चाद्विवाहयेत् कन्यां कुलशीलानुवर्त्तिनीम् ॥  
 चान्द्रायणद्वयं कृत्वा विवाहे न तु दोषभाक् ।

इति हेमाद्रौ स्नातकव्रतलोपप्रायश्चित्तम् ।

अथोपाकर्मलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

वेदान्तानाञ्च वेदानां अधीतानाञ्च<sup>२</sup> वीर्यदम् ।  
 ब्रह्मचारिगृहस्थानां सर्वपापहरं शुभम् ॥  
 संवत्सरे तु पापस्य गृहस्थब्रह्मचारिभिः ।  
 कृतस्य<sup>३</sup> तु विशोधाय उपाकर्म समाचरेत् ॥

(१) भवेद्द्विजः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) वीर्यकम् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कृतं तत्र विशोधाय इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



बौधायनः—

संवत्सरं कृतं पापं गृहस्थैर्ब्रह्मचारिभिः ।

उपाकर्म्मं हरेत्क्षिप्रमन्ते विष्णुस्मृतिर्यथा ॥

नारदः—

व्रतिनाञ्च गृहस्थानां संवत्सरकृतं महत् ।

अघं हरति होमश्च श्रावणे मासि सम्भवः ॥

एवं होममकृत्वा तु वेदारम्भं न कारयेत् ।

वेदमूलो हि विप्रोऽसौ मूलाभावे फलं कुतः ॥

तस्माद्विप्रैर्न सत्याज्यं श्रावणं कर्म्म तच्छुभम् ।

त्यक्त्वा तु ब्रह्मचारी वा द्विजो वा वेदसम्मतः ॥

एवं श्रावणकं होमं 'मोहाद् यद्यतिवर्त्तते ।

व्रतौ तप्तत्रयं कुर्याद् गृहस्थोऽपि द्वयं चरेत् ॥

कृत्वेतद् 'व्रतकं प्रोक्तं शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ।

प्रत्यब्दं यज्ञवत्कर्म्म श्रावणाख्यं परित्यजन् ॥

पतितः स तु विज्ञेयः सर्वधर्म्मवहिष्कृतः ।

इति हेमाद्रौ उपाकर्म्मलोपप्रायश्चित्तम् ।

(१) त्यक्त्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) वर्षकं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ राज्ञसादिकन्यापरिणयनप्रायश्चित्तम् ।

देवलः—

ब्राह्मो दैवस्तथा चाऽऽर्षः प्राजापत्यस्तथाऽऽसुरः ।

गान्धर्वो राज्ञसश्चैव पैशाचश्चाष्टमो मतः ॥

लिङ्गपुराणे—

ब्राह्मे विवाहे राजेन्द्र बन्धुं शीलं व्रतं तथा ।

आरोग्यं सम्यगालोच्य परीक्षिताऽन्दयं मुदा ॥

प्रजासहत्वकर्मभ्यस्तस्मै कन्यां प्रदापयेत् ।

इति ब्राह्मोविवाहः ।

दैवे विवाहे भूपाल स्वाध्वरे ऋत्विजे मुदा ।

'दद्यात् कन्यां दक्षिणार्थं स दैव इति कथ्यते ॥

इति दैवोविवाहः ।

आषे पाणिग्रहे राजन् जामात्रे मिथुनद्वयम् ।

गवां दत्त्वा 'शुभां सम्यगलंकृत्य ततः परम् ॥

दद्यादस्मै मुदा कन्यां स आर्ष इति कथ्यते ।

इति आर्षोविवाहः ।

---

(१) दक्षिणार्थं तदा कन्या इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुता इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



सुतामादाय विप्राय 'सह धर्मं चरेरिति ।

उक्त्वा<sup>१</sup> दद्यान्नृपश्चेष्ट प्राजापत्यः स ईरितः ॥

इति प्राजापत्योविवाहः ।

कन्यावरौ यदाऽन्योन्यमङ्गीकृत्य सुखामये ।

तथेव चरतो राजन् स गान्धर्वइतीरितः ॥

इति गान्धर्वोविवाहः ।

कन्यादात्रे धनं दत्त्वा तत्सुतामुद्वहेन्मुदा ।

स आसुर इति ज्ञेयः सर्व्वदा तं परित्यजेत् ॥

इति आसुरोविवाहः ।

कन्यां दातारमथ वा वञ्चयित्वा बलादिह ।

स्वयंवरेऽथवा जित्वा कन्यामादाय सत्वरम् ॥

उद्वहेद् यदि पापात्मा स राज्ञसइतीरितः ।

इति राज्ञसोविवाहः ।

कन्यां सुप्तां प्रमत्तां वा हत्वा यत्तां समुद्वहेत् ।

कुदतीं पापकर्माऽसौ स पैशाच इतीरितः ।

इति पैशाचो विवाहः ।

आद्यास्त्रयः प्रशस्ताः स्युरन्त्याः<sup>३</sup> पञ्च विगर्हिताः

यथायुक्तो विवाहः स्यात् तथा युक्ता प्रजा भवेत् ॥

(१) दद्यात् इति क्रीत-लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) इत्युक्त्वा दीयते कन्या इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(३) विवाहाः पञ्च गर्हिता इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तदाह

आपस्तम्बः—

“ब्राह्मे विवाहं बन्धु-शौल-शुतारोग्याणि-बुद्धा प्रजासहन  
कर्मभ्यः प्रतिपादयेत् । शक्तिविषयेण अलङ्कृत्य । आर्षे दुहितृमते  
मिथुनौ गावौ देयौ । देवे यज्ञे तत्र ऋत्विजे प्रतिपादयेत् ।  
सह धर्मं चरत इति प्राजापत्यः । मिथः कामात् संवर्त्तत स  
गान्धर्वः । शक्तिविषये द्रव्याणि दत्त्वा वाऽहरन् स आसुरः ।  
दुहितृमतः प्रीथयित्वा वहिरन् स राक्षसः । सुप्तां मत्तां प्रमत्तां  
वा अपहरेत् स पैशाचः । एतेषां त्रयश्चाद्याः प्रशस्ताः । पूर्वः पूर्वः  
श्रेयान् । यथा युक्तो विवाहस्तथा युक्ता प्रजा भवति” । इति ।

अतस्त्वय आद्या विवाहाः समीचीनाः । यथा यथा विवाहः  
मनुष्येषु भवति तदुपयुक्तः सन्तानो भवति । अतो गान्धर्वासुर-  
राक्षसपैशाचविवाहेषु विप्राणां निषिद्धत्वात् पृथक् पृथक्  
प्रायश्चित्तमाह —

मार्कण्डेयः—

विवाहं त्वासुरं विप्रश्चान्द्रायणत्रयं चरेत् ।

चान्द्रायणं<sup>१</sup> पराकञ्च गान्धर्वं सम्यगाचरेत् ॥

(१) आसुर राक्षस इति कीर्तितलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यो यो विवाह इति कीर्तितलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) चान्द्रायणत्रयं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



राजसे च महाचान्द्रं तप्तकच्छत्रयं तथा ।  
 पैशाचे कायकच्छं स्यात् तथा चान्द्रत्रयं स्मृतम् ।  
 पूर्वं कामातुरः कृत्वा पश्चादेतच्चरेद् बुधः ॥  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरस्ति हि ॥  
 ब्राह्मो देवस्तथैवाऽऽर्षः प्राजापत्यो द्विजन्मनाम् ।  
 सन्तानकारिणो मुख्या स्तस्मादेतान् समाचरेत् ॥  
 आसुरादिविवाहाश्च केवलं मुखदायिनः ।  
 आसुरादिविवाहेषु देवाद् यदिह पुङ्गवः ।  
 प्रायश्चित्तं तदा कृत्वा पश्चात् तेषु प्रवर्त्तयेत् ॥

इति हेमाद्रौ राजसादिकन्यापरिणयनप्रायश्चित्तम् ।

अथ परिवित्तिपरिवेत्तृविवाहनिर्णयप्रायश्चित्तमाह ।

दण्डः—

अनूढे भ्रातरि ज्येष्ठे यवीयान् सपरिग्रहः ।  
 ज्येष्ठः स परिवित्तिः स्यात्परिवेत्ता तथाऽनुजः ॥  
 विवाहे राजज्यालाभे च श्रेयसां व्युत्क्रमेऽपि च ।



अनुजविवाहे हेतुमाह ।

मार्कण्डेयः—

पतितं क्लीवमुन्मत्तं कुञ्जं काणं रुजाश्रितम् ।  
अपस्मारं परित्यज्य विवाहे न स दोषभाक् ।  
तदनुज्ञामवाप्याऽशु विवाहे न स दोषभाक् ॥

जातुकर्णः—

काणं रुजान्वितं कुञ्जं पतितं क्लीवमेव च ।  
अपस्मारं पूर्वजानं कटल्याऽऽशु विवाहयेत् ॥  
पश्चादनुज्ञया राजन् विवाहे न स दोषभाक् ।  
कटलीविवाहस्तु पुराभिहितः ।

तेषां अन्नपानादिकेषु वृत्तिं विधाय पश्चाद् उद्वाहयेत् । तदाह

दैवलः—

तेषां वृत्तिं विधायाऽऽशु कटल्या तान् विवाह्य च ।  
पश्चात् परिणयेत् कन्यां न दोषस्तत्र पार्थिव ॥  
यमनयोर्व्युत्क्रमसंस्कारे ज्येष्ठः परिवृत्तिः द्वितीयः परिवेत्ता तत्-  
प्रकारः पूर्वमेवाभिहितः । (तेषां प्रायश्चित्तमपि पूर्वं अभिहितम्) ।

१ रुजान्वित इति कात लेखितपुस्तकपाठः ।

२ विवाहः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ परिवित्तिपरिवेत्तृविवाहनिर्णयप्रायश्चित्तम् । ५४१

तयोः पुत्राः परिविन्दानाः । तेषां परिवित्ति-परिवेत्तृ तत्पुत्राणां  
प्रायश्चित्तमाह —

लौगाक्षिः—

परिवित्तिश्चरेत् सम्यक् पूर्वं चान्द्रचतुष्टयम् ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरस्ति हि ॥  
परिवेत्ता चरेत्कृच्छ्रं शतं देहविशुद्धये ।  
तत्पुत्रौ तु तयोः कृत्वा प्रायश्चित्तं विशुध्यतः ॥

इति हेमाद्रौ परिवित्तिपरिवेत्तादिविवाहनिर्णय-  
प्रायश्चित्तम् ।

अथ विवाहमध्ये वध्वाः प्रथमार्त्तवदर्शने  
प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

विवाहे वितते तन्त्रे होमकाल उपस्थिते ।  
वधूः पश्येत् तदा पुष्पं प्रथमं दोषसम्भवम् ॥  
सा वधूः शूद्रकन्या स्यात् तत्पतिर्वृषलोपमः ।  
तयोः पुत्रास्तु वृषलास्ते यान्ति नरकं ध्रुवम् ॥



मरीचिः —

विवाहदिवसाद्राजन् आरभ्य प्रथमार्त्तवा<sup>१</sup> ।  
 वधूः सा शेषहोमात् प्राक् उभौ नरमगामिनौ ॥  
 विवाहशेषहोमात् प्राक् वधूर्या प्रथमार्त्तवा<sup>२</sup> ।  
 तत्पतिः सा वधूश्चोभौ प्रायश्चित्तमिहाऽर्हतः ॥  
 हविष्यतीरिमा अग्निर्वधूं संस्नापयेत्तदा ।  
 अन्यवस्त्रेण संच्छाद्य तस्मिन्नग्नौ विधानतः ।  
 संस्कृताज्येन जुहुयाद् युजानेति द्वयं मुदा ॥  
 हुत्वा तदा चरेत् कृच्छ्रं पावनं कायसंज्ञितम् ।  
 एवं वै पूर्ववत् कुर्यात् पञ्चमेऽहनि पूर्ववत् ॥  
 स्नापयित्वा परिधाय पूर्ववत् शुद्धवामसी<sup>३</sup> ।  
 पूर्ववज्जुहुयादग्नौ ततश्चान्द्रायणं पृथक् ॥  
 कृत्वा तौ पापशुद्धौ<sup>४</sup> अन्यथा दोषसम्भवः<sup>५</sup> ।  
 तदानीं न परित्याज्या पूर्वं पुष्पवती न चेत् ॥

(१) प्रथमार्त्तवी इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रथमार्त्तवी इति क्रीत-लेखित पुस्तकपाठः ।

(३) शुद्धवामसी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) पापशुद्धौ स्तां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) अन्यथा दोषसम्भवौ इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



उडाहोपासनमध्ये लाजहोमात्प्रागग्निशान्तौ प्रायश्चित्तम् । ५४३

न युक्ता हव्यकव्येषु सा नारी वृषली भवेत् ।  
प्रायश्चित्तं तदा कृत्वा कर्म कुर्वन् दोषभाक् ॥

इति हेमाद्रौ विवाहमध्ये नववधूप्रथमरोजोदर्शने  
प्रायश्चित्तम् ।

अथोडाहोपासनमध्ये लाजहोमात्प्रागग्नि-  
शान्तौ प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

उडाहोपासनात् पूर्वमनले संस्थिते<sup>१</sup>सति ।  
महान् दोषो भवत्यत्र पत्यौ जायापरिग्रहे ॥

गीतमः—

विवाहात् परतो वङ्गि<sup>२</sup>लाजहोमार्थसम्भवः ।  
रात्रौपासनतः पूर्वं शान्तश्चेदत्र दोषभाक् ॥

जाबालिः—

लाजहोमादृते देवाद्रात्र्योपासनादधः ।  
शान्तश्चेदुभयोर्दोषः प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥

(१) शान्तिमागते इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वङ्गाविति क्रीतपुस्तकपाठः ।



कुर्याद्वरस्तदानीं वा उक्तरात्रौ विशेषतः ।  
 तप्तकृच्छ्रं तदा कृत्वा लोकिकाम्निं समाहरेत् ॥  
 प्रतिष्ठाप्य विधानेन आज्यभागान्तमाचरेत् ।  
 स्रुचा घृतं समादाय हुनेद् दत्त्वाऽऽहुतोः पृथक् ॥  
 ततश्च जुहुयादत्र व्याहृतीनां त्रयं पुनः ।  
 तमग्निं धार्यवत् कृत्वा युगलाजान्तरं पुनः ॥  
 मन्वावृत्तिं ततः कुर्यान्न<sup>१</sup>तेन स ह दोषभाक् ।  
 उपासनं ततः कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ।  
 इति हेमाद्रौ लाजहोमाग्निशान्तिप्रायश्चित्तम् ।

अथ स्थालीपाकसमये अग्निशान्तिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

स्थालीपाको यदा वक्त्रौ शान्ते तत्र महाभयम् ।  
 ततः कृत्वा कायकृच्छ्रं विप्रः कुर्यादनन्तरम् ॥  
 पूर्वोक्तं तत्र कुर्वीत प्रायश्चित्तं यथाक्रमम् ।  
 “पूर्वोक्तं” शवाग्निनाशप्रायश्चित्तवदत्रापि सर्व्वं कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ स्थालीपाकाग्निशान्तिप्रायश्चित्तम् ।



अथानेयस्थालोपाकादृङ् उपामनात् प्राक् पत्नी  
तद्गता वा यद्याधिग्रस्तौ तदा प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

स्थालोपाकात् परं राजन् उभयोर्होतृकर्मणि ।  
अभावे नित्यहोमस्य पतिः पत्नी रुजार्द्धितौ ॥  
तयोरिकतराभावे नित्यहोमोऽत्र दोषभाक् ।  
तयोरिकमवस्थाप्य अग्निसान्निध्यमादरात् ॥  
महासान्तपनं कृत्वा अध्वर्युर्होममाचरेत् ।  
पत्नीसमक्षविषये उद्देशत्यागकारकः ॥

अध्वर्युरेव ( इति तात्पर्यम् )

तदाह—

कात्यायनः—

संनिधौ यजमानस्तु उद्देशत्यागकारकः ।  
असंनिधौ तु पत्नी स्यादध्वर्युस्तदनुज्ञया ॥

(१) हेतुकर्मणी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) रुजार्द्धितः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) एकतमं स्थाप्य इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।



इति प्रायश्चित्तपुरःसरं नित्यहोमं कृत्वा ततः परं होमशेषं  
कृत्वा लौकिकादिकं कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ स्थालोपाकादूर्ध्वं देहापाटवादीपा-  
सनलोपे प्रायश्चित्तम् ।

अथान्वारम्भणीयलोपे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अथाऽन्वारम्भणीयस्य लोपं विप्रो न कारयेत् ।  
कुर्याद्यदिह मृदात्मा पतितोऽभून्न संशयः ॥  
प्रथमायां पौर्णमास्यां वोढा देवाहुतीर्यजेत् ।  
अग्निस्तथाच विशुश्रु मरुत्वांश्च मरुत्वती ॥  
( अग्निश्च भगिनी चैव स्विष्टकृद्देवतास्त्वमूः । )  
प्रथमायां<sup>१</sup> पौर्णमास्यामन्वारम्भणमिष्यते ।  
या तत्र देवता हुतास्ताः सर्वा वरदास्तयोः ॥

गौतमः—

वरवध्वास्तदा राजन् प्रथमे पूर्णिमादिने ।  
यो यजहवता मस्य क तस्यायुर्वृद्धिमन्वगात् ॥

— अथ पाठ लेखित-कागापुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(१) प्रथमे पौर्णमास्यां तु इति कृत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पौर्णमीदिने इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मरीचिः—

प्रथमा पूर्णिमा राजन् वरवधोः शुभप्रदा<sup>१</sup> ।  
 तां<sup>२</sup> न कुर्याद् वरो यस्तु तस्यायुर्लयमेथति ॥  
 तद्दोषपरिहारायै प्रायश्चित्तं मनूदितम् ।  
 ब्रह्मकृच्छ्रं तदा कुर्याद् वोढा शुद्धार्थमादरात् ॥  
 वध्वास्तदर्थं कथितं मुनिभिर्धर्मदृष्टिभिः ।  
 ततोऽन्यत्र च वा कुर्यात् पौर्णमासदेवतास्त्वमूः ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति अशुभं स्यात्तयोरितः ॥

इति हेमाद्रौ अन्वारम्भणीयलोपप्रायश्चित्तम् ।

अथ प्रतिपदोमलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

प्रतिपदोमलोपी<sup>३</sup> तु शुक्ले कृष्णे तथैव च ।  
 महान्तं दोषमाप्नोति नरकं चाऽधिगच्छति ॥

(१) पौर्णमा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) शुभप्रदौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तामकृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) ततोऽन्यस्य वा कुर्यात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) होमलोपस्तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

धार्याग्नौ यो गृही होमलोपी<sup>१</sup> प्रतिपदीर्हयोः ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति कायकच्छादते<sup>२</sup> द्विजाः ॥

पराशरः—

गृहीताग्निर्होमकुण्डे प्रतिपत्यञ्चोर्हयोः ।  
अग्निः स्विष्टिकृदग्निश्च देवते द्वे न संत्यजेत् ॥  
त्यजेद्यदिह मूढात्मा अग्निस्तं संपरित्यजेत् ।  
तस्याऽग्नः सम्परित्यागात् विप्रस्याऽधोगतिर्भवेत् ॥  
तस्य पापविशुद्ध्यर्थं कायकच्छं समाचरेत् ।

हारीतः—

प्रतिपक्षे वक्त्रितीर्थे सर्वपापापहे नृणाम् ।  
द्विजा होमं परित्यज्य<sup>३</sup> देवताद्वयप्रीतिदम् ॥  
नरकं यान्ति ते घोरं होमलोपादितो मुने ।  
एतद्दोषविशुद्ध्यर्थं परलोकजिगोषया ॥  
तेषां विशुद्धिरुदिता<sup>४</sup> कायकच्छान्महात्मभिः ।

इति हेमाद्रौ प्रतिपदोमलोपप्रायश्चित्तम् ।

(१) होमलोपी इति क्रीत-लेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) कायकच्छादिह इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) परित्यक्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) कायकच्छं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽऽग्रायणलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

नवधान्ये समायाते ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ।  
ब्रौह्मादीनां नवानां च शुद्धार्थं मुनिचोदितम् ॥  
स्थालीपाकं तथा कृत्वा 'हुत्वाऽऽग्रायणदेवताः ।  
शेषचरुं प्रभुञ्जीयात् ब्राह्मणैर्ब्रह्मवित्तमैः ॥  
आसने रक्तस्रावी स्याद् अतो दोषे 'महत्तरे ।

मार्कण्डेयः—

इन्द्रश्चाग्निश्च विष्णुश्च विश्वेदेवा महाबलाः ।  
द्यौश्चैव पृथिवी चैव अग्निःस्त्रिष्टिकुदत्र हि ॥  
नवे धान्ये समायाते सदोषः पापभूरयम् ।  
तस्य दोषोपशान्त्यर्थं स्वर्णकृच्छ्रं समाचरेत् ॥  
पुनस्तदेव कर्त्तव्यं श्यामाकैर्ब्रीहिभिर्नवैः ।

स्थालीपाकं कृत्वा पूर्वोक्तदेवताः यजेदित्यर्थः ।

दर्शपूर्णमासाग्रायणान्वारम्भप्रतिपत्स्थालीपाकादिकं सर्व-  
शाखासमं, एतेषां परित्यागे एतत् प्रायश्चित्तमेव उपदर्शितं,  
अन्यथा पूर्वोक्तदोषोभवतीति तात्पर्यार्थः ।

इति हेमाद्रौ आग्रायणलोपप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) हुताग्रयणदेवता इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दोषमहत्तरे - इति क्रांत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ गृहस्थानां ब्रह्मयज्ञलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

ब्रह्मयज्ञपरित्यागे गृहस्थः स्वस्थमास्थितः<sup>१</sup> ।

देवहन्ता स विज्ञेयो दुष्टब्राह्मण ईरितः ॥

मरीचिः—

देवयज्ञः पितृयज्ञोभृतयज्ञो नृनामकः ।

ब्रह्मयज्ञश्च यज्ञश्च पञ्च यज्ञाः प्रकीर्त्तिताः ॥

गृहस्थैर्न परित्याज्या वेदधर्मपरायणैः ।

पञ्चयज्ञैर्गृहस्थाः स्युरन्यथा गृह्यरक्षिणः ॥

पञ्चयज्ञपरित्यागी ब्रह्महेति निगद्यते ।

अतो यज्ञो न लोप्तव्यो ब्राह्मणैः पापभीरुभिः ॥

गौतमः—

ब्रह्मयज्ञमकुर्व्वाणो विप्रो ब्रह्महर्णो ब्रतम् ।

संवत्सरपरित्यागे पक्षमेकं निरन्तरम् ॥

पठेदुपनिषद्वाक्यं तथा नारायणं पठेत् ।

मात्तण्डोदयमारभ्य यावदस्तं गतो रविः ॥

तावद्विरम्य सहसा हविष्याग्नी भवेत्तटा ।

पक्षमात्रेण शुद्धिः स्यान् नान्यथा शुद्धिरौरिता ॥



वपेत्यागं पूर्वमुक्तं त्रयं कृत्वा विशुध्यति ।

मर्ज्जशाखाममेतत् 'प्रायश्चित्तम्' ।

इति हेमाद्रौ गृहस्थस्य ब्रह्मयज्ञलोपप्रायश्चित्तम् ।

### अथ आपामनपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

आपामनपरित्यागो सुरापौलुच्यते बुधैः ।

न कर्माहो भवेत् तत्र शूद्र एव न संशयः ।

पराशरः—

सायं प्रातर्हि जा हौमं धार्याग्नीं विधिपूर्वकम् ।

कृत्वा लोकमवाप्नोति देवमानुषदुर्लभम् ॥

मनुः—

गृह्याग्नीं प्रत्यहं विप्रः सायं प्रातरनन्यधीः ।

तण्डुले वा यवैर्जुह्वन् लोकोत्कृष्टं समश्नुते ॥

महोचिः—

पूर्वजः शुचिरासीनः स्वगृह्याग्नीं यवैर्मृदा ।

सूयमग्निं समर्पिष्य कृत्वा लोकमवाप्नुयात् ॥

१. प्रायश्चित्तमिति पदं क्रीत-लेखित पुस्तकयोर्नास्ति ।

२. चतुर्थपादोऽयं लेखितपुस्तके न दृष्टः ।

३. यवैर्वापि इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अन्यथा दोषमाप्नोति प्रायश्चित्ती भवेद्द्विजः ।

त्रिदिनं यदि विप्रोऽसावहरेकमुपोषितः ॥

जुहुयाद् व्याहृतीस्तत्र<sup>१</sup> हुत्वा नोपोषणं तयोः ।

अन्यथा रौरवं याति अग्नित्यागादितस्ततः ॥ इति ।

इन्द्रवज्रादित्यागपक्षे विशेषमाह—

मार्कण्डेयः—

इयं त्रीन् बहुवर्षान् वा यस्यक्त्वाऽग्निं प्रवर्त्तयेत् ।

स विप्रोमद्यपैस्तुल्यः प्रायश्चित्तं समर्हति ॥

मामि मामि चरेत् कृच्छ्रं प्राजापत्यं विशोधनम् ।

स्त्रीणां तदर्द्धमिच्छन्ति पूर्वजा<sup>२</sup> मुनिपुङ्गवाः<sup>३</sup> ॥

तदाह—

आपस्तम्बः—

“नित्योधार्थोऽनुगतो मन्यः श्रोत्रियाणामन्वाहार्य-

उपवासश्चान्यतरस्य भार्यायाः पत्युर्वानुगतोऽपि वोत्तरया जुहुयात्

नोपवसे”दिति ।

गौतमः—

श्रोपासनं द्विजः कुर्यात् सायं प्रातः समाहितः ।

वक्त्रेर्लोकमवाप्नोति नित्यमग्निपरिग्रहात् ॥

(१) अथोऽयं व्याहृतीस्तत्र इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(२) पूर्वजो मुनिपुङ्गवः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



अकरणे प्रत्यवायमाह —

जातूकर्णः—

यस्तु स्थितायां भार्यायामग्निं त्यजति मूढर्धाः ।  
‘मोऽनग्निक इति ख्यातः सर्वे धर्मवहिष्कृतः ॥

इति हेमाद्रौ श्रीपासनपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

अथ देवताच्चैनपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

अस्नात्वा नैव भुञ्जीत अनभ्यर्च्योऽग्निमेव च ।  
शालग्रामं हरेश्चिह्नं प्रत्यहं पूजयेद्विजः ॥  
‘कौशिकीं गणपं चाऽकं शम्भुं चैव मरस्वतीम् ।  
महालक्ष्मीं महादुर्गां नित्यं विप्रः समर्चयेत् ॥  
शालग्रामशिलातीर्थं पिबेद्योमनुजोत्तमः ।  
तस्य पापानि नश्यन्ति ब्रह्महत्यादिकानि च ॥

मनुः—

आजन्मकृतपापानां प्रायश्चित्तं विगोधनम् ।  
शालग्रामशिलावारि पापहारि निषेव्यतां ॥

१) अनग्निक इति क्रांत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) अथयोग्निमभिपूज्य च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) भास्कर इति क्रांत-लेखितपुस्तकपाठः ।



पुरुषसूक्तं शङ्खतोयं शालग्रामशिला तथा ।

सुधोद्भवा चक्रपाणिः पञ्चतोये प्रचक्षते ॥

यः प्रिवेद् धारयेन्मूर्ध्नि नित्यं पापापनुत्तये ।

सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमं पदम् ॥

द्विजानामावश्यकत्वात् शालग्रामशिलार्चनं न त्याज्यम् ।

देवपूजात्यागे दोषमाह—

गौतमः—

यदि विप्रः समुत्सृज्य देवतार्चनमस्ति वै ।

स याति नरकं घोरं यावदाचन्द्रतारकम् ॥

तस्य पापविशुद्धये प्रायश्चित्तमुदाहृतम् ।

ब्रह्मकूर्चं चरेत् तत्र दिनेकस्मिन् द्विर्जीतमः ॥

मासत्यागे पण्येकच्छं वर्षं त्वीदुस्वरं चरेत् ।

शालग्रामो नास्ति यत्र यत्र चैवासुतोद्भवा ॥

शमशालमट्टं गृहं स विप्रः पंक्तिद्रवकः ।

गृहस्य ब्रह्मचारि-मन्यामिनामिवम् ।

इति हैमाद्रौ देवतार्चनपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

(१) आदरात् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) परमं इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) नास्ति यत्र इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ वैश्वदेवपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

वैश्वदेवं द्विजेः कार्यमन्नशुद्धयर्थमादरात् ।

पञ्चसूनापनुत्यर्थं लवणव्यञ्जनैर्विना ॥

लोगाक्षिः—

द्विजेरहरहः कार्यं वैश्वदेवं हुताग्ने ।

अन्यथा दोषमाप्नोति वृक्षः स्यात् कण्टकी भुवि ॥

दुष्टमन्नं<sup>१</sup> विविधं संस्कारदुष्टं क्रियादुष्टं स्वभावदुष्टं चेति,  
देवपूजावैश्वदेवरहितं संस्कारदुष्टं, क्रियादुष्टं—एकपंक्तौ भुञ्जानो  
द्विजो भोजनं त्यक्त्वा गच्छति विप्रैर्यजुक्तं तत्क्रियादुष्टं, स्वभाव-  
दुष्टं लशुनादिकम् । तदाह—

मनुः—

संस्कारदुष्टं विज्ञेयं वैश्वदेवविवर्जितम् ।

एकपंक्त्युपविष्टश्च त्यक्त्वा पात्रं गतो यदि ॥

क्रियादुष्टं हि विज्ञेयं तद्भोक्तृणां द्विजन्मनाम् ।

स्वभावदुष्टं लशुनं विप्रैः सर्वत्र गण्यते ॥

१) लवण इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) कुर्यात् इति लेखितपुस्तके लोपलब्धः ।

३) अन्नदुष्टं इति कीर्तित-लेखितपुस्तकपाठः ।

४) विप्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्माद् वैश्वदेवमवश्यं करणीयं अन्यथा दोषमाह—

गौतमः—

वैश्वदेवं परित्यज्य यो भुंक्ते स द्विजोत्तमः ।

महान्तं नरकं गत्वा वृत्तो भवति कण्टकी ॥

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं वैश्वदेवपरिग्रहे ।

फलकृच्छ्रं तथा कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

सामत्यागे तु चान्द्रं स्यात् वर्षत्यागे पतत्यसौ ।

अत ऊर्ध्वं पतितप्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ वैश्वदेवपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

अथ पितृणादिकपरित्यागप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मृताहं समतिक्रम्य चाण्डालः कोटिजन्मसु ।

अतोविप्रैर्न तत् त्याज्यं प्राणैः कण्ठगतैरपि ॥

नारदः—

‘अध्वगैश्चातुरश्चैव विहीनैश्च धनैस्तथा ।

आमयाहं विधातव्यं’ हेन्ना वा द्विजमत्तमैः ॥

(१) वैश्वदेवं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अध्वग इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) प्रकुर्वीत इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



द्रव्याभावे द्विजाभावे अन्नमात्रं तु पाचयेत् ।

पैतृकेण तु सूक्तेन होमं कुर्याद्विचक्षणः ॥

अत्यन्तद्रव्यशून्यश्च भक्त्या दद्याद् गवां तृणम् ।

स्नात्वा च विधिवद्विप्रः कुर्याद्वा तिलतर्पणम् ॥

अथवा रोदनं कुर्यात् अत्युच्चैर्विजने वने ।

दग्निद्रोऽहं महापापी वदन्निति विचक्षणः ॥

परित्युः श्राद्धकृन्मर्त्या यो न तर्पयेते पितॄन् ।

तत्कुलं नाशमाप्नोति ब्रह्महत्याञ्च विन्दति ॥

तद्दोषपरिहारार्थं कुर्याच्चान्द्रमनुत्तमम् ।

मातुरप्येवम् । अविभक्त-ज्येष्ठ-कनिष्ठ-पितृव्य-ज्येष्ठभ्रात्रादि-  
प्येवम् ।

इति हेमाद्रौ पितॄः सांवत्सरिकपरित्यागप्रायश्चित्तम् ।

अथाऽर्घ्यादिविस्मरणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

पितृकार्यपरोयस्तु प्रमादाद्विस्मरेदिह<sup>१</sup> ।

अर्घ्यपात्रादकं विप्रः पाणौ पैतृककर्मणि ॥

१) तर्पयेत् पितॄन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) पूर्वजो विस्मरेदिह इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



कर्त्ता याति महाघोरं पितरो यान्त्यधोगतिम् ।

तदन्नं राक्षसं प्रोक्तं तद्भोक्तारो विप्राग्निः ॥

मरीचिः—

प्रवर्त्तमानः श्राद्धेषु अर्घ्यपात्रोदकं द्विजः ।

विस्मरेद् विप्रपाणी तु तत्कर्त्ता नरकं व्रजेत् ॥

भोजनान्ते स्मरेच्चैत् तद् विप्रेष्वेतेषु तत्तदा ।

आचान्तेषूपविष्टेषु तथा तत्कस्मैकद्विजः ॥

लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य परिस्तीर्य यथाविधि ।

स्रवेणाऽऽज्यं समाधाय हुत्वाऽग्नीं विधिवद् द्विजः ॥

समुद्राय वरुणाय मिन्धूनां पतये नमः ।

“नदीनां सर्वासां पतये” इत्यन्तमुक्त्वा चतस्रश्चाहुतीर्गतेन जुहुयात्, भूर्भुवःस्वरिति व्याहृतीश्च हुत्वा विप्रसन्निधावर्घ्यपात्राणि पुनरास्तीर्य अर्घ्यप्रदानान्तं कृत्वा शेषं कस्मै समापयेत्, तदाह मनुः—

विप्रस्त्वय्यमकृत्वा तु पैतृके विप्रहस्तयोः ।

पश्चाद्वा भोजने काले पुनः स्मृत्वा प्रमादजम् ॥

आचान्तेषूपविष्टेषु कर्त्तव्यं श्राद्धकृत्तदा ।

लौकिकाग्निं समाधाय परिस्तीर्य यथाविधि ॥

१) यदि स्मृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) तदाह इति लेखितपुस्तके नास्ति ।



पार्व्वणश्राद्धेष्वग्नीकरणहोमलोपप्रायश्चित्तम् ।

५५८

स्रुवेणाज्यमथाऽऽदाय "समुद्रायद्वयं" स्मरन् ।

चतस्रश्चाहुतीर्हुत्वा कर्मशेषं समापयेत् ॥

पार्व्वणेषु प्रकर्त्तव्यमन्येषु तु न विद्यते । इति

सर्व्वशाखामसमिदम् ।

इति हेमाद्रौ पार्व्वणश्राद्धेषु अर्घ्यविस्मरणप्रायश्चित्तम् ।

अथ पार्व्वणश्राद्धेष्वग्नीकरणहोमलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

श्राद्धकर्त्ता यदाविप्रो गृह्णाग्नी दक्षिणानले ।

अन्नहोमं न<sup>१</sup> कुर्याच्चैत् पार्व्वणे समुपस्थिते ।

निगशाः पितरो यान्ति कर्त्ता याति यमालयम् ।

तत् श्राद्धं<sup>२</sup> राक्षसं ज्ञेयं त्रीत्येतानि वृथा वृथा ॥

मार्कण्डेयः—

द्विजः श्राद्धे पार्व्वणाख्ये<sup>३</sup> कुर्यान्नाग्नी हविर्यदा ।

तत्कर्त्ता नरकं याति पितरो यान्त्यधीगतिम् ॥

(१) संकल्पेषु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अकृत्वा तु इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) राजसे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) अकृत्वाग्नी इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तच्छ्राद्धं राक्षसं प्रोक्तं तस्मादेतन् न संत्यजेत् ।  
 संस्मरेद् यदि तन्मध्ये भोजनात् पूर्वमादरात् ॥  
 हविरग्नी तदा कृत्वा यथाविधिपुरःसरम् ।  
 अन्ते वा भोजने काले स्मरेत् कर्त्ता यदि द्विजः ॥  
 विप्रं वाऽथ द्वयं वापि निमन्त्र्य पुनराचमेत् ।  
 तच्छ्राद्धं विधिवत् कृत्वा न तेन स हि दोषभाक् ॥

अङ्गिराः—

द्विजाग्नी ब्राह्मणश्चाङ्गे होमं विस्मृत्य दैवतः ।  
 परिवेषणकाले तु स्मृत्वा कृत्वा समाचरेत् ॥  
 भोजने भोजनान्ते वा स्मृत्वा तत् संपरित्यजेत् ।  
 एकं विप्रं द्वयं वापि निमन्त्र्य पुनराचरेत्<sup>१</sup> ॥  
 सायंकाले न दोषः स्यात् पैतृकं बलवत्तरम् ।

तयोरकरणे दोषमाह —

नास्तिक्यात् पैतृकव्यागे<sup>२</sup> कुर्यान्नाग्नी यदाऽऽहुतीः ।  
 निराशाः पितरो यान्ति शापं दत्त्वा सुदारुणम् ॥  
 कर्त्ता यात्यन्वतामिश्रं तच्छ्राद्धं राक्षसं भवेत् ।  
 तयोरकमकृत्वा चेद् द्विजो यदि ह वर्त्तते ॥

१) यदि मध्ये तदा स्मृता इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२) स्मृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सहृदोषभाक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) आचमेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) अकृत्वाग्नी तदाहुतीः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

६) तत्कर्त्तवान्त्वतामिश्रं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



आइपंक्तौ भुञ्जानानां द्विजानामन्योन्यसंस्पर्शप्रायश्चित्तम् । ५६१

स चाण्डालमसौक्ष्ण्यः सर्वथा तं परित्यजेत् ।

तस्य देहविशुद्धयर्थं शिरसावापनं चरेत् ॥

कुच्छ्रमौदुस्वरं कृत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ।

पुनः आइं तदा कुर्याद् अन्यथा पतितो भवेत् ॥

सर्वशाखामसमिदम् ।

इति हेमाद्रौ पार्वणश्राद्धेषु अग्निकरणहोमविस्मृतिप्रायश्चित्तम् ।

अथ आइपंक्तौ भुञ्जानानां द्विजानामन्योन्य-

संस्पर्शप्रायश्चित्तमाह ।

देवन्—

आइपंक्तौ तु भुञ्जानौ ब्राह्मणौ ब्राह्मणं स्पर्शेत् ।

तदन्नमत्यजन भुक्त्वा गायत्र्यष्टगतं जपेत् ॥

मार्कण्डेयः—

आइपंक्तौ द्विजान्योन्य प्रमादात् संस्पर्शेत् यदि ।

तदन्नं न परित्याज्यं भोक्तृभिः आइकर्मणि ॥

परित्युर्भोजनात् पूर्वं स्नात्वा शुद्धेन वारिणा ।

उपविश्य तथा कुर्याद् अष्टोत्तरगतं महत् ॥

१. शिरः कृत्वा तु वापन इति क्रात-लेखितपुस्तकपाठः ।

२. होम इति काशीपुस्तक एव दृष्टम् ।

३. भुञ्जानौ ब्राह्मणौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।



आङ्गेषु भोक्तृविप्रेषु पतन्युच्छिष्टविन्दवः ।  
 तदा प्रक्षाल्य देशं तं भुक्त्वाऽन्नं संपरित्यजेत् ॥  
 परित्युक्तं स्पृष्ट्वा जपेदष्टोत्तरं शतम् ।  
 निपतन्ति यदा पात्रे विप्रे भोजनमस्थिते ॥  
 प्रक्षाल्य पूर्ववत् पात्रं भोजने तत्र दोषभाक् ।  
 गायत्रीं पूर्ववत् जप्त्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

मनुः—

आङ्गपंक्तौ तु भोक्तारो द्विजा यदि परस्परम् ।  
 स्पृशन्ति विन्दवो वाऽपि अन्यत्रोच्छिष्टमंजकाः ॥  
 कुक्कुटं पतितं खानं दृष्ट्वाऽन्नं न परित्यजेत् ।  
 अकुत्सयित्वा पात्रस्थमन्नं भुक्त्वा ततः परम् ॥  
 सम्यक् स्नात्वा परित्युक्ते जपेद्युर्वेदमातरम् ।  
 अष्टोत्तरशतं कृत्वा शुद्धिमापुनर् मंगयः ॥  
 अन्यथा दोषवन्तस्ते द्विजाः पापानुवर्तिनः ।

आङ्गपंक्तौ तु भोक्तृणां देशेषु भोजनपात्रेषु वा अन्योन्योच्छिष्ट-  
 विन्दुरन्योन्यस्पर्शा वा शुनकादिदग्नं वा प्राप्तं तदा तद्देशान्  
 प्रक्षाल्य तत्र आङ्गममाप्तिपर्यन्तं भुक्त्वा परित्युक्त्वा स्नात्वा आङ्गान्ने  
 जीर्णे मति अष्टोत्तरशतगायत्रीजप कृत्वा शुध्यति । सर्व्ववर्णममम्<sup>१</sup> ।

इति हैमाद्रौ आङ्गभोक्तृणामन्योन्यमस्पर्शप्रायश्चित्तम् ।

(१) विप्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अयं पाठः काशी-पुस्तके न दृश्यते ।



अथ पार्व्वणविष्मृतिप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

द्विजो यः पार्व्वणश्राद्धं विष्मृत्य वर्त्तते यदि ।  
श्राद्धहन्ता स विज्ञेयः सर्व्वदा त न भाषयेत् ॥

मरीचिः—

श्राद्धेषु पार्व्वणेष्वेषु यदि विष्मृत्य भोजयेत् ।  
परेद्युः श्राद्धकृद्भूयो विप्रः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

कात्यायनः—

योविप्रः पार्व्वणश्राद्धे तद्विष्मृत्यैव भोजयेत् ।  
परेद्युः श्राद्धकृत् पतस्त्वन्यथा पतिर्ताभवेत् ॥

गालवः—

द्विजः पार्व्वणश्राद्धेषु यदा विष्मृत्य भोजयेत् ।  
तदेव पतिर्ताज्ञेयः पुनः श्राद्ध समाचरेत् ॥

कश्यपः—

अकृत्वा पार्व्वणे प्राप्ते द्विजः पार्व्वणमादरात्  
स्वभुक्तं पृथ्वीतः स्मृत्वा पिण्डकृद्दिप्रमन्त्रिधौ ॥  
शुद्धिमाप्नोति सर्व्वत्र न चेदन्यत्र मञ्जरेत् ।

परेद्युः श्राद्धं कुर्यादित्यर्थः ।

(१) पार्व्वणश्राद्ध इति क्रीत लेखित-पुस्तक पाठः ।

(२) पार्व्वणे विष्मृते इति लेखित-पुस्तक पाठः पार्व्वणे विस्मृत्येति इति  
क्रीतपुस्तक पाठः ।



मनुः—

स्वभुक्तेः पूर्वतः स्मृत्वा आङ् पार्वणमञ्जितं ।  
 पिण्डस्तदा प्रकृतेभ्योभुक्त्वा आङ् परेऽहनि ॥  
 दण्डोभवति तस्माद्भूदन्यथा पतितोभवेत् ।  
 इयं विस्मृत्य मोहेन गच्छेन्नरकमञ्जमा ॥  
 तदोषपरिहारार्थं फलकुच्छ्रं समाचरेत् ।  
 कृत्वा कुच्छ्रं परेद्युर्वा पुनः आङ् समाचरेत् ॥

इति हेमाद्रौ पार्वणआङ् पार्वणविस्मृति-  
 प्रायश्चित्तम् ।

अथ पार्वणपिण्डभङ्गं विडालादिस्पर्शं च

प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पैतृके पार्वणआङ् पिण्डविज्ञेयणे यदा ।  
 स पिण्डो हिदलोभृयात् तदा कर्तुर्महद्वयं ॥

१. पार्वणआङ् इति क्रीत लेखित-पुस्तक पाठः ।

२. गत्वा इति लेखित-पुस्तक पाठः ।



पार्वणपिण्डभङ्गे विडालादिस्पर्शे च प्रायश्चित्तम् । ५६५

हारीतः--

पार्वणे पैतृके कर्त्ता पिण्डं कृत्वा दृढं मुदा ।  
विजिपेत् पार्वणस्थाने अप्रमत्तोऽभयातुरम् ॥  
तदा चेदलितः पिण्डोभूमी राजन् महद्भयम् ।  
कुलहानिः कर्त्तृहानिः पुत्रहानिर्निरन्तरम् ॥  
तस्मात् कृत्वा दृढं पिण्डं निजिपेद् भूतले तदा ।

मरीचिः--

पिण्डविजिपणं श्राद्धं कर्त्ता कृत्वा दृढं सकृत् ।  
निजिपेद्भूतले राजन् अप्रमत्तः प्रमादतः ॥  
तदा भवेद् द्विधा पिण्डः कर्त्तृनाशोभवेत्ततः ।  
अथ प्रमादतः पिण्डं विडालादिः स्पर्शद्यदि ॥  
अधोगतिः पितृणाञ्च स्वस्य हानिश्च जायते ।  
यदा विदलितः पिण्डोविडालाद्यैर्विदूषितः ।  
कर्त्तृञ्च तत्पितृणाञ्च नरकञ्च महद्भयं ।  
तदोषपरिहारायै कृच्छ्रं माहिश्वरं चरेत् ॥

(१) तदा विदलितः इति क्रीत लेखित पुस्तक पाठः ।

(२) भवेदत इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३ यदि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

४ पिण्डः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

५ विडालाद्यैरिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



विडालाद्यैरुपहर्ते पिण्डे कृच्छ्रञ्च पूर्ववत् ।  
 कृत्वाऽऽत्मदेहशुद्धयर्थं पुनः पिण्डं समाचरेत् ॥  
 मार्जारोपहर्ते पिण्डे पुनःकरणमत्र हि ।  
 दोषएव महानत्र पिण्डे विदलिते क्रमात् ॥

एवमन्यत्र द्रष्टव्यम् ।

इति हेमाद्रौ पार्वणपिण्डभङ्गे विडालादिस्पर्शने च  
 प्रायश्चित्तम् ।

अथ दर्शपूर्णमासलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

कृत्वाऽनुष्ठानदिवसाद् याजनाद्यग्निहोत्रकम् ।  
 त्यक्त्वा यदि प्रवर्त्तते भ्रूणहत्यामवाप्नुयात् ॥

मार्कण्डेयः—

यस्मिन् दिने कर्तुं कुर्यात् तदा तदग्निहोत्रकम् ।  
 यस्त्यजेन्मूढबुद्धिः 'म भ्रूणहत्यामवाप्नुयात् ॥

कात्यायनः—

सोमं पिबति यत्रैव तदारभ्याऽनन्तं यजेत् ।  
 त्यजेद्वा बहुलाद्व्याजादालस्याद्वा द्विजाधमः ॥

१ इत्युक्तमिति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

२ कर्तुं कृत्वा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



स याति नरकं घोरं भ्रूणहत्यामवाप्नुयात् ।  
 दिनत्रयेऽग्निहोत्रस्य त्यागं कुर्याद्विशुद्धिदम् ॥  
 प्राजापत्यं पक्षमात्रे तप्तं मास्यैन्दवं चरेत् ।  
 वर्षादूर्ध्वं भ्रूणहत्याप्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥

कलौ पञ्च विवर्जयेदिति पूर्वमुक्तं इदानीं तु अग्निहोत्र-  
 त्यागिनां नरकप्राप्तिरिति 'भोत्याऽऽयं क्रतुर्विप्रेर्न कर्त्तव्यइति-  
 प्रसज्येत' तस्माद् दौर्वाह्यण्यनिवृत्त्यर्थं 'आहिताग्निः सन् अग्नि-  
 होत्रं न सन्त्यजेदिति वाक्यार्थः ।

इति हेमाद्रौ आहिताग्नेरग्निहोत्रत्यागप्रायश्चित्तम् ।

अथाऽऽहिताग्नेर्दशपूर्णमासलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः —

दशैश्च पूर्णमासश्च चक्षुषी सोमयाजिनः ।  
 तयोर्लोपं न कुर्वीत बहुधा यत्नश्चरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

दशैश्च पूर्णमासश्च सोमयाजी न सन्त्यजेत् ।  
 त्यक्त्वा यदि प्रवर्त्तत चक्षुर्हीनो भवेदलम् ॥

(३) वरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) सन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) बह्वर्धनो व्याजात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कात्यायनः—

दर्शञ्च पूर्णमासञ्च पक्षयोरुभयोर्यजेत् ।

अन्यथा दोषमाप्नोति महापातकिनां वरम् ॥

गौतमः—

सोमयाजो महांलोकं अष्टमूर्त्तयदंशकः ।

दर्शञ्च पूर्णमासञ्च चक्षुषी सोमयाजिनः ॥

तयोरिकं परित्यज्य महापापमवाप्यते ।

तद्दोषपरिहारार्थं पथिकुम्भस्वमाचरेत् ॥

हारीतः =

पक्षयोरुभयोरिति<sup>१</sup> सोमयाजो न संत्यजेत् ।

महान्तं नरकं गत्वा चक्षुर्हीनो भवेद्भुवि ॥

तद्दोषपरिहारार्थं पथिकुम्भस्वमाचरेत् ।

पश्चात् कुर्वीत तामिति<sup>२</sup> सर्वपापपहारिणीम् ॥

यदेव दर्शपूर्णमासयोर्लोपादेवात् तदेव पथिकुम्भस्वेन हुत्वा  
पश्चादिति<sup>३</sup> समाचरेत् ।

इति हेमाद्रौ दर्शपूर्णमासलोपप्रायश्चित्तम् ।

१. अयमिति पदं क्रीत-लेखितपुस्तकयोनास्ति ।

२. इति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पिण्डपितृयज्ञलोपप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

सोमयाजी तदा कुर्यात् यदा मामः प्रवर्तते ।

तत्रैव पिण्डयज्ञः स्यादनन्तफलदायकः ॥

गौतमः—

मामि मामि यदा दर्शः सोमयाजी तदा चरत् ।

उद्दिश्य स्वपितॄन् पिण्डान् भुक्तिमुक्तिफलप्रदान् ॥

पराशरः—

मामि मास्यपराशरे च उद्दिश्य स्वपितॄन् सुतः ।

सोमयाजी तदा पिण्डान् कुर्यादै दक्षिणानले ॥

स तु ब्रह्मपदं याति पितरोयान्ति सद्गतिम् ।

अन्यथा दोषमाप्नोति नरकायोपपद्यते ॥

प्रमादाद्देवयोगाद्वा दक्षिणाग्नी 'म चेच्चरत् ।

पुनः पिण्डप्रदानेन यजै सप्तहोतृकान् ॥

सप्तहोतारमित्यर्थः ।

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं शुद्धार्थं सोमयाजिनः ।

मासे मासे पुनः कार्यं लोपे कृत्वेदमञ्जमा ॥

इति हेमाद्रौ पिण्डपितृयज्ञलोपप्रायश्चित्तम् ।



अथ सूर्यमोमोपरागयोर्विद्यमानानिः

सोमयाजिनः कर्त्तव्यमाह ।

देवलः—

सूर्यमोमोपरागेषु सोमयाज्यग्निहोत्रवान् ।

गार्हपत्ये समिडेऽग्नौ विधानाज्जुह्यात् सुचा ॥

मार्कण्डेयः—

सूर्यमोमोपरागेषु स्नात्वा याजो प्रयत्नतः ।

मोक्षस्नानं पुनः कृत्वा मौनमाध्याय मत्वरः ॥

गार्हपत्यं समिद्धिं प्रज्वाल्याऽज्यं सुचोदहन् ।

सूर्योपरागे जुह्याद् उदृत्य चित्रमित्युचा ।

उपस्थाय ततः पश्चात् नत्वा मुत्वा विमर्जयेत् ॥

एवं कृत्वा तदा याजो सूर्यलोकमवाप्नुयात् ।

सोमोपरागे जुह्याद् "आप्यायस्वेति" मन्वतः ॥

स्वर्गं प्रयान्ति च पुनर्हत्वा दत्त्वाऽहुतिद्वयम् ।

ततः शुद्धिमवाप्नोति सोमयाजो महानिह ॥

ग्रहणे चोभयोराजन् अग्नेर्वीर्यं जयं गतम् ।

राहुस्पर्शं तयो पौडा अग्नी मक्रम्य तिष्ठति ॥

(१) सुचा कृत्वा विधानतः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मौक्षस्नानं पुनर्मौनं समाधाय म मत्वर इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तचोदहन् इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(४) संनेऽप्यामि च पुनरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



सूर्यमोमोपरागयोर्विद्यमानाग्नेः सोमयाजिनः कर्त्तव्यम् । ५७१

सोमयाज्यष्टमूर्त्तशात् पुष्पवन्तो तथा नृप ।

अतो होमः प्रकर्त्तव्यो याजिना यत्नतो नृप ॥

आत्मनश्चाग्निहोत्रस्य पुनर्वीर्यवलाप्तये ।

सोमयाजिनस्त्वष्टमूर्त्तित्वमस्तीत्युक्तं तदेवाऽऽह

नवधान्ये समायाते शरद्याग्रयणं चरेत् ।

तदैव देवतातुष्ट्यै सोमयाजी न संत्यजेत् ॥

पराशरः—

वर्षे वर्षे शरत्काले नवधान्ये समागते ।

बहुदेवोपकाराय इष्टिं तत्र समाचरेत् ॥

गौतमः—

प्रतिवर्षे शरत्काले श्यामाकैत्रीहिभिर्नवैः ।

कुर्यादाग्रयणं याजी बहुदेवोपकारकम् ॥

अकृत्वा नरकं याति यावदाभूतसंपुत्रम् ।

तद्दोषपरिहाराय कुर्यात् पयिकृतं व्रजो ॥

सोमयाजिन आग्रयणलोपे प्रायश्चित्तलोपे च दर्शपूर्णमासलोप-

प्रायश्चित्तवदत्रापि पयिकृतमग्निं इष्ट्वा न दोषोभवतीति भाष्य-

कारमतम् ।

इति हेमाद्रौ सोमयाजिनआग्रयणलोपप्रायश्चित्तम् ।

१. पुष्टिमूर्त्तौ इति कीतपस्तकपाठः ।

२। अजर्तित्वेति लेखितपस्तकपाठः ।

३. अभिज्ञत इति कीतपस्तकपाठः ।

४। नदोषभागीति लेखितपुस्तकपाठः न दोषभागिति कीतपस्तकपाठः ।



अथ गृहस्थधर्मातिक्रमे प्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

गृहस्थस्य सदाचारं वक्ष्यामि शृणु तत्त्वतः ।  
यं श्रुत्वा सर्वपापेभ्योमुच्यते नाऽत्रमंशयः ॥  
विवाहादिषु विप्रस्य कर्त्तव्यं यत् शृणुष्व मे ।  
यज्ञोपवीतद्वितयं सौत्तरोयञ्च धारयेत् ॥  
सुवर्णकुण्डले चैव धीतवस्त्रद्वयं तथा ।  
अनुलेपनलिप्ताङ्गः कृत्तकेशनखः शुचिः ॥  
धारयन् वेणवं दण्डं मोदकञ्च कमण्डलुम् ।  
उष्णोषममलं कृत्रं पादुके चाऽप्युपानहौ ॥  
धारयेत् पुष्पमालाञ्च सुगन्धि<sup>३</sup> प्रियदर्शनम् ।  
नित्यं स्वाध्यायशीलः स्याद् यथाचारं समारभेत् ॥  
परान्नं नैव भुञ्जीत परवादञ्च वर्जयेत् ।  
न दुर्जनैः सह वसेन् नाऽशास्त्रं शृणुयात् तथा ॥

( अन्यस्त्रियं न गच्छेत् पैशुन्यञ्च परित्यजेत् )

नाऽपमव्यं व्रजेद्विप्रः अश्वत्थं च चतुष्पथम् ।  
अमृथां सत्सरञ्चैव दिवास्वापञ्च वर्जयेत् ॥

---

(१) यज्ञोपवीतद्वितय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्तकेश इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सुगन्ध इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) इदं श्लोकार्धं लेखितपुस्तके नास्ति ।



न वदेत् परपापानि स्वपुण्यं नैव कीर्तयेत् ।  
 स्वयश्च स्वनक्षत्रं नाम चैवाऽतिगोपयेत् ॥  
 आमवद्यूतगीर्तेषु नरन् न रतिं चरेत् ।  
 आर्द्रास्थि च तथोच्छिष्टं शूद्रं च पतितं तथा ॥  
 नर्त्तकं कितवं स्पृष्ट्वा सचेलं स्नानमाचरेत् ।  
 चित्तञ्च चित्तिकाष्ठञ्च यूपं चाण्डालमेवच ॥  
 स्पृष्ट्वा देवलकञ्चैव सवामा जलमाविशेत् ।  
 दीपखट्वातनुच्छायाकेशवस्तनखोदकम् ॥  
 अजमाज्जाररेणुश्च हन्ति पुण्यं पुराकृतम् ।  
 स्नानं रजकतीर्थेषु भोजनं गणिकागृहे ॥  
 नापितस्य गृहे क्षीरं हन्ति पुण्यं पुराकृतम् ।  
 शूपैवातं प्रेतधूमं तथा शूद्रान्नभोजनम् ॥  
 वृषलोपतिसङ्गं च दूरतः परिवर्जयेत् ।  
 असच्छास्त्राभिगमनं खादनं नखकेशयोः ॥  
 तथैव नग्नशयनं सर्वदा परिवर्जयेत् ।  
 गामश्वत्थं सभां चैव तथैव च चतुष्पथम् ॥  
 देवतायतनं चैव नाऽपसव्यं व्रजेद् द्विजः ।  
 शिरोभ्यङ्गावशिष्टेन तैलेनाऽङ्गं न लेपयेत् ॥  
 ताम्बूलमशुचिर्नाऽद्यात् तथा सुप्तं न बोधयेत् ।  
 पर्णमूलं भवेद् व्याधिः पर्णाग्रं पापसम्भवम् ॥



चूर्णप्रणं हरेदायुः शिरावुद्धिविनाशनम्<sup>१</sup> ।  
 नाऽशुद्धोऽग्निं परिचरेन् न पूजां गुरुदेवयोः ॥  
 न वामहस्तेनैकेन पिबेद्वक्त्रेण वा जलम् ।  
 न चाऽऽक्रामेद् गुरोश्चायां तदाज्ञां च न लङ्घयेत् ॥  
 न निन्द्याद् योगिनो विप्रान् व्रतिनोऽपि यतीश्वरान् ।  
 परस्परस्य मन्त्राणि कटाचिन्न वदेद् द्विजः ॥  
 दग्धं च पौर्णमास्याञ्च यागं कुर्याद् यथाविधि ।  
 ओपासनं च होतव्यं सायं प्रातर्द्विजातिभिः ॥  
 औपासनपरित्यागी सुरापीत्युच्यते दुधैः ।  
 अयने विषुवे चैव युगादिषु चतुर्ष्वपि ॥  
 दग्धं च प्रेतपक्षे च श्राद्धं कुर्याद् गृही द्विजः ।  
 मन्वादिषु मृताह्ने च अष्टकादिषु सत्तमः ॥  
 नवधान्ये समायाते गृही श्राद्धं समाचरेत् ।  
 योत्रिये गृहमायाते ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥  
 पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे गृही श्राद्धं समाचरेत् ।  
 यज्ञोदानं तथा होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् ॥  
 मिथ्या भवति राजेन्द्र ऊर्ध्वपुण्ड्रं विना कृतम् ।  
 इत्येवमादयोधर्माः गृहस्थस्य समाविताः ॥  
 तेषां व्युत्क्रमणं राजन् प्रायश्चित्ता भवेद्विजः ।

(१) शिरावुद्धि विभागिनीमिति क्रीत-लोखितपुस्तकपाठः ।



मरीचिः—

धर्माणां व्युत्क्रमे विप्रो न शुद्धति कदाचन ।  
अशुद्धस्य वृथा कर्म चर्मेणा च्छादितो यथा ॥  
तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति यज्ञेरिष्टा महाधनैः ।  
एतेषां त्यागमात्रेण विप्रो दोषमवाप्नुयात् ॥  
ततः शूद्रत्वमायाति तस्मादेतान्न सन्त्यजेत् ।

एतेषां व्युत्क्रमे प्रायश्चित्तमाह

मनुः—

ब्राह्मे मूहुर्त्ते उत्थाय शौचाचमनपूर्वकम् ।  
दन्तान् संशोध्य यत्नेन प्रक्षाल्य द्विमुखं जले ॥  
स्नानं वा देहशुद्ध्यर्थं धीतं वा परिधाय च ।  
पुण्ड्रादिकं तथा कृत्वा मानसं स्नानमाचरेत् ॥  
प्रातःसन्ध्यामुपासीत अर्थज्ञानपुरःसरम् ।  
मन्त्रैः षोडशभिः सम्यक् मार्जयेदम्बुभिः शिरः ॥  
मन्त्रपूर्वं क्षिपेदङ्गं सूर्यस्याऽभिमुखो जलम् ।  
सूर्यस्याऽभिमुखो भूत्वा जप्त्वा वै वेदमातरम् ॥  
द्विजस्य यावता संख्या तावज् जप्त्वा न दीपभाक् ।  
ब्रह्मचारो गृहस्थश्च शतमष्टोत्तरं जपेत् ।  
वानप्रस्थो यतिश्चैव सहस्रादधिकं जपेत् ॥  
एवं प्रभावा सा सन्ध्या सर्वपापप्रणाशिनी ।

सन्ध्यायाः सम्यगाचरणात्— सर्वपापक्षयो भवतीति भावः )

तदुत्पत्तिमाह—



गौतमः—

पितामहः पितॄन् सृष्ट्वा भूतिं तामुत्समर्ज्जं ह ।  
ततः प्रभृति सा देवी सन्ध्यारूपेण पूज्यते ॥  
एतां सन्ध्यां यतात्मानोये तु दीर्घमुपामते ।  
दीर्घायुप्रोभविष्यन्ति निरुजः पाण्डुनन्दन ॥

सम्यक् सन्ध्याचरणे कालमाह—

कृश्यपः—

उत्तमा तारकीपेता मध्यमा लुप्ततारका ।  
नीचा स्यादुदयादूर्ध्वं प्रातःसन्ध्या त्रिधा मता ॥  
कालेन चरिता सन्ध्या सा सन्ध्या फलदायिनी ।  
अकालचरिता सन्ध्या बन्ध्या नारी यथाऽफला ॥  
तस्मात् सूर्यादयात् पूर्वं प्रातःसन्ध्यां समाचरेत् ।  
पूर्वोक्तदोषनिर्मुक्तः प्रपेदे परमं पदम् ॥

तथाच श्रुतिः—

यदङ्गा कुरुते पापं तदङ्गा प्रतिमुच्यते ।  
यद्रात्रौ कुरुते पापं त द्रात्रौ प्रतिमुच्यते ॥  
सुगुणाचरिता सन्ध्या सर्वघाविनिकृन्तना ।

तावत्कालं तत्रैव मनसा समाधाय यः सन्ध्यां तु समाचरेत्  
तस्य सर्वेषां पूर्वोक्तानां गृहस्थधर्माणां प्रमादादतिक्रमे सन्ध्यायैव  
प्रायश्चित्तं नान्यत् । अतएव द्विजातीनां सन्ध्याकर्म्मैव बलवत्तरम् ।

इति हेमाद्रौ गृहस्थधर्मप्रायश्चित्तम् ।



अथ सर्ववर्णोपकारार्थं मानसस्नानमाह ।

देवलः,—

स्वस्थितं पुण्डरीकाक्षं चिन्तयेत् पुरुषोत्तमम् ।  
अनन्तादित्यसङ्काशं वासुदेवं चतुर्भुजम् ॥  
शङ्खचक्रगदापद्मधारिणं वनमालिनम् ।  
ध्वजवज्राङ्कुशालक्ष्यं<sup>१</sup> पादपद्मं सुनिर्मलम् ॥  
तत्पादोदकज्वां गङ्गां निपतन्तीं स्वमूर्धनि ।  
चिन्तयेद् ब्रह्मरन्ध्रेण प्रविशन्तीं स्वकां तनुम् ॥  
तथा संचालयेद् देहं बाह्यमाभ्यन्तरं मलम् ।  
तत्क्षणाद् विरजो मन्त्री जायते स्फटिकोपमः ।  
इति मानसिकं स्नानं प्रोक्तं हरिहरादिभिः ॥  
इदं<sup>२</sup> स्नानवरं दिव्यं मन्त्रस्नानात् शताधिकम् ।  
योनित्यमाचरेदेवं स वै नारायणः स्मृतः ॥  
कालमृत्युमतिक्रम्य जीवत्येव न संशयः ।  
इडा भागीरथी गङ्गा पिङ्गला यमुना स्मृता ॥  
तयोर्मध्यगता नाडी सुषुम्नाख्या मरुस्वती ।  
ज्ञानकन्दे ध्यानजले रागद्वेषमलापहे ॥

(१) ध्वजवज्राङ्कुशालक्ष्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तत्क्षणात्तु द्विजो मन्त्री इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) इदं स्नानं वरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



यः स्नाति मानसे तीर्थे स याति परमां गतिम् ।  
 अच्युतोऽहमनन्तोऽहं गोविन्दोऽहमहं हरिः ॥  
 आनन्दोऽहमशेषोऽहमजोऽहममृतोऽस्मग्रहम् ।  
 नित्योऽहं निर्व्विकल्पोऽहं निर्व्विकारोऽहमव्ययः ॥  
 सच्चिदानन्दरूपोऽहं परिपूर्णोऽस्मि सर्व्वदा ।  
 ब्रह्मैवाऽहं न संसारी मुक्तोऽहमिति भावयेत् ॥  
 एवं यः प्रत्यहं स्नात्वा मानसं स्नानमाचरेत् ।  
 स देहान्ते परं ब्रह्मपदं याति न संशयः ॥

इति हेमाद्रौ मानसस्नानविधिः ।

अथ निषिद्धदिवसे ताम्बूलभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

अमायाञ्च पितृश्राद्धे तीर्थयात्रासु सर्व्वदा ।  
 क्षताशौचे बन्धुमृती पक्षद्वयहरेर्द्दिने ॥  
 अशुचिर्मार्गमध्ये च सन्ध्ययोरुभयोरपि ।  
 देवालये सभास्थाने तथा कर्मसु भाषणे ॥  
 दुःखान्विते बहुजने तथैवोत्पातदर्शने ।



राजभङ्गे प्रजाक्षोभे गुरुदेवार्चनेषु च ।

व्रताचरणकाले तु पुराणश्रवणे तथा ।

ताम्बूलं भक्षयेद्यस्तु 'स विष्ठाशी भवेदिह ।

महाराजविजये—

इक्षुं<sup>१</sup> फलञ्च मूलञ्च ताम्बूलं पयश्चौषधम् ।

भक्षयित्वाऽपि कर्त्तव्या ब्रह्मयज्ञादिकाः<sup>२</sup> क्रियाः ॥

एतद्वचनमुक्तेषु एतेषु तिथिषु नीचव्यतिरिक्तविषयम् प्रायश्चित्तमाह ।

गौतमः—

अमाश्राद्धादिकालेषु यस्ताम्बूलम् भक्षयेत् ।

तस्य दोषनिवृत्त्यर्थं जपेदष्टशतं द्विजः ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति विष्ठाशी जायते भुवि ।

इति हेमाद्रौ निषिद्धदिवसे ताम्बूलभक्षणप्रायश्चित्तमाह ।

(१) विष्ठासममिदं नृप इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) इक्षुरूपः फलं मूलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ब्रह्मयज्ञानादिकाः क्रिया इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ तुलादिषोडशमहादानानामितरदानानाञ्च प्रति-  
ग्रहीतृणां आचार्यादीनां प्रायश्चित्तं ब्रुवन्  
तत्रादौ तुलाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

ऋणापकर्षणार्थं वा उत यागार्थमेव वा ।

द्विजः प्रतिग्रहं कृत्वा तदूर्ध्वं स्नानमाचरेत् ॥

देवस्वामी,—

तुलाप्रतिग्रहीता च पूर्वजोविषयातुरः ।

सोऽरण्ये निर्जले देशे भवति ब्रह्मराक्षसः ॥

तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा न च लक्षजपादृते ।

तुला त्रिविधा स्वर्णमयी रजतमयी रत्नमयी च, तासां प्रति  
ग्रहे आचार्यब्रह्मणोर्निष्कृतिर्नास्ति, तथाऽपि मुनिभिः कुत्राऽपि  
च निष्कृतिर्दृष्टा, तदेवाह ।

मार्कण्डेयः,—

तासाम् प्रतिग्रहे विप्र ऋणयागादिभिर्विना ।

रौरवे नरके घोरे ऋत्विग्भिः सह मज्जति ॥

ऋत्विजो ब्रह्मा सदस्यः द्वाःस्था जापको होतारश्च

---

(१) नास्ति इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तुला द्विविधा रजतमयी रत्नमयी च इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।



देवीपुराणे—

आत्मतुल्यः सुवर्णं यः प्रतिगृह्य धनातुरः ।

अकृत्वा निष्कृतिं तस्य ऋत्विग्भिः सह राक्षसः ॥

कूर्मपुराणे,—

काश्यादिपुण्यतीर्थेषु उपरागादिसम्भवे ।

प्रतिगृह्य तुलां राज्ञः सहस्राब्दं पिशाचता ॥

गारुडपुराणे,—

श्रीशैले हेमकूटे वा अचले गन्धमादने ।

अहोबले वेङ्कटाद्री काश्यादिषु विशेषतः ॥

सूर्योपरागकालेषु अन्यकालेषु पर्वसु ।

प्रतिगृह्य तुलां विप्रो राज्ञोभोगलोलुपः ॥

सोऽरण्ये निर्जले देशे 'वृत्तिहीनो निराश्रयः ।

सहस्राब्दं भवेद्रक्षः नवलक्षजपादृते ॥

नवलक्षजपोगायत्र्याः ।

ब्रह्माण्डे,—

सेत्वादिपुण्यतीर्थेषु उपरागेषु पर्वसु ।

यः पूर्वजोऽनुगृह्णीयात् तुलां राजसुताद् यदि ॥

भवेद्रक्षः सहस्राब्दं दृष्टिहीनो निराश्रयः ।

निष्कृतिस्तस्य गायत्र्याः नवलक्षजपादिना ॥



तदशक्तौ लिङ्गपुराणे,—

वाणिज्यस्याष्टमं भागं कृषेर्विंशतिमं तथा ।

प्रतिग्रह<sup>१</sup>चतुर्थांशं दत्त्वा पापैर्न लिप्यते ॥

तदेवाऽऽह मार्कण्डेयः,—

वाणिज्यस्याष्टमं भागं भागं विंशतिमं कृषेः ।

प्रतिग्रहे<sup>१</sup> चतुर्थांशं दत्त्वा विप्रो न दोषभाक् ॥

अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति दानैर्वा तीर्थसेवया ।

इति ।

महाराजविजये,—

यदा प्रतिग्रहस्तस्य तदा पातित्यमर्हति ।

सन्ध्यादिनित्यकर्माणि<sup>२</sup> विलुम्पन्ति न संशयः ॥

सावित्रीपतितं विद्यात् पुनः संस्कारमर्हति ।

स्कन्दपुराणे,—

प्रतिगृह्य तुलामाशु नवलक्षं जपेद् बुधः ।

व्ययं कृत्वा चतुर्थांशं यज्ञं सर्वस्वदक्षिणम् ॥

प्रयुतेनाऽभिषेकस्य शम्भोरुद्रविधानतः ।

तदर्थं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसस्पतेः ॥

होतॄणां द्वारपालानां पाठकानां महामुने ।

जापकानामिदं प्रोक्तं तयोरर्द्धं विवक्ष्यते इति ॥

(१) प्रतिग्रही चतुर्थांशं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विफलन्ति इति लेखित पुस्तकपाठः ।



तयोर्ब्रह्मसदस्ययोरदं सर्वेषां प्रायश्चित्तं मुनिभिर्दर्शितम् ।

अन्यथा दोषमाह—

ब्रह्माण्डे,—

उग्रक्षेत्रेषु तीर्थेषु पुण्यकालेषु पर्वसु ।

भोगासक्तसुलां धृत्वा अकृत्वा निष्कृतीरिमाः ॥

तदाचार्यः सहस्राब्दं भवति ब्रह्मराक्षसः ।

तद्ब्रह्मा च सदस्यश्च कोटिकौ 'नाम राक्षसौ ॥

हीतारः प्रेतभूताः स्युर्द्वारपाला महोदराः ।

पाठकाः क्रूरवाचः स्युः कुष्माण्डा जापका मताः ॥

अकृत्वा निष्कृतिं भूप यावद्भूमौ चरन्ति हि ।

न भवन्ति हि कर्मार्हाः न सम्भाष्याः कदाचन ॥

अहोनिष्कृतिरेतैर्वा कार्या लोकप्रसिद्धये<sup>१</sup> ।

तत्रापि सुलभमाह,—

मार्कण्डेयः,—

तुलाप्रतिग्रहीता च प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ।

तच्चतुर्थांशभागेन परिषद्बिधिपूर्वकम् ॥

चतुर्थांशं धनं सर्वं चतुर्धा भागमाचरेत् ।

अनुवादे भागमेकं भागमेकं विधायके ॥

(१) ब्रह्म राक्षसौ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) क्रूरवाक्यस्या इति लेखितपुस्तक पाठः ।

(३) लोक निषिद्धये इति क्रीत लेखित पुस्तकपाठः ।



भागं परिषदि प्रोक्तं शेषं कच्छादिषु न्यसेत् ।  
 ततः परं विशुद्धोऽभूद् ब्रह्मलोके परत्र च ॥  
 ब्रह्मराक्षसनिर्वृत्तिः कृत्वा यागादिकं सुधीः ।  
 पुनः संस्कारविधिना अभ्यसेद्देदमातरम् ॥  
 ब्रह्मोपदेशं तत्रैव कुर्यादाचार्यवाक्यतः ।  
 ततः परं जपेद्देदमातरं प्रत्यहं सुधीः ॥  
 प्रतिग्रहपरान्नेषु विमुखो विष्णुमादरात् ।  
 चिन्तयन् वर्त्तयन् विप्रः सुखीह च परत्र च ॥  
 एवं 'कुर्याद् द्विजो यस्तु निष्कृतिं शुद्धमानसः ।  
 तुलाप्रतिग्रहे राजन् शुद्धो भवति नाऽन्यथा ॥  
 अकृत्वा निष्कृतीरिताः एकां वाऽपि नरेश्वर ।  
 सन्ध्यादिनित्यकर्माणि पितृकार्याणि यानि च ।  
 न फलन्तीह सर्व्वाणि भक्ष्माणि न्यस्तहव्यवत् ।  
 पुनः संस्कारमात्रेण पुनरायान्ति तानि वै ।  
 ततः प्रतिग्रहीता तु आत्मदेहविशुद्धये ।  
 कुर्याद्दे विरजाहोमं पञ्चगव्यमनन्तरम् ॥

इति हेमाद्रिविरचिते धर्मशास्त्रे प्रायश्चित्ताध्याये  
 तुलाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ हिरण्यगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

पूर्वजो द्रव्यलोभेन निमित्तैः पूर्वजैर्विना ।  
गर्भं स्वर्णमयं धृत्वा ऋत्विग्भिः सह राक्षसः ॥

कूर्मपुराणे—

हिरण्यगर्भं गृह्णीयाद् द्विजो लोकपराङ्मुखः ।  
तस्योपनयनं भूयो भवेद्देवैर्नक्तचार्यसौ ॥

मात्स्ये—

हिरण्यगर्भं भूपालाद् भूपालद्विजवत्सभः ।  
प्रतिगृह्य स शीघ्रेण नक्तचारी भवेद्भुवि ॥  
ऋत्विजः कीकमा नाम पिशाचाः सम्भवन्त्यधः ।  
अरण्ये निर्जले देशे ऋक्षपादमहोदराः ॥  
न तेषां निष्कृतिर्दृष्टा प्रायश्चित्तायुतैरपि ।  
कथञ्चिद् निष्कृतिर्दृष्टा पुनर्गर्भान्नचाऽन्यथा ॥

देवीपुराणे—

दक्षिणामात्रमालभ्य प्रधानं संपरित्यजेत् ।  
तथाऽपि यागधर्मादीन् कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
शेषे यद्यतिमोहेन वृत्त्यर्थं लोभलोलुपः ।  
तस्योपनयनं भूयो जननं गर्भगोलतः ॥

(१) कृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भोगलोलुपः इति कीतपुस्तकपाठः ।



पञ्चामृतेन शम्भोर्वा अभिषेकात् प्रमुच्यते ।

अथ लज्जपो देव्या कुष्माण्डायुतहोमतः ॥

चतुर्भागव्ययेनाऽपि यज्ञोवा सर्व्वदक्षिणः ।

एवं कुर्याद् द्विजो यस्तु तस्माद् दोषात् 'स मुच्यते ॥

अभिषेकाशक्तौ दक्षिणामात्रपरिग्रहे हिरण्यगर्भग्रहणे सुलभ-  
प्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

प्रधानं संपरित्यज्य यागार्थं दक्षिणां वहन् ।

तस्योपनिष्कृतिरियं<sup>१</sup> मुनिभिः परिकीर्त्तिता ॥

परिद्यूर्वा तदानीं वा स्नात्वा शुचिरलङ्कृतः ।

नीलवर्णां च गामिकां सुशीलां<sup>२</sup> क्षीरवस्त्रभाम् ॥

आपोहिष्ठादिभिर्मन्त्रैः प्राङ्मुखीं मार्जयेज्जलैः ।

रक्तेन वाससाऽऽच्छाद्य त्रिः परिक्रम्य यत्नतः ॥

तन्मूत्रस्थानमासाद्य जपेन्मन्त्रमिमं सुधीः ।

“हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे” “हविषा विधेम”—

“विशुर्योनिं” “सधर्म्मयता”मिति एताभिरनुमन्त्रयते ।

ततः परं मुहूर्त्तमात्रं स्थित्वा, “गो गर्भमात्मनो मूर्ध्नि अष्टयोनी  
अष्टपुत्रा”मित्यनुवाकं पठेत् । ततः परमात्मानं पुनर्जातं मत्वा

(१) प्रमुच्यते इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्योपनिष्कृतिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) क्षीरवत्तमां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



स्वयं वा पिता वा आचार्यो वा जातकर्माद्युपनयनं कुर्यात् ।  
गां द्रव्याणि च आचार्याय दत्त्वा क्षमापयेत्, ततः परं पूतो  
भवति, दक्षिणामात्रप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमेतद् वेदितव्यं, प्रधान-  
त्यागाभावे पूर्वोक्तैरष्टलक्षजपादिभिः पूतो भवति । अन्यथा न  
निष्कृतिः तदेतद्वोषमाह—

हरिसागरे—

अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति अकृत्वा निष्कृतीरिमाः ।  
सहस्राब्दं भवेदन्यथा आचार्यो द्रव्यलोभनः ॥  
ब्रह्मा सदस्यतिश्चैव तदङ्गं राक्षसोवने ।  
द्वारस्थाश्च ऋत्विजश्चैव पाठका जापका अपि ॥  
तयोरङ्गं भवेयुस्ते राक्षसा घोररूपिणः ।  
आचार्याङ्गं जपः प्रोक्तो ब्रह्मणः सदस्यतः ॥  
तयोरङ्गं होतृकाणामितरेषामिति स्थितिः ।

नागरखण्डे—

एवं हिरण्यगर्भस्य ग्रहणे निष्कृतिः पुरा ।  
दृष्टा मन्वादिभिर्विप्रैः धर्मशास्त्रपरायणैः ॥  
अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति प्रायश्चित्तैर्जलाप्लुतैः ।  
इति हेमाद्रौ हिरण्यगर्भ-प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ ब्रह्माण्डघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

द्विजैर्ब्रह्माण्डसंज्ञो वै घटस्त्वापत्सु तासु च ।  
न धार्यः पुण्यतीर्थेषु आत्मनाशकरो महान् ॥

देवलः—

ब्रह्माण्डं यो नु गृह्णीयात् द्विजः कृत्याविधिं विना ।  
ऋत्विग्भिः सह दुष्टात्मा राक्षसो भवति ध्रुवम् ॥

मत्स्यपुराणे—

ब्रह्माण्डं यस्तु<sup>१</sup> गृह्णीयाद् राज्ञो दानाधिकारिणः ।  
तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति अशीत्यब्दात्तु<sup>२</sup> राक्षसात् ॥

मार्कण्डेयपुराणे—

ब्रह्माण्डग्राही<sup>३</sup> तीर्थेषु पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
निष्कृतिस्तस्य नास्तीह वसुलक्षजपादृते ॥

इति ब्रह्मवैवर्ते—

ब्रह्माण्डं मुखजो धृत्वा पापलोभपरायणः ।  
अष्टलक्षजपादस्य निष्कृतिर्ब्रह्मराक्षसादिति ॥

---

(१) द्विजो गृह्णीयाद् ब्रह्माण्डं इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अशीत्यब्दात्स राक्षसात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ब्रह्माण्डं पुण्यतीर्थेषु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



महाभारते—

अष्टलक्षजपादेव्याः विप्रस्य ब्रह्मणोघटे ।  
आसहस्राब्दपर्यन्तं इति यत्तदसाम्प्रतम् ॥

तदाह—

लिङ्गपुराणे गौतमः—

ब्रह्माण्डं योद्विजोष्टत्वा वसुलक्षजपादिह ।  
पूतोभवति दुष्टात्मा इह लोके परत्र च ॥  
नियतेनाऽभिषेकस्य शम्भोः पूर्ववदास्थितः ।  
चतुर्भागमयं कृत्वा यज्ञं वा बहुदक्षिणम् ॥

सर्वस्वमित्यर्थः ।

पापाद्वै निष्कृतिस्तस्य ऋत्विग्भिः सहितस्य च ।  
'अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति सहस्राब्दं पिशाचतः ॥

प्रायश्चित्ताकरणे दोषमाह ।

भविष्योत्तरे—

आचार्यो जीवको नाम भवति ब्रह्मराक्षसः ।  
ब्रह्मा भवेत् परारूढः सहस्राक्षः सदस्यवान् ॥  
हारस्थाः क्रूरकर्माणः पातकाः पिशिताशनाः ।  
होतारः काकलास्याख्या जापकाः पादहीनकाः ॥

(१) नान्यथा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पातका इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



आचार्यार्द्धं तयोः प्रोक्तं प्रायश्चित्तमिदं प्रभो ।  
 द्वास्स्थानां च तदर्द्धं स्याद् इतरेषाञ्च पूर्ववत् ॥  
 अर्द्धं वा तच्चतुर्भागं व्ययं वा कुरुतेऽथवा ।  
 अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति शतैस्तीर्थावगाहनैः ॥  
 आचार्यं प्रविशेत्पापं राज्ञोदानादिकारिणः ।  
 पादहीनं द्वयोः प्रोक्तं शेषं सर्वेषु संविशेत् ।  
 प्रायश्चित्तैर्विना राजन् न पुनः सप्रतिग्रहात् ।  
 स्नानादिदं प्रकर्त्तव्यं प्रायश्चित्तं द्विजातिभिः ॥  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा शुद्धोभवति नाऽन्यथा ।

इति हेमाद्रौ ब्रह्माण्डघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ कल्पतरुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

मार्कण्डेयपुराणे—

आपत्समुद्भवे विप्रो न गृह्णीयादमुं तरुम् ।  
 यान्यस्य सन्ति पर्णानि फलानि कुसुमानि च ॥

(१) दानैरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) आपत्स्वनुद्भवे इति काशीपुस्तकपाठः ।



तावतीम् समा भूयाद्राक्षसो निर्जने वने ।

ऋत्विभिर्ब्रह्मणा सार्द्धमधःपादविवर्जिताः ॥

सौपर्षे—

न गृह्णीयाद्दिजः काऽपि बहुभिः कारणैर्विना ।

तरुमेनं पर्णवन्तं रक्षोभवति कानने ॥

दृष्ट्या पद्भ्यां विना राजन् ऋत्विग्भिः सह निर्जने ।

यावन्ति तस्य पर्णानि तावदब्दं नराधिप ॥ इति

दौर्ब्राह्मण्यनिवृत्त्यर्थं क्रतुः, पितृभिरात्मना च कृतं ऋणं, स्वेनैव कृता अग्रहारास्तटाको वा खिलो भवति, तदुद्धरणार्थं प्रतिग्रहः एतानि निमित्तानि प्रतिग्रहे । एतेषां रक्षणार्थं सर्वधनव्यये न दोषः ।

तदाह ।

गौतमः—

कुटुम्बी प्रतिगृह्णीतं द्विजस्त्वृणविमुक्तये ।

यागार्थं स्वकृतारभतटाकादिविनाशने ॥

सर्वं तदर्थं सहसा व्ययं कृत्वा न दोषभाक् ।

शुद्धोभवति मानुष्ये न भवेद्ब्रह्मराक्षसः ॥ इति

मार्कण्डेयपुराणे—

प्रतिगृह्य द्विजोयसु<sup>१</sup> तरुमेनं गृहीभवेत्<sup>२</sup> ।

निष्कृतिस्तस्य नास्तीह नरकादेकविंशतेः ॥

(१) जोभात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुखाप्तये इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कथञ्चिन्निष्कृतिर्दृष्टा मनु-नारद-गौतमैः ।

अष्टलक्षाद्देदमातुश्चतुर्थांशव्ययेन वा ॥

अभिषेकेण वा शम्भोर्भूमेर्वा त्रिःपरिक्रमात् ।

सेत्वादिपुण्यतीर्थेषु 'अब्दं वा स्नानमाचरेत् ॥

( एता निष्कृतयोदृष्टा मनु-नारद-गालवैः । )

तयोरेतस्य संग्रहे ब्रह्मसदस्यत्विजां होतृजापकपाठकानां  
च प्रायश्चित्तमर्द्धांशांशेन वेदितव्यम् ।

बाहुजादेकगुणितं पादजाद्विगुणं चरेत् ।

मुखजादुक्तमानेन ऊरुजात् क्षत्रियान् नृप ॥

एताभ्यो निष्कृतिभ्यश्च गतिर्नाऽन्यत्र दृश्यते । इति

इति हेमाद्रौ कल्पतरुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ गोसहस्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

तुलायां गोसहस्रे च आचार्यस्य पुनर्भवः ।

आब्रह्मणोऽब्दपर्यन्तं ध्रुवं<sup>१</sup> भूमौ पिशाचता ॥

(१) त्यब्दं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

( ) अयं पाठः बेखितपुस्तकेनास्ति ।

(२) नास्ति इति क्रीतबेखितपुस्तकपाठः ।



ग्रन्थान्तरे—

तुलायां गोसहस्रे च आचार्यस्य पुनर्भवः ।  
 आब्रह्मणोऽदपर्यन्तं प्रेतजोयदि पूर्वजः ॥  
 'तस्य नास्ति पुनर्जन्म यावद्ब्रह्मा लयं गतः ।  
 तदाचार्यस्ततोब्रह्मा सदस्योराक्षसास्त्रयः ॥  
 यावद्ब्रह्मा लयं याति तावत्ते सञ्चरन्त्यधः ।

मार्कण्डेयपुराणे—

एका गौर्न प्रतिग्राह्या द्वितीया न कदाचन ।  
 सा चेद्विक्रयमापन्ना दहत्यासप्तमं कुलम् ॥

विष्णुरहस्ये—

काशीक्षेत्रे च गौतम्यां कृष्णवेणीनदीतटे ।  
 श्रीशैले वेङ्कटाद्री च क्षेत्रे श्रीमत्यहोबले ॥  
 काञ्चीक्षेत्रे च श्रीरङ्गे गोकर्णे गन्धमादने ।  
 धनुष्कोट्यां महाराज तुलायां गोसहस्रकम् ॥  
 प्रतिगृह्य द्विजोलोभात् तृणयागैर्विना नृप ।  
 पुत्रपौत्रैः परिवृतो नरके वासमश्नुते ॥ इति

स्कन्दपुराणे—

ग्रहणे संक्रमे चैव पुण्यतीर्थेषु पर्वसु ।  
 गो सहस्रं तुलाविप्रः प्रतिगृह्य धनातुरः ॥



पूर्वोक्ता निष्कृतीरेताः परित्यज्य तु निर्व्विशेत् ।

सपुत्रपौत्रसंवीतः सहस्राब्दं निशाचरः ॥ इति

देवीपुराणे—

गोसहस्रं द्विजोधृत्वा अकृत्वा तद्वयं सुधीः ।

सोऽरण्ये निर्जले देशे कुलेन सह राक्षसः ॥ इति

मार्कण्डेयः—

धृत्वाऽग्रजो गोसहस्रं राज्ञोऽन्यस्माद्विजन्मनः ।

नवलक्षं जपेद्देव्याः पुनः संस्कारमर्हति ॥

मत्स्यपुराणे—

पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे सूर्याचन्द्रमसोर्ग्रहे ।

धेनूनां यः सहस्रं च प्रतिगृह्णात्यनातुरः ॥

स भूप्रदक्षिणं कृत्वा नवलक्षं जपेत् ततः ।

केशानां वपनं कृत्वा पुनः संस्कारमर्हति ॥

महाराजविजये—

सहस्रधेनुदाने तु आचार्यत्वं व्रजेद्द्विजः ।

तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति नवलक्षजपादृते ।

भूमेः प्रदक्षिणं कृत्वा केशानां वपनं पुनः ॥

प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनः संस्कारमर्हति ।

एतदशक्तौ पक्षान्तरमाह ।

कूर्मपुराणे—

सहस्रधेनुदाने तु आचार्यो यदि लोभतः ।

भूमेः प्रदक्षिणं कृत्वा नवलक्षं जपेत्ततः ॥



तदशक्तौ महाशम्भोर्नमकैश्चमकैः शुभैः ।  
 कृत्वाऽभिषेकं विधिवच् 'चतुर्भागं प्रयत्नतः ॥  
 सर्व्वव्ययं च यागे वा कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

नागरखण्डे—

ब्रह्मा सदस्यः पूर्व्ववत् प्रायश्चित्तार्द्धमर्हतः ।  
 तदर्द्धं द्वारपालानां पाठकानां तथैवच ॥  
 होतॄणां जापकानाञ्च पूर्व्ववन्मुनिभिः स्मृतम् ।

तत्र विशेषमाह—

लिङ्गपुराणे—

गोसहस्रे तुलायाञ्च आचार्य्योयद्धनं हरेत् ।  
 न कुर्यात् तद्धनं धर्म्यं पत्नीपुत्रपरिवृतः ॥  
 तत्पत्नीनाञ्च पुत्राणामनुजानां धनाधिपः ।  
 हव्यकव्येषु यो भोक्ता ये वा सखन्निवान्धवाः ॥  
 तसकृच्छ्रत्रयं तेषां निष्कृतिः कथितोत्तमैः ।

एतदद्दपर्य्यन्तं अतः परं निष्कृतिर्नास्ति ।

चान्द्रायणत्रयं प्रोक्तं तत्पुत्राणां धनागमे ।  
 तद्भातॄणां पराकः स्याद् यदि तद् विभजेद्धनम् ॥  
 हव्यकव्येषु भोक्तॄणामुपवासो दिनं भवेत् ।  
 परेद्युः प्राशनं कृत्वा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥

(१) चतुरयुतं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अकृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पत्न्या इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तेषां पराकः सम्प्रोक्तो ये च सम्बन्धिवान्धवाः ।  
 तस्य सम्भाषणादेव कुर्यात् सूर्यावलोकनम् ।  
 तस्माच्च निष्कृतिः कार्या आचार्येण शुभेषुना ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति इह लोके परत्र च ।

तुलाप्रतिग्रहे त्वेवमेव वेदितव्यम् । गोसहस्रं तुला च द्वयं समं  
 तस्मादपरिग्रहएव वरं, उभयोर्लोकयोरतिगर्हितत्वात् ।

इति हेमाद्रौ गोसहस्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ हिरण्यकामधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

महाभारते ।

व्यासः—

शृणु धर्मज वक्ष्यामि स्वर्णकामदुघां सकृत् ।  
 योद्विजः प्रतिगृह्णाति<sup>१</sup> स सद्यः पतितोभवेत् ॥  
 तस्यैव निष्कृतिर्भूष पुनर्ब्रह्मोपदेशतः ।  
 अष्टलक्षजपाद्राजन् व्ययं<sup>२</sup> वाऽष्टमभागतः ॥

(१) प्रतिगृह्णाद्विजोयस्तु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) व्ययं वाऽष्टमभागत इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अभिषेकेण वा शश्वोर्यज्ञैर्वा सर्वदक्षिणैः ।

एतैः शुद्धिमवाप्नोति उभयोर्लोकयोरपि ॥

लिङ्गपुराणे—

हिरण्यकामधुक् पूर्वं राज्ञो श्रेयोऽभिवृद्धये ।

सर्वपापक्षयकरी महापातकनाशनी ॥

अग्निकुण्डात् समुत्पन्ना पश्यतां द्युसदां सताम् ।

दृशा ब्रह्माणमद्राक्षीत् ब्रह्मा तां प्रत्युवाच ह ॥

इतन्नागच्छ भद्रं ते महीं गच्छ प्रयत्नतः ।

राजानस्तत्र वर्तन्ते 'अत्यर्थं' पापकारिणः ॥

तत्र तान् रक्ष दानेन सुघोरात् पापसङ्कटात् ।

ओमित्युक्त्वा तथा धेनुर्भुवं गतवती तदा ॥

तदा प्रभृत्यसौ धेनुः कामधुक् स्वर्णरूपिणी ।

राज्ञां पापनिबद्धानां वस्वर्थं पापचेतसाम् ॥

पापनिर्मोचनी 'प्रोक्ता' स्वर्चिता पुण्यसङ्गमे ।

एतादृशीं पुण्यरूपां स्वर्णकामदुग्धां द्विजः ॥

प्रतिगृह्णाति यो<sup>१</sup> लोभात् स सद्यः पतितोभुवि ।

कूर्मपुराणे,—

स्वर्णकामदुहं राज्ञा स्वर्चितां शास्त्रवर्त्मना ।

प्रतिगृह्णन् द्विजो मोहात् स सद्यः सूतकी भवेत् ॥

(१) मह्यर्थं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तेषां इति क्रीतखेचितपुस्तकपाठः ।

(३) प्रतिगृह्णन् यदा इति क्रीतखेचितपुस्तकपाठः ।



शिवपुराणे,—

सदा पवित्रां दिव्यां<sup>१</sup> तां राजभिः पूजितामिमाम् ।  
 न गृह्णीयात् पुण्यकाले पूर्वोक्तैः कारणैर्विना ॥  
 प्रायश्चित्ती भवेत् सद्यः पुनर्व्रह्मोपदेशतः ।  
 अष्टलक्षजपं कृत्वा प्रत्यहं विधिपूर्वकम् ॥  
 धनस्याऽष्टमभागेन प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
 अभिषेकेण वा विप्रैर्यज्ञः सर्वस्वदक्षिणः ॥  
 एतेषूक्तेषु राजेन्द्र प्रायश्चित्तेन शुद्धिमान् ।  
 इहलोके परत्राऽपि शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

महाभारते—

स्वर्णकामदुहं धृत्वा द्विजो निष्कारणान्मुने ।  
 अष्टलक्षजपं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥  
 धनस्याऽष्टमभागेन प्रायश्चित्तेन वा द्विजः ।  
 अभिषेकेण वा शम्भोर्निःशेषऋणमोचजात् ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति द्विजो लोभाज्जनार्दन ।

इति नियमेन गायत्रीजपं कृत्वा स्वर्णकामधेनुप्रतिग्रहात् पूतो  
 भवति । तदशक्तौ धनाष्टभागेन तुलाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तोक्तवत्  
 कुर्यात् । नमकचमकैः<sup>२</sup> शम्भोः प्रयुताभिषेचनात् पूतो भवति ।

(१) स सर्वदा पवित्रां इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) नमकचमकौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथवा तेन<sup>१</sup> प्रतिग्रहलब्धेन धनेन निःशेषं ऋणमोचनं कृत्वा  
पञ्चगव्यप्राशनं कृत्वा च शुद्धो भवति ।

इति हेमाद्रौ हिरण्यकामधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ हिरण्याश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे,—

हिरण्यवाजिनं गृह्णन् द्विजोलोभपरायणः ।  
जन्मत्रये राक्षसत्वमनुभूय पिशाचताम् ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य राक्षसत्वमवाप्नुयात् ।  
तदन्ते रोगवान् भूत्वा नरकं याति पाण्डव ॥ इति

मत्स्यपुराणे,—

हिरण्यवाजिनं धृत्वा राक्षोदानपरायणात् ।  
पुण्यकाले पुण्यदेशे द्विजोयोभोगलोलुपः ॥  
सोऽपि देशान्तरे भूयादरण्ये राक्षसस्तदा ।  
तदन्ते राक्षसोभूयात् ततो नरकमाप्नुयात् ॥



ब्रह्माण्डे—

हिरण्यवाजिनं विप्रः प्रतिगृह्य नराधिपात् ।  
 सोऽरण्ये निर्जले देशे राक्षसत्वं भवेदिह ॥  
 ततस्तु गर्हभत्वञ्च सोऽनुभूय ततः परम् ।  
 ततोव्याधिभिराकीर्णं नरके वासमश्रुते ॥

महाभारते—

हिरण्याश्वं नृपश्चेष्टाद् द्विजो लोभातुरोवहन् ।  
 ऋणादिभिर्निमित्तैर्यो विना पुण्यदिने 'स वै ॥  
 राक्षसत्वमवाप्नोति ततोरासभतां व्रजेत् ।  
 तदन्ते व्याधिना ग्रस्तस्ततो नरकमश्रुते ॥  
 न तस्य पुनरावृत्तिर्दिव्यलक्षाष्टकोटितः । इति

ब्रह्मवैवर्ते—

हिरण्याश्वं द्विजो धृत्वा तस्य <sup>१</sup>निष्कृतिमाचरेत् ।  
 अष्टलक्षजपाद्वाऽपि नियतेनाऽभिषेकतः ॥  
 अष्टमांशव्ययेनाऽपि यागैर्वा सर्वदक्षिणैः ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति पुनर्मौञ्जीविधानतः ॥

पुनःसंस्कारइत्यर्थः ।

तद्ब्रह्मा च सदस्यश्च प्रायश्चित्तार्द्धमर्हतः ।  
 द्वास्त्यास्तज्जापका राजन् अर्हन्त्यर्द्धमंशतः ॥

(१) त्विह इति क्रीतखेचितपुस्तकपाठः ।

(२) निष्कृतोरिता इति खेचितपुस्तकपाठः ।



अन्यथा दोषवन्तस्ते न संभाष्याः कदाचन ।

न संस्पृश्यास्त्वपांक्तेया नाऽलपित्तानिह द्विजान् ॥ इति ।

इति हेमाद्रौ हिरण्याश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ हिरण्याश्वरथप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्मवैवर्ते—

हिरण्याश्वरथं दिव्यं पूजितं नृपसूनुभिः ।

गृह्णाति ब्राह्मणेलोभाद् यः कश्चिद्राजवल्लभात् ॥

स मृत्वा राक्षसो घोरो निर्जने विपिने जले ।

भवत्येव सदा लुब्धः निष्ठुरं सर्व्वदा वदन् ॥

भविष्योत्तरे—

विश्वाचीं च घृताचीं च स्त्रियीलोकविमोहने ।

अकल्पयत् पुरा ब्रह्मा हिरण्याऽश्वरथं मुदा ॥

तं आरोप्य रणक्षेत्रे नीतवान् त्रिदिवं सुरान् ।

रथं तमिन्द्रः सहसा आलोक्याऽप्सरसां गणैः ॥

पारुरोह मुदा युक्तो हतवान् राक्षसान् बहून् ।

हिरण्याश्वरथं दृष्ट्वा तद्दीप्त्या राक्षसा हताः ॥



तदन्ते दिवमासाद्य हिरण्याश्वरथेन वै ।  
 ततः परं तु तत्याज<sup>१</sup> देवेन्द्रो रथमञ्जसा ॥  
 ब्रह्मा तु तमालोक्याऽथ हिरण्याश्वरथं पुनः ।  
 हस्ते गृहीत्वा तं दिव्यं राजभ्यः प्रददौ मुदा ॥  
 दानं कुरुत विप्रेभ्यः सर्वपापापनुत्तये ।  
 वैरिहिंसाकरं दिव्यं पूजितं मन्त्रितं द्विजैः ॥  
 इति तेभ्यो मुदा दत्त्वा ब्रह्मा लोकपितामहः ।  
 तूष्णीमास्ते ततस्तेऽपि चक्रुर्ब्रह्मनिदेशतः ॥  
 तस्माद्विंसाकरं विप्रो न गृह्णीयात् कदाचन ।

शम्भुरहस्ये,—

हिरण्याश्वरथं यस्तु द्विजो गृह्णाति भूपतेः ।  
 सोऽरण्ये निर्जने देशे ऋत्विग्भिः सह राक्षसः ॥  
 यावद्ब्रह्माऽसृजद्विष्वं तावद्राक्षसदेहवान् ।  
 तस्यैवं निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥  
 वसुलक्षजपाद्वापि नियतेनाऽभिषेकतः ।  
 अष्टमांशव्ययेनाऽपि प्रायश्चित्तविधानतः ॥  
 तदन्ते वपनं प्रोक्तं पुनः संस्कारमर्हति ।  
 एवञ्चेच्छुद्धिमाप्नोति प्रायश्चित्तेन भूयसा ॥

(१) क्रीतपुस्तके अयं पाठो नोपलब्धः ।

(२) हिंसाकरमिमं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) गृह्णन् नराधिपात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अन्यथा ते न शुद्धाः स्युर्न सम्भाष्याः कदाचन ।  
ब्रह्म सदस्य-द्वारस्थानां ऋत्विजां पूर्ववत् प्रायश्चित्तं वेदितव्यं,  
पुनः संस्कारः पूर्ववत् ।

इति हेमाद्रौ हिरण्याश्वरश्चप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ हेमहस्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

हिरण्यहस्तिनं धृत्वा पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
यो विप्रः 'प्रतिगृह्णाति राज्ञो दानार्थिनो दृपः ॥  
तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति दशलक्षजपादृते ।  
लक्षहोमेन कुष्माण्डैः शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

ब्रह्मवैवर्ते,—

हिरण्यहस्तिनं भूपाद् द्विजो यो लोभमोहितः ।  
पुण्यकालेषु पुण्येषु तीर्थेष्वायतनेषु च ॥  
प्रतिगृह्णाति<sup>१</sup> वै लोभाद् अकृत्वा निष्कृतिं पृथक् ।  
सोऽरण्ये निर्जले देशे राक्षसोभवति ध्रुवं ॥

(१) लोहलोभेन इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिगृह्णतु ततो लोभात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तस्येह निष्कृतिर्नास्ति नवलक्षजपादृते<sup>१</sup> ।  
 लक्षहोमेन कुष्माण्डैः शुद्धिमाप्नोति<sup>२</sup> 'दैहिकीम्' ॥  
 अष्टमांशव्ययेनाऽपि प्रायश्चित्तविधानतः ।  
 एतेन शुद्धिमाप्नोति अशुद्धोऽप्यन्यथा द्विजः ॥

इति ।

देवीपुराणे —

हेमहस्तिरथं धृत्वा विप्रोयदि विमोहितः ।  
 निशाचरत्वमाप्नोति ऋत्विग्भिः सह पार्थिव ! ॥  
 निशाचरादिमुक्तः स्यान्<sup>३</sup> नवलक्षजपादिह ।  
 लक्षहोमेन कुष्माण्डैः शुद्धोभवति निश्चयः ॥  
 केशानां वपनं कृत्वा पुनः संस्कारमाचरन् ।  
 तदर्द्धं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसःपतेः ॥  
 तदर्द्धं द्वारपालानां जापकानां तदर्द्धतः ।  
 प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं हेमहस्तिरथग्रहे ॥

लिङ्गपुराणे,—

पुरा देवासुरे युडे निर्मितं विश्वकर्मणा ।  
 हेमहस्तिरथं दिव्यमारुह्य प्रजापतिः ॥  
 जिगाय राक्षसान् सर्वान् हेमहस्तिरथेन वै ।  
 हित्वा लोकं प्रपूर्णत्वाद् दृष्ट्वा कथमनुत्तमम् ॥

(१) जपादिह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दैविकीं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अभृत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



वभाषे देवतामध्ये योवा कोवा भुवःस्थले ।  
 पूजयित्वा द्विजाग्राय दत्त्वा मां प्रतिपद्यते ॥  
 इतीरयित्वा तं दिव्यं दत्तवान् कृपया तदा ।  
 तदा प्रमृति तदयानं नृणां पापहरं महत् ॥  
 पूजयित्वा द्विजाग्राय योदद्यात् स प्रजापतिः ।  
 तं 'गृह्णाति द्विजो यस्तु तस्य पापं महत्तरम् ॥  
 तस्यैव निष्कृतिरियं सर्वपापप्रणाशिनी ॥

इति हेमाद्रिविरचिते हिरण्यहस्तिरथप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ पञ्चलाङ्गलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

शिवपुराणे,—

पुण्यक्षेत्रे पुण्यकाले राजा धर्मपरायणः ।  
 लाङ्गलं वाऽथ पञ्चैव आत्मदोषोपशान्तये ॥  
 कुर्याद्यदिह पूतात्मा पापादस्मात् प्रमुच्यते ।  
 तत्र ज्ञात्वा द्विजोयश्च लोकद्वयविगर्हणम् ॥  
 लाङ्गलं प्रतिगृह्णीयात् अक्षं वा पञ्च वाऽथवा ।  
 ऋत्विग्भिः सह दुष्टात्मा खिलभूतेऽजलेऽजने ॥



सहस्राब्दं चरेद् रक्षः स्मरन् जन्माऽऽत्मनः सदा ।  
 लाङ्गलं यो द्विजो गृह्णन् राज्ञः कर्माधिकारिणः ॥  
 स भवेन्निर्जने घोरे सहस्राब्दं भवेत् तरौ ।  
 राजन् आकल्पपर्यन्तं निष्कृतिर्नास्ति कुत्रचित् ॥  
 दशलक्षजपाद् देव्याः कुत्र दृष्टा महर्षिभिः ।  
 प्रधानत्यागमात्रेण यागार्थं दक्षिणां वहन् ॥  
 तदर्थं मुनिभिः प्रोक्तं प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।  
 एतद् दक्षिणामात्रप्रतिग्रहविषयं प्रधानत्यागाभावे लक्षजपात्  
 शुद्धिः ।

शिवधर्मः,—

लाङ्गलं 'यदि गृह्णीयात् मुखजो भोगलोलुपः ।  
 तस्येह निष्कृतिर्नास्ति दशलक्षजपादृते ॥

एतदशक्तौ पक्षान्तरमाह,—

वशिष्ठसंहितायां—

लाङ्गलं मुखजो धृत्वा पञ्च वा ह्येकमेव वा ।  
 तस्य या निष्कृतिर्वक्ष्ये शृणु नान्यमनाः प्रभो ! ॥  
 दशलक्षजपाद् वाऽथ प्रयुतं वा ऽभिषेचनम् ।  
 चतुर्भागव्ययं वाऽपि यज्ञं वा सर्वदक्षिणम् ॥  
 'कुर्यात्पापविशुद्ध्यर्थं परैद्युर्वाऽन्यदाऽपि वा ।  
 मार्त्तण्डस्योदयादब्ध्वाक् स्नानं कृत्वा यथार्हणम् ॥

(१) देवि इति लेखितपुस्तकपाठः चैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) एतत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



नित्यकर्म समाप्याऽऽशु यावत् सूर्योदयो भवेत् ।  
 तावद् गत्वा जलाधारं नदीं पुष्करिणीमपि ॥  
 कण्ठदध्नजले स्थित्वा स्मरन् नारायणं विभुम् ।  
 मुखमुदृत्य मार्त्तण्डं पश्यन्नुत्तानपाणिकः ॥  
 अघमर्षणसूक्तं च जपन् पापविमुक्तये ।  
 यावदस्तं गतो भानुस्तावत् कालं जपेत् सुधीः ॥  
 मध्ये माध्याह्निकं कृत्वा ब्रह्मयज्ञञ्च तर्पणम् ।  
 मनसा देवमाराध्य पुनर्गत्वा जलं जपेत् ॥  
 प्रभातायां तु 'शर्व्व्यां पूर्व्ववद् व्रतमाचरेत् ।  
 एवं तु मण्डले पूर्णे विरजाहोममाचरेत् ॥  
 उपोष्य दिनमेकञ्च पञ्चगव्यं पिबेत्ततः  
 सायं सन्ध्यामुपासित्वा सायं होममनन्तरम् ॥  
 मौनं त्यक्त्वा तदा राजन् फलाहारं समाचरेत् ।  
 उत्तमं यावकं भक्षेद्यथा मुह्यभक्षणम् ॥  
 अधःशायी भवेत्तत्र कर्त्तुं पापमनुस्मरन् ।  
 ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् तेभ्योदत्त्वा च दक्षिणाम् ।  
 पश्चात् स्वयं प्रभुञ्जीयात् तद्विप्रानुज्ञया सह ॥

“सर्व्वेषु वा येषु लोकेषु मृत्युर्वीन्वायत्ता” इत्यघमर्षणसूक्तम् ।  
 श्रीपासनाग्नी तिलैः सक्तुभिर्वा जुहोति, “सरसासी”ति मन्त्रै-



विरजाहोमः । पञ्चगव्यं ब्रह्मकूर्चविधानं एतत् प्रायश्चित्त-  
माचार्यस्य । सर्वेषां पुनः प्रायश्चित्तमाह ।

मात्स्ये—

ब्रह्मा सदस्यतिशोभौ तदर्द्धं भागमर्हतः ।  
द्वाःस्थानां च तदर्द्धं स्यात् तदर्द्धमितरेषु वै ॥  
प्रायश्चित्तविधिशेषां नाऽन्यथा गतिरस्ति हि ।

प्रायश्चित्ताकरणे दोषमाह

गौतमः—

तुलायां गोसहस्रेषु लाङ्गले चैव ऋत्विजः ।  
प्रायश्चित्तमकुर्वन्तो न तैः सम्भाषणं चरेत्<sup>१</sup> ॥  
न तेषां दर्शनं कुर्याद् एतैः सह न संविशेत् ।  
महादानेषु सर्वेषु प्रायश्चित्तमुदोरितम् ॥  
तदकृत्वा द्विजोगर्वाच्चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ।  
न योग्यो हव्यकव्येषु न सम्भाष्यः<sup>२</sup> कदाचन ॥  
सोऽनुभूय महत्यापं मृतेऽहनि परत्र च ।  
इह जन्मनि चाण्डालः परत्र ब्रह्मराक्षसः ॥  
तस्मादेवं प्रकर्त्तव्यं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तमैः ।

इति हेमाद्रौ लाङ्गलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) विना इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सम्भाव्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथेदानीं धरादानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

यो राजा मण्डलं रक्षेद्धर्मशास्त्रानुसारतः ।  
सोऽपि स्वर्गमवाप्नोति किमन्यैर्दानसागरैः ॥  
तथापि कुरुते पापं विप्रग्रामेषु सर्व्वदा ।  
देवद्रोहं जनद्रोहं विप्रद्रोहं महत्तरम् ।  
चाण्डालादपि सर्व्वत्र धनार्जनमितौरितम् ।  
दुष्टदण्डश्च सर्व्वत्र तथा निष्ठुरभाषणम् ॥  
न दानं पुण्यकालेषु 'रागसेवा हि सर्व्वदा ।  
व्रतत्यागोऽसदाचारो नृषु वित्तार्जनं महत् ॥  
ब्रह्महत्यादिपापानां<sup>१</sup> मनसा चिन्तनं<sup>२</sup> सदा ।  
एवमादीनि पापानि राज्ञः सन्ति दिने दिने ॥  
एतत्पापविशुद्ध्यर्थं धरादानं समाचरेत् ।  
अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैर्यो राजा पुण्यसङ्गमे ॥  
विप्रसात् कुरुते यत्तु तस्य चान्तो न विद्यते ।  
धरामेतां तु योग्यहन् पुण्यकालेषु पर्व्वसु ॥

---

(१) रज्यते वज्रि सर्व्वदा इति क्रीतपुस्तकपाठः रजते वज्रि इति लेखित-  
पुस्तकपाठः ।

(२) पापानि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) चिन्तयन् सदा इति लेखित क्रीतपुस्तकपाठः ।



तस्य विप्रस्य नाऽस्तीह न पुनर्जन्म राक्षसात् ।  
 ब्रह्मोपदेशः कर्त्तव्यः सावित्रीदानमेव च ॥  
 ततः परं जपेद् देव्याः दशलक्षमनन्दितः ।

पद्मपुराणे —

धरामभ्यर्चितां राज्ञो धर्मशास्त्रानुसारतः ।  
 यो विप्रः प्रतिगृह्णीयाद् धनलोभपरायणः ॥  
 यज्ञादिकमकृत्वा <sup>१</sup>स भवति ब्रह्मराक्षसः ।  
 दशलक्षजपाद् देव्यास्तस्य निष्कृतिरीरिता ॥  
 पुनःसंस्कारविधिना गायत्रीं वेदमातरम् ।  
 गृह्णीयाद् विप्रमुख्येभ्यस्ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

ब्रह्माण्डे---

अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैर्धरित्रेण महीभुजा ।  
 दीयते विप्रवर्याय <sup>२</sup>सर्वपापानुत्तये ॥  
 राज्ञा दत्तां धरामेनां निष्कारणतया द्विजः ।  
 पुण्यकालेषु गृह्णीयाद् यो यत्रैव महास्थले ॥  
 तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति कदाचिद् ब्रह्मराक्षसात् ।  
 निष्कृतिस्तस्य कथिता दशलक्षजपादिह ॥  
 उपदेशः पुनः कार्यो ब्रह्मणो ब्रह्मलोकभाक् ।  
 जप्तव्या तेन सावित्री पुनः संस्कारमादितः ॥

(१) चेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विप्रवर्येभ्य इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।



अन्यथा स न योग्यः स्यादव्यक्त्येषु कर्मसु ।  
 असम्भाष्यो ह्यपांक्त्यो न तेन सह संविशेत् ॥  
 सदस्यब्रह्मणोरङ्गं दास्यानाञ्च तदर्द्धकम् ।  
 तदर्द्धं जापकानाञ्च होतॄणां च तथैव च ॥  
 मार्जनं मर्ज्जदानानामाचार्याणां स्वयम्भुवा ।  
 उक्तं पुरा देवमध्ये लोकस्याऽस्य हितैषिणा ।  
 अन्यथा मृत्युमाप्नोति कुर्यादेवं प्रयत्नतः ॥

इति हेमाद्रौ धरादानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं विश्वचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः,—

पुरा 'स्वयम्भुवा राजन् लोकानां हितकाम्यया ।  
 विश्वचक्रमिदं सृष्टं राज्ञां पापापनुत्तये ॥  
 स्थावरा जङ्गमाश्चैव देवराक्षसपन्नगाः ।  
 यक्षाः पिशाचाः कुष्माण्डा विश्वचक्रं समाश्रिताः ॥

(१) प्रतिग्रहा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) स्यर्षमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



कालमृत्युहरं चेदं सर्वपापप्रणाशनम् ।  
 राज्ञां श्रेयस्करं दिव्यं विश्वचक्रमिदं द्विजाः ॥  
 निर्माय लोकं गतवान् हंसारुदृशतुर्मुखः ।  
 मान्धातुप्रमुखान् दृष्ट्वा क्षितिपालान् महौजसः ॥  
 ददौ परमया भक्त्या विप्रेभ्यो दीयतामिति ।  
 इत्युक्त्वा तांस्तदा दत्त्वा पुनर्लोकं जगाम ह ॥  
 तदा प्रभृत्यदश्चक्रं पूज्यते राजभिः सदा ।  
 दीयते विप्रवर्येभ्यः सर्वश्रेयोपपत्तये ॥

कूर्मपुराणे,—

योराजा ब्रह्मणा दत्तं विश्वचक्रं महत्तरम् ।  
 अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैर्धर्ममार्गोपदेशतः ॥  
 विप्राय वेदविदुषे 'ददाति पुण्यसङ्गमे ।  
 तस्य पुण्यस्य लेशं वा मया वक्तुं न शक्यते ॥  
 कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च ।  
 स्थित्वा स ब्रह्मणो लोके पुनर्भुवमुपागतः ॥  
 चक्रवर्त्तित्वमाप्नोति किमन्यैर्बहुभाषितैः ।

भारते,<sup>१</sup>—

एतादृशं विश्वचक्रमर्चितं राजवल्लभैः ।  
 दत्तं<sup>२</sup> विप्रोऽनुगृह्णीयात् यदि निष्कारणादिह ॥

(१) दत्त्वाचेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) महाभारते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) दत्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



न तस्य पुनरावृत्ती राक्षसाद् ब्रह्मनामकात् ।  
 कथञ्चिन् निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥  
 अरण्ये निर्जले स्थित्वा मण्डले<sup>१</sup> वायुपूरितः<sup>२</sup> ।  
 तत्र त्रिषवणं स्नानं कुर्वन् सन्ध्यादिकाः क्रियाः ॥  
 मार्त्तण्डोदयमारभ्य यावत् सूर्योलयं गतः ।  
 तावज्जपेच्च सावित्रीं तिष्ठन्नुत्तानपाणिकः ॥  
 रवौ मध्यं गते तत्र माध्याह्निकमथाऽऽचरेत् ।  
 पुनर्जपेच्च सावित्रीं यावदस्तं गतोरविः ॥  
 तावद्विरम्य नियमादवभक्तौ वायुभक्तकः ।  
 तदग्रक्तौ<sup>३</sup> फलाहारः केवले स्थण्डिले स्वपेत् ॥  
 एवं मण्डलमावर्त्य तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ।  
 विश्वचक्रं द्विजोधृत्वा निर्निमित्तेन लोभतः ॥  
 अरण्ये निर्जले देशे राक्षसोऽभूद्भयङ्करः ।  
 न तस्य पुनरावृत्तिः सहस्राब्दान्महाभयात् ॥  
<sup>४</sup>कथञ्चिन् निष्कृतिर्दृष्टा वसिष्ठेन महात्मना ।  
 चतुर्भागव्ययं कृत्वा प्रायश्चित्तविधानतः ॥  
 पुनः संस्कारविधिना पुनः संस्कारमाचरेत् ।  
 ब्रह्मोपदेशं सावित्रीमभ्यसेद्विजपुङ्गवात् ॥

(१) मण्डलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वायुपूरितैः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तदग्रक्त इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तेषां वै इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रयुतेनाऽभिषेकेण निष्कृतिस्तस्य नाऽन्यथा ।  
 तदर्थं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसस्पतेः ॥  
 द्वास्थानां जापकानां च तयोरर्घं प्रकल्पयेत् ।  
 विश्वचक्रं महद्भूतं सर्वपापहरं परम् ॥  
 मृत्युदं तद्रहीतृणां दातुः श्रेयःप्रदं सदा ।  
 प्रायश्चित्तमिदं विप्र<sup>१</sup> विश्वचक्रधृतां नृणाम् ॥  
 एतेन शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरौरिता ।

इति ।

इति हेमाद्रौ विश्वचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं कल्पलताप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

कल्पवल्ली सुरैः पूज्या उद्भवा क्षीरसागरे ।  
 विष्णुप्रियकरी नित्यं सर्वथा सर्वदा नृणाम् ॥  
 लक्ष्मीरूपामिमां वल्लीं पूजयित्वा नराधिपः ।  
 पुण्यकालेषु संक्रान्तौ व्यतीपाते च वैधृतौ ।  
 विप्रायाऽध्यात्मविदुषे यो<sup>२</sup> दद्यात् स जनार्दनः ॥

(१) विप्रः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) योहि दद्याज्जनार्दनः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



महानारदीये—

लतामिमामब्धिभवामर्चयित्वा जनाधिपः ।  
 पुण्यकालेषु तीर्थेषु विप्रसात् कुरुते यदि ॥  
 षष्टिकोटिजनैर्युक्तो मातृतः पितृतस्तथा ।  
 विशुल्लोकं समासाद्य स्थित्वा तत्र चतुर्युगम् ॥  
 पुनर्भुवमुपागम्य धनवान् क्षितिपालकः ।  
 ब्रह्मज्ञानमुपागम्य पञ्चा<sup>१</sup>न्निर्वाणमाप्नुयात् ॥

विष्णुरहस्ये—

दत्तामिमां कल्पलतां राजभिः पूजितां शुभाम् ।  
 यो गृह्णीयाद् द्विजःकामात् <sup>२</sup>स भवेद् राक्षसोवने ॥  
 यावत् तिष्ठन्ति ज्योतींषि तावत्तिष्ठन्ति राक्षसाः ।

लिङ्गपुराणे—

इमां कल्पलतां दिव्यां पूजितां राजवल्लभैः ।  
 दत्तां पर्वसु कालेषु द्विजो यस्तां प्रतिग्रहेत् ॥  
 न तस्य पुनरावृत्तिश्चिरादै ब्रह्मराक्षसात् ।  
 तद्ब्रह्मा <sup>३</sup>तत्सदस्यश्च तद्वास्या जापका अपि ॥  
 राक्षसाः क्रूरकर्माणि भवन्त्यपि हि तत्क्षणात् ।  
 सहस्रञ्च तदर्धञ्च तदर्धं वै यथाक्रमम् ॥

कल्पलताप्रतिग्रहप्रायश्चित्तं कल्पतरुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तवद्देदितव्यम् ।

इति हेमाद्रौ कल्पलताप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) निवृत्तिं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः । (२) सदस्यैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) भवेद् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथेदानीं सप्तसागरप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

गरुड़पुराणे—

लवणेषुसुरामर्षिर्दधिचीरोदकार्णवाः ।  
जम्बूद्वीपश्च प्लक्षश्च शाल्मलीद्वीप एव च ॥  
कुशद्वीपश्च क्रौञ्चश्च शाकः पुष्करएव च ।  
एते द्वीपाः समुद्राणां मध्ये तिष्ठन्त्यनामयाः ॥  
प्लक्षद्वीपे महापुण्ये मेरुश्च हिमवान् गिरिः<sup>१</sup> ।  
(मेरुश्च हिमवान् शैलः) कैलासो गन्धमादनः ।  
महेन्द्रो मलयः शैलस्त्रिशूलौयो महान् गिरिः ॥  
त एते सप्तशैलाश्च लवणोदधिमध्यगाः ।  
जम्बूद्वीपे मनुष्या ये वसन्त्यत्र निरामयाः ॥  
प्लक्षद्वीपे महापुण्ये तुरङ्गास्याः वसन्त्यधः ।  
तथैव<sup>२</sup> शाल्मलीद्वीपे किन्नराः सन्ति कामिनः ॥  
कुशद्वीपे महाराज वसन्तीच्छाविहारिणः ।  
क्रौञ्चद्वीपे महापुण्ये तिष्ठन्ति पितरस्तथा ॥  
शाकद्वीपे महापुण्ये विश्वेदेवा वसन्त्यधः<sup>३</sup> ।  
वसन्ति पुष्करद्वीपे देवाः साग्निपुरोगमाः ॥

---

(१) हिमवान् कलात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

( ) अयं पाठः क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(२) तदेव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) वसन्त्यद इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मर्त्या 'अशनमिच्छन्ति प्रत्यहं मुनिवल्लभ ।  
तस्मान्नाऽस्ति प्रभावश्च निग्रहानुग्रहौ नृणाम् ॥  
तुरङ्गास्यास्तथा राजन् वारे वारेऽन्नकाङ्क्षिणः ।  
किन्नराः पक्षमात्रेण अश्रन्त्यन्नं सकृत्सकृत् ॥  
कुशद्वीपगतानां तु विंशत्या दिवसैर्दिनम् ।  
क्रौञ्चद्वीपे तु पितरः सकृन्मासानुभोजिनः ॥  
शाकद्वीपे तु शृणु मे विश्वेदेवा महाबलाः ।  
विप्रश्चाक्षेभु भुञ्जन्ति आहार्या यत्र जन्तवः ॥  
देवाश्च पुष्करे द्वीपे प्रतिवर्षं प्रभोजिनः ।  
एते समुद्राः पुण्यार्हास्तद्दानं पृथिवीपतिः ॥  
निष्कामनतया कुर्वन् स नृपः पुरुषोत्तमः ।  
सूर्यसोमोपरागेषु पुण्यकालेषु पर्वसु ॥  
पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे यः कुर्यात् पृथिवीपतिः ।  
अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैः सागरान् सप्त संख्यया ॥  
कुलमुद्धृत्य सहसा दशपूर्वं दशावरम् ।  
वेकुण्ठे वासमासाद्य तिष्ठत्याचन्द्रतारकम् ॥  
मुखजोधनलोभाद् यो गृह्णीयात् सप्तसागरम् ।  
कुलेन सह<sup>१</sup>युक्तः स गच्छसोऽभूदनेऽजले ॥

(१) दर्शनमिच्छन्ति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) धनलोभेन यो गृह्णन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कुलेन सहसायुक्त इति लेखितपुस्तकपाठः ।



यागार्थं दक्षिणां गृह्णन् प्रधानत्यागमाचरन् ।  
 यागे सर्व्वं व्ययं कुर्यान्नाऽस्ति तस्य पिशाचता ॥  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा इह लोके परत्र च ।  
 पूतोभवति राजेन्द्र नाऽत्र कार्या विचारणा ॥

लिङ्गपुराणे—

योविप्रः पृथिवीपालाद्गृह्णीयात् सप्तसागरम् ।  
 कुलेनैकेन संवीतो राज्ञसोऽभून्महावने ॥  
 अशेषयित्वा तद्व्यं यागं कुर्याद्विजोयदि ।  
 तस्य नाऽस्ति पिशाचत्वं इह लोके परत्र च ॥

नागरखण्डे—

यो विप्रः पुण्यकालेषु राज्ञा दत्तं सुखामये ।  
 सप्तसागरदानञ्च प्रतिगृह्णाति<sup>१</sup>नातुरः ॥  
 राज्ञसत्वं भवेत्तस्य न पुनर्जन्म राज्ञमात् ।  
 तद्दोषपरिहारार्थं कुर्याद्वादशतप्तकान्<sup>२</sup> ॥  
 तस्योपनयनं भूयोगायत्रीदानमेव च ।  
 कुर्याद्ब्रह्मोपदेशञ्च पुनःसंस्कारमार्गतः ॥

गारुडपुराणे—

विप्रोयदिह नृदात्मा गृह्णीयात् सप्तसागरम् ।  
 स सद्यः पतितोभूयात् पुनःसंस्कारमर्हति ॥

(१) प्रतिगृह्णधनातुरः इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) द्वादश तप्तमाचरेद् इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।



तद्दोषप्रशमायाऽलं कुर्याद्वादशलक्षकम् ।  
 चतुर्भागव्ययेनाऽपि प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
 तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेव च ।  
 पुनः संस्काररूपेण कुर्याद्ब्रह्मोपदेशकम् ॥  
 व्यवहारसमोभूयादिह लोके परत्र च ।  
 ब्रह्मा मत्स्यस्तस्याङ्गं प्रायश्चित्तमिहाऽर्हतः ॥  
 तयोर्दन्तु द्वारस्थानां जापकानां तथा क्रमात् ।  
 प्रायश्चित्तमिदं कार्यं सागराणां प्रतिग्रहे ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति पतितोऽभून्न संशयः ।  
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

इति हेमाद्रौ सप्तमागरप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथदानीं चर्मधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

वायुपुराणे,—

पुरा चर्मसयी धेनुर्निस्मिता विश्वकर्मणा ।  
 सर्वपापहरी पुण्या भोगमोक्षप्रदायिनी ॥



तामर्चयित्वा 'यो राजा पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
 दद्यात्तां विधिवद्विप्रवर्यायाऽध्यात्मवेदिने ॥  
 स राजा कुलसंयुक्तो मातृतः पितृतस्तथा ।  
 यावन्ति धेनुरोमाणि तावत्कालं वसेद्विवि ॥  
 ततस्तु भुवमासाद्य चक्रवर्त्तित्वमागतः ।  
 ततो ज्ञानमवाप्स्यैव ब्रह्मणा सह मोदते ॥

देवोसारे,—

धृत्वा चर्ममयीं धेनुं पुण्यकाले च राजभिः ।  
 दत्तां विप्रोऽनुगृह्णीयाद्धनभोगपरायणः ॥  
 सप्तजन्मसु राजेन्द्र विपिने 'निर्ज्जनेऽजले ।  
 कृतं पापमनुस्मृत्य स भवेद्ब्रह्मराक्षसः ॥  
 तस्य निष्कृतिरद्यापि देव्या द्वादशलक्षतः ।  
 तस्योपनयनं भूयः पुनः संस्कारमर्हति ॥

कूर्मपुराणे—

योधर्त्ता चर्मणोधेनुं द्विजोदत्तां नृपात्मजैः ।  
 पूजितां पुण्यकालेषु न भूयोराक्षसान्नरः<sup>३</sup> ॥  
 तस्य वै निष्कृतिर्दृष्टा देव्या द्वादशलक्षतः ।  
 ब्रह्मोपदेशः कर्त्तव्यो गायत्रीदानमेव च ॥

(१) गां राजा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) निर्ज्जने वने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) राक्षसोन्नर इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पुनः संस्कारमात्रेण पूतोभवति चोभयोः ।

अन्यथा पतितं विद्यान्नालपेत्तं कदाचन ॥

पराशरः,—

मुखजो योऽनुगृह्णीयाद् धेनुं 'दत्तां नृपात्मजैः ।

अहणादिषु कालेषु पुण्यतीर्थेषु तेषु च ॥

तस्य वै<sup>१</sup> निष्कृतिर्नाऽस्ति चतुर्भागव्ययादिह ।

प्रायश्चित्तविधानेन शुद्धोभवति पापतः ॥

देव्या द्वादशलक्षेण नियतेनाऽभिषेकतः ।

शुद्धिं परामवाप्नोति पुनः संस्कारतः सुधीः ॥

ब्रह्मोपदेशोगायत्रीप्रदानं विरजाहोमश्चाऽत्रैव दर्शितः । ब्रह्म-

सदस्योस्तद्वर्द्धम् । पूर्व्ववत् ऋत्विजामपि । अपमृत्युत्तरण-

मार्जनमत्राऽपि योज्यम् ।

तथा गारुडपुराणे,—

तुलायां गोमहस्त्रे च पञ्चलाङ्गलसंयुते ।

विश्वचक्रे चर्मधेनौ महाभूतघटग्रहे ॥

हेमहस्तिरथै चैव आचार्यं मृत्युराविशेत् ।

तस्मात् तन्मार्जनं कर्म मृत्युत्तरणहेतवे ॥

तदानीं वाऽपर्य्युर्वा पक्षे वा पञ्चमेऽहनि ।

(१) धृत्वा इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) तस्यैव इति लेखित पुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनः संस्कारमर्हति ॥  
 व्यवहारक्षमोभूयाद् उभयोर्लोकयोरपि ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति न मुक्तिर्ब्रह्मराक्षसात् ॥

इति हेमाद्रौ चर्मधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं महाभूतघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः,—

महाभूतघटस्याऽस्य प्रायश्चित्तमिदं शृणु ।  
 येन पूतोभवेद् विप्रस्तदहं कथयामि ते ॥  
 तं च भूतघटं गृह्णन् विप्रोभवति राक्षसः ।  
 सहस्राब्दं वसेद्दुष्टोरे निर्जले निर्जने वने ॥  
 तुलादीनि च दानानि योराजा कर्तुमुद्यतः ।  
 सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वलोकमवाप्नुयात् ॥  
 पूजितैर्भूमिपालैस्तं महाभूतघटं शुभम् ।  
 गृह्णाति<sup>३</sup> मुखजालोभात् तस्य नाऽस्तीह निष्कृतिः ॥

(१) भवन् इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) वने इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(३) धृत्वा य इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



पुरा वृत्रवधे राजन् विड़ोजा विप्रहृत्यया ।  
 पौडितः शरणं गत्वा धिषणं स्वपुरोहितम् ॥  
 उवाच वचनं पश्चात् तद्दोषोपरमाय वै ।  
 गुरुस्तं पुनरप्याह लोकानुग्रहकाम्यया ॥  
 राजानः क्रूरकस्मीणोराज्यार्थं धनलोभतः ।  
 मातरं पितरं पुत्रं घ्नन्ति वा भ्रातरं तथा ॥  
 किं न कुर्वन्ति कामान्धाः किं न कुर्वन्ति पापिनः ।  
 किं न कुर्वन्ति भूपालाः किं न कुर्वन्ति योषितः ॥  
 तस्मादेतद्विशुद्धार्थं तथा राजन्यशेखर ! ।  
 कर्त्तव्यः पुण्यकाले तु महाभूतघटः सकृत् ॥  
 यस्याऽऽचरणमात्रेण मुक्तोभवति किल्बिषात् ।  
 तथेति वृत्रहा सद्यः पुण्यकाल उपागते ॥  
 यत् प्रोक्तं गुरुणा 'पूर्वं' विधिना तच्चकार ह ।  
 विप्रहृत्या गता सद्यः किमन्यैरुपपातकैः ॥

मत्स्यपुराणे,—

पुण्यकालेषु जन्मर्क्षे यो राजा धर्मवत्सलः ।  
 महाभूतघटं सम्यगर्चयित्वा द्विजन्मने ॥  
 दद्यान्निष्कामतो राजन् तस्य नाऽस्ति पुनर्भवः ।



लिङ्गपुराणे—

अर्चितं पुण्यकालेषु भूपालेन महात्मना ।  
 योगृह्णाति द्विजः<sup>१</sup> सोऽपि अरण्ये ब्रह्मराक्षसः ॥  
 लक्ष्मात्रं जपेद्देव्याः संख्यया परिशुद्धये ।  
 तस्योपनयनं भूयः पुनः संस्कारपूर्वकम् ॥  
 नियुतेनाऽभिषेकेण चतुर्भागव्ययेन वा ।  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति ब्रह्मराक्षसदेहतः ॥

मत्स्यपुराणे,—

अर्चितं पुण्यकालेषु पर्वसु संक्रमेषु च ।  
 महाभूतघटं विप्रोगृह्णीयाद्धर्ममार्गतः ॥  
 तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति गायत्र्या लक्षसंख्यया ।  
 उपायनं<sup>२</sup> पुनः कुर्यात् पुनः संस्कारमेव च ॥  
 इह लोके परत्रैव शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ।  
 तद्वर्जं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसस्पतेः ॥  
 द्वास्थानां जापकानां च तयोरर्द्धं प्रकल्पयेत् ।  
 महाभूतघटस्याऽस्य प्रायश्चित्तमिदं द्विजः ॥  
 यः कुर्याद्विजशार्दूल ! सोऽपि मुक्तो न संशयः ।  
 पुनः संस्कारहीनस्य प्रायश्चित्तं तु निष्फलम्<sup>३</sup> ॥

(१) यो गृह्णाति पृथ्वीजः इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पुण्यकालेन पुण्यकालेषु पर्वसु । इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) उपनयनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) संस्कारहीनेन प्रायश्चित्तेन निष्फलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



ब्रह्महत्यायुते विप्रे न पुनन्तीह सत्क्रियाः ।  
 अलं कृतं प्रयत्नेन सुराभाण्डमिवाऽपगाः ॥  
 प्रायश्चित्ते कृते राजन् सन्तुष्टाः सर्वदेवताः ।  
 ऋषयः पितरो देवाः सन्तुष्टाः स्युर्नसंशयः ॥  
 सन्तुष्टेष्वेषु सर्वेषु सन्तुष्टोऽभूज्जनार्दनः ।  
 महापातकजालानि प्रायश्चित्तं दहत्यहो ॥  
 दुरन्नं दुष्टसंसर्गं दुर्दानं दुष्प्रतिग्रहम् ।  
 प्रायश्चित्तं दहत्याऽऽशु तूलराशिमिवाऽनलः ॥  
 प्रायश्चित्तविहीनेन द्विजेन विदुषा मुने ।  
 तेन कार्यं किमस्तीह तस्य जन्म निरर्थकम् ॥

इति हेमाद्रौ महाभूतघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं तुलापुरुषादिदानेष्वर्चाचार्य्यब्रह्मर्त्विजां  
 अपमृत्युत्तरणमार्जनमाह—

स्कन्दपुराणे,—

तुलापुरुषे लाङ्गले गोमहस्रप्रतिग्रहे ।  
 विश्वचक्रे चर्मधनौ सप्तसागरसंग्रहे ॥



महाभूतघटग्राहे आचार्यं मृत्युराविशेत् ।

१तदानीमपरेद्युर्वा पञ्चमे पक्षसंज्ञिते ॥

मासे वाऽथ त्रिमासे वा वत्सरे पूर्णतां गते ।

तस्मादेतत् प्रकर्त्तव्यं अपमृत्युपशान्तये ॥

भविष्योत्तरे,—

राज्ञां<sup>१</sup> पापानि यावन्ति ब्रह्महत्यायुतानि च ।

सप्तजन्मार्जितानीह मिलित्वा तानि सर्व्वशः ॥

पापान्येतानि राजेन्द्र पिशाचाः सम्भवन्त्यतः ।

खेचरी दुर्भरी भृङ्गी खेटरी लम्बनस्तनी<sup>२</sup> ॥

पञ्चैतानि<sup>३</sup> महाभूता आचार्यनिधनप्रदाः ।

राज्ञः श्रेयस्करा नित्यं आयुर्वर्द्धनकारिणः ॥

तुलासहस्रे गोदाने<sup>४</sup> लाङ्गले सप्तसागरे ।

विश्वचक्रे चर्मधेनौ महाभूतघटे तथा ॥

दानेष्वेतेषु कर्त्तारं त्यक्त्वाऽऽकाशमुपाश्रिताः ।

आचार्यं प्रविशन्त्येनं ब्राह्मणं वा नरेश्वर<sup>५</sup> ॥

(१) इदानीं वा परेद्युर्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) राज्ञ इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) लवस्तनी इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) एताश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) तुलासहस्र गोदानं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(६) नरेश्वरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



वायुरूपेण सहसा हतभीत्या जनागमे ।

'तत्पत्नी वा सुतोवाऽपि स्वयं वा मृत्युमाप्नुयात् ॥

तत्परिहारमाह,—

मार्कण्डेयपुराणे,—

तदानीं वा परेद्युर्वा अपरेद्युरथाऽपि वा ।

स्नात्वा शुचिरलङ्घ्य दर्भपाणिर्जितेन्द्रियः ॥

आचार्यं वरयेत् प्राज्ञमपमृत्युपशान्तये ।

प्राङ्मुखः स्वयमासीनः द्वितीयोदङ्मुखस्ततः ॥

कांस्यपात्रं पञ्चपलं तिलैरापूर्य्य यत्नतः ।

तस्योपरि लिखेत्पद्मं कलशं तत्र निक्षिपेत् ॥

वरुणं पूजयेत्तत्र गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।

“इमं मे वरुण” इति पूजामन्त्रः ।

कुशाग्रैर्वारुणैर्मन्त्रैरक्षौघैरेभिरादरात् ।

“आपोहिष्टामयो भुव” इति तिस्रः “हिरण्यवर्णा शुचयः पावका”

इति चतस्रः, “परं मृत्यो अनुपरेहीति वीरा” नित्यन्तं,<sup>१</sup> “अपमृत्यु

मपः क्षुध” मित्यनुवाकः, “मृत्यवे स्वाहे” त्वन्तं, “हिरण्यशृङ्ग”-

मित्यादि “सुवान इन्दु” रितिसूक्तं, “पवमानः सुवर्जन” इत्यनुवाकः,<sup>२</sup>

“क्षत्रिये” त्विति पञ्चभिः, नमस्कैश्चमकैश्च, “मृत्यो जहि मां जहि”

(१) तत्पुत्री वा इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) परं मृत्यो अनु ० नात् । चक्षुःक्षेत्येष्ट ० वीरान् इत्यन्तमिति तु क्रीत पुस्तकपाठः ।

(३) सहस्रशीर्षं देवं इति अनुवाकः इत्यधिक. पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्दृष्टः ।



यजमानं जहि यजमानं रक्ष मां रक्ष रक्ष स्वाहा” । “ब्रह्मघ्न राजघ्न-  
नारौघ्न मृत्यो मां जहि यजमानं जहि यजमानं रक्ष मां रक्ष  
गच्छ गच्छ स्वाहा” । “सर्वपापमय सर्वभूतमय सर्वघ्न श्रेयोघ्न  
मृत्यो मां जहि यजमानं जहि यजमानं रक्ष मां रक्ष गच्छ गच्छ  
स्वाहा” । “निशाचराणामधिप प्रेतराजन् महामृत्यो मां जहि  
यजमानं यजमानं रक्ष मां रक्ष गच्छ गच्छ स्वाहा” । “भूतप्रेत-  
ब्रह्मराक्षसशाकिनीडाकिन्यधिप महामृत्यो मां जहि यजमानं  
जहि यजमानं रक्ष मां रक्ष गच्छ गच्छ स्वाहा” ।

“भूम्यन्तरिक्षदिग्विदिग्महाकालरूप महामृत्यो मां जहि  
यजमानं जहि यजमानं रक्ष मां रक्ष गच्छ गच्छ स्वाहा” । “समुद्र  
गिरिवनयन्त्रतन्त्रमन्त्राधिप महामृत्यो मां जहि यजमानं जहि  
यजमानं रक्ष मां रक्ष गच्छ गच्छ स्वाहा” ।

( “सर्वान्तर्यामिन् सर्वमञ्चारिन् सर्वव्याधिमय महामृत्यो  
मां जहि यजमानं जहि मां रक्ष यजमानं रक्ष गच्छ गच्छ  
स्वाहा” ॥ )

इत्याथर्वणोक्ता मार्जनमन्त्राः । एतैर्यजमानं मार्जयेत् ।  
“देवस्यत्वेति” मार्जनशेषं समाप्य यजमानः पुनः स्नात्वा धौत-  
वस्त्रधरः शुचिर्नित्यकस्मीणि निर्व्वर्त्य आचार्यं परितोषयेत् ।

“कांस्यं कद्रुममुद्भूतं सर्वदेवमयं च यत् ।

कांस्यदानेन महता मम पापं व्यपोहतु” ॥

इति कांस्यदानमन्त्रः ।



“तिलाः पापहरा नित्यं विष्णोर्देहसमुद्भवाः ।

तिलदानादसाध्यं मे 'तापं नाशव केशव' ॥

इति तिलदानमन्त्रः ।

कलशो ब्रह्म-दैवत्यः कलशे विष्णुरास्थितः ।

कलशः शङ्करः साक्षाद् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

इति कलशदानमन्त्रः ।

दक्षिणाभिश्च बहुभिराचार्यं परितोषयेत् ।

( एवं प्रतिग्रहीता च कृत्वा मृत्युं तरेत्ततः ॥ )<sup>१</sup>

अन्यथा मृत्युमाप्नोति पक्षे मासेऽपि वा द्विजः ।

ततः परं विशुद्धात्मा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥

प्रायश्चित्तं ततः <sup>२</sup>कुर्यादिह लोके <sup>३</sup>सुखाप्तये ।

इति हेमाद्रौ अपमृत्युत्तरणमार्जनविधिः ।

(१) पापं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२ इदमर्द्धं क्रीतपुस्तके लोपलब्धम् ।

(३) ततः कृत्वा इति क्रीत पुस्तकपाठः ।

(४) इह लोकसुखाप्तये क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ पुनः संस्कारविधिः ।

एको भागः परिषदि भागमेकं विधायके ।  
अनुवादे भागमेकं शेषं कृच्छादिषु न्यसेत् ॥  
ततः परं विशुद्धोऽभूद् इह लोके परत्र च ।  
ब्रह्मराक्षसनिर्वृत्तिं कृत्वा यागादिकं सुधीः ॥  
पुनः संस्कारविधिना अभ्यसेद्वेदमातरम् ।  
ब्रह्मोपदेशं तत्रैव कुर्यादाचार्यवाक्यतः ॥  
ततः परं जपेद्वेदमातरं प्रत्यहं सुधीः ।  
प्रति ग्रहपरान्नेषु—विमुखोविष्णुमादरात् ॥  
चिन्तयन् वर्त्तयन् विप्रः सुखीह च परत्र च ।  
एवं कुर्याद्विजोयस्तु निष्कृतिं शुद्धमानसः ॥  
तुलाप्रतिग्रहे राजन् शुद्धोभवति नाऽन्यथा ।  
अकृत्वा निष्कृतीरेता एकां वाऽपि नरेश्वर ! ॥  
सन्ध्यादिनित्यकर्माणि पितृकार्याणि<sup>१</sup> यानि च ।  
न फलन्तीह सर्वाणि भस्मनि न्यस्तहव्यवत् ॥

१) अथ पुनः संस्कार इत्येव लेखित पुस्तकपाठः ।

२) भागाः परिषदि प्रोक्ता इति लेखित पुस्तकपाठः ।

३) पितृकर्माणि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



पुनः संस्कारमात्रेण पुनरायान्ति तानि वै ।  
अतः प्रतिग्रहीता तु आत्मदेहविशुद्धये ॥  
कुर्याद्वै विरजाहोमं पञ्चगव्यमनन्तरमिति ।

इति हेमाद्रौ तुलादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीमाचार्य्यत्विजां पुनः संस्कारमाह ।

देवलः,—

तुलायां गो सहस्रे च लाङ्गले विश्वमण्डले ।  
सप्तसागरदाने च चर्मधेनुप्रतिग्रहे ॥  
महाभूतघटे चैव आचार्य्यो यो भवेद्द्विजः ।  
स सद्यः पतितो भूयात् पुनः संस्कारमर्हति ॥  
तस्योपनयनं भूयो न कर्माहो भवेदिह ॥

मत्स्यपुराणे,—

तेषु कृतेषु द्विजीयसु कर्मस्वाचार्य्यतां व्रजेत् ।  
मन्यादिनित्यकर्माणि तस्य नश्यन्त्यधो<sup>१</sup>गतेः ॥  
अथ प्रतिग्रहस्तेषु दानेष्वेतेष्वसत्क्रिया ।  
तस्मिन् भवति राजेन्द्र दानमश्रोत्रिये यथा ॥

(१) अधोगता इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) यथा इति लेखित पुस्तकपाठः ।



तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेव च ।

ब्रह्मोपदेशः कर्त्तव्यो ब्रह्मकर्मफलाप्तये ॥

सौपर्णे,—

एतेषूक्तेषु दानेषु आचार्यत्वं सकृद्द्विजः ।

करोति धनलोभेन तस्य सन्ध्यादिकाः क्रियाः ॥

न पुनन्ति पुनस्तस्य भस्मानि न्यस्तहव्यवत् ।

अधिकारोजपे नास्ति नित्यकर्मसु तेषु वै ॥

सावित्रीपतितं विद्यान्नालपेत् तं कदाचन ।

ब्रह्माण्डे,—

आचार्या ये भवन्त्येषु दानेषु द्विजवल्लभ ।

तेषां सन्ध्यादिकर्माणि गायत्रीजपएव च ॥

न फलन्ति द्विजास्ते<sup>१</sup> तु न कर्माहो भवन्त्यतः ।

पुनः संस्कारमात्रेण शुद्धिमायान्त्यनुत्तमाम् ॥

भविष्योत्तरे,—

तुलादिष्वेषु दानेषु प्रतिगृह्णाति चेद्द्विजः ।

तस्य सन्ध्यादिकर्माणि न फलन्ति द्विजन्मनः ॥

पैतृकादिषु राजेन्द्र नाधिकारो भवेद्विह ।

अतस्तद्दोषशान्त्यर्थं पुनः संस्कारमर्हति ॥

(१) येषु वै इति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) आचार्याद्या इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) द्विजस्तेषु न कर्माहो भवन्त्यतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



कौर्म्य—

महत्स्वेतेषु दानेषु यदा यस्य प्रतिग्रहः ।

तदा प्रभृत्यसौ विप्रः पतितोऽभून्न संशयः ॥

सभ्यादिनित्यकर्माणि पितृकार्याणि यानि च ।

तानि सर्वाणि विप्रर्षे न फलन्ति द्विजन्मनः ॥

पत्नी वा तनयोभ्राता न स्पृशेत्तं कदाचन ।

तस्माद्दोषाद्विशुद्ध्यर्थं पुनः संस्कारमाचरेत् ॥

नवलक्षजपादिषु त्रिष्वेकेन प्रायश्चित्तेन परिशुद्धोभूत्वा पश्चात्

पुनः संस्कारं कुर्यात् । तदाऽऽह—

देवलः—

प्रायश्चित्तेन पूतात्मा नवलक्षजपादिना ।

पुनः संस्कारमात्रेण शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

अधिकारो'भवेत् पश्चात् पैटकादिषु कर्मसु ।

तत्प्रकारमाह,—

नृसिंहपुराणे—

पटगर्भं समावृत्य तत्र तं विनिवेशयेत् ।

नूतनेनैव वस्त्रेण गर्भं कुर्यात् कुशूलवत् ॥

तस्याधस्तण्डुलान् स्थाप्य तत्र पद्मं लिखेत्ततः ।

तत्रोपरि न्यसेद्विप्रं कर्त्तारं पापमुक्तये ॥

(१) जपेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पद्मोपरि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



१पिधाय तेन वस्त्रेण तत्र ब्राह्मणमर्चयेत् ।

गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपैर्दीपैर्नैवेद्यचन्दनैः ॥

पटं भित्त्वा ततः पश्चात् “हिरण्यगर्भ” इत्यृचा ।

लिङ्गपुराणे—

पञ्चमे दशमे घस्त्रे<sup>१</sup> पत्ने वाऽन्यदिनेऽपि वा ।

अभ्यर्च्य दम्पती स्नात्वा प्रातःकाले यथाविधि ॥

पुण्याहवाचनं कुर्यान्नान्द्याह्वानं ततः परम् ।

पूर्तेन मनसा राजन् द्रव्यलोभपराङ्मुखः ॥

स्वगृहे रहमि स्थाने पाषण्डजन<sup>२</sup>वर्जिते ।

आचार्यं वरयेत्प्राज्ञमन्यगोत्रं कुटुम्बिनम् ॥

स्थविरं कर्मकुशलं द्रव्यलोभात्<sup>३</sup> पराङ्मुखम् ।

“ब्रह्मजज्ञान”मिति ब्रह्मपूजान्ते पूर्वमन्त्रेण गर्भं भिन्यात् ।

ततोऽनन्तरकर्तव्यम् । “दिवसपरी”त्यनुराकं जपेदाचार्यएव ।

“अङ्गादङ्गा”दिति द्वाभ्यां अभिमन्त्रणं, मूर्धन्यवघ्राणं, दक्षिणकर्णे

जपश्च । गर्भनिर्माणमन्त्रः “परिधास्य यशो धास्ये”ति मन्त्रेण

पठवल्लीं कुर्यात् । “यशसे मे द्यावापृथिवीति” मन्त्रेण गर्भं

प्रवेशः । ततः पूजा कर्तव्या पूर्ववत् । “उद्धृतोऽसि शुभात् पूतो

(१) विधाय इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) लैङ्गे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) दिवसे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) वर्ज्जने इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) द्रव्य लोभ पराङ्मुखं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



भवमि गर्भात् पापात् पूतो भवमि” इति मन्त्रैः कर्त्तारं विमोच्य  
नूतने कांस्ये घृतं पूरयित्वा तत्रावलोकनं कारयित्वा, “क्षत्रियेत्वेति”  
पञ्चभिः स्नापयित्वा, आचार्यः—स्वममीपमुपवेश्य, लौकिकाम्निं  
प्रतिष्ठाप्य, अलङ्कृत्य, परिस्तीर्य, स्वगृह्योक्तविधिना आज्यभागान्तं  
कृत्वा, पाहित्रयोदशहोमं कुर्यात् । ततः कर्त्तर्यन्वारब्धे तस्मिन्ने-  
वाग्नौ पूर्ववत्परिस्तरणान्ते कृते, पिष्टाज्यसंमिश्रैस्त्रिलैर्विरजाहोमं  
कुर्यात्, ततश्चाचार्यः कर्त्तारमुदङ्मुखं कृत्वा ब्रह्मोपदेशमुप-  
नयनवत् कुर्यात् । ततोयज्ञोपवीतं धारयित्वा आचार्योर्गायत्री  
मुपदिशेत्, तत उपनयनवतस्त्वौपासनाग्नेः सन्धानं । औपासना-  
नन्तरं पञ्चगव्यविधिना पञ्चगव्यप्राशनं पत्नी<sup>१</sup>पुत्रेषु योज्यम् ।

ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चादयथा विभवपूर्वकम् ।

पश्चाद्भवति पूतात्मा इह लोके परत्र च ॥

नित्यकर्मसु काम्येषु पितृकार्येषु सर्वदा ।

नास्तिक्याल्लोकसादृश्यादालस्याद्वा च्छलादपि ॥

विसृजन् यः पुनःकर्म वर्त्तयेद्यदि मोहतः ।

दुःखी भवति पापात्मा<sup>२</sup> इह लोके परत्र सः ॥

१) पतिपुत्रेषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) कार्येषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) पूतात्मा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



राक्षसत्वं व्रजेत्तत्र जलदानविवर्जितम्<sup>१</sup> ।  
 पुनं संस्कारकृत्यश्चाच्छुद्धोभवति तत्क्षणात्<sup>२</sup> ॥  
 वेदशास्त्रं पुराणानि प्रमासं ब्रह्मकर्मणि ।  
 कलौयुगे विशेषेण प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा तरेल्लोकद्वयं मुदा ।  
 आचार्यस्त्रिः परिक्रम्य प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥  
 दद्याद्रव्याणि सर्वाणि आचार्याय सुधीमते ।

इति हेमाद्रौ तुलादिप्रतिग्रहीतृणां आचार्यादीनां  
 पुनः संस्कारविधिः ।

अथ पशुपुरोडाशभक्षणे प्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

यज्ञेषु माधुवृत्तेषु धर्माज्जितधनेषु<sup>३</sup> च ।  
 तत्रैव क्षप्रयस्मेध्यं पशुं वृत्त्यथेमादरात् ॥

(१) विवर्जितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भवति चोभये इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) धर्माज्जन धनेषु च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



ब्राह्मणो<sup>१</sup> ब्रह्मवित्पूतं पशुं यद्यभिहारयेत् ।

तस्यैव निष्कृतिर्भूयोवेदपारायणं स्मृतम् ॥

एतदबहुवारविषयम् । अन्यत्र<sup>२</sup> भक्षणे त्रिगुणं, शूद्रद्रव्यग्रहण-  
पूर्वकयज्ञेषु पशुभक्षणे पञ्चगव्यं पुनः संस्कारश्च ।

तदेवाह—

कूर्मपुराणे—

स्वबन्धुक्तयज्ञेषु प्राप्तं यत्पशुभक्षणम् ।

पारायणं विशुद्धिः स्याद् अन्यत्र त्रिगुणं<sup>३</sup> भवेत् ॥

अश्रोत्रिये तु त्रैगुण्यं शूद्रे पञ्चगुणं भवेत् ।

पुनः संस्कारतः पूतः शुद्धोभवति सर्वदा ॥

तत्प्रतिग्रहे दोषमाह,—

लिङ्गपुराणे,—

पशुं भक्षयतोयस्य द्विजः स्यात् कृतनिष्कृतिः ।

प्रतिगृह्य सुवर्णं वा ज्ञात्वाऽन्नं सम्परित्यजेत्<sup>४</sup> ॥

अज्ञात्वा कृच्छ्रमात्रेण ज्ञानेनैव द्वयं स्मृतम् ।

अन्नभुक् पञ्चगव्येन शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥

अल्पसुवर्णप्रतिग्रहे द्विगुणं अन्नभक्षणे पञ्चगव्यात् शुद्धिः ।

इति हेमाद्रौ शूद्रप्रतिग्रहीतुर्यज्ञे पशुपुरोडाशभोक्तुः प्रायश्चित्तम् ।

(१) ब्राह्मणे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अन्यस्य इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।

(३) द्विगुणं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) संपरिग्रहेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



वाणिज्यस्याष्टमं भागं कृषेर्विंशतिमं तथा ।  
प्रतिग्रही चतुर्थांशं दत्त्वा पापैर्न लिप्यते ॥

स्कान्दे,—

प्रतिगृह्य तुलामाशु नवलक्षं जपेद्बुधः ।  
व्ययं कृत्वा चतुर्थांशं यज्ञं सर्वस्वदक्षिणम् ॥

अथेदानीं तुलादिप्रतिग्रहीतृणां नदीस्नानरूप-  
प्रायश्चित्तम् ।

स्कन्दपुराणे,—

हंसद्वारं च केदारं नरनारायणं तथा ।  
कौरवं चम्पकारणं ततोवाराणसीपुरम् ॥  
प्रयागः पुष्करं क्षेत्रं गङ्गासागरसङ्गमः ।  
जगन्नाथश्च सिंहाद्विर्द्राक्षा<sup>१</sup> रामेश्वरं तथा ॥  
मार्कण्डेयं शोभनाद्रिः जये वाऽपि हि मध्यमे<sup>२</sup> ।  
ततः परं धर्मपुरी नृसिंहीयत्र तिष्ठति ॥

(१) हरिद्वारं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) जामरामेश्वरं तथा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) जये वापि महत्त्वपि इति काशीपुस्तकपाठः ।



ततः सप्तनदीसंज्ञः शैलः पुण्यपर्वतः ।  
 अहोबलं महाक्षेत्रं वैद्यनाथमतः परम् ॥  
 वेङ्कटाद्रिः कालहस्ती<sup>१</sup> काञ्चीक्षेत्रं ततः परम् ।  
 अरुणाचलं महाक्षेत्रं महाक्षेत्रं चिदम्बरम्<sup>२</sup> ॥  
 कमलालयं महाक्षेत्रं<sup>३</sup> मधुराऽऽग्नेयभागशः ।  
 रामेश्वरं महाक्षेत्रं जनार्दनमतः परम् ॥  
 अनन्तशयनं गोकर्णं सुव्रह्मण्यं महत्तरम् ।  
 पम्पाक्षेत्रमिति प्रोक्तं पुण्यक्षेत्रं यथाक्रमम् ॥

एतानि क्षेत्राणि स्वयम्भूनि<sup>४</sup> ।

अथ पुण्यनद्यः,—

गङ्गा सरस्वती चैव यमुना फाल्गुनी तथा ।  
 गण्डकी शोणभद्रा च नर्मदा गौतमी तथा ॥  
 मलापहारी भौमरथी कृष्णा वेणी तथैव च ।  
 तुङ्गभद्रा तथैवाख्या नदी च भवनाशिनी ॥  
 पिनाकिनी च कावेरी तास्रपर्णी महानदी ।  
 पयोद्वी चञ्चुला चैव तथा वेगवती नदी ॥  
 एताः पुण्यतमाः नद्यः स्मरणात् पापनाशिकाः<sup>५</sup> ।

(१) कालहस्तिं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) चिदम्बरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मधुराग्नेय भागश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) स्वयं भूयि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) पाप नाशिनीः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



एता महानद्यः ।

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका ।  
 पुरी द्वारवती चैव सप्तैता पुण्यवर्द्धिकाः<sup>१</sup> ।  
 तीर्थेष्वेतेषु राजेन्द्र नदीष्वेतासु पूर्वजः ॥  
 परिगृह्य तुलादीनि रात्रः पापपरायणात् ।  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनः संस्कारपूर्वकम् ॥  
 गङ्गायां मौषलस्नानैः षण्मासाच्छुद्धिमाप्नुयात् ।  
 रेवायां तु तथा स्नात्वा शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥  
 वर्षेण वै सरस्वत्यां प्रत्यहं विधिपूर्वकम् ।  
 स्नानैस्त्रिषवणैः<sup>२</sup> सम्यक् शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥  
 फाल्गुण्यां प्रातरारभ्य वर्षाद्विं स्नानमाचरन् ।  
 तत्रापि त्रिषवणमित्यर्थः ।  
 पूर्ववच्छुद्धिमाप्नोति दानेष्वेतेषु संग्रही<sup>३</sup> ।  
 प्रातरारभ्य गण्डक्यामासायं स्नानमाचरन् ॥  
 वर्षद्वयेन पूतात्मा उभयोर्लोकयोः शुचिः ।  
 तथैव शोणभद्रायां पूर्वजः शुद्धिमाप्नुयात् ॥  
 गौतम्यां नियमैः स्नात्वा नित्यकर्मपरायणः ।  
 विंशत्या मौषलस्नानैरब्दमात्रेण शुध्यति ॥

(१) पुण्यवर्द्धिनीः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) त्रिषवणै इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) गृह्णन् इति लेखितपाठः । संग्रहात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



स्नानैमलापहारिण्यां विंशत्याऽनुदिनं द्विजः ।  
 अर्द्धमात्रेण तत्राऽपि शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ॥  
 भीमरथ्यां महानद्यां अर्द्धरात्रौ जितेन्द्रियः ।  
 जानुदघ्नजले स्थित्वा जपेन्मन्त्रं त्रियम्बकम् ॥  
 सहस्रं पूर्णतां याति यदा तावद्विरम्य तु ।  
 एवं मासत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति वेदिकीम् ॥  
 कृष्णवेण्यां महानद्यामेकादश्यामिनोदये ।  
 स्नात्वा नित्यं समाप्याऽथ नाभिदघ्नजले वसन् ॥  
 “नमो नारायणाय”ति जपेत् प्रणवपूर्व्वकम् ।  
 माध्याह्निकं ततः कृत्वा ब्रह्मयज्ञञ्च तर्पणम् ॥  
 कृत्वा ततः पुनर्जम्बा सायंकाले विरम्य च ।  
 अव्रतघ्नं तदा कृत्वा पुनरेकादशेऽहनि<sup>१</sup> ।  
 तत्रैव पूर्व्ववत् कृष्णे कृत्वा शुक्लं तथैव च ॥  
 वर्षमात्रेण पूतात्मा तरेल्लोकद्वयं<sup>२</sup> मुदा ॥  
 तथैव तुङ्गभद्रायां कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 जपेदहोत्रले क्षेत्रे कुण्डे वा राजसंज्ञिते ॥  
 तत्रैव भवनाशिन्यां जानुदघ्नजले वसन् ।  
 जपेन्नृसिंहगायत्रीं मासमेकं निरन्तरम् ॥

(१) पुनरेकादशो यतः । इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) लोक द्वयं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



ततः शुद्धिमवाप्नोति न प्रतिग्रह<sup>१</sup>दोषभाक् ।  
 पिनाकिनीनदीतीरे प्रतिगृह्य तुलादिकम् ॥  
 जपेत् पञ्चाक्षरं मन्त्रं शिवं पापहरं परम् ।  
 स्नात्वा प्रातः शुचिर्भूत्वा त्रिसहस्रं दिने दिने ॥  
 मामत्रयेण शुद्धः<sup>२</sup> स्यात् तुलादीनां प्रतिग्रहे ।  
 अखण्डायां तु कावेर्यां प्रातः स्नात्वा यथाविधि ॥  
 नित्यकर्म समाप्याऽऽशु कण्ठदघ्नजले वमन् ।  
 जपेच्च पौरुषं सूक्तमष्टोत्तरशतं<sup>३</sup> क्रमात् ॥  
 यावत् समाप्तिर्भवति तदा मौनं परित्यजेत् ।  
 एवं कुर्यात् प्रतिदिनं शुद्धोऽभूदुत्तमात्रतः ॥  
 ताम्रपर्णीनदीतीये अवगाह्य दिनत्रयम् ।  
 त्रियम्बकं जपेन्नित्यं संख्यां मनसि धारयेत् ॥  
 दिनत्रये तु पूर्णेऽस्मिन् निर्व्विघ्नेन नराधिप ! ।  
 पूतो भवति विप्रोऽसौ तुलादीनां प्रतिग्रहात् ॥  
 धनुःकोट्यां तुलादीनां गृहीत्वा धनलोभतः ।  
 स्नात्वा मध्याह्नवेलायां गत्वा रामेश्वरालये ॥  
 औपासनाग्नौ जुहुयात् विरजाहोममादितः ।  
 अधःशायी<sup>४</sup> भवेन्नित्यं मासमेकं निरन्तरम् ॥

(१) प्रतिग्रहे दोषभाक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) शुद्धिः स्वादिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अष्टाशतमबुक्रमात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) अधःशय्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



दुग्धाहारः फलाहारोदयोरेकं समाचरेत् ।

एवं मामत्रयं कुर्यात् तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ॥

एतन्नदीव्रतं यागादिकर्मकर्तृणां पूर्वोक्तनिमित्तैः अपूतस्य,  
पूतस्य तु नदीस्नानादिकर्मकरणे शरीरक्लेशएव, तदाह—

मनुः—

तुलादिसंग्रहीतृणां पूर्वं शुद्धिमनिच्छताम् ।

पुनः संस्कारभीतानां<sup>१</sup> नदीस्नानमुदीरितम् ॥

प्रायश्चित्तैर्विशुद्धानां पूर्वं शुद्धिमतां सताम् ।

पुनः संस्कारपूतानां नदीस्नानं निरर्थकम् ॥

निरर्थकं नदीस्नानादिकमित्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ तुलादिप्रतिग्रहीतृणां नदीस्नानरूप-  
प्रायश्चित्तम् ।

अथ तुलादिप्रतिग्रहीतृणां प्रायश्चित्तविशेषमाह ।

महानारदीये,—

तुलायां गोमहस्त्रे च लाङ्गले विश्वमण्डले ।

सागरे चर्मणोधिनौ महाभूतघटे नृप ॥

(१) पुनः संस्कार लोभीनां इति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) विशेषेतिपदम् क्रातलेखितपुस्तकयोर्नापलब्धम् ।



तिलगर्भे कालचक्रे कोटिहोमे<sup>१</sup> जनाधिप ! ।  
 आचार्या ये भवन्त्यत्र ते सर्वे दोषगामिनः<sup>२</sup> ॥

लिङ्गपुराणे,—

आत्मतुल्यसुवर्णेन गोमहस्त्रे च लाङ्गले ।  
 महोदधिषु भूतास्थे घटे धेनौ<sup>३</sup> च चर्मणाम् ॥  
 कोटिहोमे कालचक्रे तिलगर्भे तिलाचले ।  
 कार्पासपर्वते राजन् तथा लवणपर्वते ॥  
 आर्द्र<sup>४</sup>कृष्णाजिने ये च प्रमुखाः<sup>५</sup> स्युर्दिजोत्तमाः ।  
 तेषामेवानुकम्पार्थमिदमाह प्रजापतिः ॥  
 प्रायश्चित्तं विशुद्ध्यर्थमिह लोके परत्र च ।

कूर्मपुराणे,—

आर्द्रकृष्णाजिने कालचक्रे लवणपर्वते ।  
 कार्पासपर्वते कोटिहोमे गर्भे तिलाह्वये ॥  
 गोमहस्त्रे तुलायाञ्च लाङ्गले विश्वमण्डले ।  
 सागरे चर्मधेनौ च महाभूतघटे तथा ॥

(१) कोटिहोमं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सर्वे निरयगामिनः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) धेनोश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कृष्णाजिने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) प्रमुखा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



आचार्यत्वं यदि प्राप्तं दानानां पुण्यसङ्गमे ।

आचार्यो 'यो भवेद्विप्रस्तस्य निष्कृतिरुच्यते ॥

आचार्यइति वाक्यं आर्द्रकृष्णाजिनादिग्रहीतृणाम् तुला-  
गोसहस्रप्रतिग्रहीतुराचार्यस्य ब्रह्मसदस्यत्विजाञ्चोपलक्षणम्—

तहाह,—

वशिष्ठसंहितायां,—

आत्मतुल्यसुवर्णस्य गोसहस्रस्य च संग्रहे ।

आचार्यप्रभृतीनाञ्च ऋत्विजां पापनाशनम् ॥

प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं देहशुद्धयर्थमादरात् ।

इतरदानेषु सप्तव्यतिरिक्तेषु हिरण्यगर्भादिषु आचार्याणामिव  
नेतरेषाम् । तदाह—

नारदः,—

पूर्वमुक्तेषु दानेषु तुलागोलाङ्गुलादिषु ।

आचार्याणाञ्च सर्वेषां प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥

( एतद्व्यतिरिक्तहिरण्यगर्भादिषु आचार्याणामिव नेतरेषां )

हिरण्यगर्भसंहितायाम्—

आर्द्रकृष्णाजिने राम कोटिहोमे तिलाचले ।

कार्पासपर्वते काल-चक्रे लवणपर्वते ॥

(१) यदि य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

( १ ) अयं पाठः लेखितपुस्तके नास्ति ।



तिलगर्भे च गृह्णीयात्<sup>१</sup> सप्तस्वतेषु योद्विजः ।  
 तस्यैव<sup>२</sup> निष्कृतिरियं कथिता मुनिपुङ्गवैः ॥  
 पूर्वोक्तानां तुलादीनां दानानां ये द्विजोत्तमाः ।  
 आचार्याऋत्विजोभूप तेषामेवेह निष्कृतिः ॥

तत्प्रकारमाह<sup>३</sup>—

देवलः—

तदानीं वा परेद्युर्वा पञ्चमे वाऽथसप्तमे ।  
 यस्मिन् कस्मिन् दिने वाऽपि मनसा परिशुद्धिमान् ॥  
 गन्धाक्षतान् पञ्चगव्यं ताम्बूलानि कुशानपि<sup>४</sup> ।  
 ब्राह्मणान् वेदसम्पन्नान् आमन्त्र्य सरितस्तटे<sup>५</sup> ॥  
 गत्वा सर्वैः समालोच्य बन्धुभिः सह पार्थिव ।  
 तैरनुज्ञामवाप्याऽशु प्रणिपत्य यथाक्रमम् ॥  
 द्रव्यलुब्धतया<sup>६</sup> विप्राः मयाऽकारि प्रतिग्रहः ।  
 यागादिकरणेऽशक्तस्तत्क्षन्तव्यं द्विजोत्तमाः ॥

(१) राजेन्द्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्योपनिष्कृतिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तत्प्रकरणमाह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कुशानि च इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(५) आनयित्वा नदीतटं इति लेखित-पुस्तकपाठः. आत्मयित्वा नदीतटं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) लोभतया इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



इति नत्वा व्रजेत्तीर्थं प्रार्थयित्वा क्षमापयेत् ।  
 मलापकर्षणं कृत्वा नित्यकर्म समाप्य च ॥  
 पुण्ड्रादिकं ततोऽधृत्वा दर्भपाणिर्जितेन्द्रियः ।  
 चतुर्विंशतिकान् विप्रान् वेदशास्त्रपरिष्कृतान् ॥  
 अष्टादश द्वादश वा पर्षदर्थे<sup>१</sup> नियोजयेत् ।  
 स्थापयित्वा ततः सम्यक् परिषद्बिधिपूर्वकम् ॥  
 उपविश्य शुचौ देशे तदग्रे प्राङ्मुखः शुचिः ।  
 पूर्णेन मनसा युक्तः प्राणायामत्रयं चरेत् ॥  
 पुण्याहवाचनं कुर्यात् तेन तोयेन मार्जयेत् ।  
 नान्द्याह्वानं<sup>२</sup> ततः कुर्यात् केचिदिच्छन्ति पार्थिव ॥  
 प्राणानायम्य विधिवद्देशकालौ च कीर्तयेत् ।  
 निमित्तं कीर्तयेद्बिद्वान् यस्मिन् क्षेत्रे यदा तिथौ ॥  
 यस्य राज्ञः समुत्पन्नं पापमेतत् परिग्रहात् ।  
 तद्गोत्रनाम नक्षत्रराशिपूर्वं समुच्चरेत् ॥  
 तत्तद्गोत्रं सनक्षत्रं दानमन्त्रं प्रकीर्तयेत् ।  
 प्रायश्चित्तमहं कुर्यां धर्मशास्त्रानुसारतः ॥  
 इति सङ्कल्प्य विधिवद् गन्धपुष्पाक्षतैर्मृदा ।  
 अभ्यर्च्य पर्षदं<sup>३</sup> सम्यक् नारायणमनुस्मरन् ॥

(१) चतुर्विंशति वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) परिषदर्थे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) नद्याह्वानं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) परिषदं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तदष्टमांशद्रव्यस्य चतुर्भागस्य वाग्यतः ।

भागमेकं ततो बद्ध्वा स्ववस्त्रेऽक्षतपूर्व्वकम् ॥

समस्तसम्पदित्याद्यैर्वाक्यैः पौराणिकैः पठन् ।

त्रिः परिक्रम्य यत्नेन प्रणम्योत्थाय दण्डवत् ॥

तदग्रे दक्षिणां स्थाप्य ततो विज्ञापयेत् सुधीः ।

येन दोषः 'समुत्पन्नः तन्निमित्तम् । तन्निरासार्थं प्रायश्चित्तं  
करिष्ये इति विज्ञाप्य' तदग्रे स्थातव्यम् ।

सभा तु तत् समागृह्य तेन विज्ञापितं वचः ।

नत्वा विप्रान् सप्त पञ्च त्रयं वा विदुषां मुदा ॥

पूर्व्वोक्तदक्षिणां दत्त्वा प्रेषयेदनुवादकम् ।

प्रेषयन्त्विति तानुक्त्वा स्मरेन्नारायणं विभुम् ।

तत्रैकं विदुषां शान्तमनुवादार्थमादरात् ॥

दक्षिणां बहुशो दत्त्वा प्रेषयेयुर्द्विजोत्तमाः ।

सोऽपि स्नात्वा दर्भपाणिः कर्त्तारमनुबोधयेत् ॥

तद्गोत्रनामनक्षत्रमनूच्चार्योपदेशयेत् ।

तत्सर्व्वमनुवादाच्च श्रुत्वा वाक्यं समाचरेत् ॥

हिरण्यस्नानरूपेण प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।

प्राच्याङ्गवपनं कृत्वा दन्तधावनपूर्व्वकम् ॥

स्नानं कृत्वा पञ्चगव्यैस्तत्तन्मन्त्रैः पृथक् पृथक् ।

गोदानञ्च ततः कुर्यात् प्राच्याङ्गपरिपुष्टये ॥

(१) दोषं समुत्पन्नं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) परितुष्टये इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



उदीच्याङ्गानि सर्वाणि शालाहोमं ततः परम् ।

नान्दीश्चाङ्गं वैष्णवाख्यं पञ्चगव्यमनुत्तमम् ॥

शालाहोमं ततः कुर्यादुत्तराख्यं विचक्षणः ।

पुनर्गोदानकृत्वा दशदानमनुक्रमात् ॥

भूरिदानं ततः कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्सुधीः ।

एवं कृते द्विजोनित्यं मुक्तोदोषात् परिग्रहात् ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति दुःखी स्याज्जन्मजन्मनि ।

### अथ प्रायश्चित्तप्रकारः ।

आदौ मलापकर्षणं स्नानं, ततः परिषन्मेलनं, अष्टाविंशतिरष्टादश  
द्वादश वा विप्रा विद्वांसः परिषदर्थे नियोक्तव्याः, ततः परिषदग्रे  
चैवं कल्प्य, परिषदभ्यर्चनं सङ्कल्पितद्रव्यं वस्त्रान्तरे बद्ध्वा दर्भपाणि-  
मुकुलितहस्तः “समस्त्रं सम्प”दिति मन्त्रमुच्चरन् परिषदं त्रिः प्रद-  
क्षिणीकृत्य, दण्डवत्प्रणम्य, दक्षिणां पविषदग्रे निधाय, मुकुलित-  
पाणिः सन्—हे परिषत् मदीयां विज्ञापनां अवधार्य, मया सम-  
पितामिमां सौवर्णां दक्षिणामर्पयामीमपि यथोक्तदक्षिणात्वेन  
स्वीकृत्य, काश्यपगोत्रममुकराशौजातममुकशाखाध्यायिनममुक-  
नामधेयं मामुद्धर, इत्युक्त्वा पुनः प्रणम्य उत्थाय मुकुलितकरः सन्—  
हे परिषत् पूर्व्वद्युर्यस्मिन् कस्मिन् दिने वा अमुकनदीतीरे अमुक-  
देवसन्निधौ अमुकपुण्यकाले अमुकगोत्रेण अमुकनक्षत्रे अमुकराशौ



जातेन अमुकनामधेयेन धर्मवर्तिना राज्ञा विप्रेण वैश्येन वा कृतेषु तुलादिमहादानेषु काश्यपगोत्रस्य अमुकनक्षत्रे अमुकराशौ जातस्य अमुकशाखाध्यायिनो ऽमुकनामधेयस्य मम देवात् प्रतिग्रहः प्राप्तः, तस्माद् ब्रह्मराक्षसत्वभयनिवृत्तिद्वारा तुलादिदानेषु प्रतिग्रहात् स्नानसन्ध्यादिनित्यकर्मभ्रंशरूपतद्दोषपरिहारद्वारा च उत्तरत्रसन्ध्यादिनित्यकर्मभ्रानुष्ठानाधिकारसिद्धयर्थं युष्मदनुज्ञया प्रतिग्रहलब्धस्य धनस्य चतुर्थभागेन धर्मशास्त्रोक्तविधिना प्रायश्चित्तं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य, पुनः प्रणम्य-उत्थाय तदग्रे मुकुलितपाणिः सन् तिष्ठेत्, पूर्वसङ्कल्पस्त्वेवमेव । अशेषैषा परिषच्चेत्तदा विचार्य सप्त पञ्च त्रीन् वा विदुषोविप्रान् परिषद्क्षिणासमदक्षिणया तोषयित्वा “हे विद्वांसः यूयं सम्यग्विचार्य अमुकगोत्रेणाऽमुकनक्षत्रे अमुकराशौ जातेन अमुकशाखाध्यायिना अमुकनामधेयेन युष्मत्त्रिधौ विज्ञापितस्य तुलादिषोडशमहादानेषु मध्ये यस्य कस्यचित् प्रतिग्रहात् यत्पापमुत्पन्नं तेन तत्प्रतिग्रहात् प्रभृत्येतत्क्षणपर्यन्तं सन्ध्यादिनित्यकर्मणि स्मृशितानि तत्पापापनोदनं प्रायश्चित्तं धर्मशास्त्रेषु निश्चित्य शक्यप्रत्याम्नायरूपेण उपदिशतैकं तत्पापोच्चारणदत्तं प्रेषयत च” इति । ततः परिषत् प्रेषयेत् विधायकम् ।



## अथ विधायकवाक्यम् ।

सर्वे स्नातवन्तः—एकं विपश्चितं ग्रहणधारणोच्चारणदत्तं स्वदक्षिणातुल्यदक्षिण्या सभाव्य ब्रूयुः “भो अनुवादक इत आगच्छ इमां दक्षिणां स्वीकृत्य अमुकनदीतीरे अमुकदेवसन्निधौ अमुक-पुण्यदिवसे अमुकगोत्रस्य अमुकनक्षत्रस्य अमुकराशौ जातस्य अमुकशाखाध्यायिनोऽमुकनामधेयस्य एतस्य पूर्व्वेद्युः यस्मिन् कस्मिन् दिने वा तुलादिषोडशमहादानेषु मध्ये यस्य प्रति-ग्रहात् यत्पापमुत्पन्नं तेन तत्तत्प्रतिग्रहात् एतस्य उपनयनप्रभृत्ये-तत्क्षणपर्यन्तं सन्ध्यादिनियकर्मणि भ्रंशितानि तत्तत्पापनोदनं प्रायश्चित्तं धर्मशास्त्रेण निश्चित्य पविषन्निर्णीतं शक्यप्रत्याम्नाय-रूपेणाऽस्य उपदिशेत्येकं अनुवादकवाक्यम् । स तु सचैलं स्नात्वा दर्भपाणिः सन् कर्त्तारमधिकृत्य उत्तानपाणिः सन् “हे काश्यपगोत्र अमुकनक्षत्रे अमुकराशौ जात अमुकशाखा-ध्यायिन् अमुकनामधेय त्वया परिषत्सन्निधौ विज्ञापितस्य पापस्य अपनोदनमस्मिन् निर्णीतं सर्व्वप्रायश्चित्तं प्राच्योदी-च्याङ्गसहितं पूर्व्वोत्तरशालाहोमानुगतं वैष्णवादीनां श्राद्धसहितं एकमखण्डं शक्यप्रत्याम्नायरूपेणोपदिशति, विधायकमुखेना-शेषपरिषन्मां प्रेषितवती च, अहमपि उपदिशामि, सावधानः समाकर्णय, काश्यपगोत्रामुकनक्षत्रे अमुकराशौजात अमुकशाखा-ध्यायिन् अमुकनामधेय तवाऽमुकनदीतीरे अमुकदेवसन्निधौ अमुकपुण्यदिवसे अमुकगोत्रेण अमुकनक्षत्रे अमुकराशौ जातेन



अमुकनामधेयेन स्वधर्मवर्त्तिना राज्ञा कृतेषु तुलादिषोडशमहा-  
दानेषु मध्ये यस्य दानस्य प्रतिग्रहात् यद्यत्पापमुत्पन्नं तेन इतः  
पूर्वं त्वया चरितनित्यकर्मणां फलमपि भ्रंशितं, इतःपरं  
सन्ध्यादिनित्यकर्मानुष्ठानाधिकारसिद्धयर्थं एतत्पापनोदनं प्राजा-  
पत्यकृच्छ्ररूपमष्टं प्रतिकृत्य-विप्रेभ्यः प्रतिग्रहयेत् षड्गुणितं  
प्राजापत्यकृच्छ्रात्मकं विशोधनं भवति, क्षत्रियेभ्यो द्विगुणं विशोधनं  
वणिग्भ्यश्चेत् त्रिगुणितं शूद्रेभ्यश्चेत् षड्गुणितषड्विंशं प्राजापत्य-  
कृच्छ्रात्मकं विशोधनं भवति । राज्ञां हत्यादिदोषबाहुल्यात्  
तत्प्रतिग्रहे अशीत्यधिकसहस्रप्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायात्मकसर्व-  
प्रायश्चित्तं प्राच्योदीच्याङ्गसहितं पूर्वोत्तरशालाहोमवैष्णवनान्दी-  
आइपञ्चगव्यानुमङ्गतं सर्वप्रायश्चित्तं, साक्षाच्चर्यायां शक्तशेदाचार-  
पूतो भव, साक्षाच्चर्यायामशक्तशेत्प्रत्याम्नायानाचर धेनुदानसमुद्र-  
गामिनदीस्नानसंहितामात्रवेदपारायणायुतगायत्रीजपद्विशतप्राणा-  
याममृत्युञ्जयमन्त्रसहित-सहस्रतिलहोम- द्वादशब्राह्मणभोजनानि  
प्रत्याम्नायाः एतैः प्रत्याम्नायरूपैरस्मिन् सर्वप्रायश्चित्ते काश्यप-  
गोत्रेण अमुकनक्षत्रे अमुकराशौ जातेन अमुकशाखाध्यायिना-  
ऽमुकनामधेयेन त्वया सम्पूर्णमनुष्ठिते सति काश्यपगोत्रः अमुक-  
नक्षत्रेऽमुकराशौ जातोऽमुकशाखाध्यायी अमुकनामधेयोऽसौ  
(जातोऽमुकामुकशाखाध्यायी अमुकनामधेयोऽसौ, अमुकनदीतीरे  
अमुकदेवसन्निधौ अमुकपुण्यदिने अमुकनक्षत्रेऽमुकराशौ जातेन  
अमुकनामधेयेन स्वधर्मवर्त्तिना राज्ञा कृतेषु तुलादिषोडशमहा-  
दानेषु यस्य दानस्य प्रतिग्रहात् ब्रह्मराक्षसत्वमवश्यम्भावि, तस्मा-



दितः पूर्वं सभ्यादिनित्यकर्मभ्रंशलोपात् सर्वेभ्यः पापेभ्यश्च मुक्तो भूयादित्यनुवादक उच्चैर्वदेत् । परिषद् एकवाक्येन तथास्त्विति वदेत्, अनुवादकोऽपि आन्ध्रभाषया पुनर्वदेत्, परिषत् अपि तथाऽस्त्विति पुनर्वदेत् । तस्माद्देशादपक्रम्य शुद्धाचमनं कृत्वा कृच्छ्राणि शक्यप्रत्याम्नायरूपेण स्वयं वा ब्राह्मणैर्वा कारयित्वा, प्राच्याङ्गभूतानि दन्तधावनपवनमृद्गन्धगोमूत्रगोमयक्षौरदधिसर्पिभिस्तत्तन्मन्त्रैः पृथक् पृथक् स्नात्वा, प्राच्यां गोदानं कृत्वा, प्राच्याङ्गभूतं पूर्वशालाहोमं कृत्वा वैष्णवनान्दीश्राद्धं कुर्यात् । अनन्तरं ब्रह्म कूर्चविधिना पञ्चगव्यं पीत्वा तदङ्गदशदानानि कुर्यात् । उदीच्याङ्गं उत्तरशालाहोमं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत् । अनन्तरं पुनः संस्कारविधिना पुनः संस्कारं कृत्वा पूतो भवेत् । उभयोर्लोकयोर्व्यवहारक्षमो भवेत् । एवं कोटिहोमाचार्यादीनां प्रायश्चित्तं । कालचक्रतिलगर्भप्रतियहीतृणां अपि एवं प्रायश्चित्तम् । नाऽन्यथा शुद्धो भवति ।

तदाह—

गौतमः—

यथा चर्ममयोवत्सो यथा दारुमयो 'मृगः ।

तथा निष्कृतिहीनोऽसौ द्विजोलोकविगर्हितः ॥

यागादिकमकृत्वा तु प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ।

अपवित्रः सदा भूयाद् अनर्हः सर्वकर्मसु ॥



योवा कोवा द्विजोलोके विप्रस्याऽक्तनिष्कृतेः ।  
 गृही यदिह भुञ्जीयाद् गोमांसाशी निगद्यते ॥  
 द्विजस्याऽक्तचित्तस्य गृहे नित्यं समाश्रिताः ।  
 बालग्रहाः पिशाचाश्च श्मशानसदृशं गृहम् ॥  
 पितरोनाऽत्र भुञ्जन्ति तदेव ऋषिपुङ्गवाः ।  
 न विष्णुः पृथिवी गावः शपन्त्यथ नराधमम् ॥  
 इति ।

इति हेमाद्रौ तुलादिदानेषु प्रतिग्रहीतृणां  
 आचार्यादीनां प्रायश्चित्तविधिः ।

अथ तुलादिदानेषु प्रतिग्रहीतृणां आचार्यादीनां  
 भयहरयन्तोत्तारप्रकारमाह ।

मन्त्ररहस्ये,—

तुलापुरुषादिदानेषु कालपुरुषप्रतिग्रहे ।  
 गाढालिङ्गनदाने च खट्वायां 'रोगिणो गृहे ॥  
 अपां मार्जनकाले च आसन्नमरणे गृहे ।  
 शवदर्शनकाले च संग्रामे रक्तदर्शने ॥



एतेषूक्तेषु कालेषु पिशाचाः सञ्चरन्त्यतः ।  
 केचित्तु वायुरूपेण केचिच्च जनदर्शने ॥  
 दातुः प्रतिग्रहीतुर्वा दृष्ट्वा केचिच्चरन्त्युत ।  
 तत्कर्तुः सर्वपापानि दानमात्रे व्रजन्त्यथ ॥  
 रुदन्तः प्रविशन्त्यत्र आचार्यं भयविह्वलम् ।  
 तदानीं वा परेद्युर्वा पञ्चमे दशमेऽपि वा ॥  
 पक्षे वा मासमात्रे वा द्वितीये वा तृतीयके ।  
 शिरःकम्पो ज्वरोवाऽपि शूलं वा कुक्षिमध्यतः ॥  
 भ्रमः सर्वत्र दुर्वान्तं करपादनिपीडनम् ।  
 सर्वदा भ्रमबुद्धिः स्याद् एतदेव विचेष्टितम् ॥  
 मन्दाग्निररुचिर्नित्यं एतल्लक्षणमीरितम् ।

कोटिहोमकाले शिरोभ्रमणादिकम् । आलिङ्गनदाने स्वयं  
 वा पतति पादहस्तौ वा न चलतः । रक्तदर्शने स्वग्रामे, कुणपदर्शने  
 महाभौतिः सैव व्याधिहेतुः—

तेषां च रक्षणार्थाय लोकानां हितकाम्यया ।  
 सर्वपापहरं पुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥  
 सर्वभूतहरं दिव्यं सुदर्शनमनुत्तमम् ।  
 वक्ष्यामि शृणु राजेन्द्र सर्वभूतपलायनम् ॥  
 भूर्जो वा तालपत्रे वा स्वर्णे वा राजतेऽपि वा ।  
 लिखित्वाऽत्र पूर्णब्रह्म दानकाले वहेत् करे ॥  
 तं दृष्ट्वा प्रपलायन्ते महाभूताः दिशोदश ।  
 भूर्जपत्रे लिखेद्यन्त्रं स्वर्णकार्पासशाखया ॥



गोरोचनेन पूतात्मा प्राङ्मुखोदङ्मुखःशुचिः ।  
 पत्रमध्ये लिखेद्यन्त्रं रेखात्रयसमन्वितम् ॥  
 चतुःशूलं चतुर्दिक्षु तन्मध्ये तं नृकेसरिम् ।  
 लक्ष्मीवीजं लिखेत्पूर्वं प्रक्लादं पश्चिमे लिखेत् ॥  
 दक्षिणे मारुतं वीजं उत्तरे गारुडं लिखेत् ।  
 दुर्गाभिरष्टपूर्वाभिर्वलयाकारमालिखेत् ॥  
 एवं यन्त्रं लिखित्वाऽऽदौ पूजयेद्बन्धपुष्पकैः ।  
 नानाविधैः फलैश्चैव धूपदीपनिवेदनैः ॥  
 पूजयित्वा न्यसेद्यन्त्रं स्वर्णे वा राजतेऽपि वा ।  
 बध्नीयाद्वस्तमूले तु सर्वभूतनिवारणम् ॥  
 प्रतिग्रहेषु<sup>१</sup> दानानां तुलादीनां विशेषतः ।  
 रणमध्ये कोटिहोमे शवसन्दर्शने तथा ॥  
 श्मशानमध्ये राजेन्द्र निर्भीकः स भवेद्गदी<sup>२</sup> ।  
 नीरोगो जायते पश्चात् नारसिंह<sup>३</sup>प्रसादतः ॥  
 दानप्रतिग्रहे काले मार्ज्जनेनाऽन्यतोऽपि वा ।  
 बध्नीयात् सर्वथा यन्त्रं तत्स्त्रीपुत्रोऽथ बालकः ॥  
 आयुः पूर्णञ्च सर्वेषां न भयं विद्यते क्वचित् ।  
 इति हेमाद्रौ तुलादिप्रतिग्रहीतृणां आचार्यादीनां  
 भयनिवारणसुदर्शनोद्धारः ।

(१) प्रतिग्रहेषु इति क्रीत पुस्तकपाठः ।

(२) गती इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(३) नारसिंह्याः प्रसादतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तथापि भयनिवद्धानां<sup>१</sup> तुलादिप्रतिग्रहीतृणां  
ज्वरादिरोगहरमृत्युप्रतिमापूजाविधानं  
होमप्रकारञ्च दर्शयति ।

मार्कण्डेयः—

तथा<sup>२</sup>पि भयवद्धानामाचार्याणाञ्च ऋत्विजाम् ।  
दानप्रतिग्रहे काले मृत्युरायाति सर्व्वथा ॥  
अन्धकारतया राजन् उत दीप्त्या महत्तया ।  
अथ वा जलदोषेण दृष्ट्या वाऽन्यस्य पापिनः ॥  
व्याधिराविशते देहे आचार्यस्य द्विजन्मनः ।  
कम्पः शूलं शिरःशूलं पातनं पादघातनैः ॥  
पित्तञ्च वमनञ्चैव अन्तर्बुद्धिरथाऽपि वा ।  
बहुमूत्रं बहुमलं बहुवाक् सर्व्वदा भ्रमः ॥  
ततल्लक्षणमेतेषामाचार्याणां जनाधिप ।  
मृत्युस्तु वायुरूपेण अङ्गमाविशते सदा ॥  
तदा तत्परिहारार्थं मृत्युपूजां समाचरेत्<sup>३</sup> ।  
मृत्युं स्वर्णमयं कृत्वा पलमानसुवर्णतः<sup>४</sup> ॥  
चतुर्भुजं नीलवर्णं दीर्घास्यं रक्तलोचनम् ।  
रक्तपात्रञ्च खड्गञ्च पाशं शूलञ्च पाणिभिः ॥

(१) भयवद्धानां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तदा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) समाचरे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) सुवर्णमयं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



दधानं पद्ममध्यस्थं पूजयेद्वाधिशान्तये ।

आचार्यः पूजयेन्मृत्युं रक्तगन्धाक्षतैर्मृदा ॥

तिलपद्मे पूर्वमाने स्वगृहे शुद्धदेशतः ।

“परं मृत्यो” इति पूजामन्त्रः । गन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यैः प्रदक्षिण-  
नमस्कारैश्च पूजां समाप्य, तदीशानभागे स्थण्डिले समिदाज्य-  
चरुभिर्हीमं कुर्यात्, होमपूजायां स एव मन्त्रः । होमान्ते  
अपमृत्युत्तरणमार्जनवद्रोगिणं मार्जयेत् । द्विवर्षत्रिवर्षचतुर्वर्ष-  
मध्ये यदा रोगोद्भवस्तदैव सर्वमेतत् कार्यं, आचार्यादीनां  
अन्यथा मृत्युत्तरणं न भवति ।

होमान्ते मार्जनं कृत्वा ततोदानं समाचरेत् ।

आचार्यं गन्धपुष्पाद्यैरलङ्कृत्य यथार्हतः ॥

उदङ्मुखाय विप्राय स्वयमिन्द्राननः शुचिः ।

“तिलाः पापहरानित्यं” इति तिलदानम् । “शीतवातोष्ण-  
सन्त्राण”मिति वस्त्रदानम् ।

मृत्युरूपामिमां दिव्यां सर्वरोगोपशान्तये ।

महाभयनिरामार्थं दास्येऽहं द्विजवल्लभ ॥

प्रतिग्रहममुद्धृतं पापं मे यदुपार्जितम् ।

तत्सर्वं विलयं यातु व्याधिर्मे नाशयतामियात् ॥

इति प्रतिमादानमन्त्रः ।

ततस्तु प्रतिमा देया दशगावः स्वयम्भुवे ।

एतद्रोगविशुद्ध्यर्थं ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥



एवं यः कुरुते 'सोऽथ सद्योरोगात् प्रमुच्यते ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति जन्मजन्मनि पार्थिव ।

इति हेमाद्रौ आचार्यादीनां ज्वरादिसर्व्वरोगहरमृत्यु-  
प्रतिमादानविधिः ।

अथेदानीं कोटिहोमे आचार्यादीनां प्रायश्चित्तमाह ।

महानारदीये—

योविप्रः कोटिहोमेषु लक्षहोमेषु वा नृप ।  
आचार्यत्वं यदा कुर्यात् तदा नश्यन्ति तत्क्रियाः ॥  
देहान्ते नरकं गत्वा पिशाचोमूकसंज्ञकः ।  
न तस्य<sup>१</sup> निष्कृतिर्नास्ति त्रिः परिक्रमणाद्भुवः ॥

लैङ्गे—

कोटिहोमेषु योविप्रोनिर्निमित्तं प्रधानभाक् ।  
महान्तं नरकं भुक्त्वा पिशाचोजन्मनां त्रये ॥  
निष्कृतिः कुत्रचिद्दृष्ट्वा शम्भुना लोकशम्भुना ।  
त्रिः परिक्रमणाद्भूमेरुत कालोनिवेशनम् ॥

(१) यस्तु इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) तस्य वै इति लेखितपुस्तकपाठः ।



आजन्मपतनात्तिष्ठेत्तदा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

तदाह —

गौतमः—

कोटिहोमेषु नियमा बहवः सन्ति पार्थिव ।  
 मौनं पद्मामनं ध्यानं हविष्यान्नञ्च भक्षणम् ॥  
 स्थण्डिले शयनं गन्धताम्बूलादीनि वर्जयेत् ।  
 मन्त्रान्तमुच्चरन् हुत्वा हविरुत्तानपाणिना ॥  
 कृमिकीटास्थिकेशादिबाहुल्याद् धान्यमध्यतः ।  
 संत्यज्य विविधानेतान् ऋत्विजो वर्त्तयन् मदा ॥  
 दोषान्नियममन्त्यागान् न होमफलमश्नुते ।

महाराजविजये,—

अव्रतस्तु तिलान् हुत्वा परार्थं शुभमन्वतः ।  
 स एव ग्रामचाण्डालस्तङ्कटा नाऽऽलपेत् सुधीः ॥  
 चतुर्दश चाण्डाला ग्रामस्थास्तानाह ।

शिवपुराणे,—

रजकश्चर्मकारश्च नटीवरुड एव च ।  
 केवर्त्तमेढभिन्नाश्च स्वर्णकारस्तु मौचिकः ॥  
 तक्षकस्तिनयन्त्री च मूनश्चक्री तथा ध्वजी ।  
 त एते ग्रामचाण्डाला वाङ्मात्रेणाऽपि नाऽऽलपेत् ॥  
 परार्थं काशिकायार्या दत्तमग्निः कीकमानुगः ।  
 अतोऽपि दोषबाहुल्यात् होममेनं परित्यजेत् ॥



ईषन्मात्रस्य सौख्यस्य 'कृते दोषान् जिहासुभिः ।

नृभिस्त्याज्योलक्षहोमः कोटिहोमोऽपि पार्थिव ।

ब्रह्माण्डे,—

होमङ्गत्वा वृथा विप्रः कोटिं लक्षमथाऽपि वा ।

यागाद्यभावे कुर्वीत प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥

विप्रस्याऽर्थं कृते होमे षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।

बाहुजार्थं कृते होमे तदेतद्विगुणं चरेत् ॥

वणिग्भ्यस्त्रिगुणं प्रोक्तं पादजेभ्यश्चतुर्गुणं ।

मंस्कारार्थं कृते होमे षाड्गुण्यं पूर्ववच्चरेत् ॥

सदस्यब्रह्मणोरद्वं तदद्वं ऋत्विजां स्मृतम् ।

पूर्वोक्तप्रायश्चित्तवत् सर्वं कुर्यात् प्रायश्चित्ताकरणे दोषमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

लक्षहोमे कोटिहोमे आचार्य ऋत्विजोऽथवा ।

तद्दोषपरिहारार्थं अकृत्वा निष्कृतिं शुभाम् ॥

पैशाच्यमनुभूयाऽन्ते तिलघाती भवेद्भुवि ।

भिषक्स्त्रीषु च जन्मानि गर्हभः पञ्चजन्मसु ॥

वानरत्वं भवेत्पश्चात् कृकलासस्ततःपरं ।

ततोभुवं समामाद्य बहुरोगी प्रजायते ॥

आचार्याद्वं तयोः प्रोक्तं तदद्वं ऋत्विजां पृथक् । इति ।

प्रायश्चित्तं पूर्वोक्तरूपं पूर्ववत् सर्वं कुर्यात् । लक्षहोमेऽपि



एवमेव । लक्ष्मीमे कोटिहोमे प्रायश्चित्तमाचार्यस्य । तदङ्गं  
सदस्यब्रह्मणोस्तदङ्गं ऋत्विजां तदाह—

बौधायनः—

लक्ष्मे तत्कोटिहोमाङ्गं प्रायश्चित्तं तथाऽनयोः ।

तदङ्गमुभयोः प्रोक्तं तदङ्गं ऋत्विजां पृथक् । इति ।

तदेतत् प्रायश्चित्तं सर्व्वं पूर्व्ववत् कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ कोटिहोमे लक्ष्मीमे च प्रधानर्त्विजां  
प्रायश्चित्तम् ।

( अथेदानीं कालचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—)

कूर्मपुराणे,—

जन्मन्येकत्र पिशाचः कालचक्रप्रतिग्रहे ।

विप्रोभवति दुष्टात्मा पूर्व्वजैः कारणैर्विना ॥

मत्स्यपुराणे,—

भोगासक्तो द्विजो विद्वान् सौरक्षेत्रे प्रतिग्रहे ।

पिशाचोभवति क्षिप्रं राज्ञः पापानुवर्त्तिनः ॥



तस्येह निष्कृतिर्नास्ति तप्तकृच्छ्रशतादिना ।

सत्क्रियास्तस्य नश्यन्ति पुनः संस्कारमर्हति ॥

गारुडपुराणे—

मुखजो यमचक्रस्य संग्रहे पापमश्रुते ।

पिशाचत्वं भवेत् तस्य जन्मन्येकत्र भूमिष ॥

निष्कृतिः कथिता विप्रैस्तप्तकृच्छ्रशतत्रयात् ।

अन्यथा दोषमाप्नोति अकृत्वा नियमानिमान् ॥

स्थविरयोः पित्रोः संरक्षणं पशुदर्शपौर्णमासादयः एते नियमाः,  
एतेषां नियमानां लोपे दोषप्राप्तिः तस्मादेतत् परिपूर्णार्थं काल-  
चक्रकालपुरुषादिप्रतिग्रहः । तद्व्यस्य सर्वस्य परित्यागेन एकां  
रजनीमुपोष्य पञ्चगव्यप्राशनं विशोधनं, अन्यथा तप्तकृच्छ्रशतत्रयम्  
प्रायश्चित्तं कुर्यात् । उभयोरेतयोरभावे पिशाचानन्तरं सहस्र-  
वृषणीनाम मृगविशेषो जायते । तदाह—

कीर्त्ति,—

पित्रादिरक्षणाभावे नियमानामसम्भवे ।

प्रायश्चित्तमकृत्वा तु सहस्रवृषणी मृगः ॥

ततः परं वराहः स्याद् विडालस्त्रिषु जन्मसु ।

तस्मादेतद्विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

उभयोर्लोकयोः पूज्य उभौ लोकौ तरेत्तदा ।

इति हेमाद्रौ कालचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



## अथेदानीं कालपुरुषप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

स्कन्दपुराणे.—

राज्ञः पीडानिवद्धस्य सूर्यसोमग्रहेऽपिवा ।  
पुण्यकाले पुण्यतीर्थे द्विजोभोगपरायणः ॥  
गृह्णीयात् कालपुरुषं राज्ञोदोषानुवर्त्तिनः ।  
यमस्य सदनं गत्वा यमपाशनिपीडितः ॥  
ततः परं पिशाचोऽभूत् शून्यागारेषु वर्त्तयन् ।  
सन्त्वासयन् जनान् सर्वान् बालवृद्धातुरानिह ॥  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा गायत्र्याः पञ्चलक्षतः ।  
तिलाः सन्तीह यावन्तस्तावत्कालं न निष्कृतिः ॥  
पञ्चलक्षेण गायत्र्यास्तिलाभर्षाभवन्त्यतः ।

लैङ्गे,—

काश्यादिपुण्यतीर्थेषु पुण्यकालेषु भूमिपात् ।  
गृह्णीयात् कालपुरुषं द्विजोयो निर्निमित्ततः ॥  
स तु कालवशं याति बहुशृङ्खलयाऽऽवृतः ।  
शून्यागारेषु सर्वेषु पिशाचः सञ्चरन् भवेत् ॥  
पञ्चलक्षैर्वदमातुर्निष्कृतिर्नाऽस्ति चान्यथा ।  
यावन्तोऽत्र तिलाः सन्ति पुरुषे कालसंज्ञिते ।  
तावन्त्येतानि पापानि राज्ञस्तस्य प्रतिग्रहात् ॥  
तदा विशन्ति तं विप्रं तस्माद्विप्रः स पातकी ।  
तं कदा नाऽऽलपेद् ब्रह्मन् तथा तं नाऽवलोकयेत् ॥



तस्माद्विशुद्धिं कुर्वीत पञ्चलक्ष्मिं चाऽन्यथा ।  
 'सर्व्वव्ययं वा कुरुते यागार्थञ्च न दोषभाक् ॥  
 कालपुरुषं कालचक्रं हयमेतत् समं भुवि' ।  
 यमस्तु कालपुरुषश्चक्रं तस्याऽऽयुधं पृथक् ॥  
 'उभयं यदि गृह्णीयाद्दोषस्तत्र न गण्यते' ।  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा उभयं सन्तरेत्तदा ॥

इति हेमाद्रौ कालपुरुषप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं गजप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

देवीपुराणे—

गजप्रतिग्रहीता चेदिप्रः पुण्याहसङ्क्रमे ।  
 नित्यं नैमित्तिकं काम्यमिष्टा'पूर्त्तादिकञ्च यत् ॥  
 तत् सर्व्वं विलयं याति भिन्नभाण्डोदकं यथा ।  
 नित्यकर्मफलाभावाच्चक्रीभवति भूतले ॥

(१) सर्व्वं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विभो इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पुरुषे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) उभयोः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) गम्यते इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।

(६) इष्टपूर्त्तादिकमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



१चक्री कुलालकः, नित्यं स्नानसम्यादि, नैमित्तिकं गङ्गा-  
स्नानादि, काम्यमनन्तव्रतादि, इष्टमग्निष्टोमादि, पूर्त्तं तटाक-  
धननिक्षेपादि ।

तदेवाह,—

कौर्मो— ( पूर्त्तमधिकृत्य )

तटाकोधननिक्षेपो ब्रह्मस्थाप्यं सुरालयः ।

२तन्मूर्तिर्वनकामारौ सप्तमंस्थानमिष्यते ॥

चतुर्दश चाण्डालभेदाः—

मार्कण्डेयपुराणे—

रजकश्चर्मकारश्च नटोवुरुड एव च ।

कैवर्त्तमेदभिक्षाश्च स्वर्णकारस्तु सौचिकः ॥

तक्षकस्तिलयन्त्री च सूतश्चक्री तथा ध्वजी ।

चतुर्दश समा ह्येते चाण्डालाः परिकीर्त्तिताः ॥

नित्यकर्मभ्रंशो<sup>४</sup> नामधारक इत्युच्यते ।

तदेवाह—

शिवपुराणे—

(१) कुलाल इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

( ) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नदृश्यते ।

(२) तत्कृतोरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सन्तानमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) भ्रंशे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



'शूद्रापतिः कर्महीनो वेदहीनश्च मूषकः ।  
अतः प्रतिग्रहोराजन् गर्हितः<sup>१</sup> साधुवर्त्तिनाम्<sup>२</sup> ॥  
यागाद्यसम्भवे तात न च दोषः प्रतिग्रहे<sup>३</sup> ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति दुःखी स्याज्जन्मजन्मनि ॥

शम्भुरहस्ये—

निष्कृतिस्तस्य कथिता गजं यः सम्परित्यजेत् ।  
चान्द्रायणत्रयं कृत्वा पुनः संस्कारमर्हति ॥

स्कन्दपुराणे,—

हस्तिनं यो नु गृह्णीयान् मञ्जुलाशृङ्गलान्वितम्<sup>४</sup> ।  
तस्यैव नित्यकर्माणि न फलन्ति द्विजन्मनः ॥  
चान्द्रायणत्रयं कृत्वा पुनः संस्कारकृद्भिजः ।  
सिद्धिमाप्नोति चाण्डालादन्यथा पतितोभवेत् ॥ इति ।

चान्द्रायणलक्षणं कृच्छ्रप्रकरणे<sup>५</sup> अभिहितम् ।

भविष्योत्तरे ।

मञ्जुलाशृङ्गलावद्धं हस्तिनं पापदायिनम् ।  
देवालये पुण्यतीर्थे यो गृह्णीयाद्विजाधमः ॥

(१) शूद्रापतिरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२) गर्हितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) साधुवर्त्तिना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) प्रतिग्रहः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) शृङ्गलान्वितः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६ कृच्छ्रप्रकरणेऽपि इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कुलालकः स सद्योऽभूत् तस्य नित्यं विनश्यति ।  
 चान्द्रायणत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥  
 पुनः संस्कारपूतात्मा कुर्याद्यागादिकं पुनः ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति पुत्रहीनोऽपि जायते ॥

इति हेमाद्रौ गजप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं श्वेताश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे,—

पुरा दुर्व्यासमः शापाद्गतैश्वर्यः पुरन्दरः ।  
 तदर्थं मथितः<sup>१</sup> सिन्धुर्दिविजैरसुरान्वितैः ॥  
 ऐरावतः कल्पतरुश्चन्द्रमाः कमलालया<sup>२</sup> ।  
 उच्चैःश्रवाः समुत्पन्नः श्वेताश्वस्तदनन्तरम् ॥  
 देवमध्ये हरिः साक्षाद्विदमाह वचस्तदा ।  
 शृण्वन्तु देवताः सर्व्वाः श्वेताश्वं तं भुवस्थले ॥  
 सपल्याणं सोपकरं सायुधं व्याधिवर्जितम् ।  
 यो राजा विप्रमात्कुर्यात्<sup>३</sup> स गच्छेन्नामकं पदम् ॥

(१) मथ्यते इति क्रातिलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कमलोद्भवा इति क्रातिलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा इति क्रातिलेखितपुस्तकपाठः ।



तं हयं योनु गृह्णीयात् द्विजः पापपरायणः ॥

यागादिकमकृत्वा तु आत्मभोगपरायणः ॥

स भवेन्मरणे विप्रोगर्हभः क्रोधसंयुतः ।

तस्य तु निष्कृतिः<sup>१</sup> प्रोक्ता तमकृच्छ्रशतत्रयात् ॥

लिङ्गपुराणे,—

श्वेताश्वं पुण्यकालेषु मुख्यकालेषु पर्वसु ।

सायुधं सहपल्याणमुपस्कर<sup>२</sup>समन्वितम् ॥

निष्कारणं द्विजोष्टृत्वा भवेद्द्वै<sup>३</sup> गर्हभोभुवि ।

तस्यैव निष्कृतिरियं कथिता मुनिपुङ्गवैः ॥

तमकृच्छ्रत्रयं कृत्वा केशानां वपनं चरेत् ।

त्रयं शतत्रयमित्यर्थः ।

उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।

यागादिकरणे तस्य पञ्चगव्यमलं सकृत् ॥

न प्रायश्चित्तम् । तस्मात्<sup>४</sup> परिशुद्धो भवति ।

मत्स्यपुराणे —

सायुधं च सपल्याणमुपस्कर<sup>५</sup>समन्वितम् ।

पुण्यकालेषु तीर्थेषु दत्तं राज्ञा द्विजोऽग्रहीत् ॥

(१) निष्कृतिर्नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सोपस्करसमन्वितं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) भवेद्गर्हभताभुवि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तदुपरि शुद्धो भवति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) सोपस्करसमन्वितं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



देहान्ते तस्य वै जन्म खरस्य क्रोधजन्मनः ।  
 तद्धनेन द्विजोयागं ऋणमोचन<sup>१</sup>मेव वा ॥  
 अकृत्वा यदि भोगी स्यात् स सद्योगर्हभौ<sup>२</sup>सुतः ।  
 प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा तप्तकृच्छ्रशतत्रयं ।  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥

<sup>३</sup>ब्रह्माण्डे,—

द्विजो<sup>४</sup>हयं श्वेतरूपं गृह्णीयात्पुण्यसङ्गमे ।  
 तस्य वै निष्कृतिर्दृष्टा<sup>५</sup> तप्तकृच्छ्रशतत्रयात् ॥  
 केशानां वपनं कृत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ।

इति हेमाद्रौ श्वेताश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) ऋणमोचनएव वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) गार्हभीतनुः इति लेखितपुस्तकपाठः । गार्हभात्पुनः इति क्रीतपुस्तक-  
 पाठः ।

(३) क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(४) द्विजोऽयं श्वेतरूपेण इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) निष्कृतिर्नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



( अथेदानीं तिलचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह । )

ब्रह्माण्डे,—

पुरा शम्भूरथारूढः प्रतस्थे पुरसाधने ।  
वेदा हया सूर्यचन्द्रौ रथचक्रौ वभूवतुः ॥  
मेरुर्धनुर्गुणः<sup>१</sup> शेषः सायकस्तु चतुर्भुजः ।  
सारथिर्भगवान् साक्षात् शम्भुरेव हि साधकः ॥  
तथाऽपि तेन राजेन्द्र न साध्यं तत्पुरत्रयं ।  
पूजितं विप्रवर्याय दत्त्वा शीघ्रं पुरत्रयम् ॥  
अजयत्पुरमागत्य महेन्द्राय ददौ हरः ।  
विड़ोजास्तु स्वयं कृत्वा अजयच्छत्रुमण्डलम् ॥  
सर्वपापहरं पुण्यं सर्वोपद्रवनाशनं ।  
राज्यदं स्वर्गदं नृणां तिलचक्रं सुदुर्लभम् ॥  
पूजयित्वा द्विजाग्राय योदद्यात्सनरोभुवि ।  
अनुभूय भुवश्चक्रं तदन्ते हरिमश्रुते ॥

स्कन्दपुराणे,—

पुण्यकाले पुण्यतीर्थे तिलचक्रं भुवः पतिः ।  
पूजयित्वा द्विजैः<sup>२</sup> दद्यात् तस्यान्तोनास्ति कुतचित् ॥

---

(—) अयं पाठ लेखितपुस्तके नोपलब्धः ।

(१) मेरुर्धनुर्गुणैः शोभा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पुनरागत्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) द्विजः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



स भुवो मण्डलं साग्रं शतवर्षं द्विजैः सह ।  
 पालयित्वा हरर्वेश्म गच्छेत् स्वकुलसंयुतः ॥  
 तच्चक्रं यो द्विजोष्टत्वा बहुभिः कारणैर्विना ।  
 राजभिः पुण्यकालेषु दत्तं लोभपरायणः ॥  
 स भवेद्भुवि चाण्डालस्तिलघाती त्रिजन्मसु ।  
 तस्य वै निष्कृतिः प्रोक्ता<sup>१</sup> कृच्छ्रा<sup>२</sup>सान्तपनाच्छतात् ॥  
 निष्कृतिर्यागादिकर्म कृत्वा एकाहमुपोष्य पञ्चगव्यमेवाऽलं, न  
 प्रायश्चित्तम् ।

तदेवाह,—

शिवधर्मात्तरे,—

तिलचक्रं द्विजोष्टत्वा निष्कारणतया नृप ।  
 स भवेत्तिलघाती च त्रिषु जन्मसु पापभाक् ॥  
 कृत्वा शतं सान्तपनं शुद्धोभवति पापतः ।  
 अन्यथा पापमेवाशु भुक्त्वा नरकमश्रुते ॥  
 कृच्छ्रं सान्तपनं नाम महापातकनाशनं ।  
 एतच्छतं द्विजः कृत्वा तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते ॥  
 सान्तपनकृच्छ्रलक्षणं कृच्छ्रप्रकरणेऽभिहितम् ।

इति हेमाद्रौ तिलचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) निष्कृतिर्नास्ति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) कृच्छ्रसान्तपनात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



( अथेदानीं तिलगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह । )

ब्रह्माण्डे,—

ब्राह्मणो ब्रह्मसम्पन्नो यमलोकभयातुरः ।

गर्भं तिलमयं काऽपि न गृह्णीयाज्जनाधिपात् ॥

तिलगर्भं द्विजोधृत्वा तिर्यग्योनित्वमाप्नुयात् ।

न तस्य पुनरावृत्तिस्तिर्यग्जन्तोर्नराधिप ॥

नारदीये,—

इहलोके सुखं भुञ्जन् परलोकभयातुरः ।

त्यजेत्तिलमयं गर्भमन्यथा सूकरो भवेत् ॥

विष्णुधर्म,—

निष्कारणं तिलमयं गर्भं धर्त्ता द्विजो यदि ।

अनन्तं नरकं भुक्त्वा तिर्यग्योनित्वमाप्नुयात् ॥

देवीपुराणे,—

धृत्वा तिलमयं गर्भं पूर्वजः कारणं विना ।

महान्तं दोषमाप्नोति सूकरो भुवि जायते ॥

तिलगर्भप्रायश्चित्तं हिरण्यगर्भप्रायश्चित्तवत्सर्वं कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ तिलगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(—) अयं पाठः लेखितपुस्तके नोपलब्धः ।

१ ब्रह्माण्डे इति लेखितपुस्तके नास्ति ।

२ तिलगर्भमयं कापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३ धृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ महद्दोषमवाप्नोति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथेदानीं कनकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डे—

द्विजोयः पुण्यकालेषु तीर्थेष्वायतनेषु च ।  
 राजन्या<sup>(१)</sup>दन्यतोवाऽपि लोभमोहपरायणः ॥  
 कनकं प्रतिगृह्णीयाद् अणुमात्रमकिञ्चनः ।  
 स दरिद्रो भवेत् पापी नरकाननुभूय च ॥  
 पुनः संसृतिमाप्नोति मृतः कर्कोटकः कुमिः ।

नारदीये—

पुण्यकालेषु तीर्थेषु पुण्येष्वायतनेषु च ।  
 हिरण्यमणुमात्रं वा द्विजोयदि नराधिपात् ॥  
 प्रतिगृह्णाति स<sup>(२)</sup> पापी मृतः कर्कोटकः कुमिः ।  
 तस्य वै निष्कृतिः प्रोक्ता<sup>(३)</sup> चान्द्रायणचतुष्टयात् ॥

भारते—

कनकं प्रतिगृह्णीयाद् द्विजो निष्कारणान्मुने !  
 स महानिरयं गत्वा कुमिः कर्कोटमश्रवः ॥  
 पश्चात्तापसमायुक्तः चान्द्रायणचतुष्टयम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

(१) राजन्यो वान्यतो वापि इति लेखितपुस्तकपाठः । राजतो वान्यतो वापि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिगृह्णाम्भोः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) निष्कृतिर्नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



ब्रह्मवैवर्ते—

ब्रह्मनाभिसमुद्भूतं<sup>१</sup> सुरवल्लीफलं तथा ।

तद्वदाभाति सर्वत्र कनकं तदुदाहृतम् ॥

राज्ञः<sup>२</sup> पापं तदा दग्ध्वा दानकाले विशेद्विजम् ।

अतः प्रतिग्रहस्त्याज्यः द्विजैर्लोकेप्सुभिः सदा ॥

कनकप्रमाणं स्तेयादिप्रकरणे द्रष्टव्यम् ।

ब्रह्मवैवर्ते—

हिरण्यगर्भसम्भूतं कनकं यः समुदहेत्<sup>३</sup> ।

पुण्यकालेषु पुण्येषु तीर्थेषु द्विजवल्लभात् ॥

तस्य वै<sup>४</sup> निष्कृतिर्दृष्टा चान्द्रायणचतुष्टयात् ।

अथवा त्रिः परिक्रम्य क्ष्मां शुद्धेत् परितोनृप ! ॥

अणुमात्रमितिसंज्ञा—प्रतिग्रहं कनकस्य यावत्प्रमाणं पूर्वमुक्तं तावत् प्रतिग्रहं पापबाहुल्यमित्यर्थः । कनकं शुद्धसुवर्णं खदिराङ्गारवत् दीप्तियुक्तम् । दानाध्याये यावत् प्रमाणमुक्तं तावदित्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ कनकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) कारवल्ली इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) राजपापं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) समुदहेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तस्यैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथ तिलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

मुखजो बाहुजाद्राजन् पुण्यकालेषु पर्वसु ।

तिलप्रतिग्रहं कृत्वा निष्कारणमथाऽधनः<sup>१</sup> ॥

महत्पापमवाप्नोति व्रणरोगी स<sup>२</sup> जायते ।

ब्रह्माण्डे—

मधुकैटभयोर्युद्धे मासमेकं निरन्तरम् ।

अत्यन्तग्लानिमापन्नो हरिः स्वेदधरस्तदा ॥

स्वेदविन्दुसमुत्पन्नास्तिलाराशीकृता<sup>३</sup> वभुः ।

तिलानालोक्य महमा हरिरत्र जगाद ह ॥

युष्मान्<sup>४</sup> दत्त्वा तु भुक्त्वा तु हुत्वा वा जनवक्त्रभः ।

स सर्वपापनिर्मुक्तो मामकं लोकमश्नुते ॥

इत्युक्त्वा तान् गृहीत्वाऽऽदौ ददौ मुनिगणाय सः ।

मधुकैटभनामानौ हत्वा वैकुण्ठमाप्तवान् ॥

तदाऽऽरभ्य तिलास्वेते लोकेऽस्मिन् सञ्चरन्ति हि ।

तानेतान् मानवो<sup>५</sup> दत्त्वा विष्णुलोकमवाप्नुयात् ॥

(१) निष्कारणतया धनी इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रजायते इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) राशीभवन् तदा इति लेखितपुस्तकपाठः । राशीभवेत्तदा इति क्रीत-  
पुस्तकपाठः ।

(४) युष्मन् दत्त्वा वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) योनर इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तस्यैव निष्कृतिरियं कण्ठदघ्नजलेवसन् ।  
 प्रातरारभ्य-सायाह्ने फलभोजनमाचरेत् ॥  
 तद्विष्णोरिति 'मन्त्रेण मासमात्रेण शुध्यति ।

निष्कारणतया तिलान् प्रतिगृह्य पश्चात्तापसमायुक्तः प्रातःकाल-  
 मारभ्य कण्ठदघ्नजले वसन् “तद्विष्णोः परमं पद”मिति मन्त्रमुच्चरन्  
 सायंकाले विरम्य फलाहारं कृत्वा स्थण्डिले शयीत, एवं मास-  
 त्रयेण<sup>१</sup> शुद्धिमाप्नोति नाऽन्येन । दशमहादानमध्ये तिलदानस्य  
 यावन्तस्तिला विहितास्तावत्परिग्रहे प्रायश्चित्तमिदं वेदितव्यं  
 नाऽल्पस्य ।

तदाऽऽह —

ब्रह्मपुराणे—

तिलप्रतिग्रहे विप्रः पश्चात्तापसमन्वितः ।  
 प्रातः स्नात्वा नित्यकर्म समाप्य विधिपूर्वकम् ॥  
 उदयाज्जलमाविश्य कण्ठदघ्नजलेवसन् ।  
 तद्विष्णोरिति मन्त्रेण जपन्नामायमादरात् ॥  
 विरम्य नियतः<sup>२</sup> सम्यक् फलाहारं समाचरेत् ।

(१) इति वैश्वत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) शयेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मासत्रये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) निरपं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



केवले स्थण्डिले सुम्ना स्मरन् नारायणं विभुम् ।  
मासमात्रेण शुद्धः स्यात् अशुचिर्वाऽन्यथाद्विजः ॥

इति हेमाद्रौ तिलदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं दासीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

सुरूपां सुस्तनीं सुभ्रूं सुर्कशीं शूद्रयोनिजाम् ।  
दासीं द्विजोऽगृह्णीयात् भोगार्थं पतितोभवेत् ॥  
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं सद्यः क्षरति पापिनः ।  
विक्रयेद्यदि तां मूढश्चाण्डालत्वं तदाऽऽप्नुयात्<sup>१</sup> ॥

लिङ्गपुराणे—

दासीं शूद्रसमुत्पन्नां सर्वालङ्कारभूषिताम् ।  
निष्कारणतया गृह्णन् विक्रीणाति रमेत वा<sup>४</sup> ।  
चाण्डालयोनिमाविश्य वसेदाब्रह्मणः पदात् ॥

(१) नान्यथा इति क्रीत-लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिगृह्णीयाद्विजोऽयदि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) चाण्डालत्वमवाप्नुयादिति क्रीत लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) विक्रीयत्वा च तां रमेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरे,—

दामीमलङ्कृतां राजन् दत्तां राजभिरादरात् ।  
प्रतिगृह्य द्विजायस्तु कारणैर्वहुभिर्विना ॥  
रमेद्वा विक्रयेद्वाऽपि स चाण्डालोभवेत्तदा ।  
यावद्ब्रह्मा सृजेद्विश्वं तावच्चाण्डालजन्मता<sup>१</sup> ॥

शिवपुराणे,—

दामीमलङ्कृतां यस्तु प्रतिगृह्णाति वै द्विजः<sup>२</sup> ।  
पश्चात्तापसमायुक्तः प्रधानं स<sup>३</sup> परित्यजेत् ॥  
यागं कृत्वा ऋणं<sup>४</sup> तीर्त्वा तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ।  
अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति त्रिवर्षं यावभक्षकः ॥  
केशानां वपनं कृत्वा पुनः संस्कारमाचरेत् ।  
एवं त्रिवर्षाच्छुध्येत अन्यदानैर्न शुद्धिभाक् ॥

ब्रह्मवैवर्ते,—

दामीमलङ्कृतां शूद्रीं निष्कारणतया द्विजः ।  
प्रतिगृह्य पुनः पश्चात्तापेनाऽनेन संयुतः ॥  
कृत्वा त्रिषवणस्नानं जप्त्वा नारायणाक्षरं ।  
चतुर्थकालआयाते यवभुक्स्थण्डिले<sup>५</sup> स्वपन् ।

(१) चाण्डालजन्मसु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिगृह्य द्विजाधम इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सम्परित्यजेत् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) तीर्थं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) शयन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रधानं सम्परित्यज्य वर्षत्रयमतन्द्रितः ।

इह लोके परत्राऽपि शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥

एतत् प्रायश्चित्तं ऋणयागाकरणे वेदितव्यं, तदा पञ्चगव्यमात्रेण शुद्धिः । तयोरभावे प्रायश्चित्तेनाऽनेन शुद्धिमाप्नोति, नाऽन्यदानैरित्यर्थः । सर्पदष्टस्य यथा विषनिवारणमेवौषधं योजनीयं नाऽन्यथा तद्वदत्रापीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ दासीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं सोपस्करगृहप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

ब्रह्माण्डे,—

गृहं सोपस्करं राज्ञः<sup>१</sup> प्रतिगृह्य द्विजाधमः ।

अकृत्वा तद्वयं भोगाद् व्यालीभवति कानने ॥

लङ्गे,—

सोपस्करं द्विजोराजन् प्रतिगृह्यैव वाहुजात् ।

यागादिकं न कुर्याच्चेद् दण्डशूकोभवेदने ॥

(१) राज्ञा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) व्याली इति क्रातिलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) वर्षपृत्त्यर्थं इति काशीपुस्तकपाठः ।

(४) तेन सहितेत्यत्र नूतनेतिपाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्दृष्टः ।



सोपस्करमिति निक्षेपधान्यं पूर्यर्थम्, तेन सहितभाण्डखट्वादि कुशूलमुषलोल्खलकण्डनौट्षदुपलाखलारामकूपगोमहिषादिक-  
मित्वनादिकञ्च, गृहिणः प्रतिग्रहीतुर्वर्षेपूरणं यथा<sup>१</sup> भवति तेन  
प्रकारेण सहितं गृहं निर्माय श्रोत्रियाय दत्त्वा गृहदानफल-  
माप्नाति, नोचेद्यद्यहत्तं तावन्मात्रमेवफलं, न ग्रहीतुरपि तावत्पापं,  
तदाऽऽह—

मार्कण्डेयः,—

सोपस्करं गृहं रम्यं निर्माय<sup>२</sup> सुदृढं प्रभुः ।  
यः प्रयच्छेत्<sup>३</sup> पुण्यकाले श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ॥  
ममजन्मसु<sup>४</sup> राजन् स हरिः प्रीतिकरोभवेत् ।  
तद्गृहीत्वा द्विजोलोभाद् विना यागदिकं<sup>५</sup> हृथा ॥  
व्यय कृत्वा च मूढात्मा व्यालीभवति निर्जने ।  
तद्दोषपरिहारार्थं वर्षर्तौ वर्षपोडितः ॥  
मार्त्तण्डोदयमारभ्य क्षिन्नवामा वहिःस्थले ।  
जपन् वे वारुणं सूक्तं स्वमूर्धन्यस्तवाहुकः ॥  
मध्याह्ने नित्यकर्माणि तथा पूर्ववदाचरेत् ।  
मायङ्गाले फलाहारः स्वपिद्वे स्थण्डिले व्रती ॥

(१) यथेति क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नास्ति ।

(२) दृढवत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पुण्यतीर्थे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) राजेन्द्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) यागादिकननयेकं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



वर्षर्तुमेवं नीत्वाऽथ शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमां ।

वारुणं सूक्तं हिरण्यशृङ्गमित्यनुवाकः ।

ब्रह्माण्डे,—

मीपस्करं गृहं विप्रः प्रतिगृह्णाति चै'नृपात् ।

तस्यैह<sup>(१)</sup> निष्कृतिर्नाऽस्ति सुघोरात्सर्पजन्मतः<sup>(२)</sup> ॥

वर्षर्तौ जलवातार्तः क्लिन्नवामा जितेन्द्रियः ।

न्यस्तबाहुः स्त्रोत्तमाङ्गे वहिरेव वसन् सदा ॥

जपन् वै वारुणं सूक्तं यावदस्तङ्गतोरविः ।

तदा विरम्य मनसा फलाहारं समाचरेत् ॥

स्थण्डिले च स्वपेद्रात्री कृतं पापमनुस्मरन् ।

एवं मामद्वयं नीत्वा गृहदानप्रतिग्रहात् ॥

तस्माद्दोषात् प्रमुक्तः स्या<sup>(३)</sup>दन्यथा भुजगोभवेत् ।

यागे ऋणे वा सर्वस्वव्ययं कृत्वा न दोषभाक् ॥

प्रधानत्यागमथवा पशुनिक्षेपवर्जितं ।

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति न भुङ्क्ते<sup>(४)</sup> सर्पजन्म सः ॥

इति हेमाद्रौ गृहदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) प्रतिगृह्णानराधिपात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्यैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सर्पजन्मत्वतोऽप्य इति क्रीतपुस्तकपाठः । सर्वजन्मत्वतोऽप्य इति लेखित-  
पुस्तकपाठः ।

(४) अभृदि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) भुङ्क्ते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ शय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मत्स्यपुराणे—

शय्यां सोपस्करां दिव्यां मखट्टां मुखजोद्विजः ।  
पुण्यकाले पुण्यतीर्थे राज्ञो<sup>१</sup> गृह्णाति लोभतः ॥  
तस्य मृत्युभयं प्रोक्तं षण्मासाभ्यन्तरे यमात् ।  
ततः पिशाचतां याति त्रिषु जन्मसु गोखरः ।

स्कन्दपुराणे—

एकादश्यां पौर्णमास्यां चन्द्रसूर्यग्रहे द्विजः ।  
पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे शय्यां चोपस्करान्विताम् ॥  
राज्ञः सम्पादयेद्यस्तु तस्य मृत्युभयं भवेत् ।  
ततः पिशाचोभवति गोखरत्वमवाप्यते ॥

भविष्योत्तरे—

आषाढशुक्लद्वादश्यां पुण्यतीर्थे नराधिप ।  
शय्यां सोपस्करां राज्ञां द्विजोयः सम्परिग्रहेत् ॥  
<sup>२</sup>स खरत्वमवाप्नोति मृत्युवक्त्रादिमोचितः ।  
तस्य वै<sup>३</sup> निष्कृतिर्नास्ति तीर्थेर्दानशतैरपि ॥

(१) राज्ञां यदिह संग्रहादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गोखुरत्वमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) नखरत्वं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४ तस्यैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



ब्रह्माण्डे—

शयनोत्थानद्वादश्याः<sup>१</sup> पुण्यकाले नदीतटे ।  
 सखट्ठां दामसंयुक्तां शय्यां यः सम्परिग्रहेत् ॥  
 षण्णामाम्बुत्युमाप्नोति गोखरत्वमवाप्यते ।  
 तस्य वै निष्कृतिर्दृष्टा ब्रह्मणा लोकवर्त्तिना ॥  
 चतुर्भागव्ययं वाऽपि यागायं दक्षिणां वहन् ।  
 अभाव<sup>२</sup>सम्भवे राजन् शृणु निष्कृतिमुत्तमाम् ॥  
 वसन्तर्त्तौ जले स्नात्वा अश्वत्थं समुपाश्रयेत् ।  
 हस्तमात्रं विलिप्याऽथ गोमयेन सुवर्चसा ॥  
 उपविश्याऽत्र देशे वै नित्यकर्म समाप्य च ।  
 माध्याह्निकं ततः कृत्वा पुनः कर्म समाप्य च ॥  
 मौनी व्रतमुपस्थाय जपेदस्तमयावधि ।  
 त्रियम्बकं महामन्त्रं न्यासध्यानपुरःसरम् ॥  
 माध्याह्निकं समाप्याऽथ<sup>३</sup> पुनः कर्म समाचरेत् ।  
 सायं सन्ध्यामुपासित्वा नित्यहोमं समाप्य च ॥  
 फलाहारं ततः कृत्वा स्थण्डिले स्वगृहे स्वपेत् ।  
 ब्रह्मचर्यं व्रतं कुर्वन् कृतं पापमनुस्मरन् ॥

१। द्वादश्यां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

२। तस्यैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३। अभाव सम्भवाद् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४। ततः कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



एवं मामद्वयं नीत्वा शुद्धः स्यात्तत्परिग्रहात् ।

अन्यथा दोषमाप्नोति पिशाचत्वं 'व्रजेदिह ॥

सोपस्करामिति शय्यादोलार्थं शृङ्खलाचतुष्टयं हस्तपादनिवेश-  
नार्थं<sup>१</sup> सूत्रावरणवद्<sup>२</sup> उपवर्हणं सोत्तरच्छदञ्च । एतत् सोपस्करम् ।  
सोपस्करं तत्पं द्विजैर्निष्कारणार्थं लोकेषुभिर्न प्रतिग्राह्यम् ।  
उभयोरभावे मधुमाधवमासयोः पूर्वोक्तनिष्कृतिं कृत्वा तत्परि-  
ग्रहात् शुद्धिमाप्नोतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ शय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं कन्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

ब्राह्मणो ब्रह्मसम्पन्नो ब्रह्मचर्य्यपुरस्कृतः ।

ममुदहेत् स्वकुलजां कन्यां ब्राह्मादिषु स्थिताम् ॥

तयोः प्रसूतः<sup>३</sup> कुलजः पितृभक्तिपरायणः ।

मत्तरेदुभयं लोकं तत्पुत्रः पुण्यवान् द्विज ! ॥

(१) भवेदिह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) निदेशनार्थं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सूत्रमतत्पुत्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ प्रसूतकुलज इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



ब्राह्मादिषु त्रिषु विवाहेषु कन्यास्वीकरणे न दोषः ।

तदेवाह ।

नारदीये---

ब्राह्मोदैवस्तथाचाऽऽर्षः प्राजापत्यस्तथासुरः ।

गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोमतः ॥

तेषां त्रयः प्रशस्ताः स्युः शेषाः<sup>(१)</sup> पञ्च विगर्हिताः ।

तस्माद् ब्राह्मादिषु ब्रह्मन् विवाहः पुण्यलोकदः ॥

एवं द्विजायः कुरुते स्वपितृनुदरे<sup>(२)</sup> तथा ।

एतन्मुख्यतमं त्यक्त्वा यो विप्रोवाहुजादिषु ॥

कन्यार्थं धनमादाय कामलोभपरायणः ।

तद्व्येण विवाह्यैनां<sup>(३)</sup> जायते खलु पापभाक् ॥

रतिमात्रं सुखं तस्य मन्ततिर्दातुरेव हि ।

तस्मादेतत्परित्याज्यं द्विजैः सर्वत्र सर्वदा ॥

ब्राह्मणव्यतिरिक्तजातिभ्यः कन्यकाधनमंग्रहं दोषमाह ।

कूर्मपुराणे,—

मुखर्जोऽन्यत्र जातिभ्योविवाहार्थं धनं वहन् ।

तेनाऽपूर्तेन वसुना यदि कन्यां समुद्वहेत् ॥

(१) तेषां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) उत्तरेन इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कन्यां यदिह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स विप्रः पतितोभूयात् तत्पुत्राः पतिताः स्मृताः<sup>१</sup> ।  
 तत्पत्नी तत्सुता राजन् वृथा यत्र धनार्जनम् ॥  
 कलौयुगे विशेषेण स्वजातेः<sup>२</sup> सम्परिग्रहः ।  
 तेषु मुख्यतमः प्रोक्तः कलौ नेच्छन्ति तद्बुधाः<sup>३</sup> ॥

ब्रह्मवैवर्ते—( कलिवर्ज्याधर्मान् प्रकृत्य )

स्वजाते<sup>४</sup>रन्यजातिभ्योद्विजैः कन्यापरिग्रहः ।  
 दत्तक्षतायाः कन्यायाः पुनर्दानं परस्य च ॥  
 समुद्रयात्रास्वीकारः कमण्डलुविधारणम् ।  
 दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं वर्जनोयं<sup>५</sup> कलौयुगे ॥  
 अतः पाणिग्रहायं वा नाहरेद्वनमन्यतः ।  
 अपन्यार्थं विवाहश्च यागार्थं धनसंग्रहः ॥  
 ब्राह्मण्यं परलोकार्थं ब्रह्मचर्यन्तु मुक्तये ।  
 पातिव्रत्यं कुलार्थन्तु जपः पापप्रणाशने ॥  
 सत्यं धर्मप्रतिष्ठार्थं आचारः कुलवृद्धये ।  
 तस्मात्कन्या परित्याज्या विप्रेणाऽन्यकुलोद्भवा ॥

(१) भवन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) स्वजातिः स परिग्रह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) स्मरय इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

(४) स्वजातिरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) वर्जयित्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कन्येति कन्यकार्थधनपरिग्रहः तत्परिग्रहे दोषं प्रायश्चित्तञ्चाह ।

कूर्मपुराणे,—

मुखजः पुण्यकालेषु पुण्यदेशेषु पर्वसु ।  
जातित्रयादनं धृत्वा उद्वहेत्<sup>१</sup> सुखलिप्सया ॥  
सा पत्नी तत्कुलोद्भूता तत्सन्तानन्तदिष्यते ।  
तद्भर्ता च त्रयं लोके यावत्कालं प्रकीर्त्यते<sup>२</sup> ॥  
तत्कुलं तत्पतिः पुत्राः पतिताःस्युर्न मंगयः ।  
तत्रैवं वर्जयेत् पञ्च विप्रोलोकपरायणः ॥  
कन्यादानं नमस्कारं भोजनं सहभाषणम् ।  
आमन्त्रणं पितुः श्राद्धे स्वप्नेऽपि च न संस्मरेत् ॥  
प्रायश्चित्तं यदीच्छेत पश्चात्तापसमन्वितः ।  
पत्नीपुत्रान् परित्यज्य प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

पूर्व<sup>३</sup> यत्पतितप्रायश्चित्तमुक्तं तत्सर्वं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति  
नान्यतः ; तत्पुत्राणां तत्पत्न्याश्च प्रायश्चित्तं नेच्छन्ति । पतित-  
प्रायश्चित्तं सम्यक् कृत्वा स्वकुले कन्यामुदाह्य लोकमस्मत्त्या व्यव-  
हरेत्, एतत् पापं प्रकटयेत् न गूढयेत्, तदाह ।

(१) दारार्थं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) चरेदिति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सर्वं पतितप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



नारदः,—

गुरुरात्मवतां शास्ता शास्ता राजा दुरात्मनाम् ।  
इह प्रच्छन्नपापानां शास्ता वैवस्वतो यमः ॥  
नत्माद् द्विजः कुलेऽन्यत्र नाहरेद्द्वारमंग्रहम् ।

इति हेमाद्रौ कन्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथेदानीं कपिलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

कपिलां वत्समहितां राज्ञा<sup>१</sup> दत्तामलङ्कृताम् ।  
पुण्यकाले च पुण्यर्क्षे द्विजोयः मम्परिग्रहेत् ॥  
तस्य<sup>२</sup> वै जन्मवैफल्यं विपिनस्थेव चन्द्रिका ।  
यावन्ति धेनुरोमाणि तावन्नरकमश्नुते ॥

हरिवंशे,—

कपिलां संग्रहेद् वत्सां द्विजो लोभपरायणः ।  
तद्रोमाणीह यावन्ति तावन्नरकमश्नुते ॥

१) राज्ञामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) तस्यैव इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



मत्स्यपुराणे,—

कपिला ब्रह्मणादत्ता लोकोपकरणादिह ।  
 राजा दद्याद् द्विजेभ्यश्च देहपापापनुत्तये ॥  
 इतीरितं तदा वाक्यं मान्धात्यप्रमुखैर्नृपैः<sup>१</sup> ।  
 तां गृहीत्वा द्विजेभ्यश्च दद्युः पापापमोचनीम् ॥  
 तदाप्रभृत्यमौधेनुर्दातृणां पुण्यवर्द्धिनी ।  
 सर्वथा पुण्यकालेषु स्वर्गेदा धेनुरपि ता<sup>२</sup> ॥

नारदीये—

कपिलां नमनङ्कृत्य सवत्सां त्रिधिपूर्वकम् ।  
 अर्चयित्वा द्विजायाय यो दद्यात् सोऽपि पुण्यभाक् ॥  
 तां तु योमुखजोधृत्वा यतते<sup>३</sup> द्रव्यमंग्रहे ।  
 सोऽरण्ये निज्जने देशे गवयोभवति ध्रुवम् ॥  
<sup>४</sup>तस्यैह निष्कृतिर्नास्ति त्रिषु जन्मसु पार्थिव ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

द्विजो गृह्णाति<sup>५</sup> वेदतां राज्ञा वत्सान्वितां मतीम् ।  
 कपिलां द्रव्यवात्सल्यात् स भवेत् गवयोवर्न ॥

(१) प्रमुखान्दपादिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धेनुदायिनी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) दृष्ट्वा तद्द्रव्यमंग्रहे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तस्यैव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) दत्तां पुण्यकाले इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तस्यैव निष्कृतिरियं दृष्टा मुनिवरोत्तमैः ।  
 गां सवत्सां परित्यज्य तद्व्यं यागपूर्त्तये ॥  
 व्ययं कृत्वा ऋणी वाऽपि न दोषो<sup>१</sup> कपिलाग्रहे ।  
 प्राजापत्यमहस्त्राणां<sup>२</sup> त्रयेण शुद्धिरिति ॥  
 पूर्वोक्तेनैव मार्गेण परिषद्बिधिपूर्वकम् ।  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा यागमात्रं समाचरेत् ॥  
 आधानी वा भवेत्<sup>३</sup> कुर्याद् दर्शपूर्णदिकाः क्रियाः ॥  
 न भवेत्तेन दोषोऽत्र अग्निर्दहति पातकम् ॥  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा यागमात्रं समाचरेत् ।

तदाह—

आपस्तम्बः—

“अग्नीन् आध्यास्ये सर्व्वकत्वथमिति” वचनबलादाधानदीक्षा  
 मनुसरन् अग्निहोत्रादिकाः क्रियाः समाचरन्<sup>४</sup> सर्व्वपापेभ्योमुक्ती  
 भूया”दिति वेदितव्यम् ।

इति हेमार्द्रो कपिलाधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

१) दोष इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) त्रयाणां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) सोऽपि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४) सुचरन् इति क्रांतिलेखितपुस्तकपाठः ।



अथेदानीं पृथिवीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

पृथिवीं भूमिपालेन दत्तां शालीक्षुमन्भवाम् ।

यागार्थमग्निहोत्रार्थं प्रतिगृह्यं द्विजोत्तमः ॥

तत्रोद्भवेन धान्येन आधानादिकमाचरेत् ।

आधानानन्तरं दर्शपूर्णमासादिकं कुर्यादित्यर्थः ।

ब्रह्माण्डे—

ब्रह्मविद् ब्राह्मणस्तस्माद् भुवं भूपालवल्लभात् ।

प्रतिगृह्याऽग्निहोत्रादीन् अतिथींश्चापि पूजयेत् ॥

मार्कण्डेयपुराणे—

कुटुम्बपालनञ्चैव क्रतुर्वा यावती च भूः ।

समाप्तिश्च यथा कार्या तावतीं क्ष्मां परिग्रहेत् ॥

महाराजविजये,—

वृद्धौ च मातापितरौ साध्वी भार्या सुतः शिशुः ।

सत्क्रियाः क्षयमापन्ना धर्माऽपक्षीयन्ते तदा ॥

तदा प्रतिग्रहोभूमेः विप्रस्यैव न दोषभाक् ।

अगोतिवर्षादूढं वृद्धः । या नारी स्वप्नेऽपि परं न चिन्तयेत् न

सम्भावयेत् पतिपादप्रक्षालनादिकं मनसाऽप्यकुत्सयन्ती प्रत्यहं

(१) पृथ्वीग्रह्याद्विजोत्तमेरिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) यस्मात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कुर्यात् मा माध्वी । षोडशवर्षात् पूर्वं शिशुः, सत्क्रियाः  
अग्निष्टोमादयः, धर्मो नित्यस्नानादिः । तदा क्ष्मापरिग्रहो  
विप्रस्य न दोषः, यावत्या भुवा एतेषां परिपूरणं भवति तावद्भूमि-  
परिग्रहे न दोषः ।

विशुरहस्य,—

पितृपत्नीसुतानाञ्च अग्निष्टोमादिकर्मणाम् ।

‘संरक्षणाय राजेन्द्र न दोषः क्ष्मापरिग्रहे’ ॥

विनाऽप्येतैर्निमित्तर्यः पृथिवीं संग्रहेद् द्विजः ।

‘स सभार्यः सपुत्रश्च नरके वासमश्नुते ॥

मार्कण्डेयपुराणे,—

धान्यं प्रभूतं मुखजस्तत्र जातं त्रयाव्यये ।

‘विक्रीय निजभोगार्थं “भवेयं धनिको” भुवि ॥

इत्यहङ्कारकथं च चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ।

निष्कृतिस्तस्य कथिता वमिष्ठेन महात्मना ॥

पादत्रयेऽब्दकच्छं स्यात् तत्त्रैगुण्ये त्रिधा स्मृतम् ।

वैजानां प्रस्थमात्राणां प्रनूति<sup>१</sup> र्यावती क्षितिः ॥

(१) पापसंहरणे राजन् इति क्रीतपुस्तकपाठः—

(२) क्ष्मापरिग्रह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) सभार्ये पुत्रसहित इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) विक्रयित्वात्मभोगार्थं इतिक्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) समान्प्रति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तस्याः प्रतिग्रहे कायं मुनिभिः परिकीर्तितम् ।

<sup>१</sup>प्रसूतिर्द्रोणवीजानां पृथिवी यावती भवेत् ॥

तस्याः परिग्रहे चान्द्रं प्रायश्चित्तं विशोधनम्<sup>२</sup> ।

स विप्रः शूद्रतां याति वृथा भूमेः परिग्रहात् ॥

( विंशत्यादशभिर्द्रोणैर्यावती क्षमा महीभुजा । दत्ता तस्याग्रहेविप्र-  
श्चान्द्रायणशतञ्चरेत् । अतोधिकाया ग्रहणे प्रायश्चित्तं न दृश्यते )

पित्वार्जितं निजं चेन्न राजाक्रान्तं यदा भवेत् ।

आत्मारजितं वा राजेन्द्र समाक्रान्तं नृपात्मजैः ॥

तदा प्रतिग्रहं कृत्वा यावन्मात्रेण पोषणम् ।

जीवनं धर्ममिद्विर्वा अथवा ऋणमोचनम् ।

तावत् प्रतिग्रहे दोषो न भवेदिति निश्चितम् ॥

कूर्मपुराणे,—

राजाक्रान्तं जनाक्रान्तं चेन्न पित्वार्जितं यदिति ।

तदा प्रतिग्रहं कृत्वा यावन्मात्रेण जीवनम् ॥

तावत् प्रतिग्रहेद्विप्रो<sup>३</sup> राज्ञस्तस्मान् न दोषभाक् ।

इति हेमाद्रौ पृथिवीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

१) समाप्तिरिति श्रुतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) न दृश्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

—। अथ पाठ लेखितपुस्तकेनोपलब्धः ।

३) राज्ञातेन इति क्रातपुस्तकपाठः ।



अथेदानीं सप्ताचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तं ब्रुवन्  
कनकाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

तदाह,—

देवीपुराणे,—

अचलं कानकं पुण्यं<sup>१</sup> राज्ञः पुण्यानुवर्त्तिनः ।

द्विजो य इह गृह्णाति स<sup>२</sup> भजेद्वै पिशाचताम् ॥

कनकस्वरूपमाह,—

लिङ्गपुराणे,—

पूर्तस्वष्टसु संशुद्धं शोधितं वह्नितापनात् ।

अतोव शुद्धतां याति कनकं तदुदाहृतम् ॥

पद्मपुराणे,—

कनकाद्रिं द्विजोदत्तं<sup>३</sup> राजभिः पुण्यवर्त्तिभिः ।

प्रतिगृह्णन् हि पुण्याहे सम्भवेत् पिशिताशनः ॥

मार्कण्डेयपुराणे,—

कनकाद्रिं नदीतीरे पुण्यकालेषु राजभिः ।

दत्तं द्विजश्चेद् गृह्णीयात्<sup>४</sup> पिशाचः स्याद्विरूपकः ॥

---

१। धृत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मोहात्मा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३। धृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४। पुण्यकालेषु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५। तत्तद्विजोनुगृह्णीयादिति लेखितपुस्तकपाठः ।



( नदीषु पुण्यकालेषु पुण्यतीर्थेषु पर्वसु ।  
 कनकाद्रिं द्विजोधृत्वा लोभान्निष्कारणं भुवि ॥  
 स भवेद्विन्ध्यदेशेषु—पिशाचः कान्तिवर्जितः । )  
 चतुर्थांशव्ययं कृत्वा यागं वा बहुदक्षिणम् ।  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनः संस्कारमाचरतः ॥  
 शुद्धिमाप्नोति लोकेऽस्मिन् अर्हता नित्यकर्मसु ।  
 भिक्षाटनं वरं नृणां एतस्मात् सम्परिग्रहात् ॥  
 संसारं वा त्यजेद्विद्वान् मय्यासं वा परिग्रहेत्<sup>१</sup> ।  
 एवं मुक्तिमवाप्नोति कनकाद्रिं त्यजेदतः ॥

अपरिग्रहस्य विप्रस्य शुद्धा वृत्तिः कथिता ।

उच्छ्ववृत्तिः शिलवृत्तिः कुम्भवृत्तिः कुशूलता ॥

चतुर्धा वृत्तयः प्रोक्ताः कनकाद्रिप्रतिग्रहात् ।

एतासां पूर्वोक्तानामभावे कनकाद्रिग्रहे प्रायश्चित्तमाह—  
 मार्कण्डेयपुराणे,—

कनकाद्रिं द्विजोयसु गृह्णाति कारणेर्विना<sup>२</sup> ।

स तु शुद्धिमवाप्नोति कृच्छ्रैरयुतसंख्यकैः<sup>३</sup> ॥

कृच्छ्राणि प्राजापत्यानि ।

— १. अयं पाठः लेखितपुस्तके नोपलब्धः ।

२. वा परिग्रहं इति क्रांतिलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति क्रांतिलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा निष्कारणं सुधीः इति क्रांतपुस्तकपाठः ।

(४) कृच्छ्राण्ययुतसंख्यया इति क्रांतिलेखितपुस्तकपाठः ।



लिङ्गपुराणे—

कनकाद्रिं द्विजोधृत्वा रात्रः पुण्यागमे वृथा ।

कृच्छ्रैरयुतसंख्याकैः शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा ॥ इति ।

इति हेमाद्रौ कनकाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ रजताचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

वामनपुराणे—

राजतं योमुगृह्णीयात् ( अचलं राजवल्लभात् ।

पूर्वजो भोगमोहात्मा कालपाशवशं गतः ॥

तत्पापमनुभूयाऽऽशु बलाकः स भवेदने ।

त्रिषु जन्मसु कङ्कः ) स्यात् श्वेतरोगीभवेत्ततः<sup>१</sup> ॥

शिवपुराणे—

राजभिः पुण्यकालेषु दत्तं योरजताचलम् ।

विना निमित्तैर्वहुभिः<sup>२</sup> प्रतिगृह्णाति भोगवान् ॥

( - ) अयं पाठ क्रीतपुस्तके नास्ति ।

( १ ) भवेत् तदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

( २ ) प्रतिगृह्णाति भोगवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



शीघ्रं कालवशं गत्वा दुःखं तत्रानुभूय च ।

बलाकः स भवेत्पश्चात् श्वेतरीगी स जायते ॥

( जन्मत्रये तु कङ्कः स्यात् तदा मुक्तिर्न जायते । )<sup>२</sup>

स्कन्दपुराणे—

राजतं प्रतिगृह्याद्रिं<sup>३</sup> प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ।

बलाकः स भवेत्पश्चात् कङ्कः स्यात् त्रिषु जन्मसु ॥

कथञ्चिन्मुक्तिमापन्नः श्वेतरीगी भवेत्तदा ।

एतद्वक्तव्यं प्रायश्चित्तपरं कृतप्रायश्चित्तस्य न बलाकत्वादि

तदेवाह—

गारुडपुराणे—

प्रायश्चित्तेन पूतस्य द्विजस्यास्य शृणुष्व यत् ।

तस्येह न<sup>४</sup> बलाकादिर्देहिकीशुद्धिरीरिता ॥

प्रायश्चित्तं पुरा कृत्वा धर्मशास्त्रोक्तमार्गतः ।

(१) बालक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) इदमङ्गं लेखितपुस्तकेनास्ति

(३) अचलं प्रतिगृह्यामौ इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) बालक इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) न बालकादि इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(६) तस्येव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



ततः पश्चात् पुनः कर्म पञ्चगव्यं पिवेत्ततः<sup>१</sup> ॥

एवं पूतस्य विप्रस्य पक्षिजन्म न जायते ।

कनकाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्ताहमत्राऽपि निष्कृतिर्नाऽन्यथा ।

इति हेमाद्रौ रजताचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ रत्नाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः—

रत्नाचलं द्विजोधत्ते<sup>२</sup> राज्ञः पुण्यागमे तु यः ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्नरकाद्भयदायिनः ।

ब्रह्माण्डे—

गङ्गातीरेऽथ गौतम्यां कृष्णवर्णीनदीतटे ।

श्रीशैले सङ्गमे वाऽपि भीमरथानदीतटे ॥

अहोबले महानेत्रे वैद्यनाथस्य सन्निधौ ।

काञ्चीस्थले वेङ्कटाद्रौ श्रीरङ्गे कुम्भकोणके<sup>३</sup> ॥

(१) अनन्तरं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यस्मात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कुम्भकर्णके इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।



मथुरायां महाराज चापाये गन्धमादने ।  
 योद्विजोधनलोभेन राज्ञा दत्तानिमान् गिरीन् ॥  
 'गृह्णाति तस्य विप्रस्य पैशाच्यं जन्मनान्वये ।  
 निष्कारणतया भूप निमज्जन् नरकार्णवे ॥  
 पैशाचान्ते मर्त्यलोके<sup>१</sup> जायते पिटकाकृतिः ॥  
 तेषां मध्ये तथा राजन् रत्नाचलपरिग्रहात् ।  
 अरण्ये निर्जले देशे पिशाचोभवति ध्रुवम् ॥

स्कन्दपुराणे,—

ग्रहणे संक्रमे चैव मन्वादिषु युगादिषु ।  
 अयने द्वितये चैव व्यतीपाते च वैधृती ॥  
 कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां अमायां<sup>२</sup> पूर्णिमादिने ।  
 द्वादशां पुण्यनक्षत्रे द्विजोलोभपरायणः ॥  
 अचलान् राजभिर्दत्तान्<sup>३</sup> प्रतिगृह्य पृथक् पृथक् ।  
 अकृत्वा<sup>४</sup> निष्कृतीस्तेषां तत्तत्पापविमुक्तये ॥  
 यमस्य सदनं गत्वा अनुभूय महद्भयम् ।  
 पिशाचो भवति क्षिप्रमरण्ये निर्जनेऽजले<sup>५</sup> ॥

(१) न मुक्तिरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मृत्युलोके इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पौर्णिमादिने इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) एषु पुण्यदिनेष्विह इति लेखितपुस्तकपाठः । येषु पुण्यदिनेष्विह इति  
तु क्रीतपुस्तक-पाठः ।

(५) निष्कृतिं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

६ वने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरे,—

रत्नाचलमिमं धृत्वा द्विजोनिष्कारणान्मुने<sup>१</sup> ।  
 अकृत्वा निष्कृतिं तस्य मृत्वा नरकमाप्नुयात् ॥  
 पिशाचानुभवं कृत्वा जायते पिटकाकृतिः ।  
 तस्यैव निष्कृतिरियं ब्रह्मणा परिकल्पिता ॥  
 अरण्यं निर्जनं गत्वा शून्ये देवालये विशन् ।  
 कृत्वा त्रिषवणस्नानं भक्षकृष्णाजिनं वहन् ॥  
 मौनव्रतमुपास्थाय वीरासनमुपाश्रितः ।  
 रुद्राध्यायं जपेन्नित्यं तावत्कल्याः समाचरन् ॥  
 यावदस्तं गतोभानुर्विरमेत्तावता जपात् ।  
 अव्रतघ्नं पयोवाऽपि अशक्तौ फलभोजनम् ॥  
 स्वपेच्च स्थण्डिले रात्रौ द्विजस्यैतस्य निष्कृतिः ।  
 एवं ऋतुत्रयं नीत्वा शुद्धिमाप्नोति वैदिकीम् ॥  
 अशक्तौ तद्धनस्याङ्गं<sup>२</sup> व्रतार्थं व्ययमाचरेत् ।  
 एवञ्चेन्निष्कृतिर्दृष्टा<sup>३</sup> रत्नाचलपरिग्रहात् ॥  
 पुनः संस्कारमात्रेण शुद्धोभवति निश्चितम् । इति

१) सुनिरिति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।

२) पिशाचादि भयं कृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) तदङ्गमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४) भूप इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रतिग्रहलब्धधनस्य चतुर्थभागेन पूर्व्ववत् प्रायश्चित्तं कृत्वा पुनः-  
मंस्कारकाले ब्रह्मोपदेशं गायत्रीं 'गुरोः स्वीकृत्य शुद्धिमाप्नोति,  
नान्यथा शुद्धिरस्तीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ रत्नाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ धान्याचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

धान्याचलप्रदाता यः पुण्यक्षेत्रेषु पर्व्वसु ।

अर्चयित्वा द्विजाग्रयाय स वे लोकाधिपोभवेत् ॥

'कूर्मपुराणे,—

अर्चिताय<sup>१</sup> द्विजाग्रयाय धान्याचलमनुत्तमम् ।

अर्चितं<sup>२</sup> शास्त्रमार्गेण पुण्य<sup>३</sup>तीर्थेषु पर्व्वसु ॥

यो दद्यात् पृथिवीपालः स गच्छेद् विष्णुमन्दिरम् ॥

(१) गुरुणा इति क्रांतलेखितपुस्तकपाठः ।

२ क्रांतपुस्तके नास्ति ।

३ अर्चयित्वा इति क्रांतपुस्तकपाठः ।

४ कालेषु इति क्रांतपुस्तकपाठः ।



लिङ्गपुराणे,—

धान्याचलं द्विजौमोहात् पुण्यकाल उपागते ।  
प्रतिगृह्य नृपश्रेष्ठात् अकृत्वा धर्मसंग्रहम् ॥  
आरामेष्विच्छुदेशेषु पिशाचोदुर्भगोभवेत् ।  
तत्राऽनुभूय नरकं पुनर्मूषिकतां<sup>१</sup> व्रजेत् ॥

स्कन्दपुराणे,—

नृणु षन्मुख वक्ष्यामि धान्याचलपरिग्रहे ।  
दोषं परिग्रहीतुर्वै राज्ञो धर्मानुवर्त्तिनः ॥  
शालिक्षेत्रे वने वाऽपि आरामे वृक्षसङ्कुले ।  
पिशाचोदुर्भगोनाम त्रासयन् वै जनान् बह्वन् ॥  
महान्तं नरकं भुक्त्वा अकृत्वा धर्मनिष्कृतिम् ।  
स भवेन् मूषिकः<sup>२</sup> स्थूलस्त्रिषु जन्मसु संग्रहात् ॥

भविष्योत्तरे,—

धान्याचलं द्विजोद्धृत्वा द्रव्यलोभपरायणः ।  
अकृत्वा निष्कृतिं तस्य स भवेत्पिशिताशनः ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं कृत्वा चान्द्रायणत्रयम् ।  
पुनः संस्कारमात्रेण शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥

(१) मूषिकतां इति श्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) मूषिकः इति श्रीतपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरे,—

( धान्याचलस्य महतस्तस्य निष्कृतिरोरिता ।  
यागादिकं पुराऽकृत्वा कुर्याच्च चान्द्रायणत्रयम् ॥  
पुनः संस्कारशुद्धात्मा गायत्री मभ्यसेद्विजात् ।  
तां पठन् प्रयतो नित्यं वर्त्तयेद्यदि शुद्धिमान् ।  
अन्यथा निष्कृतिर्नाऽस्ति पापसैतस्य गौरवात् ॥ )

विष्णुपुराणे,—

सप्ताऽचलाः समुद्राश्च निर्मिताश्चक्रपाणिना ।  
जनानां पापनाशाय स्मरणात्कीर्त्तनादिह ॥  
तेषां प्रतिग्रहे राजन् पतितः स्याद्विजाधमः ।  
अतस्तस्य पुनः कर्म मुनिभिः परिकीर्त्तितम् ॥  
पुनःकर्म पुनःसंस्कार इत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ धान्याचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(—) अत्र क्रीतपुस्तक पाठः ।

“धान्याचलं द्विजोष्ट्वा द्रव्यलोभपरायणः ।  
अकृत्वा निष्कृतिं तस्य स भवेत्प्रगिताशनः ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं कृत्वा चान्द्रायणत्रयम् ।  
पुनःसंस्कारपूतात्मा गायत्रीमभ्यसेद्विज ॥  
तां पठन् प्रयतो नित्यं वर्त्तयेत् स विशुद्धिमान् ।  
अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति पापसैतस्य गौरवात् ॥



अथ तिलपर्वतप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

नारदीये,—

तिलाचलः कालपुरुषस्तिलधेनुस्तिलास्तथा ।  
तिलकृष्णाजिनञ्चैव शकटं सयुगं तथा ॥  
एतानि विप्रवर्याणां महानरकदानि वै ।  
निष्कारणतया राजन् प्रतिगृह्य हिजाधमः ॥  
महान्तं नरकं भुक्त्वा गत्वा स्त्रीजन्म निन्दितम्<sup>१</sup> ।  
पश्चात्तापसमायुक्तः प्रायश्चित्तं यदीच्छति ॥  
प्रायश्चित्तेन महता<sup>२</sup> पुनः संस्कारमर्हति ।

ब्रह्माण्डे,—

धनलोभेन योविप्रः समादत्ते<sup>३</sup> तिलाचलम् ।  
सप्तजन्मसु नारी स्यात् तत्राऽपि विधवा भवेत् ॥  
नार्येव नरकस्थानं किमन्यैर्बहुभाषितैः ।  
वैधव्यमदृशं दुःखं स्त्रीणामन्यत्र विद्यते ।  
तत्राऽपि बालवैधव्यं तिलाचलप्रतिग्रहात् ॥

---

(१) महान्तं नरकं गत्वा स्त्रीजन्म तदनन्तरमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) मनसा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) प्रतिगृह्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स्कन्दपुराणे,—

पुण्यकालेषु वै<sup>१</sup> पुत्र पुण्यतीर्थेषु पर्व्वसु ।  
 तिलाचलं द्विजोधृत्वा महान्तं नरकं व्रजेत् ॥  
 पश्चाद्भवति नारीत्वं सप्तजन्मसु कुत्सितम् ।  
 वैधव्यदुःखभाग्भूत्वा<sup>२</sup> पश्चात् कण्डूतिमान् भवेत् ॥  
 अतोद्विजन्मनः पुत्र ! धनिकस्य तिलाचलम् ।  
<sup>३</sup>प्रतिगृह्य भवेद्विप्रोयागादिषु पराङ्मुखः ।  
 अजागलस्तनमिव तस्य जन्म तदा वृथा ॥

भविष्योत्तरे,—

विप्रस्तिलाचलं धृत्वा भूपालात्<sup>४</sup> पुण्यपर्व्वसु ।  
 शुद्धोयागादिकं कृत्वा अन्यथा नित्यसूतकी ॥

कूर्मपुराणे,—

यावन्तः पर्व्वता राजन् तिलराशीकृता नृभिः ।  
 तावन्ति पापजालानि ग्रहीतुर्नाऽत्र संशयः<sup>५</sup> ॥  
 अतोविप्रवराणाञ्च गर्हणं तत्परिग्रहः ।  
 यदौच्छेन्मनसा शुद्धिं तिलाचलप्रतिग्रहात् ॥

(१) यः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वैधव्यं दुःखनामेत्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा प्रतिग्रहं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) राजतः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) कर्त्त पुत्र न संशय इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अनुज्ञातोद्विजेन्द्राणां मनसा हरि'मुच्चरन् ।  
 नद्यां समुद्रगामिन्यां प्रातःस्नात्वा यथाविधि ॥  
 नित्यकर्म समाध्याऽशु खगृहे देवसन्निधौ ।  
 खगृह्याग्निं प्रतिष्ठाप्य आज्यभागान्तमाचरेत् ॥  
 त्राम्बकेणैव मन्त्रेण तिलैराज्याभिमिश्रितैः ।  
 आसायं जुह्यादक्लौ तावत्संख्यां समुदहन् ॥  
 विमुच्य च तदा होमं तमग्निं न त्यजेद्बुधः ।  
 अव्रतघ्नान् तिलान् भुक्त्वा<sup>३</sup> स्वपेदेवगृहे मुदा ॥  
 परेद्युः प्रातरुत्थाय पूर्ववद्धोममाचरेत् ।  
 यावत् प्रयुतसंख्या स्यात् तावद्धोमं समापयेत् ॥  
 उपोष्य रजनोमेकां पुनः संस्कारमाचरेत् ।  
 एषा विशुद्धिरुदिता तिलानाञ्च प्रतिग्रहे ॥  
 अन्यथा निष्कृतिर्नाऽस्ति दानैस्तोर्था<sup>४</sup>वगाहनैः । इति

प्रयुतं दशलक्षं, तदुक्तं—

महाभारते—

अयुतं दशसाहस्रं नियुतं लक्षमुच्यते ।  
 प्रयुतं दशलक्षं स्याद् अर्बुदं कोटिरुच्यते ॥ इति ।

(१) अर्चयन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) विरम्याथ तदाहोमं इति क्रीत पुस्तकपाठः ।

(३) भुक्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तीर्त्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एतत्प्रायश्चित्तं पूर्ववत् स्वधनस्य चतुर्भागव्ययेन कुर्यात्, अन्यथा  
न निष्कृतिः ।

इति हेमाद्रौ तिलाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ कार्पासाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

सवीजकृमिकीटाद्यैः शोधितं पुण्यपर्वसु ।

कार्पासं द्विजवर्याय योदद्यात् सोऽपि मुक्तिभाक् ॥

ब्रह्माण्डे—

कार्पासस्याऽचलं राजा पुण्यक्षेत्रेषु पर्वसु ।

अर्चितं गन्धवस्त्राद्यैः शान्दमार्गेण धर्मेतः ॥

योदद्याद् द्विजवर्याय स मुक्तः संसृतेर्भयात् ।

तद्बीजानीह यावन्ति तावत्कालं वसेद्विवि ॥

कूर्मपुराणे,—

कार्पासस्याऽचलं विप्रः प्रतिगृह्य जनाधिपात् ।

सद्यः पतति पुण्यानि तस्य पापानि सन्दिशेत् ॥



म विप्रः पतितोभूयाद् आत्मघाती नरेश्वर ।  
मृतः कालवशं गत्वा काकोलं नरकं व्रजेत् ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य श्वेतरीगी दरिद्रकः<sup>१</sup> ।  
पत्नीपुत्रपरित्यागी दुःखितः स्यात्पुनः पुनः ॥

ब्रह्माण्डपुराणे,—

योविप्रः पुण्यकालेषु गिरिङ्कार्पाससंज्ञितम् ।  
अर्चितं गन्धवस्त्राद्यैः<sup>२</sup> प्रतिगृह्णाति भूपतेः ॥  
अहत्वा सैव्रतं सम्यक् यमपाशवशङ्गतः ।  
काकोलं नरकं गत्वा श्वेतरीगी भवेद्भुवि ।  
अथ तद्दोषशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं चरेद्बुधः ॥

स्कन्दपुराणे,—

कार्पासस्याचले पुत्र प्रायश्चित्तमिदंशृणु ।  
पञ्चात्तापसमायुक्तः प्राप्याऽनुज्ञां द्विजोत्तमैः ॥  
विपिनं निर्जनं गत्वा वपनङ्कारयेत्ततः ।  
तत्र त्रिषवणस्नानं कृत्वा विष्णुपरायणः ॥  
नाभिमात्रजले स्थित्वा<sup>३</sup> प्राङ्मुखोदङ्मुखः शुचिः ।  
पुरुषसूक्तं जपंस्तिष्ठेद् आनक्षत्रोदयाज्जले ॥

(१) दरिद्रवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकयोः पाठः ।

(२) प्रतिगृह्णानराधिपात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तद्ब्रतं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४ प्रागुदग्वदनः शुचिरिति काशीपुस्तकपाठः ।



ततो विरम्य सहस्रा संख्यां मनसि धारयन् ।  
 मुष्टिद्वयमितान् सक्तून् भक्षयेद्गुडवर्जितम् ॥  
 स्वपेन्नारायणस्याऽग्रे केवले स्थण्डिले व्रती ।  
 पुनः परेद्युरुत्थाय पूर्ववज्जपमाचरेत् ॥  
 यथैव पूर्ववत्संख्या यावत्कालेन साध्यते ।  
 तदा विरम्य पूर्वद्युरूपोऽथ विधिपूर्वकम् ॥  
 पुनः कर्म तदा कुर्याद् दण्डमौञ्जा<sup>१</sup>जिनं विना ।  
 एतेनैव विशुद्धिः स्यान्नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ॥  
 एतन्प्रायश्चित्ताकरणे पूर्ववत्स्वधनस्य चतुर्भाग<sup>१</sup>व्ययेन प्रायश्चित्तं  
 कुर्यात् । तेन शुद्धोभवतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ कार्पासाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ लवणाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

मार्कण्डेयपुराणे,—

लवणाचलं नरपतिरादरात् कुरुते यदा ।  
 पुण्यदेशे पुण्यनदीतटेषु विमलेषु च ॥



तदा विप्राय दद्यात् तं शमशीलवते स्वयम् ।

एवं हि तस्य न भूमौ पुनरात्मसमुद्भवः ॥

स्कन्दपुराणे,—

पुरा हिमवतः पार्श्वे कन्यका काचिदप्सराः ।

सुकेशी सुदती सुभूर्हसन्ती सुन्दरस्तनी ॥

विहारार्थं वह्निर्गत्वा विचरन्ती गृहाङ्गणे ।

तदा तामवलोक्याऽथ रावणोनाम राक्षसः<sup>१</sup> ॥

कामातुरोमोहवशात्<sup>२</sup> हसञ्जग्राह पाणिना ।

हस्तस्पर्शनमात्रेण तस्या<sup>३</sup>भूत्सात्विकोदयः ॥

स्तम्भःप्रलापोरोमाञ्चः स्वेदोदैवर्ण्यदेपथू ।

अश्रु वैस्वर्ग्यमित्यष्टौ सात्विकाः परिकीर्त्तिताः ॥

स्वेदोदकं तदा तस्य नदीभूत्वा<sup>४</sup> प्रवर्त्तते ।

तदा प्रभृत्यसौ सिन्धुर्लावणो भुवि विश्रुतः ॥

सा तदा हिमवत्पार्श्वान् प्रत्येकं सागरङ्गता ।

स्वेदरूप<sup>५</sup> प्रवाहेण पत्नीभावपरिष्कृता ॥

अङ्गीचकार सलिलं लावण्यं लवणाम्भसि ।

तदा प्रभृत्यसौ सिन्धुरुदके जलसङ्गमात् ॥

(१) दैत्यराट् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तदातन्वीं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) नदीरूपा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) स्वेदरूपा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अत्यूषरतया राजन् लवणोदधिरीरितः ।  
 तेनोत्पन्नं तु लवणं दोषाधिकतया मुने ॥  
 न प्रतिग्रहणं तस्य केचिदिच्छन्ति सूरयः ।  
 लवणं चाऽणुमात्रं वा प्रतिगृह्णाति चेद्भिजः<sup>१</sup> ।  
 तन्निष्कृतिं पराकृत्य विन्ध्यदेशे पिशाचता ॥

मार्कण्डेयपुराणे,—

लवणस्याऽचलं धृत्वा राज्ञः पुण्यागमे सकृत् ।  
 विप्रोयदिह दुष्टात्मा यमपाशवशङ्गतः ॥  
 महान्तं नरकं भुक्त्वा पिशाचोभवतिध्रुवम् ।  
 पश्चाद्भुवमुपागम्य स्वेदाङ्गीजायते सदा ॥

ब्रह्मवेवर्त्ते—

पूर्वजस्त्वचलं धृत्वा लावणं राजवल्लभात् ।  
<sup>२</sup>पुण्यतीर्थे पुण्यदेशे पुण्यकालेषु पर्वसु ॥  
 निष्कारणतया लोभाद् यमलोकमुपागतः ।  
 महद्भयं तदा भुक्त्वा पुनर्भुवमुपाविशन् ॥  
 पिशाचजन्मतामेत्य तदन्ते स्विन्न<sup>३</sup>देहवान् ।  
 अतः प्रतिग्रहस्तस्य गहितो लोकवार्जितः ॥

(१) प्रतिगृह्णाद्भिजोयदि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पुण्यतीर्थेषु पुण्यदेशेषु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) स्वेददेहवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



शिवपुराणे,—

मुखजो बाहुजाद् धृत्वा लावणमचलं भुवि ।  
 पिशाचत्वं व्रजेत्<sup>१</sup> पश्चात् स्वेदाङ्गोजायते पुनः ॥  
 तस्य पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमिदं द्विजैः ।  
 दर्शितं लोकरक्षार्थं तदहं कथयामि वः<sup>२</sup> ॥  
 विप्रानुज्ञामवाप्याऽशु पश्चात्तापसमन्वितः ।  
<sup>३</sup>स्नात्वा शुद्धनदीतोये गत्वा पर्वतगह्वरम् ॥  
<sup>४</sup>कण्टकप्रचयं धृत्वा स्वमूर्धन्यात्मनः सदा ।  
 तत्र तिष्ठन् जपेदेनं सर्वपापापनुत्तये ॥  
 नारायणं हृदा ध्यायन् सर्वपापप्रणाशनम् ।  
 आधारं सर्वमन्त्राणां यावदस्तं गतोरविः ॥  
 तदा विरम्य सहसा संख्यां मनसि धारयन् ।  
 पलद्वयप्रमाणेन पिवेद्गोदुग्धमादरात् ॥  
 स्वपेक्षानारायणस्याऽग्रे स्थण्डिले केवले भुवः ।  
 ततः परेद्युक्त्याय पूर्ववज्जपमा<sup>५</sup>चरेत् ॥  
 एवं ऋतुद्वयं कृत्वा नियतं विधिपूर्वकम् ।  
 रुद्राध्यायं पठेद्यदा उत विष्णोरनुज्ञया ॥

(१) भवेदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कथयामि च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) कृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कण्टकं वादरं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(५) आदरात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



एतद्वयोरभावेऽपि प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।

पूर्ववत् तदनस्याङ्गं प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥

अन्यथा निष्कृतिर्नाऽस्ति लवणाचलसंग्रहे ।

नियुतं नमकचमकौ, आरण्यदशमाध्यायो नारायणं, सर्वमन्त्राणां  
आकरत्वात् । एवं कृते लवणाचलप्रतिग्रहपापनिवृत्तिर्भवति ।

नटेवाह,—

दशाध्यायं सकृजप्त्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

अत्यशनादतिपानात्<sup>१</sup> तथाचोग्रात्<sup>२</sup> प्रतिग्रहात् । इति ।

अत्यशनं सपिण्डीकरणश्चाद्वादिषु निमित्तेष्वस्थाने भोजनमत्यशनं  
अतिपानं शूद्रप्रपादिषु पानमतिपानम् । उग्रप्रतिग्रहः शूद्रा-  
दिभिर्दत्तस्य<sup>३</sup> लवणाचलादेः<sup>४</sup> प्रतिग्रहः । प्रायश्चित्तपक्षे पुनः  
संस्कारं पूर्ववत् कृत्वा शुद्धोभवति नाऽन्यथेति ।

इति हेमाद्रौ लवणाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) दत्तस्येति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यदङ्गलान्वित इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) यच्च चोग्रात् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ तिलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

महापुण्यनदीतीरे व्यतीपाते च वेधृता ।  
ग्रहणे संक्रमे चैव मन्वादिषु युगादिषु ॥  
राक्षा दत्तां तिलमयीं धेनुं गन्धाक्षतैर्युताम् ।  
अर्चितां योद्विजोधृत्वा इतोमृत्युवशङ्गतः ॥  
'मोऽनुभूय महाघोरां वेदनां यमनिर्मिताम् ।  
पश्चाद् भवति पापात्मा निष्पुत्रो रोगवान् भुवि ॥

कूर्मपुराणे—

पुण्यतीर्थेषु<sup>१</sup> पुण्याहं जन्मर्त्तं जन्मसम्भवे ।  
दत्तां राजभिर्गन्धाद्यैरर्चितां तिलरूपिणीम् ॥  
योद्विजः प्रतिगृह्याशु<sup>२</sup> न कुर्यान्निष्कृतिं शुभाम् ।  
तस्यैव<sup>३</sup> मृत्युरायाति अनुभूय महद्भयम् ॥  
पश्चात्पार्षी महान् घोरोनिष्पुत्रो<sup>४</sup> रोगवान् भवेत् ।  
तिलाः सन्तीह यावन्तोह्यजिने धेनुवत्सयोः ॥

१) अनुभूय इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) पुण्यकालेषु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

३) अकृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

४) तथैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

५) रोगवान् इति लेखितपुस्तकपाठः । रोषवान् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तावद्युगसहस्राणि नरके वासमश्रुते<sup>१</sup> ।  
 तस्येह नित्यकर्माणि चरन्ते तत्प्रतिग्रहात् ॥  
 तस्मात्प्रहिग्रहोर्ध्वेनोर्निष्कारणतया नृप ।  
 गर्हितोमुखजानां हि तस्मादेतत् परित्यजेत् ॥

लेङ्गे, —

पूर्वोक्तेष्वेषु पुण्येषु दिनेषु पृथिवीपतेः ।  
 धेनुं तिलमयीं विप्रो गृह्णीयाद्यदि लोभतः<sup>२</sup> ।  
 तस्य नित्यञ्च काम्यञ्च दृष्टापूर्यादिकञ्च यत् ।  
 सर्वं<sup>३</sup> चरति तत्काले दानमश्रोत्रिये यथा ॥  
 तस्यैव निष्कृतिरियं कथिता मुनिपुङ्गवैः ।  
 तद्व्यं सम्परित्याज्यं दक्षिणामात्रमुदहेत्<sup>४</sup> ॥  
 आधानं वा क्रतुं वापि कृत्वा सर्वस्वदक्षिणम् ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति पुनः संस्कारपूर्वकम् ।  
 अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति पञ्चचान्द्रायणैर्विना ॥

(१) पापमश्रुते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धेनुं तिलमयीं धृत्वा विप्रोभोगपरायणो इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तरति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) उदहेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) पञ्चचान्द्रायणं विना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



स्कन्दपुराणे—

दौर्ब्राह्मण्यनिवृत्त्यर्थं धेनुं तिलमयीं द्विजः ।  
 गृहीत्वाऽऽधानयागौ<sup>१</sup> च कृत्वा तन्नाऽवशेषयेत् ॥  
 प्रधानं सम्परित्यज्य न दोषस्तत्प्रतिद्रुहात् ।  
 अथवा पञ्चभिश्चान्द्रैः<sup>२</sup> शुद्धिमाप्नोति वैदिकीम् ॥  
 पुनः संस्कारमात्रेण नित्यकर्मस्विहाऽर्हता ।  
 उभयं यः परित्यज्य<sup>३</sup> वर्त्तते भोगलोलुपः ॥  
 स मृत्वा<sup>४</sup> निष्प्रजोभूयात् तिलरोगीमहान् भुवि ॥

इति हेमाद्रौ तिलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ घृतधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

स्कन्दपुराणे,—

धेनुं घृतमयीं दत्तां<sup>५</sup> कृष्णाजिनपरिष्कृताम् ।  
 स्वर्चितां गन्धवस्त्राद्यैराजभिः पुण्यसङ्गमे ॥

(१) अग्न्याधानञ्च यागञ्च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) आहुतैः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) परित्यक्त्वा केवलं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) तदन्ते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) शुद्धां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



वृथा परिग्रहं<sup>१</sup> कृत्वा द्विजोयागादिभिर्विना ।  
 यमलोकमुपागम्य कुम्भीपाके निमज्जति ॥  
 तदन्ते भुवमासाद्य वैण्वोजायते भुवि ।  
 अतोमहादोषभयात् परित्याज्या<sup>२</sup> द्विजन्मभिः ॥

लिङ्गपुराणे—

धेनुमेकां द्विजोराजन् अजिने घृतनिर्मिताम् ।  
 सवत्सां घृतधेनुं<sup>३</sup> यो निष्कारणतया वहेत्<sup>४</sup> ॥  
 कुम्भीपाके निमज्जेत्स<sup>५</sup> पीडितोयमकिङ्करैः ।  
 तदन्ते पृथिवीमेत्य वैण्वानां कुलोद्भवः ॥  
 हीनजातिषु मर्वांसु भूत्वा भूत्वा न निष्कृतिः ।  
 यागादिकं न कुर्याच्चेद्<sup>६</sup> एतस्मान्न विमुच्यते ॥

गारुडपुराणे,—

कृष्णाजिनेषु पुण्येषु निर्मितां घृतरूपिणीम् ।  
 प्रदत्तां<sup>७</sup> राजपुरुषैर्धेनुं यो मुखजोवहेत्<sup>८</sup> ॥

(१) त्यक्त्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) परित्यागः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) घृतधेनुं सवत्सेन इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) वहत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) निरुच्छाम इति लेखितपुस्तकपाठः । तरुच्छाम इति क्रीत-  
 पुस्तकपाठः ।

(६) अकृत्वाचेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(७) पूजितां इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(८) वहेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्यैव नरकोधोरः कुम्भीपाकः समुज्ज्वलन् ।  
तत्र भुक्त्वा पुनः पापी प्राप्य वैणवजन्मताम् ॥  
नानायोनिषु सम्भूयाद् यागादिषु पराङ्मुखः ।  
पश्चात्तापममायुक्तः प्रायश्चित्ती भवेत्ततः ॥

तत्र प्रायश्चित्तमाह —

ब्रह्माण्डे,—

धृतधेनुं राजदत्तां स्वर्चितां वस्त्रभूषणैः ।  
पुण्यकालेषु पुण्याहे प्रतिगृह्णाति चेद्भिजः<sup>१</sup> ॥  
द्रव्यलोभपरीतात्मा प्रायश्चित्तमिदञ्चरेत् ।  
नदीषु पुण्यतीर्थेषु स्नातः प्रातयेथाविधि ॥  
स्वगृहं पुनरागत्य स्वगृह्याग्नौ विशुद्धये ।  
अग्नीन्धनादिकं कृत्वा आज्यभागान्तमाचरेत् ॥  
तस्मिन्नग्नौ सपत्नीकः कुष्माण्डै<sup>२</sup> जुहुयाच्छतम् ।  
तदद्वं गणहोमञ्च कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥  
निराहारस्तदा तिष्ठेत् पयोवा धेनुसम्भवम् ।  
अधःशायी पिवेत्तत्र<sup>३</sup> पत्नीपुत्रविवर्जितः ॥  
एवं व्रती दिनं कुर्यात् संख्यां यावत् समाप्य च ।  
तदन्ते भोजयेद् गव्य होमशेष विशुद्धये ॥

(१) प्रतिगृह्णाद्भिजोर्वादि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कुष्माण्डं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) भवेत्तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।



ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् परिक्रम्य प्रणम्य च ।  
 स्वयञ्च पारणं कुर्यात् पत्नीपुत्रसमन्वितः ॥  
 एवं कृत्वा द्विजः शुद्धे<sup>१</sup>दन्यथा पातकी भवेत् ।  
 एतदाचरणेऽसमर्थः स्वधनार्द्धाद्भागिन पूर्ववत् प्रायश्चित्तं कृत्वा  
 शुद्धिमाप्नोति ।

इति हेमाद्रौ घृतधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ जलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

शृणु दोषान्<sup>२</sup> प्रवक्ष्यामि जलधेनुप्रतिग्रहे ।  
 अमायां सर्वसंक्रान्तौ द्वादशीपूर्णिमादिने<sup>३</sup> ॥  
 महाक्षेत्रेषु पुण्येषु तथा पुण्यालयेषु च ।  
 कृष्णाजिनेन निर्मयाय धेनुं जलमयीं शुभाम् ॥  
 अर्चितां ब्रह्मरूपाद्यैः धर्ममार्गेण राजभिः ।  
 दत्तां गृहीत्वा योविप्रो<sup>४</sup> द्रव्यलोभपरायणः ॥

(१) शुद्धं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वत्स इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पौर्णमीदिने इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) द्विजोष्ट्याग्राहो इति लेखितपुस्तकपाठः ।



आत्मनःपरलोकार्थं न <sup>१</sup>कुर्यान्निष्कृतिं यदि ।  
 सोऽनुभूय महत्पापं यमलोके तदाज्ञया ॥  
 पुनर्भूभागमासाद्य जायते कच्छपोमहान् ।  
 ततःप्रतिग्रहोदोषः पूर्वजानामिहाऽन्यतः ॥

कूर्मपुराणे,—

धृत्वा जलमयीं धेनुं द्विजोभोगपरायणः ।  
 अर्चितां प्रभुभिर्दत्तां<sup>२</sup> शास्त्रपूतेन वर्त्मना ॥  
 यागादिकं पराकृत्य पराकृत्य च निष्कृतिम् ।  
 पुण्यतीर्थे पुण्यदेशे पुण्यकालेषु पर्वसु ॥  
 निष्कारणतया लोभादयमलोकमुपागतः ।  
 महद्भयं तदा भुक्त्वा पुनर्भुवमुपाविशन् ॥  
 पिशाचजन्मतामेत्य जायते<sup>३</sup> स्वेददेहवान् ।  
 अतः प्रतिग्रहस्तस्य गर्हितोलोकवर्जितः ॥

[ शिवपुराणे,—

मुखजो बाहुजाद् धृत्वा लावण्यमचलं भुवि ।  
 पिशाचत्वं मृतोयाति<sup>४</sup> स्वेदाङ्गोजायते पुनः ॥

१ अकृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पृतां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) तदन्ते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) भवेत्तस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्य पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमिदं द्विजैः ।  
 दर्शितं लोकरक्षार्थं तदहं कथयामि वः ॥  
 विप्रानुज्ञामवाप्याऽऽशु पश्चात्तापसमन्वितः ।  
 स्नात्वा शुद्धनदीतोये गत्वा पर्वतगह्वरम् ॥  
 कण्टकैर्मुकुटं धृत्वा स्वमूर्धन्यात्मनः सदा ।  
 तिष्ठन् तत्र जपेदेनं सर्वपापापनुत्तये ॥  
 नारायणं हृदा ध्यायन् सर्वपापप्रणाशनम् ।  
 आधारं सर्वमन्त्राणां यावदस्तं गतो रविः ॥  
 तदा विरम्य सहसा संख्यां मनसि धारयन् ।  
 पल्लवप्रमाणेन पिवेद्गोदुग्धमादरात् ॥  
 स्वपेन्नारायणस्याऽग्रे स्थण्डिले केवले भुवि ।  
 ततः परित्युक्त्याय पूर्ववज्जपमादरात् ॥  
 एवं ऋतुद्वयं कृत्वा नियुतं विधिपूर्वकम् ।  
 रुद्राध्यायं पठेत् यद्वा उत विष्णोरनुज्ञया ॥  
 एतद्वयोरभावेऽपि प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
 पूर्ववत्तद्वनार्द्धाद्विंशं प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥  
 अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति लवणाचलसंग्रहे ।

नियुतं नमकचमकौ, आरण्यदशमाध्यायो नारायणं सर्वमन्त्राणां  
 आकरकत्वात् । एवं लवणाचलप्रतिग्रहपापनिवृत्तिर्भवति ।

दशाध्यायं सकृत् जप्त्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

तदेवाह,—

अत्यशनादतिपानात् तथा चोग्रात्यतिग्रहात्



दम्भाद्वा वा यदि वा मोहात् पराकृत्यैव निष्कृतिं  
स्थित्वा चारोदके कूपे तदन्ते भुवमाविशन् ॥  
अगधे जायते कूर्मो ऋदे जलपरिष्कृते ।  
एतद्दोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
(महापाप) भयाद्भूय त्याज्योविप्रैः प्रतिग्रहः ]\* ।

मत्स्यपुराणे,—

प्रतिगृह्य द्विजो मोहाद् धेनुं जलमयीं नृपात् ।  
यागादिकं स्वशुद्धिं वा अकृत्वा भोगलोलुपः ॥  
यमलोके महाघोरे तीर्त्वा चारोदकं बलात् ।  
तदन्तेऽत्र समागत्य जायते कच्छपोजले ॥  
एतद्दोषोपशान्त्यर्थं त्याज्योविप्रैः प्रतिग्रहः ।  
गण्डक्यां वाऽथ गौतम्यां कृष्णवेण्यां नदीजले ।  
कावेर्यां तुङ्गभद्रायां चापाग्रे गन्धमादने ॥  
आत्मनः सम्मतं तीर्थं यदेतेषु च<sup>१</sup> सम्भवेत् ।  
अनुज्ञाप्य द्विजैः साकं गत्वा तत्र यतात्मवान्<sup>२</sup> ॥  
निमित्तं कीर्त्तयित्वाऽथ स्नायान्मौषलमार्गतः ।  
त्रिसहस्रं च त्रिशतं विंशत्युत्तरमेव च ॥

\* [ ] एषः पाठः क्रोतकाशोपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(१) पूर्वोक्तेष्वेषु सम्भवं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यत्वा पुण्योदके तथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एतत् कुर्व्याद्विशुद्धात्मा परिषत्सन्निधौ मुदा ।  
 एतत्पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं द्विजन्मनाम् ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति जलधेनुप्रतिग्रहात् ।  
 परिषत्सन्निधौ यथाशास्त्रं पूर्व्वेवत् कृत्वा पश्चात् स्नानादिकं कृत्वा  
 पञ्चगव्यं पीत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत् ।

इति हेमाद्रौ जलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ क्षीरधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

पुरा षण्मुख क्षीराब्धौ रमा जाता सधेनुका ।  
 सवत्सा क्षीरसम्पन्ना सर्व्वावयवसुन्दरी ॥  
 पोषयामास जलधिर्दुग्धधेनुं सवत्सकाम् ।  
 पुरुषोत्तमाय लक्ष्मीं तां प्रददौ सर्व्वसाक्षिणे ॥  
 न' प्रायच्छत्स तां धेनुं पुत्रीवात्सल्यगौरवात् ।  
 यथाचे 'जलधिं धेनुं वृत्रहा पापमोचने ॥

(१) न प्रायच्छत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जलधिः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तथेति प्रददौ सिन्धुर्दुग्धधेनुं स पुत्तिणीम्<sup>१</sup> ।  
 ( दापयामास विप्राय वृत्रहत्याविमोचनीम् । )  
 तां दुग्धधेनुमादाय पुनः प्रायात् स्वमालयम् ॥  
 धिषणाय स वृत्तान्तं कथयामास देवराट् ।  
 पुण्यकाल उपायाते दुग्धधेनुं सुरूपिणीम् ॥  
 दापयामास विप्राय वृत्रहत्याविमोचने ।  
 तदा प्रभृत्यसौ धेनुर्ब्रह्महत्याविनाशिनो ॥  
 ददाति योनृपो<sup>२</sup> धेनुमर्चितां कृष्णचर्मणि ।  
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं प्रयाति सः<sup>३</sup> ॥  
 योषिप्रः स्वर्चितां धेनुं वृत्रहत्याविमोचनीम् ।  
 रमासहोदरां<sup>४</sup> सिन्धुनिर्मितां दुग्धरूपिणीम् ॥  
 प्रतिगृह्णाति वै लोभात् सम्प्राप्ते पुण्यपर्वणि ।  
 स कालवशमापन्नस्त्वनुभूय महद्भयम् ॥  
 तदन्ते भुवमासाद्य मृतदारोभवेद्भुवि ॥

देवीपुराणे,—

पुण्यकालेषु पुण्यर्क्षे पुण्यतीर्थे जनाधिप ! ।  
 योराजा स्वर्चितां धेनुं निर्मितां दुग्धरूपिणीम् ॥

(१) ददौ तस्मिन् स्तोत्राचक इति लेखितपुस्तकपाठः ।

( ) इदमर्थं लेखितपुस्तके नास्ति ।

(२) राजा यः प्रददौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अवाप्यते इति क्रांतिलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तथेति प्रददौ इति लेखितपुस्तकपाठः ।



विप्राय वेदविदुषे प्रदद्यात् सोऽपि मुक्तिभाक् ।  
 'तादृग्दुग्धमयीं धेनुं द्विजो निष्कारणादहन् ॥  
 लभते निष्कृतिं<sup>१</sup> नाऽन्यां पञ्चचान्द्रायणादृते ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति दुग्धधेनुप्रतिग्रहात् ॥

लिङ्गपुराणे,—

पुण्यकालेषु राजेन्द्र पुण्यतीर्थेषु<sup>२</sup> वा द्विजः ।  
 दुग्धधेनुं गृहीत्याऽऽशु वृथाभोगपरायणः ॥  
 तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा पञ्चभिश्चान्द्रभक्षणैः ।

आधानयागप्राप्तौ न प्रायश्चित्तं पञ्चगव्यप्राशनमेव । तदाह

कूर्मपुराणे,—

द्विजो दुग्धमयीं धेनुं प्रतिगृह्य जनाधिपात् ।  
 यागादिकं प्रकुर्वीत पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥  
 अकृत्वा द्रव्यलोभेन अशक्तः पापभीस्तदा ।  
 पञ्चचान्द्रायणैः शुद्धो<sup>३</sup> नाऽन्यथा तीर्थसेवया ॥

इति हेमाद्रौ क्षीरधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) तादृशी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पर्वसु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) शुद्धिः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ मधुधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

अथापरं प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तं विशुद्धये ।  
मधुधेनुग्रहीतृणां द्विजानां हितकाम्यया ॥  
'निष्कारणं प्रवृत्तानां गोगेच्छूनां शृणुष्व मे ।  
पुण्यकालेषु संक्रान्तौ व्यतीपातादिसम्भवे ॥  
कल्पितां मृन्मयैः पात्रैरर्चितां राजवक्त्रभैः ।  
मधुधेनुं सवत्साञ्च सर्वालङ्कारभूषिताम् ॥  
गृहीत्वा ब्राह्मणो<sup>१</sup>लोभात् सद्यः पापमवाप्नुयात् ।  
( ज्वालां तत्र प्रविश्याथ पुनर्भुवमुपागमन् ॥  
मधुवृक्षा भवेयुस्ते यदि तन्निष्कृतिर्न चेत् ) ।  
कथञ्चित् निष्कृतिर्दृष्टा तेषां पापपरात्मनाम् ॥  
पञ्चचान्द्रायणैः शुद्धिर्न चान्यैः शुद्धिरीरिता ।

शिवपुराणे,—

क्षौद्रधेनुः क्षुद्रजातैर्द्विजैर्न प्रतिगृह्यते ।  
दैवाद्यदिह गृह्णाति<sup>२</sup> पञ्चभिश्चान्द्रभक्षणैः ॥

---

(१) निष्कारणे इति लेखितपुस्तक पाठः ।

(२) योद्विजः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं श्लोकः क्रीतकाशीपुस्तकयोः न दृष्टः ।

(३) लभ्यन्ते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एतद् विप्रप्रतिग्रहविषयम् । बाहुजेभ्यो द्विगुणं, ऊरुजेभ्यस्त्रिगुणं  
पादजेभ्यश्चतुर्गुणं, सङ्करजातिभ्यः पञ्चगुणं वेदितव्यं । तदाह—

ब्रह्मवेवर्त्ते,—

प्रायश्चित्तं द्विजातिभ्यः प्रतिगृह्य कथञ्चन ।

यावदुक्तं तदेवाऽलं क्षत्रेभ्योद्विगुणं स्मृतं ॥

ऊरुजेभ्यस्त्रिधा प्रोक्तं पादजेभ्यश्चतुर्गुणम् ।

एतेभ्योव्यतिरिक्तेभ्यः पञ्चधा परिकीर्तितम् ॥

सर्व्ववर्णेभ्यः सर्व्वदानप्रतिग्रहीतृणामिव वेदितव्यं प्रायश्चित्तम् ।

कलौयुगे सङ्करजातयो बह्व्यः तत्प्रतिग्रहस्य निषिद्धत्वात्प्रायश्चित्त

बाहुल्यमुक्तं । प्रायश्चित्तविहीनाद्विजाः श्लेषमध्यस्थमक्षिकाजातिषु

सम्भवन्ति । अतः प्रायश्चित्तमेव प्रतिग्रहीतृणां साधनं न चाऽन्यत् ।

यस्य यस्य प्रतिग्रहे धर्मशास्त्रे प्रतिपदोक्तं यत् यत् प्रायश्चित्तं तत्तत्

प्रतिग्रहे तत्तदेव कर्त्तव्यं द्विजन्मभिः, नाऽन्यथा शुद्धिरीरिता इति ।

इति हेमाद्रौ मधुधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ शर्कराधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

धेनुं शर्करया कृत्वा सवत्सामजिनैः<sup>(१)</sup> शुभाम् ।  
योराजा द्विजवर्याय दद्यात् पुण्यागमे मुदा ॥  
अर्चितां गन्धपुष्पाद्यैर्बहुभिर्भूषणैर्युताम् ।  
स गच्छेद्विष्णुभवनं यावदाचन्द्रतारकम् ॥

शिवधर्मोत्तरे,—

कृष्णाजिनेषु योधेनुं शर्कराभिरलङ्घिताम् ।  
भूषितां गन्धपुष्पाद्यैर्विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ॥  
दद्यात् पुण्यतमे काले तीर्थेषु ग्रहणेषु च ।  
न तस्य पुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात् कदाचन ॥

विष्णुधर्मोत्तरे,—

कृत्वा शर्करया धेनुं पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
दद्याद्दक्षिण्या साङ्गं विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ॥  
स निस्तरति संसारं नावाऽर्ध्वं नाविकीयथा ।

तत्प्रतिग्रहे दोषमाह,—

नारदीये,—

यो गृह्णीयाद्विजां धेनुं पुण्यां शर्करयाऽन्विताम् ।  
पुण्यकालेषु तीर्थेषु द्रव्यलोभपरायणः ॥

---

(१) अजिने इति खेचित्तपुस्तकपाठः ।



महान्तं नरकं भुक्त्वा स्थावरत्वं प्रयाति सः<sup>१</sup> ।  
 तस्यैवं निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्व्रह्मवादिभिः ॥  
 स्नात्वा प्रातर्यथाचारं दन्तधावनपूर्वकम् ।  
 विभूतिं विश्वरूपञ्च जडमूलमतः परम् ॥  
 जपंस्त्रिषवणस्नानं कृत्वा नित्यमतन्द्रितः ।  
 आमायं प्रातरारभ्य गणयेज्जपसंख्यया ॥  
 फलाहारोऽत्र कर्त्तव्यः स्वपेद्देवमर्मापतः ।  
 पुनः परित्युक्त्याय पूर्ववज्जपमाचरेत् ॥  
 यदैव संग्रहोधिनीः शर्कराभिः पृथग् द्विज ।  
 तदा पापान्यनेकानि प्रविशन्ति प्रतिग्रहे ॥  
 तत्पापशोधनार्थाय प्रायश्चित्तमिदं शुभम् ।  
 आधानं वा प्रकुर्वीत यागसाधनमुत्तमम् ॥  
 सर्वेषां सप्ततन्तूनामाधानं प्रथमं विदुः ।  
 वर्णानां च यथा विप्रोदेवानामपि वामवः ॥  
 भृगुः ऋषीणां प्रवरो वाचां सत्यं यथा भवेत् ।  
 तथैव सर्वयज्ञानामाधानं मूलकारणम् ॥  
 प्रायश्चित्तमिदं वाऽपि आधानं वा द्विजश्चरेत् ।  
 ताभ्यां पापविनिर्मुक्तः प्रयाति परमं पदम् ॥  
 इति हेमाद्रौ शर्कराधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) अवाप्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गणयम् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ दधिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

शृणु षण्मुख वक्ष्यामि दधिधेनु<sup>१</sup> प्रतिग्रहे ।  
प्रतिग्रहीतुर्विप्रस्य दोषोभवति सर्व्वदा ॥  
तद्व्यत्यागमात्रेण आधानं यज्ञमेव वा ।  
कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति कर्म्मार्हो जायते भुवि ॥

शिवधर्मोत्तरे,—

दधिधेनुमलङ्कृत्य गन्धवस्त्रादिभूषणैः ।  
अभ्यर्च्य विधिवद्भक्त्या दद्याद्द्वयोविप्रपुङ्गवे ॥  
न तस्य यमबाधाऽस्ति तद्गृहे वा प्रवेशनम् ।  
तद्दर्शनं वा राजेन्द्र भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

ब्रह्मवैवर्त्ते,—

यो दद्यात्<sup>२</sup> पुण्यकालेषु पुण्यतीर्थेषु पर्व्वसु ।  
कृष्णाजिने दधिमयीं धेनुं कृत्वा सवत्सकाम् ॥  
अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैर्विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ।  
न तं मृत्युरवाप्नोति न व्याधिर्न च तत्स्कराः ॥  
अन्ते विष्णुपदं याति यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥

(१) दधिधेनुं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) राज्ञा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



लैङ्गे,—

बाहुजोधेनुमाराध्य दद्याद्दधिमयीं<sup>१</sup> शुभाम् ।  
न तस्य पुनरावृत्तिर्द्वालोकात् कदाचन ॥

देवीपुराणे,—

प्रतिगृह्य द्विजोधेनुमतोदधिमयीं शुभाम्<sup>२</sup> ।  
प्रायश्चित्तं तदा कुर्यात् पूर्ववद्धनभागतः ॥  
अथवाऽऽधानकं कर्म यज्ञं वा बहुदक्षिणम् ।  
ऋणनिर्मोचनं कृत्वा शुद्धः स्यात्तत्प्रतिग्रहात् ।

मत्स्यपुराणे,—

शर्कराभिः कृतां धेनुमर्चितां सर्वभूषणैः ।  
पूजितां गन्धपुष्पाद्यैः पुण्यकालेषु पर्वसु ॥  
तीर्थेषु देवपूज्येषु प्रतिगृह्णाति चेद्विजः ।  
अकृत्वा निष्कृतिं तस्य स भवेदन्धमूषकः ॥

देवीपुराणे,—

तद्दोषशमनं राजन् शृणु सर्वप्रयत्नतः ।  
प्रातः स्नात्वा नदीतोये नित्यकर्म समाप्य च ॥  
नित्यहोमञ्च कुर्वीत वृक्षमूलमुपाश्रितः ।  
श्रीरुद्रञ्च जपेत्तत्र यावदस्तमयं भवेत् ॥

(१) दध्ना कृष्णाजिने शुभाम इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पुण्यदिनेष्विह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) शुद्धोऽभूत् इति क्रीतपुस्तक-पाठः ।



तदा विरस्य प्रयतः<sup>१</sup> फलाहारं समाचरेत् ।

गृहं गत्वा स्वपेत्तात नारायणमनुस्मरन् ॥

पुनः परेद्युरुत्थाय पूर्ववज्जपमाचरेत् ।

अयुतं पूर्णतामेति<sup>२</sup> तावत् पारायणं<sup>३</sup> चरेत् ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति विप्रोदध्नः प्रतिग्रहात् ।

( अशक्तौ सुलभं तात आधानं यज्ञमेव वा ।

ततः शुद्धिमवाप्नोति विप्रोदध्नः प्रतिग्रहे ॥ )

इति हेमाद्रौ दधिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ इक्षुरसधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

वामनपुराणे,—

योराजा पुण्यकालेषु धेनुमिक्षुरसोद्भवाम् ।

अर्चितां गन्धपुष्पाद्यैर्भूषितां सर्वभूषणैः ॥

विप्राय वेदविदुषे शान्तायाऽथ कुटुम्बिने ।

दद्याद्दक्षिण्या साकं स राजा विष्णुमन्दिरम् ॥

(१) मनसा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अयुतं पूर्णतामेति इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) पाराय माचरेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं श्लोकः क्रीत-काशीपुस्तकयोर्न दृष्टः ।



गत्वा स्थित्वा चिरं कालं भुवि मण्डलतां व्रजेत् ।  
 तत्रापि ज्ञानमासाद्य दानधर्मपरायणः ॥  
 कृत्वा धर्मानशेषेण अन्ते विशुद्धमोभवेत्' ।

महाभारते,—

शृणु धर्मं प्रवक्ष्यामि धेनुमिक्षु<sup>(१)</sup>रसोद्भवाम् ।  
 अर्चितां शान्त्रमार्गेण भूषितां बहुभूषणैः ॥  
 पुण्यकालेषु संक्रान्तौ अयनद्वितये तथा ।  
 अर्द्धोदये महापुण्ये ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥  
 रचयित्वा दिने सम्यग् विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ।  
 दक्षिणाभिश्च बह्वीभिर्दद्यात् फुल्लाननस्तदा ॥  
 मृतोवैकुण्ठमाप्नोति पुनरावृत्तिवर्जितम् ।

नृसिंहपुराणे,—

कल्पितां राजपुरुषेरिक्षु<sup>(२)</sup>द्वरसेन ताम् ।  
 अर्चयित्वा विधानेन अर्चितान्तु द्विजन्मने ॥  
 दक्षिणाभिर्यथोक्ताभिर्दद्यान्मनसि निःस्पृहः ।  
 तस्य देवः प्रसन्नः स्यात् प्रह्लादाय यथा पुरा ॥

(१) विशुद्धमाकृत्यतां व्रजेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) इक्षु धेनु रसोद्भवा इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।

(३) प्रसन्नोऽभूदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तप्रायश्चित्तमाह,—

ब्रह्माण्डे,—

पूर्वजोवाहुजाल्मधा<sup>१</sup> धेनुमिक्षुरसोद्भवाम् ।  
अकृत्वा निष्कृतिं पश्चात् आधानं वा क्रतुञ्च वा ॥  
यमलोकमुपागम्य नरकानेकविंशतिम् ।  
भुक्त्वा<sup>२</sup> भवति पूतात्मा गोमायुर्भवति क्षितौ ॥

मत्स्यपुराणे,—

विप्रोधेनुं रसमयीं दत्तां राजकुमारकैः ।  
गृहीत्वा पुण्यकालेषु तन्निष्कृतिपराङ्मुखः ॥  
यागादिकं पराकृत्य गोमायुर्भवति ध्रुवम् ।  
तस्यैव निष्कृतिर्दृष्टा विष्णुना प्रभवविष्णुना ॥  
प्रातरारभ्य मेधावी स्नात्वा नित्यं समाप्य च ।  
वृक्षमूलमुपागम्य पठन्नुपनिषत्रयम् ॥  
<sup>३</sup>जपेत्समुद्वहन् संख्यां यावदस्तं गतो रविः ।  
तावज्जपाद्<sup>४</sup> विरम्याऽथ फलाहारं समाचरेत् ॥  
जपेद्देवसमीपे तु कृतं पापमनुस्मरन् ।  
परेद्युः प्रातरुत्थाय पूर्ववज्जपमाचरेत् ॥

(१) दत्तां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पश्चात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) संख्यां समुद्वहन् सम्यक् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तावज्जपं इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।



अयुतं पूर्णतामेति ततः शुद्धिरवाप्यते<sup>१</sup> ।

एतत्प्रायश्चित्तं यागादिकाकरणविषयं, तत्प्राप्तौ पञ्चगव्यप्राशन  
मात्रं न प्रायश्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ इक्षुरसधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ गुडधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

गुडधेनुं गुडमयीं कृत्वाऽलङ्घ्य सर्वतः ।

पुण्यकाले पुण्यतीर्थे योराजा भक्तिमानिह<sup>२</sup> ॥

शुभां<sup>३</sup> सदक्षिणां दद्याद् विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ।

पुनर्भुवमुपागम्य मण्डलाधिपतिर्भवेत् ॥

सोऽन्ते विष्णुपदं याति तत्रैव परिमुच्यते ।

गारुडपुराणे,—

गुडधेनुं समभ्यर्च्य गन्धवस्त्रादिभूषणैः ।

ब्राह्मणाय सुशीलाय योदद्यात् सोऽपि मुक्तिभाक् ॥

(१) शुद्धिरवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गुडनिर्मितां इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) धेनुं इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।



योविप्रस्तां तदा गृह्णन् परलोकपराङ्मुखः ।  
 यमस्य वशमापन्नः कालसूत्रेण पीडितः ॥  
 पुनर्भुवमुपागम्य जायते भिल्लजन्मवान् ।  
 यागादिकं ततः कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

कूर्मपुराणे,—

धेनुं गुडमयीं गन्धवस्त्रादिभिरलङ्कृताम् ।  
 पुण्यकाले पुण्यतीर्थे पुण्यक्षेत्रे नदीतटे ॥  
 योग्दहन् पृथिवीपालाद् ब्राह्मणोधनलोभतः ।  
 यमलोकमुपागम्य पीडितो यमकिङ्करैः ॥  
 भिल्लजातिर्भवेद्भूमौ<sup>१</sup> यागादिषु पराङ्मुखः ।  
 प्रायश्चित्तमिदं कुर्यात् पश्चात्तापसमन्वितः ॥  
 विप्रानुज्ञामवाप्याऽऽशु प्रातः स्नात्वा यथाविधि ।  
 इदं करिष्ये नियमं प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥  
 इत्युक्त्वा तपश्चातिष्ठेत् हिमन्ते शीतसङ्कुले ।  
 अनाधारस्तथा तिष्ठेत् यावत् प्रातः पुनर्भवेत् ॥  
 प्रातरारभ्य मेधावी<sup>२</sup> स्मरेन्नारायणं विभुम् ।  
 चतुर्थे कालायाते यावकं भोजनं चरेत् ॥

(१) अभृद् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) स्मरेन्नारायणं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



यावकमित्यत्र अल्पमात्रं यवान् पक्त्वा भुञ्जीयात्<sup>१</sup> ।

पुनरस्तं गते भानौ पूर्ववज्जपमाचरेत् ।

अपमृत्युञ्जयं मन्त्रं<sup>२</sup> न्यासञ्च ध्यानपूर्वकम् ॥

अनाधारो बहिरेव निराधारोवर्षति सति । संख्यां समुद्वहन्  
( मनसि धारयन् ) ।

एवमृतुद्वयं नीत्वा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।

एवं कृते<sup>३</sup> विशुद्धः स्यान्नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नुयात् ॥

एतदाचरणायकीं पुनः पुनः अथनचतुर्भागेण प्रायश्चित्तं कृत्वा  
शुद्धिमाप्नोति पुनः सर्वत्र । ८

इति हेमाद्रौ गुडधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) भोजयेत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मात्रं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्नोपलब्धः ।

(३) विशुद्धोऽभूदन्यथा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ साक्षाद्भिनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मत्स्यपुराणे,—

एतासां दशधेनूनां प्रत्यक्षा पापनाशनी ।  
महापापविशुद्धार्थं ब्रह्मणा निर्मिता<sup>१</sup> पुरा ॥  
राजा वा विप्रमात्रोवा दशनिष्काधिकोऽपि वा ।  
धेनुमेनामलङ्कृत्य अभ्यर्च्य विधिपूर्वकम् ॥  
पुण्यकालेषु पुण्यर्त्तं यो दद्याद्विप्रपुङ्गवे ।  
स याति विष्णुभवनं देवैः सह नृपाधिप ॥

लिङ्गपुराणे,—

धेनुं यः समलङ्कृत्य पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैः प्रदद्याद्विप्रपुङ्गवे ॥  
स याति ब्रह्मणः स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ।  
पञ्चाङ्गवमुपागम्य स वै भवति धार्मिकः ॥

स्कन्दपुराणे,—

धेनुं विप्राय<sup>२</sup> यो दद्यात् स भवेन्मण्डलाधिपः ।

सहाराजविजये,—

धेनुमेनामलङ्कृत्य पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
पुण्यर्त्तं पुण्यदिवसे व्यतीपाते च वैधृतौ ॥

(१) निर्मितं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विप्रोनुमृह्योयात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



योदद्याद्विप्रवर्याय स याति परमां गतिम् ।

पुनर्भुवमुपागम्य राजा भवति धार्मिकः ॥

स्कन्दपुराणे,—

धेनुं विप्रो नु गृह्णीयाद् वृथाभोगपरायणः ।

अकृत्वा निष्कृतिं लोभाद्व्यालीभवति कानने ॥

तद्दोषपरिहारार्थं जपेद्गुद्रमथाऽयुतम् ।

तदा दोषविनिर्मुक्तः शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

भविष्योत्तरे,—

अलङ्कृतां शुभां धेनुं दशधेन्वनुयायिनीम् ।

गन्धपुष्पाक्षतैर्वस्त्रैः सज्जीभरणभूषिताम् ॥

दत्तां राजकुमारेण पुण्यकालेषु पर्वसु ।

प्रतिगृह्य द्विजोलीभादकृत्वा निष्कृतिं शुभाम् ॥

व्यालीभवति दुष्टात्मा यागं वाऽधानमेव वा ॥

एतत्पापविशुद्ध्यर्थं रुद्रद्वययुतमुच्यते ॥

उपक्रम्य तदानीं वा परेद्युर्वाऽपरेऽहनि ।

स्नात्वा प्रातर्यथाचारं नित्यकर्म समाप्य च ॥

वाहः स्थानं समागम्य संख्यां मनसि धारयन् ।

आरभ्य भानोरुदयात् यावदस्तमनं शुचिः ॥

(१) यो धेनुं समलङ्कृत्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सम्बदन् इति लेखितपुस्तकपाठः मनसिवचन् इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) आरभ्यमण्डलादुभानो रस्तमेति दिवाकरः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



विरस्य नियतः पश्चात् फलाहारं प्रकल्पयेत् ।  
 स्वपेदा स्वगृहे देवसमोपे स्थण्डिले व्रती ॥  
 परेद्युरेवं कुर्वीत यावत् संख्या समाप्यते ।  
 ततः शुद्धिमवाप्नोति यज्ञाधान<sup>१</sup>पराङ्मुखः ॥

इति हेमाद्रौ साक्षाच्चेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथार्द्रकृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि आर्द्रकृष्णाजिनं शुभम् ।  
 तिलैरापूर्य्य योभक्त्या<sup>२</sup> दद्याद्विप्राय धीमते ॥  
 स नरः पापनिर्मुक्तो ब्रह्मलोकं समश्नुते ।  
 पश्चाद्भुवमुपागम्य सप्त जन्म भवेद् द्विजः ॥  
 तवाऽधीत्य श्रुतं सन्यग् ब्रह्मज्ञानमवाप्य च ।  
 तेन ज्ञानेन महता निर्व्वाणं लभते परम्<sup>३</sup> ॥

(१) यज्ञभागपराङ्मुख इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तच्चर्म इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) समपद्यत इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



भविष्योत्तरे,—

सूर्यसोमग्रहे राजन् मन्वादिषु युगादिषु ।  
 अयनद्वितये चैव व्यतीपाते च वैधृतौ ॥  
 संक्रमेषु च जन्मर्त्ते नदीतीरे सुरालये ।  
 स्वर्गहे वाऽपि राजेन्द्र पुण्यक्षेत्रे च पञ्चसु ॥  
 नरोयः सम्यगभ्यर्च्य आर्द्रक्षणाजिनं दृढम् ।  
 तिलपूर्णं द्विजेन्द्राय अर्चिताय सुभूषणैः ॥  
 दद्याद् दक्षिणया सार्द्धं तस्य पुण्यफलं शृणु ।  
 यावन्त्यजिनरोमाणि यावन्तस्तत्र वै तिलाः ॥  
 तावद्युगसहस्राणि ब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ।

लिङ्गपुराणे,—

तिलपूर्णं पुण्यकाले आर्द्रक्षणाजिनं नरः ।  
 अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैर्गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥  
 योदद्याद्विप्रवर्याय स गच्छेद्ब्रह्मणः पदम् ।

तत्प्रतिग्रहेदोषमाह<sup>१</sup>,—

स्कन्दपुराणे,—

आर्द्रक्षणाजिनं राज्ञः पुण्यकाल उपागते ।  
 योविप्रः प्रतिगृह्णीयात् स सद्यः पतितोभवेत् ॥  
 नित्यं नैमित्तिकं काम्यं यागदिकमनन्तरम् ।  
 तदा नश्यन्ति कर्माणि दृष्टापूर्त्तादिकानि च ॥



तदा मृत्युवशं याति पुण्यभ्रंशाद्यमालये ।  
महान्तं नरकं भुक्त्वा स्त्रीभवेत्<sup>१</sup> तदनन्तरम् ॥

ब्रह्माण्डे—

तिलपूर्णं पुण्यकाले चर्माऽऽर्द्रं राजवल्लभात् ।  
प्रतिगृह्य द्विजोलोभात् सप्ततन्तुपराङ्मुखः ॥  
यमलोकमुपागम्य चिरं नरकभाक् ततः ।  
नाना जन्माऽनुभूयाऽऽशु क्लृप्तासोभवेद्भुवि ॥  
तस्येवं निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ।  
अपमृत्युत्तरणमार्जनं कृत्वा तदनन्तरं प्रायश्चित्तम् ।

( कर्त्तव्यं तदाह )

प्रातःस्नात्वा तिलैः सम्यगधमर्षणपूर्वकम् ।  
आर्द्रवासास्ततोगत्वा अनुज्ञाप्य द्विजन्मनाम् ॥  
प्रतिग्रहविशुद्ध्यर्थं क्षन्तुमर्हथ सज्जनाः ।  
इति प्रार्थ्य द्विजान् सर्वान् परिक्रम्य प्रणम्य च ॥  
तप्तक्लृप्शतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ।  
प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनःसंस्कारमाचरेत् ॥  
पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् शुद्धीभवति नाऽन्यतः ।

क्लृप्तादिकाचरणेन प्रायश्चित्तं पुनः कर्मपूर्वकं कृत्वा तदङ्गप्राय-  
श्चित्तेन पूतोभूत्वा यागादिकं कुर्यात् । अन्यथा पुनः कर्मणाम-

(१) स्त्रीजन्म इति क्रीतखेतपुस्तकपाठः ।

(—) पञ्च पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयोर्नास्ति ।



‘सम्भवे यागादिकं न फलति । पुनः कर्मैव आचार्यत्विजां सर्व-  
धर्मसाधनम् । नोचेन्मलमुष्टिप्रक्षालनवत् । अतः पुनः कर्मैव  
बलवत्तरम् ।

इति हेमाद्रौ आर्द्रकृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ तिलकृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

तिलैरापूर्य्य यश्चर्मं दद्यात्<sup>१</sup> पुण्यागमे नृपः ।

न तस्य यमलोकोऽस्ति वैकुण्ठे वासमश्रुते ॥

कूर्मपुराणे,—

पुण्यकाले पुण्यदिने माङ्गे कृष्णाजिने तिलान् ।

निक्षिप्य विप्रवर्याय योदद्यात् स तु पुण्यभाक् ॥

स्कन्दपुराणे,—

पूर्व्ववत् तिलमंयुक्तं शुष्कं चर्मं द्विजातये ।

पुण्यकालेषु पुण्याहे योदद्यात् सोऽपि वै हरिः ॥

(१) कर्मणां सम्भवे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) माङ्गं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अजिनं यो नु गृह्णीयात् शुष्कं विप्रस्तिलैर्युतम् ।

अपमृत्युमवाप्नोति नारीत्वमाप्नुयादसौ ॥

दानमागरे,—

पुण्यतीर्थेषु<sup>१</sup> पुण्येषु दिनेषु पृथिवीपतेः ।

तिलकृष्णाजिनं धृत्वा व्रथाभोगपरायणः ॥

यमलोकमवाप्नोति स्थित्वा पश्येन्महद्भयम्<sup>२</sup> ।

पुनर्नारीत्वमाप्नोति तिलचर्मप्रतिग्रहे ॥

पादहीनं,—ममृत्युर्द्धपञ्चतप्तकच्छाणि कृत्वा पुनः संस्कारं च  
पूर्ववत् कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा ।

इति हेमाद्रौ तिलकृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ योगव्रतादिषु कृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे<sup>३</sup>,—

अर्द्धनारीश्वरे योगे योगे हरिहरात्मके ।

लक्ष्मीनारायणे योगे व्रतेष्वन्येषु षण्मुख ॥

(१) पुण्यकालेषु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जन्ममहद्भयं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) मत्स्यपुराणे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



लूणाजिने<sup>१</sup> व्रताङ्गत्वान्न दोषइति गोभिलः ।

तथाऽपि शृणु वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥

महानारदाये,—

योगेषु व्रतकालेषु अङ्गिनारीश्वरादिषु ।

योदद्यादजिनं विप्रे व्रतं तस्य फलप्रदम् ॥

पुरा नारायणोदेवो भोक्ता मंहत्य चाऽत्मनि ।

निधाय जलधौ शेते दीर्घकालमरिन्दम<sup>२</sup> ॥

तन्नाभौ शैवलं जज्ञे तत्राऽभूत् पङ्कजं महत् ।

हिरण्यं बृहन्नालं रक्तकुङ्कुमकेसरम् ॥

सहस्रपत्रं तरुणं प्रतप्तकनकोज्ज्वलम् ।

तत्र यज्ञे विधाता च अस्तौषज्जगतां पतिम् ॥

हरिः प्रमन्नवदनोवभाषे कमलासनम् ।

‘सृज विश्वमिदं भद्र देवान् यज्ञान् द्विजानपि ॥

धेनुञ्च लोकरक्षार्थमालस्यं मा कुरुष्व च ।

द्रव्युक्ता भगवानीशस्तत्रैवाऽन्तरधीयत ॥

ब्रह्मा तदवधार्याऽथ सृष्टवान् विश्वमीजसा ।

देवान् द्विजान् ( भावमात्रान् ततस्तान् साधकान् बहु ॥ )

(१) लूणाजिनं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पङ्कजं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(—) अयमंशः लेखितपुस्तके न दृश्यते ।



अरणी स्रक्स्रुवौ दर्वीध्रुवां जुह्वां तथाऽयुधम् ।

कृष्णाजिनञ्च मुषलं उलूखलमतः परम् ॥

पात्राख्यानानि विश्वात्मा ससर्जं जगदीश्वरः ।

व्रतेषु यज्ञदानेषु ब्रह्मचर्यव्रतादिषु ॥

अजिनं दानपूर्त्यर्थं ददौ विप्रस्य चाऽऽदरात् ।

ततः प्रभृत्यदः सर्वं प्रसिद्धिमगमद्भुवि ॥

यस्त्वेतच्चर्म दानेषु व्रतेषु नियमेषु च ।

‘विप्रमात् कुरुते सोऽपि ब्रह्मनिर्ज्वाणमाप्नुयात् ॥

( तत्परिग्रहं प्रायश्चित्तमाह,—

मार्कण्डेयपुराणे,—

यागादिषु व्रतैश्चेतत् प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ।

प्रायश्चित्तं तदा कुर्यात् पुनःसंस्कारवर्जितम् ॥

अयुते दशगायत्री अर्द्धनारीश्वरव्रते ।

तथा हरिहरे योगे लक्ष्मीनारायणे तथा ॥ )

उग्रव्रतेषु दानेषु पुंमध्यत्वहरादिषु ?

पुनः संस्कारपूतात्मा शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ।

लिङ्गपुराणे,—

प्रतिगृह्य द्विजोलोभात् भोगवृत्त्यापराधः<sup>१</sup> ।

तिलपद्मं समुत्सृष्टं राजभिः पुण्यमङ्गमे ॥

(१) प्रदानं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अयं पाठः क्रीतकाशीपुस्तकयो न दृष्टः ।

(३) पराङ्मुख इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पुनः कर्म प्रकुर्वीत ततः पश्चात् शृणुष्व मे ।

सम्यग्विप्रैरनुज्ञातः षडब्दं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

ततः पापविशुद्धः<sup>१</sup> स्यान्न दानैर्वाऽन्यकर्मभिः<sup>२</sup> ।

द्विजोलोभपरायणो भोगेच्छया कृष्णाजिनं धृत्वा पुनः संस्कारं  
कृत्वा पश्चात् परिषदुपगमनपूर्वकं प्राजापत्यकृच्छ्राणि षडब्द-  
माचरेत् पूतोभवति न दानैरन्यकर्मभिरिति ।

इति हेमाद्रौ योगव्रतकृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ रजतपद्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेय पुराणे,—

कमलं राजतं दद्याद्योराजा पुण्यमङ्गमे ।

अभ्यर्च्य विधिना शास्त्रादिप्रायाऽध्यात्मवेदिनः ॥

न तस्य पुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात् कदाचन ।

शिवपुराणे,—

निष्कामनतया राजा उद्दिश्य हरिमव्ययम् ।

हरं वा द्विजवर्याय दद्यात् पुण्यागमि सुधौः ॥

(१) पाप विशुद्धार्थं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) न दानैरकर्मभिः इति लेखितपुस्तकपाठः ।



सर्वपापविनिर्मुक्तः पुत्रपौत्रसमन्वितः<sup>१</sup> ।

इहैव विपुलान् भोगान् भुक्त्वा देवपदं व्रजेत् ॥

चतुर्विंशतिमते,—

योग्यह्नाति रौप्य<sup>२</sup>पद्मं पुण्यकालेषु राजभिः ।

दत्तं सम्यगलङ्कृत्य तस्य शुद्धिरनुत्तमा ॥

प्रधानं सम्परित्यज्य कृत्वा चान्द्रायणद्वयम् ।

आधानं वा ऋणं तीर्त्वा तेन विप्रो न दोषभाक् ॥

आधानकरणे सर्वस्वदक्षिणया सह प्रायश्चित्तं पञ्चगव्यप्राशनं च ।

इति हेमाद्रौ रजतपद्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ प्रतिकृतिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

क्षयः श्वासश्च गुल्मश्च शिरोवायुर्भगन्दरः ।

अर्शो रोगस्तथा शूलगण्डमाली शिरोभ्रमः ॥

एते महापातकजन्याः ।

(१) परिष्कृत इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यो धृत्वा राजतं पद्मं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



वातव्याध्यश्मरी कुष्ठमहोदरभगन्दराः ।

अर्शांसि ग्रहणी कुष्ठा महारोगाः प्रकीर्त्तिताः ॥

इत्युपपातकजन्याः ।

प्रमेह<sup>१</sup> मधुमेहो च ज्वरः शीतोष्णसम्भवः ।

कम्पश्च पक्षघातश्च अन्तर्बुद्धिस्तथैव च ॥

इत्येते सङ्कलीकरणजन्याः<sup>२</sup> ।

अरुचिश्च तथा पित्तं बृहन्मूत्रं शिरोव्रणः ।

सर्वाङ्गतापनं तद्वदधिरत्वमनस्थिता ॥

इत्येते मलिनीकरणजन्याः ।

अक्षिशूलं कर्णशूलं पादशूलं तथाङ्गुलि<sup>३</sup> ।

कण्डूतिर्दुर्दुरो रोगः कामला च तथा भ्रमः ॥

इत्येते अपात्रीकरणजन्याः ।

नक्तान्धत्वं गुदे शूलं नानारोगास्तु सज्वराः<sup>४</sup> ।

हिक्रा चैवमजीर्णत्वं कण्ठशोषणमेव च ॥

इत्येते जातिभ्रंशकरजन्याः<sup>५</sup> ।

एते चान्ये च बहवोव्याधयः पापसम्भवाः ।

इह जन्मनि वा राजन् पूर्वजन्मनि वाऽर्जिताः ॥

(१) प्रमेह मधुमेहश्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सङ्कलाजन्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तथाङ्गुलं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) जन्तव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) जाति भ्रंशजन्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



व्याधयः पापमूलाः स्युः प्रत्यक्षनरकास्त्वमी ।

मर्ज्याध्युपशान्त्यर्थं कुर्युः प्रतिकृतिं बुधाः ॥

ब्रह्महत्यादिजनितरोगनिवृत्त्यर्थम् यस्य यस्य पापस्य योयो  
रोगोजातस्तत्तन्निरामार्थं प्रधानदेवतास्तास्ताः कर्मविपाकेषु  
दर्शिताः तत्प्रतिकृतिप्रतिग्रहादिप्रस्य पापबाहुल्यम् । तत्परिग्रहे  
दोषं प्रायश्चित्तञ्चाऽऽह

वामनपुराणे—

कृष्णाजिनं प्रतिकृतिं मेषीं चोभयेतोमुखीम् ।

शकटं योनु गृह्णाति न भूयः पुरुषोभवेत् ॥

एतदकृतयागस्याऽकृतप्रायश्चित्तस्य च ज्ञेयम् । उभयोरेवाऽत्र  
सम्भवेन स्वीत्वम् । तदाह,—

मार्कण्डेयपुराणे,—

द्विजः प्रतिकृतिं धृत्वा यागं वा निष्कृतिं तथा ।

अकृत्वा द्रव्यलोभेन नारी<sup>१</sup> भवति सर्वथा ॥

तत्प्रायश्चित्तमाह,—

कूर्मपुराणे,—

धृत्वा प्रतिकृतिं विप्रः सप्ततन्तुपराङ्मुखः ।

तत्प्रतिग्रहशुद्धार्थं कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम् ॥

निरन्तरमहोरात्रं जपन्नारायणं विभुम् ।

स्वपेच्च देवतागारे स्थण्डिले केवले वसन् ॥



कवलं भक्षयेत्तात रविर्मन्दायते यदा ।  
 एवं मासत्रये पूर्णे शुद्धीभवति पातकात्<sup>१</sup> ॥  
 आधानं वा प्रकुर्वीत ऋणनिर्मोचनं तथा ।  
 द्वयोरभावे लोभार्थं प्रायश्चित्तमिदञ्चरेत् ।  
 तत्राऽपि च पुनःकर्म शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा ॥

इति हेमाद्रौ प्रतिकृतिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ मृतशय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

कूर्मपुराणे—

जनस्य मरणे प्राप्ते<sup>२</sup> यमोमृतगणैः सह ।  
 एति तदा तु पापानि सङ्घीभूयोद्भवन्त्यतः ॥  
 भूतप्रेतपिशाचाद्या मृतशय्यावहिःस्थिताः ।  
 केचिद्दृष्टिपथं याताः केचित्प्रेता हसन्त्यन्तम्<sup>३</sup> ॥  
 म्रियमाणं ततोदृष्ट्वा कुत्सयन्ति तथा परे ।  
 मरणान्ते तथा राजन् तच्छ्वास्पृश्यता भवेत् ॥

(१) शुद्धेऽभूत्तत्प्रतिग्रहात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) काले इति क्रीत-पुस्तकपाठः ।

(३) दशन्त्यन्तं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तत्पुत्रादिः स्थितां 'शय्यां दिव्यायाऽध्यात्मवेदिने ।

दद्याद्वादशमे दिवसे मृतः स्वर्गमवाप्नुयात् ।

बह्वीभिर्दक्षिणाभिश्च तोषयेद्विजवल्लभम् ॥

तत्प्रतिग्रहे दोषमाह —

मत्स्यपुराणे,—

विप्रो लोभपरीतात्मा मृततल्पं भजेद्यदि<sup>१</sup> ।

नित्यं नैमित्तिकं काम्यं तदा<sup>२</sup> क्षरति सर्व्वथा ॥

नित्यनैमित्तिकाभावात् पतितः स्यात् तदा द्विजः ।

गर्भाधानादिसंस्काराः पुनः<sup>३</sup> कार्या द्विजातिभिः ॥

ततः परं चरेत्कृच्छ्रं द्विशतं तप्तसंज्ञितम् ।

ततः पूतोभवत्येव कर्मार्हो लोकयोर्द्वयोः ॥

अन्यथा निष्कृतिर्नाऽस्ति आधानक्रतुभिर्विना ।

प्रधानं सम्परित्यज्य प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

अन्यथा<sup>४</sup> स्यात् स दुष्टात्मा उलूको निर्जने वने ।

एतद् यागप्रायश्चित्ताद्यकरणविषयं, उभयोरिकतरसम्भवे नीलूक-  
त्वम् ।

इति हेमाद्रौ मृतशय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

(१) जनैरिति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सन्वतल्पपरिग्रहात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) सद्य इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) कुर्याति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(५) भवति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ गोचर्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे,—

गोचर्मं विप्रवर्याय राजा धर्मपरायणः ।  
पुण्यकालउपायात् दद्याद्दक्षिण्या सह ॥  
यावन्तः पांसवोभूमेराशीभूता भवन्ति हि ।  
तावद्युगसहस्राणि विष्णुलोके महीयते ॥

गोचर्मप्रमाणमाह ।

रङ्गराजीये,—

गोचर्मं विप्रवर्याय राजाधर्मपरायणः ।  
पुण्यकालउपायात् दद्याद्दक्षिण्या सह ।  
गोशतस्य सवत्सस्य सञ्चारः स्वेच्छया 'यतः ।  
स चेद् द्वादशधा याति गोचर्मंति विदुर्वुधाः ॥

कूर्मपुराणे,—

अनर्गलतया यत्र<sup>१</sup> सञ्चारोगोशतस्य च ।  
रात्रौ यावान् प्रवेशः स्यात् सवत्सानां नृपोत्तम ! ॥  
स तु द्वादशमानेन गोचर्मंति प्रकीर्तितः ।  
तं देशं विप्रवर्याय अर्चिताय कुटुम्बिने ॥  
यागासक्ताय योदद्यात् स वै नारायणः स्मृतः ।  
पुनर्भुवमुपागम्य मण्डलाधिपनिर्भवेत् ॥

(१) भवेत् इति क्रीतले खतपुस्तकपाठः ।

(२) राजन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



लिङ्गपुराणे,—

पुण्यकालेषु पुण्यर्त्ते व्यतीपाते च वैधृतौ ।  
 बढीतीरे पुण्यदिने दत्तं राज्ञा सुवर्त्तिना ॥  
 ये गृह्णन्ति द्विजा मोहाद्वृत्तयागादिकं विना ।  
 सद्यः पतन्ति राजेन्द्र सत्क्रियाः कीर्त्तिसम्भवाः ॥  
 नित्यकर्मपरिभ्रंशात्सूकरत्वमवाप्यते ।  
 तेषां वै निष्कृतिर्नाऽस्ति यागीभ्योऽन्यैः परिग्रहात् ॥  
 तदभावे नरयेष्ठ शतं चान्द्रायणञ्चरेत् ॥

तयस्त्रिंशन्मते—

पूर्वजोयदि गृहीयात् राजदत्तं सुपूजितम् ।  
 गोचर्मोति पुनःस्थानं द्रव्यलोभेन पार्थिव ॥  
 तस्य कर्माणि नश्यन्ति मृत्युरायानि तत्क्षणात् ।  
 नरकाननुभूयाऽयं सूकरोभवति क्षिती ॥  
 बहुमत्कारपूर्तभ्योयागादिभ्योन निष्कृतिः ।  
 तस्योपनयनं भूयः कर्मभ्रंशो नचेन्मतः ।

पूर्वमुपनयनादिकं कृत्वा पश्चाद् यागः कर्त्तव्यः, तदभावे चान्द्रा-  
 खणशतं कृत्वा दण्डमेखलाजिनाश्रमस्थापनादिकं वर्जयित्वा कल्पोक्त-  
 विधिना सर्व्वं पुनःसंस्कारं कुर्यात्, नाऽन्यथा शुद्धिरीरितेति ।

इति हेमाद्रौ गोचर्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) नरकानुभवं कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भवेदत इति लेखितपुस्तकपाठः । भवेत्तदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ शकटदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मत्स्यपुराणे,—

स्थिते कर्कटके भानौ मकरस्थे दिवाकरे ।  
माघमासे पूर्वपक्षे सप्तम्यां रविवासरे ॥  
अयनद्वितये चैव मन्वादिषु युगादिषु ।  
शकटं धान्यसंमिश्रं युगरज्जुसमन्वितम्<sup>१</sup> ॥  
चतुर्भिश्चानडुद्भिश्च युक्तं वस्त्रैरलङ्कितम् ।  
योदद्याद्विप्रवर्याय न तस्य पुनरुद्भवः ॥

स्कन्दपुराणे,—

तीर्थेषु पुण्यकालेषु पुण्यवत्सु दिनेष्विह ।  
योराजा शकटं दद्याद् विप्रायाऽध्यात्यवेदिने ॥  
अनडाहकसंयुक्तं रज्जुधान्यपरिष्कृतम् ।  
अर्चितं गन्धवस्त्राद्यैरुक्तदक्षिणया सह ॥  
मातृतः पितृतश्चैव कुलमेकं समुदहन् ।  
मेरुमुल्लङ्घ्य सद्यः स विष्णुलोकं प्रपद्यते ॥

लिङ्गपुराणे,—

(१) परिष्कृतं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) सहसा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रायश्चित्तमाह—

शकटं योनु गृह्णीयात् यागतीर्थपराङ्मुखः ।  
 पुण्यकालेषु पुण्यर्क्षे स भवेच्छत्रधारकः<sup>१</sup> ।  
 एतत्पापविशुद्ध्यर्थं चरेच्चान्द्रायणा<sup>२</sup>ष्टकम् ।  
 यागाद्यकरणे दोषः शकटस्य प्रतिग्रहे ॥  
 प्रधानं संपरित्यज्य प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
 परिषदुपस्थानपूर्वकं सर्वप्रायश्चित्तं पूर्ववत् कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ शकटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ उभयतोमुखीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

सूयमानां स्पृशन्<sup>३</sup> धेनुं परिक्रम्य प्रणम्य च ।  
 योऽदद्याद्दिप्रवर्याय स वै विष्णुपदं व्रजेत् ॥  
 सायं वा प्रातरथवा सूयमानां विलोकयेत्<sup>४</sup> ।  
 शिरःपादौ यदा व्यक्तौ तदा दानं महत्तरम् ॥

- 
- १) चक्रधारिणः इति क्रीतलेखित पुस्तकपाठः ।  
 २) चान्द्रायणाष्टकं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।  
 ३) यथाधनुर्मिति क्रीतपुस्तकपाठः ।  
 ४) विलोकयन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



पितृनुद्दिश्य वा राजन्नुत विष्णुं हरञ्च वा ।  
तत्तल्लोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥

महानारदायै—

सूयमाना यदा धेनुः सर्वपापक्षयकरी ।  
तदा नरेण दातव्या विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ॥  
न तस्य पुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात् कदाचन ।

शिवधर्मोत्तरे—

द्विमुखीं षट्पदां धेनुमनुव्रज्य प्रणम्य च ।  
यो दद्याद्विप्रवर्याय स वै विष्णुपदं व्रजेत् ॥

महाभारते—

द्विमुखीं षट्पदां धेनुं विलोक्य जनवल्लभः ।  
परिक्रम्य प्रणम्याऽथ द्विजायाऽध्यात्मवेदिने ॥  
बह्वीभिर्दक्षिणाभिश्च दद्याद्यदि नरोत्तमः ।  
यावन्ति पशुरोमाणि तावद्ब्रह्मपदं व्रजेत् ॥

तत्प्रतिग्रहे दोषमाह—

देवीपुराणे—

द्विमुखीं षट्पदां धेनुं विप्रोलीभपरायणः ।  
'प्रतिगृह्णाति चेत्तोभाद्यावद्भोगपरायणः ॥  
तावद्युगसहस्राणि नारीत्वं 'स व्रजेदिह ।

(१) प्रतिगृह्णाद्विजोदेवि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्राप्नुयादिह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



कूर्मपुराणे—

षट्पदां द्विमुखीं धेनुं सोपस्करसदक्षिणाम् ।  
 सूर्यमानां जनोद्धृत्वा याति मृत्युवशं क्षणात् ॥  
 नरकानुभवं कृत्वा नारीजन्म समश्नुते ।  
 केचित्संस्कारमिच्छन्ति उभयतोमुखीग्रहे ॥  
 स्वीत्वाच्च दोषबाहुल्यात् प्रायश्चित्तविधानतः ।  
 लक्षत्रयेण गायत्र्याः शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ॥  
 यागादिभ्रंशने तात प्रायश्चित्तमिदञ्चरेत् ।  
 प्रायश्चित्तेन पूतात्मा प्रधानं सम्परित्यजेत् ॥  
 अनेन विधिना शुद्धिर्नतीर्थैर्नजलादिभिः ।

लक्षत्रयजपानन्तरं पुनः संस्कारं कृत्वा उभयतोमुखीप्रतिग्रहात्  
 शुद्धिरिति तात्पर्यम् ।

इति हेमाद्रौ उभयतोमुखीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथोत्क्रान्तिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

माकेण्डेयपुराणे—

विप्रस्तृत्क्रान्तिकाले तु अविचार्य महद्भयम् ।  
 तां धेनुं प्रतिगृह्याऽऽशु महापातकमश्नुते ॥



देवीपुराणे—

उत्क्रान्तिधेनुमासीनां तन्मृत्यं वा यथार्हतः ।

प्रतिगृह्य द्विजो लोभाद्भौमं नरकमश्नुते ॥

कूर्मपुराणे—

द्विजो यः श्रुतिपम्पन्नः प्रतिग्रहपरायणः ।

उत्क्रान्तिकाले तन्नाम्नीं धेनुं धत्ते स दोषभाक् ॥

नरकाननुभूयाऽऽशु दरिद्रो भुवि जायते ।

अन्नवस्त्रपरिहीणः सदारो बहुलप्रजः ॥

किं करोमि क्व गच्छामि किं वा शरणमाश्रये ।

इति वर्त्तत स नित्यमेतद् दारिद्र्यलक्षणम् ॥

दारिद्र्यं मरणात् कष्टं दरिद्रो न हि पूज्यते ।

वृथा जन्म दरिद्रस्य दरिद्रस्य गुणो वृथा ॥

तत्राऽपि बालदारिद्र्यं क्षणमात्रं न शक्यते ।

तत्प्रायश्चित्तमाह—

भविष्योत्तरे—

उत्क्रान्तिधेनुमागृह्णन् प्रधानं सम्परित्यजेत् ।

लक्षद्वयेन गायत्र्याः शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति दरिद्रत्वान्न मुक्तिभाक् ।

दारिद्र्यजन्म धिग्रूपं धिग्दरिद्रं पुनः पुनः ॥

(१) प्रतिगृह्यद्विजायस्तु सर्वे नरकमश्नुते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वृथारिपुं इति लेखितपुस्तकपाठः । वृथारूपं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) भवेदिह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



दारिद्र्यजनकं धेनोर्ग्रहणं न प्रशस्यते ।

इति हेमाद्रौ उत्क्रान्तिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ वैतरणीधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे,—

यमलोके महाघोरे सरिदङ्गाररूपिणी ।  
षष्टियोजनविस्तीर्णा शतयोजनमायता ॥  
मा नदी पापिनोदृष्ट्वा ज्वलतीव सदा रुषा ।  
दृष्ट्वा पुण्यतमांश्चैव शान्तिमाप्नोति तत्क्षणात् ॥  
पापिनः पापकर्माणि पुण्यवान् पुण्यमाचरन् ।  
पापी नरकमाप्नोति पुण्यवान् पुण्यलोकवान् ॥  
पुण्यं सुखार्थी कुर्वीत दुःखार्थी पापमाचरेत् ।

दुष्टप्रतिग्रहएव पापं तत्परित्यागएव पुण्यं, दुष्टप्रतिग्रहउत्क्रान्ति-  
वैतरण्यादिः । तेषां त्यागएव पुण्यम् । द्रव्यसम्पत्तौ तु पाप-  
आहुत्यात् यागादिकरणे शक्यत्वात् परित्याज्यमेव सर्व्वथा ।

मत्स्यपुराणे,—

दारिद्र्यं स्थिरतामेति वैतरण्याः प्रतिग्रहे ।  
सर्व्वेषामेव पापानां दारिद्र्यमधिकं विदुः ॥



‘दारिद्र्यादोषबाहुल्यात् त्यजेदेतत्प्रतिग्रहम् ।

दारिद्र्यादपरं पापं जनस्येह न विद्यते ॥

तन्प्रायश्चित्तमाह,—

स्कन्दपुराणे,—

प्रतिगृह्य द्विजोधेनुमशौचान्ते जनाधिप ।

पिण्डनिर्व्वापणे काले दीयमानां दारिद्र्यकः ॥

प्रधानं सम्परित्यज्य स्नात्वा नित्यं समाहितः ।

लक्षद्वयं जपेद्देवीमेतदोषोपशान्तये ।

नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति दारिद्र्या<sup>१</sup>न्न विमुक्तिमान् ॥

इति हेमाद्रौ वैतरणीधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) दारिद्र्यदोषबाहुल्यादिति-क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) दीयमानात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) दारिद्रवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) दारिद्र्यं इति क्रीतकाशीपुस्तकपाठः ।



अथ मृत्युमहिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

प्रतिगृह्णाति योविप्रोमहिषीं मृत्युरूपिणीम्<sup>१</sup> ।

मृत्युनाशकरोन्दातुर्ग्रहीतुर्मृत्युदायिनीम्<sup>२</sup> ॥

<sup>३</sup>अर्चितां नीलवस्त्राद्यैर्धान्यैर्दक्षिणया सह ।

स साक्षान्मृत्युमाप्नोति षण्मासाभ्यन्तरे नृप ॥

स्कन्दपुराणे,—

विप्रोयोमहिषीं धत्ते मृत्युदां पापनाशिनीम् ।

धान्यैर्गन्धाक्षतैर्वस्त्रैरर्चितां मृत्युरूपिणीम् ॥

सवत्सां रोगिभिर्दत्तां लोकेऽस्मिन्<sup>४</sup> भयवर्जितः ।

मृत्युमाप्नोति सहसा पश्चात् सूकरतां व्रजेत् ॥

ब्रह्माण्डे,—

भानुः कुजो भृगुश्चैव शनीराहुर्ग्रहास्त्वमी ।

द्वादशाष्टमजन्मस्था पञ्चैते यस्य देहिनः ॥

---

(१) विप्रो यो महिषीं गृह्णन् साक्षान् मृत्युरूपिणीं इति क्रीतलेखित पुस्तकपाठः ।

(२) मुक्तिदायिनीं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अभ्यर्च्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) ब्राह्मण इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कुर्वन्ति प्राणसन्देहं स्थानभ्रशं धनक्षयम् ।  
 तदा मृत्युवशं याति' पीडितोग्रहनायकैः ॥  
 ज्वरशूलवातपित्तश्लेष्मोत्सणमसूरिकाः ।  
 विषूचीग्रहणीषादहस्तशूलं महद्भयम् ॥  
 ज्वरातिसारीनिःशक्तिः मूर्ध्नि भ्रमणमेव च ।  
 कफो वा बहुमूत्रं वा रोगानृणां भवन्ति हि ॥  
 सर्वरोगविनाशाय मृत्युत्तरणहेतवे ।  
 तदा योमहिषीं दद्यात् पूजितां वस्त्रभूषणैः ॥  
 मृत्युरूपाय विप्राय स सद्योरोगमुक्तिमान् ।  
 गृह्णीयान्महिषीमेनां द्विजोद्रव्यातुरस्तु यः<sup>१</sup> ॥  
 मृत्युमायाति सहसा सूकरत्वमुपैति<sup>२</sup> सः ।

नत्प्रायश्चित्तमाह,—

गारुडपुराणे,—

तदानीं वा परेद्युर्वा स्नात्वा शुचिरलङ्कृतः ।  
 नित्यकर्मविशुद्धात्मा जपन्मृत्युविनाशनम् ॥  
 अयुतं नियुतं कृत्वा प्रत्यहं संख्यया नृप ।  
 अयुतेन विशुद्धः स्यान्महिषीं योऽनुमन्यते ॥

(१) यात इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तदा इति लेखितपुस्तक पाठः ।

(३) अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



पक्षमात्रं दशाहं वा क्षीणमारभ्य बुद्धिमान् ।  
चतुर्थकालआयार्तं हविर्भोजनमाचरेत् ॥

“अपमृत्युमपः‘क्षुध’मित्यादिभिर्नवभिर्वाक्यैर्जपः ।

इति हेमाद्रौ मृत्युमहिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ महिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

वामनपुराणे,—

कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां कृष्णाष्टम्याममादिने ।  
महिषीं विप्रवर्याय दत्त्वा नैति<sup>१</sup> यमालयम् ॥

स्कन्दपुराणे.—

युगादिषु चतुर्ष्वेषु कृष्णाष्टम्यां विषुवद्दिने ।  
कृष्णाङ्गारचतुर्दश्याममायां भौमवासरे ॥  
महिषीं समलङ्कृत्य वस्त्रगन्धादिभूषणैः ।  
योदद्याद्विप्रवर्याय यमपीडानिबृत्तये ॥

(१) क्षुतिमिति लिखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्य नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



यमस्तं पूजयेत्पश्यन् प्रत्युत्थानाभिवन्दनैः ।  
 स्वर्गलोकं<sup>१</sup> स यात्याशु लोकोबन्धुजनं यथा ॥  
 ग्रहीतुः<sup>२</sup> पूर्ववत् पुनः निष्कृतिः कथिता बुधैः ।  
 तेन शुद्धोभवेद्विप्रः पापादस्मात् प्रमुच्यते ॥

इति हेमाद्रौ महिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ गोमुखजननधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

अभुक्तगण्डनक्षत्रे लग्नसन्धिचतुर्दशे<sup>३</sup> ।  
 तथैव विषनाडीषु व्यतीपाते च वैधृती ॥  
 मातापितृसु ज्येष्ठस्य भ्रातुर्नक्षत्रसम्भवे ।  
 एतेषु<sup>४</sup> सम्भवी पुनः कुलनाशकरो भवेत् ॥

अभुक्तसंज्ञामाह,—

ज्योतिर्निदाने,—

अश्लेषामघानक्षत्रसन्धिः रेवत्यश्विनीसन्धिः इत्येते अभुक्ताः ।

(१) स्वर्ग लोकेन यात्याशु इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तस्यैव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) लग्नसन्धि चतुर्दशी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) सम्भवे पुन इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कुलीरसिंहयोर्मनिमेषयोः कौटचापयोः ।

गण्डान्तमन्तरालं स्याद्वटिकाद्वितयं स्मृतम्” ।

एषेषु पुत्रोजातःपितरं मातरं वा हन्ति, अश्लेषा चित्रा ज्येष्ठा  
मूला पुष्य विशाखा एतानि गण्डनक्षत्राणि द्वयोर्लग्नयोरन्तरालं  
लग्नसन्धिः चतुर्दशी कृष्णचतुर्दशी अमा च सर्वमन्यत् स्पष्टम् ।

एतद्दोषनिवृत्त्यर्थं जननं गोमुखे पुरा ।

पश्चात् शान्तिं प्रकुर्वीत तत्तद्दोषोपशान्तये ॥

सा धेनुर्विप्र भूलोके सर्व दुष्कृतकारिणी ।

स्वजातिप्रसवं त्यक्त्वा अन्यनारी प्रसूयते ॥

तदा प्रभृत्यसौ धेनुः सर्वपापविवर्द्धिनो ।

तस्मादेनां द्विजोष्टत्वा सद्यः पातित्यमर्हति ॥

मृतोनरकमाप्नोति पुलिन्देष्वभिजायते ।

तस्योपनयनं भूयः कार्यं चान्द्रायणत्रयम् ॥

एषा निष्कृतिरस्येह नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ।

पूर्वं पुनःसंस्कारं कृत्वा तेन शुद्धोभूत्वा पश्चाच् चान्द्रायणत्रयं  
कुर्यात् ततः पूतो भवति ।

इति हेमाद्रौ गोमुखजननधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथाऽऽलिङ्गनदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

वामनपुराणे,—

धनार्थं मुखजोयन्तु रोगिणं यदि गूहयेत्<sup>१</sup> ।  
स रोगी भवति क्षिप्रं तदाऽधर्मस्ततः परम् ॥  
उत पत्नी सुतोवाऽपि निधनं याति पार्थिव ! ।  
तं कदा नाऽऽलपेद्विप्रो यदि निर्मानुषो मही ॥

गारुडपुराणे,—

धनार्थं यदि विप्रोऽसौ महान्तं रोगिणं नरम् ।  
आलिङ्गेत् सहसा भूमौ रोगी भवति निश्चयः ॥  
यमलोकमुपागम्य भुक्त्वा तत्रैव वेदनाम् ।  
पत्नीपुत्रवियोगी स्यात् षण्मासाभ्यन्तरे नृप ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
सूक्तमेनं जपेन्नित्यं स्नात्वा शुचिरलङ्कृतः ॥  
मासं वा पक्षमेकं वा दीक्षामारभ्य वाग्यतः ।  
हविष्याग्नी भवेन्नित्यं स्वपेन्नारायणं स्मरन् ॥  
परित्यजेत् कुर्वीत अयुतं यदि पूर्यते ।  
तदा विसृज्य नियमं ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥  
एवं यः कुरुते सम्यक् प्रायश्चित्तं स शुद्धिभाक् ।

मुञ्चामित्वेत्यादिः प्रसूक्तमेनमित्यन्तो मन्त्रो जप्यः ।

इति हेमाद्रौ आलिङ्गनदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ दुष्टनक्षत्रशान्तिषु धेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

दुष्टर्क्षविषनाडीषु व्यतीपाते च वैधृतौ ।  
अमाकृष्णचतुर्दश्योः पितृर्नक्षत्रयोस्तथा ॥  
चन्द्रसूर्यग्रहे चैव यदा<sup>१</sup> पत्नी प्रसूयते ।  
तदा शान्तिं प्रकुर्वीत तत्तद्दोषोपशान्तये ।  
शान्त्यङ्गभूता या धेनुः सा देया विप्रपुङ्गवे<sup>२</sup> ॥

तस्मिन् दुष्टनक्षत्रे जातस्य शिशोर्दोषशान्त्यर्थं तत्तनक्षत्राधि  
देवताप्रीत्यर्थं तत्तदेववर्णा गौर्देया इति शान्त्यध्यायेऽभिहितं  
अलाभे कपिला दातव्या । तत्प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे,—

दुष्टनक्षत्रजातस्य शान्तिकर्मणि योद्विजः ।  
आचार्यत्वं यदाकुर्यात् गौर्वापि प्रतिगृह्यते ॥  
तस्यैव नरके वासः कालसूत्रे महत्तरे ।  
तदन्ते भुवमामाद्य पाषण्डत्वमवाप्नुयात् ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तं चरत्तदा<sup>३</sup> ।  
प्रायश्चित्तेन पूतात्मा शुद्धिमाप्नोति पार्थिव ॥

१. यस्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२. विप्रपुङ्गवैः इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३. विगुडये इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स्वाध्यायदिवसे राजन्नुपविश्य सुखाश्रमे ।

तथा पारायणं प्रोक्तं दशरात्रमतन्द्रितः ॥

ततः परमुपोष्यैव पञ्चगव्येन शुध्यति ।

संहितामात्रं चाऽरण्यकं च, न पदक्रमादिः न वा परायत्तपठनम् ।

पश्चात् पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमाप्नोति नाऽन्यथा “वेदो नारायणः  
माक्षात्” इति स्मरणात् ।

इति हेमाद्रौ दुष्टनक्षत्रशान्तिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ दुष्टनक्षत्रे प्रथमरजोदर्शनशान्तिधेनु-  
प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

यस्य पत्नी नरश्रेष्ठ दुष्टर्क्षेष्विह पुष्पिणी ।

पत्युर्वीऽथ स्वयंवाऽथ अवश्यं मृत्युराविशेत् ॥

भरणी आद्रा पुनर्वसुः अश्लेषा मघा पुष्या ज्येष्ठा पूर्व्याषाढा पूर्व-  
भाद्रपदा इत्येतानि दुष्टनक्षत्राणि ।

प्रतिपत् द्वितीया चतुर्थी षष्ठी अष्टमी द्वादशी उभयत्र  
चतुर्दशी अमा च प्रथमार्त्तवे एता दुष्टतिथयः<sup>१</sup> । भानुवारः

(१) एतानिदुष्टदिनानि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



प्रथमरजोदर्शनशान्तिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् । ७७१

अङ्गारकवारः मन्दवासर इति दुष्टवाराः । मेषलग्नं वृषभलग्नं  
सिंहलग्नं एतानि दुष्टलग्नानि । जामित्रे प्रथमरजोदर्शनं  
दोषावहम्<sup>१</sup> । लग्नात् सप्तमलग्नं जामित्रस्थानं, तत्र दुष्टग्रहाश्चेत्  
जायापत्योरमङ्गल्यप्राप्तिरेतेषु नारीप्रथमरजोदर्शने एकैकं द्वयं  
त्रयं वा यदि प्राप्तं, तदा तत्तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिकर्म<sup>२</sup> ।  
तत्राचार्य्योविप्रस्तस्य प्रायश्चित्तमाह ।

पद्मपुराणे,—

गृहस्थस्य तु<sup>३</sup> भार्यायाः प्रथमार्त्तवशान्तिषु ।  
सर्वं प्रमुखतः कृत्वा कृत्वा धेनुप्रतिग्रहम् ॥  
तत्तद्द्रव्यञ्च गृह्णाति अर्चितं वस्त्रभूषणैः ।  
अनुभूय ततः पापं नित्यं याज्यापरोभवेत् ॥  
तद्दोषप्रशमायाऽलं षड्वन्दं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
प्रधानं सम्परित्यज्य देहशुद्धिं समाचरेत् ॥  
स्त्रीणां रजस्वलापापं पञ्चधा परिकीर्तितम् ।  
आचार्य्यत्वन्तु प्रथमङ्गीर्द्धितीयमनन्तरम् ।  
तृतीयं प्रतिमादानं चतुर्थं तत्रभोजनम् ॥  
आर्त्विज्यं<sup>४</sup> पञ्चमं प्रोक्तमेतत्पापस्य लक्षणम् ।  
आचार्य्यं तु षड्वन्दं स्यात् द्विगुणं धेनुसंग्रहे ॥

(१) दोषावहमिति क्रीतलेखितपुस्तकाद्यानास्ति ।

(२) यो द्विजोयस्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तदाचार्य्यस्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) पञ्चमं अर्त्विजाप्रोक्तं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



षड्भुजं पादहीनं स्यात् प्रतिमायाः प्रतिग्रहे ।

तद्वै भोजने प्रोक्तं तद्वैमृत्विजां स्मृतम् ॥

नारीप्रथमरजोदर्शने धेनुदानप्रतिग्रहे एतत्, शान्तिप्रतिमा-  
प्रतिग्रहे च प्रायश्चित्तप्रस्तावे तदाचार्यस्य ऋत्विजां च संसर्गतो  
दोषगुणा भवन्ति इति न्यायात् प्रायश्चित्तस्य युक्तत्वात् ।

इति हेमाद्रौ प्रथमरजोदर्शने शान्ती गोप्रतिग्रहे

होमे तदाचार्यत्विजां प्रायश्चित्तम् ।

अथाद्भुतशान्तिप्रतिमाप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे,—

अद्भुतेषु महत्स्वेषु दिव्येषु पृथिवीपते ।

आन्तरीक्षेषु भीमेषु शान्तिः कार्या सदा नरैः<sup>१</sup> ॥

अद्भुतानि यथा सूर्याचन्द्रमसोः परिवेषः । अकाले महेन्द्र-  
चापोद्भवः । यत्र कचन दिशि सूर्यमण्डलाकारवन्मेघकान्तिकृत्-  
पद्यते स तु प्रतिसूर्यः । मत्स्याकारध्वजवदाकाशे मेघविकारो  
दृश्यते स एव मत्स्यरः । गन्धर्व्वनगरं नाम क्रोगमात्रं वलयाकार-  
वदाकारो दृश्यते तद् गन्धर्व्वनगरम् । नक्षत्रेषु बालोद्यदाजायते



तत्त्वान्नक्षत्रम् । अश्विन्यादिग्रहाणां संस्थानं यथादर्शनविपरीत-  
वदृश्यते तदद्भुतम् । नक्षत्राणि ध्वजाकारवत् कचिद्विभान्ति स तु  
ध्वजः अद्भुत इति दिव्या उत्पाताः । वायौ सरति सति पर्जन्यः  
रक्तं पयो वा वर्षति, दुर्गन्धयुक्तो वा यदा वायुः विवर्तति, येन वा  
वायुना अकाले सौधवृक्षा अधो निपतन्ति, स एव वा वायुरद्भुतः<sup>१</sup> ।  
वसन्तर्तौ मेघायदि सूर्यमावृत्य दिनद्वयं त्रयं वा तिष्ठन्ति सोऽप्यद्भु-  
भुत इत्यान्तरिक्षाः, आरामेषु सुवृक्षेषु क्षीरं रक्तं वा स्रवति, प्रति-  
मादयः कम्पन्ते तासु स्वेदोद्भवो वा, निरग्निधूमोद्भवः, आकस्मिको-  
ध्वनिः, वह्निःसञ्चरतां मण्डूकानां बालोद्भवः, वायसाः श्वेतपक्षाः  
आकस्मिकोभूकम्पः, देवालयेषु धूमोद्भवः, अकाले वृक्षेषु  
फलोत्पत्तिः, अकालवृष्टिश्च देशभेदेन द्रष्टव्या, वृष्टिं विना तटाकानां  
जलागमः इति भौमा अद्भुताः । गृहे उत्पाता यथा सुजनस्य दुर्गुणा  
महिषीयमक्षप्रसूः, सर्वा एव नार्यः यमलौ सूयन्ते, मदन्तजननं,  
आदौ जडदन्तजनमित्येते गृहे उत्पाताः शिथिलीमधुपटलोद्भवश्च ?  
उलूखलस्थमूषने वायमारोहणं, गृहे वायसप्रवेशः, स्वेनैव गृहोपरि  
उलूकगृध्रपिङ्गल्यारोहणं, स्वपुत्रदेहेषु अद्भुतैकल्यं, अश्वोदिवाजातः,  
कदल्यारामे दक्षिणभागे कोशोद्भवः, नारीप्रसवसमये पादोत्पत्तिः,  
माज्जीरमूषकादीनां प्रसवकाले वैपरीत्यजननं, श्वमाज्जीरादीनां  
<sup>२</sup>ध्वन्यादिविकार एते स्वगृहोद्भवा उत्पाताः । स्वस्थस्य मर्त्यस्य

१ स एव महदद्भुत इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२ नारायणं सर्वं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३ धान्यादिविकार इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



शिरोहीनमङ्गं दृश्यते, सप्तर्षिमण्डलं मेघावरणादिरहितेऽपि न दृश्यते, मनसि “दुष्टग्रहाः सञ्चरन्ती”ति सदा भ्रमः, स्वहृदयस्थगन्धः शीघ्रं शुष्कायते ध्वनेर्विकारश्च इति स्वस्थारिष्टाः । इति दिव्यान्तरीक्षभीमगृहदेहोद्भवानि अद्भुतानि, एषु दिव्यान्तरीक्षभीमाद्भुतेषु दृष्टेषु तच्छान्तिः प्रजाभिः<sup>१</sup> प्रजानां संक्षोभभयात् राजपुरुषैर्वाकत्तव्या अन्यथा महान् दोषः । तच्छान्तिषु विप्रस्य प्रधानप्रतिग्रहे तत्प्रतिमाग्रहे च प्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे,—

अद्भुतेष्वेषु दृष्टेषु तच्छान्तिषु द्विजोत्तमः ।  
 आचार्यत्वं यदा कुर्यात् तदा पापं समश्नुते ॥  
 अल्पद्रव्ये प्रधानस्य प्रतिमासं परिग्रहे ।  
 यथोक्तप्रतिमादाने दोषाधिक्यं भवेत्तदा ॥  
 व्याघ्रोभवति देहान्ते सर्वप्राणिविहिंसकः ।  
 अतस्तद्दोषशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
 यथोक्तप्रतिमादाने साङ्गं दक्षिणया<sup>२</sup> तथा ।  
 चान्द्रायणद्वयङ्कुर्यात् तदभावे प्रतिग्रहे ॥  
 अतोऽन्यूनं न सर्वत्र विप्रश्चान्द्रायणञ्चरेत् ।

प्रतिमाल्पत्वे दक्षिणाल्पत्वे च प्रायश्चित्तमाह ।

(१) प्रजानां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दक्षिणानेन कल्पयते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



नृसिंहपुराणे,—

सम्पूर्णदक्षिणादाने कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।  
नो चेद्विजः प्रकुर्वीत एकं चान्द्रस्य भक्षणम् ॥  
अतिसूक्ष्मतया विप्रं प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
शेषाणामृत्विजां प्रोक्तं वेदमातुः शतं द्विजाः ॥ इति

इति हेमाद्रौ अद्भुतशान्तिप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ क्वागप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

द्विजः पर्वणि संक्रान्तावमायां पुण्यमङ्गमे ।  
सक्तच्छागं प्रगृह्याऽऽशु जनेभ्यः पापभूयसे ॥  
सप्तजन्मसु नारी स्यात् अन्ते उष्ट्रत्वमेति च ।

लिङ्गपुराणे,—

क्वागं यः प्रतिगृह्णीयात् विप्रोभोगपरायणः ।  
सप्तजन्मसु नारीत्वमनुभूय महद्भयम् ॥  
उष्ट्रोभवति दुष्टात्मा भारवाही विगर्हितः ।

स्कन्दपुराणे,—



छागं राक्षोद्विजोधृत्वा अकृत्वा निष्कृतिं 'शिवाम् ।  
 नारीत्वमनुभूयाऽय क्रमलोभुवि जायते ॥  
 तत्पापपरिहारार्थं प्रायश्चित्तमिदञ्चरत् ।  
 पञ्चपर्वसु पञ्चैव कालान् अभुञ्जयन् व्रती ॥  
 ऋतुद्वयं जपेद्देव्या द्विलक्षं जपमुत्तमम् ।  
 अन्तर्दिनेषु सर्वेषु हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥  
 ऋतुद्वयावशेषेषु जपश्च परिपूर्यते ।  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति स्नानैर्ब्राह्मणभोजनैः ।

इति हेमाद्रौ छागप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ अनडुत्प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मत्स्यपुराणे,—

त्रिषु जन्मसु पैशाच्यमनड्वाहप्रतिग्रहात् ।  
 तदन्ते नरकं गत्वा वानरत्वमुपैति च ॥

स्कन्दपुराणे,—

अनड्वाहं द्विजोधृत्वा गोणीधान्यममन्वितम् ।  
 दत्तं दोषविमुक्त्यर्थं राजभिः पुण्यवर्त्तिभिः ॥

(१) प्रियां इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) वानरत्वमुपवासते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पर्वकाले तथा सूर्य-सोमग्रहणसम्भवे ।

अर्चितं गन्धपुष्पाद्यैर्वानरत्वमुपैति च ॥

लिङ्गपुराणे—

राजा वृषभमाराध्य गन्धवस्त्रादिभूषणैः ।

पुण्यकालेषु पुण्यर्चे विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ॥

दद्याद्यदि ग्रहप्रौढ्यै निष्कामनतयाऽथवा ।

न भवेद्गृहपीडाभिर्वद्धोनीरुग्भवेत् सदा ॥

एवं वृषं द्विजोष्टृत्वा सद्रव्यं कारणं विना ।

सप्तजन्मसु पैशाच्यमनुभूय ततःपरम् ॥

महान्तं नरकं भुक्त्वा वानरोभुवि जायते ।

प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

ब्रह्माण्डपुराणे,—

अनडाहं द्विजोष्टृत्वा निष्कारणतया मुने !

द्रव्यलोभेन मनुजः प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

द्विजानुज्ञामवाप्याऽथ पराकान् विंशतिं चरेत् ।

परिपूर्तेन मनसा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति अनडुत्सम्प्रतिग्रहात् । इति ।

इति हेमाद्रौ अनडुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) जनैः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) भवति सर्वदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ तैलघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

शृणु षण्मुख वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं सुखातये ।  
शनिपौडाविमुक्तयथं प्रदत्तं राजवल्लभैः ॥  
अञ्चितं गन्धवस्त्राद्यैः प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ।  
यमस्य सदनं गत्वा स्थित्वा तत्र चिरं वै ॥  
तिलघाती भवेत् पश्चात् सर्वधर्मवह्निष्कृतः ।  
तद्दोषपरिहारार्थं यावकं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

महानारदीये—

अयोधटं समाच्छाद्य नीलवस्त्रेण यत्नतः ।  
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्भक्त्या दद्याद्द्विजातये ॥  
प्रतिगृह्य द्विजस्तन्तु<sup>१</sup> घटं तैलेन पूरितम् ।  
यमलोके चिरं कालं स्थित्वा<sup>२</sup> तत्र चिरं सः ॥  
तिलघाती भवेत् पापी प्रायश्चित्तं न चेदिह ।  
एतत्पापविशुद्ध्यर्थं यावकं मण्डले चरेत् ॥

(१) वज्रस्त्रिह इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दानं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) द्विजोयस्तु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तत्रैवमुक्तवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



ततःपरं विशुद्धात्मा पञ्चगव्यं पिबेद्वती ।

ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ॥

नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति प्रायश्चित्तं विना नृप ।

इति हेमाद्रौ तिलघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

---

अथ कनकाज्यावेक्षणप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

दुष्टग्रहादिपीडायां जन्मनक्षत्रसङ्गमे ।

जन्मभे च कुजो यस्य शनिर्वा पापएव वा ॥

तदा तस्य महद्दुःखं भवेदेतस्य संग्रहे ।

तदा राजा प्रकुर्व्वीत कनकाज्यनिरीक्षणम् ॥

ब्राह्मणाय सुशान्ताय दरिद्राय कुटुम्बिने ।

बहुदक्षिणया दत्त्वा<sup>१</sup> तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ॥



अथ प्राच्याङ्गधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

प्रायश्चित्ताङ्गिनी धेनुः सा प्राच्याङ्गमुदीरिता ।

सर्वदा न प्रतिग्राह्या द्विजैर्धर्मपरायणैः ॥

मत्स्यपुराणे —

प्राच्याङ्गधेनुदाता च सर्वपापविवर्जितः ।

स याति ब्रह्मणः स्थानं पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥

धेनुं तां प्रतिगृह्णीयाद् द्विजोलोभपरायणः ।

कर्तुः सर्वाणि पापानि शीघ्रमाप्नोति निश्चितम्<sup>१</sup> ।

महान्तं नरकं गत्वा सूनुजन्म ममेति च<sup>२</sup> ॥

लिङ्गपुराणे—

प्राच्याङ्गधेनुं गृह्णीयाद् द्विजः परमधार्मिकः ।

स याति नरकं घोरं यमलोके महत्तरे ॥

पश्चात् सूनुर्भवेत् सोऽपि यद्वि तां निष्कृतिं विना<sup>३</sup> ।

प्राच्याङ्गधेनुं गृह्णीयाद् द्विजः परमधार्मिकः ॥

<sup>४</sup>तत्प्रतिग्रहं प्रायश्चित्तमाह ।

---

(१) निश्चित इति लेखितकाशीपुस्तकपाठः ।

(२) समाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तन्निष्कृतिं विना इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) प्रतिग्रहणप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



रङ्गुकाखण्डे—

प्राच्याङ्गभूर्यदा धेनुः सा धेनुः पापदायिनी ।  
 १प्रतिग्रहीतुः सा सद्यः सर्वश्रेयोविनाशिनी ॥  
 ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातश्चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ।  
 पञ्चान्ननसि पूतात्मा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥  
 एवं शुद्धिमवाप्नोति २नाऽन्यथा शुद्धिरीरिता ।

इति हेमाद्रौ प्राच्याङ्गधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथोदीच्याङ्गधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

द्विजो यः परितुष्टात्मा प्रायश्चित्ते नृपोत्तम ।  
 धेनुं द्वितीयां गृह्णीयाद् ३ उदीच्याङ्गपयस्त्रिणीम् ॥  
 ४तस्येह निष्कृतिर्नास्ति दानैस्तीर्थावगाहनैः ।

(१) प्रतिग्रहीतुरद्यैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) नान्यत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मंगृह्णीन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) तस्यैव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



चान्द्रायणद्वयं कुर्यात् पूर्ववद्राजवल्लभ ।  
ततः शुद्धिमवाप्नोति परव्राऽमुत्र च ग्रहात् ॥

इति हेमाद्रौ उदीच्याङ्गधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ ग्रहमालिकाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

आदित्यादिग्रहाः सर्वे जन्मराशौ स्थिताः सकृत् ।  
अष्टमद्वादशस्थाः सूर्यस्य तस्य महद्भयम् ॥  
पंक्तिशोमिलिता यस्य तस्य मृत्युभयं भवेत् ।  
सर्वभावे तु सर्वे च षड्वाऽष्टौ मेलयन्ति चेत् ॥  
राज्यभ्रंशो वित्तनाशो भवेदावश्यको नृप ।  
दुष्टग्रहाश्चेद् राजेन्द्र द्वादशाष्टमजन्मगाः ॥  
पूर्ववद्दुःखमाप्नोति ग्रहचक्रं समाचरेत् ।

देवीपुराणे—

यस्य राज्ञो जनस्याऽपि द्वादशाष्टममध्यगाः ।  
क्रूरग्रहाश्च पञ्चैते मेलयन्त्येकराशितः ॥



तस्य राष्ट्रभयं विप्र जननाशोभवेदतः ।  
 शरीरपीडाबाहुल्यान्निमित्तैर्ज्वरसम्भवैः<sup>१</sup> ॥  
 ग्रहमाला प्रकर्तव्या राजभिर्दोषशान्तये ।  
 तस्याऽनुष्ठानमात्रेण तस्माद्दोषात् प्रमुच्यते ॥

तत्तत्प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह—

कूर्मपुराणे—

( ग्रहमालां न गृह्णीयाद् द्विजः पापभयादिह ।  
 गृह्णीयाद् यदि लोभात्मा यमलोकं समश्नुते ॥  
 स्थित्वा तत्र चिरं कालमनुभूय महद्भयम् ।  
 पुनर्भुवमुपागम्य गोलाङ्गुलोभवेदिह ॥ )<sup>२</sup>

आदित्यपुराणे—

भोगमोहपरीतात्मा निष्कारणतया द्विजः ।  
 ग्रहमालां प्रगृह्णाऽऽशु यमालयमुपागतः ॥  
 नरकाननुभूयाऽथ जायते वानरोमहान् ।  
 तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥  
 अतिकृच्छ्रद्वयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्व्विकीम् ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात् नाऽन्यथा शुद्धिरिष्यते ॥  
 इति हेमाद्रौ ग्रहमालिकाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) निमित्ते ज्वरसम्भवः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) तत्प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमिति क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(३) — एतच्छ्लोक द्वयं क्रीतपुस्तके नोपलभ्यते ।



अथ षड्ग्रहयोगे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

यस्य कस्य जनस्याऽपि जन्मराशौ जनेश्वर ।  
अष्टमे<sup>१</sup>द्वादशे वाऽपि सङ्घाते समुदायके ॥  
नामलग्ने ग्रहाःसर्वे षण्मेलनमवाप्नुयुः ।  
तस्य रोगभयञ्चापि पत्नीपुत्रविनाशनम् ॥  
गृहनाशो राजभयं धननाशोऽपि वा भवेत् ।  
यस्मिन् दिने मेलयेयुरेते षड्ग्रहनायकाः ॥  
तस्मिन् दिने पर्युर्वा अभुक्त्वा स्नानमाचरेत् ।  
पुण्याहवाचनं कृत्वा शान्तिकर्म समाचरेत् ॥  
सूर्यादिग्रहषट्कस्य प्रतिमास्ताः स्वरूपिणीः ।  
सवाहनाः सायुधाश्च पत्नीपरिजनावृताः ॥  
सुवर्णेन प्रमाणेन प्रत्येकं परिकल्पयेत्<sup>२</sup> ।  
तत्राऽचार्यस्य वक्ष्यामि धेन्वा सह प्रतिग्रहे ॥  
प्रायश्चित्तं मुनिश्रेष्ठ सर्वपापविशोधनम् ।  
इह लोके परत्राऽपि तारकं गतिमाधनम् ॥  
अर्चितो गन्धवस्त्राद्यस्तत्तन्मन्त्रैः पृथक् पृथक् ।  
योद्विजः प्रतिगृह्णाति तन्निष्कृतिपराङ्मुखः ॥

---

(१) दशमे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिमाः क्रमात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स वै नरकमासाद्य वक्राङ्गो जायते भुवि ।  
 तद्दोषोपशमायाऽलं स्वगृह्याग्नौ विधानतः ॥  
 मासदीक्षामुपक्रम्य सहस्रं जुहुयात्तिलैः ।  
 चतुर्थकालायाते मूलाहारो विधीयते ॥  
 स्वपेदेव समीपे तु नारायणमनुस्मरन् ।  
 पुनः प्रातः समुत्थाय पूर्ववद्भोगमाचरेत् ॥  
 अयुतं पूर्णतामेति तद्दोषोऽपि परेऽहनि ।  
 पञ्चगव्यविधानेन कृत्वा तत्प्राशयेत्सुधीः ॥  
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् यथाविभवपूर्वकम् ।  
 अनेन शुद्धिमाप्नोति न शुद्धिस्त्वन्यकर्मभिः ॥

सौम्यग्रहादुष्टग्रहेर्मिलिताश्चेद्दुष्टग्रहफलदायिनः ततस्तेषां दान-  
 प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमिदं कथितम् ।

इति हेमाद्रौ षड्ग्रहयोगे धेन्वा सह षड्ग्रहप्रतिमा-  
 प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



## अथ पञ्चग्रहादिमेलने प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

यस्य राज्ञः प्रभोर्वाऽपि जन्मर्त्तं नामभेऽपि वा ।

क्रालत्तक्रवशाद्राजन् सर्वभद्रावमानतः<sup>(१)</sup> ।

पञ्च ग्रहाः प्रमेलन्ते जन्मरागावयाऽष्टमे ।

चतुर्थे द्वादशे वाऽपि मङ्गले समुदायके ॥

धनहानिर्यशोहानिर्गृहजेत्त्रापहारणम् ।

देहपीडा भवेत्तस्य मामेऽर्धमामतोऽपि वा ॥

तस्मात्तेषां प्रकर्त्तव्यं शान्तिकर्म सुखाप्तये ।

तत्राचार्यो भवेद्यस्तु विद्वानपि विमूढधीः ॥

होमे जपे च पूजायां उपचारोभवेद्विह ।

मन्त्रमुच्चार्य मनसा स्वाहान्ते जुहुयाद्विः ॥

अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च समिन्मध्यं प्रगृह्य च ।

मन्त्रान्ते जुहुयाद्वह्नी समिद्धोमोविधीयते ॥

अङ्गुल्यग्रे गृहीतान्तु षष्टिभिश्च तिलैर्युताम् ।

समिधं जुहुयाद्वह्नी मनसा मन्त्रमुच्चरन् ॥

स्वाहान्ते देवतोद्देशं कुर्यादोमफलाप्तये ।

मार्जनं भोजनं होमोदानमुत्तानपाणिना ॥

---

(१) सर्वभद्रावमानतः इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) षष्टिभिश्च इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) आहुतिमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अर्चनं देवपूजासु प्रोक्षणं चाध्यमेव च ।

उत्तानपाणिना कार्यं नाधोरूपेण कारयेत् ॥

षष्टिर्वाजैर्धान्यहोमैराज्येन चतुरङ्गुलम् ।

ऋचाऽऽहुतिं सुवे पूर्य वक्त्रौ हुत्वा प्रदेशिकः ॥

अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने ।

द्विधाचित्तेन यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलम्भवेत् ।

एते होमे नियमाः एतेषां व्युत्क्रमे महान् दोषः ।

स तु आचार्यमेव प्रविशति । तदाह—

कूर्मपुराणे—

पत्नी पापं पतिर्भुङ्क्ते शिष्यपापं गुरुस्तथा ।

राजा राष्ट्रकृतं पापं राजपापं पुरोहितः ॥

आचार्यऋत्विजां पापं ग्रामणीग्रामिसम्भवम् ।

आचार्यपापवाहुल्यादङ्गनाधेनुसंग्रहे<sup>१</sup> ॥

पापवाहुल्यमस्येव आचार्यस्य न संशयः ।

यद्याचार्यो भवेदग्निन् प्रायश्चित्तं चरेद् गुरु ॥

षड्ग्रहपञ्चग्रहचतुर्ग्रहमेलने प्रायश्चित्ताङ्गभूते अयुतहोमे पुरुष-

सूक्तमन्त्रः । चतुर्भिर्वाक्यैरेकाहुतिः । प्रत्यहं संख्यां गणयन्

जुहुयात् । होमपरिपूरणे पूर्ववदाचरेत् । एवं चतुर्ग्रहमेलने

(१) धेनुसंग्रहम् इति लेखित पुस्तकपाठः ।

(२) समाचरेदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तदाचार्यस्य प्रायश्चित्तं, धेन्वङ्गतया च प्रायश्चित्तबाहुल्यम् ।  
प्रायश्चित्ताकरणे पूर्वमुक्तं फलं प्राप्नोति ।

इति हेमाद्रौ पञ्चग्रहचतुर्ग्रहमेलने आचार्याणां  
तत्तत्प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ राशिचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

राशिचक्रं द्विजो लोभाद् राज्ञा दत्तं भर्जयद्दि<sup>१</sup> ।  
तस्येह निष्कृतिः प्रोक्ता<sup>२</sup> चान्द्रायणचतुष्टयात् ॥

कूर्मपुराणे—

राशिचक्रं द्विजो धृत्वा पूजितं वस्त्रभूषणैः ।  
विना निमित्तैर्वहुभिः पापं मनसि धारयन् ॥  
तन्निष्कृतिमकृत्वा तु नरकं कालचोदितः ।  
अनुभूय महद्दुःखं चक्रवाको भवेद्भुवि ॥

(१) राशिचक्रग्रहणे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुपूजितमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) नास्ति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



लिङ्गपुराणे—

ब्रह्मविद्ब्राह्मणोलोभात् सप्ततन्तुपराङ्मुखः ।  
 भोगासक्तः प्रगृह्णाति राशिचक्रं सुपूजितम् ॥  
 यथोक्तदक्षिणाभिश्च साकं राज्ञा विसर्जितम् ।  
 तन्निष्कृतिं पराकृत्य मृत्वा नरकमश्नुते ॥  
 तत्राऽनुभूय नरकं तिलयन्त्रं महद्भयम् ।  
 तदन्ते भुवमासाद्य चक्रवाकोभवेद्भुवि ॥  
 एतत्पापविशुद्ध्यर्थं क्रतुं सर्वस्वदक्षिणम् ।  
 आधानं नित्यहोमञ्च चरेत्पापविशुद्ध्ये ॥  
 द्वाभ्यामशक्तितः पापमोचने देहशुद्धिदम् ।  
 चान्द्रायणैश्चतुर्मासान् चतुर्भिः पापमोचनम् ॥  
 कृत्वा लोकविशुद्धः स्यात् श्रौतस्मार्त्तेषु कर्मसु ।  
 नित्यं नैमित्तिकं काम्यं कृत्वा तत्फलमश्नुते ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति न गतिः पापमोचने ।  
 तस्मादेतत्परित्याज्यं द्विजैर्लोकपरायणैः ॥

इति हेमाद्रौ राशिचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) चान्द्रायणं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विशुद्धोऽभूत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ नवग्रहमखे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

स्कन्दपुराणे—

अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तं द्विजन्मनाम् ।

ग्रहयज्ञे प्रधानत्वं यः करोति द्विजोत्तमः ॥

ग्रहाणां देवतानाञ्च 'संग्रहः' पापवृद्धये ।

होमकर्मसु पूजायां नियमातिक्रमे तथा ॥

एकग्रहस्य 'संग्रहे' स्वर्चितस्य सुखामने ।

देहान्ते नरकं याति इक्षुयन्त्वं महद्भयम् ॥

सर्वेषां मण्डले पुत्र स्वर्चितानां नृभिः क्रमात् ।

प्रतिग्रहे महद्दुःखमनुभूय यमालये ।

तदन्ते भुवमामाद्य नीलजन्तुः प्रजायते ॥

प्रतिग्रहविशुद्धयं पश्चात्तापपरायणः ।

ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातः षड्विंशं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति उदामीनतया नृणाम् ।

एतद्विप्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तविषयं, राजप्रतिग्रहे द्विगुणं ऊरुज-  
प्रतिग्रहे त्रिगुणं शूद्रप्रतिग्रहे चतुर्गुणं मङ्गरजातिप्रतिग्रहे पञ्चगुणं  
चतुर्दशविधचाण्डालप्रतिग्रहे पातित्यमेव, चतुर्दशचाण्डालस्वरूपं  
पूर्वमुक्तं जातिभेदेन प्रतिग्रहे प्रत्येकं प्रायश्चित्तमाह ।

(१) संग्रहं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) संग्रहे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कूर्मपुराणे—

सामान्यं यत्र यत्प्रोक्तं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तमैः ।

तदेव पूर्वजानां स्यात् प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥

तद्वैगुण्यं बाहुजानामूरुजानां त्रिधा स्मृतम् ।

चातुर्गुण्यं पादजानां सङ्गराणां तु पञ्चधा ॥

चतुर्दशविधानां तु संग्रहे पतितोभवेत् ॥

सर्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तेषु एवमेव विवेचनीयम् ।

इति हेमाद्रौ नवग्रहमखे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ धर्मविक्रयिणः सकाशात्प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

लिङ्गपुराणे उत्तरखण्डे —

धर्मविक्रयिणः पुंमोनित्ये काम्ये तथा क्रतौ ।

प्रतिग्रहे द्विजस्याऽस्य प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥

नित्यं मातापित्रोर्मृताहादिः, काम्यं व्रतादिकं गङ्गास्नानादिकं

च धर्मः अपिच नित्यं प्रातःस्नानसन्ध्यादिकम् । काम्यव्रतादिकं

गङ्गास्नानादिकञ्च आरामास्थानकूपतटाकदेवालयधर्मनिक्षेप

'मर्त्यदावारितान्नदानपरोपकारवस्त्रहिरण्यरजतकांस्याश्वमहिषी-



दानादिका धर्माः काम्याः तेषां एकं वाऽपि विक्रीय योजीवेत्  
स तु धर्मविक्रयी, तद्विक्रयमात्रेण पातित्यं विप्रस्य सूचितं,  
तदाह—

कूर्मपुराणे—

सोमविक्रयिणश्चैव धर्मविक्रयिणस्तथा ।

स्मृतिविक्रयिणश्चैव पुनः संस्कार उच्यते ॥

पद्मपुराणे—

‘विक्रीय तु स्वधर्मान् यः पत्नीपुत्रान् विवर्धयेत् ।

सोऽक्षयं नरकं भुक्त्वा मातङ्गत्वमवाप्नुयात् ॥

तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति चान्द्रायणशतैरपि ।

अथवा शृणु राजेन्द्र त्रिःपरिक्रम्य क्षमातलम् ॥

एतेन विधिनाऽशुद्धः शुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् ।

नाऽन्यथा शुद्धिरस्तीह पापस्यैतस्य भूमिष ।

तस्य तत्प्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तं तावदाह—

विष्णुरहस्ये—

धर्मविक्रयिणो विप्रः प्रतिगृह्य धनादिकम् ।

दानं वा पर्वकालेषु स विप्रस्तत्समीभवेत् ।

चतुस्त्रिंशन्मते—

सुवर्जो धर्मविक्रेतुः पर्वकालेषु वै मल्लत् ।

अणुमात्रं सुवर्णं वा दानं वा धर्मचोदितम् ॥



प्रतिगृह्य यमं गत्वा नरकाननुभूय च ।  
 तदन्ते भुवमासाद्य जले मातङ्गमश्रुते ॥  
 तद्दीपोपशमायातं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
 पालाशसमिदाज्यान्तैः स्वगृह्याग्नौ पृथक् पृथक् ॥  
 महस्रं हावयेन्नित्यं प्रातःस्नानादिपूर्वकम् ।  
 “अच्युताये”ति समिधं “अनन्ताये”ति वै दृतम् ॥  
 चरुं गोविन्दनाम्नाऽथ अयुतेन विशुध्यति ।  
 समिधोदशसाहस्रमाज्यहोमस्तथैव च ॥

चतुरयुतसंख्या यदा पूर्यते तदा होमाद् विरामः दीक्षामध्ये  
 फलाहारः कर्त्तव्यः अधःशयनादिकं पूर्ववत्, तदन्ते पञ्चगव्य-  
 प्राशनं, सम्यगुपोष्य प्रातरेव पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमाप्नोति  
 नाऽन्यथा । एतदल्पसुवर्णप्रतिग्रहविषयम् ।

सुवर्णमात्रे द्विगुणं अत ऊर्ध्वन्तु तत्समः तत्प्रायश्चित्तं च  
 यथाविधि कुर्यात् पुनः संस्कारञ्च ।

इति हेमाद्रौ <sup>१</sup>धर्मविक्रयिणः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) सोमविक्रयिण इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ सोमपान-प्रायश्चित्तमाह—

देवीपुराणे—

सोमं पिवेद् द्विजोयस्तु अज्ञातकुलनामभिः ।

साकं यज्ञेषु मोहात्मा स वृथाब्राह्मणः स्मृतः ॥

व्यर्थनामधेयः घृतक्रोशगुडपर्वतादिवत् ।

तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति पुनः संस्कारणादृते ॥

पश्चाच्चान्द्रायणं कुर्याद् वापयित्वा शिरोरुहान् ।

एतदज्ञातकुलगोचरनामहोदभिः सह सोमभक्षणविषयं स्वबन्धुभिः

सह पाने तु प्रायश्चित्तमाह—

कूर्मपुराणे—

बन्धुभिः सह 'मङ्गस्य पीत्वा सोमं महाक्रतौ ।

स्वमन्त्रोच्चारणं कृत्वा त्रिवारं शुद्धिमाप्नुयात् ॥

स्वमन्त्रः "नेष्टरीहोतरी" यत्र कर्मणि नियुक्तस्तत्र ये मन्त्रा-  
स्तान् त्रिरुच्चार्य पश्चात् शुद्धिमाप्नोति सवान्ववः ।

स्कन्दपुराणे—

सकुल्यश्च मनाभिश्च मपिण्डश्च 'सगोत्रजः ।

मातुलस्तस्य पुत्रश्च भावुकोदुहितुः पतिः ॥

(१) योयेत इति कौतिलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सगोत्रवान् इति पाठान्तरम् ।



श्वशुरः सहपुत्रश्च भागिनेयस्तदात्मजः ।

पितुर्मातुःस्वसुः पुत्राः पितुर्मातुः स्वसुः सुताः ॥

पितुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेयाः पितृवान्ववाः ।

मातुः पितुः स्वसुः पुत्राः मातुर्मातुःस्वसुः सुताः ।

मातुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेयामातृवान्ववाः ॥

समानं कुलं यस्य स सकुल्यः <sup>१</sup>त्रिपुरुषाद्रूङ्घ्रैः समाना नाभिर्यस्य  
स सनाभिः ज्येष्ठकनिष्ठभ्रात्रादिः समानः पिण्डो यस्य स  
सपिण्डः ज्येष्ठकनिष्ठपितृव्यस्तत्पुत्रः समानं गोत्रं यस्य स सगोत्रः  
पञ्चमाद्रूङ्घ्रमेते स्ववान्ववाः एतैः सह सोमभक्षणे स्वंमन्त्रं पुनस्त्रेधा  
आवृत्य न दोषः । अज्ञातबन्धुभिः सह भक्षणे चान्द्रायणं कृत्वा  
पुनः संस्कारः तेभ्यस्तेभ्यः प्रतिग्रहे दोषमाह ।

लिङ्गपुराणे —

अज्ञातहोतृभिः सार्द्धं यः कुर्यात् सोमभक्षणम् ।

तस्मात्सुवर्णदानञ्च प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ॥

प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रमणुमात्रसुवर्णतः ।

पूर्वोक्तेन प्रमाणेन षड्विंशं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

उपोष्य रजनीमेकां भुक्त्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

उपोष्य पञ्चगव्यञ्च पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

इति हेमाद्रौ सोमपानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ पुरोडाशभक्षणे प्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

यज्ञेषु साधुवृत्तेषु धर्मजातधनेषु च ।

तत्रैव भक्षयेन्मेध्यं पशुं वृत्त्यर्थमादरात् ॥

ब्राह्मणो ब्रह्मवित् पूतः पशुं यद्यभिहारयेत् ।

तस्यैव निष्कृतिर्भूप वेदपारायणं स्मृतम् ॥

एतद् वन्धुहृत्यविषयं, अन्यत्र भक्षणे द्विगुणं, अथोत्रिययज्ञे पशु-  
पुरोडाशभक्षणे त्रिगुणं, शूद्रद्रव्यग्रहणयज्ञेषु पशुभक्षणे त्रिगुणं  
पुनः संस्कारश्चैतदेवाह ।

स्ववन्धुहृतयज्ञेषु प्राप्तं यत्पशुभक्षणम् ।

पारायणं विशुद्धिः स्याद् अन्यत्र द्विगुणं भवेत् ।

पुनः संस्कारहृत्युतः शुद्धीभवति सर्वदा ॥

तत्प्रतिग्रहे दीपमाह—

लिङ्गपुराणे—

पशुं भक्षयतो 'मोहाद् द्विजस्याऽकृतनिष्कृतेः ।

प्रतिगृह्य सुवर्णं वा ज्ञात्वा न संपरिग्रहेत् ॥

अज्ञात्वा कृच्छ्रमात्रेण ज्ञानेनैव इयं स्मृतम् ।

अन्नभुक् पञ्चगव्येन शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ॥



अथाज्ययाजिनः प्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तम् । ७६७

अल्पसुवर्णप्रतिग्रहे प्राजापत्यं स्वर्णमात्रप्रतिग्रहे द्विगुणं अन्नभक्षणे  
पञ्चगव्यात् शुद्धिः ।

इति हेमाद्रौ पशुपुरोडाशभोक्तुः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथाऽयाज्ययाजिनः प्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

याजयन् यजनेऽयोग्यान् विप्रोवृत्त्यर्थमादरात् ।

अन्यथाभावमाप्नोति न कर्मार्हो भवेदिह ॥

यजनेऽयोग्यो याजने अनर्हः ।

कूर्मपुराणे—

देवलकश्च गणको ब्राह्म्यो दुःशीलवान् जनः ।

शूद्रापतिः कर्महीनः लोकोक्लृप्तितवृत्तिमान् ॥

महापातकिनः सङ्गी क्षयरोगी भगन्दरी ।

दुश्कर्मा शूद्रमेवौ च भिषक्शूद्रान्नभक्षकः ॥

वृथातुलादिमंग्राही मर्यादाघातकस्तथा ।

ग्रामदाही ग्रामणीश्च तथा दुःसङ्गवान् जनः ॥

एते अनर्हाः देवलको जीवनार्थं ग्रामदेवार्चकः, गणकी ग्राम-



राश्रेषु धनधान्यादिकं लेखयेद् वर्त्तयेत् स गणकः ब्राह्म्यो गायत्री-  
जपनाशकः । तदेवाह —

‘देवलः —

अज्ञोवेदपरित्यागी ब्राह्म्योगायत्रीजपनाशकः । इति—

सन्ध्यादिनित्यकर्माणि त्यक्त्वा सर्वदावर्त्तयन् <sup>(१)</sup> इत्यर्थः, शूद्रा-  
पतिः स्पृष्टः, कर्महीनः विहितकर्म परित्यज्य व्यवहारकमनु-  
वर्त्तयन्, कुत्सितवृत्तिः परेषामन्नपचनादिकं, महापातकिनस्तत्सं-  
योगीच स्पृष्टः, क्षयरोगीभगन्दरीदुश्चर्मणा कर्मस्वनर्हत्वात्, सदा-  
शूद्रसंसर्गी, भिषक् रसविक्रयी, शूद्रान्नभोजी शूद्रकृतेषु सत्तेषु  
नित्यतुलादीनिगृहीत्वा तत्रायश्चित्ते पुनःसंस्कारे च पराङ्मुखः  
तुलादिमंग्रही, मर्यादाघातकः पितरं ज्येष्ठभ्रातरं त्यक्त्वा  
आन्दोलिकाद्यारोहणं <sup>(२)</sup> यः करोति, ग्रामदाही ग्रामणीश्च स्पृष्टः,  
दुःसंसर्गवान् दुर्जनैः आततायिभिः संसर्गवान्, एते न कर्माह्वीः  
एतेषां यज्ञयाजने प्रायश्चित्तमाह—

वामनपुराणे—

अनर्हेषु च यो विप्रो कारयेत्लोभतः क्रतुम् ।

स प्रायश्चित्तहीनश्चेद् भुवि पाषण्डतां व्रजेत्<sup>(३)</sup> ॥

पाषण्डानाम वेदशास्त्रानुसारिणो विप्रान् दृष्ट्वा निन्दन्ति

(१) मनुरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

(३) क्रीतपुस्तके नास्ति ।

(४) पाषण्डवान् भवेदिति पाठान्तरम् ।



अयाज्ययाजिनः प्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तम् ।

७६६

पिता माता तत्पिता वा येन मार्गेण वर्त्तयति—तन्मार्गमुत्सृज्य  
तप्तमुद्रादिधारिणो ये विप्रास्ते पाषण्डाः । तदेवाह—

मनुः—

अधर्माणाञ्च ब्राह्मणानां भिषजामाततायिनाम् ।

यज्ञेषु ये याजयन्ति तान् पाषण्डान् भणन्त्यहो ॥

शिवपुराणे—

महापातकिनाञ्चैव भिषक्शूद्रोपजीविनाम् ।

यज्ञेषु ये प्रवर्त्तन्ते ते पाषण्डाः प्रकीर्त्तिताः ॥

तेषां प्रायश्चित्तमाह—

लिङ्गपुराणे—

अनर्हाणान्तु ये यज्ञे ते पाषण्डा उदाहृताः<sup>१</sup> ।

कूर्मपुराणे—

अनर्हाणामध्वरेषु ये ब्रह्मकृत्विजादयः ।

तेषां पापविशुद्ध्यर्थं षड्विंशं कृच्छ्रमीरितम् ॥

केशानां पवनं कृत्वा पुनः संस्कारमाचरेत् ।

पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात् शुद्धोभवति नाऽन्यथा ॥

एतेभ्यः प्रतिग्रहे दोषमाह—

लिङ्गपुराणे—

अनर्हाणामध्वरेषु सोमपानादिकञ्चरेत् ।

तस्मात्प्रतिग्रहं कृत्वाऽप्रायश्चित्तादरोयदि ॥



एतत्पापफलं भुंक्ते एकं चान्द्रायणञ्चरेत् ।

प्रायश्चित्ते कृते पश्चाद् अतोदोषो न विद्यते ॥

चान्द्रायणं सुवर्णस्य तदर्धं पादमाचरेत् ।

चान्द्रायणं यदाऽप्राप्तं गायत्रीशतमाचरेत् ॥

एतत् प्रायश्चित्तं कृत्वा तत्प्रतिग्रहे शुद्धो भवति नान्यथा ।

इति हेमाद्रौ अयाज्ययाजकप्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तम् ।

अथ तप्तमुद्राधारिभ्यः प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

वायुपुराणे—

ब्राह्मणो यदि मोहात्मा तापयेद्वह्निमुद्रया ।

न कर्मार्हो भवेदत्र स वै पाषण्डसंज्ञकः ॥

नारदीये—

ब्राह्मणस्य तनुर्ज्ञेया सर्ववेदमयी यतः ।

सा तु सन्तापिता येन किं वक्ष्यामि महीजसः ॥

चक्राङ्किततनुर्विप्रो<sup>१</sup> राजन् लिङ्गाङ्कितोऽपि वा ।

जपेच्च पौरुषं सूक्तमन्यथा रौरवं व्रजेत् ॥



लिङ्गपुराणे—

चक्रशङ्खौ तापयित्वा यस्तु देहे समङ्कयेत्<sup>१</sup> ।  
स जीवकुणपस्याज्यः सर्वधर्मवर्हिष्कृतः ॥

आदित्यपुराणे—

देवेषु यज्ञभागीषु यो नेच्छेदधिकारिताम् ।  
स तापयित्वा चक्रादीन् धारयेत्स्वभुजद्वये ॥  
ब्राह्मणो यदि मोहेन धारयेत्तप्त<sup>२</sup>मुद्रिकाः ।  
तस्य दर्शनमात्रेण कुर्यात् सूर्यावलोकनम् ॥

वल्ह्विपुराणे—

पूर्वजः स्वतनुं दग्ध्वा शङ्खचक्रादिभिः पृथक् ।  
तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति स्नानदानजपादिभिः ॥  
तस्य निष्कृतिरुत्पन्ना पाराशर्येण चोदिता ।  
केशानां वापयित्वाऽथ पुनः कर्म समाचरेत् ॥  
गर्भगोलात्समुद्धृत्य गर्भाधानादिपूर्वकम् ।  
षोढावृत्त्यैव कृच्छ्राणां प्रायश्चित्तमुदीरितम् ॥

परिषदुपस्थानपूर्वकं षड्वदं कृच्छ्रान् कृत्वा शुद्धिमाप्नोति, प्राय-  
श्चित्ताकरणं तेभ्यः प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

(१) प्रदृश्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यो नाप्नोत्यधिकारितामिति पाठान्तरम् ।

(३) यदि मुद्रिका इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कूर्मपुराणे—

अज्ञात्वा मुखजो यत्र मुद्रादग्धेभ्य आदरात् ।  
 सुवर्णमात्रं गृह्णीयात्<sup>१</sup> प्राजापत्यं समाचरेत् ॥  
 तदर्धार्धं पुनः कृत्वा दिनमात्रमुपोषणम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति शुद्धिर्नान्यत्र दृश्यते ॥

इति हेमाद्रौ तप्तमुद्राधारिणां तत्प्रतिग्रहीतृणाञ्च  
 प्रायश्चित्तम् ।

अथ लिङ्गधारिणां प्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

लिङ्गं द्विजोमुदाष्टत्वा स्वदेहे भयवर्जितः ।  
 स एव नरकस्थायी यावदाभूतसंभवम् ॥

स्कन्दपुराणे—

द्विजो यदि स्वदेहेतु लिङ्गं चक्रादिकं तत्रा<sup>२</sup> ।

१) संग्राही इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अन्नमात्रमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) चक्रादिधारिणमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



धारयेत् कामतस्तेन पातकित्वमवाप्नुयात्<sup>१</sup> ।

स भुक्त्वा नरकानुग्रान् अन्ते मातङ्गतां व्रजेत् ॥

शिवपुराणे—

द्विजो यः स्वतनौ धृत्वा लिङ्गं शूद्रार्पितं मुदा ।

तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति संस्कारैर्वहुभिर्नृप ॥

पद्मपुराणे—

शृणु राम महाबाही लिङ्गचक्रादिधारिणाम् ।

शूद्रधर्मरतानाञ्च तेषां नास्ति पुनर्भवः ॥

विप्रस्येतद्विगर्हत्वात् प्रायश्चित्तमुदीरितम् ।

पश्चात्तापसमायुक्तः प्रायश्चित्तमिदञ्चरेत् ॥

अथार्धप्रमाणं तदा पूर्ववत् अन्नपरिग्रहे च ।

इति हेमाद्रौ लिङ्गधारिणां प्रायश्चित्तम् ।

१) लेखितपुस्तके नास्ति ।

(२) तदेति लेखितपुस्तके नास्ति ।



अथ पुनः संस्कारि गायत्रीप्रदातुः प्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

न पिता न गुरुभ्राता पितृव्यश्च पितामहः ।  
न दद्याद्देवीं गायत्रीं पुनः संस्कारकर्माणि ॥  
मोहादृत्वा तु गायत्रीं षड्व्यं कृच्छ्रमाचरेत् ।  
तेभ्यो गृह्णन् द्विजो यस्तु सुवर्णं पादमेव वा ॥  
स प्रतिग्रहशुद्धयर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
यदा प्रतिग्रहस्त्वेषु तुलादिषु महत्स्वपि ॥  
दानेषु पुत्रवात्सल्यं सन्त्यजेद्बुद्धिमान् पिता ।  
नित्यनैमित्तिकानीह कर्माणि विफलन्त्यधः ॥  
कर्मभ्रंशात् पिता तस्य न जपेद् वेदमातरम् ।  
कृते प्रतिग्रहे मूल्यैरन्यगोत्रं द्विजोत्तमम् ॥  
अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैस्तस्माद्देवीं समभ्यसेत् ।  
ब्रह्मोपदेशं होमेन सर्वन्तेन समभ्यसेत् ॥

लिङ्गपुराणे—

पिता भ्राता पितृव्यश्च तुलादीनां प्रतिग्रहे ।  
पुत्राय धनवात्सल्यान् न दद्याद्देवमातरम् ।  
अभ्यसेद्विधिना राजन् पादपूर्वमतन्द्रितः ॥



गारुडपुराणे—

योविप्रो धनलोभेन गायत्रीं वेदमातरम् ।  
तुलाप्रतिग्रहीतॄणां दद्यात्तस्य न निष्कृतिः ॥  
पश्चात्तापसमायुक्तस्त्वयुतं जपमाचरेत् ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति जपहोमसुरार्चनैः ॥  
विदित्वा यो द्विजो मोहात् प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ।  
स पापमनुभूयाऽऽशु चटकोभुविजायते ॥

इति हेमाद्रौ पुनःसंस्कारे गायत्रीप्रदातुः प्रायश्चित्तम् ।

---

अथ परार्थं गायत्रीजपकर्त्तॄणां प्रायश्चित्तमाह ।  
६

ब्रह्माण्डपुराणे,—

यथार्थं<sup>१</sup> शृणु राजेन्द्र परार्थं जपकृत्नरः ।  
होमार्थं द्रव्यलोभार्थं सवै पाषण्डतां व्रजेत् ॥

गारुडपुराणे—

ब्राह्मणो धनलोभेन परार्थं वेदमातरम् ।  
जप्त्वा नरकमाप्नोति तं कदा नालपेद्बुधः ॥



कूर्मपुराणे—

वेदमाता च गायत्री जपतां पापनाशनी ।  
परार्थं तां 'जपेद्यस्तु स नरो मातृघातकः ॥

लिङ्गपुराणे—

पादपूर्णं जपेद्यस्तु गायत्रीं शुद्धमानसः ।  
सर्वे नारायणः साक्षाद् द्विबाहुरिति विश्रुतः ॥

महाभारते—

वेदमाता तु गायत्री लोकमाता च जाङ्गवी ।  
तयोर्यदि द्विजोभक्त्या नित्यं सेवेत बुद्धिमान् ॥  
तयेरिकां परित्यज्य परार्थं जनवल्लभ ।  
स दिवाकीर्तितुल्यः स्यात् कृत्वा नरकमश्रुते ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य पादलम्बी दिवान्धवान् ।  
तस्य निष्कृतिरत्रैव दृष्ट्वा 'श्रुतिपरायणैः ॥  
दशकृज्जपतोदेव्याः परार्थं कृच्छ्रमौरितम् ।  
शतं परार्थजपतः पराकं परिकीर्तितम् ॥  
सहस्रमंख्ययाऽन्यार्थं शुद्धं चान्द्रमाचरत् ।  
अयुतं नियुतं वाऽपि परार्थं धनलोभतः ॥  
जपतस्तस्य कर्माणि सद्यः शीर्यन्ति देहतः ।  
तस्योपनयनं भूयः चान्द्रायणचतुष्टयम् ॥

(१) त्यजेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सुनिपरायणैरिति पाठान्तरम् ।



औपामनाग्नेः सन्धानं गायत्रीदानमेव च ।  
 केशानां वपनं कृत्वा पञ्चगव्यन्ततः परम् ॥  
 परार्थं यावतीसंख्या गायत्रीं प्रणवात्मिकाम् ।  
 पुनःस्वार्थं जपेत्पश्चात् ततः शुद्धिमवाप्नुयात्<sup>१</sup> ॥  
 एवं कृत्वा द्विजः शुद्धेदन्यथा जलकाकवत् ।  
 तस्य जन्म वृथा लोके नामधारणमात्रकम् ॥

इति हेमाद्रौ परार्थं गायत्रीं जपतां प्रायश्चित्तम् ।

अथ ग्रामप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

मुखजः स्वात्मभोगार्थं ग्रामं राज्ञो लभेत चेत्<sup>२</sup> ।  
 वृत्तिग्लानिं<sup>३</sup> द्विजातीनां तद्बुद्धिं वा न संस्मरेत् ॥  
 नरकं कालसूत्राख्यं चिरं गत्वा ततोभुवि ।  
 विद्वुराहो भवेत्सोऽपि सर्वधर्मवहिष्कृतः ॥

ग्रामलक्षणमाह—

(१) अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिग्रहे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) वृत्तिदानमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



चतुर्विंशतिमते—

दशागारञ्जनपदः शतागारं जनालयः ।

अतज्ज्वन्तु पल्ली स्यात् महस्त्रं ग्राम उच्यते ॥

ततः परं राजधानी सौधप्राकारशोभिता ।

जनपदादीनां प्रतिग्रहे वृत्तिदानकृत्ताद्यभावे प्रत्येकं दोषं प्राय-  
श्चित्तञ्चाह—

कूर्मपुराणे—

अकृत्वा निष्कृतिं यागं वृत्तिदानं द्विजन्मनाम् ।

जनपदं योनुगृह्णीयात् ताम्रचूडोभवेद्भुवि ॥

जनालयप्रतिग्राहे चण्डालादिविभूषिते ।

प्रतिग्राही' द्विजोयस्तु स भवेद्वायसोभुवि ॥

पल्लीप्रतिग्रहे राजन् नानावर्णसमाकुले ।

नरकं त्वनुभूयाऽथ खरजन्म भवेद्भुवि ॥

अब्दं षडब्दं चान्द्रश्च तप्तकच्छशतत्रयम् ।

प्रायश्चित्तमिदं राजन् यथाक्रममुदीरितम् ॥

वृत्तिदानकृत्वभावे प्रायश्चित्तं विगोधनम् ।

तयोर्यद्येकसम्भवस्तदा पञ्चगव्यं ब्राह्मणभोजनञ्च ।

इति हेमाद्रौ जनपदादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ कुष्माण्डप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

एकं वा द्वितयं वाऽपि कुष्माण्डं योऽनुमन्यते ।  
तिलाज्यमिश्रितं स्वर्णवस्त्रमाल्यविभूषितम् ॥  
मकरे संक्रमे राजन् कार्त्तिक्यां पूर्णिमादिने ।  
दत्तं जनैर्दक्षिण्या साकं तस्य नृणुष्विदम् ॥  
प्रधानं सम्परित्यज्य सचैलं स्नानमाचरेत् ।  
गायत्रीञ्च जपेत्पश्चात् सहस्रं पादपूरणे ॥  
द्वयोः प्रतिग्रहे राजन् द्विसहस्रं जपेत्सुधीः ।  
बाहुभ्यां संख्यया तस्मात् तावत्संख्या प्रशस्यते ॥  
तदेव स्वर्णरूपञ्च प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ।  
तदा प्रधानं सन्यज्य गायत्रीलक्षमाचरेत् ।  
एवञ्चैव विशुद्धोऽभून्नन्यथा शुद्धिमाप्नुयात् ॥

इति हेमाद्रौ कुष्माण्ड प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ दशदानप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

प्रायश्चित्ते व्रते शान्तीं प्रतिष्ठासु मुनीश्वराः ।

तटाकाराग्रामाणां तत्तत्पुण्यप्रपूतये ॥

दशदानानि विप्रेभ्यः देयानि फलमंख्यया ।

दशदानानि यथा—

गोभृतिलहिरण्याज्यवामोधान्यगुडानि च ।

रजतं लवणञ्चैव दशदानान्यनुक्रमात् ॥

एतत्प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । सुखाप्तये तत्तदङ्गत्वाच्च दोषबाहुल्यम् ।

अतः प्रतिग्रहीतॄणां प्रायश्चित्तमाह ।

लैङ्गे—

धेनुप्रतिग्रहे भूमेश्चान्द्रमेकं विशोधनम् ।

तिलप्रतिग्रहे तप्तकृच्छ्रयमुदीरितम् ॥

पराकं मुनिभिः प्राक्तं भुवर्गस्य प्रतिग्रहे ।

रजतस्य विशुद्धयं यावकं कृच्छ्रमौरितम् ॥

लवणे पञ्चमाहस्त्रं जपदेवौमनुक्रमात् ।

एतत्प्रायश्चित्तं यस्य दानस्य यावत्परिमाणमुक्तं परिभाषायां,

तावत्पूणेनैवेतदुक्तं प्रायश्चित्तं, असामर्थ्येनैव तत्र द्रव्यस्य प्रतिग्रहे



स्नात्वा सहस्रं जपेत्, अत्रादिप्रत्यक्षेण गो-प्रतिग्रहे पूर्ववत्प्रायश्चित्तं  
कुर्यात् सुवर्षदानेऽपि तथैव योजनीयम् ।

इति हेमाद्रौ दशदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ चतुर्विंशतिमूर्त्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे,—

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तयं गुर्वङ्गनागमः ।  
विप्रद्रोहः प्रजाक्षोभ आचाण्डालाइनार्जनम् ॥  
उपेक्षाऽपापिनानृणां पुण्यकृत्स्नचनन्तथा ।  
चापल्यं परनारीषु परद्रव्येषु लिप्सुता ॥  
स्तजातिं सम्परित्यज्य अन्यजातेः परिग्रहः ।  
द्विजिह्मवार्त्ताश्रवणं प्रवृत्तिस्तत्र सर्व्वदा ॥  
हिंसा पशुमृगादीनां मातापितृषु हिंसनम् ।  
निषिद्धमृगमांसानां भक्षणं कुक्कुटस्य च ॥  
तथा दुर्जनसंसर्गः सज्जनत्याग एव च ।  
पुण्यकालेषु पुण्यर्त्ते न दानं श्रोत्रियेषु च ॥  
गीतनर्त्तनचापल्यं मदा निष्ठुरभाषणम् ।  
अग्निमान्त्रिषु दारिषु मत्स्वन्यत्र परिग्रहः ॥



उपवासदिने भुक्तिस्तथा ताम्बूलभक्षणम् ।  
 पाषण्डजनमंसर्गो देवब्राह्मणदूषणम् ॥  
 तीर्थे देवालये क्वाऽपि अविश्वासः सदा भवेत् ।  
 एवमादीनि पापानि राज्ञां पापरतात्मनाम् ॥  
 विचार्य महमा बुद्धा ब्रह्मलोके पितामहः ।  
 कृपया परया तेषां लोकानां हितकाम्यया ॥  
 चतुर्विंशतिमूर्त्तीनां दानं पापापनुत्तये ।  
 कल्पयामास विश्वात्मा ददौ राज्ञां मुदा तदा ॥  
 कुरुष्वं पुण्यकालेषु दानान्येतानि सर्व्वदा ।  
 उत्तिष्ठथ महापापात् नाऽऽलस्यं कर्त्तुमर्हथ ॥  
 ओमित्युक्त्वा तदा वाक्यं मान्धात्यप्रमुखा नृपाः ।  
 अकुर्व्वन् विप्रमुख्येभ्यो दानान्येतानि पंक्तिशः ॥  
 तदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् राजानः पुण्यसङ्गमे ।  
 कुर्वन्ति दानमखिलं विमुक्ताः पापराशिभिः ॥  
 कलौ युगे विशेषेण राजानोदानशालिनः ।  
 भवेयुस्ते महद्भयं पापेभ्यो मुक्तिमाप्नुयुः ॥  
 चतुर्विंशतिमूर्त्तीनामेकामेकां ययेच्छया ।  
 स्वर्गेन यदि कुर्व्वीत स राजा सुखमश्नुते ॥

कूर्मपुराणे—

चतुष्पलप्रमाणेन मूर्त्तिं केशवरूपिणीम् ।  
 सुवर्णेनैव यो राजा निर्मितां लक्षणान्विताम् ॥



विप्राय वेदविदुषे दरिद्राय कुटुम्बिने ।  
 अर्चितां गन्धवस्त्राद्यैः पूजितां सामभिः पृथक् ॥  
 दद्यात्पुण्यदिने प्राप्ते स याति परमाङ्गतिम् ।  
 केशवं पलमानेन सुवर्णेन विचक्षणः ॥  
 पूजयित्वा विधानेन दद्याद्विप्राय धीमते ।  
 स्वर्गं विमानमारुह्य अप्सरोगणसेवितः ॥  
 प्राप्नोति वैष्णवस्थानं पुनरावृत्तिदुर्लभम् ।  
 केशवं प्रतिगृह्णीयात् सौम्यं विप्रोधनातुरः ॥  
 दत्तं नृभिर्विधानेन निष्कारणतपा नृप ।  
 अकृत्वाऽऽधानमपि वा कुर्यात्स्वोदरपोषणम् ॥  
 तस्यैवं निष्कृतिर्दृष्टा स्नात्वा नित्यं समाप्य च ।  
 रहःस्थानमुपाविश्य नामत्रयजपं चरेत् ॥  
 मासं दीक्षामुपाश्रित्य भुञ्जन् यावकमुत्तमम् ।  
 प्रत्यहं स्थण्डिते सुप्त्वा मासमात्रेण शुध्यति ॥  
 जपेन्नक्षन्ततः पूतः शुद्धोभवति सर्वदा ।

एतद्दानस्य सौम्यत्वात् आधानाभावे क्षणमात्रं नामत्रयं जपेत्पूतो  
 भवति । एवं नारायणादीनां मूर्त्तीनां प्रतिग्रहे आधानाद्यकरणे  
 क्षणमात्रं नामत्रयेण शुद्धिः । अथवा दृष्टापूत्तादिकं कृत्वा न प्राय-  
 श्चित्तं तटाकारामदेवालयार्थं न स्वोदरपोषणार्थं प्रतिग्रहः ।

इति हेमाद्रौ चतुविंशतिमूर्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ दशावतारप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

मत्स्यः कूर्मोवराहश्च नरसिंहोऽथ वामनः ।

रामो रामश्च रामश्च बुद्धः कल्किस्तथैव च ॥

जयन्तीदिवसे वाऽपि ग्रहे पुण्यागमेऽपि वा ।

शयनोत्थानद्वादशोर्मन्वादिषु युगादिषु ॥

दशरूपाणि कृत्वैव सुवर्णेन विचक्षणः ।

<sup>१</sup>पलद्वयसुवर्णेन प्रत्येकं प्रतिमाञ्चरेत्<sup>२</sup> ॥

मत्स्यावतारमालिख्य पूजयित्वा विधानतः ।

दद्यादध्यात्मविदुषे तस्य पुण्यं निशामय ॥

मातृतः पितृतश्चैव कुलकोटिसमन्वितः ।

वैकुण्ठे<sup>३</sup> वसतिं कृत्वा ततोनिर्वाणमश्नुते ॥

एवमन्यावतारान् यस्तत्तदुक्तदिनेषु च ।

दद्याद्यदिह विप्राय पूर्ववत् पुण्यमश्नुते ॥

अर्चितान् प्रभुभिर्दत्तान् विप्रोभोगपरायणः ।

प्रतिगृह्णाऽऽत्मभोगार्थं<sup>४</sup> जायते भुवि निन्दितः ॥

---

(१) यत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्रतिमाप्रये इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) नियतिमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) स विप्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



आधानं वा तटाकादीन् अकृत्वा देववञ्चकः ।

स याति नरकं घोरं कालसूत्रं<sup>१</sup> मवाङ्मुखः ॥

चतुर्विंशमते—

सौम्यःप्रतिग्रहस्त्वेष इति<sup>२</sup> बुद्ध्या विचारयन् ।

अशन<sup>३</sup>च्छादने दक्षो वृथा भोगपरायणः ॥

न कुर्याद् धर्मनिलयं योविप्रस्तत्र संस्पृशेत् ।

तस्मात् पापनिवृत्त्यर्थं निष्कृतिं पापमोचनीम् ॥

प्रातःस्नात्वा यथाकालं नित्यकर्म समाप्य च ।

शालग्रामे तथा राजन् प्रतिमायां विधानतः ॥

पञ्चामृतैः पञ्चमन्त्रैर्मध्ये मध्ये निवेदनम् ।

अभिषिच्य पुनर्देवं पञ्चवारं दिने दिने ॥

चतुर्थकाले चर्वाणी स्वपेत् स्थण्डिलदेशतः ।

पर्य्युः प्रातरुत्थाय पूर्ववद् विधिमाचरेत् ॥

एवं मासं व्रतं कृत्वा पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।

गोदानं तत्र कुर्वीत प्रायश्चित्तोपपत्तये ॥

एकेन द्रव्येणाऽभिषिच्य ततो जलेन स्नापयित्वा मध्ये धूपदीप-  
नैवेद्यान्तं कृत्वा पुनरन्येन द्रव्येण सर्वं पूर्ववत्कुर्यात् । एतत् प्राय-  
श्चित्तं दशावतारप्रतिमाप्रतिग्रहं वेदितव्यम् । <sup>४</sup>एकावतारप्रतिग्रहे

(१) कालसूत्रं पराङ्मुख इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) इह इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) अशनाच्छादने इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(४) एकवतारप्रतिग्रहे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



दिनद्वयं प्रत्येकाभिषेकश्च, द्वये त्रयेऽप्येवं दिनसंख्याक्रमेणाभिषेच-  
नीयं एतद्दानप्रतिग्रहस्य सौम्यप्रतिग्रहत्वात्प्रायश्चित्तालप्यत्वम् ।

इति हेमाद्रौ दशावतारप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ गमलक्ष्मणप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

द्विजो यो भोगलोभार्थं पत्नीपुत्रवशङ्गतः ।

चातुर्मास्ये पुण्यकाले गृह्णीयाद्रामलक्ष्मणी ॥

अर्चिर्त्तौ गन्धवस्त्राद्यैः स्वर्णरूपावरिन्दमौ ।

कल्पोक्तविधिना राजन् प्रतिगृह्णन् सुखाप्तये ॥

तेनाऽधानं तटाकादीन् कृत्वा मुक्तिपदं व्रजेत् ।

अन्यथा दोषमायाति प्रायश्चित्ता भवेत्तटा ॥

एतदुक्तप्रतिग्रहविषयं तद्व्यतिरिक्तप्रतिमाप्रतिग्रहे न त्वाधानादिकं  
उक्तद्रव्यप्रतिमाप्रतिग्रहे तत्तद्वर्माकरणे तु प्रायश्चित्तमाह—

लिङ्गपुराणे—

द्विजो यस्तृक्तमार्गेण प्रतिमां चेत् प्रतिग्रहेत् ।

धर्मादिकं पराकृत्य प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ॥



चैत्रशुद्धनवम्यान्तु 'स्नात्वोषमि जितेन्द्रियः ।  
 नित्यकर्म विधायाऽऽशु गन्धपुष्पनिवेदनैः ॥  
 तथैवाष्टसु यामेषु पूजयेद्रामलक्ष्मणी ।  
 परेद्युः प्रातरुत्थाय पूर्ववत् स्नानमाचरेत् ॥  
 अभ्यर्च्य विधिवद्भक्त्या ततोहोमं समाचरेत् ।  
 स्वर्गद्वारं प्रतिष्ठाप्य आज्यभागान्तमाचरेत् ॥  
 तिलैश्च विरजा<sup>१</sup>होमं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् यथाविभवसारतः ॥

अत्र सुवर्णप्रतिमाप्रतिग्रहं नवम्यामिकवारं पूजयित्वा परेद्यु-  
 विरजाहोमं कुर्यात् । एतेन महापातकनिवृत्तिर्भवति ।

इति हेमाद्रौ रामलक्ष्मणप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ श्रीमूर्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह—

देवीपुराणे—

विद्यमानधनो विप्रः स्वकिञ्चन इवार्जने ।  
 योऽर्चितान्तु<sup>२</sup> शिलां शालग्रामरूपां शिलोन्नतिम् ॥

१) उप. स्नात्वा इति क्रातिलोखनपुस्तकपाठः ।

२) विरजो होमासति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) अर्चयित्वा इति कौत्पुस्तकपाठः ।



प्रतिगृह्य महायत्नात् तत्पृजाविमुखो यदि ।  
विक्रयेद्यदि पापात्मा भवेत् स्थूणाघुणःखलः ॥

लिङ्गपुराणे—

शालग्रामशिलां विप्रः प्रतिगृह्य प्रयत्नतः ।  
तद्दर्शनं पराकृत्य विक्रयेद्यदि मूढधीः ॥  
स वै नरकभुक् पापौ घुणस्तम्भे प्रजायते ।  
तस्य पापविशुद्धाद्ये प्रायश्चित्तं निदर्शितम् ॥  
पञ्चरात्रमुषःस्नात्वा प्रातःसन्ध्यादिकं चरेत् ।  
पञ्चगव्यं पिवेत्पश्चात् पञ्चमन्त्रैः पुनः क्रमात् ॥  
पृथक् पृथक् प्राशयित्वा शुद्धो भवति निश्चयः ।  
पलमेकं तु गोमूत्रं पलार्धं चैव गोमयम् ॥  
क्षीरमष्टपलं दद्यात् त्रिपलं दधिसेवनम् ।  
सर्पिरेकपलं ग्राह्यं पञ्चरात्रमतन्द्रितः ॥  
गायत्र्या चेति गोमूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम् ।  
आप्यायस्वेति वै क्षीरं दधिक्रावणेति वै दधि ॥  
देवस्येति च मन्त्रेण पिवेदाज्यमनुत्तमम् ।  
एतेन शुद्धिमाप्नोति विक्रयित्वा शिलां द्विजः ॥  
नोचेदिदं न 'कर्त्तव्यं तत्पृजा सर्वपापहा ।  
मा शिला यस्य गृहस्था गयाजैवन्तु तद्गृहम् ॥



शालग्रामशिलां 'भक्त्या तुलसीकोमलैर्दलैः ।  
अर्चयेद्यदि मूढात्मा सर्वपापात्प्रमुच्यते ॥  
एतत्प्रायश्चित्तं तु विक्रेतुरेव न प्रतिग्रहीतुः ।

इति हेमाद्रौ श्रीमूर्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ चक्रपाणिप्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तमाह—

लिङ्गपुराणे—

चक्रपाणिं द्विजो यस्तु प्रतिगृह्य समर्चयेत् ।  
तन्मध्यं काशिकाक्षेत्रं तद्गृहं द्वारकोपमम् ॥  
तत्तीर्थं गङ्गया तुल्यं तत्पीत्वा मनुजो भुवि ।  
सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमं पदम् ॥  
चक्रपाणिं द्विजो मोहात् प्रतिगृह्यैव विक्रयेत् ।  
स मातृघातकः प्रोक्तः सर्वकर्मसु गर्हितः ॥  
ब्रह्मसूत्रं हयं कन्यां देवं धेनुं द्विजोयदि ।  
विक्रीणाति<sup>१</sup> महत्पापं अवाप्नोति सुदारुणम् ॥

(१) यस्तु इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) प्रयाति इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) विक्रयित्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



चक्रपाणिविक्रये शालग्रामविक्रयप्रायश्चित्तवत् सर्वं कुर्यात् ।

इति हेमाद्रौ चक्रपाणिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ शिवलिङ्गप्रतिग्रहविक्रयप्रायश्चित्तमाह—

स्कन्दपुराणे—

मारकतं स्फाटिकं लिङ्गं शिलारूपं द्विजोत्तमः ।

प्रतिगृह्य प्रयत्नेन उभयोस्तारकं द्विजाः ॥

अविक्रीय गृहे स्थाप्य पूजयेद् यो<sup>१</sup> दिने दिने ।

तस्य पुण्यं निगदितुं मया ब्रह्मन् न शक्यते ॥

लिङ्गं शिलोन्नतं शङ्खं पञ्चसूत्रानुमोदितम् ।

पूजयेद्यदि पूतात्मा स पापात्परिमुच्यते ॥

शिवरात्र्यां चतुर्दश्यां चातुर्मास्यव्रतादिषु ।

प्रतिगृह्य समर्थोऽपि विक्रयेद्यदि पापधृः ॥

तत्कुलं नाशमायाति यमलोकमवाप्य च<sup>२</sup> ।

लिङ्गविक्रेतुः प्रायश्चित्तमाह—

(१) पूजयित्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) अवाप्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



मार्कण्डेयपुराणे—

संपाद्य बहुभिर्यत्नैः प्रतिगृह्य नरोत्तमात् ।  
 विक्रयित्वा द्विजोमोहात् कालकूटं समश्नुते ॥  
 न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ।  
 सोऽरण्यं निर्जनं गत्वा स्नात्वा प्रातर्यथाविधि ॥  
 लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य समिद्धेऽग्नौ हुनेद्विः ।  
 अयुतं प्रत्यहं पापी चरुणाऽऽज्यतिलैः सह ॥  
 ताम्बकैर्णैव मन्त्रेण नियमासनपूर्वकम् ।  
 यावदस्तमयं याति संख्या तावत् प्रपूर्यते ॥  
 फलाहारं तदा कुर्यात् स्वपेद्देवमनुस्मरन् ।  
 एवं कुर्यात् पञ्चरात्रं पञ्चायुतमतन्द्रितः ॥  
 पञ्चगव्यं पिवेत्पश्चात् शुद्धोभवति नान्यथा ॥

इति हेमाद्रौ शिवलिङ्गप्रतिग्रहविक्रयप्रायश्चित्तम् ।

अथ शङ्खप्रतिग्रहतद्विक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

शूर्मपुराणे—

प्रतिगृह्य द्विजः शङ्खं देवपूजार्थमादरात् ।  
 मलक्षणं च शुद्धञ्च पुण्यकालेषु पर्वसु ॥



विक्रयेद्यदि मोहात्मा यमलोकं समश्नुते ।  
 शङ्खदर्शनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥  
 तं विक्रयित्वा मोहेन स पापी न भवेत् किमु ।  
 तस्यैव निष्कृतिरियं कथिता मुनिवल्लभैः ॥  
 स्नात्वा हरिदिने शुद्धे कृतं पापमनुस्मरन् ।  
 उपविश्य शुचौ देशे विष्णोर्नाम्ना सहस्रकम् ॥  
 प्रातरारभ्य <sup>१</sup>नियतो यावत्सूर्योदयोभवेत् ।  
 तावज्जपित्वा नामानि परेद्युरुदये त्यजेत् ॥  
 स्नात्वा पुनस्तु द्वादश्यां पञ्चगव्यं पिवेन्मुदा ।  
 पारणं च ततः कुर्यात् शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् ॥

इति हेमाद्रौ शङ्खविक्रयप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ घण्टाविक्रयप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

प्रतिगृह्य द्विजो घण्टां धूपपात्रञ्च साधनम् ।  
 पेटिकां देवपात्रञ्च स्नानपात्रं तथैव च ॥

(१) स्मृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) सहस्रा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



समर्थः प्रतिगृह्यादौ धनार्थं विक्रयेदिमान् ।

स वै नरकमासाद्य दंशगोपो हि जायते ॥

स्कन्दपुराणे—

धूपपात्रञ्च घण्टाञ्च स्नानपात्रं च पेटिकाम् ।

दीपसाधनपात्राणि समर्थः प्रतिगृह्य च ॥

विप्रो धनविमो<sup>(१)</sup>हार्थी विक्रयेद्यदि मूढधीः ।

स वै नरकमासाद्य दंशगोपो हि जायते ॥

तस्य निष्कृतिरुद्दिष्टा<sup>(२)</sup> मुनिभिः सत्यवादिभिः ।

प्रातःस्नात्वा शुचिर्भूत्वा देवागारं विशेत्ततः<sup>(३)</sup> ॥

उपविश्य तदग्रे तु रङ्गवस्त्राद्यलङ्कृतः ।

पालाशसमिधस्तत्र निक्षिपेच्छतसंख्यया ॥

स्वगृह्याग्निं प्रतिष्ठाप्य आज्यभागान्तमाचरेत् ।

यावद्भानुः सायमेति तदाऽऽहारं समाचरेत् ॥

स्वपेद्देवसमीपे तु पुनःप्रातःप्रबोधयेत् ।

तत्रापि पूर्ववत्कृत्वा मण्डलं यत्र पूर्यते ॥

तदा विरम्य नियमात् पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।

घण्टादिविक्रये तात प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥

(१) विदशगोप इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धनत्रियागार्थी इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) उत्पन्ना इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) विशेषत इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्मात् न प्रतिगृह्णीयाद् अन्नं वा जलमेव वा ।  
यदि मोहात् प्रतिग्राही पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥

इति हेमाद्रौ घण्टाविक्रेतुः प्रायश्चित्तम् ।

अथ ताम्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

ताम्रपात्रं द्विजो यस्तु पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
प्रभुमात्राद् वृथाग्राही स वै नरकमश्नुते ॥  
तदन्ते भुवमासाद्य बृहहृषणवान् भुवि ।

कूर्मपुराणे—

ताम्रं यदि द्विजो लोभाद् विभ्रयात् कारणं विना ।  
पुण्यकालेषु पुण्यर्क्षे व्यतीपाते च वैधृती ॥  
'मृत्वा नरकमाप्नोति बृहदण्डः स जायते ।

मत्स्यपुराणे—

पुण्यकालेषु संक्रान्ती व्यतीपाते च वैधृती ।  
ताम्रं द्विजो राजदत्तं कूर्मदानमथार्पि वा ॥



प्रतिगृह्य महद्दुःखं अवाप्य च भुवःस्थले ।  
 बृहदण्डो भवेत् सोऽपि तस्मादेतत्परित्यजेत् ॥  
 प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् ।  
 तद्रव्यस्य चतुर्भागं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥  
 तेन मुक्तो भवेत्पश्चात् पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।  
 अन्नं जलं वा दानं वा शुद्धिमिच्छन् न संग्रहेत् ॥  
 यदेवैतत् समुत्पन्नं पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥

इति हेमाद्रौ ताम्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ कांस्यप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

धनिष्ठापञ्चकमृते अर्धोदयमहोदये ।  
 पुण्यकालेषु यः कांस्यं प्रगृह्णीयाद् द्विजो यदि ॥  
 गौरवं नरकं घोरं अनुभूय जनेश्वर ! ।  
 तदन्ते भुवमासाद्य चापजन्म लभेत सः<sup>१</sup> ॥

लिङ्गपुराणे—

(१) भवेत्तदा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



अष्टाशीतिपलं कांस्यं तद्वर्णं वा तद्वर्णकम् ।  
 पुण्यकाले द्विजो लोभात् प्रतिगृह्य धनातुरः ॥  
 यमलोकमुपागम्य नरकान्ते भुवःस्थले ।  
 तत्कर्मशेषफलभुक्<sup>१</sup> चापि भवति निश्चयः ॥  
 तत्प्रापपरिशुद्धयं तच्चतुर्थांशमादरात् ।  
 दद्याद् द्विजातये तात तस्मात् पापात्प्रमुच्यते ॥  
 तनाऽन्नं वा सुवर्णं वा जलं वा वस्त्रमेव वा ।  
 प्रतिगृह्णाति चेद्<sup>२</sup> देवात् पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥

इति हेमाद्रौ कांस्यप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ तिलपात्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

विशुप्रीत्यै यमप्रीत्यै स्त्रियमाणा गृहे तथा ।  
 ग्रहाणामनु<sup>३</sup>शान्त्यर्थं रागशान्त्यर्थमादरात् ॥

(१) अयं पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृश्यते ।

(२) प्रतिगृह्य यदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मारयिं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



तिलपात्रं प्रभोर्धृत्वा अर्चितं तिलपूरितम् ।

द्विजोलोभेन महता प्रतिगृह्य धनातुरः ॥

तत्पापफलमासाद्य जायते हरिरेव सः ।

मण्डूको भवेत् ॥

तद्दोषपरिहारार्थमयुतं जपमाचरेत् ।

एतदल्पद्रव्यविषयं, यथाशास्त्रकल्पिततिलपात्रप्रतिग्रहे विशेषमाह

ताम्रं त्रिंशत्पले पूर्णं प्रस्थमात्रतिलैः सह ।

पूजितं गन्धवस्त्राद्यैर्देहिणाभिर्यथोक्ततः ॥

प्रतिग्रहे द्विजः पापशुद्ध्यर्थं शास्त्रचोदिते ।

नियुतेन जपेद्देव्याः संख्यापूर्णमतन्द्रितः ॥

शुद्धोभवति दुष्टात्मा पापादस्मान्नराधिप ।

पञ्चगव्यं पूर्ववत् तत्रान्नजलधान्यसंग्रहे विप्रस्य पूर्ववत्प्राय-  
श्चित्तम् ।

इति हेमाद्रौ तिलपात्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथाऽऽज्यावेक्षणप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

निरीक्षिताज्यं यो 'धत्ते कांस्यपात्रस्थितं मुदा ।

तस्याऽलक्ष्मीर्भवेन्नित्यं निर्भाग्यो 'भुवि जायते ॥

तद्दोषपरिहारार्थं प्रधानं संपरित्यजेत् ।

स्नात्वा तदानीमन्यत्र सहस्रं जपमाचरेत् ॥

उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।

एतदल्पाज्यप्रतिग्रहविषयं शास्त्राद्वाराधितस्य(?) निरीक्षितस्य  
प्रतिग्रहे अयुतगायत्र्या शुद्धिः ।

इति हेमाद्रौ तिलपात्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ हरिहरयोगे हरिहरप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

खरसंवत्सरे राजन् कार्तिके पूर्णमादिने ।

योगो हरिहरो नाम सर्वपापप्रणाशनः ॥

(१) धत्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जायते भुवमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।



हरिहरयोगे हरिहरप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् । ८२६

क्रतुकोटिसमायोगो गङ्गास्नानायुतैः समम् ।

महापातकसङ्घातदावानलसमो मुने ॥

तत्र स्नानानि दानानि पितृश्राद्धं महत्तरम् ।

योगे तत्र तदा राजन् मुखजोवा नरेश्वरः ॥

हरिहरं स्वर्णमयं गन्धवस्त्राक्षतादिभिः ।

पूजयित्वा जागरित्वा विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ॥

ददाति यदि पूतात्मा मुक्तिमाप्नोति पार्थिव ।

लिङ्गपुराणे —

योगे हरिहरे राजन् ब्राह्मणोवा जनाधिपः ।

योवा कोवा धनी लोके पूजयित्वा हरिं हरम् ॥

जागरित्वा तदा रात्रिं परेत्युर्विधिपूर्वकम् ।

अर्चयित्वा द्विजाग्रयाय दद्याद्दक्षिणया सह ॥

तस्य पुण्यफलं वक्तुं मया ब्रह्मन्न शक्यते ।

न तस्य पुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात् कदाचन ॥

मुक्तिस्थानानि चत्वारि कलौ पापरतात्मनाम् ।

अन्नमात्रपरिग्राही न च लौकिकसाधनः ॥

परित्यजन् लोकवार्त्तां परिव्राड्मुक्तिभाक् सदा ।

अन्तकाल उपायाति मनसाऽन्यं न संस्मरेत् ॥

नारायणं ममुच्चार्य स वै मुक्तिपदं व्रजेत् ।

ब्रह्मज्ञानं मदाशस्त्रं वेदान्तं परिशीलयन्<sup>१</sup> ॥



स एव मुक्तिभाग् विप्रो न हयं संस्मरन् मुदा ।  
 उत योगं हरिहरं साधयेद्यदि पुण्यवान् ॥  
 स एव मुक्तिमायाति यो वा को वा भुवःस्थले ।  
 स्थावरत्वमवाप्नोति तस्मादेतत्परित्यजित् ॥

कूर्मपुराणे—

योगे हरिहरे विप्रः प्रतिगृह्य धनातुरः ।  
 स तु पापं महद् घोरं अनुभूय तदा तदा ॥  
 स्थावरत्वं 'व्रजेल्लोके यावदाभूतसंप्लवम् ।  
 प्रायश्चित्तमिदं राजन् मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥  
 'अन्यं धर्मं परित्यज्य ब्रह्मास्थानमुपागमत् ।  
 तैरनुज्ञामवाप्याऽथ कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ॥  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।  
 तेन शुद्धिमवाप्नोति न दानैर्ब्राह्मणाचनैः ॥

इति हेमाद्रौ हरिहरयोगं हरिहरप्रतिग्रहं प्रायश्चित्तम् ।

(१) भवेत् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धान्यं इति क्रीतपुस्तकपाठः ।



## अथार्द्धनारीश्वरयोगे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्मपुराणे—

स्वरसंवत्सरो<sup>१</sup> माघपूर्णिमायोगयुग्यदा ।  
तत्राऽपि भगवान् शम्भुर्द्धनारीश्वरोऽव्ययः ॥  
पूजनीयो नृभिः पापमोचने नाऽन्यमाधनः ।  
अत्र दानं महापुण्यं स्नानं वा विप्रभोजनम् ॥  
पितृनिर्वापणं वाऽपि दीपो वा देवतालये ।  
होमो वा तिलसंमिश्रः सर्वपापापनुत्तये ॥  
मनोज्ञां प्रतिमां कृत्वा सौवर्णीं लक्षणान्विताम् ।  
पूजयित्वा प्रदोषे तां जागरित्वा निशामिमाम् ॥  
परिदुः पुनरभ्यर्च्य पूर्ववद्विधिपूर्वकम् ।  
यो दद्याद् विप्रवर्याय पूर्ववन्दुक्तिभाग्भवेत् ॥  
मनुष्यजन्म धिक् कष्टं मलमूत्रविगर्हितम् ।  
सर्वं पापालयं ज्ञेयमस्थित्वङ्मांसपूरितम् ॥  
मनुष्यजननाद्राजन् पाषाणत्वं वरं सदा ।  
अतः स्वार्जितवित्तेन योगमेनं समाचरेत् ॥

---

(१) संवत्सरे इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) पौर्णम्यामिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) जननादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स याति ब्रह्मणः स्थानं नरः कल्मषपूरितः ।  
 अत्र यो ब्राह्मणो लोभाद् वृथा 'कुर्यात्' प्रतिग्रहम् ॥  
 स एव नरकस्थायी यावदाभूतसंभवम् ।  
 एतत्सात्त्विकदानं हि वृथा तस्य परिग्रहे ॥  
 प्रायश्चित्ती भवेत्सोऽपि यागादिकमथापि वा ।  
 उभयोर्यदिलोभेन नरकं प्रतिपद्यते ॥  
 तस्य वै निष्कृतिर्दृष्टा पूर्ववत्सर्वमाचरेत् ।  
 लक्ष्मीनारायणचम्पाषष्ठीयोगादिवदुत्तरायणयोगेषु प्रतिग्रहे त्वेवमेव  
 प्रायश्चित्तं विवेचनीयं न चाऽन्यथा ।

इति हेमाद्रौ अर्द्धनारीश्वरयोगे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ दुर्जनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

वेदमार्गं परित्यज्य सटा वेश्यापरायणः ।  
 कर्महीनो वृथाद्वेषी देवब्राह्मणनिन्दकः ॥  
 सन्ध्यादिनित्यकर्मणि त्यक्त्वा ग्रामस्थमाचरेत् ।  
 वृथाहिंसा मृगादीनां मन्तापीयतिमाधुषु ॥



पत्नीपुत्रपितृभ्रातृदेवताराधनं त्यजेत् ।  
 परवित्तं परक्षेत्रं परदारापहारणम् ॥  
 वेदशास्त्रपुराणेषु कथासु महतीषु च ।  
 अविश्वासो हेतुवादं चार्वाकीयं पठंस्तथा ॥  
 इदं पापमिदं पुण्यं इदं वै विप्रमाधनम् ।  
 अयं परोपकारश्च अयं विष्णुः शिवोऽव्ययः ॥  
 उपवासव्रतादीनां जपादीनामवास्तवम् ।  
 कथामिकां पूर्वतश्च पश्चादेकां तथावहन् ॥  
 कर्णमूले गन्धरेखां शिरोणीषञ्च वक्रगम् ।  
 नासिकाग्रे ललाटे वा तिलकं वा प्रकाशयेत्<sup>१</sup> ॥  
 शुकं कपोतं गृध्रं वा धारयेत् श्येनमेव वा ।  
 चाण्डालादिषु संसर्गे ताम्बूलं भक्षयेन्मुदा ॥  
 पर्वकाले पितृश्राद्धे सोमसूर्यग्रहेऽपि वा ।  
 द्विभुक्तः पापमनसा गच्छेन्<sup>२</sup> नारीं पराङ्गनाम् ॥  
 अवेक्षणममेध्यस्य अभोज्यं भक्षयेन्मुदा ।  
 पञ्चाद्रिं भोजनं त्यक्त्वा पितृमातृसुतैः सह ॥  
 भोजनं कुरुते विप्रः पापमात्रं न चिन्तयन् ।  
 अयं दुर्जनसंज्ञः स्यात् तं कदा नाऽऽलपेद्बुधः<sup>३</sup> ॥

(१) प्रकाशनामिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) कन्यामिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) मुदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



शकटं पञ्चहस्तेन शतहस्तेन वाजिनम् ।  
 हस्तिनं शतहस्तेन दुर्जनं दूरतस्थजेत् ॥  
 अतोदुर्जनममर्गः परित्याज्यः सुखिष्णुभिः ।  
 पुण्यकालेषु पुण्याहे नदीतीरेषु सर्वदा ॥  
 अन्नं वा सलिलं वापि हिरण्यं धान्यमेव वा ।  
 गृह्णन् नरकमाप्नोति तस्मादेतत् परित्यजेत् ॥  
 यदि दैवात् समुत्पन्नस्तस्माद् राजन् परित्यजः ।  
 तदा मनसि संस्मृत्य हेयं तज्जनवल्लभ ॥  
 स्नात्वा सचैलं सहसा प्राजापत्यं ममाचरेत् ।  
 सुवर्णमात्रे द्विगुणं अन्ने पादं जले तथा ॥

इति हेमाद्रौ दुर्जनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथाततायिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः ।  
 क्षेत्रदारापहर्त्ता च षडेत आततायिनः ॥



एतत्प्रतिग्रहं कृत्वा विप्रो नरकमाप्नुयात् ।  
 वृश्चिकं दुर्जनं सर्पं भिषजञ्चाततायिनम् ॥  
 पापिष्ठं दुर्भगं ब्राह्म्यं नग्नमुत्कृत्तनामिकम् ।  
 प्रातर्न पश्येदेतांस्तु दृष्ट्वा पश्येद्दिवाकरम् ॥  
 चन्दनं रोचनं हेममृदङ्गं दर्पणं मणिम् ।  
 गुरुमग्निं तथा सूर्यं प्रातः पश्येत् प्रयत्नतः ॥  
 अग्निचित् कपिला <sup>१</sup>पत्नी राजा भित्तुर्महोदधिः ।  
 दृष्टिमात्रात् पुनन्येत तस्मात् पश्येत नित्यशः ॥  
<sup>२</sup>भर्तृघ्नीं पुष्पिणीं नारीं पुत्रहीनां निराश्रयाम् ।  
 सवाहनयतिं दृष्ट्वा सचैलं स्नानमाचरेत् ॥  
 पतितं कुष्ठिनं चापं दुर्जनं चाऽऽततायिनम् ।  
 हरिं सर्पं शुकं स्पृष्ट्वा सचैलं स्नानमाचरेत् ॥  
 एतत्प्रतिग्रहे राजन् पूर्वमुक्तं मनोषिभिः ।  
 प्रायश्चित्तं तथा कुर्याद् अन्नदानं जलैः <sup>३</sup>सह ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति दानैर्वा बहुभिर्नरः ।

इति हेमाद्रौ आततायिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) स्वस्ती इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) भ्रातृघ्नीमिति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(३) जलं तथा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पाषण्डप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

शूद्रधर्मरतो वाऽपि तप्तमुद्राङ्कितस्तथा ।  
लिङ्गधारी तु सुखजः शुष्कतर्कानुवादवान् ॥  
विष्णुदेवं द्विजं पाञ्चयज्ञं शास्त्रं पतिव्रताम् ।  
उपोषणादिकं त्यक्त्वा आत्मभोगपरायणः ॥  
शिशुं द्वेष्टि परं द्वेष्टि देवपूजां व्रतं तथा ।  
दानं वा नियमं वापि कुर्व्वाणं द्वेष्टि यो नरः ॥  
एते पाषण्डिनः प्रोक्ताः दुर्जनेष्वेषु भागशः ।  
पाषण्डिनश्चेद्गृह्णीयाद् द्विजो भोगपरायणः ॥  
कुर्याद्देहविशुद्धयर्थं प्राजापत्यद्वयं सकृत् ।

हिरण्यादिमन्त्रवे पूर्व्ववद् द्रष्टव्यम् ।

इति हेमाद्रौ पाषण्डप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

---



अथ कुण्डगोलकयोः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

'जीवितञ्च पतिं त्यक्त्वा कुमारं सूयतेऽन्यतः ।

स पुत्रः कुण्डसंज्ञः स्याल्लोकद्वयवहिष्कृतः ॥

सा माता जारिणी नाम स पुत्रः पतितो भवेत् ।

मृते भर्तृरि या नारी सूते पुत्रं तथाऽन्यतः ॥

स शिशुर्गोलको नाम सर्वधर्मवहिष्कृतः ।

न नासकरणं वाऽपि न मौञ्जीबन्धनं तथा ॥

कुण्डगोलकनामानौ दर्शनात् पापवर्द्धिनौ ।

दर्शनात् स्पर्शनान्नित्यकीर्त्तनात् पुण्यहारिणौ ॥

नित्यनैमित्तिके काम्ये स्नानदानजपादिषु ।

नैतयोर्दर्शनं कार्यं क्षुतं जृम्भणमेव वा ॥

सन्त्यजेद्दर्शनं कृत्वा श्रवणं जृम्भणन्तथा ।

विरम्य भोजनात् पश्चान्मार्त्तण्डमवलोकयेत् ।

एतयोः पापयोर्यस्तु द्विजः संस्कारकर्मसु ॥

आचार्यत्वं मकृत् कुर्यात् स विप्रस्तत्समो भवेत् ।

तस्योपनयनं भूयः केशानां वपनं तथा ॥

प्रायश्चित्तं तदा कुर्यात् षड्बन्धं विधिपूर्वकम् ।

त्यक्त्वा प्रतिग्रहे राजन् सुवर्णं धान्यमादरात् ॥



अन्नं वा जलमात्रं वा प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ।  
 सुवर्णसंग्रहे ताभ्यां प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥  
 धान्ये तदर्द्धमर्द्धं स्याद् अन्नतोयप्रतिग्रहं ।  
 एवं शुद्धिमवाप्नोति अन्यथा वै न निष्कृतिः ॥  
 कुण्डगोलकयोः केचित् प्रायश्चित्तं वदन्ति हि ।  
 पराशरादयः सर्वे इति यत्तदमाम्मतम् ॥

इति हेमाद्रौ कुण्डगोलकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ वैश्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

वैश्याजनात्तथा<sup>१</sup> राम पैतृके पुण्यपर्वसु ।  
 आमं सुवर्णं रजतं प्रतिगृह्य द्विजो यदि ॥  
 तेन जीवेन्महापापी मृत्वा नरकमाप्नुयात् ।  
 नदीतीरे पुण्यकाले पैतृकेषु च पर्वसु ॥  
 वैश्याप्रतिग्रहं कुर्वन् द्विजश्चाण्डालतां व्रजेत् ।  
 अन्ते नरकमासाद्य सर्वधर्मवहिष्कृतः ॥



महाभारते—

दशसूनाममश्वक्री दशचक्रिसमो ध्वजी ।

दशध्वजिसमा वेश्या दशवेश्यासमो नृपः ॥

वेश्याप्रतिग्रहः स्पर्शो दानमन्नं वचस्तथा ।

एतानि तस्य पुण्यानि हरन्ति क्षणमात्रतः ॥

तस्माद्विप्रैः परित्याज्यो वेश्यायाः सम्प्रतिग्रहः ।

यदि प्रतिग्रहो राम प्रायश्चित्तं शृणुष्व मे ॥

केशानां वपनं कृत्वा संस्कारं पुनराचरेत् ।

प्राजापत्यत्रयं कुर्यात् तण्डुलानां परिग्रहे ॥

सुवर्णमात्रमंग्राहे षड्द्वयं कृच्छ्रमाचरेत् ।

अन्ने जले च वस्त्रे च प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

एतत् सकृत्प्रतिग्रहविषयं अभ्यासे द्विगुणं अत्यन्ताभ्यासे  
चतुर्गुणं सस्वत्सरादूर्ध्वं तत्सम इति सूचितम् ।

इति हेमाद्रौ वेश्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ भर्तृघ्नी प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

भर्तारं हन्ति या नारी गृहदाहादिभिर्वधैः ।

परप्रेरणया 'वाऽपि सा नारी भर्तृघातिनी ॥

शिवधर्मोत्तरे—

या नारी बहुभिर्विप्रं प्रतिहन्ति विषादिभिः ।

राजासक्ताऽन्यतो विप्रः कदा तां नाऽवलोकयेत् ॥

चतुर्विंशतिमते—

गृहदाहेन पाषाणरज्जुबन्धादिभिर्गृहे ।

भर्तारं हन्ति या पापा कर्मणा दिवि पीडया ॥

यमदूतेस्तदा बद्धा पीडिता यमकिङ्करैः ।

क्रोशन्ती स्वकृतं कर्म निन्दन्ती जनकं स्वकम् ॥

कर्मणा मनसा वाचा भर्तारं याऽवमन्यते ।

तदाज्ञां या परित्यज्य तस्याः प्रोक्ताऽप्यधोगतिः ॥

भर्तृघ्नी ब्रह्महन्ता च उभयं याति रौरवम् ।

ततः प्रतिग्रहस्याज्यो भर्तृघ्नाः पापशङ्कया ॥

दोषं बुद्ध्वा यदा विप्रः तस्याः कुर्यात् प्रतिग्रहम् ।

महान्तं नरकं गत्वा भवेद्भुवि तपोदरः ॥



पुण्यकालेषु संक्रान्तौ व्यतीपाते च वैधृतौ ।

तत्प्रतिग्रहणं कुर्यात् तदा पापविशुद्धये ॥

सुवर्णे रजते वस्त्रे अन्ने जलपरिग्रहे ।

'तप्तं तदूर्ध्वं पादोनं क्रमात्कृत्वा विशुध्यति ॥

एतदज्ञानविषयं ज्ञात्वा प्रतिग्रहे द्विगुणं अभ्यासे त्रिगुणं एवं  
वत्सरादूर्ध्वं सोऽपि तत्समः ।

इति हेमाद्रौ भर्तृघ्नीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ व्यभिचारिणीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

विटभाषणं दृष्टिर्हासो निर्लज्जत्वं वहिःस्थितिः<sup>१</sup> ।

एतानि पञ्च नारीणां व्यभिचार उदाहृतः ॥

मैथुनञ्चाष्टविधम्—

स्मरणं कीर्त्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ।

सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृतिरेव च ॥

एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः ।

(१) चान्द्रमिति काशीपुस्तकपाठः ।

(२) लज्जाविमोक्षणं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कृते तु स्मरतोऽधर्मस्त्रेतायां दर्शनाद् भवेत् ।

द्वापरे स्पर्शनात्प्रोक्तः<sup>१</sup> कलौसम्पर्कतः क्रमात् ॥

अष्टविधमैश्वर्यमिति कलियुगव्यतिरिक्तविषयं कलियुगे स्मरणादिकं  
सम्भवत्येव, क्रियानिर्वृतिः साक्षात्संसर्गः, स एव हि दोषः ।

रजोदर्शनाच्छुद्धिः । तदेवाऽऽह—

वामनपुराणे—

स्त्रीणां स्मरणजं पापं मामि मासि रजःसृतेः ।

नश्यते<sup>२</sup> हीनसंसर्गाद् गर्भं त्यागोविधीयते ॥ इति—

कूर्मपुराणे—

स्त्रीणामहरहः पापं स्मरणाद् दृष्टितस्तथा ।

नष्टत्वं याति राजेन्द्र मासि मासि रजःस्रवात् ॥

परसंसर्गजोदोषो न क्षीणत्वमवाप्नुयात् ।

तदपि क्षीणतां याति गर्भं त्यागोविधीयते ॥

अथ साक्षाद्व्यभिचारः स्त्रीणां यदा सम्भवति पतिः स्वयमेव  
पश्यति न तु वार्त्तामात्रेण । तदाऽऽह—

कात्यायनः—

स्वानुभूतं सुदृष्टञ्चेत् प्रष्टव्यं न तु निग्रहः ।

तथाऽपि यत्नतोरक्षेद् गर्भं त्यागो विधीयते ॥

(१) गर्भ इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गर्भ इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पुरुषसंसर्ग इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) दर्शयति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



तद्गर्भसम्भवे नारी यदा भर्ताऽपि त्यक्ता तदा तत्प्रतिग्रहे दोषमाह ।

लिङ्गपुराणे—

व्यभिचारे स्वयं दृष्टे त्याजिता या धवादिभिः ।

तस्याः प्रतिग्रहस्त्याज्योमुखजैः पापभीरुभिः ॥

तथाऽपि दैवात् प्राप्तञ्चेत् सुवर्णं धान्यमेव वा ।

प्राजापत्यं चरेत्स्वर्णे तदर्द्धं धान्यसम्भवे ।

पादञ्चरेत्ततः पश्चाद् अन्नतोयादिसम्भवे ॥

इति हेमाद्रौ व्यभिचारिणीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ चाण्डालप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवीपुराणे—

चाण्डालादेर्द्विजोमोहात् प्रतिगृह्य धनादिकम् ।

तेन तत्कर्मकृत्यत्वं तत्सर्वं तदवाप्तिदम् ॥

भोक्तारो नरकं यान्ति 'कर्त्ता चाण्डालतां व्रजेत् ।

चाण्डालेन कृतं वस्त्रं वर्जयेत् पुण्यकर्मसु ॥

स्नाने दाने जपे होमे स्वाध्याये पितृतर्पणे ।

तस्य स्मरणमात्रेण तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥



तदाह—

आपस्तम्बः—

“चाण्डालोपस्पर्शने सम्भाषायां दर्शने च दोषः, तत्र प्रायश्चित्तं  
अवगाहनमपामुपस्पर्शनं, सम्भाषायां ब्राह्मणसम्भाषा, दर्शने  
ज्योतिषां दर्शने”मिति ।

चाण्डालान् नैव गृह्णीयाद् विप्रोधर्मपरायणः ।

तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति चान्द्रायणचतुष्टयात् ॥

सक्तप्रतिग्रहे तावत् प्रायश्चित्तं विशोधनम् ।

अभ्यासे त्रिगुणं प्रोक्तं तत्समस्तं ततः परम् ॥

इति हेमाद्रौ चाण्डालप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ परिवित्तिपरिवेत्तृप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

मार्कण्डेयपुराणे—

अनूढे भ्रातरि ज्येष्ठे यवीयान् परिणयेद्यदि ।

पूर्वजः परिवित्तिः स्यात् परिवेत्ता द्वितीयजः ।

परिवित्तस्तु तत्पुत्रोद्वितीयः परिविन्नवान् ॥



कूर्मपुराणे—

ज्येष्ठो यद्यङ्गहीनः स्यान् मूकोऽपस्मारवान् यदि ।

तदनुज्ञामवाप्याऽथ तद्वृणं परिकल्प्य च ॥

स्नातकादि व्रतं कृत्वा कदल्याऽथ विवाह्य च ।

द्वितीयः परिणयेत्तत्र अन्यथा पतितोभवेत् ॥

एवं न शास्त्रदोषः स्याद् अहो भवति लौकिकः ।

तौ तत्पुत्रौ तयोर्दाराः पतिताः स्युर्न संशयः ॥

दाने नित्यव्रते काम्ये न कर्मार्हा भवन्ति ते ।

तस्मादेतत् परित्याज्यं दर्शनम्भाषणं तथा ॥

परिग्रहः परित्याज्यः विप्रैर्धर्मपरायणैः ।

तथापि लोभवान् विप्रः कुर्याच्चेत् तत्प्रतिग्रहम् ॥

न तेन शुद्धिमाप्नोति सुराभाण्डोदकं यथा ।

यागार्थं भरणार्थं वा कुरुते यः<sup>१</sup> परिग्रहम् ॥

पराकत्रयमात्रेण स शुध्येन्न तदल्पतः ।

यागार्थं धनबाहुल्ये तप्तकच्छशतं चरेत् ।

पराकस्त्वल्पमात्रेण अन्नवस्त्रे तदर्धतः ॥

इति हेमाद्रौ परिवेत्तादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) द्विजो यस्तत् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ पुस्तकादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

शास्त्रं पुराणं काव्यञ्च स्मृतिं नाटकमेव वा ।  
दद्याद्द्वै पुण्यकालेषु व्यतीपाते च वैधृतौ ॥  
द्विजायाऽध्यात्मविदुषे फलकं वाह्यलेखकम् ।  
सप्तजन्मसु विद्वान् स्यात् सर्वशास्त्रार्थतत्त्ववित् ॥

कूर्मपुराणे—

पुराणं धर्मशास्त्रञ्च स्मृतिं काव्यं मनाटकम् ।  
पुण्यकालेषु संक्रान्तौ ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥  
यो दद्याद् विप्रवर्याय स भवेत् सर्वशास्त्रवित् ।  
द्विजोयः प्रतिगृह्णाति द्रव्यलोभात्<sup>१</sup> सरस्वतीम् ॥  
सोऽपि जन्मान्तरे राजन् विद्यावान् सम्प्रजायते ।  
प्रतिग्रहधनाद्धं तु विक्रयित्वाऽऽत्मजीवनम् ॥  
कुर्याद्यदि स पापात्मा प्राजापत्यत्रयं चरेत् ।  
उपोष्य रजनीमिकां पञ्चगव्यं पिवेच्छुचिः ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति ब्राह्म्योभवति भूतले ॥

इति हेमाद्रौ पुस्तकादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



## अथ ब्राह्म्यादिभ्योऽपवीतादिप्रतिग्रह- प्रायश्चित्तमाह ।

ब्रह्माण्डपुराणे—

अनध्याये तु यत्सूत्रं यत्सूत्रं रण्डया कृतम् ।  
यत्सूत्रं दारुसम्भृतं क्रीतं यद्ब्रह्मसूत्रकम् ॥  
ब्राह्म्यादिभिस्तथा दत्तं तत्सूत्रं परिवर्जयेत् ।  
संभिन्नं ग्रन्थिसंयुक्तं स्थूलं सूक्ष्मं च शार्ङ्गम् ॥  
प्रमाणहीनमधिकं न योज्यं तद्विजातिभिः ।  
नाभेरूर्ध्वमनायुष्यं नाभ्यधस्तात्तपःक्षयः ॥  
तस्मान्नाभिसमं कुर्यादुपवीतं विचक्षणः ।  
एकावृतं गार्हपत्यं द्वितीयं दक्षिणाभिधम्<sup>१</sup> ॥  
तृतीयं चाऽऽहवनीयं स्याद् वेदिर्देवमयी शुभा ।  
ग्रन्थिस्तस्य परं ब्रह्म विदितं विप्रपुङ्गवैः ॥  
नित्यनैमित्तिकादीनि कर्माणीह समाचरेत् ।  
दिने दिने क्रतुफलं सम्प्राप्नोति न संशयः ॥  
एतद्दुर्मार्गवर्त्तिभ्यः प्रतिगृह्य द्विजातयः ।  
यद्यत्कर्म तदा<sup>२</sup> कुर्युः स्तत्तद् भवति<sup>३</sup> निष्फलम् ॥

(१) दक्षिणाततम् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यथा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) आप्नोति इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



पूर्ववत्क्षणीपेतमुपवीतं द्विजोत्तमः ।  
 धृत्वा नित्यं यदा कुर्यात् तदाऽऽनन्ताय कल्पते ॥  
 पूर्वोक्तेभ्यश्च ब्राह्मेभ्यः प्रतिगृह्योपवीतकम् ।  
 कुर्याद्यदि द्विजः कर्म महादोषमवाप्नुयात् ॥  
 तद्दोषोपशमायाऽलं प्राजापत्यं समाचरेत् ।  
 अन्यद् धृत्वा सुखी भूयाद् अन्यथा दुःखवान् भवेत् ॥

इति हेमाद्रौ उपवीतप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ नटविटगायकेभ्यः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

नटश्च विटवृत्तिश्च गायकः परिहासकः ।  
 चारुवाकश्च पञ्चैते न कर्माह्वाः कलौ युगे ॥  
 देवागारे राजगृहे वृत्तिं प्राप्य दिने दिने ।  
 कुमारीं भगिनीं चाऽन्यां नर्तयेद्यः स नाटकः ॥  
 वेदशास्त्रं परित्यज्य नित्यं नैमित्तिकं तथा ।  
 विहरेत् परनारीभिर्यः पुमान् स विटः स्मृतः<sup>१</sup> ॥

१) विसृज्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) परनारीर्यः स पुमान् विटवृत्तिमान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



हरीश्वरकथां त्यक्त्वा प्रबन्धान् 'कविकल्पितान् ।  
 पठन् योवर्त्तयेन्नित्यं स गायक इतीरितः ॥  
 मातरं भगिनीं श्वश्रूं श्वशुरं पितरं गुरुन् ।  
 देवं वह्निं तथा धेनुं यः सदा परिहासयेत् ॥  
 यं सदा वर्जयन्तीह साधवः साधुवत्सलाः ।  
 परिहासजनः सोऽपि तं कदा नाऽवलोकयेत् ॥  
 अवाच्यं वा सुवाच्यं वा सदा दुर्भाषणं वदन् ।  
 सर्वान् साधून् समालोक्य चारुवाक्यैर्विहासयन् ॥  
 यः<sup>१</sup> सर्वधर्मसन्त्यागी स चार्वाक इतीरितः ।  
 एतेभ्यो यदि योविप्रो गृह्णीयाद्<sup>२</sup> धनमुत्तमम् ॥  
 स कुर्याद्<sup>३</sup> देहशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं विशोधनम् ।  
 उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।  
 प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं सर्वपापप्रणाशनम् ॥

इति हेमाद्रौ नटविटगायकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

(१) पुरुषकल्पितान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) स इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) गृह्णीयाद् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) कुर्यात् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽऽभीरप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

सूतप्रोक्ते—

ब्राह्मणः प्रतिगृह्णीयात् सर्वत्राऽऽभीरवर्जितम् ।  
तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति आभीरेभ्यः<sup>१</sup> प्रतिग्रहे ॥

स्कन्दपुराणे—

भाषान्तरं न जानद्भिः सम्भाषायां न संवदेत् ।  
असौ विप्रस्त्वयं वेद इदं पापमिदं फलम् ॥  
कुटीरे वर्तुलाकारे सदा धेनुप्रपोषकाः ।  
तत्क्षीरादीनि विक्रीय जीवयन्ति सदा भुवि ॥  
स ह्याभीर इतिख्यातः सर्वकर्मवहिष्कृतः ।  
तस्माद्धेनुं वा धान्यं वा पुण्यकाले उपागते ॥  
प्रतिगृह्य द्विजोलोभात् पश्चान्नरकमश्नुते ।  
तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।  
अन्यथा दोषमाप्नोति न तस्मान् मुच्यतेऽधुना ॥

इति हेमाद्रौ आभीरप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) आभीराणां इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ चातुर्मास्यव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रह- प्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

वर्ज्यं जीरकताम्बूलं गोधूलिसनानमाचरेत् ।  
गोशृङ्गोदकसंस्नानं सन्ध्यायां मौनमेव च ॥  
शिवविष्णोश्च स्मरणं पुराणपठनं तथा ।  
पुराणश्रवणं शास्त्रपठनं तुलसीदलैः ॥  
विष्णुपूजां तथा शम्भोर्विल्वपत्रैश्च नामभिः ।  
अधः शय्यां पत्रभुक्तिं ब्रह्मसूत्रं सचन्दनम् ॥  
तुलसीदलदानञ्च दूर्वाधारणमेव च ।  
विष्णुकान्तं तथा धार्यं भानुचन्दनमेव च ॥  
श्रीमूर्तिदानं द्वादश्यां सूर्यार्घ्यं प्रत्यहं तथा ।  
मृष्टान्नभोजनं विप्र प्रातःस्नानं तथैव च ॥  
सहस्रनामपठनं विष्णोर्वा शङ्करस्य च ।  
अखण्डदीपदानञ्च शाकत्यागं चरेत्तथा<sup>१</sup> ॥  
श्रावणे वर्जयेत् शाकं दधि भाद्रपदे त्यजेत् ।  
आश्विने वर्जयेत् क्षीरं कार्तिके द्विदलं त्यजेत् ॥  
ताम्बूलं पल्लवं पुष्पं फलं कोशं च जीरकम् ।  
शिशुं बीजञ्च निर्यासं दशधाशाकमुच्यते ॥



धात्रीफलं सदा ग्राह्यं विष्णुप्रियकरं महत् ।  
 शाकत्यागस्तथा विष्णोस्त्रिदिने पाप<sup>१</sup>वर्जिते ॥  
 क्षीराब्धिपूजा राजेन्द्र दिवानिद्राविवर्जनम् ।  
 पञ्चगव्यप्राशनञ्च द्वादशद्वादशीदिने ॥  
 तथा तैः स्नपनं शम्भोर्हरेर्वा प्रत्यहं व्रतम्<sup>२</sup> ।  
 रङ्गवल्लीव्रतं तद्वद् गोष्ठे वृन्दावनेऽपि वा ॥  
 प्रतिमासं चतुर्थ्यान्तु गणनाथस्य पूजनम् ।  
 प्रतिपक्षे तृतीयायां गौरीपूजामहाव्रतम् ।  
 द्वादश्यां प्रत्यहं वाऽपि गोदानं पापनाशनम् ॥

एतानि चातुर्मास्यव्रतानि ।

एतेषां च व्रतानां च महत्सूद्यापनेषु यः ।  
 प्रगृह्णाति द्विजोलोभात् तत्तद्दानं सुखामये ॥  
 तत्तद्दानफलं भोक्तुं यमलोकमवाप्नुयात् ।  
 एतत्पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमुदाहृतम् ॥  
 गवां प्रतिग्रहे चान्द्रं सुवर्णं तप्तमेव च ।  
 प्राजापत्यं तथा वस्त्रं अन्ने गव्यं पिबेत्ततः ॥

(१) निर्जिते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) व्रती इति लेखितपुस्तकपाठः ।



कार्तिकमासव्रतोद्यापने प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । ८५३

एतेषां द्रव्यब्राहुल्ये पूर्णं प्रायश्चित्तम् यदुक्तं, अल्पे तद्वर्द्धं, अत्यन्ताल्पे पादः, अतोन्मूलं वा ग्राह्यम् ।

इति हेमाद्रौ चातुर्मास्यव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

## अथ कार्तिकमासव्रतोद्यापनं प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे—

नवलक्षार्चनं शम्भोर्विष्णोर्वा शङ्करस्य च ।  
'पूर्णमायां वृषत्यागो नक्तव्रतमनुत्तमम् ॥  
सर्वशाकपरित्यागो दम्पत्योर्भोजनं तथा ।  
आकाशदीपं द्वारे च शिखरे दीपमेव च ॥  
अखण्डदीपं कार्तिक्यां धात्रीपूजनमेव च ।  
धात्रीदानं तथा कुर्यात् न तूलस्पर्शनं तथा<sup>१</sup> ॥  
प्रातःस्नानं मासपूर्णं शिवविष्णोः प्रपूजनम् ।  
ताम्बूलदानं कार्तिक्यां फलदानं महाफलम् ॥  
पुराणपठनञ्चैव पुराणश्रवणं तथा ।  
वेदपारायणञ्चैव धर्मशास्त्रं तथैव च ॥

(१) तत् पौर्णम्यां इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विप्रैस्तूलस्पर्शनमेव च इति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्रत्यहं सायमाकाशदर्शनं पापनाशनम् ।  
 पञ्चगव्याभिषेकश्च पञ्चगव्यस्य भक्षणम् ॥  
 स्मरणं कीर्तनं शम्भोर्हरेर्नामसहस्रकम् ।  
 प्रत्यहं शाकदानञ्च ब्रह्मपत्रेषु भोजनम् ॥  
 पाषण्डजनसंसर्गं पाषण्डालापनं तथा ।  
 वर्जयेत् सर्वदा विप्रः कार्तिके तु विशेषतः ॥  
 परान्नं परशय्याञ्च परवस्त्रं पराङ्गनाम् ।  
 सर्वदा वर्जयेत् प्राज्ञः कार्तिके तु विशेषतः ॥  
 कार्तिके वर्जयेत् क्षौद्रं मृषावादं विवर्जयेत् ।  
 सालग्रामशिलावारिस्नानं पापप्रणाशनम् ॥  
 हविष्पार्शी<sup>१</sup> पत्रभोजी चान्द्रायणफलं लभेत् ।  
 अव्रतेन<sup>२</sup> क्षिपेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियम् ॥  
 पुमान् मोहपरीतात्मा सूकरेष्वभिजायते ।  
 न कार्तिकसमोमासो न देवः केशवात्परः ॥  
 तावुभौ यदि सन्त्यज्य वर्त्तते स तु पातकी<sup>३</sup> ।  
 गोप्रीचन्दनदानञ्च तुलसीदानमेव च ।  
 प्रत्यहं धान्यदानञ्च शुचित्वं कार्तिके<sup>४</sup> सदा ॥

(१) हविष्पात्रमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) जपेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अन्यत्र पापधीरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) मुदा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एतानि कार्तिकव्रतानि ।

उद्यापनेषु सर्वेषां व्रतानां पुण्यकर्म्मसु ।

प्रतिगृह्य द्विजोयस्तु वर्त्तयेदात्मपोषणम् ॥

महादोषमवाप्नोति यमलोके भयङ्करे ।

प्रायश्चित्तमिदं तस्य दर्शितं विप्रपुङ्गवैः ॥

दीपप्रतिग्रहे चान्द्रं पराकं स्वर्णसंग्रहे ।

वस्त्रे कांस्ये तथा ताम्ब्रे प्राजापत्यं विशोधनम् ।

अन्ने जले च मृष्टे च तदङ्गं परिकीर्तितम् ॥

द्रव्याधिक्येऽल्पे वा पूर्ववत्तारतम्येन द्रष्टव्यम् ।

इति हेमाद्रौ कार्तिकमासव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ माघमासव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

तिलहोमश्च तद्दानं तत्स्नानं तर्पणं तथा ।

तद्भुक्तिश्च तथाऽऽदानं षड्विधं पापनाशनम् ॥

मार्त्तण्डोदयवेलायां स्नानं सर्वाघनाशनम् ।

पुराणपठनञ्चैव पुराणश्रवणं तथा ॥



वदरीफलदानञ्च तिलपिष्टं महाफलम् ।  
 तथाऽन्यफलदानञ्च पूजनं शङ्करे हरो ॥  
 सालग्रामशिलातीर्थं प्रत्यहं धारयेन्मुदा ।  
 सूर्यार्घ्यचन्दनञ्चैव तुलसीपूजनं तथा ॥  
 सालग्रामशिलादानं मासमेकं निरन्तरम् ।  
 चन्दनं विप्रमुख्यानां तथा ब्राह्मणभोजनम् ॥  
 गोदानं प्रत्यहं विष्णोः प्रीतये पापनाशनम् ।  
 तिलतण्डुलदानञ्च गुडदानमतःपरम् ॥  
 सहस्रनामपठनं शिवविष्णोर्निरन्तरम् ।  
 वस्त्रदानं तथा माघे जम्बीरफलमेव च ॥  
 गोपीचन्दनदानञ्च स्नातृणां गन्धपूजनम् ।  
 पुस्तकस्य प्रदानञ्च पुस्तकाराधनं तथा ॥  
 विदुषः पूजनं पापनाशनं पुण्यदायकम् ।  
 चूतपल्लवपुष्पैश्च पूजनं प्रत्यहं हरेः ॥  
 सुवासिनीस्तथा माघे भोजयेद्विधिवन्मुदा ।  
 अखण्डदीपदानञ्च स्वगृहे देवमन्त्रिधौ ॥  
 देवालये च राजेन्द्र दीपदानं सुबुद्धिदम् ।  
 चूतकोशप्रदानञ्च तथा लवणमेव च ॥  
 ताम्बूलदानं विप्राणामेकं वा बहुशोऽपि वा ।  
 मिष्टान्नदानं विप्राणां द्वयोरेकस्य वाऽपि च<sup>१</sup> ॥



तथा च किंशुकैः पुष्पैरुभयोरेव पूजनम् ।

किंशुकैर्लिङ्गपूजा च तथा दानं विशेषतः ॥

इति माघमासव्रतानि ।

व्रतेश्वेतेषु सर्वेषु प्रतिगृह्णाति यो द्विजः<sup>१</sup> ।

स गच्छेद् यमसान्निध्यं महाभीतिप्रदं नृणाम् ॥

प्रायश्चित्तमिदं राजन् सर्वपापप्रणाशनम् ।

धेनुप्रतिग्रहे विप्रस्तप्तकृच्छ्रत्रयं चरेत् ॥

सुवर्णप्रतिमाग्राही प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।

ताम्रकांस्यतिलानाञ्च विकारे कृच्छ्रमाचरेत् ॥

अन्ने जले च वस्त्रे च तदङ्गं कृच्छ्रमाचरेत् ।

एतेषां व्रतानामुद्यापनेषु प्रतिग्रहे प्रधानत्यागमाधनाभावे प्राय-  
श्चित्तं वेदितव्यं नोचेत्प्रायश्चित्तमेव नास्ति ।

इति हेमाद्रौ माघमासव्रतोद्यापनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

---

(१) विप्रो यः प्रतिगृह्य च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथ वैशाखमासव्रतप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

प्रवालशय्या पुष्पाणामुशीराणां सुरेश्वर ।  
पुष्पप्रवालव्यजनं व्यजनं वेणुसम्भवम् ॥  
कुत्रं पुष्पं तथा गन्धं पादुकाद्वयमेव वा ।  
दध्यन्नं फलसंयुक्तं तथा चैव गुडोदकम् ॥  
तथैव चम्पकाकोषमुशीरं शर्करां तथा ।  
लवङ्गमेलकञ्चैव जातीकुसुममेव च ॥  
कर्पूरशीतलं तोयं सैकतं जलसेकजम् ।  
हिमाम्बुदानं पुष्पाणां द्विपटीं कुसुमाचिताम् ॥  
तक्रं जम्बीरनीरेण युक्तं लवणसंयुतम् ।  
प्रातःस्नानञ्च वैशाखे तथा माधवपूजनम् ॥  
वसन्तमाधवप्रीत्यै दद्युरेतानि पार्थिव ।  
एतेषां दानमात्रेण नरोयातीन्द्रसम्पदम् ॥  
ततस्तु भुवमासाद्य मण्डलाधिपतिर्भवेत् ।  
वैशाखे प्रत्यहं कृत्वा द्वादश्यां पूर्णिमादिने ॥  
सर्वपापविमुक्त्यर्थं कुर्याद्दानञ्च पर्वसु ।  
व्रतस्योद्यापनं कुर्याद् व्रतस्य परिपूर्तये ॥  
उद्यापनेषु सर्वेषु यः कुर्यात् तत्प्रतिग्रहम् ।  
स सर्वनरकान् भुक्त्वा पिकोभूयात्ततः परम् ॥



धेनुप्रतिग्रहे राजन् तत्प्रधानं परित्यजेत् ।

कुर्याच्चान्द्रायणं सम्यक् शय्यायां द्विगुणं स्मृतम् ॥

पुष्पप्रवालोदरशय्यास्वेवम् ।

सुवर्णे राजते धान्ये पूर्व्ववत्सुसमाहितः ।

ततोऽर्द्धार्द्धप्रमाणेन प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥

प्रायश्चित्तमकृत्वा तु न शुद्धः पूर्व्वजोऽन्यतः ।

तस्मात् प्रतिग्रहस्त्याज्यः सात्विकेषु व्रतेष्वपि ॥

इति हेमाद्रौ वैशाखमासव्रतप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् ।

अथ नानाविधफलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

कदली मातुलङ्गञ्च नारिकेलफलं तथा ।

खर्जूरं पनसञ्चैव द्राक्षाफलमनुत्तमम् ॥

चूतं कपिलं जम्बीरं जम्बूदाडिममेव च ।

क्षीरपूर्वं फलञ्चैव एरण्डकफलं तथा ॥

फलानि यानि लोकेऽस्मिन् नाना नामानि पार्थिव ।

यो दद्यात्तानि सर्वाणि राशीकृत्य फलाप्तये ॥



ब्रह्महत्यादिपापानां नाशनार्थं विशाम्यते<sup>१</sup> ।  
 वस्त्रेण वेष्टितं राजन् दक्षिणाभिर्यथेच्छया ॥  
 हेमन्ते शैश्वरे वाऽपि सर्वपापैः प्रमुच्यते ।  
 तत्फलानि द्विजोयसु प्रतिगृह्य धनातुरः ॥  
 आधानं वा तदा कार्यं इयं कुर्याद्विशेषतः<sup>२</sup> ।  
 ततोदोषात् प्रमुच्येत नाऽन्यथा पापमश्रुते ॥  
 तत्कर्मफलनाशञ्च फलदानं महत्तरम् ।  
 तस्मात्पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमुदाहृतम् ॥  
 राशीभूतं फलं दिव्यं गृहीत्वा द्विजनायकः ।  
 अकृत्वा निष्कृतिं तस्य आधानं धर्मसाधनम् ॥  
 प्रधानं सम्परित्यज्य विप्रानुज्ञामवाप्य च ।  
 केशानां वपनं कृत्वा षड्भ्यं कृच्छ्रमाचरेत् ॥  
 उपोष्य रजनीमिकां पञ्चगव्येन शुध्यति ।  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति फलबाहुल्यसंग्रहे ॥  
 केचिदिच्छन्ति संस्कारं नित्यकर्मविनाशनात् ।  
 यदाऽभूद्राशिसंग्राहः फलानां फलनाशनः ॥  
 नित्यकर्माणि नश्यन्ति तदा फलसुखेच्छया ।  
 ब्रह्मोपदेशः कर्तव्योगायत्रीदानमेव च ॥

एतदल्पफलप्रतिग्रहविषये न, किन्तु राशीकृतनानाफलप्रतिग्रह-  
 कर्तुः, ब्रह्महत्यादिपापविनाशनार्थं दानं, तस्य पापान्यशेषाणि

(१) द्विजर्षभ इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विशीर्यत इति लेखितपुस्तकपाठः ।



ब्राह्मणमाविशन्ति ततः पुनः संस्कारः प्रायश्चित्तबाहुल्यं च, एक-  
द्रव्यप्रतिग्रहे त्वेवं प्राजापत्यकृच्छ्रमात्रं राशिप्रतिग्रहे प्रतिपदोक्त-  
प्रायश्चित्ताद्यसम्भवेऽप्युभयमनुष्ठेयम् ।

इति हेमाद्रौ राशीकृतनानाफलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ मकरसंक्रमणव्रतेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे—

सुह्रदीपं तिलैर्दीपं<sup>१</sup> सधान्यं माषदीपकम् ।

तथाच लावणं दीपं महादीपमनन्तरम् ॥

शृङ्गिवेरं तथा कन्दं हरिद्रादानमेव च ।

अन्यानि सन्ति दानानि कानिचित् प्रथितानि च ॥

एषु व्रतेषु पूर्णेषु व्रतोद्यापनमाचरेत् ।

मोक्षदीपं महापुण्यं नरकोत्तारणं नृणाम् ॥

दीपावृते यथा राजन् परिपाका भवन्त्यधः ।

तावत्सधान्यमाषाणां<sup>२</sup> दानं दद्यात् द्विजातये ॥

(१) सुह्रदीपतिलानाञ्च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) माषाणि इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पारणां तत्र कुर्वीत व्रती व्रतफलाप्तये ।  
 तत्पात्रं यो द्विजोमोहा<sup>१</sup>द्रव्यधान्यसमन्वितम् ॥  
 उद्यापने प्रगृह्णीयाद् इह<sup>२</sup> लोके सुखाप्तये ।  
 तस्यैव यमलोकः स्याद् यावदाभूतसंप्रवम् ॥  
 दीपपात्राणि यावन्ति सवर्त्तीनि सधान्यकम् ।  
 उद्यापने तु तावान् स्याद् यमलोकश्च शाश्वतः ॥

लिङ्गपुराणे—

महादीपावसानेषु तत्पात्रं यो द्विजोवहेत् ।  
 तस्यैव यमलोकः स्यात् शाश्वतः पुण्यनाशनः ॥  
 महादीपफलं यावत् तावद्युगमहस्रकम् ।  
 यमलोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥

भविष्योत्तरं—

योद्विजोदेवतागारे महादीपव्रतेषु च ।  
 तत्पात्राणि प्रगृह्णीयाद् वृथा यागादिकं विना ॥  
 तस्यैव नरके वामो यावच्चन्द्रदिवाकरी ।  
 पश्चात्तापसमायुक्तः प्रायश्चित्तं करोम्यहम् ॥  
 इति सङ्कल्पा मनसा प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।  
 गोधूलिरजसा स्नायात् तटाकृत्वा ऽधमर्षणम् ॥  
 ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातस्तप्तकृच्छ्रचतुष्टयम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति चान्द्रायणमथाऽऽचरेत् ॥

(१) धृत्वा इति क्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) यदा मोहात् प्रतिगृह्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



कारणं विना स्वसतीत्यागिनः प्रायश्चित्तम् ।

८६३

मुद्गदीपतिलानाञ्च एकं तप्तं समाचरेत् ।  
तिलदीपे पराकः स्याल्लवणे चान्द्रभक्षणम् ।  
प्राजापत्यं धान्यदीपे पञ्चगव्यं समन्ततः ॥  
सर्वदीपप्रतिग्रहे पञ्चगव्यप्राशनं प्रायश्चित्तानन्तरं कर्त्तव्यम् ।

इति हेमाद्रौ मकरसंक्रमणे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

---

अथ कारणं विना स्वसतीत्यागिनः प्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

स्वसतीं यो द्विजोमोहात् त्यजेच्चेत्कारणं विना ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति नपुंसकभवादृते ॥

कूर्मपुराणे—

यस्य जेत्कुलजां साध्वीं लोकवार्त्तापरायणः ।  
तस्य वै' निष्कृतिर्नास्ति नपुंसकभवादृते ॥

सतीत्यागे हेतुमाह—

अप्रजां दशमे वर्षे स्त्रीप्रजां द्वादशे तथा ।  
मृतप्रजां पञ्चदशे सद्यस्त्वप्रियवादिनीम् ॥



अप्रियवादः साक्षात्, व्यभिचारः स्वदृष्टः । अप्रियाणि तु बहूनि—  
 प्रत्यहं निष्ठुरवचनं नाऽभ्युत्थानं न च पादप्रक्षालणादिकं सर्व्वदा  
 शठता दारिद्रानागमनिन्दादौर्मनस्यपूर्णे भर्त्तरि न प्रीतिः एव-  
 मप्रियवचनानि च, तेषु सत्सु न सतीत्यागः कलियुगात्, कलियुगे-  
 व्यभिचारः साक्षात् स्वयमेवदृष्टश्चेत् तदा त्याज्या । तदाऽह—  
 गौतमः—

स्वानुभूतं सुदृष्टश्चेत् प्रष्टव्यं न तु निग्रहः ।

न प्रमाणं लोकवार्त्ता जनवादोमृषा क्वचित् ॥

इति हेमाद्रौ कारणं विना स्वसतीत्यागप्रायश्चित्तम् ।

अतो वार्त्ता श्रवणमात्रेण न त्याज्या ब्रूया त्यागे  
 प्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयः,—

दारव्यतिक्रमी लोके निष्कारणतया द्विजः ।

खराजिनं वहिलोम धृत्वा भिक्षाटनं चरेत् ॥

दारसंत्यागिनो भिक्षामिति वार्त्तां वदन् सदा ।

सप्तागाराणि भिक्षार्थं पर्य्यटित्तदुत्तरयम् ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा रघुनन्दन ।



वार्त्ताश्रवणमात्रेण न त्याज्या वृथात्यागं प्रायश्चित्तम् । ८६५

भर्तृसंत्यागेन महापातकेन विना स्त्रीणामप्येवं प्रायश्चित्तं  
प्रणमासात्ततः शुद्धिमवाप्नोति । महापातकोपेतस्तु भर्ता त्याज्यएव  
नाऽन्यथा<sup>१</sup> तदाह,—

भागवते,—

दुर्वृत्तो वा सुवृत्तो वा रोगी शून्योऽधनोऽपि वा ।

स्त्रीभिः पतिर्न सन्त्याज्यो लोकेऽप्युभिरपातकी ॥

पातकं ब्रह्महत्यादिकं, व्याभिचारादिदोषान्<sup>२</sup> दृष्ट्वा तु न  
त्याज्यः तदाह,—

आपस्तम्बः,—

दारपरित्यागी खराजिनं वह्निर्लोमं परिधाय दारव्यति-  
क्रमिणे भिक्षामिति सप्तागाराणि चरेत् । सा वृत्तिः प्रणमामान्  
स्त्रियाश्च भर्तृव्यतिक्रमे कृच्छ्रद्वादशरात्राभ्यामस्तावत्कालमिति  
अतो निष्कारणात् पत्नीत्यागो दोषहेतुः ।

इति हेमाद्रौ वार्त्ताश्रवणमात्रेण न त्याज्या वृथात्यागं  
प्रायश्चित्तम् ।

---

(१) नाऽन्यत्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गुणान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथाऽश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

मार्कण्डेयपुराणे,—

सोमसूर्यग्रहे वाऽपि व्यतीपाते च वैधृतौ ।  
संक्रमे विषुवे चैव मन्वादिषु युगादिषु ॥  
अश्वप्रतिग्रहे राजन् निष्कारणतया द्विजः ।  
यमलोकमुपागम्य भुक्त्वा तत्रैव वेदनाः ॥  
पुनर्भुवमुपागम्य पुंस्त्व'मुक्तो हरिर्भवेत् ।

लिङ्गपुराणे,—

अश्वप्रतिग्रहे विप्रः पुण्यकालेषु पर्वसु ।  
कारणेन विना राम यमलोकमुपागतः ॥  
पश्चाद् भवति भूलोके मण्डुकः पुच्छमंयुतः ।  
स चेद्विक्रयमापन्नः पातकान्न विमुच्यते ॥

अश्वविक्रये दोषमाह

कुर्मपुराणे—

मेरुमन्दरपापानि सुबहुनि महान्ति च ।  
रुद्रजापी हरत्तानि न कन्याह्वयविक्रयी ॥  
धृत्वाऽश्वं विक्रयेद्यस्तु वृथाभोगप्सया नृप ।  
उभयोः सम्भवे तात षडङ्गं कृच्छमाचरेत् ॥  
प्रतिग्रहे तदङ्गं स्याद् विक्रये पूर्णमाचरेत् ।



गारुडपुराणे—

पापानि सन्ति यानीह तावन्ति भुवि पार्थिव ।  
 रुद्रयार्पी हरेत्तानि न कन्याहयविक्रयी ॥  
 वृथाऽश्वं प्रतिगृह्याऽऽदौ विक्रीणाति द्विजो यदि<sup>१</sup> ।  
 तयोः पापविशुद्ध्यर्थं षड्वदं कच्छमाचरेत् ॥  
 नो चेत्तद्वदं कुर्वीत सम्भवे पूर्णमाचरेत् ।  
 अश्वविक्रयिणः पापं देहमावृत्य तिष्ठति ॥  
 प्रावश्चित्तविशुद्धात्मा तत्पापान्मुच्यते ध्रुवम्<sup>२</sup> ।

इति हेमाद्रौ अश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ महिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

लिङ्गपुराणे—

महिषीं यस्तु गृह्णाति<sup>३</sup> कुटुम्बभरणाय वै ।  
 पुण्यकालेषु संक्रान्तौ व्यतीपाते च वैधृतौ ॥

(१) द्विजो विक्रीय तं पुनः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मुच्यतेऽधुना इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) यो विप्रो महिषीं धृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



स याति नरकं घोरं कालसूत्रं सुटारुणम् ।

पश्चाद्भवति पापात्मा वायमः कृष्णवर्णवान् ॥

गारुडपुराणे—

महिषीं यस्तु गृह्णाति द्विजोमहति मङ्गमे ।

स याति नरकं घोरमनुभूय महद्भयम् ॥

पश्चाद्वाञ्छो भवेत् पापी क्षीरलीभात् प्रतिग्रहे ।

तस्मादेतत् परित्याज्यं महिषीग्रहणं द्विजैः ॥

प्रायश्चित्तेन पृतात्मा तरेद्दोषमिमं जनः ।

तत्प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमाह—

सौवर्णमहिषीमात्मभोगार्थं प्रतिगृह्य च ।

तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं पराकं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

विक्रये द्विगुणं कृत्वा तस्मात् पापात् प्रमुच्यते ।

प्रञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् तत्तन्मन्त्रपुरःसरम् ॥

इति हेमाद्रौ महिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ सौम्यधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

धेनुं यः <sup>१</sup>प्रतिगृह्णाति निमित्तैर्बहुभिर्विना ।  
पुण्यकाले पुण्यतीर्थे वस्त्रादिभिरलङ्घिताम् ॥  
मवत्सां दोहसंयुक्तां मुक्ताहारोपशोभिताम् ।  
ताम्रपृष्ठीं स्वर्णशृङ्गीं स्वर्णघण्टोपशोभिताम् ॥  
सुभूषां साधुवृत्ताञ्च धेनुं रात्रः सुखामये ।  
महापापफलं भुक्त्वा नरकायोपपद्यते ॥  
तस्माद्धेनुस्तु न ग्राह्या द्विजैरध्यात्मवेदिभिः ।

लिङ्गपुराणे,—

पुण्यकालेषु यो धेनुं समम्यर्च्य द्विजातये ।  
दद्याद्दीश्वरतुल्यार्थं स वै नारायणः स्मृतः ॥  
धेनवो ब्रह्मणा सृष्टा यज्ञार्थे यागसाधनाः ।  
महापातकहारिण्यः पुण्यकर्मफलप्रदाः ॥  
विप्राधानाः मदा सर्वा धेनवोलोकपूजिताः ।  
ताः <sup>२</sup>प्रगृह्णाति योविप्रो द्रव्यार्थी पापसंग्रही ॥  
नरके नियतिस्तस्य धेनुरोमाणि सन्ति हि ।

अतः प्रायश्चित्तमाह—

१) पूर्वजो धृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) प्रगृह्य द्विजो यस्तु इति लेखितपुस्तकपाठः ।



नागरखण्डे —

धेनुप्रतिग्रहीता यः पुण्यकालेषु पर्वसु ।

होमार्थमभिषेकार्थं न तेन सह दोषभाक् ॥

उभयोरप्यभावे च प्राजापत्यत्रयं चरेत् ।

उभयोर्यदि संप्राप्तिः पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥

ततः शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा<sup>१</sup> रघुनन्दन ।

उभयमुखीधेनुप्रतिग्रहवत् दुष्टप्रतिग्रहप्रायश्चित्तमुक्तं अन्यत्र  
च प्रायश्चित्तबाहुल्यं दोषाधिक्यात् ।

इति हेमाद्रौ सौम्यधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ सन्यासिनः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

स्कन्दपुराणे नागरखण्डे —

सर्वसङ्गविहीनस्य धर्मार्थत्यागिनोयते ।

परब्रह्मणि मक्तस्य निस्पृहस्येह वस्तुषु ॥

तस्य प्रतिग्रहं यस्तु द्विजोलीभपरायणः ।

<sup>२</sup>कुर्यात् तस्माद्वाऽप्याजीवेत् स वृथा ब्राह्मणः स्मृतः ॥

(१) अन्यत्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



महाराजविजये—

परब्रह्मणि निष्ठस्य सर्व्ववस्तुष्वसङ्गिनः ।  
 सर्व्वसङ्गविहीनस्य धर्ममार्थत्यागिनोयते ॥  
 शुश्रूषयाऽपि राजेन्द्र सुवार्त्ताभिर्द्विजोयति ।  
 अन्नमात्रं 'प्रगृह्णाति न तस्येह परा गतिः ।  
 प्रतिगृह्य यदा जीवेत् स्याद् वृथा जन्म तस्य हि ॥

महाभारते—

अन्नं वा शाकमात्रं वा रूपकं वस्त्रमेव वा ।  
 प्रगृह्णाति द्विजोयस्तु स पापी नरकं व्रजेत् ॥  
 तस्य दोषस्य नाशार्थं प्राजापत्यं तु रूप्यके ।  
 अतः परं तु चान्द्रं स्याद् अन्नमात्रे ह्युपोषणम् ।  
 परेद्युः पञ्चगव्यञ्च पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

स्त्रीणामप्येवम्—

इति हेमाद्रौ मन्त्रासिनः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ पतितस्य यतेः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

स्नानादिनित्यकर्माणि ब्रह्मविद्यामथापि वा ।  
दण्डादीन् वा परित्यज्य प्रवर्त्तेत यदा यतिः ॥  
नानागृहेषु भिक्षान्नव्यवहारिषु वत्सलः ।  
ग्रामार्थं शिष्यरक्षार्थं धनार्जनपरायणः ॥  
परिव्राट् पतितः स स्यात् न तं सम्भाषयेत् क्वचित् ।  
नमस्कारं न कुर्वीत यदि कुर्वीत् स पातकी ॥

गौतमः—

दण्डहीनो वृथा दण्डी धृत्वा काषायमात्रकम् ।  
पत्तने वर्त्तयन् पापी व्यवहारपुरःसरः ॥  
शिष्यसम्पादनार्थाय धनार्जनपरायणः ।  
प्रणवं सम्परित्यज्य क्लृप्तोपानहधृग्यतिः ॥  
स विप्रैर्न नमस्कृत्यः न भिक्षापात्रतां व्रजेत्<sup>१</sup> ।  
मायावी स तु दुष्टात्मा नववेषोवृथा यतिः ॥

पराशरः—

अग्रदानं गृहस्थाय ताम्बूलं ब्रह्मचारिणे ।  
यतये काञ्चनं दत्त्वा तद्दाता नरकं व्रजेत् ॥

(१) परित्यज्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) न भिक्षादानपात्रवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



सुरापूरितभाण्डश्च पटहश्चर्मपूरितः ।  
 कर्महीनस्तु सन्यासी त्रयस्त्वेते वृथा स्मृताः<sup>१</sup> ॥  
 एकरात्रं यतिस्त्यक्त्वा स्वधर्मान् वर्त्तयेद्यदि ।  
 तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति इहलोके परत्र च ॥  
 तस्मात् यतेर्द्विजोयस्तु प्रतिगृह्य धनादिकम् !  
 जीवेद्यदिह पापात्मा चान्द्रं तस्य विशुद्धये ॥  
 द्रव्यप्रतिग्रहे चान्द्रं कायं वाऽन्यस्य संग्रहे ॥  
 ज्ञेयप्रतिग्रहे तात महाचान्द्रमुदीरितम् ।  
 वस्त्रादिसंग्रहे विप्रोमहासान्तपन्नं चरेत् ॥

स्त्रीणामेवम्—

इति हेमाद्रौ पतितयतिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

अथ मठपतेः सन्यासिनः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

सर्वसङ्गपरित्यागी यतिर्यदि मठाधिपः ।  
 तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति चाण्डालाज्जनगर्हितात् ॥



मार्कण्डेयपुराणे—

यति यंस्तु महाराज सर्व्वसङ्गापरिग्रहः ।

भोगासक्तोयदालोके आधिपत्यं करोति च ॥

तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति यमलोकात् मुदारुणात् ।

तदन्ते भुवमासाद्य दीवाकीर्त्यो भवेन्महान् ॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमतामिति गीतावाक्यस्य  
माऽत्र विरोधः शङ्क्यः, कुले भवति धीमतामिति तु योगभ्रष्टस्य  
उक्तं मठपतेर्येतेश्चाण्डालजन्मैव । तदाह—

अङ्गिराः—

सर्व्वसङ्गविहीनस्य यतं भवति माठकम् ।

तस्य वै जन्मनास्तोह चण्डालात् कुलगर्हितात् ॥

तस्माद् यतेर्द्विजो यस्तु प्रतिग्रहपरायणः ।

तस्यैव निष्कृतिरियं षड्विधं विधिपूर्व्वकम् ॥

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नाऽन्यथा शुद्धिरस्ति हि ।

स्त्रीणामप्येवम् । जैत्रवस्त्रादिमंग्रहे पूर्व्ववत् ।

इति हेमाद्रौ मठाधिपतिमन्यासिनः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।



अथ पापपुरुषस्य प्रतिग्रहप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

मनुजानां नाभिरन्धाद् अधोभागे षडङ्गुले ।  
आश्रित्य तत्र पापीयान् पुरुषो वर्त्तते सदा ॥

मार्कण्डेयः—

नृणां कुक्षेरधोभागे नाभिदेशे षडङ्गुले ।  
पापाख्यः पुरुषः सम्बन्ध् आश्रित्य हृदि वर्त्तते<sup>१</sup> ॥

गौतमः—

नृणां नाभेरधोभागे पापपुरुषः सदा वसन् ।  
पापानि वर्द्धयन् धर्मं भक्षयन् सर्व्वमङ्गलम् ॥  
तस्यैव नाशकरणं दानं दद्यात् सुखामये ।  
तद्दानं ब्राह्मणो धृत्वा तदा यायात् पिशाचताम् ॥

मरीचिः—

पापपुरुषं द्विजो धृत्वा तदा भूयात् पिशाचकः<sup>२</sup> ।  
तद्दोषपरिहारार्थं ततः स्नात्वा यथाविधि ॥  
नाभिमात्रजले स्थित्वा पिधायाऽऽर्द्धेण वाससा ।  
पुरुषमूक्तं जपेत् पश्चात् यदा मन्दायते रविः ॥

---

(१) वर्द्धयन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पिशाचवान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



धृत्वा वै तावतीं संख्यां मनसा प्रत्यहं मुदा ।  
 वन्याहारं तथा कुर्यात् फलाहारमथापि वा ॥  
 स्वपिहिवममीपि तु नारायणमनुस्मरन् ।  
 परित्युः पूर्व्ववत्कृत्वा मासमात्रेण शुध्यति ॥  
 अयुतं जपसंख्या स्यात् पुनः संस्कारतः शुचिः ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् पापादस्मात् प्रमुच्यते ॥

इति हेमाद्रौ पापपुरुषप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

### अथ पतितप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

पतितस्तु द्विधाप्रोक्तो महापातकमङ्गवान् ।  
 नित्यकर्मपरित्यागी द्वितीयः सङ्गिरुच्यते ॥

पूर्व्वस्य महापातकप्रायश्चित्तमुपदिष्टं द्वितीयस्य तु विशेषमाह ।

देवलः—

नित्यकर्मपरित्यागान् नानायोगिनिनिवेशनात् ।  
 गीतवाद्यानुरागाच्च कुण्डगोलकमङ्गमात् ॥  
 देवद्विजविशेषाच्च नानामन्त्रादिभोजनात् ।  
 चरणायुधयुद्धेन मन्त्रयुद्धेन वारतः ॥



द्यूतासक्तः सदाकोपी हास्यवीणाविनोदवान् ।

गन्धताम्बूलवस्त्राद्यै देवादीनामनर्पितैः ॥

विटगायकसंयुक्तः पतितोऽसौ<sup>१</sup> द्वितीयकः ।

महापातकसंसर्गान् महापतित उच्यते ॥

तस्य महापतितस्य मरणान्ता निष्कृतिः कुत्रचित्तु दयया मुनिभि-  
र्हयुतगोदानैर्निष्कृतिरुक्ता कर्मभ्रष्टस्य पतितस्य तु प्रायश्चित्त-  
माह ।

मरीचिः—

पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तः पतितः कर्महीनवान् ।

पश्चात्तापसमायुक्तः<sup>२</sup> कुर्यात् कायं विशुद्धये ॥

त्रिदिने तु पराकः स्यात् पक्षे तप्तं विधीयते ।

मासे चान्द्रं ततः पश्चाद् वर्षादूर्ध्वं न निष्कृतिः ॥

असौ पर्वतइत्युक्तः सर्वथा वर्ण्यते जनैः ।

कर्मभ्रंशस्य नास्तीह वर्षादूर्ध्वं सताङ्गतिः ॥

यत्र यत्र धर्मशास्त्रेषु पतितप्रायश्चित्तमित्युक्तं तत्रापीदमेव योज-  
नीयं पञ्चमहापातकसंसर्गी महापतितो मरणान्तप्रायश्चित्ती  
अयन्तु दोषबाहुल्यादपि अनुपदोक्तं प्रायश्चित्तं कृत्वा शुद्धि-  
माप्नोति ।

इति हेमाद्रौ कर्मभ्रंशपतितस्य प्रायश्चित्तम् ।

(१) पतितो यो द्वितीयक इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्राजापत्यमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अथेदानीं रहस्यकृतब्रह्महत्याप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

‘सयाति नरकं घोरं मत्सराद्द्रव्यलोभतः ।

यो विप्रो ब्राह्मणं हन्ति रज्जुदण्डादिपीडनैः ॥

मार्कण्डेयः—

अरण्ये स्वगृहे यत्नात् कण्ठनिष्पीडनादिभिः ।

हन्याद् विप्रं द्विजोयस्तु <sup>१</sup>म महानरकं व्रजेत् ॥

रहसि कृतं पापं दशधा च चतुर्धा च प्रकटितं भवति । तदाह—

मनुः—

आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च

द्यौर्भूमिरापो हृदयं मनश्च ।

अहश्च रात्रिश्च उभे च मन्थे

धर्मश्च जानन्ति नरस्य वृत्तम् ॥

तथाच श्रुतिः “भूतान्याक्रोशन् ब्रह्महन्निति अतो रहसि पापं न कारयेत्” ।

गालवः—

रहः पापं न कुर्वीत कर्मणा मनसा गिरा ।

यदि कुर्याद्विमोहेन प्रकाशाद् द्विगुणं भवेत् ॥

तस्यैवनिष्कृतिर्नास्ति जन्मभिर्बहुभिर्नृप ।

(१) अरण्ये स्वगृहे राजन् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) महान्तं इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

पूर्वजो रहसि स्थाने विप्रं हन्याद्वनातुरः ।  
 अथवा मत्सराक्रान्तस्तस्य नास्तीह निष्कृतिः ॥  
 ब्रह्महत्यासमं पापं द्विजानां नास्ति नारद ।  
 पापराड् ब्रह्महत्यैव यक्ष्मरोगो यथा रुजाम्<sup>१</sup> ॥  
 कच्छराजस्तु वेश्या स्यात् तुला स्यात् दानराट् तथा ।  
 अतोरहसि विप्रस्य न कुर्यात् हिंसनं बुधः ॥

पराशरः—

रहसि द्विजहत्या या सर्वेषां कुलनाशिनी ।  
 आत्यनश्च महत्पापं कलिपुण्यस्य नाशिनी ॥  
 उभयोर्लोकयोर्हन्ति सर्वपापविवर्द्धिनी ।

तत्प्रायश्चित्तमाह—

देवलः—

विप्रहत्यां रहः कृत्वा पश्चात्तापपरायणः ।  
 तटाकं वा क्रदं गत्वा प्रातः स्नानं समाचरेत् ॥  
 मनसा नित्यकर्माणि अर्घ्यदानं समन्वकम् ।  
 कृत्वा जलमुपागम्य कण्ठदध्नजले वसन् ॥  
 आर्द्रेण वाससाऽऽच्छाद्य मूर्ध्नि स्वेन पाणिना ।  
 प्राङ्मुखोदङ्मुखो वाऽपि जपन्नारायणात्मकम् ॥

सहस्रशीर्षमित्यनुवाकः ।



प्रत्यहं यावती संख्या मनसा तां निधाय वै ।  
 जपेदस्तं यदा भानुस्तावत् पर्यन्तमाचरेत् ॥  
 तत्तीरे च कुटीं कृत्वा नारायणपरायणः ।  
 प्रत्यहं कवलं भुञ्जन् नारायणनिवेदितम् ॥  
 स्वपेच्च स्थण्डिले तत्र शालग्रामसमीपतः ।  
 पुनः प्रभाते विमले पूर्ववन्नियमं चरेत् ॥  
 एवं ऋतुत्रयं कृत्वा पुनः संस्कारपूर्वकम् ।  
 शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र तन्मध्ये म्रियते शुचिः ॥  
 अन्यथा दोषमाप्नोति क्षयरोगी भवेद्भुवि ।  
 तस्य वै निष्कृतिर्नास्ति जन्मजन्मनि भूमिषु ॥

इति हेमाद्रौ रहस्यकृतब्रह्मवधप्रायश्चित्तम् ।

अथ रहस्यकृतसुरापानप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

रहसि ब्राह्मणः पीत्वा मद्यमेकादशं मृतः<sup>१</sup> ।  
 न तस्य पुनरावृत्तिर्यमलोकात् कदाचन ॥

(१) शिखरं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यदि इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



मरीचिः—

मद्यमेकादशं प्रोक्तं गौडीत्यादि 'महाभयम् ।  
तेषां मध्ये द्विजोमोहाद् रहस्येकं पिवेद्यदि ॥  
तस्येह निष्कृतिर्दृष्टा 'मरणान्ता न चाऽन्यथा ।  
रहस्येतानि मद्यानि घ्रात्वा पीत्वा पतेद्विजः ॥

पतेत् 'प्रायश्चित्ती भवेदिति —

महाभारते—

शृणु धर्मज यत्नेन मद्यं रहसि यः पिवेत् ।  
तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति मरणान्तं विना<sup>३</sup> नृप ! ॥

भविष्योत्तरे—

स्वगृहे पट्टणेऽरण्ये मद्यमेकादशं स्मृतम् ।  
तन्मध्ये ब्राह्मणो यस्तु रहस्येकं पिवेद्यदि ।  
सद्यः पतति दुष्टात्मा मरणान्तं न निष्कृतिः ॥

जावलिः—

गौडी माध्वी च पैष्टी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।  
तालजन्तिलजञ्चैव खार्ज्जूरं नारिकेलजम् ॥  
द्राक्षाजं पानसञ्चैव मैरेयं च लवङ्गजम् ।  
मद्यमेकादशं प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

(१) सहज्यं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) मरणान्तं इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) प्रायश्चित्ती भवेदिति पाठः क्रीतलेखितपुस्तकयोर्न दृष्टः ।

(४) नृणां इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



एतेषां यः पिवेदेकं रहसि द्विजनायकः ।  
 तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति मरणान्ताद्विना नृप ॥  
 कथञ्चिन्निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिः शास्त्रवर्त्मसु ।  
 अरण्ये निर्जने देशे स्नानं कृत्वा यथाविधि ॥  
 सन्ध्यादिनित्यकर्मणि पूर्ववन्मनसा चरेत् ।  
 नवं कुटीरमासाद्य स्वगृह्याऽग्नौ विधानतः ॥  
 कूष्माण्डैर्जुहुयादङ्गौ यावदस्तं गतो रविः ।  
 तावद्विरस्य तां होमसंख्यां मनसि धारयन् ॥  
 अब्रतघ्नीपयः पीत्वा स्वपेहेवममीपतः ।  
 ततः प्रातः समुत्थाय पूर्ववन्नियमं चरेत् ॥  
 एवं ऋतुत्रयं कृत्वा पुनः कर्म ततः परम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नोचेद्दोषोभवत्यथ ॥  
 अथवा राजदण्डेन 'मृतः शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 ऋतुत्रयेऽयुतकूष्माण्डहोमस्तदङ्गं गणहोमः ऋतुत्रयावसाने  
 पुनः संस्कारः, पञ्चगव्यञ्च पीत्वा शुद्धिमवाप्नोति ।

इति हेमाद्रौ रहस्यकृतसुरापानप्रायश्चित्तम् ।



अथ रहस्यकृतसुवर्णस्तेयप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

रहोमुषित्वा पारक्यं सुवर्णं मुनिपुङ्गव ! ।

राज्ञा शिक्षा प्रकर्त्तव्याऽऽमरणान्तं द्विजोत्तम ॥

मरीचिः—

योहरेद् रहसि स्वर्णं पारक्यं मुखजः सकृत् ।

तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति कुम्भीपाकादिना क्वचित् ॥

हारीतः—

पारक्यं रहसि स्वर्णं द्विजो धृत्वा पतत्तदा ।

न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्धर्ममस्तिषुभिः ॥

सुवर्णादिप्रमाणं तु सुवर्णस्तेयप्रकरणेऽभिहितम् ।

गानवः—

योहरेद् रहसि स्वर्णं द्विजो रौप्यमथाऽपि वा ।

तस्य वै निष्कृतिर्नाऽस्ति कुम्भीपाकनिमज्जनात् ॥

कथञ्चिन्निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्धर्मवत्सलैः ।

अरण्यं निर्जनं गत्वा तत्र स्नात्वा यथाविधि ॥

निर्माय पर्णशिविरं तत्र संस्थाप्य पावकम्<sup>१</sup> ।

अभिद्धिः प्रज्वलं कृत्वा साध्यथं परिकल्प्य च ॥

---

(१) भयङ्करादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) तत्र स्थाप्य ऊताशनमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



ऊर्ध्वाननो जपेन्मन्त्रं कृष्णस्य द्वादशाक्षरम् ।  
 प्रातरारभ्य मध्याह्ने जपमंख्या च यावती ।  
 तावतीं मनसि स्थाप्य तमग्निं धारयेद्बुधः ॥  
 तण्डुलैरल्पमात्रैश्च गोजलाक्तैः पचेत्तपो ।  
 पूर्वं निवेद्य देवाय पश्चादद्यात् स्वयं मुदा ॥  
 स्वर्पद्मेवसमीपे तु नारायणपरायणः ।  
 ततः प्रातः समुत्थाय पूर्ववन्नियमस्थितः ॥  
 जपेत्पूर्ववदासीनो हुताशनसमीपतः ।  
 एवं मासद्वयं कृत्वा नवलक्षजपं तथा ॥  
 पट्टगर्भविधानेन पुनः संस्कारमाचरेत् ।  
 पञ्चगव्यं पिवेत्पश्चात् शुद्धोभवितुमर्हति ॥  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति बहुभिस्तीर्थमज्जनैः ।  
 लोकसादृश्यकथनेन शुद्धोभवति द्विजः ॥  
 गङ्गा सेतुः प्रयागश्च गङ्गामागरमङ्गमः ।  
 गौतमी कृष्णवेणी च कावेरी च महानदी ॥  
 दर्शनात् स्वर्गदा नृणां स्नानान्मोक्षप्रदायिकाः ।  
 ता नद्योऽपि महापापकृतं विप्रमनिष्कृतिम् ॥  
 न पुनन्तीह राजेन्द्र सुगभाग्डमिवापगाः ।  
 रहः कृतं महत्पापं प्रायश्चित्तेन शुध्यति ॥



मा शुद्धिर्न जलैर्दानैर्महाप्रस्थानकैरपि ।

अतः रहः कृतस्य पापस्य प्रायश्चित्तमेव नाऽन्या निष्कृतिः ।

इति हेमाद्रौ रहस्यकृतसुवर्णस्तेयप्रायश्चित्तम् ।

अथ रहस्यकृतगुरुदारगमनप्रायश्चित्तमाह ।

देवलः—

योरहोजननीं गच्छेत्<sup>१</sup> तत्सपत्नीमथाऽपिवा ।

प्रजावतीं गुरोर्दारान् विप्रः कामातुरो यदि ॥

स्वमुष्कं रहसिच्छित्वा पूर्ववद्दक्षिणामुखः ।

गच्छन् मृत्वा विशुद्धः<sup>२</sup> स्याद् अन्यथा पतितोभवेत् ॥

महाभारते—

शृणु धर्मज वक्ष्यामि पापमेतन्महत्तरम् ।

योविप्रोरहमि स्थाने मातरं तत्सखीमपि ॥

गुरोः पत्नीं भ्रातृजायां गच्छेत् कामातुरः सकृत् ।

क्षित्वा स्वमुष्कं हस्तेन अमिना तीक्ष्णधारया ॥

१) गत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) अभृष्टिर्न लेखितपुस्तकपाठः ।



धृत्वाऽञ्जलीं निराहारोदक्षिणां दिशमन्वियात्<sup>१</sup> ।

यावताऽसूनयं जह्यात्तावच्छुद्धिमवाप्नुयात्<sup>२</sup> ॥

नाऽन्यथा स विशुद्धः स्याद् ब्रह्महेव वसन् द्विजः ।

गौतमः—

स्वमातरं रहोगत्वा पुत्रः कामातुरः सकृत् ।

तत्सपत्नीं गुरोर्दारान् भ्रातृपत्नीमथाऽपि वा ॥

क्षपाणेन स्वयं च्छित्वा मुष्कद्वयमशङ्कितः ।

निधाय स्वाञ्जलीं गोप्यं गच्छेद्यमदिशं शुभाम् ॥

यदा मृतो निराहारस्तदा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

प्रायश्चित्तमिदं तस्य मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥

अरण्यं निर्जनं गत्वा तत्र स्नात्वा विधानतः ।

कुटीरं पूर्व्ववत् कृत्वा तत्र मौनमुपाश्रितः ॥

यवैरञ्जलिमानैश्च पाचयेद् बृहतो घटान् ।

यवागूं तां पुनः पात्रे धृत्वाऽग्निं ज्वलयेत्<sup>३</sup> तथा ।

दारुमय्या मुचा धृत्वा जुह्यान्मन्त्रपूर्व्वकम् ॥

यवागूं राजन्यस्य व्रतम् । “क्रूरं च वै यवागूंः क्रूरणव” इति  
मन्त्रेण द्विमहस्त्रेण हुत्वा होमं समाप्य होमावशेषितां यवागूं  
स्वयं पिबेत् । तदाह—

(१) अन्वगादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यावता सूनयं विप्रस्तावच्छुद्धिमवाप्नुयते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) प्रज्वलेत्तथा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

रहोमातृगमः पक्त्वा यवैरञ्जलिपूरितैः ।  
 तद्यवागूं ब्रह्मत्पात्रे निधायऽग्निसमीपगः ॥  
 समिद्धिरग्निं प्रज्वालय सुचा पालाशमिश्रया ।  
 अवशिष्टां यवागूञ्च स्वयं पीत्वा स्वपेद्मती ॥  
 परित्युः प्रातरुत्थाय पूर्ववत्सर्व्वमाचरेत् ।  
 एवं मासद्वयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पातकी ।  
 नाऽन्यथा शुद्धिमाप्नोति मलमुष्टिर्यथा नृणाम् ॥

इति हेमाद्रौ रहस्यकृतगुरुदारगमनप्रायश्चित्तम् ।

अथ चान्द्रायणादिकृच्छ्रलक्षणमाह—

देवलः—

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्व्वङ्गनागमः ।  
 तत्संयोगश्च पञ्चैत महापातकमौरितम् ॥

एतेषां पञ्चकानां मरणान्तप्रायश्चित्तं, न कृच्छ्रादिकम् ।  
 गोवधो गुर्व्वधिन्नेपोभृतकाध्यापनादिकं—एतदुपपातकं कृच्छ्र-  
 चान्द्रायणादिभिः परिशोध्यम् ।



तिलानां धान्यराशीनां विक्रयस्त्वन्यवस्तुनाञ्च एतत्सङ्कलीकरणं  
कुच्छसाध्यम् ।

कन्यापहरणञ्चैव धेनुभूहरणादिकम् ।  
मलिनीकरणन्वेतत् कुच्छसाध्यं प्रयत्नतः ॥  
चाण्डालीगमनादीनि अपात्रीकरणानि च ।  
कुच्छैर्विशोधनीयानि विप्रैर्दोषपराङ्मुखैः ॥  
दुरन्नभोजनञ्चैव दुष्टभक्षणमेव च ।  
दुष्टशाकादिकञ्चैव जातिभ्रंशकरं महत् ॥  
एतदतिकुच्छसाध्यं तथा दुर्मरणादिकम् ।  
प्रकीर्णकं कुच्छसाध्यं गर्भाधानादिकर्मणाम् ॥

तत्कालातिक्रमे कुच्छैरेव विशोधनम् । तुलादिप्रतिग्रहीतृणां  
ब्रह्मराक्षसप्रदानं, कुच्छैः कुतश्चिन्निवारणञ्च तेषां कुच्छाणां  
लक्षणमाह—

मार्कण्डेयः—

यवमध्यश्च मन्दः स्याद् यतिकुच्छो महत्फलम् ।  
महच्चान्द्रमिति प्रोक्तं पञ्चधा तत् प्रकीर्तितम् ॥  
प्राजापत्यं तप्तकुच्छं पराकं यावकं तथा ।  
ततः सान्तपनं कुच्छं महामान्तपनं तथा ॥  
उदुम्बरञ्च पर्णञ्च फलकुच्छमतः परम् ।  
कुच्छं माहेश्वरञ्चैव ब्रह्मकुच्छं तथैव च ॥  
धान्यं स्वर्णमयं कुच्छं दश भेदाः प्रकीर्तिताः ।

तेषां स्वरूपमाह—



पराशरः —

यवमध्यस्य कृच्छ्रस्य स्वरूपं <sup>१</sup>प्रवदाम्यहम् ।  
यत्कृत्वा सर्वपापेभ्योमुच्यते मनुजोत्तमः ॥  
शुक्लप्रतिपदाऽऽरभ्य व्रती नियमपूर्वकम् ।  
प्रातःस्नात्वा यथावारं दन्तधावनपूर्वकम् ॥  
धीतवस्त्रं परीधाय नित्यकर्म समाप्य च ।  
जपेत् तावन्महामौनी यावन्मन्दायते रविः ॥  
तदा हरिं समाराध्य गन्धपुष्पादिभिः शुभैः ।  
मयूराण्डप्रमाणेन ग्रासं कृत्वा व्रती तथा ॥  
विष्णवे तं निवेद्याऽऽशु तं ग्रासं भक्षयेत् स्वयम् ।  
एकवारमग्न्यत्वात् द्विधा कृत्वैव भक्षयेत् ॥  
उत्तरापोशनं कृत्वा वह्निर्गत्वाऽथ वाग्यतः ।  
प्रक्षाल्य पाणी तोयेन गण्डूषैर्द्वादशात्मकैः ॥  
पादौ प्रक्षाल्य चाऽऽचम्य पुनर्गत्वा स्वमालयम् ।  
स्वयमेव पुनः कृत्वा शुद्धिं गोमयवारिभिः ॥  
पुनः प्रक्षाल्य पाणी च देवं नत्वाऽथ संविशेत् ।  
पाषण्डादिं न पश्येच्च न भाषितं कदाचन ॥  
सायं सन्ध्यामुपास्याऽथ <sup>२</sup>सायं होममथाऽऽचरेत् ।  
स्वपिच्च स्थण्डिले देवममौपि नियतो व्रती ॥

(१) प्रवदाम्यहमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सन्धाया इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) उपमित्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



ततः प्रातः समुत्थाय परेद्युः स्नानमाचरेत् ।  
 पूर्व्ववन्नियमं कृत्वा भक्षयेदेकवृद्धितः ॥  
 एकोत्तरवृद्ध्या राजन् वृद्ध्या प्रतिदिनं बुधः ।  
 भक्षयेत् कवलान् दिव्यान् यावता 'पूर्णिमादिनम् ॥  
 दशमे चैककवलान् भुक्त्वा तत्र व्रती क्रमात् ।  
 एकैकं क्वासयेद् ग्रासं क्षणपक्षे व्रती मुदा ॥  
 पूर्व्ववन्नियमात्कामी यदा मासः प्रवर्त्तते ।  
 तत्राऽपि भक्षयेदेकं हरिध्यानपरायणः ॥  
 व्रतान्ते गौः प्रदातव्या व्रतस्य परिपूर्त्तये ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चाद् यवमध्यमुदाहृतम् ॥  
 एतदाचरणेनैव ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।  
 इतराणि च पापानि नश्यन्तीति किमद्भुतम् ॥

मयूराण्डलक्षणमाह—

देवलः—

अल्पमात्रतृतीयांशैस्तण्डुलैः पाचयेद्विः ।  
 तावदन्नं मयूराण्डमिति सन्तोषदन्ति हि ॥  
 इदं चान्द्रायणं कृत्वा यवमध्यं सुपावनम् ।  
 ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुक्तो भवति तन्मन्त्रणात् ॥  
 यवमध्यमिदं चाष्टं कर्त्तुं यस्तदुपकुमेत् ।  
 तस्य पापानि नश्यन्ति किं पुनर्व्रतचारिणाम् ॥



विष्णुप्रियकरञ्चैतत्सर्वदुःखप्रणाशनम् ।

नारीणां विधवानाञ्च यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ॥

गृहस्थानां विशेषेण महापातकनाशनम् ।

वृद्धिर्क्षयौ चन्द्रस्य वर्तन्ते, चन्द्रस्य शुक्लपक्षे वृद्धिः कृष्णपक्षे क्षयः  
तन्नामधेयमेतद्यवमध्यकृच्छ्रम् ।

इति हेमाद्रौ यवमध्यचान्द्रायणप्रकारः ।

अथ पिपीलिकाचान्द्रायणलक्षणमाह ।

देवलः—

पूर्ववत् कृष्णपक्षस्य प्रतिपद्विसे व्रतौ ।

प्रातःस्नानं नदीतोये दन्तधावनपूर्वकम् ॥

कृत्वा धौतं परीधाय सन्ध्यावन्दनमाचरेत् ।

ब्रह्मयज्ञादिकान् कृत्वा देवपूजापरायणः ॥

पठेदुपनिषद्वाक्यं नारायणमथाऽपि वा ।

सहस्रनाम विष्णोर्वा गजेन्द्रस्यैव मोक्षणम् ॥

जपन्नारायणधिया यदा मन्दायते रविः ।

तदैव देवतापूजां पुरुषमूक्तविभ्रानतः ॥



कृत्वा पञ्चदश ग्रासान् निवेद्य परमात्मने ।  
 ततस्तान् भक्षयेत् पश्चान् मौनव्रतपरायणः ॥  
 प्रक्षाल्य पूर्व्ववत् पाणी गण्डूषादीन् प्रकल्पयेत् ।  
 स्वयमेव पुनः कृत्वा शुद्धिं गोमयवारिणा ॥  
 पुनः प्रक्षाल्य तं पाणिं देवं नत्वाऽथ संविशेत् ।  
 पाषण्डादीन् न पश्येच्च न भाषेत<sup>१</sup> कदाचन ॥  
 सायं सन्ध्यामुपास्याऽथ सायं होममथाऽऽचरेत् ।  
 स्वपिच्च स्थण्डिले देवसमीपे नियतोव्रती ॥  
 ततः प्रातः समुत्थाय परेद्युः स्नानमाचरेत् ।  
 पूर्व्ववन्नियमं कृत्वा भक्षयेदेककृत्वाऽसतः ॥  
 एककृत्स्वतया भजेत् कवलान्तानशेषतः ।  
 अमायां कवलैकाशी पूर्व्ववन्नियतोव्रती ॥  
 परेद्युः प्रतिपद्विषे कृत्वा नियममादरात् ।  
 ग्रासमेकं तदा भुक्त्वा पूर्व्ववद्विधिपूर्व्वकम् ॥  
 द्वितीयायां द्वयं भजेत् तृतीयायां त्रयं तथा ।  
 एकवृद्धितया राजन् यावता <sup>२</sup>पूर्णिमादिनम् ॥  
 तावत् पञ्चदशं भुक्त्वा व्रतशेषं समापयेत् ।  
 व्रतान्ते गौः प्रदातव्या व्रतस्य परिपूर्त्तये ॥

(१) सम्भाष्या इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पौर्णमी इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चान्नन्दमध्यमुदाहृतम् ।

एतदाचरणेनैव ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥

इतराणि च पापानि नश्यन्तीति किमद्भुतम् ।

अत्रापि ग्रासपरिमाणं मयूराण्डवदुक्तं पिपीलिकामध्यचान्द्रायण-  
फलं पूर्व्ववद् वेतितव्यम् । व्रतोपक्रमकाले महतामनुज्ञामवाप्य  
पुण्याहवाचनं कृत्वा सङ्कल्पकाले मन्त्रमेवमुदीरयेत् ।

देवलः—

गृहीतेऽस्मिन् व्रते देव पञ्चत्वं यदि मे भवेत् ।

तदा भवतु सम्पूर्णं त्वत्प्रसादात् जगद्गुरो ॥

इति सङ्कल्पमन्त्रः—

इति हेमाद्रौ पिपीलिकामध्यचान्द्रायणविधिः ।

अथ यतिचान्द्रायणस्वरूपमाह ।

देवलः—

यतिचान्द्रायणं वक्ष्ये सर्व्वपापप्रणाशनम् ।

सर्व्वपातित्यशमनमगम्यागमनाशनम् ॥

प्रतितपापानि—



आपस्तम्बः—

स्तेयमाभिषक्त्यं पुरुषवधोव्रह्मवधोगर्भशातनं मातुः पितुर्वा  
योनिस्त्वन्धे स्त्रीगमनं सुरापानं असंयोगिसंयोगोगुरुदारगमनं  
तत्सखीगमनं गमनञ्चान्येषां परतल्पानामिति पतनीयहेतवः ।  
अथाऽशुचिकराणि शूद्रस्त्रीणां गमनमनार्यस्त्रीणाञ्च, प्रतिषिद्धानां  
मांसभक्षणं शुनो मनुष्यस्य च, कुक्कुटशूकराणां ग्राम्याणां  
क्रव्यादानां च, मनुष्याणां मूत्रपुरीषप्राशनं शूद्रोच्छिष्टाशनमगमनं  
भार्याणां एतान्यपि पतनीयानीत्येके अथाऽधर्महेतवः ।

क्रोधोऽमर्षोरोषोलोभोमोहोदम्भोमृषोद्यमनल्पाशापग्विवादाव-  
सूया काममन्यू आनात्ममययोग इति एतेषां पूर्वोक्तानां पातित्य-  
दायिनामशुचिकराणां धर्मनाशहेतूनां यतिचान्द्रायणं विशोधनं  
तदेवाऽऽह ।

मनुः—

स्तेयादिसर्वपापानां तथैवाऽशौचिनामपि ।

धर्मनाशकराणाञ्च यतिचान्द्रायणं परम् ।

एतस्याऽऽचरणेनैव सर्वपापं प्रणश्यति ।

यतिचान्द्रायणं नाम यतिलोकप्रदायि यत् ॥

तत्स्वरूपमाह—

गौतमः—

मासादौ प्रतिपद्विसे प्रातर्विप्रो यथाविधि ।

कृत्वा मूत्रपुरीषे तु शौचं कुर्याद्यथाविधि ॥



दन्तान् संशोध्य यत्नेन अपामार्गस्य शाखया ।  
 स्नानं कृत्वा नदीतीये तटाके वा ऋदेऽपि वा ॥  
 कृत्वा चोद्गमनीयञ्च नित्यकर्म समापयेत् ।  
 श्रीपासनादिकं कृत्वा देवपूजामथाऽऽचरेत् ॥  
 सङ्कल्पमेवं कुर्वीत पूर्ववत्तमनुस्मरन् ।  
 तावद्व्यायेन्महाविष्णुं यावन्मन्दायते रविः ॥  
 कुक्कुटाण्डप्रमाणेन पञ्चैव कवलान् सुधीः ।  
 भक्षयेद्विष्णवे दत्त्वा पूर्ववत्क्षालयेत् करौ ॥  
 पादौ प्रक्षाल्य पश्चाच्च द्विराचम्य शुचिर्भवेत् ।  
 सायं सन्ध्यामुपासीत स्वपेन्नारायणाग्रतः ॥  
 ततः प्रातः समुत्थाय सर्व्वं पूर्व्ववदाचरेत् ।  
 तावतोपोषणं 'कुर्याद् यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ॥  
 तत्रैव पूर्व्ववत् पिण्डान् भक्षयेत् पञ्च संख्यया ।  
 पूर्णिमायां तथाऽष्टम्यां तथाऽमायां यथाक्रमम् ॥  
 भक्षयेत् 'पूर्व्ववत् पञ्च कवलान् भक्तिपूर्व्वतः ।  
 अधःशायी भवेन्नित्यं गन्धताम्बूलवर्जितः ॥  
 मासान्ते गौः प्रदातव्या व्रतस्य परिपूर्त्तये ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चाद् यतिचान्द्रायणं स्मृतम् ॥

(१) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पञ्च चैव इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अनेन विधिना यस्तु यतिचान्द्रायणं परम् ।  
 'कुर्यात् पापविशुद्धात्मा 'स याति परमां गतिम् ॥  
 विधवा वा यतिर्वाऽपि व्रतं पापापनाशनम् ।  
 गृहीत्वा कुरुते सम्यक् सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

इति हेमाद्रौ यतिचान्द्रायणचरणविधिः ।

अथ शिशुचान्द्रायणलक्षणमाह ।

देवलः—

शृणु राम महाबाहो सर्वपापहरं परम् ।  
 शिशुचान्द्रायणं नाम सर्वर्षिगणसेवितम् ॥  
 पुरा तूद्दालको नाम मातुर्गर्भादिनिर्गतः ।  
 नाभिनालमुपादाय स्वाञ्जलीं पर्यटन् महीम् ॥  
 गर्भाष्टमे समायाति स्वगोत्रेणाऽचरद् व्रतम्<sup>१</sup> ।  
 तदा प्रभृत्यमौ योगी सायाङ्गे भैक्ष्यमाचरन् ॥

(१) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) प्राप्नुयादिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) स्वगोत्रेण व्रतं चरेदिति लेखितपुस्तकपाठः ।



श्रोत्रियाणां द्विजातीनां त्रिषु वेश्मसु सञ्चरन् ।  
 कवलत्रयमानीय प्रक्षाल्य शुचिभिर्जलैः ॥  
 भागत्रयं तदा कृत्वा भागमेकं हरेर्ददौ ।  
 द्वितीयमग्नौ निक्षिप्य तृतीयं चाऽऽत्मनि न्यसेत् ॥  
 रात्रौ स्वपेत् स्थण्डिलेऽसौ गन्धपुष्पादिवर्जितः ।  
 'प्रत्यहन्त्वेवमकरोद् यावत्पुत्रसमागमम् ॥

नाविकेतोत्पत्तिपर्यन्तं इत्यर्थः ।

तदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् शिशुचान्द्रायणं स्मृतम् ।  
 कलौ युगे विशेषेण महापातकनाशनम् ।  
 महापापविशुद्धः 'स्यात् कृत्वैतद्भूतमुत्तमम् ॥

गौतमः—

शिशुचान्द्रायणं मासमेकं व्याप्य निरन्तरम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति महापातकवानपि ॥

जाबालिः—

शिशुचान्द्रायणं कुर्याद् द्विजोयः पापमुक्तये ।  
 स सद्यः पापनिर्मुक्तः लभते परमां गतिम् ॥

तत्प्रकारमेवाह —

देवलः—

(१) एवं वै प्रत्यहं कुर्यादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अभृदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



मासादौ प्रतिपद्विसे <sup>१</sup>प्रातःस्नानं समाचरेत् ।  
 दन्तधावनस्नानधौतवस्त्रपरिधानसन्ध्यावन्दनादिकं पूर्ववत् कृत्वा  
 चतुर्थे यामे ।

पटे पर्णपुटे वाऽपि अपश्यन् पापिनःखलान् ।  
 श्रोत्रियाणां द्विजातीनां त्रिषु वेश्मसु सञ्चरेत् ॥  
 कवलत्रयमानीय प्रक्षाल्य शुचिभिर्जलैः<sup>२</sup> ।  
 भागत्रयं तदा कृत्वा भागमेकं हरी क्षिपेत् ॥  
 द्वितीयमग्नौ निक्षिप्य अवशेषं स्वयं हरेत् ।  
 प्रक्षाल्य पूर्ववद्वस्तौ द्विराचम्य शुचिर्भवेत् ॥  
 रात्रौ स्वपेद्द्वरेरग्रे स्थण्डिले गन्धवर्जितः ।  
 पुनः परेद्युरेव हि कुर्यात् पापविशुद्धये ॥  
 एवं मासव्रतं कृत्वा मासान्ते गौर्यथाऽर्हतः ।  
 देया विप्राय विदुषे<sup>३</sup> पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥  
 एवं <sup>४</sup>कुर्यान् नरो यस्तु सर्वपापैः स मुच्यते ।  
 शिशुचान्द्रायणं सम्यक् कुर्याद् यः पूर्वजः शुचिः ।  
 सर्वान् कामानवाप्नोति स याति विष्णुमन्दिरम् ॥

इति हेमाद्रौ शिशुचान्द्रायणविधिः ।

- 
- (१) प्रपेदे इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (२) पूर्वस्नानं इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (३) द्विजैरिति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (४) सहसा इति लेखितपुस्तकपाठः ।
-



अथ महाचान्द्रायणलक्षणमाह ।

देवलः—

शृणु राम प्रवक्ष्यामि महाचान्द्रायणं परम् ।  
ब्रह्महत्यादिपापानां शोधनं सर्वमङ्गलम् ॥  
गुरुद्रोहे च यत् पापं यत् पापं परवञ्चने ।  
यत् पापं पुत्रहत्यायां यत् पापं पशुमारणे ॥  
पितृरब्दपरित्यागे विष्णुद्रोहे च यद्ववेत् ।  
यत् पापं शिवनिन्दायां यत् पापं चक्रधारणे ॥  
यत् पापं शिवनिष्प्रालम्भक्षणे तस्य धारणे ।

लिङ्गधारणे इत्यर्थः ।

चाण्डालीगमने पापं यत् पापं विधवागमे ।  
परस्त्रीषु च यत् पापं यत् पापं परभोजने ॥  
यत् पापं वृषलीसङ्गे यत् पापं कुण्डगोलयोः ।  
शूद्रापत्युश्च यत् पापं यत् पापं पारदारके ॥  
यत् पापं पर्व्वसंसर्गे यत् पापं धनुविक्रये ।  
यत् पापं रजक्रीसङ्गे यत् पापं यतिनिन्दया ॥  
यत् पापं विप्रनिन्दायां कन्याया दूषणेऽपि च ।  
एवमादीनि पापानि गुरुणि च लघूनि च ॥  
आर्द्राणि च प्रशुष्कानि यानि पापान्यनेकशः ।  
तेषां नाशकरञ्चेदं महाचान्द्रं महाफलम् ॥



यत् श्रुत्वा मुच्यते पापैः गुरुभिर्लघुभिस्तथा ।

तत्रकारमाह—

देवलः—

शुक्लप्रतिपदि स्नात्वा पूर्व्ववच्छुद्धतोयतः ।  
 पूर्व्ववन्नियमं कृत्वा चतुर्थे काल आगते ॥  
 विष्णुपूजापरोभूत्वा पूर्व्वं सङ्कल्पमाचरेत् ।  
 पूर्व्ववन्मन्त्रमुच्चार्य निराहारः स्वपेत्तदा ॥  
 ततः प्रभात उत्थाय स्नात्वाऽचम्य यथाविधि ।  
 पूर्व्ववन्नित्यकर्माणि समाप्य विधिपूर्व्वकम् ॥  
 चतुर्थकाल आयाते पूर्व्ववद्देवमर्चयेत् ।  
 तदोपोष्य यथा पूर्व्वं पूर्व्ववन्नियतः स्वपेत् ॥  
 एवं <sup>१</sup>कुर्यात् प्रतिदिनं राका यावत् प्रवर्त्तते ।  
 तत्राऽपि पूर्व्ववत् कृत्वा नित्यकर्माणि सर्व्वशः ॥  
 तत्रैव भक्षयेत् पञ्चदश ग्रासान् व्रताप्तये ।  
 तत्राऽपि हरिसान्निध्ये स्वपेद्गन्धादिवर्जितः ॥  
 उपोषणं प्रकर्त्तव्यं अमा यावत् प्रवर्त्तते ।  
 तत्रापि पूर्व्ववत् पिण्डान् भक्षयेत् पूर्व्वसंख्यया ॥  
 शुक्लप्रतिपदि स्नात्वा गौर्देया व्रतपूर्त्तये ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पञ्चान् महाचान्द्रमुदीरितम् ॥



अशक्यः सर्वलोकानामन्नत्यागो महत्तरः ।  
 कृते चर्माश्रिताः प्राणाः चैतायां कीकसाश्रयाः ॥  
 हापरे रक्तमाश्रित्य कलावन्नाश्रिताः सदा ।  
 महाचान्द्रस्य महिमा कथितोऽयं मयाऽनघ ॥  
 यत् कृत्वा मुच्यते पापैर्महद्भिरपि पातकैः ।

इति हेमाद्रौ महाचान्द्रायणविधिः ।

अथ पञ्चविधानां प्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

अथ वक्ष्यामि राजेन्द्र महापातकनाशनम् ।  
 प्रत्याम्नायं हि चान्द्रस्य विष्णुलोकप्रदायकम् ॥  
 अशक्तत्वाद् दुर्बलत्वात् तथाऽऽयुर्नाशहेतुतः ।  
 भक्तिश्रद्धाविहीनत्वात् आलस्यान्नास्तिकादपि ॥

चान्द्रायणव्रतारम्भे—

पुरा देवेन्द्रसदने वेधाः प्राह पुरन्दरम् ।  
 चान्द्रायणेऽत्यशक्तश्चेत् प्रत्याम्नायं कुरुष्व वै ॥  
 शुक्लप्रतिपदि स्नात्वा नित्यकर्म समाप्य च ।  
 मङ्गल्यं पूर्ववत् कृत्वा करिष्येऽहदिदं व्रतम् ॥



इति सङ्कल्प्य मनसा पूर्ववद्विधिपूर्वकम् ।  
 गावोदेयाः प्रयत्नेन पञ्चाशत् स्वर्णपूरणीः ॥  
 सवत्सा बहुक्षीरिण्यो विप्रेभ्योजलपूर्वकम् ।  
 अनेन कृतवान् चान्द्रं शास्त्रमार्गेण धेनुदः ॥

मार्कण्डेयः—

अशक्तोयदि चान्द्रस्य भक्षणे राजवल्लभ ।  
 प्रत्याम्नायं तदा कुर्यात् सवत्सा गाः स्वलङ्घिताः ॥  
 पञ्चाशत् संख्यया <sup>१</sup>दद्यात् <sup>२</sup>पूतः पापान्नसंशयः ।

गौतमः—

चान्द्रायणस्य विप्रोऽसौ प्रत्याम्नायं समाचरेत् ।  
 अर्चिता गन्धपुष्पाद्यैर्भूषिताः स्वर्णभूषणैः ॥  
 पञ्चाशद्गाः प्रयत्नेन विप्रेभ्यश्च <sup>३</sup>समुत्सृजेत् ।  
 प्रत्याम्नायैर्हरिः साक्षात् सन्तुष्टः स्यान्न संशयः ॥  
 अशक्तौ चान्द्रविषये प्रत्याम्नायं तदा चरेत् ।  
 एतेन शुद्धिमाप्नोति चान्द्रायणफलं लभेत् ॥

महाचान्द्रस्य प्रत्याम्नायस्तु शतं गावो देयाः तथाच महाचान्द्रा-  
 यणफलं प्राप्नोतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ चान्द्रायण प्रत्याम्नायः ।

(१) पूत इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) सर्वपापादिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) पृथक् पृथक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अथ प्राजापत्यकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

त्रिदिनं च दिवाऽश्लीयात् त्रिदिनं रात्रिभोजनम् ।

अयाचितं स्यात् त्रिदिनं निराहारोदिनत्रयम् ॥

कृच्छ्रमेतद्विजानीयाद्गोदानं गव्यभक्षणम् ।

ब्रह्महत्यादिपापानामेतत् कृच्छ्रं विशोधनम् ॥

मार्कण्डेयः—

एकभक्तेन नक्तेन तथैवाऽयाचितेन च ।

उपवासेन चैकेन दानं गव्यस्य भक्षणम् ॥

एतत् त्रिरातृतं येन कृच्छ्रं स्यात् परिपूरणम् ।

ब्रह्महत्यादिपापानामितरेषां विशुद्धिदम् ॥

गौतमः—

प्राजापत्यकृच्छ्रमिदं सर्वपापप्रणाशनम् ।

त्रिदिनं स्याद् दिवाभुक्तिस्त्रिदिनं रात्रिभोजनम् ॥

अयाचितञ्च त्रिदिनं त्रिदिनं वायुभक्षणम् ।

गोदानं पञ्चगव्यान्ते शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥

तदाह—

आपस्तम्बः—

त्रयहं नक्ताशी दिवाशी ततस्त्यहं त्रयहमयाचितव्रतं त्रयहं  
नाऽश्नाति किञ्चनेति ।

कृच्छ्रद्वादशरात्रस्य विधिः—



जाबालिः—

ब्रह्महत्यादिपापानामितरेषां मुनीश्वराः ।  
 तुलादिदानगन्तृणां पापानां साधनं नृणाम् ॥  
 प्रजापतिरिदं साक्षात् सृष्टवान् देवसन्निधौ ।  
 सर्वलोकोपकाराय सर्वपापापनुत्तये ॥  
 दिनत्रयं दिवा भुक्तिस्तथा रात्रौ दिनत्रयम् ।  
 पञ्चगव्यं ततः पश्चाद् गौरेका च विशोधनी ॥  
 एवं कुर्याद् द्विजोयस्तु सर्वपापाद् 'स मुच्यते ।

इति हेमाद्रौ प्राजापत्यव्रतलक्षणम् ।

अथ एतदाचरणाशक्तानां प्रत्याम्नायानाह ।

तदाह लिङ्गपुराणे—

ईश्वरः—

प्राजापत्ये तु गौरेका द्वादशब्राह्मणार्चनम् ।  
 समुद्रगनदीस्नानं संहितामात्रमुच्यते ॥

(१) गामेकामिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विसृक्तिमान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



प्राणायामाश्च दिशतं अयुतं जप उच्यते ।

तिलहोमाः सहस्रं स्यात् प्रत्याम्नायस्तु सप्तधा ॥

गारुडपुराणे—

यत् प्रोक्तं मुनिभिः कृच्छ्रमिति शास्त्रेषु गौरवात् ।

सर्वत्रैतद्विजानीयात् द्वादशाहोभिरीरितम् ॥

यत्र यत्र मुनिभिः कृच्छ्रमित्युक्तं तत्र तत्र प्राजापत्यमेव द्वादश-  
रात्रसाध्यं चान्द्रायणं विना सर्वकृच्छ्रेषु योजनीयम् । तदेवाऽऽह—

गौतमः—

कुच्छं द्वादशरात्रं स्यान् मुनिभिः परिभाषितम् ।

इति हेमाद्रौ व्रताचरणाशक्तानां प्रत्याम्नायः ।

प्रत्याम्नायेषु होमेषु स्नानदक्षिणादाने गोदाने  
कृच्छ्रदानेषु च मन्त्रौ ।

गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश ।

यस्मात् तस्मात् शिवं मे स्याद् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

यज्ञसाधनभूता या विश्वस्याऽघप्रणाशिनी ।

विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा ॥

इति सर्वत्र गोदानेषु प्रत्याम्नायगोदानेषु च मन्त्रौ ।



तत्रापि दक्षिणा देया यथा वित्तानुसारतः ।

एवं क्रमानुरोधस्तु प्रत्यान्नायमनुत्तमम् ॥

<sup>१</sup>आचरन् फलमाप्नोति प्राजापत्यस्य कृच्छ्रतः ।

प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्यान्नाययोरभावे तन्मूल्यमाह ।

देवलः—

गवामभावे निष्कं स्यात् तदङ्गं पादमेव वा ।

पादं दरिद्रः <sup>२</sup>कुर्वीत धनिकः पूर्णमाचरेत् ॥

अन्यथा तत्फलं नास्ति प्राजापत्यं न सिध्यति ।

निष्कशब्दो द्विविधः वराहस्तदङ्गश्चेति मुख्यः पक्षो वराहः कनीय-

<sup>३</sup>स्तदङ्गमङ्गीकृतमस्माभिः । तदाऽऽह

मार्कण्डेयः—

प्रभूणां पूर्वपक्षः स्याद् उत्तमः परिकीर्तितः ।

मध्यमाचरणं नास्ति प्रभूणां तत्फलञ्च वा ॥

मध्यमानां वराहः स्यात् उत्तमः पक्ष उच्यते ।

उत्तमं यः परित्यज्य मध्यमं समुपाश्रितः ॥

<sup>४</sup>न दानफलमस्यास्ति मध्यमे<sup>५</sup> मध्यमं भवेत् ।

कनीयांस्तु वराहाख्य उत्तमः परिकीर्तितः ॥

(१) सम्पूर्णफलमिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दरिद्रः कुरुते पादमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कनीयान् इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(४) न इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) मध्यमो मध्यममिति लेखितपुस्तकपाठः ।



तस्य वै मध्यमं नास्ति न तत्कुच्छफलं भवेत् ।

अकिञ्चनानां सर्वेषां 'शुद्धार्थं गौरुदाहृता ॥

अतोहीनं न कर्त्तव्यं गोमूलेषु हि सर्वदा ।

एवं यः कुरुते दानं उत्तमाधममध्यतः ॥

तत्फलं समवाप्नोति नाऽन्यथा फलमस्ति हि ।

सर्वत्र सर्वेषां गोदानप्रत्याम्नायमूलेषु एवं वेदितव्यं उत्तम-  
मध्यमलघुभावेन । उत्तमः प्रभूणां मध्यमं कुर्यान्मध्यमः  
किञ्चिद्वनः कनीयांसं कुर्याद् अकिञ्चनस्य कनीय एवोत्तमः  
पक्षः अतः स्वशक्तिपुरःसरतया प्रत्याम्नायं कुर्याद् अन्यथा न  
फलमाप्नोतीत्यर्थः ।

इति हेमाद्रौ प्राजापत्यकुच्छस्य गोदानप्रत्याम्नायः ।



## अथ समुद्रगनदीस्नानप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

समुद्रगा नद्यः—

भागीरथी च यमुना नर्मदा च सरस्वती ।

गोदावरी कृष्णवेणी तुङ्गभद्रा पिनाकिनी ॥

मलहारी भीमरथी वञ्जुला भवनाशिनी ।

अखण्डा चैव कावेरी ताम्रपर्णी महानदी ॥

धनुष्कोटिः प्रयागश्च गङ्गासागरसङ्गमः ।

समुद्रगनदीस्नानं प्रत्याम्नायः

एताः पुण्यतमा नद्यो दर्शनात् पापहारिकाः ।

स्पर्शनात् मोक्षदाः नृणां स्नाने मुक्तिप्रदाः स्मृताः ॥

विंशद्योजनगा महानदी समुद्रगा । एतासु स्नानमात्रेण  
मनुजः पूतो भवति । प्राजापत्यस्य कृच्छ्राचरणेऽसमर्थस्य तत्  
प्रत्याम्नायगोदानाचरणे च अशक्तस्य नदीस्नानरूपमेव कलौ युगे  
समीचीनं अतो नदीस्नानमेव वयं प्रत्याम्नायं ब्रूमः—

गङ्गायां मौषलं स्नानं प्राजापत्यसमं विदुरिति भविष्यो-  
त्तरोक्तत्वाद् गङ्गास्नानं विशुद्धिदं इति । पञ्चविधाः गङ्गाः स्कन्द-  
पुराणे—

भागीरथी गौतमी च कृष्णवेणी पिनाकिनी ।

अखण्डा चैव कावेरी पञ्च गङ्गाः प्रकीर्तिताः ॥

अन्याः समुद्रगा नद्यो नृणां पापपापहारिकाः ।



एतासु महानदीषु स्नातृणां एताः परित्वाणदाः<sup>१</sup> पृथक् पृथक्  
फलमाह ।

गौतमः ---

स्वग्रामस्य च या सिन्धुर्यावद्योजनमात्रगा ।  
तामुद्दिश्य यदा गन्ता स्नानाय दर्शनाय वा ॥  
यावन्ति योजनानीह तावत्कृच्छ्रफलं लभेत् ।  
परार्थं योऽनुगच्छेद्वा स्नानमात्रफलं लभेत् ॥  
भृतिं गृहीत्वा यो गच्छेन् न तस्योभयमस्ति हि ।  
विष्णुपादोद्भवा गङ्गा दशकृच्छ्रफलप्रदा ॥  
यमुना च तथा नृणां दशकृच्छ्रफलप्रदा ।  
गौतमी श्रीकृष्णवेणी सप्तकृच्छ्रफलप्रदा ॥  
पिनाकिनी च कावेरी अष्टकृच्छ्रफलप्रदा ।  
तुङ्गभद्रा भीमरथी सप्तकृच्छ्रफलप्रदा ॥  
वज्रुला भवनाशाय ऋतुकृच्छ्रफलप्रदा ।  
फाल्गुणी ताम्रपर्णी च सप्तकृच्छ्रफलप्रदा ॥  
चापाग्रे स्नानमात्रेण अव्दकृच्छ्रफलप्रदा ।  
श्रीशैलसङ्गमे चैव गङ्गासागरसङ्गमे ॥  
विंशत्कृच्छ्रफलं स्नानं अतो नद्यश्च पावनाः ।

प्राजापत्यकृच्छ्राम्नाय नदीस्नानप्रकारमाह,—पूर्ववत् पुण्याह

(१) परिपातृणामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) गन्तुः इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



वाचनं सङ्कल्पादिकं कृत्वा सूक्तं पठन् नदीस्नानाभिमुखो भूयात्  
 नदीं गत्वा कर्त्ता पूर्वं स्नात्वा स्नातान् विप्रान् गन्धपुष्पाक्षतैरभ्यर्च्य  
 मया परिषत्सन्निधौ सङ्कल्पितस्य सर्वप्रायश्चित्तस्य समग्रफलावाप्तयर्थं  
 परिषन्निर्णीतं प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायस्नानरूपं अष्टं द्वाष्टं त्र्यष्टं  
 चतुरष्टं पञ्चाष्टं षडष्टं षड्गुणितं षडष्टं षड्गुणितं त्रैधावर्त्तितं  
 'षडष्टम्' यथा सङ्कल्पितं तत्र प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायभूतमष्टादि  
 संख्याकमहं स्वयं वा ब्राह्मणैः वा महानदीस्नानरूपं आचरिष्य इति  
 सङ्कल्प्य ब्राह्मणान् प्रेषयेत् । ऋत्विजस्तु यजमानगोदनक्षत्राशि-  
 शाखानामधेयानि षष्ठान्तेन समुच्चार्य एतेन अमुकगोत्रेणामुक-  
 नक्षत्रेणामुकराशौ जातेनाऽमुकशाखाध्यायिनाऽमुकनामधेयेन परि-  
 त्सन्निधौ सङ्कल्पितस्य सर्वप्रायश्चित्तस्य परिषन्निर्णीतस्य प्राजा-  
 पत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायपरिकल्पितानि महानदीस्नानानि मौषलवत्  
 आचरिष्याम । इति ऋत्विक्सङ्कल्पः ।

महानद्यां नदीमुखः सन् मन्त्रवर्जं मौषलमज्जनवत् स्नानं  
 कृत्वा तटमागत्य पुनर्द्विराचम्य धौतवस्त्रं परिधाय तदभावे  
 द्वादशमंख्यया हस्तावधूननं कृत्वा आच्छाद्य द्विराचम्य पूर्ववत्  
 स्नायात् एवं सङ्कल्पाष्टादिसंख्या भवति । यजमानः स्नातेभ्य  
 ऋत्विग्भ्यः निष्कं वा तदईं वा पादं वा स्नानफलस्वीकरणार्थं  
 दद्यात् । निष्कशब्दोदेवमानेन वराहद्वयं ऋषिमानेन तदईं

(१) षडष्टमित्यधिकं लेखितपुस्तके नास्ति ।

(२) येन इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



मानुषमानेन तदङ्गं ग्राहयति प्रभूणामुक्तप्रकारमेव समर्थस्य  
मध्यमं अकिञ्चनस्य तदङ्गं सुवर्णप्रमाणं यथोक्तं तत्तथैव नाऽन्यत् ।

गौतमः—

गङ्गायां 'मौषलं स्नानं प्राजापत्यसमं विदुः ।

एतत् पञ्चगङ्गास्नानविषयं इतरासु समुद्रगनदीषु प्रति-  
स्नानं सङ्कल्पः कुल्यायां तटाकपुष्करिण्यादिषु पृथक् सङ्कल्पः  
खण्डानुवाकपठनम् । सूर्याभिमुखः सन् सम्मार्जनान्ते तटं गत्वा  
धौतवस्त्रादिकं धृत्वा अष्टोत्तरशतं गायत्रीं जप्त्वा प्राजापत्य-  
कृच्छ्रात्मक<sup>(१)</sup>व्रतफलमाप्नोति स्नानमेव कृच्छ्रफलदं तेभ्यश्च पूर्ववत्  
दक्षिणा देया । एवं अञ्जादि संख्यया कृत्वा पूतो भवति ।

इति हेमाद्रौ प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायनदीस्नानम् ।

अथ प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायपरिकल्पितद्वादश-  
ब्राह्मणभोजनविधिमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायममुं शृणु ।

यं कृत्वा मुच्यते पापैर्महद्भिरपि नारद ॥

(१) मानसमिति लेखितक्रीतपुस्तकपाठः ।

(२) कृच्छ्रात्मकं भवति इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पूर्ववत् सङ्कल्पादिकं कृत्वा द्वादशब्राह्मणान् निमन्त्रयेत् ।

पराशरः—

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायं द्विजार्चनम् ।

कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति प्राजापत्यफलं लभेत् ॥

विप्रान् शान्तान् सपत्नीकान् वेदशीलपुरष्कृतान् ।

सदाचारान् शुचीन्नित्यं कृच्छ्रायं तान्नियोजयेत् ॥

तदाह आपस्तम्बः—

शुचीन्मन्त्रवतः सर्वकृत्येषु भोजयेत् देशतः कालतः शौचतः  
सम्यक् प्रतिगृहीतान् इति ।

एवं विप्रान् निमन्त्र्याऽथ भोजयेद्बहुविस्तरैः ।

तभ्यश्च दक्षिणा देया यथा वित्तानुसारतः ॥

एवं यः कुरुते सम्यक् प्राजापत्यफलं लभेत् ।

इति हेमाद्रौ प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायद्वादशब्राह्मणार्चनम् ।

अथ तत्प्रत्याम्नाय वेदपारायणप्रकारमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य वेदपारायणं महत् ।

प्रत्याम्नायं प्रशंसन्ते शाखामात्रं सहारणम् ॥



पारायणेन भगवान् <sup>१</sup>परितुष्टो भवेत् तदा ।  
 फलं सम्पूर्णं कृच्छस्य प्रददाति न संशयः ॥  
 प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा नित्यकर्म समाप्य च ।  
 स्वगृहे देवतागारे नद्यां वा देवतानये ॥  
 प्राङ्मुखो दङ्मुखो वाऽपि मङ्गल्यं पूर्ववच्चरेत् ।  
 पारायणादौ प्रणवं कृत्वा पारायणं पठेत् ॥  
 दिशस्त्वनवलोक्यैव असम्भार्यैव पापिनः ।  
 मौनव्रतं समागम्य पठेद्देवं शनैः शनैः ॥  
 शीघ्रपाठौ शिरःकर्म्मा तथा <sup>२</sup>लिखितपाठकः ।  
 गङ्गादी स्वरहीनश्च पञ्चैते पाठकाधमाः ॥  
 ततः शनैः शनैर्विद्यामभ्यसेदात्मशुद्धये ।  
 यावत् समाप्तिर्भवति तावत् कृच्छफलं लभेत् ॥  
 स्वयमेव पठेद्देवं उत्तमं परिकीर्तितम् ।  
 प्रत्याम्नायो मध्यमः स्याद् भृतके निष्फलं भवेत् ॥

इति हेमाद्रौ संहितामात्रप्रत्याम्नायः ।

१ कृतकृत्य इति लिखितपुस्तकपाठः ।

२ लिखति इति लिखितपुस्तकपाठः ।



## अथाऽयुतगायत्रीजपरूपप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायोजपोमहान् ।  
अयुतं वेदमातुश्च <sup>१</sup>सर्वपापप्रमोक्षदः ॥  
प्रातः स्नात्वा <sup>२</sup>यथावारं दन्तधावनपूर्वकम् ।  
अग्निहोत्रालये देव-गृहे वाऽपि नदीतटे ॥  
गोष्ठे वृन्दावने देशे जपेदयुतसंख्यया ।  
पर्वभिर्जपमालाभिः कुशग्रन्थिभिरेव वा ॥  
स्वयं मौनमुपास्थाय दिशश्चाऽनवलोकयन् ।  
जपेन्महापापजालदहनार्थं दिने दिने ॥  
अव्यग्रचित्तः प्रजपेद् अन्यथा दोषमश्नुते ।

मार्कण्डेयः—

सन्दिग्धस्तु हतोमन्त्रो व्यग्रचित्तो हतो जपः ।  
अब्रह्मण्यं हतं क्षात्रम् अनाचारं कुलं हतम् ॥  
अतोमनसि जप्तव्यं मानसं कीटिरुच्यते ।  
<sup>३</sup>अयुते च जपे पूर्णे प्राजापत्यफलं लभेत् ॥  
अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने ।  
द्विधाचित्तेन यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ।

(१) सर्वपापैः प्रमुच्यते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) यथाचारमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) अयुतमात्रे इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



पराशरः—

हस्तस्याऽनामिका<sup>१</sup>पर्वमध्यादारभ्य यत्नतः ।

तद्वितीयं कनिष्ठायाः पर्वत्रयमनुक्रमात् ॥

अनामिकोर्ध्वपर्व्यादि<sup>२</sup> मध्यमातर्ज्जनीद्वयम् ।

पर्वत्रयं तदा कृत्वा तथैवाऽक्रम्य पूर्ववत् ॥

मेरुरङ्गुष्ठएवस्यात् तस्य<sup>३</sup> नैव क्रमं चरेत् ।

पर्वभिर्गणयेन्नित्यं<sup>४</sup> गायत्रीं नाऽन्यचेतसा<sup>५</sup> ॥

एकैकेन शतं प्रोक्तं गणनं मुनिभिः परैः ।

अयुतेन जपेनाऽऽशु प्राजापत्यफलं लभेत् ॥

जपतोनास्ति पातकमिति स्मरणाच्च ।

इति हेमाद्रौ प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायायुत-  
मायत्रीजपविधिः ।

- 
- (१) मध्यपर्व्यादिति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (२) मध्यमायाश्च तर्ज्जनी इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (३) नास्ति इति लेखितपुस्तकपाठः ।  
 (४) गणयेद् यस्तु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।  
 (५) नान्यमेववा इति लेखितपुस्तकपाठः ।
-



अथ तिलहोमसहस्ररूपप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यस्य कच्छस्य प्रत्याम्नायविधिस्त्वयम् ।  
होमस्तिलैरर्काटैश्च घृताक्तैः पापनाशकम् ॥  
मृत्यञ्जयेन मन्त्रेण न्यासध्यानपुरःसरम् ।  
मन्त्रान्ते जुहुयाद्ब्रह्म आहुतीर्वीजपूरणैः ॥  
सहस्रहोमं कृत्वाऽपि पूतोभवति तत्क्षणात् ।  
स्वयं वा ऋत्विगेको वा तिलहोमसहस्रकम् ॥  
कुर्यान्मौनेन मेधावी प्राजापत्यफलं लभेत् ।  
अल्पमात्रतिलैर्होमः सर्वपापविनाशकम् ॥  
प्राजापत्यस्य कच्छस्य प्रत्याम्नायोमहत्तरः ।

इति श्रीहोमार्द्रा प्राजापत्यस्य कच्छस्य प्रत्याम्नायस्तिलहोमः ।

---



## अथ प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्राणायामशतद्वय- प्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायोमहत्तरः ।  
धर्मशास्त्रोक्तमार्गेण प्राणायामशतद्वयम् ॥  
महापातकयुक्तो वा युक्तोवा सर्वपातकैः ।  
पूतो भवति संसाध्य प्राणायामशतद्वयम् ॥  
जपसङ्कल्पहोमेषु सन्ध्यावन्दनकर्मसु ।  
प्राणायामांश्चरेद्विप्रस्तदाऽऽनन्त्याय कल्पते ॥

मार्कण्डेयः —

वामेनाऽऽपूरयेद्वायुं पूरणात् पूरकः स्मृतः ।  
सम्पूर्णकुम्भवत्तिष्ठेत् कुम्भनात् कुम्भकः स्मृतः ॥  
सर्व्वमारिचयेद्वायुं रेचनाद् रेचकः स्मृतः ।  
वायुमापूरयन् रन्ध्राद् गायत्रीं मनसा स्मरन् ॥  
पूरके कुम्भके चैव रेचके तां जपेत् त्रिधा ।  
एवं त्रिवारं जप्येन संख्यैका तद्वेदियम् ॥

पराशरः—

वामेन वायुमापूर्य्य गायत्रीं मनसा स्मरन् ।  
सम्पूर्णकुम्भवत् तिष्ठेत् पुनस्तामनुवर्त्तयन् ॥  
रेचयन् सर्व्वरन्ध्रेण पुनस्तामिव संस्मरेत् ।  
एवं पूरणकुम्भाभ्यां रेचकेन महाऽमुना ॥



यो वर्त्तयेत् त्रिधा ब्रह्मन् प्राणायामइतीरितः ।  
 श्राद्धे जपे च होमे च सन्ध्याकर्मसु सर्वदा ॥  
 यो वर्त्तयेत् प्रतिदिनं परब्रह्म स उच्यते ।  
 एवं शतद्वयं 'कुर्यात् पूर्वोक्तविधिना द्विजः ॥  
 प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायोनिगद्यते ।  
 सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमं पदम् ॥

इति श्रीहेमाद्रौ प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायः ।

अथ तप्तकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

वार्युणां त्रिदिनं विप्रो 'दुग्धमुणां दिनत्रयम् ।  
 त्रिदिनं घृतमुणाञ्च पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

मार्कण्डेयः—

विप्रमुणां पयस्तप्तं घृतमुणां दिनत्रयम् ।  
 कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति 'ब्रह्महाऽपि द्विजर्षभः ॥

(१) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पयोणामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ब्रह्महत्या द्विजर्षभ इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

उष्णं पयः पयस्तप्तमुष्णं घृतमनुत्तरम् ।

चतुर्णामपि पापानां पावनं मुनिभिः स्मृतम् ॥

आपस्तम्बः—

ब्राह्ममुष्णं पिवेद्द्वारि ब्राह्ममुष्णं पयः पिवेत् ।

ब्राह्ममुष्णं पिवेत् सर्पिरेतत्तप्तं विधीयते ॥

पलसंख्यामाह—

जावालिनः—

षट्पलञ्च पिवेद्द्वारि त्रिपलञ्च पिवेत् पयः ।

पलमेकं पिवेत् सर्पिरेतत्तप्तं विधीयते ॥

ग्रन्थान्तरे—

ब्राह्ममुष्णं पिवेद्द्वारि ब्राह्ममुष्णं पयः पिवेत् ।

ब्राह्ममुष्णं पिवेत्सर्पिर्वायुभक्षोद्दिनत्रयम् ॥

वायुभक्ष इति उक्तमनुक्तं वा द्वादशदिने परिपूर्य्यथं कर्त्तव्यं  
यत्र यत्र कृच्छ्रमिति मुनिभिरुपदिष्टं तत्र तत्र द्वादशदिनं  
वेदितव्यम् ।

तदाह—

बृहस्पतिः—

मुनिभिः कृच्छ्रमित्युक्तं शास्त्रेषु द्विजवल्लभ ।

तत् कृच्छ्रं द्वादशाहोभिः साध्यं देहविशुद्धिदम् ॥

यत्र यत्राऽब्दमित्युक्तं कृच्छ्रेषु तत्र त्रिंशत् संख्या ।

तदेवाऽऽह—



मरीचिः—

प्राजापत्येषु कृच्छ्रेषु अद्भुतमित्युच्यते बुधैः ।

त्रिंशत्संख्यां विजानीयात् प्राजापत्यस्य लक्षणम् ॥

प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य । संवत्सरे कृच्छ्रगणनायां त्रिंशत् कृच्छ्रा-  
णीत्येव बोद्धव्यम् । रजस्वलासंस्पर्शादिषु तप्तकृच्छ्रमेव विशुद्धिदं  
सर्वेषां पापानामपि ।

सर्वेषामेव पापानां तप्तकृच्छ्रं विशोधनम् ।

अतः परममित्युक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

इति हेमाद्रौ तप्तकृच्छ्रलक्षणम् ।

---

अथ तप्तकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

तप्तकृच्छ्रस्य महतः प्रत्याम्नायोमनीषिभिः ।

अशक्तानाञ्च कृपया कर्तुमुक्तः पुराऽनघाः ॥

तमेवाहं ब्रवीम्यद्य शृण्वन्तु द्विजसत्तमाः ।

कलौ युगे विशेषेण अन्नत्यागाल्लयं गताः ।



पराशरः—

कृते चर्माश्रिताः प्राणाः चैतायां कौकसाश्रिताः ।

<sup>१</sup>द्वापरे <sup>२</sup>त्वाश्रितास्त्वस्थि कलावन्नाश्रिता मताः ॥

इति कलौयुगे द्वादशरात्रसाध्यकुच्छाणि आचर्तुमशक्तान् जनान्  
निरीक्ष्य परमकृपालवो महर्षयः प्रत्याम्नायानुक्तवन्तः तानेवाऽऽह ।

गौतमः—

<sup>३</sup>शक्तस्य तमकुच्छस्य ब्रह्महत्यानिवारणे ।

तुलाप्रतिग्रहीतृणां <sup>४</sup>साधनाय महामुने ॥

<sup>५</sup>प्रत्याम्नायमुवाचेमं यदा देवसभागतः ।

स्वयम्भूः कृपया नृणां गवां विंशतिमादरात् ॥

सवत्सां बहुदुग्धां च प्रदद्यात्तु द्विजातये ।

द्विजातिभ्य इति जातावेकवचनम् ।

मरीचिः—

<sup>६</sup>प्रत्याम्नाये तु कुच्छस्य तप्तस्य ब्रह्मरूपिणः ।

दद्याद्द्विजातये सम्यक् गवां विंशतिमादरात् ॥

(१) इदमर्द्धं काशीपुस्तके नोपलभ्यते ।

(२) त्वस्थिमाश्रित्य इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) महतस्तमकुच्छस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(४) शोधकश्च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(५) प्रत्याम्नायस्तदा प्रोक्त इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(६) पापनाशस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पराशरः—

‘अशक्तौ तप्तकृच्छस्य विप्रायाऽध्यात्मवेदिने ।  
 सालङ्कारां सवत्साञ्च प्रदद्याद्विंशतिं गवाम् ॥  
 शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र तप्तकृच्छफलं लभेत् ।  
 अतो द्विजातिभिः कार्यः प्रत्याम्नायस्त्वशक्तिः ॥  
 पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चात् प्रत्याम्नाय इतीरितः ।  
 तुलादिप्रतिग्रहीतृणां तत्र प्रायश्चित्ताकरणविषये इयमेव गतिः ।

इति हेमाद्रौ तप्तकृच्छप्रत्याम्नायः ।

अथ पराककृच्छलक्षणमाह ।

देवलः—

अथ वक्ष्यामि कृच्छस्य पराकस्य महात्मनः ।  
 सर्वदोषनिवृत्तस्य सर्वशास्त्रानुवर्तिनः ॥  
 पराकः कृच्छ्रइत्युक्तो विष्णुना प्रभविष्णुना ।  
 यस्याऽऽचरणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥  
 ब्रह्महत्या सुरापानं स्तयं गुर्वङ्गनागमः ।  
 सङ्कलीकरणञ्चैव जातिभ्रंशकरं तथा ॥



उपपातकमित्येतद् बहुधा परिकीर्तितम् ।  
 तुला हिरण्यगर्भश्च ब्रह्माण्डोऽयं घटस्तथा ॥  
 तथा कल्पतरुश्चैव गोमहस्रमनन्तरम् ।  
 हिरण्यकामधेनुश्च हिरण्याश्वस्तथैव च ॥  
 हिरण्याश्वरथश्चैव हेमहस्तिरथस्तथा ।  
 पञ्चलाङ्गलकश्चैव धरादानमतःपरम् ॥  
 विश्वचक्रं कल्पलता सप्तसागरमेव च ।  
 चर्मधेनुश्च महती महाभूतघटस्तथा ॥  
 कालपुरुषं कालचक्रं राशिचक्रमनन्तरम् ।  
 कोटिलक्षतिलैर्हीमो द्विमुखी सुरभिस्तथा ॥  
 आर्द्रकृष्णाजिनश्चैव शकटं पर्वसङ्गमे ।  
 क्वागादिपञ्चकश्चैव तथैव दश धेनवः ॥  
 तथा दशमहादानं अचलाः सप्तनामकाः ।  
 रहस्यकृतपापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ॥  
 पापानां नवधोक्तानामितरेषां मुनीश्वराः ।  
 तुलादिमंग्रहीतृणां पराकः कच्छनामकः ॥  
 सर्वपापहरीनृणां देवप्रीणां प्रियङ्करः ।  
 सर्वेष्वयं तु कच्छेषु महान् प्रोक्तः स्वयम्भुवा ॥

गौतमः —

प्रत्यहं घृतमात्रञ्च द्वादशाहं नवोद्भवम् ।  
 पीत्वा पलं द्विजः शुध्येत् पराक इति विश्रुतः ॥



सर्वपापप्रशमनः सर्वोपद्रवनाशनः ।

सर्वलोकप्रदोयस्माद् भगवानाह विश्वसृष्ट् ॥

व्यासः—

प्रत्यहं गोघृतं विप्रः द्वादशाहं पलं मुदा ।

पीत्वा शुद्धिमवाप्नोति पापेभ्योनाऽन्यथा 'क्वचित् ॥

लौगाक्षिः—

द्वादशाहं घृतं तप्तं पलमात्रं गवामिह ।

पीत्वा शुद्धिमवाप्नोति सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

पराको नाम तप्तेन गोघृतेन पलमानेन द्वादशरात्रं चतुर्थकाले  
नियमानन्तरं पीत्वा द्विजः शुद्धिमवाप्नोति, अयमेव पराकः ।

इति हेमाद्रौ पराककृच्छ्रलक्षणम् ।

(१) द्विज इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) द्विज इति लेखितक्रीतपुस्तकपाठः ।



अथ पराकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

प्रत्याम्नायं पराकस्य वक्ष्याम्यहमनुत्तमम् ।  
सर्वपापोपशमनं महापापनिवृत्तनम् ॥

व्यासः—

'पराको नाम यत् कृच्छ्रं तत्कर्तुं' मनुजोत्तमः ।  
अशक्तस्तस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायं समाचरेत् ॥  
तस्याऽऽचरणमात्रेण पराकस्य फलं लभेत् ।  
प्रत्याम्नाये गवां दद्याद् दशपञ्च सवत्सकम् ॥  
सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमं पदम् ।  
महापातकजालानि उपपातकमेव च ॥  
तत्सर्वं नाशयत्याशु तूलराशिमिवाऽनलः ।

मरीचिः—

प्रत्याम्नायं पराकस्य दश पञ्च गवां द्विजः ।  
दद्यात् पापविशुद्ध्यर्थं सर्वश्रेयोऽभिवृद्धये ॥



महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ।  
 प्रत्याम्नायेन कृच्छस्य पराकस्य जनाधिप ॥  
 सर्वकृच्छफलं प्राप्य प्रयाति परमं पदम् ।  
 पराककृच्छाचरणासमर्थस्य तत् प्रत्याम्नाये पञ्चदशधनैः  
 विप्रेभ्यः पृथक् पृथक् दत्त्वा शुध्यतीति वाक्यार्थः ।

इति हेमाद्रौ पराककृच्छप्रत्याम्नायः ।

अथ यावककृच्छलक्षणमाह ।

देवलः —

अथाऽतः संप्रवक्ष्यामि कृच्छं यावकसंज्ञितम् ।  
 तस्याऽऽचरणमात्रेण ब्रह्महत्या विमुच्यते ॥

मरीचिः—

शृणुध्वं ऋषयः सर्वं यावकं कृच्छमीरितम् ।  
 विप्रदाने च यत् पापं यत् पापं गृहदाहने' ॥



शस्त्रधारि च यत् पापं यत् पापं विप्रवञ्चने ।  
 विधवाव्रतलोपे च यतिमश्यामिनोरपि ॥  
 गृहस्थस्य सदाचारत्यागे यत् पापमुच्यते ।  
 अनृते चैव यत् पापं तपोविस्मयतस्तथा ॥  
 'यद्दानकीर्त्तने पापं यत् पापं गुरुवञ्चने ।  
 यत् पापं विप्रनिन्दायां यत् पापं मातृभर्त्सने ॥

भगिनीपितोरप्युपलक्षणम्—

यत् पापं धेनुनिन्दायां यत् पापं शिवभर्त्सने ।  
 यत् पापं विष्णुनिन्दायां यत् पापं देवकुत्सने ॥  
 अस्नानभोजने पापं अनध्यायेषु पाठने ।  
 दुःसङ्गतेष्व यत् पापं यत् पापं धनगर्वितः ॥  
 यत् पापं वेशसंसर्गे यत् पापं दानमोचने ।  
 यत् पापमृतुमन्यागे यत् पापं भाण्डविक्रये ॥  
 सकेशस्नानरहितविधवाकांस्यभोजने ।  
 पुनर्भुक्ता सताम्बूला यदा निन्दापरायणा ॥

(१) दानस्य कीर्त्तनात् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) वयमा तत्र इति लेखितपुस्तकपाठः ।



विधवा<sup>१</sup> कुरुते पापं पतिद्वेषपरायणा ।  
 पुत्रश्चेत् पितृविद्वेषी सदा विप्रः परान्नभुक् ॥  
 कुचेलः सर्व्वदा तिष्ठन्नदन्तक्षालिताननः ।  
 बह्वाशी निष्ठुरं वक्ता विप्रदानेषु विघ्नकृत् ॥  
 एतेषां पावनार्थाय यावकं कृच्छ्रमीरितम् ।

पराशरः—

सर्व्वपापविशुद्ध्यर्थं यावकं कृच्छ्रमीरितम् ।  
 तदाचरणमात्रेण विप्रोभवति शुद्धिमान् ॥  
 अव्रतघ्नयवान् पक्ता स्वगृह्याग्नौ व्रती शुचिः ।  
 तदूयवागूं पिवेत्कृत्वा<sup>२</sup> ब्रह्मपत्रपुटे वशी ।  
 यवाभावे ब्रीहयो वा श्यामाकास्तस्य मानतः ॥  
 तदन्नं व्रतिने दत्त्वा यवागूं विष्णवेऽर्पयेत् ।  
 नित्यकर्मादिकं कृत्वा पूर्व्ववत् शुचिमानसः ॥  
 पूर्व्ववदित्यत्र प्रातःस्नात्वा नित्यकर्मादिकं कृत्वा यावन्मन्दा-  
 यते रविः तावत्पर्य्यन्तं पूर्व्ववत् विभूतिविश्वरूपादिकं पठन्  
 नारायणमनुस्मरन् यवागूं पिवेत् । तदाऽऽह—

(१) सदाभ्रमति या नारी इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) आचरेदिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ममादा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



गौतमः—

ब्रह्मपत्रपुटे राजन् धृत्वा स्वयमतन्द्रितः ।  
 तावता मनसा विष्णुं स्मरेन् मन्दायिते रवी<sup>१</sup> ॥  
 यवागुं विष्णवे दत्त्वा पश्चात् पीत्वा स्वयं मुदा ।  
 पूर्ववत्क्षालनं कृत्वा पादपाण्योर्यथाक्रमम् ॥  
 द्विराचम्य शुचिर्भूत्वा स्वपेन्नारायणाग्रतः ।  
 अजस्रं धारयेदग्निं यावत् कुच्छं समाप्यते ॥  
 परेद्युरिव कुर्वीत द्वादशाहोभिरौरितम् ।  
 तदन्ते गौः प्रदातव्या पञ्चगव्यं पिवेत्तदा ।  
 एवं<sup>२</sup> कुर्याद् द्विजोयस्तु सद्यः पापात् स मुच्यते<sup>३</sup> ॥

इति हेमाद्रौ यावककुच्छलक्षणम् ।

- 
- (१) मन्दायते रविरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।  
 (२) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।  
 (३) प्रमुच्यते इति लेखितपुस्तकपाठः ।
-



अथ यावककृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

कृच्छ्रस्य यावकस्याऽस्य प्रत्याम्नायमिमं शृणु ।  
सकृत् कुर्याद् द्विजोयस्तु स सद्यः पापमुक्तिमान् ॥  
प्रत्याम्नायं प्रवक्ष्यामि यावकस्य महात्मनः ।  
सर्वपापप्रशमनं सर्वकृच्छ्रफलं नृणाम् ॥  
गावो दश प्रदातव्याः प्रत्याम्नायप्रकल्पिताः ।  
सवत्सा दुग्धसम्पन्नाः सुशीलाः समलङ्कृताः ॥  
विप्रेभ्यः प्रतिदातव्याः व्रतिना तु पृथक् पृथक् ।  
पञ्चगव्यं ततः पश्चात् पिवेद्देहविशुद्धये ॥  
एतत् कृच्छ्रस्य तु फलं यावकस्य सुखाप्तये ।

गौतमः—

यावकस्य महापापहारिणः फलदायकम् ।  
सर्वपापोपशमनं महत् पुण्यप्रदायकम् ॥  
सम्पूर्णवस्त्राभरणैः खुरशृङ्गारशोभिना ।  
सवत्सा युवती साध्वी गवां संख्या दश स्मृता ॥  
पयस्विन्योद्विजाग्रैभ्यः प्रदातव्याः फलाप्तये ।  
पञ्चगव्यं पिवेत् पश्चात् शुद्धोभवति मानवः ॥



एवं कृते नरः सम्यग् यावकस्य स्वरूपिणीम् ।  
गवां सख्यां द्विजाग्रयाय दत्त्वा फलमवाप्नुयात् ॥

इति हेमादौ यावककृच्छ्रप्रत्यान्नायः ।

अथ सान्तपनकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

कृच्छ्रसान्तपनस्याऽस्य लक्षणं सर्वपापहम् ।  
श्रीशैलं काशिकाक्षेत्रं गयाक्षेत्रं महत्तरम् ॥  
प्रयागं यमुनां सिन्धुं गङ्गासागरसङ्गमम् ।  
तथा सप्तनदीसङ्गं गौतमीं पापहारिणीम् ॥  
कृष्णवेणीं तुङ्गभद्रां हेमकूटं त्रिलोचनम् ।  
मार्कण्डेयं सिंहगिरिं तथा धर्मपुरीं स्वयम् ॥  
साक्षाद्रामजयावाटीं मल्लिकार्जुनमेव च ।  
अहोबलं नृसिंहञ्च तथैव भवनाशिनीम् ॥  
पिनाकिनीं नदीं तीरे वैद्यनाथं हरं तथा ।  
वेङ्कटाद्रिं स्वर्णमुखीं कालहस्तीश्वरं तथा ॥  
साक्षाद्वरदराजञ्च वरभूतं स्वयम्भुवम् ।  
एकाम्रञ्च तथा लिङ्गं सर्वतीर्थमहत्तरम् ॥



मध्यार्जुनेशं पापघ्नं कुम्भकोणं तदुद्भवम् ।  
 श्रीरङ्गं वा महाक्षेत्रं जम्बूनाथमतः परम् ॥  
 कावेरीं पापशमनीं मधुराविषये शृणु ।  
 सुन्दरेशञ्च तत्पत्नीं तथैवौघवतीं नदीम् ॥  
 तथाग्नेयदिशो भागे पञ्चेतो गन्धमादनः ।  
 रामलिङ्गं धनुष्कोटिं सर्वतीर्थपुरस्कृताम् ॥  
 तथैव दर्भशयनं तत्रत्यञ्च महत्तरः ।  
 ताम्रपर्णीमहाक्षेत्रं तत्रत्या विणुदेवता ॥  
 अनन्ताख्यं महाक्षेत्रं सुव्रह्मख्यं महत्तरम् ।  
 एतानि पुण्यक्षेत्राणि द्रष्टुः पापहराणि च ॥  
 निरोगी सुखजो यस्तु एतेषामेकमेव च ।  
 न स्नायाद्वा न पश्येद्वा कोऽन्यस्तस्माद्वेतनः ॥  
 धर्महीनस्य मर्त्यस्य कर्महीनस्य पापिनः ।  
 अजागलस्तनमिव तस्य जन्म निरर्थकम् ॥  
 यो मर्त्या जन्मदिवसात् षष्टिवर्षप्रवर्त्तनात्<sup>१</sup> ।  
 पुरा न पश्येत्<sup>२</sup> श्रीशैलं तन्मध्ये स तु गर्हभः ॥

द्विजन्मा यः स्वजन्मदिवसादारभ्य षष्टिवर्षमध्ये श्रीशैलचापाग्र-  
 वेङ्कटाचलवरदराजश्रीरङ्गादिकं नास्तिकतया न पश्यन् तिष्ठेत्  
 स सर्वपापभोगानन्तरं गर्हभोभवेदिति वामनपुराणोक्तश्रवणात्  
 तदाऽऽह—

(१) षष्टिसप्तमं प्रवर्त्तते इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) न पश्येद् यदि इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मरीचिः—

श्रीशैलं वेङ्कटाद्रिञ्च काञ्चीं श्रीरङ्गनायकम् ।  
रामेशञ्च धनुष्कोटिं स्वभावात् षष्टिवर्षगः ॥  
न पश्येन्नास्तिकतया गर्द्भोभुवि जायते ।  
तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति कृच्छ्रमान्तपनादिना<sup>१</sup> ॥

बृहस्पतिः—

पुण्यालयां पुण्यनदीर्न पश्येत् षष्टिवर्षगः ।  
महान्तं नरकं गत्वा पश्चाद् रामभतां व्रजेत् ॥  
तस्य दोषोपशान्त्यर्थं कृच्छ्रं मान्तपनं चरेत् ।  
पञ्चगव्यं पिवेत् पश्चाद् दोषादस्मात् प्रमुच्यते ॥

तल्लक्षणमाह—

देवलः—

प्रत्यहं शास्त्रविधिना<sup>२</sup> द्वादशाहं पयः पिवेत् ।  
शुद्धिमाप्नोति राजेन्द्र त्यागिनामपि दुर्लभाम् ॥

प्रजापतिः—

पूर्ववत् प्रातरारभ्य स्नानं सङ्कल्पमेव च ।  
नित्यकर्म तथा कृत्वा पूर्वोक्तं मनसा स्मरेत् ॥

विभूत्यादिकमित्यर्थः ।

१) इह इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) मासमग्नञ्च इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



यावन्मन्दायते भानुस्तावद्गोदुग्धमाहरेत्<sup>१</sup> ।  
 विश्णवे तन्निवेद्याऽथ पयोमात्रं पिबेद्वती ॥  
 स्वपेदेवसमीपे तु गन्धताम्बूलवर्जितः ।  
 ततः प्रभातवेलायां एवं कृत्वा महद्भूतम् ॥  
 द्वादशाहोभिरेतैश्च शुद्धोभवति पूर्वजः ।  
 पञ्चगव्यं पिबेत् सान्तपनं मुनिभिरीरितम् ॥

इति हेमाद्रौ सान्तपनकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ सान्तपनकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

प्रत्याम्नायं प्रवक्ष्यामि कृच्छ्रस्यैतस्य पापहम् ।  
 सर्वपापोपशमनं धर्मकामार्थमिद्धिदम् ॥  
 व्यासेन कथितं पूर्वं कृष्णायाऽमितर्तजसे ।  
 परस्वहारिणी ये च परदाररताश्च ये ॥  
 मद्यपानरता ये च अगम्यागामिनश्च ये ।  
 असच्छास्त्ररता ये च ये च दुष्टप्रतिग्रहाः ॥



मिथ्याभिवादिनो ये च ये च मित्रविभेदिनः ।  
 दीपनिर्व्वापिणो ये च याश्चकुष्माण्डभेदिकाः ॥  
 दिवा कपित्थच्छायासु रात्रौ चलदलेषु च ।  
 तमालवृक्षच्छायासु रात्रौ वा यदि वा दिवा ॥  
 स्वपतां पापनाशाय प्रत्याम्नायो महत्तरः ।  
 सदा निष्ठुरवक्तारः सदा याज्वापरायणाः ॥  
 परान्ननिरता ये च नित्यकर्मविरोधिनः ।  
 तेषामियं विशुद्धिः स्यात् प्रत्याम्नायः परात्परः ॥

गौतमः—

सर्वपापविशुद्ध्यर्थं सर्वदोषविवर्जितम् ।  
 प्रत्याम्नायं तदा कुर्यात् यदा पापसमुद्भवः ॥  
 सान्तपनस्य कुच्छस्य प्रत्याम्नायः स्मृतो दश ।  
 गावोऽलङ्कारसंयुक्ताः सत्तीराः साधुवृत्तयः ॥

मरीचिः—

प्रत्याम्नायं प्रशंसन्ति गवां दश मुनीश्वराः ।  
 सान्तपनस्य कुच्छस्य सर्वपापापनुत्तये ॥

व्यासः—

सान्तपनाख्य कुच्छस्य मुनिभिः परिकीर्तितः ।  
 'प्रत्याम्नायः प्रयच्छेत्तु दश गाः समलङ्कृता इति ॥

इति हेमाद्रौ सान्तपनकुच्छप्रत्याम्नायः ।



## अथ महासान्तपनकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

महासान्तपनं नाम कृच्छ्रं सर्वफलप्रदम् ।  
पुरा पुरन्दरः साक्षाद् गौतमस्य सतीं व्रजन् ॥  
तेन पापेन महता स पापमलदूषितः ।  
वृक्षमूलमुपागम्य वृद्धभावमुपाश्रितः ॥  
तदा प्रमन्नवरदशकृपाणिः सवाहनः ।  
दृष्ट्वा पुरन्दरं प्राह दयया भक्तवत्सलः ॥  
एतत्पापविशुद्ध्यर्थं महासान्तपनं चर ।  
गुरुदारांस्तु यो गच्छेच्चाण्डालीगमनं चरेत् ॥  
स्वदारागमनं <sup>१</sup>कुर्याद् भगिनीं यः प्रवर्द्धयेत् ।  
चरेद्वा रजकीं ग्रामे ग्रामचाण्डालदारगः ॥  
विप्रचाण्डालदारिषु रितः मित्रा द्विजाधमः ।  
एतेषां निष्कृतीराम महासान्तपनं परम् ॥  
<sup>२</sup>सत्यस्याऽभाषणे पापं असत्यानाञ्च भाषणे ।  
परदत्तापहारे च स्वदत्तापहारे तथा ॥  
असूयानिरतिञ्चैव सदा भैषज्यवर्त्तनम्<sup>३</sup> ।  
व्रतकाले आइकाले पश्येद् देवार्चने यदि ॥

१) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

२) असत्यभाषणे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

३) भैषज्यवर्त्तिनी इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पाषण्डं पतितं ब्राह्म्यं तुलास्वकृतनिष्कृतिम् ।

षोडशमहादानमध्ये यत्र यत्र प्रतिग्रहः प्राप्तः तत्र तत्राऽऽ-  
चार्याणामेकवचनं, तुलास्विति बहुवचनं प्राक् प्रदर्शितम् ।

तदाऽऽह—

मरीचिः—

चाण्डालं पतितं ब्राह्म्यं तुलास्वकृतनिष्कृतिम् ।

न स्मरेत् कर्मकाले तु न पश्येद्वै कदाचन ॥

एतेषां पापराशीनां महासान्तपनं परम् ।

गालवः—

द्विदिनं समुपोष्यैव द्विदिनं पूर्व्ववत् पयः ।

पूर्व्ववन्नियमं कृत्वा द्वादशाहं शुध्यति ॥

पराशरः—

माषमात्रं पिवेत् क्षीरं द्विदिनं समुपोषयेत् ।

एवं कुर्याद् द्वादशाहं पूर्व्ववन्नियमाश्रितः ॥

मनुः—

पूर्व्ववत् प्रातरारभ्य द्विजोजियसपूर्व्वकम् ।

यदा मन्दायते भानुः तदा नियममुत्सृजेत् ॥

माषमात्रं पिवेत् क्षीरं विष्णवे तन्निवेदितम् ।

द्विनहयं पयः पीत्वा द्विदिनं समुपोषयेत् ॥

स्वपेच्च पूर्व्ववद्देवमर्मापि व्रतमाचरन् ।

एवं द्वादशाहं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥



दिनद्वयमुपोषणं दिनद्वयं पयोभक्षणं एवं क्रमाद् द्वादशाहोभिः  
महासान्तपनं स्मृतम् ।

इति हेमाद्रौ महामान्तपनकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ महामान्तपनप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

महामान्तपनकृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायं शृणुष्व मे ।

यदाऽऽचरणमात्रेण विप्रः पापात् प्रमुच्यते ॥

महाराजविजये—

महामान्तपनस्याऽस्य प्रत्याम्नायो महानयम् ।

तस्याऽऽचरणमात्रेण महामान्तपनं परम् ॥

चतुर्विंशतिमते—

महामान्तपनं नाम कृच्छ्रं पापहरं परम् ।

ब्रह्महत्यादिशमनमुपपातकनाशनम् ॥

कृच्छ्रस्यैतस्य विप्रः स्यात् चर्तुं सर्वमशक्तिमान् ।

प्रत्याम्नायं प्रकुर्वीत 'तदा कृच्छ्रफलाप्तये ॥



गावोदेयाः प्रयत्नेन विप्रेभ्यः षोडशाऽमलाः ।  
अलङ्कृता सुपुष्पाद्यैर्वस्त्राभरणभूषिताः ॥  
सुसाध्वाश्च पयस्विन्यः सवत्साः पापहारिकाः ।

पराशरः—

महासान्तपनस्याऽस्य प्रत्याम्नायं विदुर्वृधाः ।  
गावः षोडश विप्रेभ्यो देयाः सम्यक् सुखामये ॥  
अलङ्कृताश्च वस्त्राद्यैः पयस्विन्यः पृथक् पृथक् ।  
सवत्साः साधुशीलिन्यः प्रत्याम्नाय उदीरितः ॥

इति हेमाद्रौ महासान्तपनकृच्छ्रप्रत्याम्नायः ।

अथ कायकृच्छ्रस्वरूपमाह ।

देवलः—

प्राजापत्यं तप्तकृच्छ्रं पराकं यावकं तथा ।  
ततः सान्तपनं कृच्छ्रं महासान्तपनं तथा ॥  
कायकृच्छ्रं तथा प्रोक्तमतिकृच्छ्रं विगुडिदम् ।  
उदुम्बरञ्च पर्णञ्च फलकृच्छ्रमतः परम् ॥  
कृच्छ्रं माहिष्वरञ्चैव ब्रह्मकृच्छ्रं तथैव च ।  
धान्यं स्वर्णमयं कृच्छ्रं दश पञ्चैव कीर्तितम् ॥



पूर्वं त्रयोदशकच्छ्राणीत्युक्तं इदानीं लिङ्गपुराणोक्तत्वात् अति  
कच्छ्रकायकच्छ्राभ्यां सह पञ्चदशधा भवति, सर्वेषां एव उप-  
कारकत्वात् लिखितम् । कायकच्छ्रातिकच्छ्रलक्षणं लिङ्गपुराणोक्तं  
विशिनष्टि ।

कायकच्छ्रं प्रवक्ष्यामि महापातकशुद्धये ।

उपपातकशुद्ध्यर्थं मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥

भविष्यपुराणे—

तुलाधिनुमहस्त्रे च अष्टमाब्दं द्विजोत्तम ।

दाता प्रतिग्रहीतारमन्योन्यं नाऽवलोकयेत् ॥

यदि दैवाद् अनुप्राप्तं तीर्थेषु च महोत्सवे ।

तदा तद्दोषशान्त्यर्थं कायकच्छ्रं समाचरेत् ॥

द्वितीये जपकल्पूतः महस्त्रं विधिपूर्वकम् ।

उभयोर्दानयो राजा तथा ब्रह्मसदस्ययोः ॥

चत्वार्येव तु वर्षाणि तन्मुखं नावलोकयेत् ।

दातुः कायकच्छ्रमितरयोर्ब्रह्मसदस्ययोश्चतुःसहस्रगायत्रीजपः  
अन्यथा तु दोषः ।

बृहस्पतिः—

दातुः प्रतिग्रहीतुश्च कायकच्छ्रं जपोमहत् ।

अन्योन्यालोकने राज्ञस्तद्दानं निष्फलं भवेत् ॥



न निष्कृतिमकृत्वाऽवेक्षेतेत्यर्थः सर्वत्र महादानप्रतिग्रहेषु  
दातृप्रतिग्रहीतोरब्रह्मसदस्ययोरेवमुक्तं वेदितव्यं प्रायश्चित्तम् ।

लाङ्गले पञ्चसंज्ञे च विश्वचक्रे महत्तरे ।

सप्तमाब्दं तथा राजा तन्मुखं नाऽवलोकयेत् ॥

सप्तसागरदाने च चक्षुर्धनोः प्रतिग्रहे ।

महाभूतघटे चैव तुलावन्नाऽवलोकयेत् ॥

उक्तेषु सप्तप्रतिग्रहेषु दात्राचार्य्यब्रह्मसदस्यानां प्राग्बत्काय-  
कच्छादिकं वेदितव्यम् ।

हिरण्यगर्भे ब्रह्माण्डे 'दातुः कायं हि पूर्ववत् ।

अन्योन्यलोकने राजा न दानफलमश्नुते ॥

आचार्य्यब्रह्मसदस्यानां पूर्ववत् ।

कल्पपादपदाने च तथा कल्पलताग्रहे ।

षडब्दं तन्मुखं राजा विप्रो वा नाऽवलोकयेत् ॥

कायकच्छं गायत्रीजपः संख्या क्रमेण वेदितव्या ।

हिरण्यधेनुदाने च हिरण्याश्वप्रतिग्रहे ॥

पूर्ववत् ऋतुसंख्याद्मन्योन्यं नाऽवलोकयेत् ॥

कच्छादिकं पूर्ववत् ।

हिरण्याश्वरथे चैव हेमहस्तिरथे तथा ।

अष्टमाब्दं यदा 'न स्याद् अन्योन्यं नाऽवलोकयेत् ॥



पूर्ववत् कृच्छादिकम् ।

धरादाने कालपुरुषे कालचक्रे तथैवच ।

तिलगर्भे राशिचक्रे पञ्चमाब्दं न लोकयेत् ॥

यदि दैवात् समुत्पत्तिरतिकृच्छं चरेद्वशी ।

पुनः संस्कारकृद्भिः पटगर्भविधानतः ॥

अन्यथा दोषमाप्नोति दाता 'न फलमश्नुते ।

कोटिहोमे लक्षहोमे पापपुरुषे 'प्रतिग्रहे ॥

आचार्यस्य मुखं दाता युगाब्दं नाऽवलोकयेत् ।

तत्राऽप्यतिकृच्छं दातुः । इतरिषां पुनः संस्कारः ।

श्वेताश्वे मृतशय्यायां गजदानप्रतिग्रहे ।

'अब्दं तु तन्मुखं दाता पूर्ववन्नाऽवलोकयेत् ॥

ब्रह्मकृच्छं चरेद्दाता इतरे पटगर्भतः ।

कपिलादिमुखीदाने दासीगृहपरिग्रहे ॥

अब्दमेकं द्विजं दाता पूर्ववन्नाऽवलोकयेत् ।

पर्णकृच्छं ततः प्रोक्तमितरिषां हि पूर्ववत् ॥

आलिङ्गने तैलघटे महापुरुषभोजने ।

षण्मासं नाऽवलोकितं पर्णकृच्छं हि पूर्ववत् ॥

तुलादिमसदानेषु ऋत्विजोहोतृकानपि ।

तद्वाःस्थान्नाऽवलोकितं फलकृच्छमुदाहृतम् ॥

(१) विफलमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विग्रहे इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) त्यब्दं इति काशीपुस्तकपाठः ।



मासत्रयमित्यर्थः

सर्वेषां ऋत्विजां प्रोक्तं सहस्रं जप्यमादरात् ।

आज्यालङ्कारधेनूनामनङ्गाहादिसंग्रहे ॥

महिषीच्छागवस्तानां मासमेकं निरन्तरम् ।

ऋत्विजां शतगायत्री दाता धेनुं समाचरेत् ॥

सात्त्विकदानेषु तु चतुर्विंशतिमूर्त्यादिषु दाता अवलोकयेत्  
तेन न दोषः ।

गालवः—

चतुर्विंशति मूर्त्यादिदानेषु द्विजवल्लभ ।

दशावतारदानेषु अर्द्धनार्यादिषु प्रभुः ॥

मुखावलोकने दातृग्रहीत्रोर्न तु दोषभाक् ॥

अर्द्धनारीश्वरलक्ष्मीनारायणप्रतिमोमामहेश्वरप्रतिमादानेषु कृष्णा-  
जिनतिलविरहितेषु दातृप्रतिग्रहीत्रोर्मुखावलोकनं न दोषहेतुः ।

कृष्णाजिनतिलदानप्रतिमाप्रतिग्रहे तु विशेषमाह ।

जावालिः—

दशस्वेषु योगेषु युक्तिमत्सु नृपोत्तमः ।

तिलाजिनप्रदानेषु षण्मामं नाऽवलोकयेत् ॥

उत्क्रान्तिवैतरिण्योश्च तथा प्रतिकर्तौ नृप ।

अन्नप्रतिग्रहे तात एकाहे भोजने तथा ॥

उग्रशान्तिषु सर्वत्र तथा महिषसंग्रहे ।

कर्त्ता नाऽवलोकयेद्विप्रं कायकृच्छ्रमथाचरेत् ॥



षण्मासमशक्तौ, शिशूनां जनने मूलादयः अभुक्ताः तत्सन्धयः  
उग्रनक्षत्राणि तेषु स्त्रीणां प्रथमार्त्तवं तत्र शान्तयस्तु उग्राः,  
कायकच्छलक्षणमाह ।

मरीचिः—

चत्वार्यहानि ग्रासाःस्युरेकैकं प्रत्यहं व्रती ।  
निराहारस्तथा तेषु चतुर्थे तेषु भोजनम् ॥  
तदन्ते व्रतिभिर्देया गौरेका चान्द्रभक्षणम् ।  
कायकच्छमिदं प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

प्रजापतिः—

चतुर्वहःसु ग्रासाःस्युः निवाहारस्तथा पुनः ।  
चतुर्थे ग्रासभक्षः स्यात् कायकच्छमिदं परम् ॥

मरीचिः—

आसायं प्रातरारभ्य स्नात्वा विप्रो यथाविधिः ।  
अभ्यर्च्य विष्णुं गन्धाद्यैरविरस्तं गतो यदा ॥  
तदा ग्रामं समश्नीयात् दिश्वर्पितममं सुधीः ।  
प्रक्षाल्य पूर्ववत् सर्वं द्विराचम्य शुचिस्तथा ॥  
स्वपेदेवसमौपेतु नारायणमनुस्मरन् ।  
पुनः प्रातः समुत्थाय कृत्वा नियमपूर्वकम् ॥



ततः परं निराहारस्तथा 'शेषाहभोजनम् ।  
गोदानं व्रतपूर्त्यर्थं पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥  
कायकृच्छ्रमिदं देव द्विजानां पावनं स्मृतम् ।

इति हेमाद्रौ कायकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ कायकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

शृणु राम प्रवक्ष्यामि कायकृच्छ्रस्य धीमतः ।  
प्रत्याम्नायं महापुण्यं शृण्वतां पापनाशनम् ॥  
दश गावः प्रदातव्याः सवत्सा भूषिता नृभिः ।  
पयस्विन्यः सुशीलाश्च स्वर्णशृङ्गोमहत्तराः ॥  
एतस्य कायकृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायो 'मुनीरितः ।

गालवः—

सर्वपापहरस्याऽस्य कायकृच्छ्रस्य वै नृप ।  
प्रत्याम्नाया दश गवां सवत्साः साधु<sup>१</sup>वृत्तयः ॥

(१) चतुर्षु इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) महर्षिरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) वृत्तिमान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



अलङ्कारयुताः माध्याः पयसा परिपूरिताः<sup>१</sup> ।

एतदाचरणेनैव कायकच्छफलं लभेत् ॥

कथं—

कायकच्छस्य सर्वस्य सर्वपापहरस्य च ।

राज्ञां प्रतिग्रहीतृणां सर्वपापहरं परम् ॥

स्नात्वा पुण्यदिने विप्रः सुमङ्गल्यैव पूर्ववत् ।

विप्रानभ्यञ्जेय गन्धार्घ्यैर्दशधेनूः पृथक् पृथक् ॥

दद्यात्प्रत्याम्नायभूताः सर्वपापापनुत्तये ।

एतस्याऽऽचरणे पूर्णं कायकच्छफलं लभेत् ॥

इति हेमाद्रौ कायकच्छप्रत्याम्नायः ।

अथाऽतिकच्छलक्षणमाह ।

देवलः—

अथाऽतिकच्छं वक्ष्यामि सर्वपापोपशान्तये ।

सर्वकच्छव्रतं नृणां शृणु राम प्रयत्नतः ॥

अतिकच्छस्य माहात्म्यं वर्णितुं केन शक्यते ।

पुरा हि कौशिको नाम ऋषिर्धर्मपरायणः ॥



वशिष्ठात्मजघाल्यासीत् कस्मात् कारणतः प्रभो ।  
 तस्य हत्याविनाशार्थं कृच्छ्रमाह प्रजापतिः ॥  
 ब्रह्महत्या गुरोर्हत्या भ्रूणहत्या महत्तरा ।  
 कन्याहत्या सतीहत्या तथा हत्या महत्यपि ॥  
 वीरहत्या धेनुहत्या गजाश्वमहिषीवधः ।  
 तृणकाष्ठद्रुमच्छेदः शस्त्रारामादिभेदनम् ॥  
 तटाककूपकामारभेदनं देववेश्मनाम् ।  
 गृहदाहो द्विजक्षेत्रहरणं पापवर्द्धनम् ॥  
 धान्यारामादिदहनं दाहनं महिषीगवाम् ।  
 शृङ्गलाङ्गूलविच्छेदस्तथा तेषां विमर्दनम् ॥  
 शुकचापभुजङ्गानां मीनहंसशुनामपि ।  
 कुक्कुटानाञ्च काकानां हिंसनं सृगमारणम् ॥  
 दारुच्छेदः कपाटस्य पापौघानां विभेदनम् ।  
 दाहनं वनपर्णानामार्द्राणामिह<sup>१</sup> भूमिप ॥  
 सर्वाभामेव हिंसानामतिकृच्छ्रं विशोधनम् ।  
 सर्वकृच्छ्रप्रदञ्चैव सर्वोपद्रवनाशनम् ॥

शालवः—

अतिकृच्छ्रस्य महतः तत्प्रकारमिहोच्यते ।  
 अग्रमात्रान् यवान् शुभ्रान् श्यामाकांस्तण्डुलानपि ॥  
 एकैकं द्रव्यमामादाय व्रतादौ पूर्ववच्चरेत् ।



स्नानसङ्ख्यादिमित्यर्थः—

भागत्रयं तदा कृत्वा तण्डुलान् पूर्वमानतः ।  
 व्रतादौ मध्यमदिने व्रतान्ते पारयेत् त्रयम् ॥  
 व्रतादौ भक्षयेद्भासं पूर्ववत् व्रतमाचरन् ।  
 चतुर्थकाल आयाते प्रक्षाल्याऽङ्गानि पूर्ववत् ॥  
 स्वपिहिवसमीपे तु नारायणपरायणः ।  
 ततः प्रभाते विमले सन्ध्यादीन् पूर्ववच्चरेत् ॥  
 निराहारस्तदा भूत्वा यावत् सायं दिनं ऋतुम् ।  
 तत्रैव भक्षयेद्भासं द्वितीयाऽङ्गं विचक्षणः ॥  
 तत्रापि पूर्ववत् कृत्वा द्वादशे दिवसे शुभम् ।  
 तृतीयाङ्गं तदा भुक्त्वा गौरेका विप्रमात्कृता ॥  
 ब्रह्मकूचं ततः पीत्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः ।  
 अतिकृच्छ्रमिदं सर्वमुक्तं मुनिभिरादरात् ॥  
 एतस्याऽऽचरणेनैव सर्वदोषात् प्रमुच्यते ।

इति हेमाद्रौ अतिकृच्छ्रलक्षणम् ।



## अथातिकृच्छ्रप्रत्यान्नायमाह ।

देवलः—

अतिकृच्छ्रस्य कृच्छ्रस्य प्रत्यान्नायो मनीषिभिः ।  
प्रोक्तः सर्वहितार्थाय सर्वपापप्रणाशनः ॥  
सङ्कलीकरणानाञ्च कन्याधेन्वादिविक्रये ।  
तिलतण्डुलधान्यानां फलानां रसविक्रये ॥  
महापातकभूतानां शोधनं पापनाशनम् ।

प्रत्यान्नायमाह—

मार्कण्डेयः —

प्रत्यान्नायमिमं राजन् वक्ष्यामि शृणु पार्थिव ।  
यदाचरणमात्रेण अतिकृच्छ्रफलं लभेत् ॥  
दश गावः प्रदातव्या वस्त्राद्यैः समलङ्कृताः ।  
साधुवृत्ताः पयस्विन्यो विप्रेभ्यश्च पृथक् पृथक् ॥

मनुः—

अतिकृच्छ्रस्य महतः प्रत्यान्नायं शृणुष्व मे ।  
विप्रेभ्यो दशगावस्ताः पूर्ववत् पूजिता अमूः ॥  
स्वर्णशृङ्गादिभिः सम्यक् भूषयित्वा पृथक् पृथक् ।  
शुचिभिश्च प्रदातव्या साधुभ्यो<sup>१</sup> वेदवित्तमैः ॥



इदमुक्तेन मार्गेण कृत्वा कृच्छ्रफलं लभेत् ।

इति हेमाद्रौ अतिकृच्छ्रप्रत्याम्नायः ।

अथ उदुम्बरकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

उदुम्बरस्य कृच्छ्रस्य लक्षणं वच्मि तत्त्वतः ।

कृच्छ्रं महत्तरं भूप सर्वपापहरं परम् ॥

पितृमातृपरित्यागे सोढराणां हि वालिशान् ।

भगिनीभागिनेयादीन् गर्भिण्यातुरकन्यकाः ॥

बालाश्च कुलवृद्धाश्च अतिथीनागतान् प्रभो ।

मामर्थे सर्व्ववन्धूनां त्यागो दोषो महत्तरः ॥

ब्रह्महत्यामवाप्नोति यत्रोपेक्षापरायणः ।

मातरञ्च स्वमारञ्च अनाथां गतभर्तृकाम् ॥

पुत्रीमनाथां विधवां यस्यर्जित् कारणं विना ।

पितृभगिनीं मातृभगिनीमपुत्रां गतभर्तृकाम् ॥

अबलां यस्यर्जिच्छक्तः<sup>१</sup> स वै नरकमश्नुते ।



महाभारते—

पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने ।  
पुत्रस्तु स्याविरे मा वै न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ॥  
उन्नतं पितरं क्लीवं काणं वधिरमेव च ।  
'श्रेयोर्थी यत्नतोरक्षेद् अनवस्त्रादिभिः सदा ॥

गौतमः—

अरक्षणीयान् यो रक्षेद् रक्षणीयान् परित्यजेत् ।  
स वै नरकमाप्नोति पशुयोनिषु जायते ॥  
वेश्यादासी तन्मातरस्तत्पुत्राः कुण्डगोलकाः विटगायका-  
श्चाव्वाकास्वरक्षणीयाः, अनाथा गतभर्तृका निष्पुत्रा पितृव्य-  
ज्येष्ठभ्रात्रादयो निष्पुत्रा निर्धनाः काणकुञ्जादयः एते यत्नतो  
रक्ष्याः, एतेषां परित्यागे दोषः, तत्प्रायश्चित्तमाह—

मार्कण्डेयः—

सामर्थ्यं सति यस्त्यजेदेतान् बन्धुजनान् स्वकान् ।  
काकयोनिं समासाद्य दुःखी भूयात् पुनः पुनः ॥  
मासं पक्त्वा पञ्चगव्यं षण्मासं पर्णकृच्छकृत् ।  
वत्सरौदुम्बरं प्रोक्तमतश्चान्द्रायणं परम् ॥

उदुम्बरकच्छलक्षणमाह—

पराशरः—

प्रस्थद्वयं तण्डुलानां श्यामाकांश्च यवानपि ।  
दशद्विधा विभज्यैवं प्रत्यहं पाचयेद्भृती ॥



उदुम्बरैः शुष्कपर्णैः पाचयेन्नान्यदारुभिः ।  
 उदुम्बरैश्च पर्णैश्च आर्द्रैः पत्रपुटं मुदा ॥  
 तत्र निक्षिप्य तं ग्रासं विष्णवे पूर्वमादिशेत् ।  
 चतुर्थकाल आयाते पूर्ववन्नियमं चरेत् ॥  
 भक्षयेदुत्तमं ग्रासं मौनव्रतपरायणः ।  
 पादौ प्रक्षाल्य पाणी च हिराचम्य विधानतः ॥  
 सायाह्निकं ततः कृत्वा स्वपेन्नारायणाग्रतः ।  
 पुनः प्रभाते विमले द्वितीयं पूर्ववच्चरेत् ॥  
 ग्रासपचननियमादिकमित्यर्थः ।  
 एवं द्वादश ग्रासांश्च द्वादशाहःसु भक्षयेत् ।  
 तत्राऽपि गौः प्रदातव्या पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ॥  
 एवमौदुम्बरं कृच्छ्रं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ।

इति हेमाद्रौ उदुम्बरकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ उदुम्बरकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवल—

उदुम्बरस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायं परं नृणाम् ।  
 यस्याऽऽचरणमात्रेण सम्पूर्णफलमश्रुते ॥



मार्कण्डेयः—

प्रत्याम्नायः पुरा राम जामदग्न्येन भाषितः ।

मातृहत्याविशुद्ध्यर्थं किमुताऽन्यस्य पापिनः ॥

महाराजविजये—

कच्छस्यौदुम्बरस्याऽस्य प्रत्याम्नायो महानयम् ।

सर्वपापविशुद्ध्यर्थं सृष्टवान् पद्मभूः पुरा ॥

चतुर्विंशतिमते—

उदुम्बरस्य कच्छस्य प्रत्याम्नायं शृणुष्व नः ।

अष्टौ गावः प्रदातव्याः सालङ्काराः सदक्षिणाः ।

हेमशृङ्गो रौप्यखुराः कांश्यदोहनसंयुताः ॥

ताम्रपृष्ठ्यः स्वर्णघण्टाः वस्त्राभरणमूषिताः ।

द्विजेभ्यश्च प्रदातव्याः सर्वलक्षणलक्षिताः ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तः सम्पूर्णं फलमश्नुते ।

कच्छाचरणसमर्थस्तु तत्प्रत्याम्नायकरणे सम्पूर्णकच्छफल-

माप्नोति ।

इति हेमाद्रौ उदुम्बरप्रत्याम्नायः ।



## अथ पर्णकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

पर्णकृच्छ्रं द्विजश्रेष्ठाः शृण्वन्तु परमं शुभम् ।  
सर्वपापप्रशमनं सर्वदोषोपशान्तिदम् ॥  
ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात् सुरापी श्यावदन्तकः ।  
स्वर्णस्तेयी तु कुनखी दुश्कर्मा गुरुतल्पगः ॥  
अन्नहर्त्ता भवेद् गुल्मी शाकस्तेयी तु दर्दरः ।  
स्तेयिनो धान्यराशीनां कण्डूतिः सततं द्विजाः ॥  
ताम्रस्तेयी दीर्घवृषणः प्रमेही पर्वमैथुनी ।  
शिरोवर्णी स्नानहीनः पित्तवान् त्रपुसीसहा ॥  
गजचर्मा नागहन्ता अश्वहन्ता महावर्णी ॥  
कण्ठभूषणहारी स्याद् गरुडमाली महान् भुवि ।  
रक्तप्रमेही मनुजो पुष्पवत्यङ्गनागमः ॥  
भगिनीगमनाङ्गुर्मा मधुमर्त्ता भवेन्नरः ।  
मातुः सपत्नीं भगिनीं गच्छेत् कामातुरो नरः ॥  
स पापमनुभूयाऽऽशु रोगी भूयाद्भगन्दरौ ।  
स्वमारं यः पुमान् गच्छेज्जायते मूत्रकृच्छ्रवान् ॥  
धेनुहन्ता महापापी अर्शोरोगी भवेद्भुवि ।  
गोवत्सहननान् मर्त्यः स भूयादर्शमो' भुवि ॥



शिवनिर्माल्यभुक्पापी जायते हिक्रवान् सदा ।  
 अजीर्णरोगी 'हठकुट्टु गृहदाही प्रशूलिमान् ॥  
 बन्धोर्ग्रहणजादु दोषाज्जातते श्वासकासवान् ।  
 स्रवद्गर्भा भवेत् सा तु बालकं हन्ति या विषैः ॥  
 अन्यमालिङ्गते नारी सा वै स्फोटस्तनी भवेत् ।  
 क्षौरं मुष्णाति या नारी तेन हीनाऽन्यजन्मनि ॥  
 पतिव्रतापहारी च वृषणव्रणरोगवान् ।  
 विधवासङ्गजादोषात् शिस्त्रदेशवर्णा भवेत् ॥  
 पुष्पस्तेयी वक्रनासः कोशस्तेयी तु 'पाटवान् ।  
 गन्धस्तेयी तु दुर्गन्धः कामुकः सन्ततज्वरी ॥  
 विवाहविघ्नकृन्मर्त्यो जायते कृष्णविन्दुकः ।  
 तटाकारामभेदी च सदा दुःखी भवेन्नरः ॥  
 इत्येवमादयो दोषाः महानरकदा नृणाम् ।  
 एतेषां शोधनार्थाय पर्णकुच्छ्रं समाचरेत् ॥  
 महापातकजालानां लघुनान्तु द्विजन्मनाम् ।  
 आर्द्राणाञ्चैव शुष्काणां पर्णकुच्छ्रं विशोधनम् ॥

पर्णकुच्छ्रलक्षणमाह.—

पराशरः,—

पर्णकुच्छ्रस्य पर्णानि मध्यमानि द्विजोत्तमः ।

हादशाहाष्टपर्यन्तं नित्यं शुचिरलङ्कृतः ॥

(१) गठकुट्टिति क्रातिलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) घेटवान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



पूर्ववद्विष्णुमभ्यर्च्य रविरस्तं गतो यदा ।  
 त्रिभिः पत्रैः ब्रह्मभूतैः कृत्वाऽचैव पुटत्रयम् ॥  
 त्रिषु वेश्मसु विप्राणां वेदाध्ययनशीलिनाम् ।  
 भिक्षापात्रं समानीय त्रिषु पत्रपुटेष्ठिह ॥  
 एकं पुटस्थं देवाय विप्रायैकं समर्पयेत् ।  
 अवशिष्टं तदश्नीयात् हरिनामपरायणः ॥  
 स्वपेदेवसमीपे तु सञ्चिन्त्य मनसा हरिम् ।  
 ततः प्रभातवेलायां पूर्ववत् सकलं चरेत् ॥  
 विप्राय देया गौरिका पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।  
 पूर्णकुच्छ्रमिदं भृष शोधनं पापकर्मणाम् ॥  
 यस्याऽऽचरणमात्रेण चान्द्रायणफलं लभेत् ।

इति हेमाद्रौ पूर्णकुच्छ्रलक्षणम् ।

अथ पूर्णकुच्छ्रप्रत्यास्नायमाह ।

देवलः,—

पूर्णकुच्छ्रस्य राजर्षे प्रत्यास्नायं वदामि ते ।  
 पूर्णपापोपशमनं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥



सर्वकामप्रदं नृणां सर्वकृच्छ्रफलप्रदम् ।  
 पञ्च गावः प्रदातव्याः सालङ्काराः सवत्सकाः ॥  
 हेमशृङ्गोरोप्यखुराः कांस्यदोहनसंयुताः ।  
 साधुगौला युवत्यश्च विप्रेभ्यश्च पृथक् पृथक् ॥  
 पर्णकृच्छ्रस्य विप्रर्षे प्रत्यान्नायो महत्तरः ।

इति हेमाद्रौ पर्णकृच्छ्रप्रत्यान्नायः ।

अथ फलकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः,—

फलकृच्छ्रस्य देवर्षे लक्षणं कथ्यते मया ।  
 शृणु ब्रह्ममुने चित्रं सर्वपापप्रणाशनम् ॥  
 ये मातृघातिनो लोके ये चाऽपि पितृघातकाः ।  
 ये च स्युर्भ्रातृहन्तारस्तेषामेतद्विनिष्कृतिः ॥  
 ये वा गर्भविभेत्तारो ये वा स्युर्गर्ढायिनः ।  
 ये वा ग्रामादिभेत्तारो ये वा कुटजभेदिनः ॥  
 येऽपीह पिशुना लोके ये वा स्युस्तेयिनः सदा ।  
 ये वाऽऽचारविभेत्तारस्तेषामेतद्विनिष्कृतिः ।



याश्च नार्थः पतिं त्यक्त्वा रमन्तेऽन्यान् जनान् 'सदा ॥  
 तासामपौदं शुद्धार्थं पुरा सृष्टं स्वयम्भुवा ।  
 ब्रह्मस्वहारिणो नित्यं नित्यकर्मविभेदिनः ॥  
 पितृश्राद्धविभेत्तारस्तेषामेतद्विनिष्कृतिः ।  
 उच्छिष्टभोजिनो ये च ये च मिथ्याभिवादिनः ॥  
 ये वै कुणपहन्तारस्तेषामेतद् विनिष्कृतिः ।  
 मद्यपानरता नित्यं 'नैमित्तिकविभेदिनः ॥  
 सर्वश्राद्धविभेत्तार स्तेषामेतद्विनिष्कृतिः ।  
 महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ॥  
 कृच्छ्रेणैतेन सहता सर्वपापैः प्रमुच्यते ।  
 महान्तः पापकर्माणः महापापरताः सदा ॥  
 एतेन कृच्छराजेन पुनन्ति सततं द्विजाः ।  
 फलकृच्छ्रं महापापहारि सम्पत् प्रवर्द्धनम् ॥  
 दिने दिने मुनीन्द्राश्च कृत्वैतत् शुद्धिमाप्नुयुः ।  
 कायशुद्धिप्रदं कृच्छ्रं सर्वकृच्छ्रफलप्रदम् ॥  
 सर्वपापहरं पुण्यं फलकृच्छ्रं महत्तरम् ।

फलकृच्छ्रलक्षणमाह—

देवलः—

प्रातः स्नात्वा शुचिर्भूयात् पूर्ववत् शुद्धिहेतवे ।  
 तावज्जपन् सदा तिष्ठेद् यावदस्तं गतोरविः ॥

(१) यदि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) नित्यकर्म इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



तावद्वती स्थिरमनाः नित्यकर्म समापयेत् ।  
 कदलीफलमेकञ्च विण्वे तन्निवेदयेत् ॥  
 तदेव भक्षयेत् पूर्वं तद्वती मौनपूर्वकम् ।  
 एकैकं बीजसम्पूर्णं भक्षयेच्च फलत्रयम् ॥

चूतफलैर्विना—

एवं द्वादशरात्राणि स्वपेन्नारायणाग्रतः ।  
 गौर्देया विप्रवर्याय ब्रह्मकूचं पिवेत्ततः ॥  
 फलकृच्छ्रमिदं सर्वं कथितं ब्रह्मणोदितम् ।  
 कृच्छ्रस्यैतस्य माहात्म्यान् नश्यत्येव महद्भयम् ॥

इति हेमाद्रौ फलकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ फलकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवल—

कृच्छ्रस्य तस्य मुनयः प्रत्याम्नायं महोन्नतम् ।  
 शृण्वन्तु सर्वपापघ्नं सर्वश्रेयःप्रदं नृणाम् ॥  
 पुरा हि गालवो नाम ब्रह्महत्याभयातुरः ।  
 विष्णुं शरणमापेदे सर्वलोकहितैषिणम् ॥



अनुग्राह्योऽस्मि भगवन् त्वया लोकहितैषिणा ।  
 रक्ष मां देवदेवेश त्वदङ्घ्रिशरणागतम् ॥  
 ब्रह्महत्यादिपापानां स्मरणं नाशहेतुकम् ।  
 अतस्तत्पादयुगलं द्रक्ष्यामि पुरुषोत्तम ॥  
 विप्रहत्या महत्यस्मिन् मयि दुर्निदया प्रभो ।  
 नास्ति निन्द्यसमं पापं नास्ति क्रोधसमो रिपुः ॥  
 नास्ति मोहसमः पाशो न दैवं केशवात्परम् ।

विष्णुः—

नास्ति क्रोधसमोमृत्युर्नास्त्यकीर्तिसमं भयम् ।  
 नास्ति कीर्तिसमं सौख्यं तपो नाऽनशनात्परम् ॥  
 प्रत्यहं त्रिषवणस्नानं कृत्वा मां मनसि स्मरन् ।  
 फलकृच्छ्रं तदा कर्तुं अशक्तो यदि गालव ॥  
 प्रत्याम्नायमिदं कृत्वा शुद्धो भवति पातकात् ।  
 गास्तिस्त्रः साधुसंयुक्तं धूपदीपनिवेदनैः ॥  
 परिक्रम्य नमस्कृत्य सवत्साः पयसाऽऽवृताः ।  
 यो दद्याद् विप्रवर्याय प्रत्याम्नायफलप्रदम् ॥  
 सम्पूर्णफलकृच्छस्य अखण्डं लभते फलम् ।

नरः—

एवं कुरु त्वं विप्रपे पृथो भवामि तत्क्षणात् ।  
 इत्याज्ञप्तस्तदा तेन प्रत्याम्नायं तदा चरत् ॥



शुद्धिमाप्नोति महतीं योगिनामपि दुर्लभाम् ।

इति हेमाद्रौ फलकृच्छ्रप्रत्याम्नायः ।

अथ माहेश्वरकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

कृच्छ्रं माहेश्वरं नाम सर्वपापप्रणाशनम् ।  
पुरा कन्दर्पदहने महान् दोषो भवत्यथ ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं ब्रह्माणं पर्यपृच्छत ।  
पञ्चवाणस्य दहनान् महान् दोषो मयि स्थितः ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं निष्कृतिर्देव कथ्यताम् ।

ब्रह्मा, —

सर्वदोषप्रशमनं सर्वोपद्रवनाशनम् ।  
सर्वपुण्यप्रदं नृणां सर्वस्नानफलं महत् ॥  
प्रातःस्नात्वा यथाचारं दन्तधावनपूर्वकम् ।  
शुद्धवस्त्रमलं धृत्वा कृत्वा पुण्ड्रादिकं मुदा ॥  
नित्यकर्म समाप्याऽऽदौ सङ्कल्पं पूर्ववच्चरेत् ।  
तावन्नारायणं स्मृत्वा पूर्ववत्पापमोचनम् ॥



यदा मन्दायते भानुस्तदा कापालमुद्वहन् ।  
 श्रोत्रियाणाञ्च विप्राणां गृहेषु त्रिषु संख्यया ॥  
 शाकं भिक्षित् फलं वाऽपि यथामश्वमादरात् ।  
 आनयित्वाऽथ देवाय समर्प्य विधिपूर्वकम् ॥  
 भक्षयेत्तानि सर्वाणि वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन् ।  
 हस्तौ पादौ तु प्रक्षाल्य द्विराचम्य शुचिस्ततः ॥  
 सायंकाले स्वपेदेवसमीपे नियतोवसन् ।  
 ततः प्रातः समुत्थाय पूर्ववत् सर्वमाचरेत् ॥  
 गौरिका द्विजवर्याय देया कर्मफलाप्तये ।  
 पञ्चगव्यं पिवेत् पश्चात् कृच्छ्रं माहेश्वरन्विदम् ॥  
 कुरु त्वमेवं भगवन् सर्वदोषोपशान्तये ।  
 एवं श्रुत्वा तदा देवो महेशानस्तदाकरोत् ॥  
 एतस्याऽऽचारणेनैव द्विजः पापात् प्रमुच्यते ।

इति हेमाद्रौ माहेश्वरकृच्छ्रलक्षणम् ।



## अथ माहेश्वरकृच्छ्रप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः,—

माहेश्वरस्य कृच्छ्रस्य प्रत्याम्नायं शृणुष्व मे ।  
सर्वपापोपशमनं सर्वकृच्छ्रफलप्रदम् ॥  
ब्रह्महत्यादिदमनं सर्वग्रहनिवारणम् ।  
तुलाप्रतिग्रहीतृणां पापनाशनमेव च ॥  
मन्त्रादिनित्यकर्मणि परित्यक्तानि सूरिभिः ।  
तेषां विशोधने दत्तं सर्वपापहरं नृणाम् ॥  
गावो देया द्विजातिभ्यः स्वर्चिता वस्त्रभूषणैः ।  
हेमघण्टादिभिः शुभ्रैरलङ्कारैरलङ्कताः ॥  
स्वर्गशृङ्गो रौप्यगुराः कांस्यटोहनसंयुताः ।  
रुद्रसंख्याः सवत्साश्च पयस्विन्यः पृथक् पृथक् ॥  
प्रत्याम्नाये च धेनूनां रुद्रसंख्याः सहत्तराः ।  
रुद्रकृच्छ्रफलप्राप्ते सर्वपापापनुत्तये ॥  
एवं कुर्याद् द्विजायस्तु प्रत्याम्नायं यथार्हतः ।  
तस्य सम्पूर्णकृच्छ्रस्य फलं मुनिभिरीरितम् ॥

इति हेमाद्रौ माहेश्वरकृच्छ्रप्रत्याम्नायः ।

(१) नाशनहेतु च इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ ब्रह्मकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः,—

शृणुध्वमृषयः सर्वे ब्रह्मकृच्छ्रस्य लक्षणम् ।  
 दुरन्तेनैव यत्पापं यत्पापं दुष्प्रतियत्ने ॥  
 अपेयपाने यत्पापं यत्पापं दुष्टभोजने ।  
 वान्तपानेषु च यत्पापं यत्पापं शूद्रभोजने ॥  
 मन्त्रासिनो मठपतेर्भोजने यद्भवेन् नृणाम् ।  
 यत्पापं रजकस्याऽन्ने यत्पापं वृषलभोजने ॥  
 यत्पापं पुष्पवत्यन्ने यत्पापं विधवाकृते ।  
 अमन्त्रके पैतृकान्ने तथा नारायणे वलौ ॥  
 चौले च पैतृके चैव दीक्षितस्यैव भोजने ।  
 दम्पत्योर्यदनृच्छिष्टं तथा मन्त्रासिनो द्विजाः ॥  
 प्रेतमंस्थितर्वाध्यायां यदान्नभोजने नृप ॥  
 सूतकद्वितये चैव तथा दुष्प्रतिभोजने ।  
 तथैव दुष्टसन्धाने तथा क्रीतान्नभोजने ॥  
 यत् पापं पर्युषे चैव तथा म्लस्य च भोजने ।  
 यत् पापं प्रतिगन्धे च यत् पापं क्रूरभोजने ॥  
 यत् पापमनृते प्रोक्तमौपामनविसर्जने ।  
 एवमादीनि पापानि लघूनि च महान्ति च ॥  
 शुष्काण्यार्द्राणि पापानि मनोवाक्कायकर्मभिः ।  
 सर्वेषां परिनाशाय ब्रह्मकृच्छ्रं प्रकल्पितम् ॥



तत्स्वरूपमाह—

मार्कण्डेयः—

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।  
 सम्पाद्य पूर्वमानेन प्रत्यहं शुचिपूर्वकम् ॥  
 द्वादशाहं चरेत् कृच्छ्रं पूर्ववत् स्नानमादितः ।  
 प्रातःस्नात्वा यथाकालं नित्यकर्म समाप्य च ॥  
 देवागारि तथा गोष्ठे पञ्चगव्यं पिवेद् व्रती ।  
 गोमूत्रं माषकाण्यष्टौ गोमयस्य तु षोडश ॥  
 क्षीरं माषाष्टकं ज्ञेयं दधि माषत्रयं यथा ।  
 घृतं माषत्रयं प्रोक्तं तथा कुशजलं मुने ॥  
 तत्तन्मन्त्रेण संयोज्य तत्तन्मन्त्रेण हावयेत् ।  
 होमशेषं पिवेत् पश्चाद् रवौ मध्याह्ने सति ॥  
 आसायं मनसा विष्णुं स्मरन् सर्वेश्वरं विभुम् ।  
 स्वपेदेवसमीपे तु गन्धताम्बूलवर्जितः ॥  
 ततः प्रातः समुत्थाय पूर्ववद्भुतमाचरेत् ।  
 एवं द्वादशरात्राणि चरेद्भुतमनुत्तमम् ॥  
 महापापञ्चोपपापं यद्यत् पापमनुत्तमम् ।  
 तत्सर्वं विलयं याति हिमविन्दुरिवातपे ॥

इति हेमाद्रौ ब्रह्मकुच्छलक्षणम् ।



## अथ ब्रह्मकुच्छप्रत्याम्नायमाह ।

देवलः—

शृणु ब्रह्ममुने चित्रं प्रत्याम्नायं प्रजापतेः ।  
यत् कृत्वा मुच्यते पापैः महद्भिरुपपातकैः ॥  
आचरेद्ब्रह्मकुच्छाख्यं महापातकशोधनम् ।  
असमर्थः प्रकुर्वीत प्रत्याम्नायं फलाप्तये ॥  
प्रत्याम्नायान् महाकुच्छफलमाप्नोति मानवः ।  
अष्टौ गावः प्रदातव्याः स्वर्गशृङ्गः पयोन्विताः<sup>१</sup> ॥  
विप्रेभ्यो वेदविद्भ्यश्च पूर्व्ववत् स्वर्गभूषिताः ।  
विप्रेभ्यो वेदविद्भ्यश्च प्रदेयास्ताः पृथक् पृथक् ॥  
पयस्विन्यः शीलवत्यः सर्व्वदोषविमुक्तये ।

मार्कण्डेयः—

प्रत्याम्नायं तदा कुर्याद् यद्यशक्तः प्रजापतेः ।  
अष्टगावः प्रदातव्याः स्वर्गशृङ्गः पयोन्विताः ॥  
विप्रेभ्यो वेदविद्भ्यश्च सर्व्वकुच्छफलमाप्तये ।  
एवं कृत्वा द्विजः सम्यक् फलमाप्नोति कृत्स्नतः ॥

इति हेमाद्रौ ब्रह्मकुच्छप्रत्याम्नायः ।

---

(१) पयस्विनीरिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ धान्यकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवल—

धान्यकृच्छ्रस्वरूपञ्च लक्षणं प्रवदामि वः ।

सर्वेषामेव कृच्छ्राणामशक्तो धान्यमाचरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

तप्तादिसर्वं कृच्छ्राणां कर्त्तुं यदि न वै<sup>१</sup> प्रभुः ।

धान्यकृच्छ्रं तदा कुर्याद् यद्यत्कृच्छ्रं यथोदितम् ॥

खारीधान्यस्य महतः पञ्चधा भागमाचरेत् ।

कृच्छ्रस्यैकस्य यो भागः तत् कृच्छ्रं धान्यमीरितम् ॥

तद्धान्यं भागशो दद्यात् तत्कृच्छ्रं मुनिभिः स्मृतम् ।

तत्कृच्छ्रमाचरेद्विप्रः सम्पूर्णं फलमश्नुते ॥

धान्यराशौ<sup>२</sup> महाराज कृच्छ्रं पापविमुक्तये ।

मरीचिः—

खारीधानस्य पञ्चांशं धान्यकृच्छ्रमुदाहृतम् ।

अतो न्यूनं न कर्त्तव्यं अन्यथा दानमीरितम् ॥

लौगाक्षिः—

पञ्चमांशोदानकृच्छ्रं खारीधान्यस्य भूयसः ।

अन्यथा धान्यदानं स्यात् कृच्छ्रशब्दो न पुण्यभाक् ॥

---

(१) महान् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) धान्ये वृत्ते इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मरीचिः--

सम्पूर्णं धान्यकृच्छ्रस्य पञ्चमांशो निगद्यते ।

तेन हीनं धान्यकृच्छ्रं न कृच्छ्रफलमश्नुते ॥

कृच्छ्रस्यैतस्य विप्रर्षे प्रत्याम्नायो न विद्यते ।

स्वर्णकृच्छ्रस्य धान्यस्य समर्थस्य महात्मनः ॥

प्रत्याम्नायो न गदितो मुनिभिर्धर्मवत्सलैः ।

धान्यशब्दो ब्रीहिपरएव सर्वकृच्छ्राणां केचित् श्यामाका इति  
वदन्ति, केचिन्नीवारा इति ।

मनुः—

नीवारा ब्रीहयो धान्यं श्यामाका कृच्छ्रसाधनम् ।

न धान्यान्तरमस्तीह प्रभूतं कृच्छ्रसाधनम् ॥

इति हेमाद्रौ धान्यकृच्छ्रलक्षणम् ।

अथ सुवर्णकृच्छ्रलक्षणमाह ।

देवलः—

ब्रह्महत्यादिपापानामितरेषां मुनीश्वराः ।

तुलादिष्विह दानेषु ग्रहीतॄणां विशोधनम् ॥



स्वर्णकच्छं ब्रह्ममयं ब्रह्मणा परिकीर्तितम् ।

पुरा हि जाङ्गवीतीरे ऋषिभ्यः पापनाशनम् ॥

महाप्रभोवराहः स्यात् तदङ्गं मध्यमस्य च ।

तदङ्गमितरेषाञ्च ततो न्यूनं न कारयेत् ॥

ततो न्यूनं सुवर्णदानमात्रम् । तत्र न कच्छशब्दः ।

मरीचिः—

वराहश्च तदङ्गञ्च तदङ्गं कच्छमौरितम् ।

ततो न्यूनं दानमात्रं कच्छशब्दो न गद्यते ॥

वराहादिप्रमाणम्—

मार्कण्डेयपुराणे—

गवाक्षान्तर्गतो यश्च रश्मिना सम्प्रदृश्यते ।

परब्रह्मस्वरूपं तत् त्वमरेणुरुदाहृतः ॥

त्वमरेणुष्टकं लिप्सा तत्तयं यव उच्यते ।

तत्तयं गुञ्जमात्रं स्याद् रक्तं वा श्वेतमेव वा ॥

पञ्चगुञ्जलकोमाषः रूपकं तदुदाहृतम् ।

रूपकाणां नवानान्तु वराह इति मञ्जितम् ॥

स्वर्णकच्छं वराहः स्यात् तत् समर्थस्य पावनम् ।

प्रभुमात्रे तदङ्गं स्याद् इतरिषां तदङ्गतः ॥

ततो न्यूनं न कच्छं स्यात् सर्वदानेषु सर्वदा ।

सुवर्णकच्छाचरणे महापातकनाशनम् ॥

तुलादिमङ्गहीतृणां त्यागादिरहितानां चतुर्भागः प्रायश्चित्तं



कालपुरुषादिप्रतिग्रहीतृणां तत्तदुक्तसुवर्णकृच्छ्राचरणेन तत्तत्-  
पापक्षयो भवति ।

तदेवाह,—

मार्कण्डेयः,—

प्रमादाद् ब्रह्महन्तृणामितरेषां प्रभूयसाम् ।  
प्रायश्चित्तरशुद्धानां स्वर्णकृच्छ्रमितीरितम् ॥  
तुलादिसंग्रहीतृणां रहितानां विशुद्धिभिः ।  
प्रायश्चित्तमिदं कृच्छ्रं ब्रह्मणा परिकल्पितम् ॥  
स्वर्णं ब्रह्ममयं प्रोक्तं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।  
सुवर्णकृच्छ्राचरणे किमसाध्यं शरीरिणाम् ॥

गौतमः—

रहस्य कृत-विप्रादि-हत्यायां शृणु पार्थिव ।  
अयुतं स्वर्णकृच्छ्राणां दाने शुद्धिरवाप्यते ॥  
रहस्यकृतमात्रादिगमने मुनिभिः स्मृतम् ।  
चत्वार्ययुतकृच्छ्राणां सुवर्णानां मुनीश्वराः ॥  
आचारात् शुद्धिमाप्नोति अन्यथा मरणान्तिकम् ।  
रहस्यकृतमद्यादिपायिनः परमर्षिभिः ॥  
अयुतं पूर्ववद्दिष्टमन्यथा मरणान्तिकम् ।  
रहस्यकृतब्रह्मस्तेयिनः पापकर्मणः ॥  
अयुतं पूर्ववत् ज्ञेयं अन्यथा मरणान्तिकम् ।



विश्वचक्रस्य संग्राही विपिने ब्रह्मराक्षसः ।

पञ्चायुतैः 'स्वर्णकच्छैः शुद्धिमान् भवति क्षितौ ॥

कल्पलताप्रतिग्राही कल्पतरुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तवत् कुर्यात् ।

सप्तसागरसंग्राही घोरो भवति राक्षसः ।

तां निष्कृतिं पराकृत्य महान्तं नरकं व्रजेत् ॥

षष्टिकच्छैरयुतपूर्वैः शुद्धिर्भवति संग्रहात् ।

महाभूतघटे चर्मधेनौ विप्र प्रतिग्रहे ॥

अयुतं पद्मकच्छं स्याद् ग्रहीतुर्देहशुद्धये ।

पूर्ववद्विपिने राजन् घोरो भवति राक्षसः ॥

तस्य पापविशुद्ध्यर्थमयुतं कच्छमाचरेत् ।

कालपुरुषे कालचक्रे तिलगर्भे तिलाचले ॥

राशिचक्रे द्विजः शुद्धैः<sup>१</sup> द्वायुतं कच्छमाचरेत् ।

कोटिहोमे लक्षहोमे पापपूरुषसंग्रहे ॥

अयुतं स्वर्णकच्छं स्याद् अन्यथा वै न निष्कृतिः ।

श्वेताश्वे मृतशय्यायां गजदानप्रतिग्रहे ॥

अयुतं स्वर्णकच्छं स्याद् ग्रहीतुर्देहशुद्धये ।

आर्द्रकणाजिने चैव सप्तशैलप्रतिग्रहे ॥

कच्छं सहस्रं तत्कुर्यात् तस्माद्दीपात् प्रमुच्यते ।

कपिलादिमुखीदाने दामीरुहपरिग्रहे ॥

(१) पद्मकच्छैरिति काशीपुस्तकपाठः ।

(२) कुर्याद इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



सहस्रं पूर्ववत् कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यमंशयः ।

आलिङ्गने तैलघटे महापुरुषभोजने ॥

पञ्चकृच्छ्रशतं कृत्वा पापात् तस्माद् विमुच्यते ।

तुलादिममदानेषु ऋत्विजोहोतृका अपि ॥

तेषां विशुद्धिर्भूपाल द्वाःस्थैः सह मुनीश्वरैः ।

सहस्रं स्वर्णकृच्छ्रं प्रोक्तं लोकानुमन्धया ॥

आज्यालङ्कारधिनूनामनङ्गाहादिसंग्रहे ।

महिषीच्छागवस्तानां शतं कृच्छ्रं विशोधनम् ॥

अन्येषु दुष्टदानेषु दुष्टशान्तिषु सर्वदा ।

उत्क्रान्तिवैतरण्योश्च शतकृच्छ्रमुदीरितम् ॥

एकाहादिषु भोक्तृणां शूद्रमत्रानुवर्तिनाम् ।

दशकृच्छ्रं 'तु स्वर्णार्घ्यं मुनिभिः शुद्धिरीरिता' ॥

चाण्डालाङ्गनादिगमने यत् यत् प्रतिपदोक्तं प्रायश्चित्तं उक्तं सर्वेषां  
तत्तत्प्रापिनां तदाचरणममर्थानां पुनः संस्कारपूर्वकं ज्ञेयम् । यस्य  
यस्य <sup>१</sup>पापस्य यावन्ति कृच्छ्राणि निर्विशेषणानि उक्तानि तावन्ति  
स्वर्णकृच्छ्राणि कृत्वा शुद्धिमाप्नुयुः वा । सर्वेषां पूर्वोक्तानां कृच्छ्राणां  
प्रत्याम्नायोऽस्ति पर्णकृच्छ्रं धान्यकृच्छ्रयोः प्रत्याम्नायोनाऽस्ति उत्तम-  
मधमाधमाधिकारितया स्वर्णकृच्छ्रं प्रकल्पनीयं अत्र न प्रत्याम्नायः  
न रूपकादिद्वयं परिपूर्णे योजनीयम् । तदाऽऽह—

(१) सुवर्णार्घ्यमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) दीरितमिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) कृच्छ्रस्य इति लेखितपुस्तकपाठः ।



मनुः—

उभयोः कृच्छ्रयोस्तात प्रत्याम्नायो न विद्यते ।  
सम्पूर्णकृच्छ्रमेवाऽत्र कर्त्तव्यं तारतम्यत इति ॥

इति हेमाद्रौ चान्द्रायणप्राजापत्यकृच्छ्रादिलक्षणम् ।

अथ कदलीविवाहप्रकारः ।

मार्कण्डेयः—

पतितं क्लीवमुन्मत्तं कुञ्जं काणं रुजाऽर्दितम् ।  
अपस्मारं परित्यज्य विवहेत' न दोषभाक् ॥

कात्यायनः—

काणं रुजार्दितं कुञ्जं पतितं क्लीवमेव च ।  
अपस्मारं विवाह्याऽऽशु कदल्या शुभहृदये ।  
तदनुज्ञामवाप्याऽथ विवहेत' न दोषभाक् ॥

जातूकर्णः—

काणं रुजान्वितं कुञ्जं पतितं क्लीवमेव च ।

(१) विवाहे न स दोषभाक् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) विवाहे न स दोषभाक् इति लेखितपुस्तके पाठः ।



अपस्मारं पूर्वजातं कदल्या तु विवाहयेत् ।

पश्चादनुज्ञया राजन् विवाहे न स दोषभाक् ॥

विवाहयज्ञान्दोलिकारोहणे एवं वेदितव्यम् ।

कदल्या-विवाहप्रकारस्तु—

मार्कण्डेयः—

कार्तिके मार्गशीर्षे वा माघे वा फाल्गुनेऽपि वा ।

वैशाखे ज्येष्ठमासे वा विवाहं रश्मया समम् ॥

प्रशंसन्ति मुनिश्रेष्ठाः पुतपौत्रफलप्रदम् ।

विवाहः शुभनक्षत्रे चन्द्रताराबलान्विते ॥

'रात्रावपि दिवा' वाऽपि प्रशस्तः शुभकर्मणि ।

ज्येष्ठं क्लीषादिषु वरं प्रातरभ्यर्च्य स्नापयेत् ॥

गन्धपुष्पादिभिः सम्यग् अलङ्कृत्य प्रयत्नतः ।

सुवासिनीभिर्गीतानि शृण्वन्नारामसन्निधौ ॥

गत्वा च कदलीमूलं पुण्याहं वाचयेत्ततः ।

नाद्यात् कालं तथा कुर्यात् यथावर्णं यथाविधि ॥

उन्मत्तकाणपापिष्ठान् कदल्या परिणयेन्मुदा ।

इति मङ्गल्य मनसा "बृहत्सामे"ति मन्त्रतः ॥

कदल्यां कङ्कणं बद्ध्वा "विश्वेत्वा" इति मन्त्रतः ।

"विश्वेत्वा" इति पुमान् पठेत्, बृहत्सामेति कदलीकङ्कणधारणे

"परित्वार्गो"रिति मन्त्रेण कदल्या वस्त्रवन्धनम् ।

(१) दिवसेपि इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) राजन् इति लेखितपुस्तकपाठः ।



आशामानतिमन्त्रेण ? योक्तं दर्भमपां दरम् ।  
 बद्धा स्वर्णमयं माल्यं “तनुते”ति च मन्त्रतः ॥  
 बद्धा कांश्यमयं पात्रं तण्डुलैरक्षतैः शुभैः ।  
 सहस्ताभ्यां वरो धृत्वा वृक्षस्योपरि विन्यसेत् ॥  
 एवं त्रिवारं कृत्वा च वृक्षमूल उपाविशेत् ।  
 लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य आज्यभागान्तमाचरेत् ॥

वनस्पतिभ्य इत्यनुवाकोक्तान् मन्त्रान् पठित्वा स्वाहाकारानुक्त्वा  
 आज्याहुतीर्हुत्वा जयादिब्रह्मविसर्जनान्ते ।

वरमग्निं परिक्रम्य उपासनमथाऽऽचरेत् ।  
 लौकिकाचारसम्पन्नः कदलीं तां परित्यजेत् ॥  
 ताम्बूलादिकमासाद्य पूर्ववद् गृहमाविशेत् ।  
 स गृहस्थो न सन्देहः शुभकर्मपरायणः ॥  
 परिवेक्षादिदोषोऽत्र न भवेद्दे कदाचन ।  
 यज्ञं वाऽथ विवाहं वा राज्यं वा पालयेत्तदा ॥  
 उभयोर्वृद्धिरेवं स्यात् परिवेक्षादि हीयते ।  
 अन्यथा दोषमाप्नोति नरकं चाऽधिगच्छति ॥  
 तत्कुलं नरकं भूयात् सा नारी नरकाय वै ।  
 युगान्ते तु न मुक्तिः स्याद् अपुत्रस्य यथागती ॥

इति हेमाद्रौ पतितादीनां कदलीविवाहः ।



अथ दुर्मृतानां नृणां वर्णत्रयाणां परलोकक्रमकाले  
कर्त्तव्यं नारायणबलिप्रकारमाह ।

देवलः,—

विषाग्निजलपाषाणैर्दुर्मृतस्य प्रमादतः ।  
कर्मदौ देहशुद्ध्यर्थं नारायणबलिं चरेत् ॥

मार्कण्डेयः—

द्रंष्टृभिर्नखिभिर्वाऽपि शृङ्गिभिर्यदि दैवतः ।  
बृक्षैर्जलैश्च पाषाणैर्दैवतैर्यः प्रमीयते ॥  
तस्यैव देहशुद्ध्यर्थं कर्मदौ लोककाङ्क्षया ।  
नारायणबलिं कुर्यात् सर्वपापापनुत्तये ॥

पराशरः—

दुर्मृतस्य विषाद्यैर्वा चौरैः खड्गैर्मृगादिभिः ।  
कर्मदौ लोकसाध्यर्थं नारायणबलिं चरेत् ॥  
नारायणो जगत्कर्त्ता सर्वपापापहा नृणां ।  
दुर्मृतानां विशेषेण महापापप्रणाशनः ॥

मरौचिः—

दुर्मृतस्य खरोद्वैश्च पशुभिर्वृक्षपातनेः ।  
जलैः पाषाणलगुडैर्वनमध्ये प्रमादतः ॥  
कर्मदौ लोकमन्विच्छन् नारायणबलिं चरेत् ।

तत्प्रकारमाह—



देवलः —

कर्मादौ पूर्वदिवसे मृतस्येह द्विजन्मनः ।  
 प्रायश्चित्तं तदा कृत्वा धम्मेशास्वीकृतमानतः ॥  
 आह्वय विप्रानेकान्ते चतुर्विंशतिमादरात् ।  
 तद्वर्जं वा तद्वर्जं वा सम्पाद्य श्रुतिपारगान् ॥  
 अभ्यर्च्य गन्धवस्त्राद्यैरामं वा स्वर्णमेव वा ।  
 करिष्येऽहं मृतस्याऽस्य वलिं नारायणात्मकम् ॥  
 इत्युक्त्वा तान् नमस्कृत्य उपवेश्य सुखासने ।  
 लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य परिस्तीर्य विधानतः ॥  
 श्रुवेणाज्यं समादाय व्याहृतीरुच्चरंस्ततः ।  
 पृथक् पृथक् तदा हुत्वा संख्यामिकां समुदहन् ॥  
 व्याहृतीनां त्रयं हुत्वा पृथगग्नौ विधानतः ।  
 संख्यामिकां तथा कृत्वा अष्टोत्तरशतं क्रमात् ।  
 हुत्वैवं<sup>१</sup> विधिवद्विप्रो होमशेषं समापयेत् ॥  
 ब्राह्मणान् समलङ्कृत्य पूर्वाङ्गेन विधानतः ।  
 चतुर्विंशतिनामानि केशवादीनि वै जपेत्<sup>२</sup> ॥

चतुर्विंशति विप्रपक्षे प्रत्येकं नियोजयेत् द्वादशब्राह्मणपक्षे प्रत्येकं  
 नामद्वयं नियोजयेत् । जपेत् जापयेदिति ।

(१) यथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) एवमिति कृतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) क्रमादिति लेखितपुस्तकपाठः ।



तण्डुलाश्चैवमुद्गाश्च माषाः शाकघृतं दधि ।  
 ताम्बूलं दक्षिणां चैवं विप्रेभ्यः परिकल्पयेत् ॥  
 नाऽग्नेन तोषयेद्विप्रान् अधिकारो न दृश्यते ।  
 'यावत् सपिण्डकं न स्याद् दुर्मृतस्य द्विजन्मनः ॥  
 न तावदन्नं कर्त्तव्यं विप्रैरध्यात्मवेदिभिः ।  
 'तावद् विप्रैर्न भोक्तव्यं यदि भुङ्क्ते स पातकी ॥  
 जातकर्मणि विप्रस्य दुर्मृतस्य द्विजन्मनः ।  
 नारायणबली चैव नाऽन्नश्चाङ्गं समाचरेत् ॥  
 हिरण्येनैव 'धान्यैर्वा कुर्यात् आङ्गं विधानतः ।  
 अग्नेन कारयेद्यस्तु स चाण्डालसमीभवेत् ॥

दुर्मृतानां द्विजन्मनां परलोकहिताय कर्मादौ आग्नेन हिरण्येन  
 वा नारायणबलिं करिष्यामीति सङ्कल्प्य लोकिकाग्नी घृतेन  
 व्याहृतिभिः प्रत्येकं हुत्वा एकैकां संख्यामुद्धहन् अष्टोत्तरशतं हुत्वा  
 ब्राह्मणानभ्यर्च्य यथामन्त्रं यथासंख्यं तोषयित्वा नारायणबलिं  
 कृत्वा पारलौकिकक्रियां कुर्यात् ।

इति दुर्मृतानां कर्मादौ नारायणबलिविधिः समाप्तः ।

(१) यथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तथा इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) ध्यानैर्वा इति लेखितपुस्तकपाठः ।



## अथ वैष्णवश्राद्धमाह ।

देवलः,—

यागादौ च तुलादाने प्रायश्चित्तेषु कर्मसु ।  
श्राद्धं कुर्याद्वैष्णवाख्यं सर्वदोषोपशान्तिदम् ॥

गौतमः—

प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु जीवत्स्वपि तुलासु च ।  
तत्कर्त्ता वैष्णवश्राद्धं कृत्वा कर्म समाचरेत् ॥

पराशरः—

प्रायश्चित्तेषु दानेषु तुलादिषु महत्स्वपि ।  
यः कुर्याद्वैष्णवश्राद्धं स तत्कर्मफलं लभेत् ॥  
सर्वत्र व्यापको विष्णुः प्रायश्चित्तेषु कर्मसु ।  
विष्णुर्पितेषु पुण्येषु तदानन्त्याय कल्पते ॥

हरिवंशे—

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा ।  
आदौ मध्ये तथाचाऽन्ते हरिः सर्वत्र गीयते ॥

विष्णुधर्मीत्तरे—

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।  
तीन् लोकान् व्याप्य भूतात्मा राजते विष्णुरव्ययः ॥

अतः सर्वत्र विष्णुरहितानि कर्माणि न फलन्ति ।



सङ्कल्पानन्तरं वाऽपि जपनान्तरं च यः ।

कुर्याद्वै वैष्णवश्राद्धं तदानन्त्याय कल्पते ॥

जीवत्सु पितृणादिषु प्रायश्चित्ते तु प्रायश्चित्तानन्तरं पूर्वशाला  
होमानन्तरं आमेन हिरण्येन वा विष्णुभक्तमेकं पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य  
विष्णुप्रातये आमं हिरण्यं वा दद्यात् ।

मनुरपि,—

भोजनं तृप्तिपर्यन्तं आमं द्विगुणमाचरेत् ।

हिरण्यं द्विगुणं प्रोक्तं सर्वकर्मस्वयं विधिः ॥

विप्रे विष्णुर्पिते तुष्टे सर्वानुष्ठान्ति देवताः ।

तासु तुष्टासु राजेन्द्र तत्तत् कर्म शुभं भवेत् ॥

अतः प्रायश्चित्तेषु वैष्णवश्राद्धं अवश्यं प्रायश्चित्तिभिः कर्त्तव्यं  
नाऽन्यथा फलमाप्नोति ।

इति हेमाद्रौ वैष्णवश्राद्धविधानम् ।

—

अथ नान्दीश्राद्धप्रकारमाह ।

देवलः,—

प्रायश्चित्तेषु दानेषु प्रतिष्ठासु वर्तेषु च ।

विवाहादिषु सर्वत्र नान्दीश्राद्धं समाचरेत् ॥



विवाहादिषु संस्कारकर्मसु ।

नान्दीश्राद्धं तदा कुर्यात् सर्वकर्माभिवृद्धये ।

मरीचिः—

प्रायश्चित्ते विवाहादौ तुलादानादिकर्मसु ।

पूर्वेद्युर्वा तदानीं वा नान्दीश्राद्धं समाचरेत् ॥

अङ्गिराः—

प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु तुलादानादिकर्मसु ।

महोत्सवेषु सर्वेषु प्रतिष्ठासु व्रतेषु च ॥

विवाहादिषु सर्वत्र नान्दीश्राद्धं समाचरेत् ।

पूर्वेद्युर्वा तदानीं वा शुभकर्मफलाप्तये ॥

अन्नेनाऽऽमेन वा राजन् हिरण्येन यथाविधि ।

द्वादश ब्राह्मणान् भोज्य अष्टौ वा ये तु सात्त्विकाः ।

पितृनुद्दिश्य यत्नेन सूपापूपाज्यपायसैः ॥

तत्र पितरः—

गारुडपुराणे—

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।

माता पितामहीचैव तथैव प्रपितामही ॥

मातामहाः सपत्नीकाः पृथग् पृथगनुव्रताः ।

विश्वेदेवाः सत्यवसू मूर्त्तास्तु पितरस्त्वयः ।

ततः परममूर्त्ताः स्युर्नाऽऽगच्छन्तीह कर्मणि ॥

द्वादश एव मूर्त्ताः ततः परममूर्त्ताः ये ये पितरः श्राद्धेषु भोक्तार-

स्तेषु मूर्त्तसंज्ञाः ये ये पितरः श्राद्धेषु न भुञ्जते ते अमूर्त्ताः ।



तदाऽऽह —

गालवः—

पित्रादिपितरो मूर्त्ता स्वयस्स्वेतेषु पुण्यदाः ।

अतः परममूर्त्ताः स्युः स्मरणात् पापहारिणः ॥

अतः सर्वत्र वृद्धिकर्मसु नान्दीश्राद्धं कर्त्तव्यम् । प्रायश्चित्तान्यपि  
वृद्धिकर्माणि ।

तदाऽऽह—

गौतमः—

प्रायश्चित्तं विवाहादि व्रतदानं तुलादिकम् ।

दूरयात्रासु सर्वत्र नान्दीश्राद्धं प्रशस्यते ॥

अतस्तदवश्यकरणीयत्वादत्रापि कर्त्तव्यम् ।

इति हेमाद्रौ नान्दीश्राद्धविधिः ।

---

वराहपुराणे रामलक्ष्मणप्रतिमादानमाह—

वराहपुराणे—

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि सर्वपापहरं शुभम् ।

सर्वसम्पत्पदं नृणां पुत्रदं पुत्रकामिनाम् ॥



आषाढे मामि शुक्ले तु द्वादश्यां पूर्णिमादिने ।  
 अतीपाते च संक्रान्तौ दद्याद्दानमनुत्तमम् ॥  
 ब्राह्मणक्षत्रियविशं शूद्राणां पुण्यवर्द्धनम् ।  
 'राकायां प्रातरुत्थाय स्नात्वाऽऽचम्य यथाविधि ॥  
 नित्यकन्मादि निर्वर्त्य स्वगृहे देवतागृहे ।  
 गोमयेन विलप्याऽथ रङ्गवस्त्राद्यलङ्कृतम् ॥  
 तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं रचयित्वा सुशोभनम् ।  
 तत्र निक्षिप्य धान्यञ्च तण्डुलान् पूर्वसंख्यया ॥  
 अमन्त्रं स्थापयेत्तत्र दशाष्टदलसंयुतम् ।  
 तण्डुलैः पूरयित्वा तु तत्र पद्मं लिखेत् पुनः ॥  
 वस्त्रेण वेष्टयेत्कांश्यं तत्र देवौ प्रपूजयेत् ।  
 पलद्वयेन स्वर्णेन तदर्धेन विचक्षणः ॥  
 रामं श्यामं विशालाक्षं सर्वाभरणभूषितम् ।  
 सिंहासने समाविश्य ध्यायन्तं मुद्रया सह ॥  
 तेनैव स्वर्णमानेन लक्ष्मणं कारयेत्तथा ।  
 तिष्ठन्तमञ्जलिं बद्ध्वा कक्षे चापद्वयं मुदा ॥  
 वमन्तं वामपार्श्वे तु निर्मलं नियतेन्द्रियम् ।  
 एवं कृत्वोभयौ देवौ क्षीरस्नानं समाचरेत् ॥  
 निक्षिपेत् पत्रमध्ये तु पूजयेदुपचारकैः ।  
 राम राम महाबाहो कौशल्यागर्भसम्भव ॥



पूजामिमां प्रगृह्याऽऽशु<sup>१</sup> मेऽभीष्टफलदो भवः ।

इति रामपूजामन्त्रः—

सौमित्रे लोकसौमित्रे सर्वपापहराव्यय ।

पापं मे सकलं क्षिन्धि पुत्रं देहि सुवर्चसम् ॥

इति लक्ष्मणपूजामन्त्रः ।

गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपैर्दीपैर्नैवेद्यवन्दनैः ।

महाहैरूपचारैश्च पूजयित्वा यथाक्रमम् ॥

प्रदक्षिणमनुव्रज्य नमस्कारं समाचरेत् ।

ब्राह्मणाय सुशान्ताय पत्नीपुत्रवर्त मुदा ॥

अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्दद्याद्रामं सलक्षणम् ।

उदङ्मुखाय विप्राय स्वयमिन्द्राननः शुचिः ॥

वामेन कांश्यं संगृह्णन् दक्षिणेनाऽक्षतान् ब्रह्मन् ।

अमन्त्रं सर्वपापघ्नं पुत्रप्रदमपुत्रिणाम् ॥

सर्वपापहरं यस्माद् अतः शान्तिं प्रयच्छति ।

रामलक्ष्मणदानमन्त्रौ—

अयोध्याधिपते वीर श्रीराम करुणानिधे ।

पूर्वजन्मममुद्भूतमिह जन्मनि सम्भवम् ॥

तत्सर्वं नाशमायातु त्वत्प्रसादाद् जगद्गुरो ।

रामं त्वामहमभ्यर्च्य सर्वपापापनुत्तये ॥



दास्यामि विप्रवर्याय सर्वपापोपशान्तये ।  
 अनया पूजया स्नामिन् प्रसन्नीभव मे सदा ॥  
 पुत्रं देहि यशो देहि राज्यं देहि जनार्दन ।  
 अनेन दानमन्त्रेण पापं संहर्तुमर्हमि ॥  
 सर्वपापहरोयस्माद् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।  
 ततस्तु दक्षिणा देया वित्तशाठ्यविवर्जितम् ॥  
 देयद्रव्यतृतीयांशं मुनिभिः परिकल्पितम् ।  
 ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद् यथा विभवपूर्वकम् ॥  
 एवं 'कुर्यान् नरो यस्तु दानमेतत् सुदुर्लभम् ।  
 सर्वपापविनिर्मुक्तः पुत्रमाप्नोति सोऽचिरात् ॥  
 रामलक्ष्मणयोर्दानं कृत्वा विध्युक्तमार्गतः ।  
 स सर्वफलमासाद्य पुत्रमाप्नोति सर्वदा ॥  
 दरिद्रो लभते वित्तं ब्रह्मचारी तु कन्यकाम् ।  
 सुवासिनी पुत्रकामा पुत्रमाप्नोति सर्वथा ॥  
 मोक्षकामी लभेन्मोक्षं रोगी-रोगात् प्रमुच्यते ।  
 आषाढस्य पौर्णमास्यां<sup>१</sup> व्रतमेतन्मनीषिभिः ॥

(१) कृत्वा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) तत्तज्ज्ञादिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(३) आषाढशुद्धपौर्णमास्यामिति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



दादश्यामथवा राजन् <sup>१</sup>कृतेष्वं स्वेष्ट सिद्धये ।

इति वराहपुराणे रामलक्ष्मणप्रतिमादानविधिः ।

वन्दे विघ्नेशवाणीशौ लक्ष्मीपतिमुमापतिम् ।

सर्व<sup>२</sup>पातकमघानां प्रायश्चित्तविधिः कृते ॥

आलोच्य सर्वशास्त्राणि यथाशक्ति यथामति ।

<sup>३</sup>कृतः पातकशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तविनिर्णयः ॥

### अथ स्मृतिप्रामाण्यमाह ।

मनुः—

श्रुतिं पश्यन्ति मुनयः स्मरन्ति च तथा स्मृतिम् ।

तस्मात् प्रमाणमुभयं प्रमाणैः प्रमितिर्भवि ॥

योऽवमन्येत तौ हेतु हेतुशास्त्राश्रयो नरः ।

स साधुभिर्वहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः ॥

(१) कथ्यते इति व्रतं मुदा इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) पापापसङ्घानामिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) क्रियते पापशोधार्थमिति लेखितपुस्तकपाठः ।



विष्णुः—

पुराणं मानवोधर्मः साङ्गोवेदश्चिकित्सितम् ।

आज्ञासिद्धानि चत्वारि न हन्तव्यानि हेतुभिः ॥

यस्तानि हेतुभिर्हन्यात् सोऽन्ये तमसि मज्जति ।

इति प्रायश्चित्तस्याऽशास्त्रीयस्य विधाने दोषोऽभिहितो व्यासेन ।

ज्योतिषं व्यवहारञ्च प्रायश्चित्तं चिकित्सितम् ।

विना शास्त्रेण यो ब्रूयात् तमाहुर्व्रह्मघातकम् ॥

तत्राधिकारी,—मनुः—

अकुर्वन् विहितं कर्म निन्दितञ्च समाचरन् ।

प्रमजंश्चेन्द्रियार्थेषु प्रायश्चित्तीयते नरः ॥

याज्ञवल्क्यः—

विहितस्याऽननुष्ठानान् निन्दितस्य च सेवनात् ।

अनिग्रहाच्चेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति ॥

नरग्रहणं प्रतिलोमजातीनामपि प्रायश्चित्तप्राप्त्यर्थमपि ।

प्रायश्चित्तमकुर्वाणाः पापेषु निरता नराः ।

अपश्चात्तापिनः कष्टान्नरकान् यान्ति दारुणान् ॥

पापतारतम्यात् फलतारतम्यं दर्शितम् ।

विष्णुधर्मोत्तरे—

अष्टाविंशतिकोटीनि घोरानि नरकाणि वै ।

महापानकिनश्चापि सर्वेषु नरकेष्विह ॥

आचन्द्रतारकं यावत् पीडयन्ते विविधैर्वधैः ।

उपपातकिनश्चापि तदङ्गं यान्ति मानवाः ॥



शेषैः पापैस्तद्वच्च कालः कर्मस्तथाविधः ।  
सम्प्रकाशपापकृतां त्वेतत् सर्वं रहस्यपापफलन्तु ।

पराशरः—

पातकेतु सहस्रं स्यान् महति द्विगुणं तथा ।  
उपपातके तद्वच्च स्यात् नरकं वर्षसंख्यया ॥  
तत्र च तत् पञ्चविधेषु पातकेषु इतरतारतम्यं बोध्यम् । महा-  
पातकेषु वर्षसहस्रद्वयं नरकपातः अतिपातके वर्षसहस्रचतुष्टयं  
उपपातके सहस्राद्विं मङ्गलीकरणादिषु अप्यर्द्धाधिकशतद्वयमिति  
पञ्चविधपापानि ।

कात्यायनः—

महापापञ्चातिपापं तथा पातकमेव च ।  
प्रासङ्गिकञ्चोपपापमित्येवं पञ्चकोगणः ॥  
तत्र पातकिपापशब्दनिर्व्वचनम् ।

भविष्योत्तरे,—

अधोऽधः पतनात् पुंसां पातकं परिकीर्त्तितम् ।  
नरकादिषु घोरिषु पतनात् पापमुच्यते ॥ इति

याज्ञवल्करः—

तस्मात्तेनैह कर्त्तव्यं प्रायश्चित्तं विशुद्धये ।  
प्रायश्चित्तशब्दार्थमाह ।

(१) कालं कर्मं तथाविधैर्गतिं क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अर्द्धसहस्रं इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अङ्गिराः—

प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते ।

तपो निश्चयसंयुक्तं प्रायश्चित्तं तदुच्यते ॥

भाष्यकारस्तु, —

प्रायो विनाशः चित्तं सन्धानं विनष्टस्य सन्धानं इति विभाग-  
'योगिन प्रायश्चित्तशब्दः पापक्षयार्थं नैमित्तिके कर्मविशेषे वर्तते ।  
इह तावत् कलियुगे आपदाहुल्यात् अवर्जनीयतया पाप-  
सम्भवात् प्रतिनिमित्तं प्रायश्चित्तं कर्तुमशक्यत्वात् शरीरस्या-  
स्थिरत्वात् पापफलानुभवे चिरकालिकघोरतीव्रनरकवेदनायाः  
सोढुमशक्यत्वात् पापभीरुणा पश्चात्तापिना पुरुषेणैव वेलया  
सर्वपापानोदक प्रायश्चित्तं सर्वथा आचरणीयमेव ।

तत्र कालादर्श—

मलमासगुरुशुक्रास्तदोषेण दुष्टकाले प्रतिषिद्धत्वात् शुद्धकाल  
एकादश्यामन्यस्यां वा त्रिथौ कार्यम् । अग्न्याधानादि-  
श्रौतोपासनादिस्मार्त्ततुलापुरुषादिकर्म कुर्वता च आदौ उपा-  
सनार्थमधिकारसिद्ध्यर्थञ्च कार्यमेव च । तदुक्तं मनुना शुचिना  
कर्म<sup>१</sup> कर्त्तव्यमिति ।

(१) विज्ञान योगिना इति क्रातुलेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कुर्वीत इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(३) लेखितपुस्तके तु अत्र

दाने विंशष्टस्मार्त्तस्य व्याधिना शुद्धितोच्यते ।

अनित्यताऽपि यद् वस्तु दातुं हेमादि वाञ्छति ॥

इत्येवं अधिकः श्लोक उपलभ्यते ।



अङ्गिरसा च—

श्रौतं स्मार्त्तञ्च कर्त्तव्यं कृत्वा पावनमात्मनः ।

जपञ्च पञ्चहोमञ्च दानञ्चार्चनमेव च ॥

जपो वेदपारायणादिः होमः कुष्माण्डादिः दानं गवादेः अर्चनं  
विष्णुादीनाम् । स्मृतिसंग्रहकारैश्चोक्तं “विशोधय कायं विविधैश्च  
कृच्छैरिति” । आतुरस्य तु शुद्धकालपरीक्षा नैव कार्या ।  
अशौचादिदोषे रात्रावपि सद्य एव कार्यम् ।

चन्द्रिकायाम्—

दानं विशिष्टमार्त्तस्य व्याधिना शुद्धमुच्यते ।

‘अकालेऽपि हि यद्वस्तु दातुं हेमादि वाञ्छति ॥ इति

वराहपुराणे—

व्यतीपातोऽथसंक्रान्तिस्तथैव ग्रहणं रवेः ।

पुण्यकालास्तु ते सर्वे यदा मृत्युरुपस्थितः ॥

तदा गोभूहिरण्यादिदत्तमक्षयतामियात् ।

भविष्योत्तरे—

तत्र ये पापनिचयाः स्थूला नरकहेतवः ।

ते समासेन कथ्यन्ते मनोवाञ्छार्थघातकाः ॥

मनुः—

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः ।

महान्ति पातकान्याहुः संयोगं चैव तैः सह ॥



याज्ञवल्क्यः—

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनस्तथैव गुरुतल्पगः ।

एते महापातकिनो यश्च तैः सह संवत्सेत् ॥

मनुः—

ब्रह्महा द्वादशसमाः कुटीं कृत्वा वने वसेत् ।

भैक्ष्याद्यात्मविशुद्ध्यर्थं कृत्वा शवशिरोध्वजम् ॥

हारीतः—

द्वादशभिर्वर्षैर्महापातकिनः दोषिण इति ।

इदमज्ञानतः ज्ञानतः करणेत्—

अङ्गिराः—

यः कामतो महापापं नरः कुर्यात् कथञ्चन ।

न तस्य शुद्धिर्निर्दिष्टा' भृग्वग्निपतनादृते ॥ इति

तथाऽपि पातकानि पतितसंसर्गादीनि

व्यासेन—

यो येन संवसेदपि सोऽपि तत्समतामियात् ।

अत्र चतुर्थचरणे एवकाराच्च कलियुगे महापातकिसंसर्गिणस्तु न महापातकित्वम् । तस्याऽपि तस्याऽपि अनया रीत्या साक्षात् महापातकिसंसर्गित्वात् पातित्यप्रसक्तेः । ततः परमप्येवं अनवस्था स्यात्, तस्मात् कलियुगे साक्षात् महापातकिसंसर्गिणोऽपि न महापातकित्वं तथाचोक्तम् ।



पराशरेण, —

कृते तु मानवो घर्मस्वेतायां गौतमस्य च ।  
 हापरे शङ्खलिखितौ कलौ पाराशरी'स्मृतिः ॥  
 त्यजेद् देशं कृतयुगे चेतायां ग्राममुत्सृजत् ।  
 हापरे कुलमेकन्तु कर्त्तारन्तु कलौयुगे ॥

व्यासः—

कृते सम्भाष्य पतति चेतायां स्पर्शनेन तु ।  
 हापरे त्वन्न'मादाय कलौ पतति कर्मणा ॥

स्मृतिक्रामधेनौ,—

संसर्गदोषो नैव स्यान् महापातकिनः कलौ ।  
 संसर्गदोषस्तेनाद्यैर्महापातकनिष्कृतिः ॥ इति

स्मृत्यर्थसारे कलियुगे संसर्गदोषोनास्तीत्युक्तं एवं बहुस्मृति-  
 वचनात् अर्यालोचनया पतितसंसर्गिणो दोषाभावकथनं पाति-  
 त्याभावपरं, संसर्गप्रायश्चित्तन्तु पादोनडादशवार्षिकं कार्य-  
 मेवेति तस्मात् संसर्गिणः कलियुगे पातकित्वमेवेति सुष्ठूक्तम् ।  
 तदुक्तं

मनुना —

संवत्सरेण पतति पतिर्तेन सहाचरन् ।  
 याजनाध्यापनाभ्यां तु न तु यानाशनासनात् ॥

(१) पाराशरस्मृतिरिति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) अन्नदानाय इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



याजनाध्यापनयोर्गुरुमन्वन्वत्वात् मद्यः पततीत्यर्थः ।

योयेन पतितेनैषां संसर्गं याति मानवः ।

म तस्यैव व्रतं कुर्यात् तत्संसर्गविशुद्धये ॥ इति

एतद् युगान्तरविषयम् ।

मनुः—

ब्रह्मनामिककार्याणां सर्वेषां शस्त्रधारिणाम् ।

यद्येको घातयेत्तत्र सर्वे ते घातकाः स्मृताः ॥

उपरुन्धन् परं हन्तुं समर्थयति यः पुमान् ।

यश्चानुग्रहकृत्सोऽपि ब्रह्मघातक इष्यते ॥

विष्णुः—

आकृष्टस्ताडितो वाऽपि धनैर्वा विप्रयोजितः ।

यमुद्दिश्य त्यजेत् प्राणान् तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

स्मृत्यन्तरे—

अनुमन्तोपदेष्टा च तथा संप्रतिरोधकः<sup>१</sup> ।

प्रोत्साहकः सहायश्च तथा मार्गानुदेशकः ॥

आश्रयः शस्तदाता च<sup>२</sup> वक्ता दाता च कर्मणाम् ।

उपेक्षकः शक्तिमांश्च दोषवत्तानुमोदकः ॥

अकार्यकारिणां तेषां प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् । इति

१। नित्यमन्वन्वाद् इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२। एतस्यैव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।

३। संप्राति पातक इति लेखितपुस्तकपाठः ।

४। भक्ता इति लेखितपुस्तकपाठः ।



एवं सुरापानसुवर्णस्तेय गुर्व्यङ्गनागमनेषु यथायोग्यमनुग्रहकारिणी  
बोद्धव्याः ।

मनुः—

हत्वा गर्भमविज्ञातमेतदेव व्रतं चरत् ।

राजन्य-वैश्य-बीजानां आत्रेयीमेव च स्थियम् ॥

बीजानामिति यागदीक्षावर्तिनौ । आत्रेयी अत्रिगोत्रजा अङ्गिरसा  
ऋतुमनौ, उसनसा च कदाप्यपुष्पवर्ती मरूचिना तु पतिव्रता  
अभिहिता ।

तथा—

उत्कोचैर्वाऽनृतं माच्छे प्रणिपत्य गुरुं तथा ।

अपहृत्यैव निक्षेपं कृत्वा च स्त्रीवधायहम् ॥

अनृतं माक्षिवाण्यां<sup>१</sup>, वधप्राप्तिकरं प्रति अन्तः क्रोधावेशः ।  
निक्षेपं ब्राह्मणमम्बन्धि स्त्री-वाऽऽहिताग्निपत्नी पतिव्रता, आदिपदेन  
तत्परिगणनाद्युक्तं स्यात् ।

तथाच

यान्नवल्काः -

चवेद्व्रतमहत्वापि घातार्थं चेत्समागतः । इति

आपस्तम्बः—

धर्मार्थं मन्निपातेऽथग्राहिणामेतदेवेति ।



विष्णुः—

नृपतिवधे महाव्रतमिति ।

भविष्योत्तरपुराणे—

अर्चितं सुस्थितं वाऽपि शिवलिङ्गं न चालयेत् ।

अन्यत्र चालितं लिङ्गे अतिपातकमाप्नुयात् ॥

उत्तमानां चाऽमराणामन्यथाकरणे सति ।

विप्रस्यैव व्रतं दिश्याद् विप्रदेवौ समौ स्मृतौ ॥

अग्निहोत्रार्थकपिलां हत्वा ब्रह्महणोव्रतम् ।

याज्ञवल्करः—

अर्चितं सुस्थितं वापि शिवलिङ्गं न चालयेत् ।

पितुः स्वभारं मातुश्च मातुलानीं सुतामपि ॥

मातुः सपत्नीं भगिनीमाचार्यतनयां तथा ।

आचार्यपत्नीं स्वसुतां गच्छन्तु गुरुतल्पगः ॥

लिङ्गं भित्वा ध्वजस्तस्य सकामायाः स्त्रिया अपि ।

माता मातृस्वमा श्वश्रुर्मातुलानीं पितृस्वमा ॥

पितृव्यमग्निरिष्यस्त्री भगिनी च सखी स्रुषा ।

दुहिताऽऽचार्यभार्या च सगीवा शरणागता ॥

धात्रीपराजिता माध्वी-तथा वर्णीक्षमाङ्गना ।

आमा मन्यतमां गच्छन् गुरुतल्पग उच्यते ॥

(१) कुरुते इति लेखितपुस्तकपाठः ।

(२) कुर्यादिति लेखितपुस्तकपाठः ।



शिश्नस्योत्कर्त्तनादत्र नान्योदण्डोविधीयते ।

अत्र माता मातृसपत्नी तस्या अपि मातृव्यपदेशात् ।

व्यासः—

गर्भिण्युदक्याविज्ञातजातिं गच्छन्ननिच्छतीम् ।

गुरुतल्पं चरेद्विद्वान् गां— ॥

व्याघ्रः—

आश्रितस्याऽपि दुष्टात्मा आहिताग्नेश्च योगिनः ।

एषां पत्नीं सुतां गत्वा गुरुतल्पव्रतं चरेत् ॥ इति

उशनाः—

चाण्डाल्यां गर्भमाधाय गुरुतल्पव्रतं चरेत् । इति

तथा

अतिदिष्टञ्च यत् पापं अतिकृच्छ्रेण उच्यते ।

उपपातकमावृत्तं महापातकतामियात् ॥

अनिर्दिष्टस्योपदेशात् तस्यैव स व्रतं नरः ।

अतिदिष्टेषु सर्वत्र पादोनव्रतमाचरेत् ॥

इति पतितसंमर्गिणामनुग्राहकव्रतादिष्टानां प्रयोजकानुमन्दा-

दीनां तदनुनिश्चयक्रमेण यथायोग्यं नववार्षिकषड्-

वार्षिकमाईचतुर्वार्षिक त्रैवार्षिकादिव्रतम् ।



## स्त्रीणां विशेषतः पतनीयमाह ।

याज्ञवल्करः—

नीचाभिगमनं भर्तृघातनं गर्भनाशनम् ।

विशेषपतनीयानि स्त्रीणामेतान्यपि ध्रुवम् ॥

चनस्त्रस्तु परित्याज्याः शिष्यगा गुरुगाश्च याः ।

पतिघ्नी च विशेषेण जुद्धितोपगता च या ॥

जुद्धितः प्रतिलोमगतो ह्येनवर्णो वा एतानि ब्रह्महत्यासमानि ।

मनुः—

अनृतञ्च समुत्कर्षं राजगामि च पैशुनम् ।

गुरोश्चालोकनिर्व्वन्धः समानि ब्रह्महत्याया ॥

विष्णुः—

यागस्यक्षत्रियवैश्यवधो रजस्वलायाश्च अन्तर्वत्सराश्चात्रेयगोत्रा-

याश्च अविज्ञातस्य गर्भस्य शरणागतस्य च घातनं ब्रह्महत्यासमानि ।

शिवधर्मोत्तरं—

यस्तु विद्याभिमानेन नीचोऽज्ञ इति भाषते ।

उदासीनं सभामध्ये ब्रह्महा स प्रकीर्तितः ॥

परदोषमविज्ञाय नृपकर्णे जपेत्त यः ।

पार्पयान् पिशुनः क्रुद्धः स चाऽपि ब्रह्महा स्मृतः ॥

१) यं द्विज इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) चैव इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



देवद्विजगवां भूमिं पूर्वदत्तां हरेत यः ।

प्रनष्टामपि कालेन तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

तथा देवतान्यथाकरणं अपि ब्रह्महत्यासमम् ।

सुवर्णस्तेयसमानि —

निक्षेपस्याऽपहरणं नराश्वरजतस्य च ।

भूमिवस्त्रमणीनाञ्च स्वर्णस्तेयसमं स्मृतम् ॥

तत्र

स्त्री धेनुहरणं ब्राह्मणक्षेत्रहरणं स्तेयसमम् ।

याज्ञवल्करः—

देवब्राह्मणराजान्तु विज्ञेयं द्रव्यमुत्तमम् ॥

इत्युक्तवान् इमानि देवब्राह्मणराजमस्वर्ग्यनि ।

गुरुतल्पसमानि ।

रतः सेकः स्वगोत्रासु कुमारीष्वन्यजासु च ।

मथ्युः पुत्रस्य च स्त्रीषु गुरुतल्पसमं विदुः ॥

अन्यजातिस्त्री तु

रजकश्मिकारश्च नटो वरुड एव च ।

कैवर्त्तमेदभिलाश्च स्वर्णकारस्तु मौचिकः ॥

तक्षकस्तिनयन्त्रौ च सूतश्चक्री तथा ध्वजी ।

नापितो लोहकारश्च न एते षोडशा अन्यजाः ॥

विष्णुः —

पितृस्वमा मातामही मातुलस्य पत्नी, एतासां गमनं गुरुदार-  
समानं पितृस्वसुर्मातृस्वसुर्गमनं श्रोत्रियत्विगुपाध्यायमित्रपत्न्यभि-



गमनं स्वसुः मर्या स्वगोत्रायाः उत्तमवर्णायाः पतिव्रतायाः  
निक्षिप्ताया गमननिमित्तान्येतानि उपपातकानि, स्वयोनिभगिनी  
स्वगोत्रास्वजातिस्त्रीषु गमनेऽप्येतदेव—

अपि स्वमातरं गच्छेत् न गच्छेद्देवदारिकाम् ।

यदि गच्छेत् गुरुद्वारव्रतं चरेत् । एवमादीनि महपातकममपात-  
कानि परिगणितानि केषां तत्र प्रतिवचनं प्रायश्चित्तविकल्पार्थं  
सन्धेयमिति एषां तु वार्षिकव्रतम् । उपपातकानि ।

मनुः—

गोवधोऽयाज्यसंयाज्यं पारदार्याक्तविक्रयः ।

गुरु-मातृ-पितृत्यागः स्वाध्यायान्योः सुतस्य च ॥

परिवित्तिश्चानुजेन परिवेदनमेव च ।

तयोर्दानञ्च कन्यायास्तयोरेव च याजनम् ॥

कन्याया दूषणञ्चैव वार्द्ध्यं च व्रतच्युतिः ।

तडाकारामदाराणां अपत्यस्य च विक्रयः ॥

ब्राह्मता चाऽनाश्रमिता भृताध्यापनमेव च ।

भृतकाध्ययनं तद्वद् आरण्यानाञ्च विक्रयः ॥

हिंस्रोपजीवी स्त्रीजीवी मूलकर्माभिचारकः ।

इत्यनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामवपातनम् ॥

आत्मार्थञ्च क्रियारम्भो निन्दिताध्ययनं तथा ।

अनाहिताग्नितास्तेयमृणानाञ्चानपक्रिया ॥

अमच्छास्त्राभिगमनं कोटिल्यं व्यसनक्रिया ।

धान्यरूप्यपशुस्तेयमद्यपस्त्रीनिषेवणम् ॥



स्त्रीशूद्रक्षत्रियवधो नास्तिक्यञ्चोपपातकम् ।

“लवणक्रियोषधिजीवनहिंस्रयन्त्रविधानशूद्रप्रेष्यहीनमख्यहीनयोनि-  
निषेवनं अनाश्रमे चैव वासः परान्नपरिपुष्टता मर्ज्वाकरेष्वधि-  
कारः असत्प्रतिग्रहादीनि” इति विष्णुवचनात् अनृतवचन-  
समुत्कर्षे राजगामिपैशुन्यं गुरोश्चालीकनिर्वन्धोऽभक्ष्याणाञ्च भक्षण-  
मित्यादीनि सङ्कल्पाकृतौ तु कृतघ्नकूटव्यवहारब्राह्मणव्रतिघ्नमिथ्या-  
भिशंसि पित्रादिपरित्यागीति वराहपुराणे दर्शितम् । भृणहा-  
पंक्तिभेदक इति पंक्तिभेदाचरणस्य यद् दोषाधिक्यं प्रतिपादितम्,  
तद् विद्वद्ब्राह्मणपंक्तिभेदाचरणविषयम् । अन्यपंक्तिभेददोषस्य  
प्रकीर्णकत्वात् ।

स्मृत्यन्तरे—

विधवादेवदार्मीवेण्यावर्द्धकौदार्सीगमनमित्यादीनि उपपात-  
कानि ।

मनुः—

खरोद्गमृगमाज्जारमीनविक्रायिकस्तथा ।

सङ्कलीकरणं ज्ञेयं मौनाहिमहिषस्य च ॥

मलिनीकरणानि —

मनुः—

कुमिक्रीटवधोमेध्यमद्यानुगतभोजनम् ।

फलेक्षुकुसुमस्त्यग्धैर्यञ्च मलापहम् ॥

गो-वधादि अपात्रीकरणम् ।



मनुः—

निन्दितेभ्यो धनादानं वाणिज्यं शूद्रसेवनम् ।

अपात्रीकरणं ज्ञेयमसत्यस्य च भाषणम् ॥

जातिभ्रंशकराणि ।

मनुः—

ब्राह्मणस्य रुजः कृत्वा घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः ।

जैह्वं पुंसि च मैथुन्यं जातिभ्रंशकरं स्मृतम् ॥

पशुगमनं पशुयोनिनिषेवणम् ।

इति मूलवचनानि ।

अथाघमर्षणविधिमाह ।

देवलः —

आत्मदेहविशुद्धयर्थं कर्त्तव्यमघमर्षणम् ।

प्रायश्चित्ते च कृत्यादौ तुलादानादिषु द्विजैः ॥

व्रतघृद्यापनविधौ कर्त्तव्यमघमर्षणम् ।

पञ्चगङ्गासु राजेन्द्र न कुर्यादघमर्षणम् ॥

समुद्रगासु सर्वत्र न कुर्यादघमर्षणम् ।

वापीकूपतटार्केषु कर्त्तव्यमघमर्षणम् ॥



पराशरः—

कृत्यादौ तु तुलादाने प्रायश्चित्तेषु कर्मसु ।  
 चाण्डालादिषु संस्पर्शे स्वदारिषु दिवागमे ॥  
 दुरन्ते दुष्प्रतिग्रहे दुष्टसंनर्गसङ्गमे ।  
 अप्रियपाने सर्वत्र अवमर्षणमीरितम् ॥  
 स्तेये स्वल्पेऽप्यनुप्राप्ते तुलाचार्यादिसंग्रहे ।  
 दुर्जनैः सह सम्भाषे अवमर्षणमीरितम् ॥  
 मत्स्यादिनित्यकर्मणि परित्यज्य यदा वसेत् ।  
 शाक्तेयादिषु मन्त्रेषु जपे चैवावमर्षणम् ॥  
 अकार्यकर्मकर्त्ता च महापुरुषभोजने<sup>१</sup> ।  
 सर्वपापविशुद्ध्यर्थमवमर्षणमीरितम् ॥  
 एकोद्दिष्टेषु आदिषु मपिण्डीकरणादिषु ।  
 यो भोक्ता स द्विजः कुर्याद् अवमर्षणमादरात् ॥  
 पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।  
 यदाचरति पुत्रश्चेद् अन्यथाप्यवमर्षणः ॥  
 मृतकहितये भोक्ता भोक्ता वै चैलकर्मणि ।  
 यज्ञकर्मणि भोक्ता चेद् अवमर्षणमीरितम् ॥  
 यानि यानीह निन्द्यानि कर्माणि सुब्रह्मणि च ।  
 तानि तान्याचरेद् विप्रस्तस्य स्यादवमर्षणम् ॥

१) महापुरुषादि भोजने इति लेखितपुस्तकपाठः ।

२) तान्याचरन् सदा विप्र इति क्रीतलेखितपुस्तकपाठः ।



अधमर्षणप्रकारमाह —

मार्कण्डेयः—

मनसा पापनिचयं पूर्वजोऽहितमाचरन् ।  
तटाकं दीर्घिकां वाऽपि गत्वा शुचिरतन्द्रितः ॥  
पुरीषमूत्रे सत्यज्य शौचं कुर्यादतन्द्रितः ।  
द्विराचम्य शुचिर्भूत्वा नारायणमनुस्मरन् ॥  
मलापकर्षणं कृत्वा नित्यकर्म समाप्य च ।  
प्रायश्चित्ता तथाऽन्यो वा सङ्कल्प्य विधिपूर्वकम् ॥  
नाभिद्वजलं गत्वा सूर्यस्याऽभिमुखः शुचिः ।  
पवित्रादर्भपाणिर्वा मार्जयेन्मन्त्रमुच्चरन् ॥  
मन्त्रान्ते मार्जयेद्दर्भं विप्रो देहविशुद्धये ।

पवमानः सुवर्चसः हिरण्यशृङ्गमिति च अनुवाकः । सर्वेषु वा  
एषु पापेष्वेकोनुवाकः प्रजापते रक्षस्व यदिति । देवस्यत्वेति  
मार्जनं समानम् । ततो देवर्षिपितृस्तर्पयित्वा द्विराचम्य धौतवस्त्रं  
परिधाय मौनं भजन् स्नानवस्त्रं निष्पीड्य वामप्रकोष्ठे निक्षिप्य  
द्विराचम्य शुचिर्भवेदिति ।

मनुः —

वस्त्रं चतुर्गुणीकृत्य कूले निष्पीडनं तथा ।  
वामप्रकोष्ठे निक्षिप्य द्विराचम्य शुचिर्भवत् ॥

इत्यधमर्षणं कृत्वा प्रायश्चित्तार्थमागतां परिषदं दृष्ट्वा नारायणं  
मनसि संस्मरन् कृतपापं मनसि निधाय पुण्ड्रादिकं धृत्वा पत्नीपुत्र



परिवेष्टितः तदनुमतः परिषदं गच्छेत् प्रायश्चित्तीति । इतरन्तु  
नित्यकर्मणादिकं कृत्वा दोषबुद्धिं नाऽचरेत् ।

इति हेमाद्रौ अघमर्षणस्नानविधिः ।

अथैवं निर्णीतस्याचरणक्रमः कथ्यते ।

प्रायश्चित्ताचरणयोग्यनिर्णीतात् दिनात् पूर्व्वद्युरूपवासः  
प्रातर्मलापकर्षणस्नानं नित्यकर्मणानुष्ठानं ततः परिषदुपवेशनं  
प्रायश्चित्तं कर्त्तुकामस्य<sup>१</sup> परिषत्सन्निधौ मृत्तिकास्नानं परिषदभ्यर्चनं  
च । परिषन्निर्णीतप्रायश्चित्तं कर्त्तुकामः मदीयपापजातं निवेदयिष्ये  
इति सङ्कल्प्य पापनिवेदनं ततः प्रायश्चित्तनिर्णयः । ततो विधा-  
यकवरणं, दक्षिणादानं, विधायकान् प्रति परिषदाक्यं, अनुवादक-  
वरणं, ततो यजमानं प्रति अनुवादकवाक्यं, ततो वपनं सङ्कल्प्यः,  
वपनं, स्नानं, दन्तधावनं, ततः परं दशविधस्नानसङ्कल्पः दशविध-  
स्नानाचरणं ततो महामङ्गल्यः । परिषन्निर्णीतमाङ्गोपाङ्गमर्च्य-  
प्रायश्चित्तमहं करिष्ये इति सङ्कल्पः । नान्दीश्याङ्गं वैष्णवश्याङ्गं  
प्राच्याङ्गोदानं शालाहोमः पञ्चगव्यहोमः पञ्चगव्यप्राशनं व्रत-  
ग्रहणम् । तदपर्य्युः पुनः शालाहोमः उदीच्याङ्गोदानं यथाशक्ति  
दशदानानि आज्यावेक्षणं भूमिदानं ब्राह्मणभोजनं आर्गोर्वादि-



ग्रहणं सर्वेश्वरार्पणम् । दिनत्रयमाध्ये प्रायश्चित्तेऽयं क्रमः ।  
आतुराद्यशक्तविषये एकदिनमाध्ये तु सङ्कल्पादि भूमिदानान्तं  
प्रायश्चित्तं कृत्वा स्वयमुपोष्य परेद्युः ब्राह्मणभोजनम् । स्वयं च  
प्रातः पारणं कुर्यात् ।

### अथ प्रायश्चित्तप्रयोगः ।

कर्त्ता पूर्वैद्युः प्रातःसन्ध्यामुपास्य देवालये नदीतीरे स्वगृहे  
वा सभामुपवेश्य सचेलमलापकर्षणं स्नात्वा अर्द्धवामाः सभां  
गत्वा परिषदुपदिष्टसर्वप्रायश्चित्तं कर्त्तुकामो मदीयपापजातं  
निवेदयितुं शरीरशुद्ध्यर्थं मृत्तिकास्नागमहं करिष्य इति सङ्कल्प्य  
कल्पोक्तविधानेन मृत्तिकास्नानं कृत्वा द्विराचम्य पूर्वोक्तलक्षणोपेत-  
परिषत्सन्निधिं गत्वा गन्धकुसुमाक्षतादिभिः परिषदमभ्यर्च्य  
प्रायश्चित्तद्रव्यदशांशदक्षिणां कुसुमाक्षतांश्च गृहीत्वा समस्त  
सम्पदादिमन्त्रैस्त्रिवारं प्रदक्षिणीकृत्य दक्षिणां पुरतोनिधाय  
प्रणम्यात्वाय च प्राञ्जलिर्विज्ञापयेत् ।

नमः सकलकल्याण'दायिने ब्रह्मरूपिणि ।

सदसे सर्वपूज्याय दुष्कृतारण्यवक्रये ॥



'शेषे हे परिषत् काश्यपगोत्रेण नक्षत्रे राशी च जातेन देवदत्त-  
नामधेयेन मया समर्पितामिमां परिषद्क्षिणां स्वीकृत्य मदीयां  
विज्ञापनां अवधार्य मामनुगृह्णाण इति पुनः प्रणमेत्, ततः  
उत्थाय काश्यपगोत्रः नक्षत्रे राशी जातः देवदत्तनामधेयोऽहं  
परिषदुपदिष्टसर्वप्रायश्चित्तं कर्तुकामो मदीयपापजातं परिषत्  
सन्निधौ निवेदयिष्य इति सङ्कल्प्य एवं निवेदयेत्— गोत्रादियुक्तेन  
मया जन्मप्रभृत्येतत्क्षणपर्यन्तं मध्यवर्त्तिनि काले बाल्यकौमार-  
(वयो)वार्द्धकेषु जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तावस्थासु मनोवाक्कायकर्मभिः  
कामक्रोधलोभमोहमात्सर्यैस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पाणिपा-  
दपायूपस्थैः कृतानां प्रकाशकृतमहापातकचतुष्टयतदव्यतिरिक्त  
तत्संसर्गादिपातकानां रहस्यकृतब्रह्महत्यासुरापानसुवर्णस्तेय-  
गुरुतल्पगाय्यानां महापातकानां तत्संसर्गित्वानुग्राहकत्वप्रयो-  
जकत्वमित्रभावोपदेष्टृत्वमन्त्रित्वप्रोक्ताहकत्वादि महापातक-प्रति-  
दिष्टादिपातकानां गुर्वधिज्ञेपवेदनिन्दासुहृद्वधाधोतनाशनादि-  
ब्रह्महत्यासम-पातकानां अश्वरत्न मनुष्यहरणनिक्षेपहरण-देव-  
ब्रह्मस्वभूधेनुहरणादिसुवर्णस्तेयसमरूपपातकानां पितृष्वसृमातृ-  
ष्वसृमातुलभार्याज्येष्ठभ्रातृपत्नी-हीनवर्णमातृमपत्नी-सखिभार्या-  
कुमार्येयोन्यत्यजामगोत्रासूतस्त्रीसामान्यनृपतिपत्नीरमणादिगुरु-  
तल्पसमपातकानां गोवधव्रात्यत्वसामान्यस्त्यापात्रीकरणाना-  
हिताग्नित्वापण्यविक्रयपरपाकातितृष्णादिपातकानां सोमयागस्थ



क्षत्रियवैश्यवधाविज्ञातगर्भरजस्वलातिगोत्रदोक्षितस्त्रीगुर्विणीवधा--  
 दिमहापातकममपातकानां उत्कर्षानृतभाषणकलञ्जादिनिषिद्ध-  
 भक्षणरजस्वलादिमुखास्वादकूटसाक्ष्यसुहृद्वन्धनादिपरिवेदनभृतका-  
 ध्यापनपारदार्यपारिवित्त्य वाहुष्य लवणविक्रय स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रिय-  
 वधनिन्दितार्थोपजीवन नास्तिक्यव्रतलोपकरणसुतविक्रयधान्यपुष्प-  
 पशुस्तेयायाज्ययाजनपितृमातृसुतादित्यागतटाकारामविक्रयकन्या-  
 विक्रयकन्याद्रूषणपरिविन्दनकन्यादानकौटिल्यव्रतलोपात्मार्थक्रिया-  
 रम्भमद्यपस्त्रौनिषेवणोपाध्यायाग्निपरित्यागेन्वनार्थद्रुमच्छेदनस्त्री--  
 हिंसनयन्त्रविधानव्यसनात्मविक्रयशूद्रद्रव्यहीनसख्यहीनयोनिनिषे-  
 वणानाश्रमवासपरान्नपरिपुष्टत्वासच्छास्त्राभिगमनाकराधिकारिता  
 भार्याविक्रयाद्युपपातकानां अजाविखरोद्भृमृगेभमीनाहिमहिषा-  
 श्ववधादिसङ्कलीकरणानां क्षमिकौटवयोवधमद्यानुगतद्रव्यभोजन-  
 फलेक्षुकुसुमस्तेयादिमलिनीकरणानां निन्दितधनधान्यकरीष-  
 जीवनामत्यभाषणशूद्रसेवाद्यपात्रीकरणानां मद्यगन्धघ्राणब्राह्मण-  
 पीडनसामान्यस्त्रीमैथुनादिजातिभ्रंशकराणां विहितकर्मत्याग-  
 निषिद्धाचरणेन्द्रियनिग्रहपरमस्मोद्घाटनसूचकत्वशौचस्नानसन्ध्याव--  
 न्दनजपहोमपञ्चमहायज्ञरहितभोजनाकालभोजनदिवहिवारभो-  
 जनमस्य च्छेदनतर्गुल्लनतादिकेदनक्लेश्यस्त्रीवश्यश्वपतितक्लीवव्रात्य-  
 परिविन्दपरिवित्तशूद्रसेवकवाहुषिकनिजकर्मविहीनान्नभोजनयत्य-  
 न्नभोजनयतितप्रेरितान्नयतिपक्वान्नयतिपात्रस्थान्नयतिस्पृष्टयतिदा-  
 पितान्नभोजनशूद्रस्पृष्टशूद्रदृष्टशूद्रानुमतशूद्राधिकृतशूद्रयाचितान्न--  
 भोजनग्रहणकालभोजनग्रहणकालपक्वान्नभोजनपर्वकालरात्रिभो-



जनैकादशहोरात्रभोजनानिवेदितात्रभोजनहस्तदत्तात्रभोजन--  
 प्रेतपिशाचोद्देशभोजनवटाश्वत्यादिनिषिद्धपात्रभोजनबलिदत्तात्र--  
 भोजनजननीराजितान्नभोजनग्रामयाजकवृषलीपतिमाहिषिकशि-  
 वहिजगात्तकाषायपाशुपतचिह्निताङ्गचिकित्सकासौचिकज्यौति--  
 षिकान्नभोजनभिन्नकांस्यपात्रभोजनताम्रालावुदारूपात्रमृत्पात्रभो-  
 जनरजस्वलान्नचाण्डालादिवाक्यश्रवणभोजनदग्धपर्युषितपूतिगन्ध-  
 भुक्तोच्छिष्टान्नभोजनगणान्नदौक्षितान्नशूद्रपुरोहितान्नपर्यायान्नभो-  
 जनशूद्रपात्रस्थान्नभोजनमहापुरुषार्चितान्नभोजनशूद्रभुक्तशेषान्न--  
 भोजनग्रामान्त्यजदत्तशेषान्नभोजनभिक्षान्नभोजनदम्पतिभुक्तशेषा-  
 न्नभोजनबौद्धसखब्राह्मणान्नभोजनकारागृहवासभोजनखरोद्राजा--  
 विक्रमहिषीक्षीरादिपानविवत्सविगतगर्भनिर्देशगोपयः पानस्तन्य-  
 पानपिण्याकक्षपरसंयावपायसांपूपमांसपुरोडाशादिवृथाभक्षणवा-  
 महस्तैकहस्तवर्षधारारूपजलपानरेतोविण्मूत्रकीटास्थिमिश्रितज-  
 लपानतन्मिश्रितान्नभोजनवार्त्ताककालिङ्गगृञ्जनरक्तमूलकवर्तुला-  
 लावुखेतवृन्ताकादिनिषिद्धद्रव्यभक्षणनिषिद्धशिवनिर्मात्यादिभक्ष-  
 णोपपातकिपक्रतण्डुलान्नभोजनयोनिप्रेक्षणयोन्यास्वादनदिवास्वा-  
 पनदिवासङ्गमदामीवेश्याकुलटावितन्तुपरावरुद्धप्रसवोन्मुखस्त्रीगम-  
 नमाधारणीभूतस्त्रीपरस्त्रीगमनतिथ्यग्योनिगमनमुखमैथुनवल्मीक-  
 राजमार्गच्छायावृक्षदेवालयगृहाङ्गनगोष्ठवृन्दावनजलागयादिस्थल-  
 रेतोविण्मूत्रकरणजलमध्यष्ठीवनदूषणपितृमात्राचार्यादिशुश्रूषारा-  
 हित्यदर्शमहालयसंक्रान्तिव्यतीपाताष्टकालभ्ययोगत्यागश्चावविस्म--  
 रणग्रहणादिपुण्यकालस्नानदानराहित्यमन्यात्रयवस्त्रपरिवर्त्तनीपा-



मनादिराहित्यसम्याकालमंलापताम्बुलचर्वणभोजनमैथुननिद्रादि-  
 पारवश्यपुण्यकालोष्णोदकस्नाननग्नस्नानपैतृकादिनिषिद्धदिनाभ्यङ्ग-  
 स्नानमन्निहिततीर्थोत्सङ्गनतीर्थस्नानकच्छराहित्यकौपीनधारणकच्छ-  
 पुच्छकतिर्यक्कटिसूत्रकच्छादिधारणस्वग्रामदेवोत्सवादर्शनतदुत्स-  
 वजनपदग्रामकुलाचारोत्सङ्गनगुर्व्याचार्यविप्रश्चोत्रियाहिताग्निनृप-  
 काय्योत्सङ्गनविप्रत्वङ्कारहुङ्कारतिरस्कारवादपराजयप्रापणासहायार-  
 ण्यमागेगमनब्राह्मणदण्डनशोणितस्त्रावणमलिनामध्याविलकषाय-  
 नीलादिवस्त्रधारणहरिहरगुर्व्याचार्यनिन्दाश्रवणब्राह्मणदूषणक्षोभ-  
 करणमंहतिपरित्यागक्षत्रियादिवृत्तिद्रव्यान्नगोविप्ररोधनस्वयंभृतह-  
 लकर्षणक्षुषिजीवनक्रौञ्चजीवनपीतावशिष्टोदकपानचाण्डालकारि-  
 त-क्षुषिधान्यशालादुग्धपुष्पफलभोगचाण्डालकारितवार्पाकूपतटा-  
 कोदकपानान्यकारितप्रपाजलपानकरमथिततक्रपानदोषोच्छिष्टा-  
 भ्यङ्गावशिष्टतैलपानमाभिलाषपरदारनिरीक्षणविवस्त्रस्त्रीनिरीक्षण-  
 मिथुनीभूतस्त्रीनिरीक्षणगुर्व्याचार्यनृपादिमैथुनादिदर्शनशब्दश्रवण-  
 मैथुनविघ्नाचरणहीनवर्णाभिवादनराजामनाक्रमणराजत्वङ्कारहुङ्का-  
 ररश्मान्वेषणमर्म्मादुघाटनामाधूपदेशान्यायाग्रवर्त्तकरणचार्वीकपा-  
 षण्डादिपूजितदेवताभिवादनपरोपतापकरणपरोपकारनाशनहण-  
 गुल्मलतादिनाशनगोमांसगन्धघ्राणचाण्डालस्पर्शनदर्शनभाषणपाक-  
 भेदपंक्तिभेदकरणतुरुष्कादिस्तेच्छमध्यनिवामस्तेच्छद्रव्योपभोगयाच-  
 मानदीनान्धकृपणाक्षेपणमुष्टिमात्रतिलमहितैरकादिनानाप्रकार-  
 दुष्प्रतिग्रहनियमरहितवेदपुराणशास्त्राध्ययनाध्यापनव्यवहारपक्षपा-  
 तसाधारणब्राह्मणमीमांसकुल्यातटाककूपारामाद्यपहरणपशुपक्षिवन्ध-



नशीतवातातपवर्षचौराद्यापदुगतदुःखानिवारणानर्हीसनशयनप्रदा-  
नविषमभाषणवाक्पारुष्यदण्डपारुष्याविहितकालविहिताचरण-  
मितस्वामिसुहृदाचार्य्यष्टभार्यादेवतावञ्चनपरमात्मस्मरणराहित्या-  
दीनां प्रकीर्णकानां अज्ञानतः सकृत्कृतानां ज्ञानतोऽभ्यस्तानां  
ज्ञानतः सकृत्कृतानां अत्यन्तचिरकालनिरन्तराभ्यस्तानां प्रकाश-  
कृतमहापातकव्यतिरिक्तानां रहस्यकृतमहापातकादीनां प्रकीर्ण-  
कान्तानां नवविधानां बहुविधानां च सर्वेषां पापानां अपनोदकं  
प्रायश्चित्तं प्रतिनिमित्तं कर्तुं अक्षमस्य काश्यपगोत्रस्य नक्षत्रे  
राशौ जातस्य देवदत्तनामधेयस्य मम सकलपापापनोदक-  
मेकविधं सर्वप्रायश्चित्तं धर्मशास्त्रपर्यालोचनया निश्चित्यादिश्य  
काश्यपगोत्रजं नक्षत्रजं राशिजं देवदत्तनामधेयं मां सर्वस्मादे-  
नसः समुद्धर इति त्रिवारं प्रणमेत् ।

ततः परिषदपि यजमानविज्ञापनामाकर्ण्य तत्समर्पितां  
परिषद्दक्षिणां स्वीकृत्यधर्मशास्त्राणि पर्यालोच्य एकविधं सर्व-  
प्रायश्चित्तं निश्चित्य अस्मिन् सर्वप्रायश्चित्ते परिषदनुज्ञया भवद्भि-  
र्विधायकैर्भवितव्यमिति दक्षिणादानपूर्वकं यजमानेन विधायकान्  
वरयित्वा विधायकान् प्रति एवं वदेत् ।

परिषदाक्यप्रकारः —

भो भो विधायकाः अमुकगोत्रेण नक्षत्रराशिजेन देवदत्त-  
नामधेयेन अस्मत्सन्निधौ विज्ञापितानां नवविधानां पापानां  
धर्मशास्त्रपर्यालोचनया पङ्क्तप्राजापत्यकृच्छ्रात्मकं सर्वपापप्राय-  
श्चित्तमपनोदकं भवति । एतदेवपापानां मत्प्राकरणं द्विगुणं



अत्यन्ताभ्यासे त्रिगुणं निरन्तराभ्यासे षड्गुणं तदेव षड्गुणितषड्व्यं  
अशीत्यधिकसहस्रसंख्याकप्राजापत्यकुच्छात्मकं सर्वप्रायश्चित्त-  
मस्मन्निर्णीतं सर्वपापानोदकं भवतीति भवन्तोविधायका अनु-  
वादकमुखेन यजमानायोपदिशन्तु ।

ततो विधायका यजमानसमर्पितां दक्षिणां स्वीकृत्य विविध  
प्रायश्चित्तप्रापानुवादकुशलमेकं विपश्चितं अनुवादकं दक्षिणादान-  
पूर्वकं अस्मिन् प्रायश्चित्ते भवताऽनुवादकेन भवितव्यमिति यज-  
मानेन वरयित्वाऽनुवादकमेवं ब्रूयुः —

विधायकवाक्यम्,—

अहो विद्वन् विदुषामग्रेसर प्रायश्चित्तापनोदस्य बहुविधस्य  
पापस्याप्यनुवादकुशल हे अनुवादक काश्यपगोत्रेण नक्षत्रराशिर्जेन  
देवदत्तनामधेयेन यजमानेन परिषत्सन्निधौ विज्ञापितानां प्रकाश-  
कृतमहापातकानां व्यतिरिक्तानां च तत्संमर्गाद्यतिपातकानां  
रहस्यकृतमहापातकादिप्रकीर्णकान्तानां नवविधानामज्ञानतः  
कृतानां ज्ञानतः सकृत्कृतानां अत्यन्तनिरन्तरचिरकालाभ्यासवशात्  
षड्गुणितं षड्व्यं प्रायश्चित्तमशीत्यधिकसहस्रसंख्याकप्राजापत्य-  
कुच्छात्मकमसर्वप्रायश्चित्तं सर्वेषां पापानां अपनोदकं भवतीति  
अग्रेष्विदं त्वभया निर्णीतं अस्यां निर्णीतं सर्वप्रायश्चित्तमनुवाद-  
मुखेन यजमानाय उपदिशन्तु इति परिषद् अस्मान् आज्ञापयते ।  
वयमपि काश्यपगोत्रेण नक्षत्र राशौ जातेन देवदत्तनामधेयेन



यजमानेन परिषत्सन्निधौ विज्ञापितानां प्रकाशकृतमहापातक-  
 व्यतिरिक्तानां तत्संमर्गातिपातकानां रहस्यकृतब्रह्महत्यादिपात-  
 कानां तद्रूपोपदिष्टव्रतातिदिष्टातिपातकानां सङ्कलीकरणानां  
 मलिनीकरणानां प्रकीर्णकादिनवविधानां अज्ञानतः सकृत्कृतानां  
 एकगुणं ज्ञानतः सकृत्कृतानां द्विगुणं ज्ञानतोऽभ्यस्तानां  
 त्रिगुणितं अत्यन्ताभ्यस्तानां चतुर्गुणं निरन्तराभ्यस्तानां पञ्चगुणं  
 चिरकालाभ्यस्तानां षड्गुणं अशीत्यधिकसहस्रसंख्याकप्राजा-  
 पत्यकृच्छ्रात्मकं षड्गुणितं षड्विंशं सर्वप्रायश्चित्तं सर्वेषां पातकानां  
 अपनोदकं भवतीति विज्ञाय काश्यपगोत्राय नक्षत्रे राशौ जाताय  
 देवदत्तनामधेयाय अस्मै यजमानाय भवन्मुनेन विज्ञापयामः ।  
 तदेतदस्मद्विहितं सर्वप्रायश्चित्तं पापानुवादपुरःसरमुपदिश  
 अस्मै यजमानाय इति त्वां नियोजयामः त्वमपि उहैर्देवाहुः  
 सुविस्पष्टं गीर्वाणभाषया यजमानाय त्रिवारं अनुवद । अनु-  
 वादकोऽपि यजमानममर्पितदक्षिणां स्वीकृत्य दिराचम्य प्राणा-  
 नायम्य उत्याय यजमानाभिमुखं स्पष्टमूर्देवाहुर्देवभाषया परि-  
 षद्विणीतिविधायकविहितं सर्वप्रायश्चित्तोपदेशपूर्वकमुच्चैस्त्रिवार-  
 मनुवदेत् । ब्राह्मणानां ब्राह्मणस्त्रीणां प्रायश्चित्ते तु यजमानस्य  
 पुरस्तात् कञ्चन ब्राह्मणं स्थापयित्वा तं प्रत्यनुवदेत् ।



## अथानुवादकवचनवचनाप्रकारः ।

भो यजमान काश्यपगोत्र नक्षत्रे राशौ जात देवदत्तनामधेय  
अशेषा विदुषो परिषत् त्वया विज्ञापितानां प्रकाशीकृतमहा-  
पातकव्यतिरिक्तानां तत्संसर्गाद्यतिपातकानां रहस्यकृतमहा-  
पातकानां अतिपातकानां उपपातकानां मङ्गलीकरणानां  
मलिनीकरणानां अपात्रीकरणानां जातिभ्रंशकरणानां प्रकीर्ण-  
कानां बहूनां नवविधानां अपनोदकानि प्रायश्चित्तानि प्रति-  
निमित्तं कर्तुं अक्षमस्य तव सर्वपापापनोदकमेकविधं प्राय-  
श्चित्तं षड्गुणितषड्विंशतिप्राजापतकच्छात्मकं धर्मशास्त्रपर्यालोच-  
नया निश्चित्य यजमानाय पापानुवादपुरःसरं द्विवारं उपदिश  
इति विधायकमुखेन मामादिष्टवती अहमपि तदेतत् पारि-  
षद्भिर्णीतविधायकविहितं सर्वप्रायश्चित्तं तवोपदिशामि सावधानः  
समाकर्णय ।

भो यजमान काश्यपगोत्र नक्षत्रे राशौ जात देवदत्तनामधेय  
तव जन्मप्रभृत्येतत्क्षणपर्यन्तं मध्यवर्तिनि काले बाल्यकौमार-  
यौवनवार्द्धकेषु जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यदस्यासु मनोवाक्कायकर्मभिः  
काम-क्रोध लोभ-मोह-मद-मात्सर्यस्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्  
पाणिपादपायूपस्थैः ज्ञानतोऽज्ञानतश्च सम्भावितानां प्रकाशकृत-  
महापातकव्यतिरिक्तानां तत्संसर्गतद्रूपातिदिष्टरूपातिपातकानां  
रहस्यकृतब्रह्महत्यादिमहापातकानां महापातकरूपातिदेशिक-  
महाव्रतातिदेशिकातिपातकसमरूपपातकानां उपपातकानां



मलिनौकरणानां अपात्रीकरणानां जातिभ्रंशकराणां प्रकीर्ण-  
कानामज्ञानतः सकृत्कृतानां अज्ञानतः ज्ञानतश्चाभ्यस्ताना-  
मत्यन्ताभ्यस्तानां निरन्तराभ्यस्तानां चिरकालाभ्यस्तानां बहूनां  
बहुविधानां सर्वेषां पापानां साशीतिसहस्रसंख्याकप्राजापत्य-  
कृच्छ्रात्मकषड्गुणितषड्वद्रूपं प्रायश्चित्तमपनोदकं भवति तदे-  
तदशेषपरिषन्निर्णीतं साङ्गोपाङ्गं त्वयाऽनुष्ठेयम् । त्वं साक्षाच्-  
चर्यायां अममथेष्टेत् विहिततत्संख्याकधेनुदान तन्मूल्यदानायुत-  
गायत्रीजप प्राणायामशतद्वय तिलहोममहस्रसंहितामात्रवेदपारा-  
यणद्वादशब्राह्मणभोजनविधिवदनुष्ठितसमुद्रगनदीस्नानादिप्राजाप-  
त्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायरूपेणाचर शुद्धः पूतो भविष्यसि ।

काश्यपगोत्रेण नक्षत्रे राशी जातेन देवदत्तनामधेयेन त्वया  
परिषन्निर्णीतं साङ्गोपाङ्गे सर्वप्रायश्चित्ते शक्यप्रत्याम्नायरूपेण  
सम्यगनुष्ठितं सति त्वया परिषत्सन्निधौ विज्ञापितेभ्यः  
प्रारब्धत्वत्कृतपातकव्यतिरिक्तेभ्यः तत्संसर्गतद्रूपातिदिष्टव्रतादिष्टा-  
दिपातकेभ्यः तत्समरूपपातकेभ्यः रहस्यकृतब्रह्महत्यासुरापान  
सुवर्णस्तेयगुरुतल्पगमनाख्य महापातकेभ्यः तत्संसर्गित्वामुग्राहक-  
त्वप्रयोजकत्वमित्रीभावोपदेष्टृत्वानुमन्तृत्वप्रोत्साहकत्वादि महा-  
पातकरूपातिदेशकातिपातकेभ्यः सोमयागस्थक्षत्रियवैश्यवधा-  
विज्ञातगर्त-ऋतुमत्यति-गोत्रादिर्दाक्षितस्त्रीवधादि महापातक-  
व्रतातिदेशिकपातकेभ्यः गुर्वधिज्ञेपवेदनिन्दारुहद्वधाधीतनाश-  
नादि ब्रह्महत्यासमपातकेभ्यः उत्कर्षानृतभाषणाऽभक्ष्यभक्षण पुष्प-  
वर्तुमुखास्वादादि सुरापानसमपातकेभ्योऽश्वरत्न स्त्रीधेनुनिक्षेप-



ब्राह्मणभूमिहिरण्यादिसुवर्णस्तेयसमपातकेभ्यः सखिभार्याकुमारौ  
 ज्ञातिस्त्रात्यजस्त्रीसुषापितृव्यपत्नीमातुलपत्नीनृपपत्नीपितृष्वसृमातृ-  
 ष्वसृमातृमपत्नीभगिनीश्रोत्रियत्विगुपाध्यायाचार्यमितृपत्नीदुहितृ-  
 रजस्वलाशरणागताप्रव्रजितानिच्छिप्तस्त्रीगमनादिगुरुतल्पसमपात-  
 केभ्यः गो-वधव्रात्यत्वमामान्यद्रव्यस्तेयशृणानपाकरणानाहिताग्नि-  
 त्वापण्यविक्रयपरिदेवनभृतकाध्ययनभृतकाध्यापनपारदार्यपारि-  
 वित्त्यवार्जुष्यलवणविक्रयस्त्रीशूद्रविट्-क्षत्रियवधनिन्दितार्थोपजीवन--  
 नास्तिक्यव्रतत्यागसुतविक्रयधान्यकुप्यपशुस्तेयायाज्ययाजन पितृ-  
 मातृसुतत्यागतटारामादिविक्रयकन्यादूषणपरिविन्दककन्याप्रदान-  
 कौटिल्यव्रतलोपनान्यार्थक्रियारम्भमद्यस्त्रीनिषेवणस्त्राध्यायाग्नि-  
 परित्यागव्रान्धवत्यागेन्धनार्थद्रुमच्छेदनस्त्रीहिंसोषधजीवनहिंसाय-  
 न्त्वविधानव्यमनात्मविक्रयशूद्रप्रेष्यत्वहीनसख्यहीनयोनिनिषेवणाना-  
 श्रमवामपरावपरिपुष्टत्वासच्छास्त्राधिगमनाकराधिकारित्वभार्या-  
 विक्रयाद्युपपातकेभ्यः खरोद्रमृगेभाजाविकाश्वमीनाहिमहिषवधा-  
 दिसङ्कलीकरणेभ्यः कृमिकौटवयोवधमद्यानुगतद्रव्यभोजनफलेक्षु-  
 कसुमस्तेयादिमलिनीकरणेभ्यः निन्दितधनादानवाणिज्यकुसीद-  
 जीवनामयभाषणशूद्रसेवादपार्तीकरणेभ्यः ब्राह्मणपीडाकरणम-  
 द्याघ्राणजैह्वपुंमैथुनादिजातिभ्रंशकरेभ्यः विहितकर्मत्यागनिषि-  
 डाचरणेन्द्रियानिग्रहपरमर्मभेदनसूचकत्वशौचसभ्यावन्दनजपहोम-  
 पञ्चमहायज्ञराहित्यकालाभोजनाकालभोजनदिवाहिवारभोजनम-  
 स्यच्छेदनतरुगुल्मलताच्छेदन क्लैव्य स्त्रीवश्यत्व पतितक्तीवव्रात्य-  
 परिविन्दकपरिवित्तिशूद्रसेवकवार्जुषिकनिजकर्महीनान्नभोजनय-



त्यन्नयतिप्रेरितान्नयतिपात्रस्थान्नयतिपक्वान्नयतिस्पृष्टान्नयतिदापिता-  
 न्नभोजनशूद्रस्पृष्टशूद्रवीक्षितशूद्रानुमतशूद्राधिकृतशूद्रयाचितान्नभो-  
 जनग्रहणकालपक्वान्नभोजनपर्वकालरात्रिभोजनैकादश्यहोरात्र--  
 भोजनानिवेदितान्नभोजनहस्तदत्तान्नभोजनप्रेतपिशाचोद्देशभोजन-  
 वटाश्वत्यादिनिषिद्धपक्वान्नभोजनवलिदत्तान्नभोजननीराजितान्नभोज-  
 नग्रामयाजकगणकवृषणीपतिमाहिषिकशिवद्विजशाक्तपाषण्डपाशु-  
 पतचिह्निताङ्गचिकित्सकसौचिकज्योतिषिकान्नभोजनभिन्नकांस्य-  
 पात्रभोजनताम्रालावुदारुपात्रभोजनरजस्वलाचाण्डालादिवाक्यश्र-  
 वणदग्धान्नभोजनपर्युषितपृतिगन्धभुक्तोच्छिष्टान्नभोजनगणान्नदो-  
 क्षितान्नशूद्रपुरोहितान्नपर्यायान्नभोजनशूद्रपात्रस्थान्नभोजनमहा-  
 पुरुषार्चितान्नभोजनशूद्रभुक्तशेषान्नभोजनग्रामान्त्यजदत्तशेषान्नभो-  
 जनभित्तान्नभोजनदम्पतिभुक्तान्नशेषभोजनबोद्धमखन्नाह्नगान्नभोज-  
 नकागणहवामभोजनखरोष्ट्राजाविकमहिर्षीक्षीरादिपानविवत्स-  
 विगतगर्भनिद्देशगोपयःपानस्तन्यपानपिण्याककृतमसंयावपायसा-  
 पूपमांसपुरीडाशादिब्रूयाभक्षणवामहस्तैकहस्तवर्षधारापरदत्तधा-  
 रारूपजलपानरेतोविण्मूत्रकौटास्थिमिश्रितजलपानताट्टुमिश्रि--  
 तान्नभोजनवाक्तीककतककालिङ्गगृञ्जनरक्तमूलकवर्तुलालावुश्वेत-  
 वृन्ताकादिनिषिद्धद्रव्यभक्षणनिषिद्धशिवनिर्माल्यभक्षणोपपातकि-  
 पक्कतण्डुलान्नभोजनयोनिर्वाक्षणयोन्यास्वादनदिवास्वापदिवामङ्गम-  
 टामीविश्याकुचटावितन्तुपरावरुडप्रमवोन्मुखस्त्रीगमनमाधारणीभृ--  
 तपरस्त्रीगमनतिर्यग्योनिगमनमुखमैथुनरय्याराजमार्गच्छायावृ--  
 क्षदेवालयगृहाङ्गणगोष्ठवृन्दावनजलाशयादिरेतोविण्मूत्रकरणजल-



मध्यनिष्ठीवनदूषणपितृमाताचार्यादिशुश्रूषाराहित्य दर्शमहालय-  
 संक्रान्तिव्यतीपाताष्टकालभ्ययोगश्चाद्विस्मरण ग्रहणादिपुण्यकाल-  
 स्नानदानराहित्य सन्ध्यात्रयवस्त्रपरिवर्त्तनौपामनादिराहित्य सन्ध्या-  
 कालमंलापताम्बूलचूर्णभोजनमैथुननिद्रादिपारवश्य पुण्यकालो-  
 णोदकस्नान नग्नस्नान पैतृकादिनिषिद्धदिनाभ्यङ्ग स्नानसन्निहित-  
 तीर्थोल्लङ्घन तीर्थस्नानकच्छराहित्य कौपीनधारण द्विकच्छत्व पुच्छ-  
 कच्छतिर्यक्कटिसूत्रकच्छादिधारण स्वग्रामदेवोत्सवादृशनतदुत्स-  
 ववर्जनपरग्रामकुलाचारोल्लङ्घन गुर्व्याचार्यविप्रश्रोत्रियाहितार्त्ति-  
 नृपच्छायोल्लङ्घन विप्रत्वङ्कारहुङ्कारतिरस्कारवादपराजयप्रापणा-  
 सहायारण्यमार्गगमन ब्राह्मणेतरदण्डनभर्त्सनताडणशोणितस्त्रावण  
 मलिनामेध्याविलकषायविदग्धादिवस्त्रधारण हरिहरगुर्व्याचार्यादि-  
 निन्दाश्रवण ब्राह्मणदूषणक्षोभकरण स्ववृत्तिपरित्याग क्षत्रियादि-  
 वृत्तिद्रव्यार्जनगोतिरोधान स्वयंधृतहलकर्षण क्षुषिजीवन क्रीञ्च-  
 जीवन पीतावशिष्टोदकपान चाण्डालकारितक्षुषिधान्यशालादुग्ध-  
 पुष्पफलोपभोग चाण्डालकारितवापीकूपतटाकोदकपानान्यकारित-  
 प्रपाजलपान करमथिततक्रपान दीपोच्छिष्टाभ्यङ्गावशिष्टरात्रितैल-  
 जलपान माभिलाषपरदारनिरीक्षण नग्नस्त्रीनिरीक्षण मिथुनीभूत-  
 स्त्रीनिरीक्षण गुर्व्याचार्यनृपादिमैथुनदर्शनशब्दश्रवण मैथुनविघ्नाच-  
 रण हीनवर्गाभिवादन राजामनाक्रमण राजत्वङ्कारहुङ्काररन्ध्रान्वेषण  
 दूषण मर्माद्वाटनामाधूपदेशान्यायप्रवर्त्तनकरणचार्याकपाषण्डादि-  
 पूजितदेवताभिवादन परोपतापकरण परोपकारनाशन हृणगुला-  
 लतादिनाशन गोमांसगन्धाघ्राण चाण्डालस्पर्शनदर्शनसम्भाषण



पाकभेदपंक्तिभेदकरण तुरुष्कादिस्तेच्छालयनिवाम स्तेच्छद्रव्योप-  
 भोग याचमानदीनाम्यकृपणोपेक्षण मुष्टिमात्रतिलमहितैरकादि-  
 नानाप्रकारदुष्प्रतिग्रह नियमरहितवेदशास्त्राध्ययनाध्यापन व्यव-  
 हारपक्षपात साधारणब्राह्मणमीमांसाकूल्यातटाककूपारामाद्यपहरण  
 पशुपक्षिवन्धन शीतवातातपवर्षचोरव्याध्याद्यापहतगवादिदुःखानि-  
 वारणानर्हासनशयनप्रदान विषमभाषण वाक्पारुष्याकालविहिता-  
 चरणमितस्वामिसुहृदाचार्य्येष्टभार्यादेवतावञ्चन परमात्मस्मरण-  
 राहित्यादिप्रकीर्णकेभ्यः अज्ञानतः सकृत्कृतेभ्यः ज्ञानतः सकृत्-  
 कृतेभ्यः ज्ञानतोऽज्ञानतश्चाभ्यस्तेभ्यः निरन्तराभ्यस्तेभ्यः चिरकाला-  
 भ्यस्तेभ्यः नवविधेभ्यः बहुभ्यः पापेभ्यः काश्यपगोत्र नक्षत्रे  
 राशौ जात देवदत्तनामधेयस्त्वं मुक्तः पूतोभूयादिति त्रिवारमनु-  
 वदेत् । तत् श्रुत्वा परिषदपि सर्वेभ्यः पापेभ्यो मुक्तो भूयादिति  
 त्रिवारमुच्चैः ब्रूयात् । ततोयजमानः महान् प्रसाद इत्युक्त्वा  
 प्राणानायम्य मङ्गल्यं परिषदुपदिष्टमर्घ्यं प्रायश्चित्तं साङ्गोपाङ्गं  
 कर्तुंकामः शरीरशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्ताङ्गभूतं वपनं करिष्ये इति  
 मङ्गल्यं विज्ञाप्याऽऽज्ञां लब्ध्वा

“यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्याममानि च ।

केशानाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मात् केशान् वषाम्यहम् ॥”

इति मन्त्रेण जङ्घोरुवक्षः कचानुक्तरात्या वापयित्वा स्नानं कुर्यात् ।

ततः परं —

“आयुर्व्वनं यगीवर्चः प्रजाः पशुवमृनि च ।

ब्रह्म प्रज्ञाञ्च मेधाञ्च त्वं नो देहि वनस्पते ॥”



इति मन्त्रेण क्षीरकण्टकवृक्षस्य दन्तकाष्ठं गृहीत्वा दन्तधावनं कृत्वा द्वादशवारगण्डुपेण मुखशुद्धिं विधाय पाणिपादं प्रक्षाल्य पुनराचम्य व्रतग्रहणयोग्यतासिद्धये दशविधस्नानान्याचरिष्य इति मङ्गल्यं शक्तश्चेत् स्वयमेव स्नानादि कुर्यात्, अशक्ता व्याधिताः सुवासिन्यो मूर्धाभिषिक्ताः शूद्राश्च ब्राह्मणेनैव कारयेयुः ।

तत्र द्रव्याणि मन्त्राश्च क्रमेण लिख्यन्ते ।

अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्व्वं हवा इदमेतद्भस्म भवति भस्मैवैतत् प्रयुञ्जीतेति तस्माद्वुध्यति इति अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैः भस्मना स्नानं कुर्यात् ।

गन्धद्वारिति मन्त्रेण जामयेन ? द्वितीयकम् ।

स्थोना पृथिवीति मन्त्रेण मृत्तिकया तृतीयकम् ॥

आपोहिष्टेति मन्त्रेण उदकेन चतुर्थकम् ।

गायत्र्या गोमूत्रेण पञ्चमं, गन्धद्वारिति मन्त्रेण गोमयेन षष्ठम् ।

आप्यायस्वेति क्षीरेण सप्तमं, दधिक्राव्ण इति दध्ना अष्टमं, शुक्रमर्मात्याज्येन नवमं, देवस्य त्वेति कुशोदकेन दशमं, ततो जलमवगाह्य सम्यक् स्नात्वा शुद्धवस्त्रे परिधाय पवित्रपाणिर्द्विराचम्य प्राङ्मुखः प्राणायामत्रयं कृत्वा व्रतग्रहणार्थं महासंकल्पं कुर्यात् ।

श्रीरत्न । अस्य श्रीमहाभगवतः सच्चिदानन्दरूपस्य श्रीम-  
टादिनारायणस्याऽचिन्त्यापरिमितशक्त्या भ्रियमाणानां महा-  
जलोघमध्ये परिभ्रममाणानामर्नककोटिब्रह्माण्डानाम् एकतमे-



ऽस्मिन् अव्यक्तमहदहङ्कारपृथिव्यमेजोवाय्वाकाशाद्यावरणैरावृते  
महति ब्रह्माण्डकटाहान्तरसकलजगदाधारशक्तिकूर्मवराहान्तै-  
रावत पुण्डरीक वामन कुमुदाञ्जन पुष्पदन्त सार्वभौमसुप्रतीकाष्ट-  
दिग्गजोपरिप्रतिष्ठितस्यातलवितलतलातलरमातलमहातलपाता-  
लाख्यसप्तलोकोपरिभागे भूर्लोकभुवर्लोकस्वलोकजनोलोकतपो-  
लोकसत्यलोकाख्यलोकषट्कस्याऽधोभागे महाकालायमानफणि-  
राजशेषमहस्रफणमण्डलविधृते दिग्दन्तिशृङ्गादण्डादन्तर्वहिरन्ध-  
तमसावृतेनान्तःसूर्यप्रकाशितेन लोकालोकाचलेन बलयिते लव-  
णेक्षुसुरासर्पिर्दधिर्क्षीरस्वादूदकाख्यसप्तसागरावरणपरिवेष्टिते जम्बू-  
प्लक्षकुशक्रौञ्चशाल्मलिशाकपुष्कराख्यसप्तद्वीपविराजिते स्वर्णप्रस्थ-  
चन्द्रकशेतावर्त्तरमणमिंहलमहारमणपारमीकपाञ्चजन्याद्युपद्वीप-  
सहिते एवंविधमरीरुहाकारपञ्चाशत्कोटियोजनविस्तीर्णभूमण्डले  
हिमाचलहेमकूटनीलश्वेतशृङ्गिगन्धमादनपारिजाताद्यष्टमीमाचलै-  
र्विभक्ते तन्मध्यवर्त्तिभारतकिम्पुरुषहरिवर्षेलावृतरम्यकहिरण्मय-  
कुरुभवाश्वकेतुमालाख्यनववर्षशोभिते जम्बूद्वीपे नानावर्णकैसरा-  
चलशिखररत्नर्वाजाञ्चितभूमरीरुहकर्णिकायमानस्य मेरोर्दक्षिण-  
दिग्भागे दक्षिणोदधिहिमाचलयोर्मध्यप्रदेशे नवमहस्रयोजन-  
विभक्तेन्द्रद्वीपकश्वेतताम्रपर्णीगभस्तिनागसौम्यगान्धर्वाकणभारता-  
ख्यनवखण्डान्तर्गतेऽस्मिन् भारतवर्षे दक्षिणोदधिप्रभृतिसहस्र-  
योजनायामवति भरतखण्डे सम्भवति कुरुक्षेत्रादिसप्तभूमध्य-  
रेखायाः अमुकदिग्भागे अयोध्यामथुरामायाकाशीकाञ्चप्रवन्तिका-  
द्वारवत्यादिमुक्तिक्षेत्रवत्यामस्यां कर्मभूमौ भार्गवरथोविन्ध्याचल-



गोदावरीणां दक्षिणदिग्भागे कावेरीमलयाचलरामसेतूनाम् उत्तर-  
दिग्भागे श्रीशैलहेमकूटकिष्किभ्यागरुडाचलवेङ्कटाचलारुणगिरि-  
हस्तिगिरिप्रभृतिपुण्यशैलवति दण्डकारण्ये नानापुण्यतीर्थवत्यस्मिन्  
देशविशेषे स्वगृहे देवालये तीर्थनदीतीरे स्वेष्टदेवतासन्निधौ  
अनेककोटिब्रह्माण्डघटनायासव्योमविचरस्य विराड् रूपिणो भग-  
वतो महापुरुषस्य शेषपर्यङ्कशायिनः श्रीमहाविष्णोराज्ञया प्रवर्त्त-  
मानस्य तन्माभिस्थानीयसरोरुहादुत्पन्नस्य सकलवेदनिधिः सकल-  
जगत्स्रष्टुः परार्द्धद्वयजीविनो ब्रह्मणः प्रथमपरार्द्धे श्वेतवाराहकल्पे  
प्रथमवर्षे प्रथममासे प्रथमपक्षे प्रथमदिवसे अहनि उदयादितयो-  
दशघटिकास्वतीतासु स्वायम्भुवस्वारोचिषोत्तमतामसरैवतचाक्षुषा-  
ख्येषु षट्सु मनुषु व्यतीतेषु उपरितनघटिकायां सप्तमे वैवस्वतमन्व-  
न्तरे सप्तविंशतिमहायुगेषु गतेषु अष्टाविंशतितमे महायुगे पुरुहुत-  
नामेन्द्रसमये कृतत्रेताद्वापरेषु गतेषु वर्त्तमाने कलियुगे प्रथमपादे  
ब्रीडावतारे शालिवाहनशके सौरचान्द्रमानप्रभवादिषष्टिसंवत्सरा-  
न्तर्गतप्रथमविंशत्यां वर्त्तमाने व्यावहारिके अमुकसंवत्सरे अमुकायने  
अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवारे  
अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे एवं गुणविशिष्टपुण्यकालै  
काश्यपगोत्रस्यामुकनक्षत्रे अमुकराशौ जातस्य देवदत्तनामधेयस्य  
मम जन्माभ्यासाजन्मप्रभृत्येतत्क्षणपर्यन्तं मध्यवर्त्तिनि काले  
सम्भावितानां प्रकाशकृतमहापातकानां रहस्यकृतमहापातका-  
दीनां प्रकीर्णकान्तानां सर्वेषां पापानामपनोदकं साशीतिसहस्र-  
संख्यकप्राजापात्यकुच्छात्मकं षड्गुणितषड्विंशत्यर्वायश्चित्तं परि-



षदुपदिष्टं पूर्वोत्तराङ्गकलापसहितं विहितशक्यप्रत्याम्नायरूपिणा-  
हमाचरिष्य इति संकल्प्य ततो नान्दीश्राङ्गवैष्णवश्राङ्गे कुर्यात् ।

तत्र प्रयोगः —

एवं गुणविशेषणविशिष्टपुण्यतिथौ अस्मिन् प्रायश्चित्तकर्मणि  
नान्दीदेवतासन्निधानार्थं पितृप्रीत्यर्थं श्रीमहाविष्णुप्रीत्यर्थं च  
नान्दीश्राङ्गं वैष्णवश्राङ्गञ्च करिष्य इति नान्दीप्रपितामहोपितामही-  
मातरः काश्यपगोत्राः नान्दीमुखाः उभाभ्यां नान्दीप्रपितामह  
पितामहपितरः काश्यपगोत्राः नान्दीमुखाः उभाभ्यां नान्दी-  
सपत्नीकमातामहमातृ पितामहमातृप्रपितामहाः गोत्रशर्मणः  
नान्दीमुखाः उभाभ्यां मत्स्यवसुसंज्ञका विश्वदेवाः नान्दीमुखाः  
एता देवताः हिरण्येन तोषयिष्ये—

हिरण्यगर्भभस्मस्थं हेमवीजं विभावसो ।

अनन्तपुण्यदलदं अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

एतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो गोत्रेभ्यो नामधेयेभ्यो नान्दीदेवताप्रीतिं  
कामयमानः आग्नेयीं हिरण्यं दक्षिणां तेभ्यः सम्प्रददे न मम  
इति यज्ञेश्वरं विष्णुं हिरण्येन तोषयिष्य इति संकल्प्य हिरण्य-  
गर्भमिति अस्मै ब्राह्मणाय श्रीमहाविष्णुप्रीतिं कामयमानः  
आग्नेयीं दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददे न ममेति च चिकीर्षितमर्घ्य-  
प्रायश्चित्तमाद्गुण्यार्थं प्राच्याङ्गगोदानं करिष्य इति च संकल्प्य

यज्ञमाधनभूता या विश्वस्याऽन्नप्रणाशिनी ।

विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा ॥

अस्मै ब्राह्मणायेत्यादि इमां गां सवत्सां श्रीमहाविष्णुप्रीतिं



कामयमानस्तुभ्यमहं सम्प्रददे न ममेति । ततः चिकीर्षितसर्व-  
प्रायश्चित्तमाहुष्यार्थं शालाग्निहोमं करिष्य इति संकल्प्य स्थण्डि-  
लोल्लेखनादि अग्निप्रतिष्ठापनान्तं कृत्वा अस्मिन्नन्वाहिताग्नौ  
अग्निं जातवेदसम् इध्मेन प्रजापतिञ्चाधारदेवते आज्येनाऽग्निष्टोमौ  
चक्षुषी आज्येन अग्निर्वायुः सूर्यः प्रजापतिश्च प्रधानदेवता आज्येन  
आज्यशेषेण स्विष्टकृतमित्यादि यज्य इति संकल्प्य चतसृभिर्यज्ञ-  
तिभिः आज्यहोमं कृत्वा प्रायश्चित्तादिशेषं समापयेत् ।

ततः मया आचरितसर्वप्रायश्चित्तपूर्वाङ्गभूत पञ्चगव्य-  
प्राशनं करिष्यमाणस्तदङ्गहोमं करिष्य इति संकल्प्य स्थण्डिलो-  
ल्लेखनाद्यग्निप्रतिष्ठापनान्तं कृत्वा अस्मिन्नन्वाहितेनाग्निं जातवेदसं  
इध्मेन प्रजापतिं चाधारदेवते आज्येनाग्निष्टोमौ चक्षुषी आज्ये-  
नाग्निं सोमं विष्णुं रुद्रं परात्मानं सवितारं वायुं सूर्यं प्रजापतिं  
प्रधानदेवताः पञ्चगव्यद्रव्येण शेषेण स्विष्टकृतमित्यादियज्ये इत्यन्तं  
संकल्प्य अन्वाधेयपरिसमूहनपरिस्तरणपात्रासादनाज्यसंस्कारान्तं  
कृत्वा पञ्चसु पात्रेषु गव्यपञ्चकमादाय पात्रान्तरे कुशोदकञ्च  
स्थापयित्वाऽन्यस्मिन् पात्रे वक्ष्यमाणभागमंस्थया तत्तन्मन्त्रैर्योज-  
येत् । गायत्र्या एकभागं गोमूत्रं, गन्धहारेति अङ्गुष्ठायपरिमाणं  
गोमयं, आप्यायस्वेति सप्तभागं क्षीरं, दधिक्राव्ण इति भाग-  
त्रयं दधि, शुक्रमसीत्येकभागमाज्यं, देवस्यत्वेत्येकभागं सर्वं  
प्रणवेनानोड्याग्निमलङ्कृत्येधमाधाय आज्येन चक्षुषी हुत्वा  
वक्ष्यमाणमन्त्रैः पञ्चगव्यहोमं कुर्यात् ।

अग्निदूतं मेधातिथिरग्निर्गायत्री आप्यायस्व गीतमः सोमो



गायत्री सोमायेदं, इरावतीवशिष्टोविष्णुस्त्रिष्टुप् विष्णवेइदं, इदं  
 विष्णुर्मधातिथिर्विष्णुर्गायत्री विष्णवे इदं, मा नोमहान्तमिति  
 मा नस्तोक इतिद्वयं कुत्सोरुद्रो जगती रुद्रायेदं, प्रणवस्यान्तर्यामी  
 परमात्मा गायत्री परमात्मन इदं, तत्सवितुर्विश्वामित्रः सविता  
 गायत्री, सवित इदं, व्याहृतीनां विश्वामित्रगौतमभारद्वाजऋषयः  
 अग्निर्वायुः सूर्यः प्रजापतिर्देवताः गायत्रीच्छन्दः, अग्नये इदं  
 वायवे इदं सूर्याय इदं प्रजापतये इदम् ।

अथ स्विष्टकृदादिहोमशेषं समापयेत् ।

ततो हुतशेषं कुशपवित्रेण प्रणवेनाऽऽमन्त्र्य प्रणवेनाऽभिमन्त्र्य  
 प्रणवेनोद्धृत्य मध्यमेनाऽन्तिमेनवा पलाशपर्णेन ब्रह्मतीर्थेन वा  
 यत् त्वगस्थितं पापं देहे तिष्ठति मामके ।

प्राशनं पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम् ॥

इति मन्त्रं पठित्वा प्रणवेन पिवेत् ।

क्षत्रियादयः स्त्रियोरोगिणश्च ब्राह्मणेन होमं कारयित्वा  
 प्राशनं कुर्युः, स्त्रीशूद्राणां अमन्त्रकमेव च ।

ततो यजमानः परमात्मस्मरणादिना आसायं स्थित्वा सायं  
 सन्ध्यादिकर्म निर्वर्त्य प्राणायामत्रयं कृत्वा काश्यपगोत्रेण देवदत्त-  
 नामधेयेन मया परिषत्सन्निधौ विज्ञापितानां सर्वेषां पापानां  
 सद्यः सङ्ख्यार्थं परिषन्निर्णीतमर्ज्यपापापनोदकं षड्गुणितषडब्द  
 प्रायश्चित्तं प्राजापत्यकृच्छ्रक्यप्रत्याम्नायरूपेण चरिष्य इति सङ्कल्प्य



धेनुमूल्यादिकृच्छद्रव्यं कुशकुसुमाज्जतमहितं गृहीत्वा यज्ञसाधन-  
भूता या इति मन्त्रेण हिरण्यगर्भं इति मन्त्रेण च श्रीमहाविष्णु  
श्रीयुतामिति मन्त्रेण चैतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नानागोत्रेभ्य इमां परि-  
षन्निर्णीतषड्गुणितषड्द्वाशीत्युत्तरमहस्रसंख्याकप्राजापत्यकृच्छ्र-  
प्रत्याम्नायधेनुदानादिप्रत्याम्नायभूतामाग्नेयहिरण्यदक्षिणां श्रीमहा-  
विष्णुप्रीतिद्वारा मम समस्तपापक्षयं कामयमानोऽहं सम्प्रददे  
न मम इति भूमौ सजलं दद्यात् ।

ततस्तस्यां रात्रौ वेदपारायणपुराणश्रवणादिना जागरणं  
कृत्वा प्रातःस्नानादि कर्म निर्वर्त्य मया आचरितपरिषन्निर्णीतप्राय-  
श्चित्तोत्तराङ्गभूतं शालाग्निहोमं उदीच्याङ्गगोदानं च करिष्य  
इति सङ्कल्प्य पूर्वोक्तरीत्या व्याहृतिभिराज्येन हुत्वा प्रायश्चित्तादि-  
होमशेषं समाप्य “यज्ञसाधनभूता या” इति मन्त्रं पठित्वा इमां  
गां प्रायश्चित्तोदीच्याङ्गभूतां श्रीमहाविष्णुप्रीतिद्वारा सर्वप्रायश्चित्त-  
साङ्गण्यं कामयमानस्तुभ्यमहं सम्प्रददे न मम इति दद्यात् ।  
प्राच्योदीच्याङ्गगोदानं धेनोरभावे तन्मूल्यं दक्षिणां च दद्यात् ।

ततः परं मया आचरितसर्वप्रायश्चित्तसाङ्गण्यार्थं न्यूनाति-  
रिक्तदोषपरिहारार्थं च दश दानानि करिष्य इति सङ्कल्प्य तत्र  
द्रव्याणि दक्षिणया सह दशब्राह्मणेभ्यो दद्यात् ।

दशदानानि—

गो भूतिलहिरण्याज्यवासोधान्यगुडानि च ।

गोप्यं लवणमित्येवं दशदानं प्रकीर्तितम् ॥



गोदानमन्त्रस्तु प्रागुक्त एव । भूमिदानमन्त्रः—

सर्वशस्याश्रया भूमिर्वराहेण समुद्धृता ।

अनन्तपुण्यफलदा ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

तिलदानमन्त्रः—

तिलाः पापहरा नित्यं विष्णोर्देहसमुद्भवाः ।

तिलदानादसत्यं मे पापं नाशय केशव ॥

स्वर्णदानमन्त्रः—

स्वर्णं पवित्रममलं स्वर्णं पापप्रणाशनम् ।

स्वर्णं हि शङ्करोयस्माद् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

आज्यदानस्य—

कामधेनुसमुद्धृतं सर्वक्रतुषु संस्थितम् ।

देवानामाज्यमाहारस्ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

वस्त्रस्य—

शीतवातोष्णमन्त्राणं लज्जानिर्हरणं परम् ।

देहालङ्करणं वस्त्रं अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

धान्यस्य—

धन्यं करोषि दातारं इह लोके परत्र च ।

तस्मात् समुच्यसे धान्यं अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

गुडस्य—

यस्माद् रसानां प्रवरं इक्षुदण्डममुद्भवम् ।

तस्मान्मम परां लक्ष्मीं प्रयच्छ गुडं सर्वदा ॥



रौप्यस्य—

रुद्रनेत्रसमुद्भूतं रजतं पितृवल्लभम् ।

तस्मादस्य प्रदानेन प्रीणातु मम शङ्करः ॥

लवणदानस्य—

लवणे वै रमाः सर्वे लवणे सर्वदेवताः ।

सर्वपाकाद्यधिष्ठानं लवणं मेऽस्तु सौख्यदम् ॥

इति मन्त्रान् पठित्वा एतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो इमानि द्रव्याणि  
श्रीमहाविष्णुप्रीतिं कामयमानोऽहं सम्प्रददे न ममेति दद्यात् ।

अतः परमाचरितसर्वप्रायश्चित्तसाङ्गण्यार्थं भूरिदानं करिष्य-  
इति सङ्कल्प्य हिरण्यगर्भमिति मन्त्रं पठित्वा इमां भूरिदक्षिणां  
श्रीविष्णुप्रीतिं कामयमानः दीनान्धकृपणेभ्यः सम्प्रददे न ममेति  
दद्यात् ।

अथाऽलक्ष्मीपरिहारार्थं आयुष्याभिवृद्ध्यर्थं निरीक्षिताज्यदानं  
करिष्य इति सङ्कल्प्य रूपं रूपमिति पठेत् ।

याऽलक्ष्मीर्यच्च मेदो मे सर्वाङ्गेषु व्यवस्थितम् ।

तत्सर्वं नाशयाऽऽज्य त्वं श्रियं पुष्टिञ्च वदय ॥ इति पठित्वा  
अस्मै ब्राह्मणायित्यादि इदं कांस्यपात्रपूरितं निरीक्षिताज्यं  
मदक्षिणाकं समाऽलक्ष्मीपरिहारार्थमायुष्याभिवृद्ध्यर्थञ्च कामय-  
मानस्तुभ्यमहं सम्प्रददे न मम इति मन्त्रेण दद्यात् ।

अनन्तरं मया चीर्णं सर्वप्रायश्चित्तसाङ्गण्यार्थं ब्राह्मणान् भोज-  
यिष्य इति सङ्कल्प्य महस्रं पञ्चशतानि शतं पञ्चाशदा ब्राह्मणान्



स्वगत्यनुसारेण भोजयित्वा आशीर्वाढं गृहीत्वा पश्चादिष्टैर्वन्धुभिः  
सह स्वयं पारणां कुर्यात् ।

ततः परं “यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या” इति “प्रायश्चित्तान्यशेषा-  
णी”ति च मन्त्रद्वयं यथाशक्ति नामत्रयञ्च जप्त्वा गोत्रादियुक्तेन मया  
आचरितपूर्वोत्तराङ्गमहितमर्घ्यप्रायश्चित्तकर्मणि अशेषयज्ञस्वरूपी  
भगवान् श्रीमहाविष्णुः प्रीयतामिति वदेदिदं च दिनत्रयप्राय-  
श्चित्ताचरणशक्तविषयम् । अशक्तानां बालानां रोगिणां च मलाप-  
कर्षणस्नानादि भूमिदानान्तं साङ्गोपाङ्गं प्रायश्चित्तं एकस्मिन्नेव  
दिने, उपवासञ्च कारयित्वा पर्युर्वाह्यभोजनं व्रतपारणं च  
कारयेत् ।

अथ सुवामिनीनां प्रायश्चित्ताचरणे मृत्तिकास्नानशालाग्नि-  
होमपञ्चगव्यहोमाद्याचरणं ब्राह्मणेन कारयेत् । वपननान्दी-  
आदिवैष्णवश्राद्धानि न मन्त्येव । पापनिवेदने प्रकीर्णकेषु परमात्म-  
स्मरणराहित्यान्तं मुक्ता स्वार्थपरार्थ-धर्म क्रियानुकूलक्रियानिरो-  
धनक्रियानिन्दनभर्तृक्रियानिन्दनभर्तृवचोलङ्घन-श्वश्रु-श्वशुरदेव-  
राटिवचनोलङ्घन मावित्रीव्रतराहित्यमाभिलाषपरपुरुषनिरीक्षण-  
सम्भाषणपरिहसनसहयानामनशयनावस्थानाज्ञात-परपुरुषसंसर्ग-  
पैतृकव्रतोपवासादिनिषिद्धदिनमङ्गमरहोऽवस्थानभर्तृदेवतासूर्या-  
दिग्रहादशनेभर्तृसम्भाषणराहित्यगृहीपकरणादिद्रव्यादर्शनोदक्या-  
शुद्रग्रामान्त्यजस्यर्गेन-चाण्डालनिरीक्षणवाक्यश्रवणप्रतिकूलवचन-  
भर्तृश्वशुरश्वश्रुदेवाग्निराहित्य गिशुताङ्गनक्षत्रपरीतगिशुस्तन्या-  
प्रदान भर्तृश्वशुरादिर्मतीभेदनपंक्तिभेदव्यञ्जनादिप्रदान भर्तृवशी-



करणदोषचिन्तनदेवत्राह्मणगुरुदूषणभर्तृप्रवामकालदिवारजभोजन-  
परगृहयानदेहलीवासपरगृहवामकुड्यजालवातायनादिविचरणर-  
थोपमर्पण-समाजोत्सवदर्शन जननीगृहयानदिवास्वाप-भर्तृश्वशुर-  
श्वश्रूदेवरादिसमानामन-शय्याद्यवस्थानतदभिवादनराहित्यधान्य-  
गृहोपकरणादि-विक्रयभर्तृननुज्ञातव्रतोपवामनियमाचरणदेहली-  
गृहाद्यलङ्घरणराहित्यमदानिष्ठुरभाषणवृथाक्रोधनबोधनोरःशिरो-  
मुखताडनक्षुधितदामौदामपशूपेक्षणभक्ताप्रदानताम्बूलाञ्जनहरिद्रा-  
लेपनतिलकमङ्गलमूत्रादिराहित्य-केशप्रसाधनराहित्यसदामलिन-  
वस्त्रधारणस्वेच्छाकामुकत्वभर्तृत्वंकारहुंकारतिरस्कारस्वयं प्रथम-  
भोजनशयनप्रबोधनभर्तृचित्तारञ्जनादिप्रकीर्णकानां ज्ञानतोऽज्ञा-  
नतवेति समानम् । अनुवादकवचनेऽपि स्वार्थपरार्थविप्रकीर्ण-  
कादिभर्तृचित्तारञ्जनान्तप्रकीर्णकाणां इति ज्ञानतोऽज्ञानतो-  
वेत्यादि यथायथं अनुवादः कार्यः ।

अथ विधवानां पापनिवेदने पापविशेषः कथ्यते । सुवासिनी-  
त्वप्रयुक्तस्वार्थपरत्वभर्तृचित्तारञ्जनान्तं सुक्ताऽस्नानभोजनदिवार-  
भोजन-पर्युषितान्नभोजनकांश्यपात्रभोजनरात्रिभोजनपुत्राद्युच्छि-  
ष्टान्नभोजनमदकरद्रव्यभक्षणताम्बूलचर्वणवलीवर्दारोहणकुसुमरक्त-  
चित्रवस्त्रादिधारणतिलकाञ्जनगन्धकस्तूरीकर्पूरघुसृणसुरभिपुष्पादि-  
धारणभर्तृस्मरणतर्पणादिराहित्यभर्तृनिन्दाश्रवणस्वशरीरपोषणादि-  
प्रकीर्णकानां यथायथं निवेशः दामौकुलटावेश्यामैत्रीकरणसत्कथा-  
श्रवणराहित्यभ्रातृभार्यादिमैत्रीभेदन-स्वाधीनपरमैद्युनशब्दश्रवण-  
वीक्षणस्वदृशयनयानारोहणोष्णोदकस्नानतीर्थाचरणराहित्यभर्तृ-



निन्दाश्रवण-स्वशरीरपोषणादि-प्रकीर्णकानां च यथायथं निवेशः  
 ज्ञानतोऽज्ञानतश्चेति समानम् । अनुवादकवचने अस्नानभोज-  
 नादिस्वशरीरपोषणादिप्रकीर्णकेभ्य इति ज्ञानतोऽज्ञानतश्चेत्यनु-  
 वादः विधवानां प्रायश्चित्ताचरणे शिरोमात्रवपनं, पाणिपाद-  
 नखकृन्तनं, मृत्तिकास्नानं, दशविधस्नानानि च सा स्वयमेव  
 कुर्यात् । नान्दीश्राद्धं वैष्णवश्राद्धम् च अस्त्येव, पञ्चगव्यहोमं  
 ब्राह्मणेन कारयेत् शेषमन्यत् समानम् । इति हेमाद्रौ सर्व-  
 प्रायश्चित्तम् ।

पितृस्तु दिवसे दर्शं श्राद्धात् पूर्वं न तर्पयेत् ।

ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् पिण्डात् पूर्वं तु तर्पयेत् ॥

इति हेमाद्रौ प्रायश्चित्ताध्याये सर्वप्रायश्चित्तं समाप्तम् ।

श्रीविश्वेश्वरो जयति ।

---



अथ निन्दितार्थोपजीवनप्रायश्चित्तमाह ।

कूर्मपुराणे—

अश्वो धेनुर्महिषश्च रासभः कुञ्जरस्तथा ।  
क्रौणन् नरकमाप्नोति विप्रो यद्यन्नविक्रयी ॥  
कन्यानारी अजावस्तौ पुत्रकं ब्रह्मसूत्रकम् ।  
लवणं लशुनं चर्म पलाण्डुं गृञ्जनं तथा ॥  
शुण्ठीपिप्पलिमारीचलवङ्गैलाहरिद्रकाः ।  
ओषधानीह यावन्ति मत्स्यकुक्कुटसूकराः ॥  
हिङ्गुजीरकवस्तूनि ताम्रं कांस्याविकं तथा ।  
एतान् मूल्यैः द्विजः क्रीत्वा सुलभैर्मूल्यसंख्यया ॥  
तेभ्यश्च द्विगुणैर्मूल्यैरल्पमूल्यैरथापि वा ।  
विक्रीयलाभगणनं कुर्याद्यदि स पापभाक् ॥  
मृत्वा नरकमासाद्य कृमिकूपे पतत्यधः ।  
तस्माद्देहविशुद्धार्थं प्रायश्चित्तमिहोच्यते ॥  
स कृत्वा तद् द्विवारञ्च चतुर्वारमनेकशः ।  
तप्तं पराकं च चान्द्रञ्च यावकं वर्षमाचरेत् ॥  
तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्येन शुध्यति ॥

इति हेमाद्रौ निन्दितार्थोपजीवनप्रायश्चित्तम् ।







## सूचिपत्रम् ।

अ ।

|  |     |     |      |
|--|-----|-----|------|
| अग्निकार्यत्रह्यज्ञतर्पणलोपप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ५२५  |
| अग्निपतनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ४६८  |
| अधमर्षणप्रकारः                             | ... | ... | १००३ |
| अधमर्षणविधिः                               | ... | ... | १००१ |
| अजवधप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | १११  |
| अजवस्तहरणप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | २४२  |
| अजागमनप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | ३५२  |
| अजारोहणप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ३६१  |
| अज्ञानप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | १३२  |
| अद्भुतशान्तिप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ७७२  |
| अधीतविस्मृतिप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | १२६  |
| अनडुडरणप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | २३३  |
| अनडुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ७७६  |
| अनध्ययनेषु वेदपाठप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ५२८  |
| अनाश्रमिणः प्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ११८  |
| अनुजविवाह हेतुः                            | ... | ... | ५४०  |
| अनुवादकप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ४८२  |



|  |     |     |      |
|--|-----|-----|------|
| अनुवादकवचनरचनाप्रकारः                      | ... | ... | १०१३ |
| अत्यजातिस्त्री                             | ... | ... | ६६८  |
| अन्नप्राशनकालातिक्रमप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ५१४  |
| अन्नविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | २०२  |
| अन्योन्यसंस्पृष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ४४५  |
| अन्वारम्भणीयलोपप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ५४३  |
| अपण्यविक्रयप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | १३४  |
| अपस्मारिष्वशृगालदष्टमरणप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ५०३  |
| अपात्रीकरणम्                               | ... | ... | १००१ |
| अपात्रीकरणजन्या रोगाः                      | ... | ... | ७५०  |
| अपात्रीकरणप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ३०४  |
| अभिशस्तप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ३५७  |
| अभुक्तसंज्ञा                               | ... | ... | ७६६  |
| अयाज्ययाजिनः प्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ७६७  |
| अयुतसहस्रब्राह्मणभोजनप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ३७८  |
| अर्घ्यादि विस्मरणप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ५५७  |
| अर्द्धनारीश्वरयोगे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८३१  |
| अल्पसुवर्णपहारप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ५४   |
| अवकीर्णप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ३५४  |
| अश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ८६६  |
| अश्ववधप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | ६६   |
| अश्वविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | १७८  |



|   |     |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|-----|
| अश्वविक्रये दोषः  | ... | ... | ... | ८६६ |
| अश्वस्तेयप्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | ... | २३८ |
| अष्टविधमैयुनम्  | ... | ... | ... | ८४१ |
| अस्थिचर्मपक्षिलोमकेशनखलोमोपहतशाकान्नभोजन-<br>प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ... | ४२७ |
| अस्यां जलनिक्षेपाभावप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | ... | ४७८ |
| अस्युपहतिप्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | ... | ४७८ |
| अस्नानभोजनप्रायश्चित्तम्                                    | ... | ... | ... | ३८७ |

### आ ।

आग्नेयस्थालीपाकादूर्ध्वम् उपामनात्प्राकपत्नी तद्भर्ता वा

|                                    |     |     |     |     |
|------------------------------------|-----|-----|-----|-----|
| यदाऽऽधिग्रस्तौ तदा प्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ... | ५४५ |
| आग्रयणलोपप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ... | ५४८ |
| आचार्यैर्त्विजां पुनः संस्कारः     | ... | ... | ... | ६३१ |
| आज्यावेक्षणप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ... | ८२८ |
| आनताग्रिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ... | ८३४ |
| आत्मविक्रयप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ... | १४८ |
| आत्रेयीनक्षणम्                     | ... | ... | ... | १८  |
| आथर्वणोक्ता मार्जनमन्त्राः         | ... | ... | ... | ६२७ |
| आर्भारप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ... | ८५० |
| आरण्यकमृगपक्षिविक्रयप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ... | १७५ |
| आरण्यमृगहरणप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ... | २४३ |
| आगामजा वृक्षाः                     | ... | ... | ... | ११४ |



|   |     |     |
|---|-----|-----|
| आर्द्रक्षणाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ७४२ |
| आर्षविवाहः                              | ... | ५३४ |
| आलिङ्गनदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्       | ... | ७६८ |
| आसन्दीभोजनप्रायश्चित्तम्                | ... | ४६६ |
| आसुरविवाहः                              | ... | ५३७ |
| आहिताग्निदुर्मृतिप्रायश्चित्तम्         | ... | ५०२ |
| आहिताग्निर्दशपूर्णेमासलोपप्रायश्चित्तम् | ... | ५६७ |

## इ ।

|                                    |     |     |
|------------------------------------|-----|-----|
| इक्षुरमधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ७३३ |
| इत्थनहरणप्रायश्चित्तम्             | ... | २७६ |

## उ ।

|  |     |     |
|--|-----|-----|
| उच्छिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                   | ... | ४१२ |
| उत्सृष्टवृषहननप्रायश्चित्तम्                     | ... | ८२  |
| उत्क्रान्तिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्           | ... | ७५८ |
| उत्तरीयगिलापात्रकर्तृद्रव्यपर्यये प्रायश्चित्तम् | ... | ४७२ |
| उदीच्याङ्गधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्            | ... | ७८१ |
| उद्वाहितायाः पुनरुद्वाहप्रायश्चित्तम्            | ... | ३६३ |
| उद्वाहीपामनमध्ये लाजहोमात् प्राक् अग्निशान्ती    | ... | ... |
| प्रायश्चित्तम्                                   | ... | ५४३ |
| उपकेशविक्रयप्रायश्चित्तम्                        | ... | २०२ |
| उपनयनकालातिक्रमप्रायश्चित्तम्                    | ... | ५१८ |
| उपप्रातकजन्या रोगाः                              | ... | ७५० |



|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| उपपातकप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ८०  |
| उपपातकानि                                 | ... | ... | ८८८ |
| उपवीतं विना भोजने प्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ४४१ |
| उपाकर्मलोपप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ५३४ |
| उपानहरणप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | २६४ |
| उभयतोमुखीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ७५७ |
| उष्णोदकस्नानमृत्तिकारहितशौचप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४४० |
| उष्ट्रीक्षीरपानप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ४२३ |
| उष्ट्रखरवड्वामैथुनप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ३५१ |
| उष्ट्रवधप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | १०२ |
| उष्ट्रविक्रयप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | १६७ |
| उष्ट्रस्तेयप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | २४० |
| उष्ट्रारोहणप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ३६१ |

ऋ ।

|                              |     |     |     |
|------------------------------|-----|-----|-----|
| ऋतुकालपरित्यागप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ३४६ |
| ऋतुकालातिक्रमे हेतुः         | ... | ... | ३४६ |

ए ।

|                                |     |     |      |
|--------------------------------|-----|-----|------|
| एकादश्यामन्नभोजनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४०५  |
| एवं निर्णीतस्य आचरणक्रमः       | ... | ... | १००४ |

औ ।

|                             |     |     |     |
|-----------------------------|-----|-----|-----|
| औदुम्बरभक्षणप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४१८ |
| औपासनपरित्यागप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ५५१ |



## क ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| कतकभक्षणप्रायश्चित्तम्                                    | ... | ... | ४१८ |
| कदलीविवाहप्रकारः  | ... | ... | ८७७ |
| कनकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                                | ... | ... | ६७४ |
| कनकस्वरूपम्   | ... | ... | ६८५ |
| कनकाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                             | ... | ... | ६८५ |
| कनकाज्यावेक्षणप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ७७८ |
| कन्दादिहरणप्रायश्चित्तम्                                  | ... | ... | २७१ |
| कन्यकागमनप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | ३४८ |
| कन्यकादूषणप्रायश्चित्तम्                                  | ... | ... | ३४८ |
| कन्यकाहरणप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | २५३ |
| कन्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                              | ... | ... | ६८५ |
| कन्याशुल्कम्  | ... | ... | १५७ |
| कपिलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ६८८ |
| करमथिततक्रपानपलाण्डुलशुनगृञ्जनादिभक्षण-<br>प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४१७ |
| करादौ शुक्रोत्सर्गप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | ३५३ |
| कर्तृविपर्ययप्रायश्चित्तम्                                | ... | ... | ४७२ |
| कलशदानमन्त्रः   | ... | ... | ६२८ |
| कल्पतरुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ५८० |
| कल्पलताप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ६१४ |
| कस्तूर्यादिविक्रयप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | २२६ |



|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| कारणं विना परमान्नक्षपरान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ४०३ |
| कारणं विना स्वसतीपरित्यागिनः प्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | ८६३ |
| कारागृहवामप्रायश्चित्तम्                                       | ... | ... | ३७१ |
| कारुकनापितयोः स्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | ३३३ |
| कार्तिकमामव्रतोद्यापने प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ८५३ |
| कार्तिकव्रतानि   | ... | ... | ८५३ |
| कार्पासविक्रयप्रायश्चित्तम्                                    | ... | ... | १८७ |
| कार्पासाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                              | ... | ... | ७०८ |
| कालपुरुषप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                                | ... | ... | ६६८ |
| कालिङ्गभक्षणप्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | ४१८ |
| कांस्यटानमन्त्रः   | ... | ... | ६२८ |
| कांस्यप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                                  | ... | ... | ८२५ |
| कांस्यविक्रयप्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | २१८ |
| कांस्यस्तेयप्रायश्चित्तम्                                      | ... | ... | ६४  |
| कुग्रामवामिनां प्रायश्चित्तम्                                  | ... | ... | ३५८ |
| कुण्डगोलकयोः परिवित्तिपरिवेत्तोश्च अन्नभोजन-<br>प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४०८ |
| कुण्डगोलकयोः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ८३७ |
| कुण्डलक्षणम्   | ... | ... | ४०८ |
| कुक्षितसेवाप्रायश्चित्तम्                                      | ... | ... | ३६० |
| कुलालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | ३३१ |
| कुष्ठान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                                    | ... | ... | ४०७ |



|  |     |      |
|--|-----|------|
| कुष्माण्डप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्           | ... | ८५६  |
| कूटसाक्षिप्रायश्चित्तम्                    | ... | २२६  |
| कृषीबलप्रायश्चित्तम्                       | ... | १३६  |
| केशवापनमन्त्रः                             | ... | १०१८ |
| केशोपहतशाकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्           | ... | ४२७  |
| कैवर्त्तगमनप्रायश्चित्तम्                  | ... | ३२५  |
| कोटिहोमे आचार्यादीनां प्रायश्चित्तम्       | ... | ६५६  |
| कोषहरणप्रायश्चित्तम्                       | ... | २७६  |
| क्रमुकुरुद्राक्षहरणप्रायश्चित्तम्          | ... | २८०  |
| क्रमुकादिदलविक्रयप्रायश्चित्तम्            | ... | १६६  |
| क्रीतान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                | ... | ३८६  |
| क्षत्रियवैश्ययोर्दुर्मृतयोः प्रायश्चित्तम् | ... | ४५३  |
| क्षत्रियस्य वैश्यवधप्रायश्चित्तम्          | ... | २६   |
| क्षत्रियाणां विप्रहनने प्रायश्चित्तम्      | ... | १८   |
| क्षीरकण्टकवृक्षस्य दण्डकाष्ठग्रहणमन्त्रः   | ... | १०१६ |
| क्षीरधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्           | ... | ७२४  |
| क्षीरहरणप्रायश्चित्तम्                     | ... | २८३  |

ख ।

|                                 |     |     |
|---------------------------------|-----|-----|
| खननयोग्यस्य दहने प्रायश्चित्तम् | ... | ४७० |
| खरमैथुनप्रायश्चित्तम्           | ... | २५१ |
| खरविक्रय प्रायश्चित्तम्         | ... | १६६ |
| खरहननप्रायश्चित्तम्             | ... | १०४ |



|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| खरस्तेयप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | २४१ |
| खरोद्रवनीवहेमहिषवस्ताजारोहणप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ३६१ |
| खरोद्रहरिणीमृतवत्सगवीक्षीरपानादिप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४२३ |

## ग ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| गजप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ६६५ |
| गजवधप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ८७  |
| गजविक्रयप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | १५८ |
| गजहरणप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | २३७ |
| गणकान्नदेवलकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ३८६ |
| गर्भाधानत्यागी प्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ५०७ |
| गर्भाधानादिषोडशकर्मतिक्रमप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ५०७ |
| गर्भिणीमृतिप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ४८७ |
| गान्धर्वीविवाहः                         | ... | ... | ५३७ |
| गायकप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ८४८ |
| गुडधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ७३६ |
| गुडविक्रयप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | १८३ |
| गुडहरणप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | २८२ |
| गुरुतल्पगमनप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ७०  |
| गुरुतल्पसमानि                           | ... | ... | ८८८ |
| गुरुधिकारप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | १२८ |
| गुरुहत्याप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | १५  |
| गृह्णनादिभक्षणप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ४१७ |



|  |     |     |      |
|--|-----|-----|------|
| गृहस्थधर्मातिक्रमप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ५७२  |
| गृहस्थानां ब्रह्मयज्ञलोपप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ५५०  |
| गृहोपकरणविक्रयप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | २२०  |
| गृहोपकरणादिहरणप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | २८६  |
| गोचर्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ७५४  |
| गोदानकालातिक्रमप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ५३२  |
| गोधूमतिलमाषविक्रयप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | १७७  |
| गोवधप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ८०   |
| गोवधादि अपात्रीकरणम्                   | ... | ... | १००० |
| गोमुखजननधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ७६६  |
| गोवत्सहननप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ८८   |
| गोरमविक्रयप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | २०४  |
| गोलकलक्षणम्                            | ... | ... | ४०८  |
| गोलकस्य अन्नभोजनप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ४०८  |
| गोमहस्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ५६२  |
| ग्रहमालिकाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ७८२  |
| ग्रामप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ८०७  |
| ग्रामलक्षणम्                           | ... | ... | ८०८  |
| ग्राम्यमृगपक्ष्यादिहरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | २४४  |

घ ।

|                                |     |     |     |
|--------------------------------|-----|-----|-----|
| घण्टाविक्रयप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ८२२ |
| घृतधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ७१७ |



## च ।

|   |     |     |
|---|-----|-----|
| चक्रपाणिप्रतिग्रहीतुः प्रायश्चित्तम्              | ... | ८१८ |
| चतुर्दशचाण्डालभेदाः                               | ... | ६६६ |
| चतुर्विंशतिमूर्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्          | ... | ८११ |
| चतुश्चत्वारिंशत्स्काराणां लक्षणम्                 | ... | १७  |
| चर्मकारस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                    | ... | ३२० |
| चर्मधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                   | ... | ६१८ |
| चर्मविक्रयप्रायश्चित्तम्                          | ... | १८८ |
| चर्मोपहतशकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                  | ... | ४२७ |
| चाण्डालप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                    | ... | ८४३ |
| चाण्डालादिवधप्रायश्चित्तम्                        | ... | ३६  |
| चाण्डालीगमनप्रायश्चित्तम्                         | ... | ३०४ |
| चातुर्मास्यव्रतानि...                             | ... | ८५१ |
| चातुर्मास्यव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ८५१ |
| चामरहरणप्रायश्चित्तम्                             | ... | २६८ |
| चौलकर्ममुख्यकालातिक्रमप्रायश्चित्तम्              | ... | ५१६ |
| चौलसौमन्तान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                   | ... | ३८५ |

## कु ।

|                              |     |     |
|------------------------------|-----|-----|
| कुत्रहरणप्रायश्चित्तम्       | ... | २६५ |
| कुम्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ७७५ |

## ज ।

|                           |     |      |
|---------------------------|-----|------|
| जङ्घोरुवक्षःकरवापनमन्त्रः | ... | १०१८ |
|---------------------------|-----|------|



|                               |     |     |     |
|-------------------------------|-----|-----|-----|
| जलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ७२० |
| जलहरणप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | २७७ |
| जातकर्मतिक्रमप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ५०६ |
| जातिभ्रंशकरजन्या व्याधयः      | ... | ... | ७५० |
| जातिभ्रंशकरप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | ३७७ |

त ।

|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| तक्षकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ३२८ |
| तटाकादिहरणप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | २६५ |
| तण्डुलविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | १७६ |
| तप्तमुद्राधारिभ्यः प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८०० |
| तर्पणलोपप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | ५२५ |
| ताम्रकांस्यविक्रयप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | २१८ |
| ताम्रपात्रस्थितगव्यभक्षणप्रायश्चित्तम्       | ... | ... | ४१६ |
| ताम्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ८२४ |
| ताम्रस्तेयप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ६२  |
| तिलकुशाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ७४४ |
| तिलगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ६७३ |
| तिलचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ६७१ |
| तिलदानमन्त्रः                                | ... | ... | ६२८ |
| तिलधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ७१५ |
| तिलपर्वतप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ७०५ |
| तिलपात्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ८२६ |



|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| तिलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ६७६ |
| तिलयन्त्रिस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ३२८ |
| तिलविक्रयप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | १७७ |
| तुरुष्कीगमनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ३१३ |
| तुलादिदानेषु प्रतिग्रहीतृणां आचार्यादीनां भयहरण-<br>यन्त्रोत्तारणप्रकारः | ... | ... | ६५४ |
| तुलादिप्रतिग्रहीतृणां नदीस्नानरूपप्रायश्चित्तम्                          |     |     | ६३८ |
| तुलादिप्रतिग्रहीतृणां प्रायश्चित्तविशेषः                                 | ... |     | ६४३ |
| तुलापुरुषादिदानेषु आचार्यब्रह्मर्षिजां अपमृत्युत्तरण-<br>मार्ज्जनम्      | ... | ... | ६२५ |
| तुलाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ५८० |
| तैलघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ७७८ |
| त्रिकटुकहरणप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | २८६ |
| त्रिपान्नक्षत्रमरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ४६४ |

### द ।

|  |     |     |      |
|--|-----|-----|------|
| दण्डाजिनमौञ्जभावे वटोः प्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ५२३  |
| दत्तापहरणप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | २४८  |
| दधिधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ७३१  |
| दध्यादिहरणप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | २८४  |
| दन्तकाष्ठग्रहणमन्त्रः                  | ... | ... | १०१८ |
| दन्तनखविक्रयप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | २०१  |
| दम्पतिभुक्तशिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४१०  |



|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| दर्शपूर्णमासलोपप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ५६३ |
| दशदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ८१० |
| दशदानानि  | ... | ... | ८१० |
| दशविधब्राह्मणाः   | ... | ... | १८५ |
| दशविधहिंसा  | ... | ... | ८१  |
| दशावतारप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ८१४ |
| दहनयोग्यस्य दहनाभावे प्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ४७१ |
| दहनयोग्यस्य प्रोथने प्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ४६८ |
| दासीगमनप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | २६० |
| दासीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                             | ... | ... | ६७८ |
| दासीविक्रयप्रायश्चित्तम्                                | ... | ... | २०० |
| दासीहरणप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | २६० |
| दीर्घमन्नभोजनप्रायश्चित्तम्                             | ... | ... | ३८० |
| दुरन्तानि   | ... | ... | ३७७ |
| दुर्जनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ८३२ |
| दुर्भक्ष्यभक्षणप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ४०० |
| दुर्मृतानां नृणां वर्णत्रयाणां परलोकक्रमकाले कर्त्तव्यो |     |     |     |
| नारायणवलिप्रकारः  | ... | ... | ८७६ |
| दुर्मृतानां रज्ज्वादिभेत्तृणां प्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ४५४ |
| दुर्मृतिप्रायश्चित्तम्                                  | ... | ... | ४५० |
| दुर्मृतवाहकानां प्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | ४५५ |
| दुष्टनक्षत्रशान्तिषु धेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ०६८ |



दुष्टनक्षत्रे प्रथमरजोदर्शनगान्तिधेनुप्रतिग्रह-

|  |     |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|-----|
| प्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ... | ७७० |
| दुष्टमृगविक्रयप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ... | १७४ |
| दुष्टवारिवु मृतिप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | ... | ४५६ |
| दुष्टशाकभक्षणप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ... | ४०२ |
| दुष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ... | ४३६ |
| देवपूजात्यागे दोषः                                     | ... | ... | ... | ५५४ |
| देवपूजावैश्वदेवपरित्यागप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ... | ४३६ |
| देवलकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ... | ३६६ |
| देवार्चनपरित्यागप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | ... | ५५३ |
| देशान्तरमरणप्रायश्चित्तम्                              | ... | ... | ... | ४८७ |
| देशान्तरमृतस्याऽऽहिताग्नेररण्यग्निना विना लौकिकाग्निना |     |     |     |     |
| दहने प्रायश्चित्तम्                                    | ... | ... | ... | ४६५ |
| देशान्तरमृतादीनामस्थिशरीराद्यभावे प्रायश्चित्तम्       | ... | ... | ... | ४८४ |
| देशान्तरवामिनो द्वादशवर्षादूर्ध्वं परलोकक्रियानन्तरं   |     |     |     |     |
| पुनरागतस्य प्रायश्चित्तम्                              | ... | ... | ... | ४६० |
| दैवोविवाहः   | ... | ... | ... | ५३५ |
| द्रव्यविपर्ययप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ... | ४७२ |
| द्रुमच्छेदप्रायश्चित्तम्                               | ... | ... | ... | ११३ |
| द्वादशविधा सुग   | ... | ... | ... | ४४  |

ध ।

|                                   |     |     |     |     |
|-----------------------------------|-----|-----|-----|-----|
| धनिष्ठापञ्चक्रमरणे प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ... | ४५७ |
|-----------------------------------|-----|-----|-----|-----|



|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| धरादानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ६०८ |
| धर्मविक्रयप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | २२३ |
| धर्मविक्रयिणः सकाशात् प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ७८१ |
| धान्यप्रमाणम्                                 | ... | ... | ६६  |
| धान्यस्तेयप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ६६  |
| धान्याचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ७०२ |
| धेनुविक्रयप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | १६० |
| धेनुहरणप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | २३० |

## न ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| नग्नश्वाङ्गे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ३८५ |
| नटविट्गायकेभ्यः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८४८ |
| नटिनीगमनप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ३२१ |
| नन्दाभद्रादितियौ मरणे प्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ४५८ |
| नवग्रहमन्त्रे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ७८० |
| नवनीतहरणप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | २८४ |
| नानावस्तुविक्रयप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | २२६ |
| नानाविधफलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ८५८ |
| नान्दीश्वाङ्गप्रकारः                    | ... | ... | ८८० |
| नापितस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ३३३ |
| नामकरणातिक्रमप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ५१३ |
| नामविक्रयप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | २२५ |
| नारीहरणप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | २५५ |



|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| निक्षेपप्रमाणम्                                     | ... | ... | २२८ |
| निक्षेपहरणप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | २२७ |
| निन्दितधनादानप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | १४० |
| निन्दितार्थोपजीवनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | १८३ |
| निमित्तगोवधप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ८४  |
| निमित्तब्रह्मवधप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | ४२  |
| निषिद्धदिवसेषु द्विर्भोजनप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ४३८ |
| निषिद्धदिवसे ताम्बूलभक्षणप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ५७८ |
| नीलीवस्त्रं धृत्वा कर्मकरणे भोजने वा प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४४८ |
| नीलीविक्रयप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | १८८ |

प ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| पक्षिलोमोपहतशाकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ४२७ |
| पक्ष्यादिमलमूत्रभक्षणप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ४२५ |
| पञ्चग्रहादिसेलने प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ७८६ |
| पञ्चलाङ्गलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ६०५ |
| पतितदुर्मार्गदुष्टाक्रान्तपंक्तौ भोजनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४१६ |
| पतितपाषण्डवीडशूद्रस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ३४३ |
| पतितस्य यतः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ८७२ |
| पत्नीविक्रयप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | १५२ |
| पत्नीमहभोजनप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ४१४ |
| परार्थं गायत्रीजपकर्तृणां प्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ८०५ |
| परिधानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | २८७ |



|   |     |     |
|---|-----|-----|
| परिवित्तिपरिवेत्तृप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्         | ... | ८४४ |
| परिवित्तिपरिवेत्तृविवाहनिर्णयः                    | ... | ४३८ |
| परिवित्तिलक्षणम्                                  | ... | ४०८ |
| परिवेत्तेरन्नभोजनप्रायश्चित्तम्                   | ... | ४०८ |
| परिविन्दलक्षणम्                                   | ... | ४०८ |
| परिविन्नलक्षणम्                                   | ... | ४०८ |
| परिवेत्तुरन्नभोजनप्रायश्चित्तम्                   | ... | ४०८ |
| परिवेत्तृप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                  | ... | ८४४ |
| परिवेत्तुलक्षणम्                                  | ... | ४०८ |
| परिषद्दिप्रप्रायश्चित्तम्                         | ... | ४८० |
| पर्यहरणप्रायश्चित्तम्                             | ... | २७५ |
| पर्युषितान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                    | ... | ३८८ |
| पलाण्डुभक्षणप्रायश्चित्तम्                        | ... | ४१७ |
| पलाण्डुलशुनविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | १५६ |
| पशुपुरोडाशभक्षणप्रायश्चित्तम्                     | ... | ६३६ |
| पार्वणपिण्डभङ्गे विडालादिस्पर्शे च प्रायश्चित्तम् |     | ५६४ |
| पार्वणविस्मृतिप्रायश्चित्तम्                      | ... | ५६३ |
| पार्व्यणश्राद्धेषु अग्नीकरणहोमलोपप्रायश्चित्तम्   | ... | ५५८ |
| पापण्डप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                     | ... | ८३६ |
| पापण्डस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ३४३ |
| पिण्डपितृयज्ञलोपप्रायश्चित्तम्                    | ... | ५६८ |
| पिण्डोपहतिप्रायश्चित्तम्                          | ... | ४७४ |



|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| पितरः ...                                    | ... | ... | ६८१ |
| पितृगृहेऽसंस्कृतकन्यारजोदर्शनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ३६८ |
| पितोराष्ट्रिकपरित्यागप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ५५६ |
| पीतोदकशेषपानप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ४२१ |
| पुण्यनद्यः                                   | ... | ... | ६३८ |
| पुत्रीविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | २५२ |
| पुनः संस्कारविधिः                            | ... | ... | ६३० |
| पुनः संस्कारे गायत्रीप्रदातुः प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८०० |
| पुरुषहरणप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | २५७ |
| पुरोडाशभक्षणप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ७८६ |
| पुष्पविक्रयप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | २११ |
| पुष्पहरणप्रायश्चित्तम्...                    | ... | ... | २६८ |
| पुस्तकादिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ८४६ |
| पुस्तकादिहरणप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ३०१ |
| पुंसवनातिक्रमप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ५०८ |
| पुंसिमैथुनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ३५० |
| पृथिवीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ६८२ |
| पैशाचविवाहः                                  | ... | ... | ५३७ |
| प्रकीर्णकप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ६५० |
| प्रतिकृतिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ७४८ |
| प्रतिपदोमलोपप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ५४७ |
| प्राच्याङ्गधनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ७८३ |



|                                   |     |     |      |
|-----------------------------------|-----|-----|------|
| प्राजापत्योविवाहः                 | ... | ... | ५३७  |
| प्रायश्चित्तप्रकारः               | ... | ... | ६४६  |
| प्रायश्चित्तप्रयोगः               | ... | ... | १००५ |
| प्रेतैकोद्दिष्टभोजनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ३८४  |

फ ।

|                     |     |     |     |
|---------------------|-----|-----|-----|
| फलहरणप्रायश्चित्तम् | ... | ... | २७० |
|---------------------|-----|-----|-----|

व ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| वलीवर्हविक्रयप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | १६१ |
| वलीवर्हहननप्रायश्चित्तम्                        | ... | ... | ६५  |
| वलीवर्हरोहणप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | ३६१ |
| वालहरणप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | २५१ |
| विल्वभक्षणप्रायश्चित्तम्                        | ... | ... | ४१८ |
| वौडस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ३४३ |
| ब्रह्मचाण्डालग्रामचाण्डालतुरस्कवधप्रायश्चित्तम् |     |     | ३७  |
| ब्रह्मचाण्डालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ३३४ |
| ब्रह्मचारिणो व्रतलोपप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ५२४ |
| ब्रह्मयज्ञलोपप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ५२५ |
| ब्रह्महत्याप्रकरणम्                             | ... | ... | ४   |
| ब्रह्महन्तारं प्रति विप्रकृत्यम्                | ... | ... | १४  |
| ब्रह्माण्डघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ५८८ |
| ब्राह्मन्-कुष्ठान्न-भोजनप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ४०७ |
| ब्राह्मो विवाहः                                 | ... | ... | ५३६ |



## भ ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| भक्ष्यभोज्यहरणप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | २७८ |
| भद्रातिथौ मरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ४५८ |
| भयनिवहानां तुलादि-प्रतिग्रहीतृणां ज्वरादि-<br>रोगहरमृत्युप्रतिमापूजाविधानं होमप्रकारश्च | ... | ... | ६५७ |
| भर्तृघ्नीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ८४० |
| भिन्नपात्रभोजनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४३१ |
| भूमिहरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | २४६ |
| भृतकाध्ययनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | १२५ |
| भृतकाध्यापनप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | १२१ |
| भोजनकाले क्षुतापानवापूतगर्जृम्भणानां प्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | ४४३ |
| भोजनकाले दीपनिर्व्वाणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ४२८ |

## म ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| मकरसंक्रमणव्रतेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | ८६१ |
| मद्यपत्नीगमनप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | ३४१ |
| मद्यविक्रयिणः स्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ३३२ |
| मधुधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ७२७ |
| मधुमांसविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | २०६ |
| मधुहरणप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | २८४ |
| मनुष्यमृगपक्ष्यादि-मलमूत्रभक्षणप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४२४ |
| मनुष्यविक्रयिणां महापातकिसंज्ञा               | ... | ... | १४५ |
| मलिनीकरणजन्याः रोगाः                          | ... | ... | ७५० |



|  |     |     |          |
|--|-----|-----|----------|
| मलिनीकरणानि                                  | ... | ... | १०००     |
| मलीकरणप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | २२७      |
| मलोपहतशाकान्नभोजनप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ४२७      |
| महानयः                                       | ... | ... | ६४०      |
| महापातकजन्याः रोगाः                          | ... | ... | ७४८      |
| महापातकिसंसर्गप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ७८       |
| महाभूतघटप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ६२२      |
| महिषवधप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | १०८      |
| महिषहरणप्रायश्चित्तम्                        | ... | ... | २३६      |
| महिषारोहणप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | २६१      |
| महिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ७६५, ८६७ |
| महिषीवस्ताजागमनप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | ३५२      |
| महिषीविक्रयप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | ३६३      |
| महिषीहननप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | १०६      |
| महिषीहरणप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | २३५      |
| माघमासव्रतानि                                | ... | ... | ८५५      |
| माघमासव्रतोद्यापनेषु प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८६१      |
| मातृविक्रयप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | १५४      |
| मातृसम्बन्धपरिणयनप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ३६५      |
| मार्गनिरोधप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | २८३      |
| माषविक्रयप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | १७७      |
| मांसविक्रयिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ३३०      |



|                                      |     |     |     |
|--------------------------------------|-----|-----|-----|
| मिथ्यावादि-प्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ३६१ |
| मुद्गतण्डुलविक्रयप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | १७८ |
| मूल्यं गृहीत्वा शववाहकप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४५६ |
| मृगादि-मलमूत्रभक्षणप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ४२५ |
| मृतवत्सगवीक्षीरपानप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | ४२३ |
| मृतशय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ७५२ |
| मृतस्य पुनरागमनप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ४८८ |
| मृत्तिकारहितशौचप्रायश्चित्तम्        | ... | ... | ४४० |
| मृत्युमहिषीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ७६३ |
| मेदस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ३२६ |

य ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| यत्यन्नदम्पतिभुक्तशिष्टान्नभोजनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४१० |
| यमलयोर्व्युत्क्रमकर्मकरणे प्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ५११ |
| यागान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ३८३ |
| यानहरणप्रायश्चित्तम्...                       | ... | ... | २६३ |
| योगव्रतादिषु कृष्णाजिनप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | २४५ |

र ।

|                                     |     |     |     |
|-------------------------------------|-----|-----|-----|
| रक्तशिशुभक्षणप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ४१८ |
| रजतताम्रकांस्यवस्त्रादीनां प्रमाणम् | ... | ... | ५२  |
| रजतपद्मप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ७४८ |
| रजतविक्रयप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | २१७ |
| रजतस्त्रयप्रायश्चित्तम्...          | ... | ... | ६०  |



|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| रजताचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | ६६७ |
| रजस्वलागमनप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | ३३६ |
| रजस्वलान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ४३५ |
| रजस्वलामरणप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | ५०१ |
| रत्नविक्रयप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | २१२ |
| रत्नहरणप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | २४८ |
| रत्नाचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ६८८ |
| रसविक्रयप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | १८५ |
| रसौषधिहरणप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | २८७ |
| राक्षसादिकन्यापरिणयनप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ५३६ |
| राक्षसो विवाहः                                   | ... | ... | ५३७ |
| राजदण्डः   | ... | ... | ७३  |
| राक्षां स्तेयप्रकारः                             | ... | ... | ५७  |
| रामपूजामन्त्रः                                   | ... | ... | ८८४ |
| रामलक्ष्मणदानमन्त्रः                             | ... | ... | ८८४ |
| रामलक्ष्मणपूजामन्त्रः                            | ... | ... | ८८४ |
| रामलक्ष्मणप्रतिमाप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ८१६ |
| राशिचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ७८८ |
| रुद्राक्षविक्रयप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | २१४ |
| रुद्राक्षहरणप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | २८० |
| रुरुविक्रयप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | १७० |
| रोगनिवृत्त्यर्थं मद्यपान-स्तन्यपानप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ३७५ |



ल ।

|                             |     |     |     |
|-----------------------------|-----|-----|-----|
| लवणविक्रयप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | १८५ |
| लवणाचलप्रतियहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ७१० |
| लशुनभक्षणप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | १८७ |
| लशुनविक्रयप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | १८१ |
| लिङ्गधारिणां प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८०२ |

व

|  |     |     |     |
|--|-----|-----|-----|
| वडवामैथुनप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ३५१ |
| वत्सहरणप्रायश्चित्तम्                              | ... | ... | २३२ |
| वन्दौगृहीतानां नारीणां प्रायश्चित्तम्              | ... | ... | ३७३ |
| वन्याः वृक्षाः                                     | ... | ... | ११३ |
| वस्तागमनप्रायश्चित्तम्                             | ... | ... | ३५२ |
| वस्तारोहणप्रायश्चित्तम्                            | ... | ... | ३६१ |
| वस्त्रविक्रयप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | २२२ |
| वस्त्रस्तेयप्रायश्चित्तम्                          | ... | ... | ६८  |
| वराहपुराणे रामलक्ष्मणप्रतिमादानम्                  | ... | ... | ८८२ |
| वराहादिप्रमाणम्                                    | ... | ... | ८६८ |
| वार्त्ताश्रवणमात्रेण स्वसती न त्याज्या स्रथात्यागे |     |     |     |
| प्रायश्चित्तम्                                     | ... | ... | ८६४ |
| वार्द्ध्यजीवकस्य प्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | १४२ |
| विटप्रतियहप्रायश्चित्तम्                           | ... | ... | ८४८ |
| विधवागमनप्रायश्चित्तम्                             | ... | ... | ३३८ |



|   |     |     |           |
|---|-----|-----|-----------|
| विधायकप्रायश्चित्तम् ...                            | ... | ... | ८४१       |
| विधायकवाक्यम् ...                                   | ... | ... | ६५१, १०११ |
| विप्रस्य ब्रह्महत्यायां राजकृत्यम् ...              | ... | ... | ११        |
| विप्रस्वहरणे क्षत्रियादीनां प्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ५५        |
| विप्राणां क्षत्रियहत्याप्रायश्चित्तम् ...           | ... | ... | २३        |
| विप्राणां वैश्यहत्याप्रायश्चित्तम् ...              | ... | ... | २५        |
| विवाहमध्ये वध्वाः प्रथमार्त्तवदर्शने प्रायश्चित्तम् |     |     | ५४१       |
| विवाहाः ...   | ... | ... | ५३६       |
| विश्वचक्रप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ...                | ... | ... | ६११       |
| बुरुङ्गीगमनप्रायश्चित्तम् ...                       | ... | ... | ३२४       |
| वृन्तालालाबुभक्षणप्रायश्चित्तम् ...                 | ... | ... | ४१८       |
| वेदव्रताकरणप्रायश्चित्तम् ...                       | ... | ... | ५३०       |
| वेदाभ्यामलोपप्रायश्चित्तम् ...                      | ... | ... | ५२७       |
| वैश्यागमनप्रायश्चित्तम् ...                         | ... | ... | ३४१       |
| वैश्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ...                   | ... | ... | ८३८       |
| वैश्वहरणप्रायश्चित्तम् ...                          | ... | ... | २५८       |
| वैतरणीधिनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ...               | ... | ... | ७६१       |
| वैशाखमासव्रतप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ८५८       |
| वैश्यगृहे स्वयं पाकादि कृत्वा भोजने प्रायश्चित्तम्  |     |     | ३८२       |
| वैश्यस्य क्षत्रियवधप्रायश्चित्तम् ...               | ... | ... | ३१        |
| वैश्यस्य दुर्मृतस्य प्रायश्चित्तम् ...              | ... | ... | ४५३       |
| वैश्यस्य विप्रहत्याप्रायश्चित्तम् ...               | ... | ... | १६        |



|   |     |     |          |
|---|-----|-----|----------|
| वैश्यस्य शूद्रहत्याप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ३४       |
| वैश्वदेवपरित्यागप्रायश्चित्तम्                      | ... | ... | ४३६, ५५५ |
| वैशाखाद्वम्   | ... | ... | ६७६      |
| व्यभिचारिणीप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ८४१      |
| व्याघ्रादिभिर्हतस्य प्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ४५२      |
| व्रणे कस्युत्पत्तिप्रायश्चित्तम्                    | ... | ... | ४८७      |
| व्रात्यादिभ्यो यज्ञोपवीतादि-प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८४७      |
| व्रीह्यादि-धान्यविक्रयप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | १८१      |

## श ।

|                                       |     |     |     |
|---------------------------------------|-----|-----|-----|
| शकटदानप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्         | ... | ... | ७५६ |
| शङ्खप्रतिग्रहतदिक्रयप्रायश्चित्तम्    | ... | ... | ८२१ |
| शय्याप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ६८७ |
| शय्याहरणप्रायश्चित्तम्                | ... | ... | २६१ |
| शर्कराधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्     | ... | ... | ७३६ |
| शवपतनप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | ४६७ |
| शवस्य शूद्रादिस्पर्शे प्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४६३ |
| शवोपरि उच्छ्रिष्टादिपतनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४३२ |
| शस्यादिविक्रयप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | २१६ |
| शस्यादिहरणप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | २८१ |
| शाकहरणप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | २७४ |
| शालग्रामादिहरणप्रायश्चित्तम्          | ... | ... | ३०३ |
| शालिहोत्रः                            | ... | ... | ४६६ |



|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| शिलापात्रविपर्ययप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४७२ |
| शिवनिर्माल्यभोजनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४४७ |
| शिवलिङ्गप्रतिग्रहविक्रयप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | ८२० |
| शिवलिङ्गप्रतिमादिविक्रयप्रायश्चित्तम्                                   | ... | ... | २०८ |
| शिशूनामक्षराभ्यासकालातिक्रमप्रायश्चित्तम्                               | ... | ... | ५१७ |
| शुनादृष्टस्य प्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ५०४ |
| शूद्रभाण्डे भोजनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ४१५ |
| शूद्रवधप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | २७  |
| शूद्रवैश्यगृहे स्वयं पाकादिकृत्वा भोजने प्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ३८४ |
| शूद्रमत्रभोजनप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ३८१ |
| शूद्रस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ३४३ |
| शूद्रस्य विप्रहत्याप्रायश्चित्तम्                                       | ... | ... | २०  |
| शूद्रस्य वैश्यहत्याप्रायश्चित्तम्                                       | ... | ... | ३३  |
| शृगालदृष्टमरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ५०३ |
| श्राद्धपंक्ती भुञ्जानानां द्विजानामन्योन्यसंस्पर्शं प्रायश्चित्तम्      | ... | ... | ५६१ |
| श्राद्धान्नशिष्टभोजनप्रायश्चित्तम्                                      | ... | ... | ३८७ |
| श्रीमूर्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                                       | ... | ... | ८१७ |
| श्रुतिस्मृतिविक्रयप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | २२४ |
| श्वदृष्टमरणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ५०३ |
| श्वेतवृन्ताकरक्तशिशुवृन्तालालावुविल्वीदुस्वरादिभक्षण-<br>प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४१८ |
| श्वेताश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्  | ... | ... | ६६४ |



## ष ।

|                                       |     |     |     |
|---------------------------------------|-----|-----|-----|
| षड्ग्रहयोगे प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ७८४ |
| षन्निमित्तमरणप्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ४६१ |
| षोडशविधचाण्डालस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ३१६ |
| षोडशविधा ग्रामचाण्डालाः               | ... | ... | ३८  |

## स ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| सङ्कलीकरणजन्या रोगाः                            | ... | ... | ७५० |
| सङ्कलीकरणप्रायश्चित्तम्                         | ... | ... | १४० |
| सञ्चरणात् प्राक् प्रेतदहनाग्निनाशप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ४७६ |
| सतीत्यागहेतुः                                   | ... | ... | ८६३ |
| सभ्यादिकालेषु चाण्डालध्वनिश्रवणप्रायश्चित्तम्   | ... | ... | ४३३ |
| सभ्याया उत्पत्तिः                               | ... | ... | ५७६ |
| सत्र्यामिनः प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ८७० |
| सप्तव्यसनानि                                    | ... | ... | १४८ |
| सप्तमागरप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                 | ... | ... | ६१६ |
| सप्ताचलप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | ६८५ |
| सम्यक् सभ्याकरणकालः                             | ... | ... | ५७६ |
| सर्ववर्णोपकारार्थं मानसस्नानम्                  | ... | ... | ५७७ |
| सहगमनभीतायाः स्त्रियाः प्रायश्चित्तम्           | ... | ... | ४८३ |
| संघातान्नभोजनप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ३८१ |
| साक्षाद्वैनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ७३८ |
| सामान्यप्रकरणम्                                 | ... | ... | २   |



|   |     |
|---|-----|
| मालग्रामशिवलिङ्गप्रतिमादिविक्रयप्रायश्चित्तम्         | २०८ |
| सौमन्तपुंसवनातिक्रमप्रायश्चित्तम् ...                 | ५०८ |
| सौमन्तान्नभोजनप्रायश्चित्तम् ...                      | ३८५ |
| सुतविक्रयप्रायश्चित्तम् ...                           | १५० |
| सुरापानप्रायश्चित्तम् ...                             | ४३  |
| सुरापानिपत्नीपुत्रादीनां संमर्गप्रायश्चित्तम् ...     | ४८  |
| सुवर्णप्रमाणम् ...                                    | ५२  |
| सुवर्णविक्रयप्रायश्चित्तम् ...                        | २१५ |
| सुवर्णस्तेयममानि ...                                  | ८८८ |
| सूतकद्वयभोजनप्रायश्चित्तम् ...                        | ३८६ |
| सूतकद्वितयभोजनप्रायश्चित्तम् ...                      | ४४४ |
| सूतकद्वितयसूतस्य प्रायश्चित्तम् ...                   | ४८२ |
| सूतिकाभरणप्रायश्चित्तम् ...                           | ४८८ |
| सूर्यसोमोपरागभोजनप्रायश्चित्तम् ...                   | ४३० |
| सूर्यसोमोपरागयोर्विद्यमानाग्नेः सोमयाजिनः कर्त्तव्यम् | ५७० |
| सोपस्करगृहप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ...                 | ६८० |
| सोमपानप्रायश्चित्तम् ...                              | ७८४ |
| सोमयाजिनोऽष्टमूर्त्तित्वम् ...                        | ५७१ |
| सोमोपरागभोजनप्रायश्चित्तम् ...                        | ४३० |
| सोमोपरागे विद्यमानाग्नेः सोमयाजिनः कर्त्तव्यम्        | ५७० |
| सौतिकस्त्रीगमनप्रायश्चित्तम् ...                      | ३२७ |
| सौम्यधनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ...                   | ८६८ |



|   |     |     |      |
|---|-----|-----|------|
| स्तेयप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ५२   |
| स्त्रीणां विशेषतः पतनीयं                | ... | ... | ८८७  |
| स्थानीपाकममये अग्निशान्तिप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ५४४  |
| स्नातकव्रतलोपप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ५३३  |
| स्मृतिप्रामाण्यम्                       | ... | ... | ८८३  |
| स्मृतिविक्रयप्रायश्चित्तम्              | ... | ... | २२४  |
| स्वदारपरित्यागप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ३६७  |
| स्वयम्भुनि जेत्राणि                     | ... | ... | ६३८  |
| स्विष्टकृदादिहोमशेषसमापनम्              | ... | ... | १०२४ |

## ह ।

|   |     |     |     |
|---|-----|-----|-----|
| हरिणीक्षीरपानप्रायश्चित्तम्                     | ... | ... | ४२३ |
| हरिणीविक्रयप्रायश्चित्तम्                       | ... | ... | १६८ |
| हरिद्रादिमूलकविक्रयप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | १८७ |
| हरिहरयोगः                                       | ... | ... | ८२८ |
| हरिहरयोगे हरिहरप्रतिमाप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् | ... | ... | ८०८ |
| हिङ्गुादिविक्रयप्रायश्चित्तम्                   | ... | ... | १८३ |
| हिरण्यकामधेनुप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्            | ... | ... | ५८६ |
| हिरण्यगर्भप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ५८५ |
| हिरण्याश्वप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्               | ... | ... | ५८८ |
| हिरण्याश्वरथप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम्             | ... | ... | ६०१ |
| हिंसायन्त्रविधानप्रायश्चित्तम्                  | ... | ... | १४३ |



|                                 |     |     |     |     |
|---------------------------------|-----|-----|-----|-----|
| हिंसायन्त्रस्वरूपम्             | ... | ... | ... | १४३ |
| हेमहस्तिप्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् | ... | ... | ... | ६०३ |

अ ।

अङ्गिराः २५८, ४८५, ५६०, ८८१, ८८८, ८८०, ८८१ ।

आ ।

आदित्यपुराणम् ७८३, ८०१ ।

आपस्तम्बः १०, ४८, ५४, ७४, ७७, १५८, २७२, ३६८, ४४६,  
५३३, ५३८, ५५२, ६८१, ८४४, ८६५, ८८४ ।

उ ।

उशनाः ५१५, ८८६ ।

क ।

कण्वः २३५, ३८३, ४६१ ।

कश्यपः ५६३, ५७६ ।

कात्यायनः ५०, ५७, ७५, २१५, ३८४, ४५८, ४६८, ५२१,  
५४५, ५६३, ५६६, ५६८, ८४२, ८७३, ८८८ ।

कालादृशः ८८८ ।

काश्यपः २३५ ।

कुमारविजयम् ११८ ।

कुमारः ३२८ ।



कूर्मपुराणम् १४, १८, २६, २८, ३१, ३३, ३४, ३७, ५६, ६४,  
 ६६, ६८, ७४, ७८, ८४, ८८, ९२, ९७, १०४, १०८, १११,  
 ११३, १२१, १३८, १४०, १५०, १५७, १५८, १६१, १८१,  
 १८३, २११, २२५, २३३, २३५, ४७६, ५८१, ५८५, ५८४,  
 ५८७, ५८८, ६१२, ६२०, ६३३, ६३७, ६४४, ६६२, ६६३,  
 ६६६, ६६८, ६८६, ६८८, ६८४, ७०२, ७०६, ७०८, ७१५,  
 ७२१, ७२६, ७३७, ७४४, ७५१, ७५२, ७५४, ७५८, ७६०,  
 ७६१, ७६८, ७७४, ७७८, ७८०, ७८३, ७८६, ७८७, ७८८,  
 ७८१, ७८२, ७८४, ७८७, ७८८, ८०२, ८०४, ८०६, ८०८,  
 ८१०, ८१२, ८२१, ८२४, ८३०, ८४०, ८४२, ८४५, ८४६,  
 ८६३, ८६६, ८६८ ।

ग ।

गारुडपुराणम् २४, ३८, ६२, ८०, १२७, १४६, २५०, २०२,  
 २३०, ३२२, ३८६, ५८१, ६१६, ६१८, ६२१, ६६३, ६८८,  
 ७१८, ७३६, ८६४, ७६८, ८०५, ८६७, ८६२, ८८१ ।

गार्ग्यः २२७, ४३६, ४६८ ।

गालवः २१७, २२३, २२६, २३०, २५१, २५३, २५५, २५८,  
 २७७, ३३६, ३५४, ३५७, ३८०, ३८८, ४००, ४०५, ४०६,  
 ४०८, ४३१, ४४४, ४४८, ४५२, ४५६, ४५८, ४६८, ४७८,  
 ४८२, ४८७, ५८१, ५८७, ५३३, ५६३, ८८२ ।

गृह्यकारः ५१८ ।

गोतमः ११८, ३४५, ४०१, ५४३ ।



गोभिलः ४५१ ।

गौतमः १०, १३, ८१, १४३, १८१, २१२, २१३, २१४, २२०,  
 २२४, २३०, २३७, २५१, २६१, २६३, २६७, २७४, २८३,  
 २८४, २८७, २८८, २८७, ३०६, ३०७, ३११, ३२६, ३४८,  
 ३६०, ३६३, ३६५, ३६७, ३६८, ३७१, ३७३, ३७७, ३८१,  
 ३८३, ३८७, ३८८, ४०३, ४०५, ४११, ४१३, ४२१, ४२३,  
 ४२४, ४२५, ४२७, ४३२, ४४०, ४४१, ४४४, ४४५, ४४८,  
 ४५१, ४५७, ४५८, ४६२, ४६४, ४६७, ४७०, ४७३, ४७४,  
 ४७८, ४८१, ४८४, ४८८, ४८३, ४८६, ४८७, ४८८, ५००,  
 ५०१, ५०४, ५०५, ५१६, ५२०, ५२३, ५२५, ५२७, ५३२,  
 ४३३, ५४६, ५४८, ५५०, ५५२, ५५४, ५५६, ५६८, ५६८,  
 ६७१, ५७६, ५७८, ५८८, ५८१, ६०८, ६५३, ६६०, ८६४,  
 ८७२, ८७०, ८७८, ८८२ ।

गौतमधर्मः ८६, १७८ ।

गौरीकाण्डम् १११, ११३ ।

ग्रन्थान्तरम् ५८३ ।

च ।

चण्डिकाखण्डम् ८२ ।

चतुर्विंशतिमतम् ६०, ६४, १६८, १८७, २३५, २६०, ७४८,  
 ८०८, ८१५, ८४० ।

चतुस्त्रिंशन्मतम् ७८२ ।

चन्द्रिका ८८० ।



## ज ।

जातूकर्णः २२१, २४२, ३०८, ३३८, ३४८, ३५०, ३५१, ४३१,  
५०१, ८७० ।

जातूकर्ण्यः २६०, ३८२, ४७४, ५२७, ५३१, ५४०, ५५३ ।

जावलिः १२२, २१५, २१७, २२५, २४०, २४२, २५२, २५७,  
२५८, २७०, २७६, २७८, २८४, २८६, ३०७, ३११, ३१६,  
३२८, ३३३, ३६३, ३८२, ३८७, ३८८, ३८०, ३८१, ४२५,  
४२८, ४३८, ४४०, ४४७, ४५७, ४६१, ४८०, ४८१, ४८८,  
५०८, ५२६, ५३२, ५४३, ५८०, ५८५ ।

ज्योतिर्निदानम् ७६६ ।

त्रयस्त्रिंशत्तमम् ७५५ ।

## द ।

देवलः ११६, २०८, २१८, २२६, २२६, २३२, २३८, २४१,  
२४३, २४५, २४६, २४८, २४८, २५८, २६१, २६४, २६५,  
२६७, २७१, २७३, २७३, २७४, २७६, २७८, २८०, २८३,  
२८६, २८८, २८१, २८३, २८५, २८६, २८८, ३०१, ३०२,  
३०४, ३१३, ३१४, ३१६, ३२०, ३२१, ३२४, ३२५, ३२६,  
३२७, ३३०, ३३१, ३३३, ३३४, ३३६, ३३८, ३४१, ३४२,  
३४३, ३४५, ३४६, ३४८, ३४८, ३५१, ३५२, ३५३, ३५४,  
३५५, ३५७, ३५८, ३६०, ३६१, ३६३, ३६५, ३६७, ३६८,  
३७१, ३७५, ३७७, ३७८, ३८०, ३८१, ३८२, ३८४, ३८५,  
३८६, ३८७, ३८८, ३८१, ३८३, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८,



૪૦૦, ૪૦૫, ૪૦૭, ૪૦૮, ૪૧૦, ૪૧૨, ૪૧૪, ૪૧૫, ૪૧૬,  
 ૪૧૮, ૪૧૯, ૪૨૦, ૪૨૧, ૪૨૫, ૪૨૭, ૪૨૯, ૪૩૦, ૪૩૧,  
 ૪૩૩, ૪૩૫, ૪૩૬, ૪૩૮, ૪૩૯, ૪૪૧, ૪૪૨, ૪૪૩, ૪૪૪,  
 ૪૪૫, ૪૪૭, ૪૪૯, ૪૪૯, ૪૫૦, ૪૫૩, ૪૫૪, ૪૫૫, ૪૫૬,  
 ૪૫૭, ૪૫૮, ૪૫૯, ૪૬૧, ૪૬૨, ૪૬૩, ૪૬૪, ૪૬૬, ૪૬૭,  
 ૪૬૮, ૪૬૯, ૪૭૦, ૪૭૧, ૪૭૨, ૪૭૪, ૪૭૬, ૪૭૮, ૪૭૯,  
 ૪૮૦, ૪૮૧, ૪૮૨, ૪૮૩, ૪૮૪, ૪૮૭, ૪૮૮, ૪૯૦, ૪૯૨,  
 ૪૯૩, ૪૯૫, ૪૯૭, ૪૯૯, ૫૦૧, ૫૦૩, ૫૦૪, ૫૦૫, ૫૦૭,  
 ૫૦૮, ૫૦૯, ૫૧૧, ૫૧૩, ૫૧૪, ૫૧૬, ૫૧૭, ૫૧૯, ૫૨૩,  
 ૫૨૪, ૫૨૫, ૫૨૭, ૫૨૮, ૫૩૦, ૫૩૨, ૫૩૩, ૫૩૪, ૫૩૬,  
 ૫૩૯, ૫૪૦, ૫૪૧, ૫૪૩, ૫૪૪, ૫૪૫, ૫૪૬, ૫૪૭, ૫૪૯,  
 ૫૫૦, ૫૫૧, ૫૫૫, ૫૫૬, ૫૫૭, ૫૫૯, ૫૬૧, ૫૬૩, ૫૬૪,  
 ૫૬૬, ૫૬૭, ૫૭૦, ૫૭૨, ૫૭૭, ૫૭૮, ૫૮૦, ૫૮૮, ૫૯૨,  
 ૬૧૧, ૬૨૨, ૬૩૧, ૬૩૩, ૬૪૬, ૭૮૮, ૮૭૨, ૮૭૬, ૮૭૭,  
 ૮૭૯, ૮૮૦, ૧૦૦૧ ।

દેવલધર્મ: ૧૨૬, ૧૫૭, ૨૦૦, ૪૦૩ ।

દેવસ્વામી ૬૮, ૧૫૨, ૨૧૮, ૨૩૫, ૨૪૬, ૩૨૦, ૫૮૦ ।

દેવીપુરાણમ્ ૨૧, ૮૮, ૧૩૧, ૧૭૫, ૧૮૩, ૧૮૭, ૧૮૮, ૩૦૬,  
 ૩૩૨, ૩૮૯, ૫૮૧, ૫૮૫, ૫૮૮, ૫૯૪, ૬૦૪, ૬૧૪, ૬૩૬,  
 ૬૬૫, ૬૭૩, ૬૮૫, ૬૮૯, ૬૯૨, ૬૯૫, ૭૦૨, ૭૧૫, ૭૨૫,  
 ૭૩૨, ૭૫૮, ૭૬૦, ૭૬૬, ૭૭૨, ૭૮૨, ૭૯૪, ૭૯૬, ૮૦૨,  
 ૮૧૭, ૮૨૪, ૮૨૫, ૮૪૩ ।



न ।

नागरखण्डम् ५८, ८३, ८८, १६५, ८७० ।

नारदः १३०, २५१, ३०७, ३१५, ३१६, ३२७, ३३२, ३५०,  
३५३, ५२८, ५३५, ५५६, ६४५, ६८८ ।

नारदीयम् १६, १०२, १२२, २३०, २४४, २४६, ६७३, ६७४,  
६८६, ६८०, ७०५, ७२८, ८०० ।

नृसिंहपुराणम् १४२, १४५, ६३३, ७३४, ७७५ ।

प ।

प्रजापतिः ४२४ ।

पद्मपुराणम् २४, २७, ३२, १२६, १२८, १७२, १८३, ६१३,  
६८५, ७७१, ७८२, ८०३ ।

पराशरसंहिता १८५ ।

पराशरः २१२, २१८, २४४, ३५३, २५७, २६३, २८२, ३१६,  
३३८, ३४८, ३५२, ३८२, ३८५, ४००, ४०७, ४०८, ४१४,  
४१५, ४१८, ४३१, ४५५, ४७०, ४८४, ४८०, ४८५, ५०३,  
५०४, ५१२, ५१६, ५१८, ५२१, ५२३, ५२७, ५४८, ५५१,  
५६८, ५७१, ६२१, ८७२, ८७६, ८७८, ८८८, ८८२ ।  
१००२ ।

व, व ।

वराहपुराणम् ८५ ।

वृद्धमनुः ४१०, ४१४ ।

वीधायनः २४३, ५३५, ६६२ ।



ब्रह्मपुराणम् ६७६, ८३८ ।

ब्रह्मयामलम् २८ ।

ब्रह्मवैवर्तपुराणम् २६, ८३, १२५, १७२, ५८८, ६००, ६०१,  
६०३, ६७५, ६७८, ६८७, ६८०, ७१२, ७२८, ७३१ ।

ब्रह्माण्डपुराणम् ७, १४, १८, २१, २३, २६, २८, ४५, ४७,  
५३, ७१, १०२, १२३, १३१, १४५, १६३, १७०, ५८१,  
५८३, ६००, ६०३, ६१०, ६३२, ६६१, ६७०, ६७१, ६७३,  
६७४, ६७६, ६८०, ६८२, ६८४, ६८२, ६८८, ७०५, ७०८,  
७०८, ७१८, ७३५, ७४३, ७६३, ७७७, ८०५, ८४७ ।

भ ।

भविष्योत्तरपुराणम् ८८५ ।

भविष्योत्तरम् ७१, ८१, १५१, १६७, १८१, ३३७, ५१८, ६०१,  
६२६, ६३२, ६६७, ६७८, ६८३, ७०१, ७०८, ७०४, ७०६,  
७४०, ७४२, ७६०, ८६२, ८८८, ८८० ।

भागवतम् ८६५ ।

भारतम् ६१२, ६७४ ।

भारद्वाजसूत्रम् ५०२ ।

भारद्वाजः २८१, ३०५, ३२०, ५१२ ।

भाष्यकारः ८८८ ।

म ।

मत्स्यपुराणम् ३०, ३४, १६८, १८३, २८५, ३०५, ५८५, ५८८,  
५८४, ५८८, ६०८, ६२३, ६२४, ६३१, ६६२, ६६८, ६८३,



( ३८ )

६८०, ७२३, ७३२, ७३५, ७३८, ७५३, ७५६, ७६१, ७७६,  
७८०, ८२४, ८३६ ।

मनुः १३, २२२, २५६, २७७, २८०, २८८, ३१०, ३१२, ३१३,  
३१४, ३१८, ३३०, ३४३, ३५३, ३८१, ४०३, ४२७, ४३०,  
४८६, ५०५, ५२०, ५५१, ५५३, ५५५, ५५८, ५६२, ५६४,  
५७५, ६४३, ७८८, ८७३, ८८०, ८८६, ८८७, ८८०, ८८१,  
८८२, ८८३, ८८४, ८८७, ८८८, १०००, १००१, १००३ ।

मन्त्ररहस्यम् ६५४ ।

मरीचिसंहिता १२३ ।

मरीचिः ६६, १२२, १७८, २१८, २३२, २३३, २६४, ३३१,  
३४६, ३५५, ३५८, ३७१, ३८५, ४०७, ४०८, ४३०, ४५६,  
४५८, ४६१, ४६३, ४६८, ४८८, ५१२, ५१६, ५४२, ५४७,  
५५०, ५५१, ५५८, ५६३, ५६५, ५७५, ६६८, ६७६,  
६८० ।

महानारदीयम् ३३ ४३, ६०, ८८, २३४, १८८, २०४, ३०१,  
३८४, ६१५, ६४३, ६५८, ७४६, ७५८, ७७८ ।

महाभारतम् ६४, १२६, ३२६, ३५५, ३८७, ३८८, ३८३,  
३८८, ४६७, ४८५, ४८७, ४८३, ५८८, ५८६, ५८८, ६००,  
७०७, ७३४, ७५८, ८०६, ८३८, ८७१ ।

महागजविजयम् १७७, १८८, २२८, २६८, २७०, २७५, ३०५,  
३१७, ३४७, ४६२, ५२३, ५७८, ५८२, ५८४, ६६०, ६८२,  
७३८, ८७१ ।



मार्कण्डेयपुराणम् ५५, ८०, ८८, ८८, ८८, १००, १०८, १३२,  
 १३८, १५४, १५६, १६१, १७७, १७८, १८७, १८८, २०१,  
 २०८, ५८६, ५८८, ५८०, ५८१, ५८३, ६२७, ६६१, ६६६,  
 ६७६, ६७८, ६८२, ६८३, ६८५, ६८६, ७०८, ७१०, ७१२,  
 ७२८, ७३६, ७४४, ७४७, ७४८, ७५१, ७५८, ७६३, ७६८,  
 ७७०, ७७५, ७८४, ७८८, ८०७, ८१४, ८२१, ८२६,  
 ८२८, ८४४, ८४८, ८५१, ८५८, ८५८, ८६१, ८६६,  
 ८६८ ।

मार्कण्डेयः १०, ३८, १८१, २०८, २२१, २३८, २४१, २४४,  
 २४८, २४८, २५३, २५५, २६०, २६१, २६५, २६७, २७१,  
 २७५, २८०, २८२, २८७, २८३, २८७, २८८, ३०२, ३०४,  
 ३१४, ३२२, ३२५, ३३०, ३३३, ३३६, ३३८, ३४२, ३४३,  
 ३४५, ३४८, ३५०, ३५३, ३५४, ३५५, ३६५, ३६८, ३७३,  
 ३७७, ३७८, ३८१, ३८६, ३८८, ३८५, ४०३, ४०५, ४१७,  
 ४१८, ४२१, ४२३, ४३३, ४३५, ४३८, ४३८, ४४१, ४४७,  
 ४५७, ४५८, ४७१, ४७२, ४७६, ४७८, ४८०, ४८०, ४८५,  
 ५०३, ५०८, ५११, ५१३, ५१८, ५२६, ५३०, ५३३, ५३८,  
 ५४०, ५४८, ५५२, ५५८, ५६१, ५६६, ५६७, ५७०, ५८०,  
 ५८२, ५८३, ५८४, ५८८, ६५७, ६८१, ६८८, ८६४, ८७०,  
 ८७३, ८७४, ८७६, १००३ ।

य ।

यमः २२३, २६४, ३७७, ४२८, ४२२, ४७६, ४५८, ४८३ ।



याज्ञवल्क्यः ४४६, ४६६, ८८७, ८८८, ८८९, ८८४, ८८५,  
८८७, ८८८ ।

र ।

रङ्गराजीयम् ७५४ ।

राजविजयम् २७, ५८, १०४, १६८ ।

रेणुकाखण्डम् ७८१ ।

ल ।

लिङ्गपुराणम् ४, ११, १५, २०, २४, २५, २८, ३३, ३७, ४५,  
५२, ५६, ५८, ६०, ६४, ६६, ७३, ८२, ८७, ८८, ८७,  
१०६, १०८, १११, १२०, १२५, १३२, १३८, १४५, १५०,  
१५४, १५८, १६०, १६१, १६३, १६५, १६६, १६७, १६८,  
१७०, १७७, १८१, १८३, १८७, १८८, १८५, १८७, २०१,  
२०२, २०३, २०६, २१६, ३८७, ५३६, ५८२, ५८८, ५८५,  
५८७, ६०४, ६१५, ६१८, ६२४, ६३४, ६३७, ६४४, ६५८,  
६६४, ६६८, ६७८, ६८०, ६८५, ६८७, ७०३, ७१६, ७१८,  
७२६, ७३२, ७३८, ७१२, ७४७, ७५५, ७५६, ७७५, ७७७,  
७८०, ७८१, ७८२, ७८८, ७८१, ७८४, ७८६, ७८८, ८०१,  
८०४, ८०६, ८०८, ८१०, ८१६, ८१८, ८१८, ८२२, ८२५,  
८२८, ८३२, ८३४, ८३८, ८४१, ८४३, ८५५, ८६२, ८६३,  
८६६, ८६७, ८६८ ।

लीगाक्षिः ३६१, ४३६, ६४१, ५५५ ।



व ।

वराहपुराणम् १८१, १८५, ८८२, ८८० ।

वशिष्ठः २२४, २६८, ३५१ ।

वशिष्ठसंहिता ६०६, ६४५ ।

वक्त्रिपुराणम् ८०१ ।

वामनः २४० ।

वामनपुराणम् ६८७, ७३३, ७५१, ७६५, ७६८, ७८८, ८४२ ।

वायुपुराणम् ६१८, ८०० ।

विष्णुः ४४३, ८८७, ८८३, ८८५, ८८७, ८८८ ।

विष्णुधर्मः ३३८, ६७३ ।

विष्णुधर्मोत्तरम् ५८, ८३, ८०, १२१, १७२, २०३, २१५, ३८७,  
७३८, ८७८, ८८७ ।

विष्णुपुराणम् ७०४ ।

विष्णुरहस्यम् ३८६, ५८३, ६१५, ६८३, ७८२ ।

वृद्धमनुः ३३३ ।

व्याघ्रः ८८६ ।

व्यासः २२०, ४२१, ५८६, ८८७, ८८१, ८८२, ८८६ ।

श ।

शङ्खः ४१५ ।

शम्भुरहस्यम् १७४, ६०२, ६६७ ।

शिवधर्मः ६०६ ।



शिवधर्मोत्तरम् ८०, ८५, १०६, ७२८, ७३१, ७५१, ८४०,  
८८७ ।

शिवपुराणम् ३१, ४३, ६८, १३४, १५४, १६०, १७२, २०८,  
५८८, ६०५, ६६०, ६६६, ६७२, ६७८, ६८७, ७१३, ७२१,  
७२७, ७४८, ७८८, ८०३ ।

शिवरहस्यम् ५७, २६५, ३३८ ।

श्रुतिः ४८, ३४४, ५७६ ।

स ।

सूतः २०४ ।

सूतप्रोक्तम् ८५० ।

सौपर्णम् २०६, ५८८, ६३२ ।

स्कन्दपुराणम् ६, १५, २१, २४, ३१, ३६, ४२, ४८, ५२, ५८,  
६०, ६१, ६२, ६८, ७०, ८८, ८१, ८२, ८८, ८८, १०२,  
१२८, १३०, १४६, १४८, १५२, १५६, १५८, १६५, १६६,  
१६७, १८५, १८८, १८५, १८७, २०४, ५८२, ५८३, ६२५,  
६३८, ६६४, ६६७, ६७१, ६८३, ६८८, ७००, ७०३, ७०६,  
७०८, ७११, ७१७, ७२०, ७२४, ७२७, ७३१, ७३८, ७४३,  
७४१, ७४२, ७४४, ७४५, ७४८, ७५६, ७५७, ७६२, ७६३,  
७६५, ७७५, ७७६, ७७८, ७८०, ७८४, ७८७, ८०२, ८११,  
८१६, ८२०, ८२३, ८४६, ८५०, ८५३, ८७० ।

स्मृतिकामधेनुः ८८२ ।



ह ।

हरिवंशम् ६८८, ८७८ ।

हरिसागरः ५८७ ।

हारीतः २२२, २३३, २६८, २७१, ४४७, ५१५, ५३१, ५४८,

५६५, ५६८, ८८८ ।

हिरण्यगर्भसंहिता ६४५ ।

---





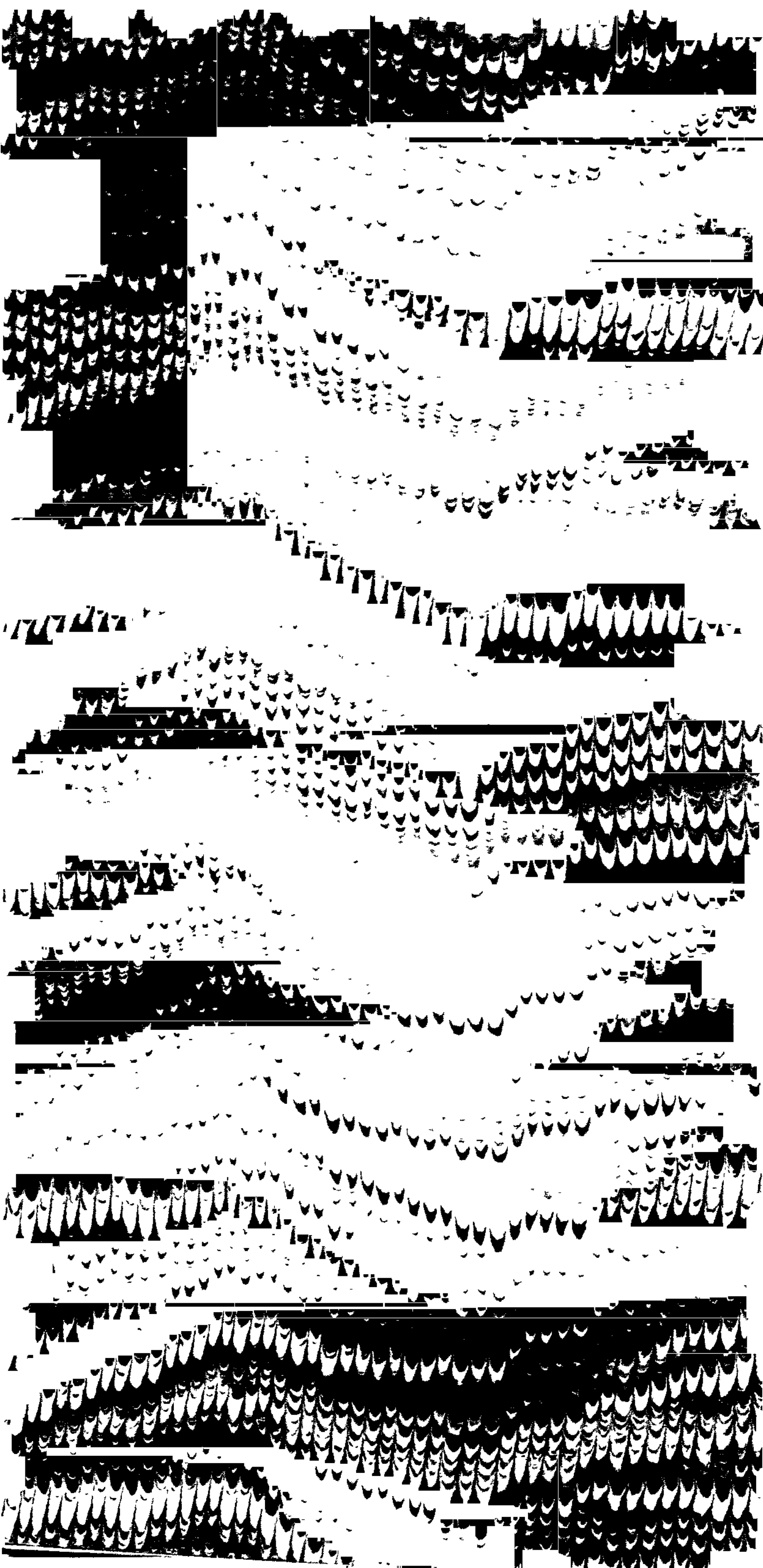


2/11/11











Central Archaeological Library,  
NEW DELHI.

37 251  
Call No S a 351 Hem / Bha

Author— Ha ha aha

Title— Chatur varn Chintan-

Borrower No.

Date of Issue

Date of Return

K S Ramchandra

22 3 58

27/1/59

*"A book that is shut is but a block"*

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY  
GOVT. OF INDIA  
Department of Archaeology  
NEW DELHI.

Please help us to keep the book  
clean and moving.